NAVNEET

1991 May Jul Oct

मई १९९१
मूल्य : रु. ६.००

भवन की पत्रिका 'भारती' से समन्वित

नवनीत

हिन्दी डाइजेस्ट

KHANDELWAL BROTHERS LIMITED

GOLDEN JUBILEE YEAR

यत्र योगेश्वरः कृष्णो यत्र पार्थो धनुर्धरः।
तत्र श्रीर्विजयो भूतिर्ध्रुवा नीतिर्मतिर्मम।।

हे राजन्! जहाँ योगेश्वर भगवान् श्रीकृष्ण हैं और जहाँ गाण्डीव-धनुषधारी अर्जुन हैं, वहीं पर श्री, विजय, विभूति और अचल नीति है – ऐसा मेरा मत है।

पं. सत्यकाम विद्यालंकारजी की मृत्यु पर हम नवनीत पाठकों का अंतर भींज-भींज गया है। स्थायी स्तंभ 'प्रार्थना' का अनुपम भावानुवाद अब कौन किया करेगा? संस्कृत के गूढ़ और अनेकार्थी पद्यों का सहज, सरल, सरस, गेय हिंदी भाषा में अब कौन अनुवाद कर उभय भाषालोकों को दैदीप्य करता रहेगा? भारतीय संस्कृति से भारतीयों को परिचित कराना ही विद्यालंकारजी के जीवन का मूल मंत्र रहा था। महान वैदिक विद्वान, गहन चिंतक, स्वामी दयानंद सरस्वती के सच्चे अनुयायी पं. सत्यकाम विद्यालंकारजी ने अनेक संस्कृत ग्रंथों का अंग्रेजी अनुवाद कर मानों अंग्रेजी भाषा को धन्य किया, क्योंकि इससे अंग्रेजी साहित्य की श्रीवृद्धि हुई। पंडितजी के निधन से उत्पन्न इस शून्य को अब कौन पूरा कर सकेगा?

— संजय जैन, बरगी नगर, जबलपुर म.प्र.

* * *

नवनीत मार्च - ९१ अंक मुझे पहली बार देखने को मिला। लुभावने मुखपृष्ठ को देखकर मैंने पत्रिका तुरंत खरीद ली। फिर अंदर की सामग्री देखी तो मन खुशी से झूम उठा, इतनी सुंदर पत्रिका पाकर। एक से एक सुंदर रचनाओं से भरपूर **नवनीत** अपने नाम के अनुरूप लगा।

साथ में दुःख भी हुआ कि मैं इतनी अच्छी पत्रिका को अब तक पढ़ने से क्यों वंचित रह गया। खैर! अब तो इसे नियमित पढ़ने का विचार है।

— दिनेशचंद्र प्रसाद 'दीनेश' अलीपुर, कलकत्ता

* * *

नवनीत के मार्च-९१ अंक में मनीष कुमार का 'दहेज : कानून क्या कहता है,' शीर्षक लेख पढ़ा जो काफी जानकारीपूर्ण लगा। लेखक ने अंत में ठीक ही लिखा है कि यह बुराई कानून बनाने से मिटने वाली नहीं है। इसके लिए सामाजिक स्तर पर प्रयास करने होंगे।

— पल्लवी शर्मा, बांसवाड़ा

* * *

नवनीत का मार्च-९१ अंक पढ़ा।

रोचक लगा। खासकर 'आज के दौर में कविता' परिचर्चा अच्छी और प्रभावशाली लगी। 'व्यवहारकुशलता का पुरस्कार' तथा 'जो मसीहा बन कर आया' दोनों लेख बहुत प्रेरणाप्रद और सुंदर लगे। बालकथा भी सुंदर और प्रेरणादायी रही। यह सब होते हुए इस साहित्यिक पत्रिका में छपे कार्टून आदि की जगह अगर प्रेरणाप्रद कवियों एवं साहित्यकारों की कथाओं या लेखों का उल्लेख किया जाय तो शायद इस पत्रिका का महत्व और बढ़ जायेगा।

— सारंग त्रिपाठी, इलाहाबाद, उ.प्र.

* * *

मार्च - ९१ का अंक पढ़ा। 'अभिनव सांदीपनि मुनि' तथा 'व्यवहारकुशलता का पुरस्कार' प्रेरक रचनाएं हैं। परिचर्चा 'कविता आम आदमी से दूर क्यों?' स्तरीय है। हितैषीजी व वारान्निकोव के बारे में परिचयात्मक लेख पसंद आये। आंचलिक उपन्यास 'ईसुरी' बहुत रोचक ढंग से आगे बढ़ रहा है। 'क्षयरोग' व 'गाय बगुला' लेख ज्ञानवर्द्धक हैं। कुछ कहानी व कविताएं भी अच्छी लगीं। कार्टून चित्रों की संख्या बढ़ाने और एक से बढ़कर एक उत्तमांक प्रदान करने के लिए साधुवाद स्वीकारें।

— प्रमोद त्रिवेदी 'पुष्प',
राजपुर - ४५१ ४४७

* * *

नवनीत का मार्च - ९१ अंक पढ़ा। यह अंक कुछ परितोष दे सका तो कहीं कुछ शिकायत भी रही। कविताएं तो इस अंक में अन्य अंकों की अपेक्षा कम ही थीं, जो थीं उनमें कोई विशेष नहीं। हां, संध्याजी की कविता कुछ हद तक स्तरीय थी। मधुर नज्मी द्वारा आयोजित परिचर्चा से हिंदी कविता के वर्तमान परिप्रेक्ष्य की जानकारी हुई। पत्रिका सभी दृष्टि से हिंदी की सेवा कर रही है। 'सांस्कृतिक मंच' स्तंभ से हमें सांस्कृतिक आयोजनों की जानकारी मिल जाती है। कुशल संपादन के लिए हार्दिक बधाई।

— नीरज नलिन, छपरा, बिहार

* * *

नवनीत का मार्च - ९१ अंक पढ़ा। इस बार अंक ज्यादा लेट नहीं हुआ। सभी लेख और कहानियां हृदयग्राही हैं। 'रेलिया न बैरी, जहजिया न बैरी' विशेष पसंद आया। 'प्रेमतपस्वी ईसुरी' धारावाहिक उपन्यास अच्छा चल रहा है। 'बच्चों की परीक्षा और मम्मी की परेशानी' लेख में समस्या का समाधान पूरी तरह नहीं हो सका है।

— राका पांडेय, रायबरेली, उ.प्र.

* * *

नवनीत का मार्च अंक पढ़ा। अन्य लेखों के साथ ही डॉ. रामस्वरूप का 'सिक्ख दरबार की चित्र शैली' लेख अच्छा लगा। लेख में छाया चित्रों का अभाव खला। **— राजेश कुमार 'साकेत', मुजफ्फरनगर, उ.प्र.**

मैं अनेक वर्षों से **नवनीत** का नियमित पाठक हूं। अपनी ज्ञानवर्द्धक, शिक्षाप्रद एवं अत्यंत प्रेरणादायक सामग्री के कारण **नवनीत** का भारतीय पत्रिकाओं में अपना विशिष्ट स्थान है।

मार्च - ९१ का अंक पढ़ा। वैसे तो संपूर्ण अंक रोचक है, किन्तु 'जीवन सौरभ' स्तंभ के अंतर्गत शिशिर विक्रांत द्वारा लिखित 'अभिनव सांदीपनि मुनि' बड़ा ही मर्मस्पर्शी एवं प्रेरक लगा।

आज के घोर भौतिकवादी एवं स्वार्थान्ध युग में भी प्राचीन भारतीय गुरु-शिष्य परंपरा अभी जीवित है, जिसका ज्वलंत उदाहरण इस लेख में प्रस्तुत किया गया है।

उच्चकोटि की सामग्री को सुरुचिपूर्ण ढंग से प्रस्तुत कर पाठकों का मार्गदर्शन करने के लिए मेरी हार्दिक बधाई स्वीकार करें। **– राजेन्द्र प्रसाद द्विवेदी, तालबेहट उ.प्र.**

* * *

विविध रचनारूपी पुष्पों से सजा **नव..त** का मार्च अंक उपलब्ध हुआ। इस अंक की प्रत्येक सामग्री अध्यात्म और जीवन के प्रति निश्चित दृष्टिकोण देनेवाली थी। कहानियां जहां व्यक्ति व समाज के चरित्र का दर्पण प्रतीत हुई; वहीं कविताएं हृदय में आनंद का संवाहन करने वाली थीं। लेख और अन्य स्थायी स्तंभ तथ्यपरक व विचारणीय थे। लेकिन इस बार की सर्वोत्तम एवं उल्लेखनीय प्रस्तुति रही – 'एक थी अम्मा' जिसने मुझे सबसे अधिक प्रभावित किया।

– प्रणय मिश्र, जमालपुर

* * *

नवनीत मार्च - ९१ के अंक का प्रथम बार अध्ययन किया। अब ऐसा प्रतीत होता है कि नियमित पाठक बन जाऊंगा। डॉ. रामस्वरूप पल्लव, डॉ. प्रेम भार्गव, श्री मनीष कुमार चौधरी तथा श्री नारायणलाल परमार के क्रमशः 'सिक्ख दरबार की चित्रशैली,' 'जो मसीहा बन कर आया', 'दहेज: कानून क्या कहता है?' तथा 'अद्‌भुत प्रतियोगिता बालकथा' लेखों पर दृष्टि-पात किया।

कुछेक में तथ्य अत्यंत सराहनीय हैं तो कुछेक में थोड़ा अभाव। जैसे डॉ. रामस्वरूप पल्लव के लेख में ऐतिहासिक सिख दरबार की चित्रकला शैली की जानकारी कराने की कोशिश तो है, परंतु चित्रों का अभाव है। हां, डॉ. प्रेम भार्गव के लेख में शब्दों की सूक्ष्मता पर भावों की गहनता है। इसी प्रकार 'अद्‌भुत प्रतियोगिता बालकथा' में लेखक ने (राम-श्याम) एक-दूसरे के प्रति सहृदयता, मैत्री, परोपकार एवं बलिदान आदि गुणों को सरल व मधुर ढंग से प्रदर्शित किया है।

– आर. एस. प्रसाद, पंजाब

(शेषांश पृष्ठ ६ पर)

नवनीत

संपादक गिरिजाशंकर त्रिवेदी
उप-संपादक रामलाल शुक्ल
अतिरिक्त सहयोग किशोरीरमण टंडन
प्रकाशक सु. रामकृष्णन्

संस्थापक : कन्हैयालाल मुंशी
भारती : स्थापना १९५६
श्रीगोपाल नेवटिया
नवनीत : स्थापना १९५२

वर्ष ४०, अंक ५ मई १९९१

आवरण-चित्र : चरन शर्मा (बालकृष्ण)

चित्र-सज्जा : ओके, शेणै, चांद गोदीका

कार्यालय : भारतीय विद्या भवन, क. मा. मुंशी मार्ग, बम्बई - ७

फोन : ८११४४६२/८११८२६१

(पृष्ठ ३ का शेषांश)

नवनीत का मार्च - ९१ अंक देखा, जिसमें बुंदेलखंड के प्रसिद्ध साहित्यकार श्री अम्बिका प्रसाद 'दिव्य' लिखित 'प्रेमतपस्वी : ईसुरी' (धारावाहिक उपन्यास - २) छपा है। इसके पहले और आगामी अंकों में छपी किस्तों के पढ़ने की इच्छा है। इस अंक में स्व. जगदंबा प्रसाद 'हितैषी' संबंधी लेख भी बहुत अच्छा लगा। सर्वाधिक आकर्षित किया श्री बद्रीनारायण तिवारी के प्रेरणाप्रद लेख 'गंगा और वोल्गा के सेतु वारान्निकोव' ने, जिसमें कम्युनिस्ट विद्वान वारान्निकोव के हिंदी एवं 'रामचरितमानस' प्रेम और उनके द्वारा रामायण के रूसी अनुवाद की पूरी जानकारी प्रथम बार मिल रही है। ऐसे सारगर्भित और उपयोगी लेख के लिए लेखक महोदय को बधाई।

– रामगणेश शास्त्री, सुमेरपुर, हमीरपुर

* * *

नवनीत के फरवरी अंक का संपूर्ण कलेवर वासन्ती परिधान और फागुनी गंध का मदमाता खुमार मन में उड़ेल गया। होली की रोली और लाल-गुलाब का रंग तो अनंतजी के फागुनी छंदों ने एक साथ उड़ेल दिया। 'विश्वव्यापी पर्व होली' लेख अत्यंत रोचक एवं ज्ञानवर्द्धक है। 'ईसुरी' पर धारावाहिक उपन्यास - अंश इस अंक को कोमल मनोभावों से परिपूर्ण तथा संग्रहणीय बनाता है। दहेज जैसी आज की ज्वलंत समस्या की पृष्ठभूमि में लिखी कहानी 'स्वप्न भंग' मन को झकझोरती है। इसी तरह 'अंतिम संस्कार' कहानी हमारे उस नैतिक बदलाव की ओर इशारा करती है, जिसमें मूल्यहीनता और स्वार्थपरता दिन प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। **– आनंद स्वरूप श्रीवास्तव, रायबरेली उ.प्र.**

* * *

नवनीत फरवरी अंक मिला। वैसे तो मुझे **नवनीत** के सभी अंक अच्छे लगते हैं, लेकिन जिस अंक में 'निरालाजी' के बारे में सामग्री दी जाती है, मुझे बेहद प्रिय लगता है। इस बार दिनेश दर्पण का संस्मरण लेख 'निराले थे, निरालाजी' मन को छू गया।

निरालाजी जितना स्वाभिमानी हर कोई नहीं हो सकता। एक बार जब इलाहाबाद में एक पहलवान ने अखाड़े में हाथ न मिलाने पर 'नो बॉडी इन इंडिया' कह दिया तो निरालाजी स्वयं लंगोट कस कर कुश्ती के लिए उतर पड़े थे। जबकि उस पहलवान को दारासिंह भी नहीं हरा सके थे। निरालाजी को बहुत मनाया गया। वे नहीं मान रहे थे, तो दारासिंह को पुनः लड़ाया गया।

ग़ज़ल

रहगुज़र कोई जो, तेरी न रही
हम फ़कीरों की भी, फेरी न रही

अपनी सांसों में तुझे जीता हूं
ज़िन्दगी मेरी थी, मेरी न रही

मेरी नींदों में भी कुछ दम न रहा
तेरी भी ज़ुल्फ घनेरी न रही

मिल गया मुझको चरागे उम्मीद
अब कोई राह अंधेरी न रही

तुमने क्यूं जाम न छीना मयकश
तुझमें इतनी भी दिलेरी न रही

एक आवाज़ पे मेरी मख़्मूर
तेरे आ जाने में देरी न रही

अरुणसिंह 'मख़्मूर'

देना बैंक भवन, तीसरा माला दूसरी पास्ता गली, कोलाबा, बम्बई - ४०० ००५

निरालाजी का आशीर्वाद ही था कि इस बार दारासिंह जीत गये। — **चरणदास प्रजापति, देवेन्द्रनगर, पन्ना, म.प्र.**

* * *

नवनीत का फरवरी-९१ अंक पढ़ा। बेहद अच्छा लगा। दिनेश दर्पण का संस्मरण 'निराले थे, निरालाजी' निराला ही प्रतीत हुआ। 'कला वीथिका' में श्री नारायण भक्त ने, श्रीमती विजय-लक्ष्मी सिन्हा की अनूठी ड्रिफ्ट-वुड-आर्ट की जानकारी देकर पाठकों का साधुवाद प्राप्त कर लिया है। अंबिका प्रसाद 'दिव्य' के आंचलिक उपन्यास 'प्रेमतपस्वी : ईसुरी' का प्रकाशन प्रारंभ कर, आपने बुंदेलखंड की विशेष बधाई अर्जित की है। श्री सुरेन्द्र सिंह की हिन्दी कहानी 'मोह भंग' उद्देश्यपूर्ण सफल कहानी है।

— **सेठ प्रेमेन्द्र जैन, दमोह, म.प्र.**

* * *

नवनीत के फरवरी अंक का आवरण पृष्ठ उज्जैन के भगवान महाकाल के अप्रतिम सुंदर अलंकरण से सज्जित होने से बड़ा ही मन को रोचक लगा। **नवनीत** के अन्य आकर्षण भी रुचिकर लगे। फागुनी परिचर्चा व फागुनी कविताएं सामयिक लगीं।

होली के इस रंगा-रंग वातावरण ने **नवनीत** की यह इंद्रधनुषी सौगात मेरे मन को भी रंग गयी। यह अंक बड़ा प्रासंगिक लगा। आपको हार्दिक बधाई।

— **विपिन आर्य, शाजापुर, म.प्र.**

अध्यक्ष के पत्र

राजभवन,
मलाबार हिल,
बम्बई

प्रिय सुहृद,

भवन परिषद (काउंसिल) की ५३ वीं वार्षिक बैठक बम्बई में दिनांक ४ अप्रैल १९९१ को हुई।

अन्य कार्यों के साथ बैठक ने मेरे सम्माननीय सहयोगी उपाध्यक्ष श्री प्रवीणचन्द गांधी तथा श्री नानी पालखीवाला द्वारा प्रस्तुत क्रमशः ५३ वां परीक्षित लेखा जोखा-ब्योरा तथा वार्षिक अहवाल (रिपोर्ट) स्वीकार किया।

अपने अध्यक्षीय भाषण में मैंने चालू वर्ष की महत्वपूर्ण घटनाओं तथा अगले वर्ष के प्रकल्पों पर प्रकाश डाला था। सम्पूर्ण विश्व में फैले भवन परिवार को उनसे परिचित कराने के लिए मैं पुनः उसे भवन्स जर्नल, नवनीत तथा समर्पण में पत्र रूप मे दे रहा हूं।

१६ फरवरी १९९० को मैं भवन का अध्यक्ष चुना गया था। तब से एक वर्ष पूरा हो गया है। पिछले वर्षों की भांति यह वर्ष भी अनेक महत्वपूर्ण घटनाओं से भरा है। उनमें से कुछ खास के संबंध में संक्षेप में कहना चाहूंगा।

प्रारंभ में भवन के सदस्यों एवं मित्रों को श्रद्धांजलियां अर्पित करता हूं जो रिपोर्ट वर्ष के बीच हमारा साथ छोड़कर सदा के लिए चले गये।

१ - श्री द्वाराकादास मेघजी — १० मई १९९०। श्री द्वारकादास भवन कौंसिल के सदस्य कई वर्षों तक रहे वे (श्री मेघजी मथरादास) भवन के संस्थापक सदस्य तथा ट्रस्टी श्री मेघजी मथरादास के सुपुत्र थे। श्री मथरादासजी भवन के प्रथम मुख्य दाताओं में से थे उनकी पुण्यस्मृति में उनके नाम से भवन का कला महाविद्यालय अन्धेरी का उद्घाटन १९४६ भवन के संस्थापक सदस्य सरदार पटेल ने किया था। श्री द्वारकादासजी हमारे पूर्ण रूप से समर्पित ट्रस्टी तथा मानार्ह कोषाध्यक्ष श्री

चरणदास मोदी के कनिष्ठ भ्राता थे।

२– डॉ. गोपालसिंह, गोवा एवं नागालैंड के भूतपूर्व राज्यपाल - ८ अगस्त १९९०। डॉ. गोपाल एक महान विद्वान एवं कुशल प्रशासक थे और भवन से घनिष्ठ रूप से जुड़े थे।

३– श्री माधव प्रसाद बिरला - ३० जुलाई १९९०। मैं श्री माधव प्रसाद बिरला के निधन का विशेष जिक्र करना चाहूंगा क्योंकि वे विगत ४० वर्षों से भवन से बहुत ही घनिष्ठ रूप से जुड़े थे और भवन के लंदन केन्द्र के वे मुख्य स्तम्भ थे। अपनी पत्नी श्रीमती प्रियंवदा देवी से प्रेरित होकर उन्होंने अनेक सार्वजनिक कल्याण की संस्थाओं को स्थापित किया था।

भवन के धर्म सेवा प्रतिष्ठान, पुणे के पास सन्त ध्यानेश्वर के जन्मस्थल एवं पुण्य स्थल आलंदी में संत ज्ञानेश्वर हरिकथा एवं कीर्तन महाविद्यालय, तथा संस्कार, अनुष्ठान एवं पूजाव्रत के संबंध में १०८ आडियो कैसेट के अमर वाणी माला प्रकल्प को उनके लोक हित के कार्यों में प्रवृत्त होने के कारण समय-समय पर लाभ मिलते रहे हैं। श्री एम. पी. बिरला अतीत और अर्वाचीन के बड़े सुखद समन्वय थे। वे कर्मवीर एवं दानवीर थे। उनके निधन से भवन ने एक अपना महान् पोषक खो दिया। श्रीमती प्रियंवदा ने अपने तेजस्वी पति की परंपरा को जारी रखा है। अभी दो मास पूर्व भवन के लंदन केन्द्र को १ लाख पौण्ड का दान किया है।

चालू वर्ष की सबसे महत्वपूर्ण घटना परमपूज्य धर्मगुरु दलाई लामा को २७ नवम्बर १९९० को आयोजित विशेष पदवीदान समारोह में भवन की सम्मान्य सदस्यता प्रदान करना है। इस प्रकार साठ लाख तिब्बती लोगों के आध्यात्मिक और सांसारिक प्रमुख तथा नोबेल पुरस्कार विजेता ने भवन परिवार में सम्मिलित होकर प्रसन्नता बिखेर दी है।

प्रसन्नता की कुछ और खबरें हैं। मदर टेरेसा ने भवन का सम्मान्य सदस्य बनने का आमन्त्रण स्वीकार कर लिया है। महायोगी श्री अरविन्द के रहस्यवादी एवं विद्वान शिष्य तथा संयुक्त राज्य अमेरिका में चिन्मय केन्द्र स्थापित करने वाले श्री चिन्मय तथा संयुक्त राज्य अमेरिका में लोटस (Light of Truth universsal shrine) के स्वामी सच्चिदानन्द ने भी भवन की सम्मान्य सदस्यता स्वीकार करने की सहमति दे दी है।

गर्व की बात है कि भवन परिवार के कुछ सदस्यों को राष्ट्रीय पुरस्कार एवं सम्मान प्राप्त हुए हैं। उनमें से हैं, श्री मोरारजी देसाई जो भवन से उसके प्रारंभिक दिन से जुड़े हुए हैं तथा भवन के सम्मान्य सदस्य हैं, को राष्ट्र के सर्वोच्च सम्मान 'भारत रत्न' से विभूषित किया गया है। श्रीमती एम. एस. सुब्बूलक्ष्मी

भवन की सम्मान्य सदस्या को इन्दिरा गान्धी पुरस्कार प्राप्त हुआ; श्री हरीन्द्र दवे (भवन परिषद के सदस्य) को वी. डी. गोयनका पुरस्कार, महाराष्ट्र गौरव पुरस्कार तथा समन्वय पुरस्कार प्राप्त हुआ, तथा भवन के कार्यसचिव एवं निदेशक श्री एस. रामकृष्णन् को राष्ट्रीय सम्मान 'पद्मश्री' से विभूषित किया गया है।

मुझे बड़ी प्रसन्नता है कि मद्रास के डाइरेक्टर के. सुब्रमण्यम मेमोरियल ट्रस्ट तथा नारद गण सभा द्वारा संयुक्त रूप से आयोजित सात दिनों के रामायण नाट्योत्सव के उद्घाटन दिवस दिनांक १८-३-१९९१ पर परम पूज्य स्वामी दयानन्द सरस्वती भवन मद्रास केन्द्र के अध्यक्ष न्यायमूर्ति एम. एम. इस्माइल को 'रामरत्नम्' की उपाधि से विभूषित किया। भक्त श्रेष्ठ डॉ. पद्म सुब्रह्मण्यम इस उत्सव के आयोजक थे।

न्यायमूर्ति इस्माइल मद्रास उच्च न्यायालय से १९८६ में सेवा-निवृत्त हुए।

वे महान कानून वेत्ता, उत्कट देशभक्त विद्वान एवं ओजपूर्ण वक्ता हैं। रामायण पर उन्होंने अनेक गहरी अंतर्दृष्टि लिए हुए पांडित्यपूर्ण भाषण दिये हैं तथा अनेक लेख भी लिखे हैं। भवन मद्रास केन्द्र के उपाध्यक्ष के रूप में वे विगत कई वर्षों से हमसे जडे हुए हैं।

मुझे जिक्र करते हुए प्रसन्नता हो रही है कि भवन के राऊरकेला केन्द्र के अध्यक्ष श्री सुरेन्द्रनाथ द्विवेदी को अरुणाचल प्रदेश का राज्यपाल नियुक्त किया गया है।

बम्बई गांधी स्मारक निधि के सहयोग से भवन ने सर्व धर्म मैत्री प्रतिष्ठान की स्थापना की यह चालू वर्ष की दूसरी महत्वपूर्ण घटना है। प्रतिष्ठान का उद्देश्य विभिन्न धर्मों के बीच समन्वय स्थापित करना तथा लोगों में भ्रातृ भाव बढ़ाना है। प्रतिष्ठान अब तक कई कार्यक्रमों का आयोजन कर चुका है। योजना है कि सांप्रदायिक सद्भाव पर वीडियो फिल्म बनायी जाय तथा उसके पश्चात् नैतिक और आध्यात्मिक मूल्यों को बढ़ावा देने के लिए मासिक वीडियो पत्रिका निकाली जाय।

यह शुभ शकुन है कि भवन के संस्कृत महाविद्यालय में पूर्णकालिक छात्रों की संख्या ११५ पहुंच गयी है। भवन की संस्कृत परीक्षाओं में प्रविष्ट होने वाले परीक्षार्थियों की संख्या ३००० से बढ़कर अब ४५००० हजार हो गयी है।

भवन और वैज्ञानिक समुदाय के बीच बढ़ता संपर्क सही दिशा में एक कदम है।

भवन और भारत सरकार के अणुशक्ति विभाग ने २८ फरवरी १९९१ को 'आधुनिक विज्ञान एवं प्राचीन निरीक्षण' पर एक

विचार गोष्ठी का आयोजन किया था।

उत्साहवर्धक बात है कि १०० से अधिक उच्च वैज्ञानिक, तन्तु वैज्ञानिक, मनोवैज्ञानिक एवं मनीषियों ने स्वामी रंगनाथानन्दजी तथा अणुशक्ति आयोग के अध्यक्ष डॉ. पी. के. आयंगर की उपस्थिति में विचार विनिमय किया।

बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय ने अपने प्लेटिनम जयन्ती समारोह के कार्यक्रमों के अन्तर्गत वाराणसी में विज्ञान और मानवमूल्य के संबंध में एक भवन का गान्धी केन्द्र स्थापित करने का निर्णय लिया है। बम्बई में श्री एस. रामकृष्णन् से हुई बातचीत के फलस्वरूप उपकुलपति प्रो. आ. पी. रस्तोगी ने विज्ञान, तकनीकी तथा मानवशास्त्र के प्राध्यापकों एवं छात्रों की एक समिति गठित की है जो प्रकल्प का प्रारूप तैयार करेगी।

उपकुलपति प्रो. रस्तोगी के आमन्त्रण पर संसद सदस्य तथा बेंगलूर में भवन के गान्धी केन्द्र के अध्यक्ष, डॉ. राजा रामन्ना और श्री एस. रामकृष्णन् आगे की बातचीत के लिए वाराणसी जायेंगे।

एक महान सांस्कृतिक संस्था भारतीय विद्या भवन तथा मुख्य राष्ट्रीय विश्व विद्यालय बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय के बीच रचनात्मक सहयोग की बड़ी उम्मीद है।

विज्ञान तथा अध्यात्म का उचित समन्वय मानवता की समस्याओं को हल करने में सक्षम है। अध्यात्म से जुड़ा हुआ विज्ञान सर्वोदय की दिशा में तथा अध्यात्म से अलग विज्ञान मानवता को सर्वनाश की दिशा में ले जाता है। यह ज्ञान हमें भारी कीमत चुका देने के बाद मिल रहा है।

चालू वर्ष में भवन ने अन्य क्षेत्रों में भी प्रगति की है। जलगांव में एक नया केन्द्र खोला गया है। भद्रावती, गुरुवायूर, रिहंडनगर, रायपुर, रामचन्द्रपुरम में नये केन्द्र खोलने की प्रक्रिया पूरी कर ली गयी है। सिडनी (आस्ट्रेलिया) मास्को (रूस) बर्लिन (जर्मनी) तथा नैरोबी (केन्या) में नया केन्द्र खोलने का कार्य प्रारंभ हो गया है।

डेढ़ करोड़ की लागत से बने भवन के आधुनिक राजाजी सभागृह का गृहप्रवेश स्वामी रंगनाथानन्दजी द्वारा २९ अक्तूबर १९९० को कराया गया।

भवन के प्रकाशन के संबंध में एक खुशखबरी देना चाहता हूं। हमारे प्रकाशनों की ख्याति बढ़ रही है उसकी मान्यता भी बढ़ रही है। पुणे और अजमेर विश्वविद्यालयों ने भवन के प्रकाशनों को पाठ्यक्रम में रखा है। न्यायमूर्ति एम. सी. छागला की आत्मजीवनी 'रोज़ेज इन डिसेम्बर' पुणे विश्व विद्यालय के पाठ्यक्रम में तथा 'पेजेन्ट आफ ग्रेट लाइव्ज़' (भवन्स जर्नल में प्रकाशित अनेक लेखों का संकलन) अजमेर विश्वविद्यालय के पाठ्यक्रम में रखी गयी है।

भवन का कल्चर कोर्स रीडर्स, जो ५ से १५ वर्ष के छात्रों के लिए लिखी गयी है, को अनेक विद्यालय अपने पाठ्यक्रम में रखते जा रहे हैं। उनका हिन्दी, गुजराती और तमिल रूपान्तर भी अब निकल गया है। मलयालम और तेलुगु रूपान्तर का काम चल रहा है।

हिन्दी के अतिरिक्त अब हम अपने प्रकाशनों का बंगाली, कन्नड, मराठी, मलयालम और तेलुगु रूपान्तर भी प्रकाशित करने लगे हैं।

भारतीय शास्त्र मंजूषा प्रकाशन समिति त्रिवेन्द्रम ने मलयालम में लिखी अपनी एक प्रसिद्ध पुस्तक भारतीय शास्त्र मंजूषा– भारतीय विज्ञान की विद्यावली ले. एम. एस. श्रीधरन का अंग्रेजी रूपान्तर करने के लिए निवेदन किया। वर्षों के कठिन परिश्रम के पश्चात् पुस्तक तीन अंकों में पूरी कर ली गयी है। भारतीय शास्त्र मंजूषा भारतीय विज्ञानों पर एक विशद पुस्तक है जो प्रमाणों-सहित पूर्ण विवरण देती है। प्राचीन काल का संगीत और नृत्य भी उसमे सम्मिलित है। अब विचार है कि उसका प्रकाशन अंग्रेजी में शीघ्र किया जाय। यह भवन के एंसियन्ट इनसाइट एण्ड माडर्न डिसकवरीज प्रकल्प का बड़ा योग होगा।

स्वस्थ एवं सुन्दर साहित्य के प्रकाशन की सुविधा किसी गतिशील शिक्षण एवं सांस्कृतिक संस्था के पास होनी आवश्यक है। इसीलिए भवन के संस्थापक दूरदर्शी कुलपति मुंशी ने भवन के प्रारंभ काल में एक प्रेस प्राप्त कर लिया था। खुशी है कि श्री दुर्गा प्रसाद मण्डेलिया की देखरेख में अच्छा कार्य कर रहा है। छ. वर्ष पुराने प्रेस का आधुनिकीकरण किया गया है और नये वित्तीय वर्ष १९९१ से उसको 'मुद्रण भारती' का नया नाम दिया गया है।

राष्ट्र की प्रगति तथा उसके स्वास्थ्य के लिए ठीक प्रकार की शिक्षा का होना आवश्यक है। भारत के विभिन्न भागों में विद्यालयों एवं विद्याश्रमों की श्रृंखला की मुख्य विशेषता उनमें प्राचीनता एवं आधुनिकता, तथा पश्चिमी संस्कृति तथा पूर्वी संस्कृति के उत्तम जीवन मूल्यों का उचित समन्वय है।. छात्र के चरित्र निर्माण पर विशेष जोर है।

मैंने प्रायः अपने सभी विद्यालयों को देख लिया है। हाल में ही १७ मार्च को दिल्ली का विद्यालय तथा १९ मार्च को जयपुर विद्यालय को देखा। प्रसन्नता एवं सन्तोष की बात है कि हमारे सभी विद्यालय अच्छी तरह कार्य कर रहे हैं।

रेणुकूट के पास रिहंडनगर भवन केन्द्र से राष्ट्रीय ताप शक्ति आयोग ५ करोड़ रुपये के आधुनिक विद्यालय के प्रकल्प की बात चल रही है।

ग्रामीण विकास के राष्ट्रीय केन्द्र हैदराबाद ने अभी हाल में ही ३ करोड़ रुपये का विद्यालय दिया हैं। इस प्रकार के अनेक प्रस्ताव अपने आप आरहे हैं।

इसलिए हम एक 'शिक्षण भारती' योजना पर विचार कर रहे हैं जो हमारे विद्याश्रमों एवं विद्यालयों– पुराने एवं नये सभी को प्रगति के पथ पर रख सके। सुख और सन्तोष है कि अनुभवी और निःस्वार्थी शिक्षाविद् इस कार्य में सहयोग देने के लिए आगे आ रहे हैं।

योग्य एवं समर्पित अध्यापक अब कम होते जा रहे हैं। पुराने अध्यापकों को पुनः पुनः प्रशिक्षित करते रहना चाहिए। इसलिए हमने स्वामी रंगनाथानन्दजी तथा रामकृष्ण मिशन के स्वामी जितात्मानन्दजी के निदेशन में अध्यापक प्रशिक्षण महाविद्यालयों की योजना बना ली है। इस प्रकार का अध्यापक प्रशिक्षण महाविद्यालय अगले शिक्षा वर्ष में हैदराबाद में खोला जायेगा।

मैंने अनेक बार जन-समाओं में घोषित किया है कि मेरे ६० वर्ष के सामाजिक जीवन का सर्वोत्तम काल १९८० के वर्ष हैं। उस समय मैंने दलगत राजनीति छोड़कर अपनी शक्तियों को भवन के कार्य में लगाया था।

कुलपति मुंशी चरित्रवान, समर्पित और कुशल व्यक्तियों में निःस्वार्थ सेवा की भावना भरना चाहते थे। जब कभी तथा जहां कहीं से कोई व्यक्ति मिला तो उसे चुन लेना उनकी विशेषता थी। सबसे बड़ी सम्पत्ति का निर्माण उन्होंने निष्ठावान वैतनिक और अवैतनिक कार्यकर्ताओं को एकत्र कर किया। सचमुच मानव स्रोत सबसे कीमती सम्पत्ति है और भवन इस माने में निरन्तर धनी होता जा रहा है।

पिछले एक वर्ष में बम्बई में निवास से मुझे भवन के वैतनिक और अवैतनिक कार्यकर्ताओं की कार्य करने की क्षमता तथा उनके कष्टों को झेलने की क्षमता निकट से देखने को मिली।

देश-विदेश में इस बात पर आश्चर्य प्रकट किया जाता है कि किस प्रकार जो एक गैर सरकारी संगठन है तथा जो धनवान और शक्तिशाली व्यक्तियों की कठपुतली नहीं है, निरन्तर विकसित और विस्तृत होता जा रहा है।

बहुत से ऐच्छिक जन-संगठन अपने संस्थापक के न रहने पर बिखर गये। यह बात भारत और विश्व में समानरूप से घटित हुई है। गुणनिधि गोपाल कृष्ण गोखले द्वारा संस्थापित, श्रीनिवास शास्त्री, पंडित हृदयनाथ कुंजरू तथा अनेक महान देशभक्तों द्वारा पोषित 'भारत सेवक समाज', गुरुदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर द्वारा प्यार से सुयोजित तथा कठिन परिश्रम से निर्मित 'शान्तिनिकेतन', लाला लाजपत राय द्वारा स्थापित 'जन सेवक समाज', अपने संस्थापकों के समय की तुलना में अब नाममात्र के लिए अवशिष्ट हैं। कदाचित् भवन ही एक ऐसी संस्था है जो अपने संस्थापक के निधन (१९७१) के

पश्चात जीवित ही नहीं रही, अपितु बड़ी तेजी से प्रगति की ओर बढ़ती रही। इस सम्बन्ध में कुछ तुलनात्मक आंकड़े इस प्रकार हैं।

भारत में	**१९७१ में**	**१९९० में**
केन्द्रों की संख्या	१५	५७
अन्तर्गत संस्थाओं की संख्या	३०	८५
प्रकाशनों की संख्या	३७५	१००८
कर्मचारियों की संख्या	१३००	३५००
छात्रों की संख्या		
पूर्ण कालिक	१२०००	४६०००
अल्प कालिक	५००००	५४०००
सम्पत्ति (लाख रुपयों में)	रु. ३५५	रु. २९७०
विदेशों में		
केन्द्रों की संख्या	—	५

जब हम भवन की ५२ वर्ष की प्रगति का अवलोकन करते हैं तो हमें सन्तोष अवश्य मिलता है। इससे हमें यह नहीं भूल जाना चाहिये कि हमें मीलों जाना है और हमारी यात्रा बहुत लम्बी है। हमें सम्पूर्ण विश्व की मानवता तक पहुंचना है। हमें प्रत्येक हृदय में श्रद्धा, प्रेम, मेल, शान्ति और समझदारी का बीज बोना है। हमारी इस यात्रा का अन्त नहीं है। देश-विदेश में जनमानस ने भवन से बड़ी ऊंची-ऊंची उम्मीदें कर रखी हैं। राष्ट्रीय पुनर्निर्माण एवं सांस्कृतिक जागरण के कार्यक्रमों को साकार करने के लिए वे भवन से नैतिक बल के सृजन की अपेक्षा करते हैं। इसलिए हमारी जिम्मेदारी अधिक बढ़ जाती है, साथ ही कार्यभार भी।

सन्तों और महात्माओं की शुभेच्छायें एवं उनके आशीर्वचन हमारी शक्ति एवं प्रेरणा के बड़े स्रोत हैं। उदारता के साथ दी गयी सहायता, सहयोग एवं समर्थन जो परोपकारी व्यक्तियों द्वारा अथवा संस्थाओं द्वारा हमें मिलती है हमारे जीवन स्रोत हैं। केन्द्रीय सरकार एवं राज्य सरकारों ने जो विश्वास व्यक्त किया है तथा भवन के सदस्यों से जो मार्गदर्शन एवं सलाह मिलती है, उससे हमारा भार हल्का हो जाता है। इन सबके ऊपर सद्भावना, सहानुभूति एवं सक्रिय समर्थन का विशाल भण्डार जो देश विदेश के मित्रों एवं शुभेच्छुओं से मिला है, वह वेशकीमती है। इस प्रकार की व्यक्त और अव्यक्त संपदा लेकर हम आशा और विश्वास के साथ भविष्य में बढ़ रहे हैं

अपनी परिसमाप्ति के पूर्व मैं अपने पूर्वाधिकारियों, की जिन्होंने संस्थापक कुलपति मुन्शी के निधन के पश्चात् भवन जलपोत का संचालन पूर्ण श्रद्धा एवं कुशलता के साथ किया, उनके प्रति अगाध कृतज्ञता व्यक्त करता हूं। वे हैं

श्रीमती लीलावती मुंशी, श्री धरमसी भाई खटाऊ तथा श्री गिरधारीलालजी मेहता। १९८३ में श्री धरमसी भाई खटाऊ के निधन के पश्चात १९९० तक श्री गिरधारीलालजी ने भवन के अध्यक्ष पद की भारी जिम्मेदारी वहन की। श्री गिरधारीलालजी के काल में मन्दिर नगर तिरुपति में तथा कनाडा और पुर्तगाल में भवन केन्द्र खुले। प्रकल्पों में उल्लेखनीय धर्म सेवा प्रतिष्ठान और आलन्दी में सन्त ज्ञानेश्वर हरिकथा और कीर्तन महाविद्यालय की स्थापना इसी काल की देन है। १९५० से ही भवन की विविध प्रकार की सेवाओं के उपलक्ष्यमें भवन ने श्री गिरधारीलाल जी को (इमेरिटस) सेवानिवृत्त सम्मान्य अध्यक्ष नियुक्त कर उनके प्रति सम्मान व्यक्त किया है।

मैं भवन के उपाध्यक्ष श्री प्रवीणचन्द्र [illegible] गान्धी और श्री नानी ए. पालखीवाला के प्रति अपना आभार व्यक्त करता हूं। उन्होंने मुझे अध्यक्ष के रूप में अपने कर्त्तव्यों को निभाते समय नेक सलाह दी है। मैं विश्वस्त मण्डल, कार्य समिति और परिषद के अपने सहयोगियों के प्रति आभार व्यक्त करता हूं। उनके सहयोग, समर्थन विश्वास एवं स्नेह के कारण हमारा काम काफी हल्का हुआ है।

मैं देश-विदेश में भवन और उसके केन्द्रो में, विद्यालयों में तथा महाविद्यालयों तथा अन्तर्गत संस्थाओं में कार्य करने वाले कर्मचारियों के प्रति भी आभार व्यक्त करता हूं।

आप सभी को मंगल कामनाओं के साथ,

भवदीय
सी. सुब्रमण्यम

□

फ्लोरेन्स के मूर्तिकार दोनातेल्लो की कलाकृतियों की प्रायः आलोचना हुआ करती थी। एक बार उसे कुछ मूर्तियां बनाने के लिये पीसा बुलाया गया। वहां जाकर उसने कुछ मूर्तियां बनायीं। हर कोई उसकी तारीफ के पुल बांधने लगा। उसे पीसा में और भी मूर्तियां बनाने का काम मिला। लेकिन उसने उन्हें लेने से इंकार कर दिया।

जब उसके एक साथी ने इसका कारण पूछा तो उसने कहा, 'मुझे डर है कि प्रशंसा सुन-सुनकर मैं कहीं इतना आत्मसंतुष्ट और सुस्त न हो जाऊं कि मेरी कला का विकास ही रुक जाये। फलोरेंस में अपने आलोचकों की कृपा से मैं कभी आत्मसंतुष्ट या चुस्त नहीं हो सकता, और दिन-प्रतिदिन अपनी कला का सुधार करता रहता हूं।'

— प्रभाती

सांस्कृतिक मंच

इंडो-नार्विजन इनफारमेशन एंड कल्चरल फोरम

'इंडो-नार्विजन इनफारमेशन एंड कल्चरल' फोरम के तत्वावधान में २४ फरवरी को तीसरा अंतर्राष्ट्रीय कविता समारोह भारतीय लेखक एवं पत्रकार सुरेशचंद्र शुक्ल की अध्यक्षता में संपन्न हुआ।

कार्यक्रम के अतिथि थे ओसलो नगर के भूतपूर्व मेयर अलबर्ट नूरडेंगन और नार्विजन सिनेमा जगत की सुप्रसिद्ध निर्माता एवं स्वीडन के भूतपूर्व प्रधानमंत्री हानसेन की पुत्री मारकूसेन थीं। भारतीय दूतावास ओसलो से राजदूत के सेक्रेटरी वी. आर. पंडित तथा प्रथम सचिव श्री पौल उपस्थित थे।

उद्घाटन समाजशास्त्री हरल्ड बूरवाल्द ने नार्वे के सुप्रसिद्ध कवियों में इंगेर हागेरूप और रोल्फ याकूबसेन की कविताओं का पाठ करके किया।

कविता समारोह में भारत, नार्वे, स्वीडेन, पाकिस्तान, बांगलादेश, श्रीलंका, मेक्सिको, चिली और गांबिया के कवियों ने अपनी-अपनी कविताएं पढ़ीं।

कार्यक्रम का संचालन मधु शर्मा एवं सज्जा माया भारती ने किया। इस अवसर पर भारतीय कलाकारों ने कथक एवं लोकनृत्य प्रस्तुत किया। श्री हरभजन सिंह बंसल ने भारतीय शास्त्रीय संगीत प्रस्तुत किया।

नृत्य का संचालन संगीता शुक्ल ने किया। भारतीय दूतावास के प्रतिनिधि ने अपने भाषण में कहा कि इंडो नार्विजन इनफारमेशन एंड कल्चरल फोरम के कार्यों ने भारत-नार्वे के सांस्कृतिक संबंधों को तो मजबूत बनाया ही है, साथ ही अन्य देशों के मध्य मैत्री के पुल का भी कार्य किया है। **— माया भारती**

* * *

नवगीत विचार-गोष्ठी

दि. २८ मार्च को ठाणे में डॉ. संपत ठाकुर की अध्यक्षता में डॉ. गिरिजाशंकर त्रिवेदी (संपादक : हिन्दी नवनीत) तथा धीरेन्द्र अस्थाना (फीचर संपादक - सबरंग - जनसत्ता मुंबई) का सम्मान-समारोह संपन्न हुआ। कवि एवं समीक्षक डॉ. रविनाथ सिंह विशेष अतिथि के रूप में उपस्थित थे। डॉ. त्रिवेदी ने अपने सम्मान के उत्तर में

कहा कि समाज द्वारा प्राप्त सम्मान हिंदी सेवा का सम्मान है। श्री धीरेन्द्र अस्थाना ने इस सम्मान को समाज द्वारा दिया गया प्रेम बताया। दोनों का सम्मान श्री रघुवीर शरण तिवारी ने श्रीफल और शाल देकर किया।

इस अवसर पर नवगीत-विचार गोष्ठी आयोजित की गयी। श्री सच्चिदानंद सिंह 'समीर' ने 'नवगीत: स्वरूप और विकास-यात्रा' शीर्षक से अपना आलेख पढ़ा। श्री 'समीर' ने बताया कि नवगीत जीवन का युग — सापेक्ष्य यथार्थोन्मुख काव्य है। वह स्वतः स्फूर्त संवेदना जगत का युग- बोधीय गीतात्मक अभिव्यक्ति का भारी जल है, जो रचना के भीतर उठनेवाले सृजनात्मक तापों को संश्लिष्टता का रूप दे उन्हें अनुकूलित और संतुलित करता है।

डॉ. सतीश पांडेय ने 'नवगीतों में सामाजिक और राजनैतिक चेतना का व्यवस्था - विरोधी स्वर' शीर्षक आलेख में बताया कि नवगीतकारों ने आम आदमी की दुरवस्था का मात्र चित्रण ही नहीं किया, बल्कि इन स्थितियों के लिए जिम्मेदार ताकतों की पड़ताल भी की है।

आलेखों पर हुई चर्चा-परिचर्चा में हरजिंदर सिंह सेठी, धर्मेन्द्रकुमार गुप्त, राजाराम सिंह और भगवतलाल उत्पल ने भाग लिया। काव्य-गोष्ठी में सच्चिदानंद सिंह समीर, हरजिंदर सिंह सेठी, धीरेन्द्र अस्थाना, धर्मेन्द्रकुमार गुप्त, प्रबोध कुमार गोविल, देवमणि पांडेय, भगवत उत्पल, राजाराम सिंह, विजय शंकर चतुर्वेदी, हैरत हिन्दुस्तानी, एन. बी. सिंह 'नादान', प्रदीप शर्मा, इंदिरा राज और संतोष जैन ने काव्य पाठ किया। संचालन संतोष जैन ने किया।

* * *

अमृतलाल नागर स्मृति पर्व

कथा मनीषी पं. अमृतलाल नागर की अमृत वर्ष की पहली पुण्य तिथि पर लखनऊ में 'अमृतलाल नागर स्मृति पर्व' का द्विदिवसीय आयोजन किया गया। लखनऊ की 'सरोकार बाल नाट्य अकादेमी' तथा 'कल्पना आर्ट्स ग्रुप' के साथ सुल्तानपुर की 'संवाद' संस्था की सहभागिता से यह पर्वोत्सवी आयोजन बंधु कुशावर्ती के संयोजन में सपन्न हुआ। लखनऊ विश्वविद्यालय के कुलपति प्रो. हरिकृष्ण अवस्थी ने उद्घाटन तथा साक्षात्कारों के संग्रह 'अमृत मंथन' का लोकार्पण किया। डॉ. शरद नागर तथा आनंद प्रकाश त्रिपाठी के द्वारा संपादित तथा किताब घर, दिल्ली द्वारा प्रकाशित इस ग्रंथ में नागरजी से समय-समय पर लेखकों, पत्रकारों तथा प्रसिद्ध साहित्यकारों के जरिये लिये गये ३३ साक्षात्कारों को संजोया गया है।

नागरजी के चौक स्थित निवास पर एक कथा-संगोष्ठी हुई।

— साहेब बयाल

* * *

डॉ. गुप्त का सम्मान

पृथ्वीपुर (टीकमगढ़) 'बुंदेल भारती साहित्य परिषद्' के वसंत महोत्सव के अवसर पर बुंदेलखंड की संस्कृति, साहित्य और कला कें पारखी विद्वान डॉ. नर्मदा प्रसाद गुप्त को इसी वर्ष स्थापित 'सरस साहित्य-सम्मान' प्रदान किया गया। कालिका प्रसाद शुक्ल 'विजयी' की कृति 'काव्यगंगा' का विमोचन करते हुए डॉ. गुप्त ने कहा कि सच्ची कविता जुड़ाव की होती है, विघटन की नहीं। संस्था के अध्यक्ष मनोहरलाल प्रभाकर ने आभार व्यक्त किया। संचालन किया सचिव उमाशंकर खरे 'उमेश' ने और अध्यक्षता की कवि कन्हैयालाल 'कलश' ने।

— वीरेन्द्र कौशिक

* * *

ब्राह्मण समाज का वसंतोत्सव

ब्राह्मण समाज द्वारा धुलेटी के दिन वसंतोत्सव स्नेह सम्मेलन मालाड में मनाया गया। समारोह की अध्यक्षता 'नवनीत' हिंदी के संपादक डॉ. गिरिजाशंकर त्रिवेदी ने की तथा पं. निरंजनलाल शर्मा, श्री घनश्याम तिलावट, श्री विनोद चौमाल, श्री आर. एस. द्विवेदी, प्रो वीरेन्द्रनाथ शर्मा ने अपने विचार प्रकट किये।

इस अवसर पर 'हनुमान सेवा समिति', बोरीवली के कलाकारों ने श्री विनोद खंडेवाल के नेतृत्व में चंग-ढप, धमाल का कार्यक्रम प्रस्तुत किया। बाद में श्री मधुकर गौड़ के संचालन में एक कवि सम्मेलन हुआ, जिसमें विनोद चौमाल, सीमा चटर्जी, मालिनी बिसेन, सरला शर्मा, हृदयेश मयंक, यज्ञ शर्मा, उमेश माथुर, मुरारीलाल शर्मा 'मधुप', रामनिरंजन शास्त्री, प्रो. वीरेन्द्रनाथ शर्मा, अंजुम अंसारी, चंद्रसेन कमर एवं डॉ. गिरिजाशंकर त्रिवेदी तथा अंगद सिंह बिसेन आदि कवियों ने कविता पाठ किया।

प्रारंभ में अतिथियों का स्वागत विनोद चौमाल ने किया। स्वागत पं. निरंजनलाल शर्मा 'गुरुजी' ने किया।

- विनोद चौमाल

* * *

त्रैवार्षिक कला प्रदर्शनी

बहावलपुर हाउस के तुलसी सदन, दिल्ली में आयोजित सातवीं अन्तर्राष्ट्रीय त्रैवार्षिक प्रदर्शनी कला जगत के कला प्रेमियों के साथ-साथ जन-मानस के लिए भी आकर्षण का केन्द्र थी।

इस वर्ष प्रदर्शनी में भारत सहित ३९ देशों के कलाकारों की कृतियों का प्रदर्शन हुआ है। इस प्रदर्शनी में दस कलाकारों को पुरस्कृत किया जाता है। किन्तु इस वर्ष केवल आठ कलाकारों को पुरस्कृत किया गया है।

पुरस्कृत कलाकृति में भारत की श्रीमती प्रयाग की 'बैचलर हाउस',

जापान के मिओ शिराई की 'हरा दानव', साइप्रस के एलेनी की 'पर्यावरण यत्रणा', ब्रिटेन के गिलियन आयर्स की 'मकर संक्रांति' थीं।

अन्य पुरस्कृत कलाकारों में भारत के ही अब्बास बाटलीवाला की 'नास्टेलाजिया', इजिप्त के अब्दुल अहमद के मूर्ति शिल्प 'स्मूथ स्टेप', कोरिया के सुहजुगताओ की 'इम्प्लीकेशंस' तथा मेक्सिको के रोजालिदा अल्बुएरनो की 'ग्राफिक' कृतियां सराहनीय रहीं।

इस प्रदर्शनी की एक प्रमुख विशेषता यह है कि इसमें पुरस्कृत आठ स्थानों में पांच स्थान महिला कलाकारों ने प्राप्त किये हैं। — **शेखर जोशी 'चितेरा'**

* * *

अशोक गुजराती पुरस्कृत

प्रा. डॉ. अशोक गुजराती (अकोला) को उनकी पुस्तक 'अंगुलीहीन हथेली' के लिए भारत सरकार ने वर्ष १९९०-९१ के लिए पांच हजार रुपये का पुरस्कार देकर सम्मानित किया है। केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय, शिक्षा एवं मानव संसाधन विकास मंत्रालय द्वारा यह पुरस्कार हिन्दीतर भाषी लेखकों को उनके हिंदी साहित्य में योगदान के लिए हर वर्ष दिया जाता है।

* * *

सम्मान

'माध्यम' साहित्यिक संस्थान, लखनऊ की ओर से श्री मनोहर श्याम जोशी को उनके श्रेष्ठ हास्य-व्यंग्य लेखन के लिए 'अट्टहास' - ९० शिखर सम्मान से तथा श्री प्रदीप चौबे को 'अट्टहास' - ९० युवा रचनाकार सम्मान से अलंकृत किया गया।

हास्य-व्यंग्य कवि सम्मेलन में श्री हुल्लड़ मुरादाबादी, श्री शरद जोशी, श्री प्रदीप चौबे, श्री गोविंद व्यास, के. पी. सक्सेना, सुरेश उपाध्याय, डॉ. सरोजिनी प्रीतम, सूर्यकुमार पांडेय आदि सुप्रसिद्ध रचनाकारों ने भाग लिया।

— **डॉ. सुरेन्द्र विक्रम**

फ्रांस का सम्राट लुई पंद्रहवां एक दिन ताश खेल रहा था और किसी बात पर अपने प्रतिद्वंद्वी को गलत साबित करते हुए जोश में बोलने लगा। सब दरबारी चुपचाप सुनते रहे। इतने में दे ग्रेसों नाम का एक राजदूत दरबार में आया। सम्राट लुई ने उससे पूछा : 'अब आप ही बताइये कि मैं गलत हूं या सही?'

'आप गलत हैं, जहांपनाह!' राजपूत ने उत्तर दिया।

'सारी बात बिना जाने आप मुझे गलत कैसे कह रहे हैं?'

'जहांपनाह! अगर आप सही होते, तो आपके ये तमाम दरबारी इस तरह चुप्पी न साध लेते; बल्कि आपकी हिमायत में बढ़-चढ़कर बोलते।' — **प्रभाती**

मासिक भविष्य फल : मई १९९१

□ पं. वी. के. तिवारी

मेष : (१४ अप्रैल - १४ मई)

आपके अहं की संतुष्टि १२ तारीख तक होती रहेगी। मनोबल एवं मान पर आंच नहीं आ सकेगी। आर्थिक स्थिति आवश्यकता की दृष्टि से सुखद रहेगी। विवाद एवं षड्यंत्र के अवसर अधिक हैं। व्यय एवं चिंता उत्तरोत्तर बढ़ती जायेगी। वर्ष के प्रतिकूल समय की क्षणिकाएं आपको हतप्रभ एवं किंकर्तव्य-विमूढ़ कर देंगी। प्रारंभिक पंद्रह दिनों में यात्रा अथवा महत्वपूर्ण कार्य में हाथ डालने के वांछित परिणाम नहीं मिल सकेंगे। १३ व १४ दिनांक विशेषतः वर्जित हैं। द्वितीय सप्ताहांत का समय एवं माह के अंतिम सप्ताह के दिन प्रतिकूलता की पीड़ा से भरे होंगे। धैर्य एवं सूझ-बूझ उपयोगी रहेंगे।

वृष : (१५ मई - १५ जून)

यह माह सुख-दुःख की धूपछांव से युक्त रहेगा। प्रयासों के परिणामों की प्राप्ति पूर्व संचित कर्मों के आधार पर ही होगी। पूर्वार्ध में स्वास्थ्य बाधा एवं पद की ओर से मनोशंका बनी रहेगी। संतान एवं विद्या की दृष्टि से ग्रह सहयोगी दृष्टि रखेंगे। पारिवारिक सदस्यों से प्रगाढ़ संबंध रहेगा। दिनांक २० से मासांत तक उत्तरोत्तर व्यक्तिगत प्रभाव बढ़ता जायेगा। सफलता हस्तगत होगी। राजनीतिक उत्कर्ष होगा, परंतु संबंधियों, परिचितों एवं परिवार के सदस्यों के सुख में व्यवधान उत्पन्न होगा। प्रथम सप्ताह के अंतिम दो दिन एवं २० से २४ तारीखें जीवन-पथ की कटंकाकीर्णता को प्रमाणित करेंगी।

मिथुन : (१६ जून - १६ जुलाई)

इस माह मंत्रणा, चर्चा, वार्ता, जोखिम एवं व्यवधानों से युक्त रहेंगी। प्रथम १५ तारीख तक नितांत कठिनाइयों का दौर चलेगा। मनोबल बनाये रखें, व्यावसायिक सफलता हस्तगत होगी। मनोनुकूल कार्य समय पर पूर्ण होंगे। शत्रु परांगमुखी होंगे। निराशावाद आपकी गतिविधि प्रभावित न कर सके, इस हेतु सतर्क रहें। माह १० तारीख से

मासांत तक का समय वर्ष का श्रेष्ठ समय सिद्ध हो सकता है।

कर्क : (१७ जुलाई - १६ अगस्त)

इस माह समय कभी छल करेगा तो कभी सौगात देगा। बाधाओं एवं सफलता का सामंजस्य प्राप्त होगा। यह वर्ष का श्रेष्ठतम समय भी सिद्ध हो सकता है। निःस्वार्थ, अहंवादी, विद्वान, एवं परामर्शदाता वर्ग आपके जीवन पथ को आलोकित कर गंतव्य का मार्ग सुलभ कर देंगे। विभिन्न प्रकार के सुख एकाएक मिलेंगे। क्षणिक समस्या या असफलता से आपा नहीं खोना चाहिये।

सिंह : (१७ अगस्त - १६ सितम्बर)

प्रथम १५ दिन भविष्योपयोगी योजना निर्माण क्रियान्वयन हेतु श्रेष्ठ हैं। विलंबित प्रकरण आपके अनुरूप निपटेंगे। आर्थिक, सामाजिक स्थिति यशस्वी होगी। वर्ष के विशेष अनुकूल समय से आप गुजर रहे हैं। आंशिक असफलता से मन में उद्वेग एवं निराशा को संचारित न होने दें। विवाद से बचें। शेष माह में उत्तरोत्तर कष्ट, व्यवधान, बाधा, मतभेद, यात्रा बाधा, एवं मनोपीड़ा की स्थिति उत्पन्न होगी। राजनीतिक जीवन में उत्कर्ष के सुयोग हैं। गौरव में वृद्धि होगी।

कन्या : (१७ सितंबर - १६ अक्तूबर)

प्रारंभिक चरण विभिन्न स्तर पर प्रतिकूलता से भरा रहेगा। रोजगार, राजनीति एवं व्यवसाय के क्षेत्र में नये मार्ग प्रशस्त होने की संभावनाएं नगण्य हैं। उपलब्धि अन्य वर्ग पर आश्रित रहेगी। दांपत्य सुख भी अपेक्षित नहीं मिलेगा। ११ मई उपरांत शनैः शनैः आपकी स्थिति में सुधार आयेगा। उन्नत भविष्य अथवा सुहाने भोर की प्रतीक्षा में समय निकालने का प्रयास करें। १५ मई से विशेषतः मासांत तक सफलता, सुयश एवं उत्कर्ष प्राप्त होगा। आक्रामक रुख अथवा त्वरित निर्णय को प्रश्रय न दें।

तुला : (१७ अक्तूबर - १५ नवंबर)

इस माह यात्रा, वार्ता, मंत्रणा, नये कार्य का श्रीगणेश, जोखिम आदि के अपेक्षित परिणाम की संभावनाएं अत्यल्प हैं। दिनांक ११ से मासांत तक उत्तरोत्तर प्रतिगामी क्षण प्रभावित कर सकते हैं। धार्मिक एवं मांगलिक कार्यों से सुखावरोधीगति क्षीण होगी। दांपत्य साथी एवं निस्वार्थ विद्वान वर्ग के परामर्श से लाभ होगा। दीर्घकालिक लाभ हेतु प्रथम १० दिनों में आमोद-प्रमोद त्याग कर युद्ध स्तर पर लक्ष्य प्राप्ति की दिशा में जुट जाइयेगा। यात्रा योग प्रबल हैं।

वृश्चिक : (१६ नवंबर - १५ दिसंबर)

माह सुख-बाधक है, परंतु प्रयासों की परिणति निश्चय ही पक्ष में होगी। व्यक्तित्व एवं सुयश बढ़ेगा। इसके उपरांत विद्या, प्रतियोगिता एवं व्यवधानमुक्त पलों का जीवन में प्रवेश

होगा। प्रथम १० दिनों में दांपत्य सुख या स्त्रीवर्ग का अपेक्षित सुख नहीं मिलेगा। आघात एवं शरीर सुख कुप्रभावित होगा। विरोधी कुचक्र रचेंगे। राजनीति एवं व्यवसाय में भाग्यावरोधी क्षण प्रबल सिद्ध होंगे। 'कर्म' पथ पर अपेक्षाहीन सन्नद्ध व्यक्ति ही सुखी रह सकेंगे। १० से २८ तारीख तक की अवधि पर समय की कुदृष्टि रहेगी। धैर्य न खोवें।

धनु : (१६ दिसंबर - १३ जनवरी)

यह माह यात्रा, स्वनिर्णय, जोखिम, मंत्रणा, आदेश एवं उपदेश की दृष्टि से कमजोर है। परामर्शोपरांत निर्णय, मंगलकार्य, एवं सही समय पर कार्य में प्रवृत्त होने की विशेष आवश्यकता प्रतीत होगी। राजनीति एवं व्यवसाय में गुप्त शत्रु षड्यंत्रों की कुशल व्यूह रचना करेंगे। स्त्री पक्ष से मतभेद, दांपत्य सुख बाधा, यात्राधिकता, अपयशदायी क्षण, योजना कुप्रभावित होना, आर्थिक कठिनाई, रोग या आघात से शरीर पीड़ा आदि तथ्य ११ तारीख के उपरांत विशेष प्रभावी होंगे। सूझ-बूझ, योजनाबद्ध कार्यशैली एवं गोपनीयता की अपरिहार्यता रहेगी।

मकर : (१४ जनवरी - १२ फरवरी)

आपके विरोधी प्रभावशाली सिद्ध न हो पायें, ध्यान रखें। साझेदारों से मतभेद व भ्रांति में वृद्धि होगी। यात्रा में सुख-बाधा अथवा दुर्घटना के प्रति सुरक्षोपयोगी दृष्टिकोण पर निर्भरता उपयोगी होगी। दांपत्य अथवा प्रेम संबंधों में कमी रहेगी। उत्तरार्ध में गृहसुख मिलेगा। प्रारंभिक १५ दिनों में लाभ की स्थिति उत्तम रहेगी। विरोधी प्रयासशील रहकर भी हानि नहीं पहुंचा सकेंगे। पत्नी का स्वास्थ्य ठीक नहीं रहेगा। व्यक्तिगत यश बढ़ता रहेगा। मनोबल एवं मित्रों के परस्पर सहयोग से आप विजयश्री हस्तगत करेंगे।

कुंभ : (१३ फरवरी - १४ मार्च)

आपकी यात्रा असुविधापूर्ण एवं हानिप्रद सिद्ध होगी। अपेक्षित जन-सहयोग का अभाव रहेगा। कूट वार्ता के वांछित परिणाम नहीं मिलेंगे। विश्वस्त सहयोगी संभावित सहयोग नहीं दे सकेंगे। मिश्रित प्रभाव रहेंगे, समूचे माह में प्रथम १५ दिनों में पद प्रभाव एवं राजनीतिक कार्यों में विरोधी मुंह की खायेंगे। आपका व्यवहार प्रशंसनीय रहेगा। प्रतियोगिता सफलता, आमोद-प्रमोद में वृद्धि एवं प्रेम संबंधों में प्रगाढ़ता रहेगी। संतान पक्ष से चिंता रहेगी। शेष १५ दिनों में चिंता में वृद्धि, मनोबल ह्रास, लाभ वृद्धि, शत्रुजयी, व्यक्तिगत प्रभाव सुरक्षित, शारीरिक-मानसिक पीड़ा, दांपत्य सुख-बाधा, स्थायी संपत्ति की चिंता, यात्रा कष्टदायी आदि स्थितियों के साथ-साथ विजय सुख की शीतल छांव रहेगी।

मीन : (१५ मार्च - १३ अप्रैल)

प्रारंभिक १५ दिन विभिन्न स्तर पर अपेक्षानुरूप प्रमाणित नहीं होंगे। स्वास्थ्य की ओर से ध्यान रखें। मतभेद का दायरा न बढ़े, अपव्यय एवं हानि न हो, जनसम्पर्क तथा परिचितों के मध्य मनमुटाव जन्म न ले सके, इन तथ्यों पर सतर्कता अपरिहार्य है। शेष १५ दिनों में उत्तरोत्तर सुयश, पद, परिवार एवं उच्चवर्ग का सहयोग उपलब्ध होता रहेगा। संतान के स्वास्थ्य की चिंता रहेगी। मित्रों, सहयोगियों एवं परिवार के सदस्यों से पूर्ण सहयोग मिलेगा।

मई मास के व्रत-त्यौहार :

गणेश चतुर्थी - २, कमला व मोहनी एकादशी क्रमशः १० व २८; प्रदोष ११ एवं २५; मास शिव व्रत १२; अमावस्या – १४; अक्षय तृतीया - १६; विनायक चतुर्थी - १७; गंगासप्तमी - २०; जानवी जयंती - २२; नृसिह जयंती- २६; पूर्णिमा - २७ मई।

□

ग्रीष्म ऋतु का सखा--सत्तू

□ डॉ. किशोरी लाल त्रिवेदी

हमारे देश में प्राचीन काल से ही भोजन में सत्तू की बड़ी प्रधानता रही है। आयुर्वेद के प्रायः सभी ग्रन्थों मे सत्तू को गुणकारी और पुष्टिदायक माना गया है। सत्तू का प्रचलन हिमालय से लेकर कन्याकुमारी तक है। अतीत के झरोखों में झांककर देखा जाये तो हम पायेंगे कि सत्तू प्राचीन आर्यों का मुख्य भोजन था। सत्तू सात प्रकार के अन्नों के सत से बनता है। आधुनिक विज्ञान ने भी अपनी खोजों से सत्तू के महत्त्व को सिद्ध कर दिया है।

मिथिला और नेपाल के लोग 'चैतवाशी' से सत्तू को भोजन के रूप में लेने लगते हैं और दोपहर के जलपान में यह ज्येष्ठ मास तक लिया जाता है। मुख्यतः यह चावल, गेहूं, जौ, बूट, मसूर और उरद के योग से बनता है। बैसाख मास में जब लू की तीव्रता रहती है तो सत्तू का सेवन अति लाभकारी माना जाता है।

प्राचीन काल में युद्ध यात्रा के समय राजाओं, सेनानायकों और सैनिकों द्वारा सत्तू खाने के अनेकों उदाहरण मिलते हैं। तीर्थयात्रा में तो यह आज तक अमीर-गरीब सबका प्रिय खाद्य पदार्थ है। यह नमक, गुड़, चीनी, खटाई और केले के साथ लिया जाता है। विभिन्न प्रकार के रोगों (उदर रोगों) और हृदय शूल में इसका प्रयोग रामबाण के समान माना गया है।

संस्कृत शब्द 'सकतु' का परिवर्तित प्रयोग प्रायः सभी भारतीय भाषाओं में मिलता है। पाली में सत्तू, प्राकृत में सतुआ, काश्मीरी में सोतू, कुमाऊंनी में सातु, मैथिली में सतू, भोजपुरी में संतुआ, मराठी में सातु, सत्तू, गुजराती में सातू और हिन्दी में सत्तू या सेतुआ कहा जाता है।

महर्षि पाणिनि ने जल में मिलाये गये सत्तू को 'उदक सक्तु' की संज्ञा दी है।

सक्तू मद्रदेश के निवासियों का मुख्य भोजन रहा है। प्राचीन मद्रदेश एवं आज के ईरान में अब भी सत्तू का प्रयोग किया जाता है।

चरक ने सत्तू की विशेषता इस प्रकार प्रतिपादित की है :–

सत्तू वात वर्द्धक, रुक्ष, मल को अधिक उत्पन्न करने वाला अनुलोमक होता है, यह पीने से तुरन्त तृप्ति प्रदान करता है एवं बल वृद्धि करता है।

चरक ने इसे कृतान्न वर्ग में रखा है। चरक ने सूत्र-स्थान, सतर्पणीय अध्याय में सतर्पण द्वारा उत्पन्न रोगों और उसकी चिकित्सा का वर्णन किया है, जिसमें सत्तू का भी वर्णन आता है। सत्तू सदा बलकारक है, पर रुक्ष होने से अन्त में अपतर्पण है। चरक ने इस शब्द का प्रयोग जल में मिश्रित सत्तू के लिए किया है। चरक सत्तू का प्रयोग तर्पण के लिए बराबर करते हैं :–

सत्तू का प्रयोग राब, घी, दही का पानी आदि के साथ करने से मूत्र रोग तथा उदावर्त जैसे रोगों का निदान किया जा सकता है। सुश्रुत में कहा गया है–

सत्तू जब घी एवं शीतल जल के साथ लिया जाये, न पतला हो न गाढ़ा, तब यह मन्थ बन जाता है। सत्तू-युक्त यह मन्थ सद्यः बलकारक, प्यास और श्रमनाशक है तथा खटाई, चिकनाई या गुड़ से युक्त होने पर यह मूत्रकृच्छ तथा उदावर्त को नाश करता है।

परन्तु चरक वर्षा ऋतु में इसका प्रयोग निषेध बतलाते हैं। उसी तरह घाघ कवि ने इसे रात में लेने से मना किया है–

रात को सेतुआ करै विचारी।
'घाघ' मरै तिहकै महतारी ।।

कहने का सारांश यह है कि कुछ निषिद्ध बातों के बावजूद भी सत्तू का प्रयोग अति लाभकारी है। उत्तर प्रदेश के कई स्थानों, विशेषकर अवध-बैसवारा क्षेत्र सेतुहई अमावस्या (चैत्र) को प्रायः सभी घरों में सत्तू का प्रयोग बड़े चाव के साथ किया जाता है। बैसाख-जेठ माह में भीषण लू के थपेड़ों से बचने के लिए आज भी इसका प्रयोग बहुतायत से किया जाता है। इसीलिए इसे ग्रीष्म ऋतु का सखा कहना अत्युक्ति न होगी।

– १४, अध्यापक आवास,
सैनिक स्कूल परिसर,
घोड़ाखाल (नैनीताल) - २६३१५६,

□

चंदे की दरें : एक वर्ष ६५ रु.; दो वर्ष : १२० रु.; तीन वर्ष : १७० रु.; पांच वर्ष : २९० रु.; दस वर्ष : ५६० रु. □ **विदेशों में समुद्री मार्ग से (एक वर्ष के लिए)** पाकिस्तान, श्रीलंका : १२० रु.; अन्य देश १८५ रु. □ **हवाई डाक से (एक वर्ष के लिए)** प्रत्येक देश के लिए : ३१० रु.; □ बम्बई से बाहर के चेक भेजनेवाले ७ रु. अधिक भेजें □ चेक ड्राफ्ट 'भारतीय विद्या भवन' के नाम से भेजें।

"मेरे आका, मैं फिर आया हूं! इस बार लाया हूं धनवर्षा (3)."

जीवन बीमा निगम सहयोग निधि

आपके उद्देश्य की पूर्ति — हमारा ध्येय

R K SWAMY/BBDO LMF 781 A HN

जिन्हें जेल में जला दिया गया –

अमर शहीद गोपाजी :

□ मोहनलाल पुरोहित

शहीद गोपाजी का स्मारक (जैसलमेर)

जैसलमेर, राजस्थान के पश्चिम में एक बहुत ही बड़ा प्राचीन राज्य रहा है। यहां भाटी राजपूत शासन करते रहे हैं।

एक समय था– भाटी राजपूतों का राज्य बड़े विस्तृत पैमाने पर फैला हुआ था। लेकिन कालान्तर में यह सिमट-सिमटाकर राजस्थान के पश्चिम में नाम-मात्र का ही रह गया।

भाटी राजपूतों और पुष्करणों– पुरोहितों के वंशजों में गुरु-यजमान का अटूट सम्बन्ध सदियों से चला आ रहा है। इतना ही नहीं– जब भी कोई रावल (जैसलमेर के राजाओं को रावल की उपाधि से विभूषित किया गया है) राजगद्दी पर बैठता है, तो उसके राज्याभिषेक के समय कुल-गुरु पुरोहित अपने हाथ से तिलक निकाला करते हैं।

श्री गोपाजी का इसी कुल-गुरु परम्परा में (पुरोहित कुल में) ३ नवम्बर, १९०० को जैसलमेर नगर में जन्म हुआ। आपका पूरा नाम सागरमल एवं

पिताश्री का नाम अखेराजजी था।

अखेराजजी का खानदान राजवर्गी रहा है। इनके पिता और पितामह राज्य के पेचीदे कानूनों को सुलझाने में, एवं सरहदी झगड़ों को निपटाने में सिद्धहस्त रहे हैं। अखेराजजी को भी यह अनोखी प्रतिभा अपने पूर्वजों से विरासत में मिली। आप कानून के माहिर थे। जैसलमेर में आप बिजोराई (फतहगढ़) तहसील के वर्षों तक हाकिम के पद पर रहे।

इधर जब रावल शालिवाहन का दिनांक ११.४.१९१४ को निधन हुआ तो रावलजी के कोई पुत्र न होने के कारण राजगद्दी पर उनके छोटे भाई श्री दानसिंहजी को आसीन कर दिया गया। श्री दानसिंहजी अभी राजकाज संभालने को ही थे कि उनके विरोधियों ने उन्हें शासन से हटा दिया और महारावल जवाहरसिंह को दिनांक २६.६.१९१४ को राजगद्दी पर बिठा दिया।

राज्याभिषेक के समय कुलगुरु - पुरोहित होने के नाते राजा के तिलक लगाने के लिए श्री अखेराजजी को इस विधि-विधान के लिए आमंत्रित किया गया, लेकिन श्री अखेराजजी ने यह कहकर इन्कार कर दिया, तिलक करने से किसी भी राजा के निधन पर ही राज्याभिषेक के समय तिलक लगाया जाता है कुलगुरु द्वारा। श्री दानसिंहजी अभी जीवित हैं। अतः यह न्यायोचित
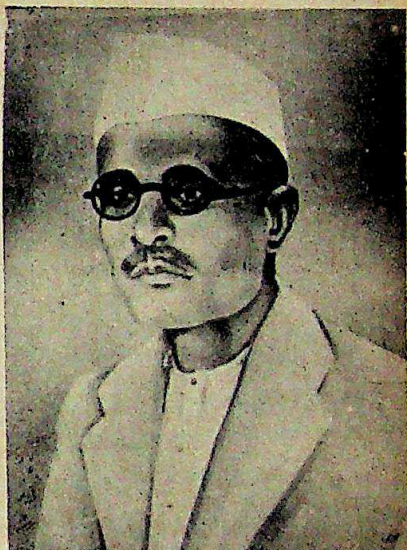
सागरमल गोपा

नहीं है। फिर भी यदि रावल मुझसे तिलक करवाना ही चाहें, तो मैं अपने बायें हाथ के अंगूठे से येन-केन प्रकारेण तिलक निकाल सकता हूं- दायें हाथ से तो कदापि नहीं कर सकता। यह हाथ तो श्री दानसिंहजी को तिलक कर चुका है। श्री जवाहरसिंहजी ने जब यह सुना तो वे बड़े नाराज हुए और यह भी राज्याभिषेक के समय भरे दरबार में। उन्होंने अखेराजजी से तिलक करने की चांदी की कटोरी छीन ली और उन्हीं के भाई-बन्धुओं को दे दी। उन्हीं से तिलक लगवाया और फिर यह तिलक की परम्परा 'तथाकथित कुलगुरु की प्रथा' अखेराजजी के परिवार से निकल गयी।

लेकिन यही सब कुछ नहीं था। नाराज होकर भी रावलजी, अखेराजजी को हाकिम के पद से तो हटा नहीं सके। कारण अखेराजजी सत्यवादी, कर्मशील, न्यायी, व्यक्ति थे। लेकिन रावलजी के हृदय में प्रतिशोध की भयंकर ज्वाला धधकती रही। वे इस अपमान का बदला लेने का उपाय खोजते रहे।

अखेराजजी के पांच पुत्र थे – श्री सागरमल सबसे बड़े थे। बचपन से ही सागरमलजी गोपा उत्साही, बुद्धिमान, लगनशील और एकान्त प्रिय रहे हैं। कविता उनका प्रिय विषय रहा है– वे एक आशुकवि के रूप में भी जाने जाते थे। उनके मित्रों ने हमें बताया वे हर समय क्रातिकारी, राजनीतिक, ऐतिहासिक ही साहित्य पढ़ा करते थे। आपके जीवन का एक बड़ा भाग मध्य भारत में, नागपुर, आकोला, जबलपुर आदि स्थानों में बीता। अंग्रेजी, हिन्दी, संस्कृत, फारसी आदि कई भाषाओं का आपको ज्ञान था। जहां आप कांग्रेस के कर्मठ कार्यकर्ता व सदस्य थे– महात्मा गांधी के आन्दोलनों में आपका सक्रिय योग रहता रहा।

इतना ही नहीं– आप कई पत्र-पत्रिकाओं के सम्पादक एवं पत्रकार भी थे। आपके मित्रों में श्री रामनारायण चौधरी, जयनारायणजी व्यास, कन्हैयालालजी व्यास, ब्रजलालजी बियाणी, श्री चांदकरणजी शारदा, श्री कन्हैयालालजी तत्री आदि विशेष उल्लेखनीय रहे हैं। जैसलमेर राज्य की अधोगति, वहां की तानाशाही व नादिरशाही का जहां एक ओर आपकी लेखनी ने तीव्र पहार करते हुए पर्दाफाश किया है। – वहां विदेशी सत्ता को भी चुनौती देने में भी आपकी लेखनी ने अपना कमाल दिखा दिया था

वैसे तो आप जैसलमेर से बाहर ही रहते रहे थे। फिर भी समय-समय पर जैसलमेर आकर वहां के निवासियों को अन्याय का प्रतिकार करने, अधिकारों के प्रति जागरूक करने की प्रेरणा देते एवं लोगों को उत्तरदायित्वपूर्ण शासन की स्थापना का पाठ पढ़ाते रहते थे।

जब तक श्री अखेराजजी (आपके पूज्य पिता) जीवित रहे, जैसलमेर की सरकार आपका बाल भी बांका नहीं कर सकी। लेकिन उनके निधन के बाद सरकार ने षड्यंत्र का जाल फैलाया और आपको सन १९३७ में जब आप जैसलमेर आये तो धोखे से पकड़कर जेल में बन्द कर दिया।

ब्रिटिश सरकार जहां किसी व्यक्ति को राजनीतिक मुलज़िम करार देने में अपनी शान समझती थी – यहां की सरकार ने भी इसी परिपाटी का अनुसरण करना श्रेष्ठ समझा। आप पर राजघराने पर व्यक्तिगत आक्षेप व छींटाकशी के अन्तर्गत पांच वर्ष की सख्त सजा ठोक दी गयी।

आपके कतिपय उल्लेखनीय सामाजिक कार्य एवं राजनीतिक गतिविधियां इस प्रकार रहीं—

१. जैसलमेर में दर्जियों की हड़ताल। आपका सक्रिय योगदान — सरकार को मुंह की खाना।

२. "माहेश्वरी युवक मण्डल" की रघुनाथसिंह महता द्वारा स्थापना। सरकार का उसे सामाजिक संस्था होते हुए भी गैरकानूनी करार देना। "रघुनाथ सिंह का मुकदमा" नामक पुस्तक का आपके द्वारा सम्पादन एवं प्रकाशन — पुस्तक सरकार द्वारा जप्त।

जैसलमेर में आप पहले व्यक्ति थे, जिन्होंने अपने घर पर तिरंगा झण्डा लहराया था।

आखिरकार सरकार बौखला उठी। उसके पास अब और कोई दूसरा हथियार नहीं रहा, इन तथ्यों को दबाने का। वह यही कर सकती थी— उत्पीड़न, जुल्म, मार-पीट और अंतिम हथियार का प्रयोग— जैसे-तैसे मृत्यु के घाट उतारना।

ऐसा कहा जाता है— जेल में दिन-दहाड़े आप पर मिट्टी का तेल छिड़क कर तत्कालीन पुलिस सुपरिन्टेन्डेंट गुमानसिंह ने आपको जला दिया। यह वह मनहूस दिन था— ४ अप्रैल, १९४६ जब देश के उस आजादी के परवाने को मां भारत की गुलामी की बेड़ियों को काटने के लिए बलिवेदी पर कुरबान होना पड़ा।

गोपाजी को जेल में जला दिया गया? किसने उन्हें जलाया? क्यों जलाया? गुमानसिंह का नाम इस काण्ड में क्यों उछाला गया? 'ओपन इन्क्वारी' श्री. आर. के. पाठक जैसे व्यक्ति के जिम्मे रही (आप बाद में उप-राष्ट्रपति के पद पर भी रहे) नतीज़ा फिर 'ढाक के तीन पात!'

— भठड़ों का चौक, बीकानेर, राजस्थान

□

एक नेताजी का विवाह था, इसलिए उन्हें अपने पूरे महीने के कार्यक्रम रद्द करने थे। उन्होंने अपने सेक्रेटरी को बुलाया और कहा, 'सबको फोन कर, मेरे अगले महीने के सारे प्रोग्राम रद्द कर दो।'

शाम को उन्होंने सेक्रेटरी से पूछा, 'कहो, कोई परेशानी तो नहीं हुई?'

'कोई खास नहीं, लेकिन एक महिला का प्रोग्राम रद्द करने में मुझे बड़ी दिक्कत हुई, वह बार-बार कहे जा रही थी कि अगले हफ्ते उसकी शादी आपसे होनेवाली है,' सेक्रेटरी ने जवाब दिया।

— डॉ. गोपाल प्रसाद 'वंशी'

वो ही किस्मतवाले होंगे

शंख वो बजने वाले होंगे
चाबुक उठने वाले होंगे

वो दिन आने वाले हैं, जो –
आफ़त के परकाले होंगे

रातों को भी ग़श आ जाये
हंस भी इतने काले होंगे

बिजली चमक नहीं पायेगी
और चांद पर ताले होंगे

संतों ने जो दीप जलाये
उन्हें बुझाने वाले होंगे

कौन करेगा पूजा किसकी
मरघट बीच शिवाले होंगे

जला ज्ञान के ग्रंथ घरों को –
रौशन करने वाले होंगे

सभी विधर्मी गुट्ट हमारे
धर्मों के रखवाले होंगे

बांस मार जो सर तोड़ेंगे
वो ही बंसी वाले होंगे

राजवंशियों के हाथों के
तोते उड़ने वाले होंगे

मुमताजों के ताजमहल भी
टूटे पत्थर वाले होंगे

परिभाषा कानून करेंगे
जो कानून निराले होंगे

आये दिन काली करतूतें
यों बदनाम उजाले होंगे

कैद उम्र की क्या औरत की
बस इस्मत के लाले होंगे

बिन किरणों का सूरज होगा
अन्धे चश्मेवाले होंगे

जो सांपों का ज़हर पिये हैं
तुम्हें जिलाने वाले होंगे

जो न तवज्जो दे सलाम की
वो वज़ीर के साले होंगे

हर गुनाह में साझेदारी
वो ही किस्मत वाले होंगे

– महीपाल
२२ विजय महल,
'डी.' रोड, चर्चगेट, बम्बई - २०
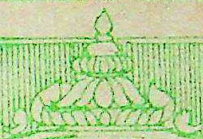
आ नो भद्राः क्रतवो यन्तु विश्वतः

भवन की पत्रिका 'भारती' से समन्वित

नवनीत

मनुष्य के नवोत्थान का सूचक
जीवन, साहित्य और संस्कृति का मासिक

प्रार्थना

नमोऽस्तु ते निर्ऋते तिग्मतेजोऽयस्मयान्, वि चृता बन्धपाशान् ।
यमो मह्यं पुनरित् त्वां ददाति तस्मै, यमाय नमो अस्तु मृत्यवे ।।
अथर्व - ६-७-२

नमस्कार हे मृत्यु देवता नमस्कार शतवार
मुक्त करो इस देह पाश से खुले मोक्ष का द्वार
सुख-दुख राग-विराग भरा है जीवन माया जाल
अपने वज्राघात से निष्ठुर अब तो करो प्रहार ।
नमस्कार हे मृत्यु देवता !
हे यमराज ! मुझे फिर दे दो प्रभु का स्नेह भरा आंचल
एक तुम्हीं कर सकते हो अब मुझ पर यह उपकार ।
मृत्यु द्वार से ही मिलता है अक्षय अमृत का वरदान
यम के माध्यम से ही पाते साधक प्रभु का अविरल प्यार
नमस्कार हे मृत्यु देवता ।

भावानुवाद : स्व. सत्यकाम विद्यालंकार

निधन से एक दिन पूर्व प्रेषित प्रार्थना
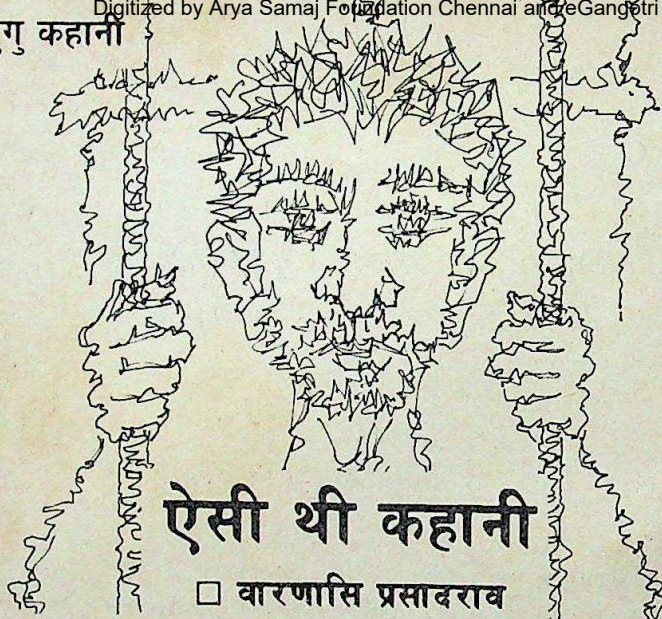
ऐसी थी कहानी

☐ वारणासि प्रसादराव

गंदे कपड़ों में और बढ़ी हुई दाढ़ी से कंगाल जैसा लगने वाला वह नौजवान कुछ अधीर था। टुकुर-टुकुर इधर-उधर ताकने लगा। आगे-पीछे नज़र दौड़ायी बहुत दूर तक। कोई नहीं था। वक्त अच्छा था। वह जल्दी-जल्दी उस मीनार पर चढ़ने लगा। ऊपर जाने के लिए जो सीढ़ियां भीतर से थीं, उन पर चढ़ते हुए जल्दी-जल्दी सीढ़ियां पार करने लगा। फिर झट वह रुक गया। वहां एक सिपाही हाथ में डंडा हिलाते हुए उसे ही घूर रहा था।

'उतर रे! उतर!' सिपाही ने चीखकर कहा।

वह नौजवान उतर गया। लाचार था।

'चल थाने को!' सिपाही बोला।

वह प्रतिरोध कर न सका। उसके पीछे ही चल दिया थाने को।

दूसरे दिन उस नौजवान को अदालत में पेश किया गया।

'तुम्हारा नाम?' न्यायाधीश ने पूछा।

'स्वतंत्र।'

'उम्र?'

'चालीस।'

'क्या करते हो?'

'बेरोजगार हूं।'

'खुदकशी क्यों करना चाहते हो?'

'मर जाने के लिए।'

'जानते नहीं कि यह जुर्म है?'

'जानता हूं।'

'फिर क्यों गुनहगार बनना चाहते हो?'

'भूख की पीड़ा सह न पाने से। चोर-उचक्का बन न पाने से।'

'कोई काम कर सकते हो?'

'कर सकता हूं। देने वाला कोई न मिला।' न्यायाधीश थोड़ी देर चुप रहे। फिर पूछने लगे —

'क्या पढ़ा है?'

'दुनिया को।'

'मां-बाप कौन हैं?'

'भूख और ग़रीबी।'

न्यायाधीश को गुस्सा आया। पर उसकी हालत पर उसके दिल में रहम भी था। इसलिए गुस्से को उसने मन ही मन पी लिया।

वे थोड़ी देर चुप रहकर कुछ सोचते रहे। फिर उनके होठों पर मुस्कराहट आयी।

'देखो, स्वतंत्र! तुम्हें एक नौकरी दिलाऊंगा। करोगे न?'

'इज्जत से जीना चाहता हूं, ज़रूर करूंगा।'

'अच्छा, मेरी बात गौर से सुनो। जिस मीनार पर से कूदकर मरने की तुमने कोशिश की थी वह बहुत ही मशहूर है। इतिहास की धरोहर है। मगर इन दिनों उस मीनार को 'आत्महत्या का मीनार' कहा जा रहा है। तुम्हारे जैसे बेरोज़गार और हालात के मारे बिचारे कई ऐसे हैं जो अक्सर उस मीनार से कूदकर खुदकशी कर रहे हैं। इसलिए सरकार एक ऐसे आदमी को वहां तैनात करना चाहती है जो वहां कड़ा पहरा दे और सावधानी बरते कि आगे से कोई उस मीनार से कूदकर न मरे। मैं इस काम के लिए तुम्हारे नाम की सिफारिश करूंगा।'

'मैं आभारी हूं।' युवक ने हाथ जोड़कर प्रणाम किया।

न्यायाधीश के होठों पर मुस्कराहट फैल गयी।

एक साल बीत गया।

न्यायाधीश अदालत में आये। वहां स्वतंत्र को देखकर चौंक उठे।

'क्या जुर्म किया है तुमने?'

'फिर वही पुराना। खुदकशी की कोशिश में पकड़ा गया हूं।'

'यह सब क्या है? तुम्हारी नौकरी लगा दी थी न?' न्यायाधीश ने पूछा।

'मुझे नौकरी से निकाल दिया गया।'

'मगर क्यों?'

'क्योंकि पिछले साल भर उस मीनार पर से कूदकर मरने की किसी ने कोशिश नहीं की थी। यानी कोई नहीं मरा। इसलिए अब मीनार के पास पहरे की जरूरत नहीं हैं, अधिकारियों ने यह निर्णय लिया है। मुझे तुरंत नौकरी से हटा दिया गया है।'

न्यायाधीश भौंचक रह गये। सोचने लगे कि अब क्या किया जाय?

(अनु : बी. आर. संकरा)

□

विद्यामार्तण्ड पं. सत्यकाम विद्यालंकार

□ डॉ. गिरिजाशंकर त्रिवेदी

पं. सत्यकाम विद्यालंकार का भौतिक शरीर गत १४ मार्च १९९१ के दिन पंचतत्वों में विलीन हो गया। वैसे आवागमन की यह प्रक्रिया चलती आयी है और आगे भी चलती रहेगी। परंतु उन्होंने अपने कृतित्व के कारण जिस प्रकार अपने व्यक्तित्व को औरों के लिए गरिमामंडित और श्रद्धेयास्पद बना दिया था, निश्चय ही वह विचारणीय है।

उनका जन्म १४ अगस्त १९०४ के दिन लाहौर में एक प्रतिष्ठित आर्यसमाजी परिवार में हुआ था। उनके पिता धनीराम थापर प्रख्यात वकील थे। अपने नाना स्वामी श्रद्धानन्द (महात्मा मुंशीराम) द्वारा स्थापित गुरुकुल कांगड़ी (हरिद्वार) विश्वविद्यालय से सन १९२५ में आपने विद्यालंकार ,की उपाधि प्राप्त की। स्नातक होने के बाद आपने अपने मामा पं. इंद्र विद्यावाचस्पति के पत्र 'दैनिक अर्जुन' के संपादक के रूप में काम करना शुरू कर दिया। सन १९२७ से १९३१ तक उसमें रहकर आपने देश की स्वाधीनता के समर्थन में ब्रिटिश सरकार के विरुद्ध जो अग्रलेख लिखे, उसके लिए आपको शासकों का कोपभाजन बनकर जेल-यातनाएं भी भोगनी पड़ीं। प्रसिद्ध बलिदानी सरदार भगतसिंह उन दिनों 'अर्जुन' में आपके सहायक के रूप में कार्य कर रहे थे।

कुछ ही समय में आपकी गणना अमर शहीद गणेश शंकर विद्यार्थी, बाबूराव विष्णु पराड़कर, संपादकाचार्य अंबिका प्रसाद बाजपेयी, श्रीकृष्णदत्त पालीवाल और इंद्र विद्यावाचस्पति जैसे प्रखर कलम के धनी संपादकों में होने लगी।

सन १९५० में आपने 'टाइम्स ऑफ इण्डिया' समूह के प्रसिद्ध पत्र 'धर्मयुग' का संपादन भार संभाला। फोटोग्रेव्योर पर छपनेवाला यह एक मात्र हिंदी का साप्ताहिक था। पंडितजी ने 'धर्मयुग' को लोकप्रियता के शिखर पर पहुंचा दिया। उसकी प्रतियां हजारों में नहीं,
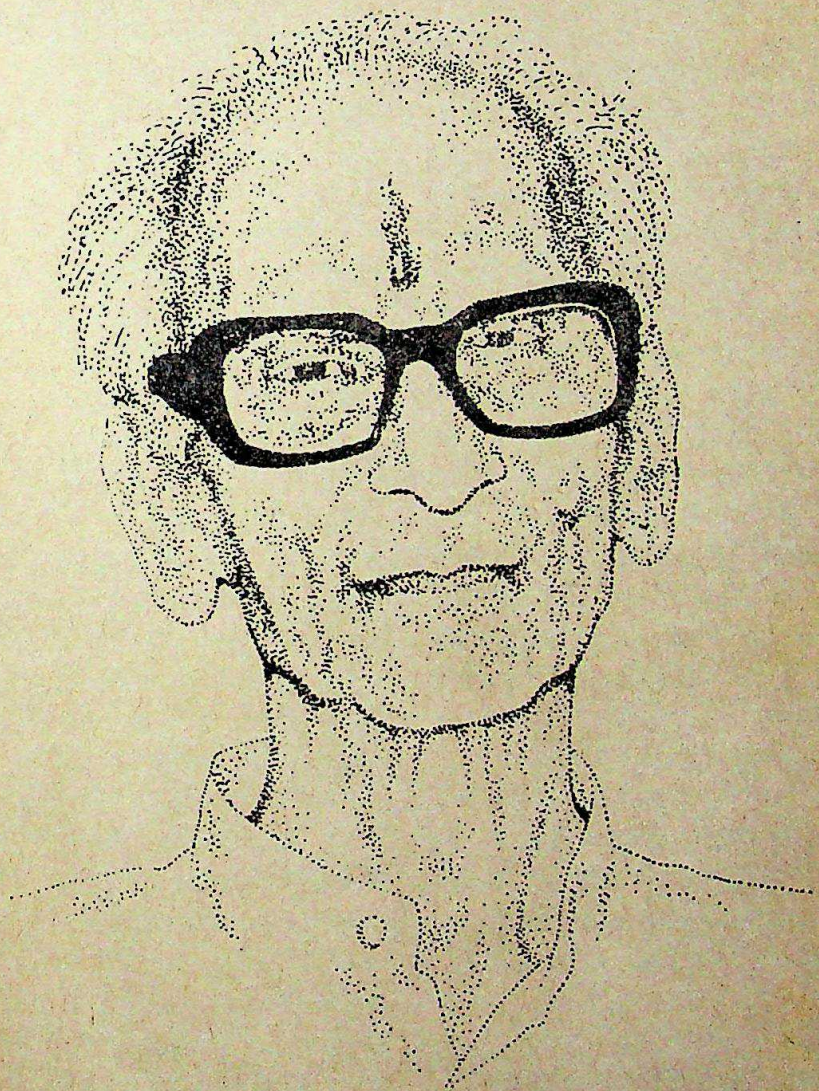
जन्म तिथि : १४ अगस्त १९०४ निधन तिथि : १४ मार्च १९९१

लाखों में बिकने लगी। पाठकों की नब्ज पहचानने और उनकी रुचि-संपन्नता के लिए उपयुक्त सामग्री उन तक पहुंचाने में उन्हें महारत हासिल थी।

सन १९६० के प्रारंभ में वे 'नवनीत हिंदी डाइजेस्ट' के संस्थापक श्रीगोपाल नेवटिया के मित्रवत् अनुरोध पर केवल एक साल के लिए संपादक के रूप में आये। टाइम्स से सेवा-मुक्त होने के बाद वे पुस्तक-लेखन का कार्य करने का निश्चय कर चुके थे। एक वर्ष बीत जाने के बाद बार-बार अनुरोध करने पर भी नेवटियाजी उन्हें नवनीत से मुक्त करने के लिए राजी न थे। १९६९ के अंतिम दिनों में पंडितजी ने जोर देकर कहा कि मैं दृढ़ निश्चय कर चुका हूं कि मुझे वेदों का कार्य करना है और यह मेरे जीवन की सबसे बड़ी आकांक्षा है। यदि मैं इस कार्य को किये बिना ही दुनिया से विदा हो गया, तो मेरी आत्मा को शांति नहीं मिलेगी। तब नेवटियाजी उन्हें नवनीत से मुक्त करने के लिए इस शर्त पर राजी हुए कि आप यदा-कदा नवनीत के लिए लेख लिखते रहेंगे और नवनीत के संपादन-सलाहकार के रूप में उसे अपने दीर्घानुभवों का लाभ देते रहेंगे।

उसके बाद ७० साल की उम्र में उन्होंने स्वामी सत्यप्रकाशजी के साथ संस्कृत से अंग्रेजी में वेदों का जो गुरुतर कार्य किया है, वह सर्वविदित है। इतना ही नहीं, स्वतंत्र रूप से भी उन्होंने अंग्रेजी में THE WISDOM OF THE VEDAS, THE HOLY VEDAS, INSPIRATION FROM THE VEDAS, BEGIN THE DAY WITH GOD आदि अनमोल ग्रंथों का प्रणयन किया है।

संस्कृत के महाकाव्यों का सरल-सुबोध रूपांतर हिंदी में करके जनसाधारण तक पहुंचाने का स्तुत्य कार्य उनकी बहुत बड़ी देन है। मेघदूत, हितोपदेश, पंचतंत्र, चाणक्य नीति, भगवद्गीता, नीतिशतक आदि रचनाओं का उनका अनुवाद अत्यंत लोकप्रिय है।

विश्वकवि रवीन्द्रनाथ टैगोर की गीतांजलि और सुप्रसिद्ध दार्शनिक खलील जिब्रान की कृतियों का आप द्वारा किया गया अनुवाद पाठकों द्वारा बहुत सराहा गया है। आपके वैदिक भावगीतों का 'सोमसुधा मंडल' द्वारा बंबई के कई सभागृहों में किया गया प्रदर्शन एवं प्रसारण जनमानस को भाव-विभोर करता रहा है। इन्हीं स्वरबद्ध वैदिक ऋचाओं को सुनकर वेदमूर्ति पं. श्रीपाद दामोदर सातवलेकरजी ने कहा था— 'स्वरबद्ध वैदिक ऋचाओं का गायन सुनकर मेरे जीवन का एक स्वप्न आज पूरा हुआ। मेरा विश्वास है कि इन श्रुति मधुर गीतों को सुनने में श्रोताओं की आत्मा को अलौकिक आनंद मिलेगा और तन-मन को स्वास्थ्य-लाभ होगा।'

फिल्म सेंसर बोर्ड के चार वर्ष तक सदस्य के रूप में भी आपने अपने कार्यकाल में कामुक और अश्लील चित्रों की कभी स्वीकृति नहीं दी।

हिंदी में उनके द्वारा लिखित वैदिक वंदना गीत, वेद पुष्पांजलि, वेद सुभाषित, वेद भारती, वेद सौरभ आदि रचनाएं जन साधारण तक वेदों का संदेश पहुंचानेवाली सर्वसुलभ कृतियां हैं।

वेदों को जन-जन तक पहुंचाने के लिए उन्होंने अथक श्रम किया। जिन-जिन पत्र-पत्रिकाओं के वे संपादक रहे, उनके पाठकों को भी वेदों की उपयोगिता का ज्ञान कराने के लिए उन्होंने सरल-सुबोध भाषा को माध्यम बनाया।

'धर्मयुग' से सेवा-निवृत्त होने के बाद सन १९६० के प्रारंभ में 'नवनीत हिंदी डाइजेस्ट' के संपादक होकर 'आये। उसके सप्ताह भर बाद मेरी नियुक्ति भी उनके सहायक के रूप में हुई। उनका व्यक्तित्व अत्यंत तेजस्वी था— किसी भी नये व्यक्ति को सहमा देने के लिए पर्याप्त। परंतु प्रथम दिन ही जिस स्नेह-सिक्त वाणी में बुलाकर कार्यालय के काम के बारे में उन्होंने समझाना शुरू किया, उसे देखकर लगा कि यह व्यक्ति बॉस नहीं, एक आत्मीय पालक की तरह है। उन्होंने कभी भी अपना बड़प्पन प्रदर्शित करके आतंक जमाने का प्रयास नहीं किया। साथ बैठाकर काम को समझाना, अगला काम समझने के लिए प्रोत्साहित करना और हर कदम पर यह अहसास कराना कि वे हमारे अत्यंत आत्मीय और सहृदय गार्जियन हैं, उनका स्वभाव था।

सौम्य और मृदुभाषी स्वभाव के वे धनी थे। कलाकार रहा हो या रचनाकार, पंडितजी ने उसे आगे बढ़ाने और प्रोत्साहित करने में कसर नहीं रखी। वे गुणीजनों के पारखी थे।

राष्ट्रभक्ति एवं विद्वता उन्हें विरासत में मिली थी। कर्तव्य के प्रति वे सदैव सजग और समर्पित रहे। अपने निधन के एक दिन पूर्व उन्होंने अपने पुत्र विनोद के हाथ नवनीत के लिए मैटर भेजा। पूरे ८६ वर्ष ७ माह का जीवन जीकर उनकी इहलीला भले ही समाप्त हो गयी, किन्तु उनके कृतित्व की कीर्ति सदा-सदा के लिए चिरंस्मरणीय रहेगी।

— भारतीय विद्याभवन,
क.मा. मुन्शी मार्ग,
बंबई - ४०० ००७

एक वीर जाति का शताब्दियों तक स्वाधीनता और अपने पूर्वजों के धर्म की रक्षा के लिए अपनी प्यारी से प्यारी वस्तु — अपना सर्वस्व अर्पण करके सारे प्रलोभनों को ठुकराते हुए, दृढ़ता से युद्ध करना एक ऐसी तस्वीर खींच देता है जिसका बिना आवेग में आये वर्णन करना कठिन है।

— कर्नल टॉड

ललितादेवी का मंदिर

ऋषियों की तपस्या भूमि

□ परिपूर्णानन्द वर्म्मा

पं. जवाहरलाल नेहरू तथा डा. सम्पूर्णानन्दजी की एक बात में पटरी नहीं बैठती थी – सम्पूर्णानन्दजी हर प्राचीन स्थानों के अप्रभंश नाम को समाप्त कर उनका प्राचीन नामकरण पुनः प्रचलित करना चाहते थे और जवाहरलालजी इस पर कभी-कभी क्रुद्ध भी हो जाते थे जैसे – उन्होंने एक सभा में क्षोभ व्यक्त किया कि प्रचलित 'बनारस' नाम की जगह वाराणसी करें कर दिया गया तथा अजोध्या को अयोध्या कर देने से क्या लाभ हो गया ? पर इस विषय में मुख्य मंत्री सम्पूर्णानन्दजी तथा राज्यपाल श्री कन्हैयालाल माणिकलाल मुंशी एक मत
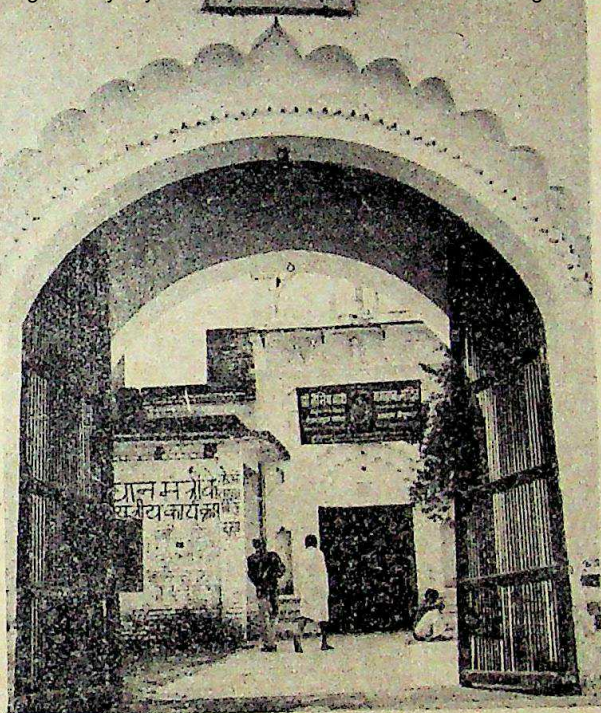
नैमिषनाथ भगवान मंदिर

थे। प्राचीन स्थानों का जीर्णोद्वार तथा उचित नामकरण के दोनों हामी थे। उत्तर प्रदेश के एटा ज़िला में प्रसिद्ध 'सोरों' सरोवर है, जिसका वास्तविक इतिहास कहा जाता है कि सृष्टि के आदि काल से वहां एक समुद्र था। वहीं विष्णु का वाराह अवतार हुआ था। इसीलिए उसका नाम शूकर क्षेत्र है, शूकर से सोरों हो गया। इस स्थान की एक अद्‌भुत विचित्रता का आज तक वैज्ञानिक खोज से भी पता नहीं चल सका—समुद्र के स्थान पर विशाल सरोवर है। जल की विचित्र महिमा है। हिन्दू विश्वास है कि यहां अस्थि प्रवाह से मुक्ति मिलती है। हर वर्ष भारत के कोने-कोने से हज़ारों अस्थियां इस तालाब में डाली जाती हैं और आश्चर्य है कि सब गल जाती हैं—अस्थि डालने के कुछ समय बाद ही। यदि न गलती होतीं तो विंध्यपर्वत ऐसा अस्थिपर्वत बन गया होता। यही क्षेत्र गोस्वामी तुलसीदास का है, यहीं वह पाठशाला है जिसमें वे पढ़ते थे। यहीं उनके गुरु नरहरिदास से वे पढ़ते थे। यहीं

वास में उनकी पत्नी रत्नावली का मायका था– और यहीं से गोस्वामीजी राजापुर गये थे। राज्यपाल मुंशीजी ने वहां जाकर आचमन किया, डा. सम्पूर्णानन्द ने इसका सोरों नाम बदलकर सरकारी कागजों में भी 'शूकर क्षेत्र' कर दिया। अब इस नाम से पत्र-व्यवहार भी हो सकता है।

मिसरिख

इसी प्रकार नाम परिवर्तन उन्होंने ''नीमसार-मिसरिख'' का किया। लखनऊ से १५० कि.मी., सीतापुर से ४५ मील यह स्थान है। सिधौली से होकर जाना पड़ता है। जाते हुए ही सिधौली से कुछ मिलोमीटर पर ही गोस्वामी तुलसीदास के समकालीन कविवर नरोत्तमदास का वह स्थान रो रहा है, जहां बैठकर उस महाकवि ने 'सुदामा चरित्र' लिखा था, जिसकी अमर पंक्तियां आज तक लोगों को याद है – 'करुणा कर कर करुणाकर रोये', 'असुअन से पग धोये' – या 'शीश पगा न झगा तन में बतावत आपन नाम सुदामा'। उस स्थान पर हिन्दी सभा, सीतापुर ने पक्का कमरा बनवा दिया है। पत्थर पर उनकी पंक्तियां खुदवा दी हैं पर रख-रखाव तथा देखरेख के अभाव में यह भी गिर ही पड़ेगा। कोई साहित्यकार इधर झांकता भी नहीं है। हिन्दी संस्थान के पास पैसा नहीं है कि कुछ कर सके।

इसी के आगे चलकर 'मिसरिख' पड़ता है जो वास्तव में ''मिश्रित'' का अप्रभ्रंश है। कथा है कि दधीचि ऋषि को गाय से चटाकर उनकी हड्डी से इन्द्र का वज्र बनाने के लिए उनका बलिदान हुआ था। इस स्थान पर दधीचि की समाधि पर जल चढ़ाने के लिए सभी तीर्थों से जल लाया गया। वहीं मिश्रित जल आज विशाल सुन्दर तालाब है, जिसके चारों ओर अब घनी बस्ती हो गयी है। इस सुन्दर विशाल 'मिश्रित' का अप्रभंश मिसरिख को सम्पूर्णानन्द ने इसका असली नाम प्रदान किया। इस प्रकार सैकड़ों वर्ष का अप्रभंश नाम शुद्ध हुआ।

नैमिषारण्य

सैकड़ों वर्ष बाद इसे अपना असली नाम सम्पूर्णानन्दजी के शासनकाल में प्राप्त हुआ और बड़ी श्रद्धा से राज्यपाल मुंशीजी ने इसका दर्शन किया था। हजारों वर्ष बाद इसे अपना नाम वापस मिला है। पुराण, आदि की हरेक कथा में मिलता है कि ''वैशम्पायन ने नैमिषारण्य में कहा, सूत ने कहा, व्यास ने कहा,' व्यास ने भागवत पुराण जो १८वां तथा अन्तिम पुराण कहा जाता है इत्यादि। प्रचलित सत्यनारायण की कथा भी यहीं सुनी गयी। वैदिकयुग के ऋषिगण यहीं तपस्या करते थे। गोमती नदी के तटपर इस सुरम्यवन में किसी समय ८०,००० ऋषि-मुनि रहते थे। यहीं पांण्डवों ने तथा श्रीराम ने अश्वमेध यज्ञ किया था। यहीं अत्रि मुनि का आश्रम स्थल अब भी अनुमानतः पेड़ों के झुरमुट में लुका पड़ा

है। यहीं वह स्थान है जहां मनु तथा उनकी पत्नी शतरूपा ने तपस्या की थी। यही अब स्वामी नारदानन्द की कृपा से उद्धार किया स्थल है। यहीं वह परमतीर्थवाला तालाब है जो किसी समय हवन कुण्ड था। अधिकांश जंगल कट गये, नष्ट कर दिये गये, बस्ती बस गयी, पर प्राचीनता के सभी लक्षण विद्यमान हैं। सबसे महत्व की चीज जो इसकी प्राचीनता सिद्ध करती है, वह है वह वटवृक्ष जिसके नीचे बैठकर कथा कही जाती थी। वृक्ष की हर तरह से परीक्षा करने पर ४-५ हज़ार वर्ष से कम पुराना नहीं है। इसके कोटर में, गोद में प्राकृतिक सिंहासन बना है जिसमें बैठकर सन्त लोग कथा कहते थे और ऋषि लोग वृक्ष की छाया में हर ऋतु से बचकर कथा सुनते थे। फलों के वृक्ष अब भी हैं। खेद है कि करोड़ों हिन्दू श्रद्धालुओं में से एक ने भी आज तक इस वट वृक्ष के कोटर का, गोद में सिंहासन की फोटो नहीं खींची, न छापी गयी। नीमसार का जब असली नाम डॉ. सम्पूर्णानन्दजी ने किया तो अब रेलवे स्टेशन तक का नाम नैमिषारण्य हो गया है। यहां पैर पड़ते ही मन में एक विचित्र मानसिक शान्ति तथा स्फूर्ति प्राप्त होती है। और चरण माता ललितेश्वरी के उस सिद्धपीठ की तरफ बढ़ते हैं जिस महिमामयी देवी के प्रति सद्यः ध्यान लग जाते हैं और पण्डे यदि कांव-कांव और नोच-खसोट का शोर न करें तो सद्यः समाधि लग जाती है।

ॐ कार

कहा जाता है और ऐसा लगता है कि

दधीचि कुंड-मिश्रिख
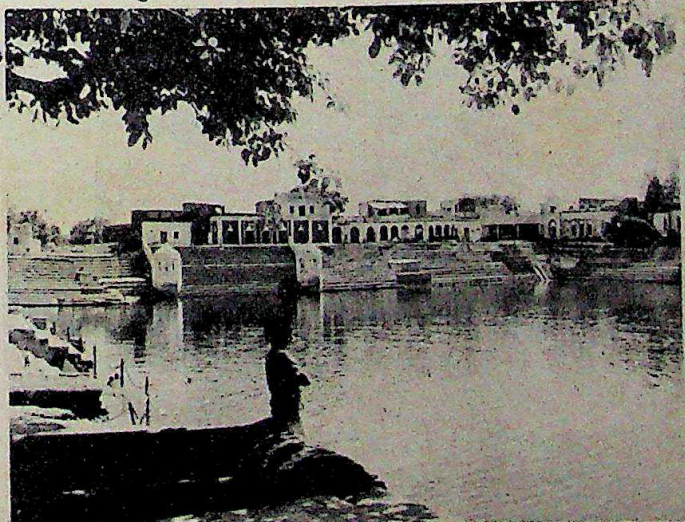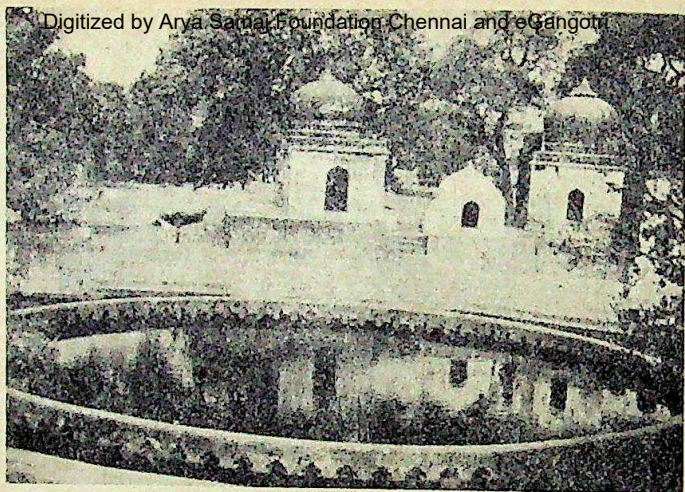
नैमिषारण्य (चक्रतीर्थ)

यहां हर पते से ॐ कार की गूंज सुनाई पड़ती थी। अब भी यदि चित्त शान्त हो तो ऐसा लगता है कि कहीं कोई ऋषि "ॐ" को उच्चारण कर रहा है। ईसावास्योपनिषद, जिस "ॐ" को ईश्वर का रूप-नाद कहता है वह भारत से हजारों वर्ष पूर्व संसार में फैला था—उच्चारण बदल गया था। अथर्ववेद के अनुसार तीन अक्षर अ-उ-म से प्रणव ॐ कार उत्पन्न हुआ। वही ब्रहम है। जिस प्रकार डंठल के आसरे सब पत्ते लगे रहते हैं उसी प्रकार ॐ कार के आसरे सब वाणी है। वाणी के आश्रय सब विषय हैं। सब जगत ॐ कार रूप है।

यह 'ॐ' नैमिषारण्य से संसार के कोने-कोने में पहुंचा। यूनानी इतिहास-वेत्ता के अनुसार मिस्री लोग परम पुरुष को 'अमौं' या 'अमौन' कहते थे। प्राचीन सीरियन सभ्यता के लोग अपनी प्रार्थना 'आमीन' कहकर प्रारम्भ करते थे और इस शब्द को देवता के आवाहन के लिए आवश्यक समझते थे। यहूदी लोग प्रार्थना के अन्त में 'आमीन' कहते थे जिसका अर्थ था - प्रभु कृपा करे। ईसा मसीह ने एक शिक्षक जकारियस से कहा था कि पहले उस प्रथम अक्षर को जानें जिसके मध्य में एक विन्दु है। स्पष्टतः इसका अर्थ ॐ से है। आज ईसाई या मुसलिम इसी 'आमीन' का प्रयोग करते हैं। अतएव नैमिषारण्य में प्रतिध्वनित ॐ कार को हमें पहचानना चाहिये।

— उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान,
महात्मा गांधी मार्ग, लखनऊ, उ.प्र.

व्यक्तित्व

तन से मारीशियन मन से भारतीय

□ जगदीश किंजल्क

आकर्षक व्यक्तित्व की धनी, भारतीय मूल की मारीशियन श्रीमती असलषा कालिकां प्रोआग, फ्रेंच भाषा की प्रख्यात लेखिका हैं और बहु-आयामी व्यक्तित्व की धनी भी। श्रीमती असलषा का जन्म मारीशस के कातरबोर्न नगर में हुआ था। आपके पिताश्री एक ब्राह्मण पुरोहित हैं। आपके पूर्वज बिहार राज्य के तात्कालिक सारन परगना के रहने वाले थे जो बाद में मारीशस में जाकर बस गये। असलषाजी की मातृभाषा बिहारी भोजपुरी है। फ्रांस में वे एक प्रसिद्ध लेखिका के रूप में जानी जाती हैं। आपने कुछ वर्षों तक महात्मा गांधी संस्थान मारीशस की शोधशाला में शोध अधिकारी के पद पर काम किया, फिर आपने पेरिस में, सोर्बेन विश्वविद्यालय के पूर्व देशीय भाषा और सभ्यता संस्थान में हिन्दी का एक उच्च स्तरीय पाठ्यक्रम पूरा किया। फ्रेंच, अंग्रेजी, अरबी तथा हिन्दी भाषाओं की ज्ञाता श्रीमती असलषा के व्यक्तित्व का दूसरा पहलू यह है कि वे सभी तरह के भारतीय व्यंजन बनाती हैं और भारतीय परिधान पहनती हैं। यूरोप और सऊदी अरब के कई महानगरों में आपने उद्देश्यपूर्ण यात्राएं की हैं। मोटर ड्राइविंग और भारतीय पत्रिकाएं पढ़ना आपके शौक हैं। और आपने भारतीय लेखकों की सैकड़ों पुस्तकें पढ़ी हैं। पिछले दिनों हमने प्रसिद्ध साहित्यकार डॉ. धर्मेन्द्र प्रसाद के साथ श्रीमती असलषा से कुछ महत्वपूर्ण सवाल किये थे। यहां प्रस्तुत हैं बातचीत के कुछ अंश —

'असलषाजी! आप भारतीय मूल की मारीशियन हैं फिर आप फेंच भाषा की ओर कैसे आकृष्ट हो गयीं?'

'यह तो आपको मालूम ही है कि १७१५ से १८१० तक मारीशस में फ्रेंच शासन था। विद्यालयों में फ्रेंच भाषा की

अनिवार्य शिक्षा १८वीं शताब्दी से दी जा रही है। यहां का वातावरण ही कुछ ऐसा है कि फ्रेंच भाषा पढ़ी जाये। आज फ्रेंच भाषा भी सम्पर्क की भाषा हो गयी है। मेरे माता-पिता भी मुझे फ्रेंच सीखने के लिए प्रेरित करते रहे। इसकी ध्वनि मुझे अंग्रेजी से अच्छी लगती थी। बस इसे सीखने की लालसा बढ़ती गयी। फ्रांस के सर्वाधिक प्रतिष्ठित सोर्बेन विश्वविद्यालय से मैंने फ्रेंच भाषा में डिग्री ली और यहीं से मैंने 'मारीशस के साहित्य में हिन्दी, फ्रेंच और अंग्रेजी के योगदान का तुलनात्मक अध्ययन' विषय पर शोध भी किया।'

'आपने फ्रेंच में इतनी योग्यता प्राप्त कर ली है तब तो आपको भारतीय संस्कृति का परिचय फ्रेंच भाषा के माध्यम से फ्रांस में करना चाहिए।'

'मेरा तो शुरू से ही यह प्रयास है कि फ्रेंच भाषा में भारतीय संस्कृति को साहित्य के माध्यम से लोकप्रिय बनाया जाय। इससे भारतीय और फ्रांसीसी सभ्यताओं के बीच पारस्परिक समझदारी और सम्बन्ध विकसित होंगे। मैंने अभी तक फ्रेंच में जितनी भी कहानियां और उपन्यास लिखे हैं, उस सभी में भारतीयता की छाप है। यही नहीं, सुप्रसिद्ध फ्रेंको-मारीशियन उपन्यासकार मार्सेल कैवन के समालोचनात्मक अध्ययन पर प्रकाशित मेरी पुस्तक भारतीय दृष्टि से उन्हें देखने-परखने का प्रयास मात्र है। भारतीय संस्कृति और भारतीय विचारधारा को फ्रेंच भाषा में उपलब्ध कराने हेतु मैंने बहुत-सा अनुवाद कार्य किया है और कर रही हूं। मैं चाहती हूं कि मुंशी प्रेमचंद, आचार्य चतुरसेन शास्त्री और अम्बिका प्रसाद दिव्य के उपन्यासों का फ्रेंच में अनुवाद करूं।'

'महिलाओं की स्वतंत्रता की सीमा क्या होनी चाहिए, असलषाजी?'

'इस विषय में मैं बहुत संवेदनशील हूं। मैंने यूरोप, सऊदी अरब और भारत की महिलाओं की दशा को स्वतः देखा है। हां, यूरोप में महिलाओं को पर्याप्त स्वतंत्रता है। पर पुरुष यहां महिलाओं से प्रतिस्पर्धा करने लगा हैं। महिलाओं की कार्य कुशलता से पुरुष वर्ग को ईर्ष्या हो गयी है। पुरुष कहने लगे हैं कि शिशुओं के लिए मां की उपस्थिति आवश्यक है। इस प्रकार यूरोप में भी महिलाओं को घरों में रहने के लिए बाध्य किया जाने लगा है। विडम्बना यह है कि युद्धकाल में कोई भी मां के दूध की बात नहीं करता। उस समय स्त्रियां पुरुष के कंधे से कंधा मिलाकर कार्य करती हैं। इटली और भारत में महिलाओं को स्वयं की सुरक्षा करने में ही अधिकांश समय लगाना पड़ता है। इटली में पुरुषों के मन बहलाव का एकमात्र साधन 'प्रेमालाप' करना हैं। भारतीय पुरुष इटैलियन्स से कुछ कम प्रेमालाप करता है, परन्तु भारतीय पुरुष

महिलाओं में गहरी दिलचस्पी रखता है, भारत में भी नारी स्वतंत्र नहीं है। व्यक्तिगत रूप से मैं नारी स्वतंत्रता चाहती हूं।

इसी बीच डॉ. धर्मेन्द्र प्रसादजी ने भी असलषाजी से प्रश्न किया, 'मैंने सुना है कि फ्रेंको– मारीशियन पत्र-पत्रिकाएं भारतीय अप्रवासियों को निम्न स्तर का नागरिक समझती हैं। क्या यह सच है?'

'जी हां, यह सच है। मारीशस में फ्रेंको मारीशियन पत्र पत्रिकाएं भारतीय अप्रवासियों का निरन्तर विरोध करती रहती हैं। मेरा यह दृढ़ निश्चय है कि मैं अपनी रचनाओं के द्वारा जीवन भर ऐसे विचारों का विरोध करूंगी। भारतीय मूल का होने के कारण फ्रेंको-मारीशियन समाज में मुझे निम्नकोटि का समझा जाता है। हमें अपनी संस्कृति, सभ्यता और पूर्वजों के प्रति स्वाभिमानी रहना होगा। हिन्दी साहित्य तथा हिन्दू संस्कृति की अच्छी बातों का हमें विश्वभर में प्रचार-प्रसार करना है। उनके सम्बन्ध में यूरोपवासी तथा सम्पूर्ण पश्चिमी जगत में सैकड़ों गलत धारणाओं एवं पूर्वाग्रह से भरा है।

फ्रांस में अनुवाद कार्य की स्थिति के विषय में डॉ. धर्मेन्द्र प्रसादजी के प्रश्न का उत्तर देती हुई असलषाजी ने कहा, 'अनुवाद कार्य में फ्रांस काफी उदार है। इसके लिए फ्रांस में बहुत सी छात्रवृत्तियां और अन्य सुविधाएं दी जाती हैं। फ्रांस के महान लेखकों की कृतियों का जो लोग विश्व की अन्य भाषाओं में अनुवाद कार्य करते हैं, उन्हें सरकार एवं कई अन्य संस्थाएं आर्थिक मदद करती हैं।'

'सुना है आप भारतीय, संगीत में गहरी दिलचस्पी रखती हैं, क्या यह सच है?'

'मुझे ही क्यों? आप यह बताइये, किंजल्कजी, भारतीय संगीत को विश्व में कौन पसंद नहीं करता? फिर तो मैं भारतीय मूल की मारीशियन हूं। भारतीय संगीत ही नहीं भारत की प्रत्येक घटना को मारीशस में भारतीयों के वंशज बड़े ध्यान से देखते हैं।'

असलषाजी ने अंत में अपने परिवार के विषय में बताया, 'मेरे पति जल-प्रदाय विभाग में इंजीनियर हैं। उन्होंने पेरिस से यांत्रिकी के एक विषय पर शोधकार्य किया है। मेरे बड़े भाई मारीशस में सूचना प्रकाशन विभाग के संचालक हैं। एक भाई व्यापार करते हैं। मैं घर-गृहस्थी में उतनी ही रुचि लेती हूं जितनी साहित्य और संगीत में।'

— १८८ जवाहर मार्ग,
छतरपुर - ४७१ ००१, म.प्र.

मैं देश की कम से कम इतनी सेवा अवश्य करना चाहता हूं कि जो मेरे लाखों भाई डर के मारे अपने ऊपर किये हुए अत्याचारों को प्रकाश करने का साहस नहीं करते। मैं हजार कष्ट सहकर भी उन्हें प्रकट करूंगा। — रवीन्द्रनाथ ठाकुर

मोटापे ने बनाये हैं विश्व कीर्तिमान

□ डॉ. विनोद गुप्ता

प्रकृति की लीला बड़ी विचित्र है। कोई अपने दुबलेपन को लेकर चिंतित है तो कोई अपने मोटापे को लेकर परेशान है। कहा जाता है कि मोटापा सौ रोगों की जड़ है। मोटापे की वजह से न केवल उन्हें समाज में हंसी एवं उपहास का पात्र बनना पड़ता है, वरन् अपने दैनिक कार्यों में भारी असुविधा उत्पन्न होती है। आइये आपको हम विश्व प्रसिद्ध मोटुओं से मिलवाते हैं।

गिनीज बुक ऑफ वर्ल्ड रिकार्ड्स में दर्ज दुनिया के सबसे मोटे आदमियों की सूची में हडसन का नाम अब भी सबसे ऊपर है।

गत वर्ष अचानक ४२ वर्षीय वाल्टर हडसन का नाम अखबारों की सुर्खियों में छपने लगा था। वजह यह थी कि छह फुट लंबी और नौ फुट घेरे की कायावाला हडसन अपने बाथरूम के दरवाजे के बीच फंस गया था। ५६७ किलोग्राम वजन के दुनिया के सबसे बड़े इस भीमकाय पुरुष को अपने बाथरूम के दरवाजे से निकालने के लिए आपात चिकित्सा तकनीशियनों को बुलाना पड़ा था। हालांकि उसे निकाल तो लिया गया लेकिन इसके बाद बेचारे हडसन को अपनी खुराक की मात्रा में भारी कमी करनी पड़ी।

दुनिया का सबसे मोटा यह आदमी १६ वर्ष तक एक ही कमरे में रहा। उसे खुद चलकर दूसरे कमरे में पहुंचने में सफलता गत २५ दिसम्बर को तब मिली जब वह अपने भीमकाय शरीर का वजन १६९ किलोग्राम घटा चुका। वह अपनी इस सफलता पर फूला नहीं समाया। किसी का सहारा लिये बगैर एक कमरे से दूसरे कमरे में पहुंच पाना हडसन के लिए एक तरह से दूसरा जन्म और क्रिसमस का सबसे बड़ा उपहार साबित हुआ।

बाथरूम के दरवाजे में फंसने की

घटना के पूर्व हडसन का भोजन कुछ इस तरह से था– सुबह के नाश्ते में दो पौंड सुअर का मांस, एक दर्जन अंडे, एक दर्जन रोल, मुरब्बा और कॉफी। भोजन में चार बड़े मेक्स, चार डबल चीज वर्ग से, फ्राइज के आठ डिब्बे और सोडा के छह पैकिंग। रात्रि भोजन में तीन हेमस्टीक, छह स्वीट पोटेटो, इतने ही व्हाइट पोटेटो। भोजनोपरांत पोटेटो चिप्स, केक्स एवं आइस्क्रीम। लेकिन बाथरूम के दरवाजे में फंसने की घटना के बाद अब एक सामाजिक कार्यकर्ता एवं पोषण विशेषज्ञ डिक ग्रिगोरी की देखरेख में उनकी खुराक की तादाद और उनका मीनू एकदम बदल गया है। इन दिनों वह फल और सब्जियां खा रहे हैं। ग्रिगोरी द्वारा दिया गया पावडरनुमा आहार वह संतरे के रस के साथ लेते हैं। मांस बिल्कुल नहीं खाते और प्रतिदिन डेढ़ गैलन पानी पीते हैं। हडसन अब मोटू जरूर है लेकिन पेटू नहीं। अब उसका वजन ३६३ किलोग्राम रह गया है।

पोषण विशेषज्ञ ग्रिगोरी की योजना थी कि बसंत में हडसन को बताया स्थित अपनी क्लीनिक पर ले जायेंगे और दो से तीन साल तक उन्हें अपने यहां रखेंगे जब तक कि हडसन का भार घट नहीं जाये। हडसन ने भी कहा था कि वह खुद ही चलकर मकान के बाहर जाने की कोशिश करेगा।

इस वर्ष फरवरी के प्रथम सप्ताह में हडसन का बहामा स्थित दुबला करने वाले एक उपचार केन्द्र में जाने का कार्यक्रम था। टेलीविजन कैमरामेन हडसन के घर के बाहर जमघट लगा कर खड़े हो गये ताकि सत्रह वर्ष तक अपने मकान में कैद रहने के बाद भीमकाय हडसन द्वारा बाहर की दुनिया में रखे जाने वाले विशाल कदम को वे कैमरों में कैद कर सकें। लेकिन ऐन वक्त पर हडसन की हिम्मत जवाब दे गयी और वह फूट-फूट कर रोने लगा।

हडसन ने बाद में बतलाया कि पहले उसे लग रहा था कि वह चल पड़ेगा लेकिन न तो उसकी टांगें उसका वजन उठा सकीं और न ही उसका हौसला मजबूत बन पाया कि वह सत्रह वर्षों में पहली बार घर से बाहर कदम रख पाता।

मोटापे की वजह से हडसन अपने शयनकक्ष के बिस्तरे पर ही लेटा रहता है। वह एक कमरे की अपनी दुनिया में कुछ भी नहीं पहनता है बस एक चादर ही उसकी पोशाक है।

हडसन को पतला करने की प्रक्रिया में ग्रिगोरी के छह सहायक हडसन के साथ रहते हैं। उसे एक विशेष आहार के पाउडर व विटामिन के फार्मूले से मिला पेय पदार्थ ही भोजन के नाम पर दिया जाता है। हडसन के इरादे इतने मजबूत हैं और यह मजबूती उसे चरबी की कैद से मुक्ति दिलवा कर रहेगी। वैसे पोषण

विशेषज्ञ ग्रेगरी [illegible] की एक [illegible] चरबी कम करने में सफल हो चुके हैं।

अब पुस्तक महल नई दिल्ली द्वारा प्रकाशित गिनीज बुक ऑफ वर्ल्ड रिकार्ड्स से साभार ली गयी सामग्री पर भी एक नजर डालें। अमेरिका के जॉन ब्रोवर मिनांक भी कम भारी भरकम नहीं थे। उनका जन्म २९ सितंबर १९५१ को हुआ। मार्च १९७८ में एक बचाव दल द्वारा उसे सीएटल के युनिवर्सिटी अस्पताल में जांच करवाने के लिए ले जाया गया। उसका ज्यादा वजन का रिकार्ड सितंबर १९७६ में ४२२ किलोग्राम का है। उसे बिस्तर पर करवट बदलवाने में १३ आदमियों को लगाना पड़ा था। दो साल तक उसे १२०० केलोरी प्रतिदिन की खुराक पर रखा गया, जिससे उसका वजन घटकर २१६ किलोग्राम रह गया। उसे दुबारा अस्पताल में अक्तूबर १९८१ में भर्ती कराया गया, क्योंकि सिर्फ एक सप्ताह में ही उसके वजन में ९१ किलोग्राम की बढ़ोतरी हो गयी थी। उसकी मृत्यु १० सितंबर १९८७ को हुई। वह १८५ सेंटीमीटर लंबा था। उसका वजन १९६३ में १८१ किलोग्राम और १९६६ में ३१७ किलोग्राम था। वजन बढ़ने के इस औसत के आधार पर यह अनुमान लगाया जा सकता है कि १९७८ में उसका वजन ६३५ किलोग्राम से अधिक रहा होगा।

जॉन ब्रोवर मिनांक का नाम सबसे अधिक वजन के अंतर के पति-पत्नी के रूप में भी गिनीज बुक में दर्ज है। मार्च १९७८ में जॉन ब्रोवर का वजन ५८९ किलोग्राम था और उसकी पत्नी जिएनेट का वजन ५० किलोग्राम था। अर्थात् दोनों में ५३९ किलोग्राम वजन का अंतर था। सबसे मजे की बात तो यह कि जिएनेट से ब्रोवर मिनॉक के दो पुत्र भी हुए।

आजकल जीवित व्यक्तियों में टी. जे. एलबर्ट जैक्सन भी असाधारण मोटापे के धनी हैं। उन्हें केन्टन का मोटा अल्बर्ट के नाम से भी जाना जाता है। उसका जन्म अमेरिका में सन १९४१ में हुआ था। उसका वजन वर्तमान में ४०० किलो के लगभग है।

मोटापे पर पुरुषों का ही एकाधिकार नहीं है। महिलाएं भी मोटी होने में पीछे नहीं हैं। विश्व की सबसे भारी महिला श्रीमती पर्सी पले वाशिंगटन थी। उसकी मृत्यु ९ अक्तूबर १९७२ को मिलवाकी के एक अस्पताल में हुई। अस्पताल में वजन नापने की मशीन की क्षमता ३६२.८ किलोग्राम तक ही थी, जबकि पर्सी पले का अनुमानित वजन ३९९.१ किलोग्राम के लगभग था।

वैसे मोटापा घटाना असंभव नहीं है और यदि व्यक्ति ठान ले तो वह आश्चर्यजनक रूप से दुबला हो सकता है। यकीन न आता हो तो अमेरिका के

पेशेवर कुश्तीबाज विलियम कॉब को देखिए। उसका जन्म १९२६ में अमेरिका में हुआ था। जुलाई १९६५ में मालूम हुआ कि उसने अपना वजन ३ साल में ३६४ किलोग्राम से घटाकर १०५ किलोग्राम कर लिया है। उसकी कमर का घेरा भी २५६ सेंटीमीटर से घटकर ११२ सेन्टीमीटर रह गया।

महिलाएं भी अपना मोटापा घटा सकती हैं। सेलेस्टा गेयर का जन्म अमेरिका में सन १९०१ में हुआ था। उसने सन १९५०-५१ के १४ महीनों में अपना वजन २५१ किलोग्राम से घटाकर ६९ किलोग्राम कर लिया था। एक अन्य अमेरिकी महिला श्रीमती लेवान्डोस्की का वजन भी घटकर आधा रह गया था। उसका जन्म १८९३ में हुआ था। उसने फरवरी १९५१ में एक गांठ का ऑपरेशन कराया था जिसके कारण उसका वजन २८० किलोग्राम से घटकर १४० किलोग्राम रह गया।

पुरुषों और महिलाओं की भांति कुछ बच्चे भी मोटापे के धनी होते हैं। अब इटली की सिग कारमोलिना की ही बात लीजिए, उसने सितंबर १९५५ में एक पुत्र को जन्म दिया था, जिसका वजन १०.२ किलोग्राम था। इसी वजन के एक शिशु को क्रिस्टीना समने ने भी दक्षिणी अफ्रीका के एक अस्पताल में २५ मई १९८२ को जन्म दिया था। उसका नाम सिथान्दीव रखा गया था। उसका वजन आठ माह की उम्र में ३४.९ किलोग्राम था।

स्कॉटलैंड का शिशु जेक्स वापर भी काफी हृष्ट-पुष्ट था। उसका जन्म सन १८१९ में हुआ था। १३ माह की उम्र में ही उसका वजन ५०.८ किलोग्राम था। उसका कद १०१ सेंटीमीटर और शरीर का घेरा ९९ सेंटीमीटर था। १९२१ में उसकी मृत्यु हो गयी।

ब्राजील का "महाशिशु" बेरिडियानों डोस सान्टोस भी भारी-भरकम था। उसका जन्म सन १९७८ में हुआ था। पांच वर्ष की आयु में उसका वजन ६४.८ किलोग्राम था।

और अब एक नौ वर्षीय भारतीय बालक ने गिनीज बुक में दर्ज रिकार्डों को भंग कर एक नया कीर्तिमान स्थापित किया है।

केवल नौ साल की आयु में गजानन शिवशंकर कचारडे का वजन ८७ किलोग्राम तक पहुंच गया है।

डॉक्टरों के एक दल का कहना है कि कचारडे का वजन घटाने के लिए उसका तुरंत इलाज होना चाहिए, क्योंकि वह पिट्यूटरी या एडरीनल ग्रंथि से पीड़ित है। लेकिन डॉक्टरों का कहना है कि अभी हम इस मामले में अंतिम निष्कर्ष तक नहीं पहुंचे हैं।

गजानन शिवशंकर कचारडे का इलाज कर रहे चिकित्सकों के अनुसार

नव-गीत

मौन व्रती यह अधर तुम्हारे
नयनों की यह भाषा ।
जैसे शांत पुलिन की बांहों में
जैसे सरिता लहराये,
फिर फिर खोले पंख पखेरू
उड़ने को अकुलाये ।
कौन मनीषी कर पाया
अब तक इनकी परिभाषा ।
ज्यों अधखिली कली सोयी हो
पुरवा की शय्या पर
श्वेत श्याम रतनार पताका
सुधियों की नैया पर
कितनी व्यथा प्यार है कितना
कितनी है अभिलाषा ।
कौन समझ पाया है अब तक
यह अनबूझ पहेली
मानव मन की सहज भावना
की यह कथा अकेली
लिपटी-मुदित उदास दिये
गलबाहीं तृप्ति-पिपासा

— बालकृष्ण मिश्र

अस्पताल चौराहा, रायबरेली - २२९ ००१

यह एक दुर्लभ मामला हैं, क्योंकि उसके वजन में वृद्धि का कारण मोटापा नहीं है । चिकित्सकों का कहना है कि वह प्रतिदिन एक-दो चपाती, मुट्ठी भर भात और एक कटोरी दाल खाता है, जो सामान्य बच्चों की खुराक है ।

गजानन के पिता महाराष्ट्र के यवतमाल जिले के धनाकी कस्बे में क्लर्क हैं । गजानन जब पैदा हुआ, उस समय उसका वजन करीब ढाई किलोग्राम था । परंतु ढाई वर्षों में उसका वजन २७ किलोग्राम हो गया । गजानन के बजन में असाधारण वृद्धि से चिंतित माता-पिता उसे नागपुर के मेयो अस्पताल ले गये, लेकिन यहां के डॉक्टरों ने गजानन का परीक्षण करने के बाद उसे सामान्य बच्चा घोषित कर दिया ।

गजानन का मोटापा उसके अध्ययन में बाधा नहीं बना है । वह चौथे दर्जे का छात्र है और पिछली कक्षा में उसने ८५ प्रतिशत अंक प्राप्त किये थे । उसने बताया कि मैं दौड़ नहीं पाता और खेलों के मामले में अपने को अयोग्य महसूस करता हूं ।

— १६, सुदामा नगर एक्टेंशन — २, रामटेकरी, मन्दसौर, म.प्र.

□

कांटों का कवच और सुरंगों में घर : सेही

□ ई. कु. नरेश्वर

एक दुर्ग्राहय, मानव भक्षी बाघिन का महीनों तक पीछा करने के बाद अन्ततः उसे गोली मार दी गयी। शल्य चिकित्सा की रिपोर्ट ने जो रहस्य खोले वह चौंकाने वाले रहे। रिपोर्ट के अनुसार बाघिन के चेहरे और शरीर के आगे के हिस्सों में सेही के कांटे धंसे हुए थे, और उसकी एक आंख भेदी जा चुकी थी। इस बड़ी बिल्ली अर्थात बाघिन को सेही के मुकाबले ने अपंग बना दिया, परिणामस्वरूप वह मानव भक्षी बन गयी। जिम कार्बेट ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक "मेन इटर्स ऑफ कुमाऊ" में इस बात को रेखांकित किया है।

कृंतक परिवार का सदस्य यह कांटेदार प्राणी अपने भयानक कांटों से बाघ तक को भी अक्षम बना सकता है। भारतीय सेही हिमालय से कन्याकुमारी तक सारे भारत में पाई जाती है। इसे कई नामों से जाना जाता है मराठी में इसे 'शेवाल', तमिल में 'मुल्लन पन्नी', कन्नड़ में 'यद' और तेलगु में 'येद् पेंडी' कहा जाता है।

दक्षिणी भारत के पहाड़ी क्षेत्रों में इसका रंग गहरा लाल पाया जाता है और इसलिए इसे वहां लाल सेही के नाम से जाना जाता है। सेही की एक और प्रजाति असम और बंगाल में १,५२५ मी. की उंचाई पर भी पाई जाती है। बालदार पूंछ वाली सेही इस प्राणी की एक और दुर्लभ प्रजाति है जो बंगाल के निम्न क्षेत्रों, असम और मलेशिया में पाई जाती है। यह सख्त कांटों से भरपुर अपनी लम्बी पूंछ के कारण आसानी से पहचानने में आ जाती है।

भारतीय सेही की पूंछ से सिर तक लम्बाई ७८ से १०० सें.मी. तक होती है। सेही के कांटे वास्तव में रूपांतरित बाल होते हैं। ये आकार में १५ से ३० सें.मी. तक होते हैं जो गर्दन और कंधों के हिस्सों को भी ढके होते हैं। लम्बे, पीछे की ओर तिरछे कांटें पिछले हिस्से को ढके होते हैं। प्रत्येक कांटा काले और सफेद छल्ले लिए होता है।

सामान्यतः कांटे शरीर पर लेटी हुई
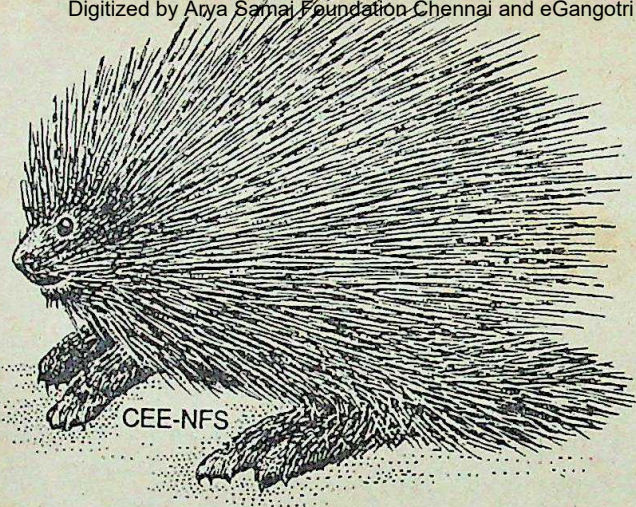
अवस्था में होते हैं, किन्तु जब सेही चौकन्नी या भयभीत हो जाती है तब गुरगुराती व सांस फुलाती है और अपने कांटों को खड़ा कर लेती है। इससे एक सनसनाती आवाज भी निकलती है।

सेही अपने दुश्मन पर अनायास पीछे की ओर दौड़कर आक्रमण करती है। इसका परिणाम यह होता है कि दुश्मन के शरीर में अधिक गहराई तक सेही के कांटे धंस जाते हैं। किन्तु जब सेही का सामना किसी बहुत बड़े प्राणी से होता है तो वह अपने कांटों को उभारकर गोलाकार किन्तु सख्त स्वरूप धारण कर लेती है। पुराने और क्षतिग्रस्त कांटों के स्थान पर नये आ जाते हैं। नीचे की तरफ नये कांटों का उगना शुरू होता है और पुराने गिरने शुरू हो जाते हैं। कांटों के भारी बोझ के बावजूद सेही आसानी से चलती है और अच्छी तरह से तैर सकती है।

सेही के घर चट्टानी क्षेत्रों, खुली भूमि, जंगल और खेतों में होते हैं। ये शर्मीले प्राणी सूर्य के प्रकाश की अपेक्षा धुंधलके पसन्द करते हैं और भूमि से अधिकतर सटे हुए रहते हैं। दिन में कंदराओं, चट्टानों या स्वयं के द्वारा खोदी गयी सुरंगों में आराम करना इन्हें अधिक पसंद है।

सुरंग खोदना

सेही सामाजिक प्राणी है और कुछ क्षेत्रों में तो एक ही कन्दरा में अनेक सेही रहते पाये जाते हैं। जब ये अपने तीक्ष्ण

पंजों से खोद रहे होते हैं तो भारी मात्रा में भूमि को खोखला कर देते हैं और मिट्टी को सुरंग के मुंह पर डाल देते हैं। एक सुरंग में अनेक छोटी सुरंगों का जाल सा होता है, जिनमें आपातकाल में भाग निकलने के लिए द्वार भी होते हैं। ये सुरंगें कई मीटर लम्बी होती हैं। सेही के द्वारा छोड़ी गयी सुरंगों का लकड़बग्घे और गीदड़ अपने आवास गृह के रूप में उपयोग करते हैं।

बच्चों का जन्म ठंड के मौसम में होता है। दोनों अभिभावक अपने दो या चार बच्चों सहित सम्पूर्ण सुरंग में रहते हैं। बच्चों की जन्म के समय आंखें खुली होती हैं और शरीर नरम कांटों से ढका होता है। सेही आपस में एक दूसरे को चाटकर स्नेह प्रकट करते हैं। इनका अपने बच्चों के प्रति भी बहुत स्नेह होता है।

चतुर प्राणी सेही को आसानी से पकड़ा या मारा नहीं जा सकता। हालांकि इनकी देखने की क्षमता कमजोर होती है किन्तु अन्य इंद्रियां अच्छी तरह से विकसित होती हैं। ये लगातार नाक को ऐंठते रहते है और भोजन या खतरे के संकेतों को सूंघते रहते हैं। इनकी सुनने की क्षमता बहुत तेज होती है जिससे वे पेड़ से टूटकर फल के गिरने की आवाज कई मीटर दूर से भी सुन सकते हैं।

सेही के मुख्य दांत अन्य कृंतकों के समान होते हैं, ये उन्हें हड्डियों को कुतरने में सक्षम बनाते हैं जिससे उनके कांटों के विकास के लिए आवश्यक केल्सियम प्राप्त करने में सहायता मिलती है। किन्तु ये खासतौर पर शाकाहारी प्राणी हैं। अनाज और फल इनका मुख्य भोजन हैं।

ये प्राणी मिट्टी को खोदकर उसकी गुणवत्ता में वृद्धि करने में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करते हैं। इनकी खुदाई करने की गतिविधियां भीतर की मिट्टी को बाहर ले आती है। कालान्तर में पत्तियों और लकड़ी के सड़कर मिट्टी में मिलने के कारण यही मिट्टी उपजाऊ स्वरूप धारण कर लेती है।

सेही का मांस के लिए और कांटों — जिनका कि अलंकरणों में उपयोग किया जाता है— के लिए शिकार किया जाने लगा है। वर्तमान समय में जगलों में मानव का अतिक्रमण और खेती व सड़क निर्माण के लिए जंगलों के विनाश ने इनके प्राकृतिक आवासों को बुरी तरह से नष्ट कर दिया है। किन्तु बहुत अधिक अनुकूलनीय प्राणी होने के कारण ऐसा प्रतीत होता है जैसे सेही इस बदलते घटनाक्रम का मुस्तैदी से सामना कर रही है। **(सीईई-एनएफएस)**

> जब तक संसार से बहादुरों और शहीदों की वीर-गाथाओं का लोप नहीं होगा तब तक संसार में सच्ची स्वतंत्रता नहीं हो सकती। **— वाल्ट हिटमेन**

प्रजातंत्र की पुकार

□ रामेश्वर शुक्ल 'अंचल'

फिर बंद न मुझको कर देना तुम कारा की दीवारों में
मैं कोटि-कोटि पीड़ित, अधनंगों अधभूखों की भाषा हूं,
ऊंचा मस्तक, ऊंची चितवन, ऊंचे मन की अभिलाषा हूं !
पर मेरे शासन के जबड़े ही मुझको फिर न चबा जायें,
प्रभुता के वे आतंक न फिर विश्वास अभय को खा जायें ।
बंध जाये न फिर हथकड़ियों की जकड़न में मेरी ही वाणी,
खो जाये न जुल्मों के मद में यह मुक्ति चेतना वरदानी ।
दासों के महाद्वीप बन कर मत बंध बंध जाना नारों में,
फिर बंद न मुझको कर देना तुम कारा की दीवारों में ।
अब तक धरती पर अंकित है जिस क्रूर अनय की ज्वाला में,
दिन रात हवा में तिरती हैं वे सत्ता अंधी छाया में ।
फिर मुझको तुम न बना देना कातर पशुओं का अंध शिविर,
जंजीरों में कसनेवाला अन्यायी युग आ जाये न फिर ।
बढ़ती है जहां अमीरी पर केवल थोड़े परिवारों की,
दिन रात तरक्की होती है कुर्सी के पहरेदारों की ।
मत मुझको ध्वजा बना देना उन श्रम शोषक मीनारों में,
फिर बंद न मुझको कर देना तुम कारा की दीवारों में ।
झूठा आदर्शों का सपना जो केवल चित्र बनाता है,
पूंजी का नरभक्षी फंदा अधिकाधिक कसता जाता है ।
घायल है देश अभावों से, मदमत्त मुनाफाखोरी से,
प्रतिबद्ध न मुझको करना काले धन की आदमखोरी से ।
धरती भरती भंडार जहां बस सत्ताधीश घरानों की,
शासन की सारी अर्थ नीति रक्षक उनके तहखानों की ।
दम मेरा घुटता थैलीशाहों के खूनी कोठारों में,
फिर बंद न मुझको कर देना तुम कारा की दीवारों में ।

— पचपेढ़ी, दक्षिण सिविल लाइन, जबलपुर, म.प्र.
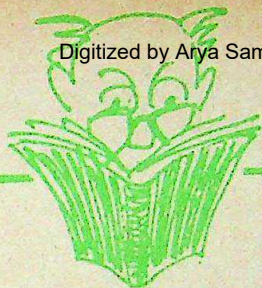
ग्रंथलोक

*** त्रिवेणी एक्सप्रेस (कहानी-संग्रह)* लेखक : कमलेश भट्ट, 'कमल'; प्रकाशक : अयन प्रकाशन, १/२० महरौली, नई दिल्ली - ३०; मूल्य : ४० रुपये ।**

'त्रिवेणी एक्सप्रेस' कमलेश भट्ट 'कमल' का सद्यः प्रकाशित कहानी संग्रह है, जिसमें कथाकार ने अपनी चुनिन्दा चौदह कहानियों को इस प्रकार पिरोया है कि एक अति संवेदनशील एवं मार्मिकता के वातावरण को पाठक बड़ी सहजता से महसूस कर सकता है । कथाकार का यह कथन, कि ये समस्त कहानियां सच्ची घटनाओं पर आधारित हैं, दर्पण की तरह सच्चाई को उजागर करता है । वास्तव में इस कहानी संग्रह की सभी कहानियां जीवन के विविध पक्षों को परत-दर-परत उघाड़ने में पूर्णतः सफल रही हैं । कथानक एवं पात्र चाहे गांव के हों या शहर के, इस प्रकार से चुने गये हैं कि वे दोनों पक्षों का प्रतिनिधित्व करते प्रतीत होते हैं। सर्वाधिक महत्वपूर्ण बात यह है कि ये सभी कहानियां उस मानवीय गुण से ओतप्रोत हैं, जो मानवता के रूप में सर्वविदित है और यही मानवीयता पाठकों के मन में अंकुरित होती है जब वह इन कहानियों को पढ़ता है ।

कहानी संग्रह का सर्वाधिक सशक्त पक्ष इसकी भाषा है, जो पाठक को बांधे रखती है । चोर, 'बुखार' बाल बच्चे, मूल यंत्र एवं 'किसके लिए' आदि ऐसी कहानियां हैं, जो मानवीय-स्पर्श से ओतप्रोत हैं ।

सारांश में प्रस्तुत कहानी संग्रह की कहानियां आम आदमी की कहानियां हैं जो उसकी ऊहापोह भरी जिन्दगी का वास्तविक चित्रण करने में पूर्णतः सफल रही हैं ।

* * *

*** 'ब्रजनन्दन : व्यक्तित्व एवं कृतित्व'* लेखक : डॉ. ओमप्रकाश सिंह; प्रकाशक आराधना ब्रदर्स, गोविन्दनगर, कानपुर; मूल्य: ६० रुपये ।**

बैसवारे की विभूति एवं ब्रजभाषा तथा अवधी दोनों ही विभाषाओं में श्लाघनीय सृजनात्मक कार्य करने वाले स्व. ब्रजनन्दनजी हिन्दी साहित्य के

विकास में अपना महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं। भारतीय संस्कृति और सभ्यता के पोषक तथा कृष्ण काव्य परम्परा को नये धरातल एवं आयाम देने वाले इस कवि का बैसवारे की पावन भूमि पर अपना आदर्श रहा है।

प्रस्तुत शोधात्मक पुस्तक में स्व. कवि के बिखरे पड़े साहित्य को एकत्रित एवं संपादित कर डॉ. ओम प्रकाश सिंह ने निस्संदेह अति प्रशंसनीय कार्य किया है। उन्होंने कवि के व्यक्तित्व एवं कृतित्व दोनो ही पक्षों को प्रस्तुत कर जहां एक ओर कवि के एक अति मानवीय गुण को प्रस्तुत किया है, वहीं दूसरी ओर पुस्तक के अन्त में कवि की प्रमुख रचनाओं का संकलन कर साहित्य प्रेमियों के लिए अच्छी सामग्री प्रस्तुत की है।

कवि के व्यक्तित्व, जीवन परिचय एवं कर्मक्षेत्र सभी पहलू का विस्तृत विवेचनात्मक परिचय देने के लिए लेखक ने अथक प्रयास किया है। इसका प्रमाण है कवि के उन व्यक्तिगत मानवीय गुणों का सुन्दर प्रस्तुतीकरण, जिनसे आम पाठक अपरिचित था।

इन्ही मानवीय गुणों के कारण स्व. ब्रजनन्दनजी का काव्य-संसार भी दूसरों के लिए सिर्फ पठनीय ही नहीं, प्रेरणादायक भी रहा है। प्रस्तुत पुस्तक का संपादन निस्संदेह प्रशंसनीय है। — **डॉ. किशोरीलाल त्रिवेदी**

* * *

*** युद्ध मुद्रा (काव्यसंग्रह) * रचनाकार : डॉ. अरुण त्रिवेदी; प्रकाशक : सानुबन्ध प्रकाशन, सिविल लाइन्स, उन्नाव; मूल्य : ३५ रुपये।**

प्रस्तुत काव्य-संग्रह 'अवधी' के लब्धप्रतिष्ठ हास्यरस कवि स्व. चन्द्रभूषण त्रिवेदी 'रमईकाका' के सुपुत्र डॉ. अरुण त्रिवेदी की ५४ साठोत्तरी कविताओं का संकलन है।

डॉ. त्रिवेदी नई कविता के सशक्त हस्ताक्षर हैं, और चर्चित व्यंग्यकार।

'युद्ध मुद्रा' काव्यसंग्रह की विद्वतापूर्ण भूमिका 'अथसार्थकम्' शीर्षक से है। इसमें डॉ. त्रिवेदी ने कविता, कवि-कर्म, काव्य-कथ्य, कविता भाषा, शब्द-साधना, कवि की पक्षधरता गतिशील मानव समाज की स्थिति पर मौलिक, सारगर्भित, विचारणीय एवं प्रेरक टिप्पणियां लिखकर अपनी वैचारिक उत्कृष्टता का प्रशस्य परिचय दिया है।

कविवर त्रिवेदी ने वर्णन की अपेक्षा भाषा संस्कार पर अधिक बल दिया है। उपर्युक्त स्थापना और भाषा संस्कार को संकेतित करने वाली एक कविता 'अभिमन्यु' दृष्टव्य है :

क्षत-विक्षत पड़े थे नारे
फिर उगने लगे हैं
टूटकर खंडित हो गये थे जलूस
फिर उठने लगे हैं,
ऐसे में अच्छा हुआ मेरे अभिमन्यु

कि तुम पैदा हो गये,
मैं तुम्हारा पिता
तुम्हारी अधूरी शिक्षा के लिए
उत्तरदायी हूं,
इसलिए आज अपने सारे अधिकार
विसर्ज़ित करता हूं
और यह चक्रव्यूह सा - देश
तुम्हें समर्पित करता हूं ।

अभिमन्यु के व्यक्तित्व को आधुनिक परिवेश में वर्तमान संदर्भों से सम्पृक्त करते हुए उपर्युक्त कविता में रेखांकित किया गया है ।

'युद्धमुद्रा' शीर्षक की सार्थकता की ओर संकेत करते हुए डॉ. त्रिवेदी का यह कथ्य बहुत ही सामयिक है कि ''इस गतिशील मानव समाज को यदि गौर से देखा जाये तो लगेगा कि आज की दुनिया नाराज लोगों की दुनिया है। ...यही कारण है कि एक रोषयुक्त मानसिकता से आज का युग आच्छन्न है। आज की कविता में आक्रोश की निरन्तर उपस्थिति इसका प्रमाण है।'

सार्थक शीर्षक एवं 'अथ सार्थकम्' शीर्षक भूमिका सहित नई कविता का यह संकलन वस्तुत: काव्य-क्षेत्र की एक नव्य, मौलिक एवं प्रशस्य उपलब्धि कही जा सकती है ।

* * *

*** कर्ण (महाकाव्य)* रचयिता : बैजनाथ प्रसाद शुक्ल 'भव्य'; प्रकाशक : प्रज्ञा प्रकाशन. ७० चांदगंज गार्डेन, लखनऊ-२०, मूल्य : ६० रुपये ।**

सरस, सरल एवं प्रवाहपूर्ण खड़ी-बोली के इस महाकाव्य में ३० सर्ग हैं दोहा, हरिगीतिका गुपाल, तांटक, वीर आदि मात्रिक छंदों का प्रयोग किया गया है; जिनमें कहीं-कहीं पर शास्त्रीय नियमों का उल्लंघन भी हो गया है ।

'कर्ण' का चरित्र कई दृष्टियों से आंका गया है ।किसी ने उसे धीरोदात्त नायक के रूप में देखा हैं, किसी ने महादानी के रूप में उसकी प्रशंसा की है; किसी ने उसे आदर्श मित्र के रूप में प्रस्तुत किया है तो किसी कवि ने उसके धीरोद्धत रूप को अंकित किया है ।

कविवर 'भव्य' जी ने 'कर्ण' महा-काव्य के सृजन उद्देश्य को स्पष्ट करने के लिए अपने 'दृष्टिकोण' को इन शब्दों में प्रस्तुत किया है, 'उपर्युक्त धारणा को लेकर उसके गुणों को उचित मात्रा में स्वीकारते हुए, जहां प्रस्तुत काव्य में उसके लक्ष्य की असाधुता का निदर्शन है, वहीं उसके विनाशकारी दोषों एवं दुर्बलताओं को भी रेखांकित करके उसके चरित्र को समग्र रूप में मूल्यांकित करने का प्रयास किया गया है । लोक-कल्याण की दृष्टि से गुणों का ही नहीं, उन दोषों का भी विवेचन अपेक्षित है जो समाज तथा राष्ट्र को अवनति तथा दुर्दशा की ओर ढकेलते हैं, विशेषकर जब वे दोष किसी समर्थ व्यक्ति में हों ।'

यह महाकाव्य कर्ण के चरित्र को एक नये दृष्टिकोण के साथ प्रस्तुति का प्रशस्य प्रयास है। अभी तक कर्ण पर जितने काव्य देखने को मिले, उन सभी में प्रायः उसका यशोगान ही हुआ है। 'भव्य' जी ने प्रथम वार उसके दोषों एवं दुर्बलताओं को उद्घाटित कर समाज को उनसे बचने का नव सन्देश देकर 'कर्ण' के सर्जन को सार्थकता प्रदान की है।

कर्ण के अन्तिम सर्ग में 'कर्ण पुनर्भव' शीर्षक से कवि ने नयी दृष्टि से कर्ण के चरित्र का मूल्यांकन किया है, वह उसकी पारम्परिक महाभारत की कथा को प्रकारण वक्रता से समन्वित करने की मौलिकता है।

अर्जुन द्वारा हत होकर जब कर्ण अंश अपने अंशी पिता सूर्य से मिलने को आगे बढ़ता है, तब सूर्य उसे अस्वीकार करते हैं। पिता अपने पुत्र के गुणों के साथ ही उसके आन्तरिक दोषों का उल्लेख करता है और उसे प्रायश्चित्त हेत पुनर्जन्म धारण करने की आज्ञा देता है :

ठहरो बेटा ! वहीं दूर से करो प्रणाम
न पद छूना।
इसके योग्य न तुम्हें पा रहा, देख तुम्हें
है दुख, दूना ।।
हर्ष पिता को तब होता है, जब पुत्र
पिता से बढ़ जाये।
रही वृद्धि की बात अलग ही, तुम
कुछ मूल गंवा आये ।।१।।
तेज-मलिनता बता रही है, अनुचित
कुछ कर आये हो।
प्रयश्चित्त शेष उसका है, मुक्त नहीं
हो पाये हो ।।
कितना कोई क्यों न बली हो, कर ले
मन दृढ़ कितना ही।
पथ अधर्म का अपनाने से, आती
तेज-मन्दता ही ।।२।।

— डॉ. दुर्गाशंकर मिश्र

* * *

*** दुख भंजन की शोध-यात्रा (प्रहसन)***
व्यंग्यकार : शंकर सुल्तानपुरी; प्रकाशक: सुलभ प्रकाशन, १७ अशोक मार्ग, लखनऊ।

बहुमुखी प्रतिभा के धनी शंकर सुल्तानपुरी ऐसे रचनाकार हैं जिन्होंने अपनी लेखनी से समाज के सभी वर्गों को प्रभावित किया है। जिनकी लेखनी ने सौ से अधिक प्रहसन का सृजन किया है। 'दुखभंजन की शोध-यात्रा' सुल्तानपुरीजी की प्रहसन रचना-यात्रा का पांचवां पड़ाव है।

यह संकलन खाता नम्बर दो, लोकल टीटी, पौने नौ की बस, एक अभिनन्दन समारोह, बैठे-ठाले के धन्धा, दो घण्टे का पापा, एक इतवार सौ बीमार, दूसरी मम्मी, ट्रान्सफर का चक्कर, दान की बछिया, दुखभंजन की शोध यात्रा और अधूरा नाटक प्रहसनों का स्वादिष्ट व्यंजन है। जिसके सृजन में सुल्तानपुरी कि दृष्टि मूलरूप से मध्यवर्ग और निम्न मध्यमवर्ग की समस्याओं, घटनाओं और

स्थितियों-परिस्थितियों पर केन्द्रित रही है। संकलन के हास्य-व्यंग्य प्रहसन मात्र मन बहलाऊं चुटकियां नहीं हैं, बल्कि इनमें अन्तर्निहित भाव-भंगिमा और व्यंग्य तेवर हमें गुदगुदाते, हंसाते हैं, साथ ही प्रेरणा देते हैं और कुछ सोचने के लिए मजबूर करते हैं। पुस्तक मात्र पठनीय ही नहीं संग्रहणीय भी है।

— राजेन्द्र परदेसी

* * *

*** एक योग-यात्री * लेखक : आचार्य अभयदेव; सम्पादक : डॉ. सुरेशचन्द्र त्यागी; आशिर प्रकाशन, रामजीवन नगर, सहारनपुर; मूल्य : सजिल्द ८० रुपये अजिल्द ६० रुपये।**

आचार्य अभयदेव की रचनाओं का यह संकलन चार खंडों में विभाजित है— एक योग-यात्री, पत्राचार, विशिष्ट संदर्भ और अन्तर्यात्रा। आचार्य श्री ने इस पुस्तक को आत्मकथा की संज्ञा प्रदान की है और इसके माध्यम से उन योग-जिज्ञासुओं को संबोधित किया है, जिनकी प्रवृत्ति बाह्य स्थूल जगत की अपेक्षा मनोजगत की लीलाओं, गतियों तथा आध्यात्मिक सत्य के प्रति लालायित रहती है। इस यात्रा का प्रथम खंड 'योग जिज्ञासा की कहानी' आचार्य अभयदेव के जन्म से लेकर गुरुकुल में प्रवेश तथा मन में उठनेवाली तात्विक जिज्ञासा के आरंभ से लेकर योग-संबंधी ज्ञान के तलाश में भटकनेवाले उस साधक की अन्तर्यात्रा का अनुभव कराता है, जिसमें अनेक पड़ाव हैं।

इस पुस्तक का दूसरा खंड 'पत्राचार' है, जिसमें आधुनिक युग के महान योगी महर्षि अरविन्द और पांडिचेरी आश्रम की साधिका श्री मां के साथ आचार्यजी के पत्रों का संकलन है।

पुस्तक का तीसरा खंड 'विशिष्ट संदर्भ' अपने आप में कई विशिष्टतायें समेटे हुए है। यहां आचार्यजी कहीं आर्य समाजी तार्किकता का परिचय देते हैं तो कहीं गुरुकुल के आचार्य के रूप में अपने विद्यार्थियों को गुरुकुल की जीवन-प्रणाली का रहस्य समझाते हैं।

पुस्तक का चतुर्थ-खंड आचार्यजी की 'अन्तर्यात्रा' के विषय में बड़े सिलसिलेवार ढंग से महत्वपूर्ण सूत्रों का संधान करता है। योग साधना की व्यक्तिगत अनुभूतियों से सम्पन्न यह खंड अपनी संक्षिप्तता में भी गरिमापूर्ण है।

* * *

*** सद्गुरु निगमानंद * प्रकाशक : दिल्ली सारस्वत संघ, सी-४४, ग्रीन-पार्क, नई दिल्ली-१६; मूल्य : ५० रुपये।**

प्रस्तुत पुस्तक देवमानव श्रीमत् स्वामी निगमानंद सरस्वती का जीवन चरितामृत है, जिन्होंने अपनी साधना के बल पर सामान्य मनुष्य के रूप में जन्म लेकर भी ब्रह्मत्व प्राप्त किया है। यह ब्रह्मत्व तंत्र, ज्ञान, योग और प्रेम की साधना के सोपानों पर चढ़कर

पाया गया है, जिसमें अनेक गुरुओं, ज्ञानियों और तांत्रिकों की मूल्यवान सहायता भी सम्मिलित है। पूरी पुस्तक तेईस अध्यायों में विभाजित है और गुरु निगमानंद के सम्पूर्ण जीवन को बड़ी रहस्यात्मक और अलौकिक घटनाओं के माध्यम से आलोकित किया गया है। इसके प्रथम तीन अध्यायों में क्रमशः सद्गुरु के बाल्यजीवन, सांसारिक जीवन और साधक जीवन की प्रतिष्ठा की गयी है और तदन्तर उनकी योग साधना, भाव-साधना और प्रेम-साधना का विस्तृत विवेचन श्रद्धापूर्ण दृष्टि से प्रस्तुत किया गया है। यह साधना सामान्य व्यक्ति के तर्क और बुद्धि को चुनौती देते हुए एक ऐसे भाव-लोक में ले जाती है जब अविकल श्रद्धा ही मार्गदर्शन कर सकती है। ऐसी अनेक लौकिक और अलौकिक घटनायें पुस्तक में उपलब्ध हैं, जिन्हें सामान्य अनुभव के धरातल पर स्वीकार करना कठिन प्रतीत होता है। लेकिन इन घटनाओं के पीछे निहित भक्त—हृदय का अगाध विश्वास रचना को पठनीयता प्रदान करता है।

यह पुस्तक विशेष प्रकार के श्रद्धालु भक्तों को ध्यान में रखकर तैयार की गयी है। आदि से अंत तक पुस्तक रोचक और भावपूर्ण शैली में पाठक के मन को बांध कर रखने में समर्थ है।

— डॉ. रामप्रसाद त्रिवेदी

* * *

*** 'जयशंकर प्रसाद के काव्य में बिंब-विधान' * लेखिका : डॉ. सरोज अग्रवाल; प्रकाशक : ऋषभचरण जैन एवम संतति, नयी दिल्ली, मूल्य : १०० रुपये।**

जयशंकर प्रसाद के काव्य में बिंब-विधान पर डॉ. सरोज अग्रवाल की यह पुस्तक प्रसादजी की काव्य छटाओं को रेखांकित करती है। जीवन के सौंदर्य को प्रसादजी ने जिस सफलता से छुआ, संवारा और अपने काव्य में प्रस्तुत किया वह भारतीय साहित्य की अमूल्य निधि है। इस काव्य की विविध छटाओं को इस पुस्तक के माध्यम से उजागर किया गया है।

पुस्तक मूलतः शोधग्रंथ है, इसलिए शोध की दृष्टि से विषय की आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए तुलनात्मक अध्ययन और सैद्धान्तिक पक्ष को अधिक संवारा गया है। लेकिन यह पूरी तरह ध्यान रखा गया है कि सैद्धान्तिक तकनीकी ढांचे में प्रसाद की रचना प्रक्रिया और उनके काव्य की सृजनात्मकता कहीं ओझल न हो जाये। प्रतीकों और बिंबों के अंतर्संबंधों की बड़ी सहजता के साथ स्पष्ट किया है। मिथक, भाषा, वर्ण, अलंकार और अनुबिंबों के काव्य पर प्रभाव को भी लेखिका ने विस्तार से स्पष्ट किया है। प्रसाद की काव्य पंक्तियों के सटीक चयन से अपनी बात को लेखिका ने साधार उद्धरण देकर सोदाहरण प्रस्तुत

किया है। कई-कई उदाहरण बिंबों को रेखांकित करते हैं। प्रसाद की ये पंक्तियां उदाहरणों में अपना विशिष्ट स्थान रखती हैं :

'बांधा था विधु को किसने,
इन काली जंजीरों से
मणिवाले फणियों का मुख क्यों
भरा हुआ हीरों से'

इसी प्रकार अनेकानेक उद्धरणों से इस पुस्तक में प्रसादजी के बिंब विधान को एक निश्चित विश्लेषण से परखने की सफल कोशिश की गयी है।

प्रसाद पर पर्याप्त सामग्री पहले से उपलब्ध होने के बावजूद डॉ. सरोज अग्रवाल ने प्रसादजी के बिंब-विधान को नये आयामों और विभिन्न कोणों से प्रस्तुत करने में सफलता हासिल की है।

* * *

*** 'औरत की पीठ पर' (यात्रा तथा अन्य वृत्तांत) * लेखक : बलराम; प्रकाशक : बिनमान प्रकाशन, ३०१४, बल्ली-मारान दिल्ली - ११० ००६; मूल्य : ६५ रुपये।**

यात्रा वृत्तान्त के क्रम में बलराम का यह संग्रह 'औरत की पीठ पर' एक महत्वपूर्ण कृति है। लेखक-पत्रकार जब यात्राओं पर निकलते हैं. तब उनकी कलम और कैमरे की आंखें केवल उनकी अपनी न होकर सबके लिए हो जाती हैं। ऐसी ही आंखों से देखे गये दृश्य 'औरत की पीठ पर' संग्रह में संकलित हैं। नेपाल देश पर बलराम ने जो विस्तृत टिप्पणी लिखी है, उसी से इस पुस्तक का नामकरण हुआ है : 'नेपाल : औरत की पीठ पर लदा देश !' अपनी यात्राओं के माध्यम से लेखक-पत्रकार किसी स्थान विशेष की स्थितियों, संस्कृति, समाज और रस्मोरिवाज को रेखांकित करता चलता है। अंग्रेजी में पत्रकारिता और यात्रा-वृतांतों पर लेखकों की ढेरों पुस्तकें हैं। हिन्दी और भारतीय भाषाओं में इस प्रकार का साहित्य अपेक्षाकृत कम रहा है। चूंकि लोकतंत्र की जिम्मेदारी उठाने के बाद पत्रकारिता एक महत्वपूर्ण और सशक्त माध्यम के रूप में विकसित हो चुकी है। एक छोटे से गांव से लेकर महानगर तक और देश-विदेश की महत्वपूर्ण हलचलों पर समय-समय पर की गयी टिप्पणियां सार्थक हो उठी हैं।

पत्रकार का कैमरा समारोही आंख नहीं होता। वह देश की आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनैतिक और राष्ट्रीय सवालों का केन्द्र बिन्दु होता है। साथ ही, विदेशों के जानकारीपूर्ण तथ्यों और महत्वपूर्ण घटनाओं का चश्मदीद गवाह भी होता है — पत्रकार ! बलराम ने 'औरत की पीठ पर' इन सारी तथ्यपरक और जानकारीपूर्ण घटनाओं का बखूबी बयान किया है। पत्रकारिता के क्षेत्र में यह एक महत्वपूर्ण पुस्तक है।

— डॉ. दामोदर खड़से

* * *

प्रेमतपस्वी : ईसुरी

□ अम्बिकाप्रसाद दिव्य

अध्याय - १७

यदि प्रमाण की आवश्यकता नहीं तो कोई भी दोष किसी के सिर मढ़ा जा सकता है। भोलाराम को मनसुखलाल के घर की बात भूली नहीं थी। कलुआ ने उनके सिर कितना बड़ा दोष मढ़ दिया था कि उस दिन की फागें ईसुरी की बनायी नहीं, उनकी बनायी थीं। दलीं की भी बनायी नहीं। इस आरोप से भोलारामजी तिलमिला गये थे। प्रायः सोचते अदालत में केस चला गया है। ऐसा न हो कि लड़के के साथ लोग उन्हें भी फंसाने की कोशिश करें। कलुआ का आरोप किसे न तर्क संगत लगेगा। जिसके भी पक्ष में गवाह अधिक हो गये वही बाजी मार ले जायेगा। पटवारी और कानूनगो के हाथ में ताकत है। ये जितने भी गवाह चाहेंगे उतने मिल जायेंगे। जीत उनकी निश्चय है। वे जिसे फंसाना चाहेंगे फंस जायेगा। दलियां भी फंस सकता है, ईसुरी भी फंस सकता है, और वे भी।

एक दिन वे चौपाल में बैठे ऐसा ही कुछ सोच रहे थे कि बड़ी बहू आयी और बोली, 'आज पूजा-पाठ कुछ नहीं करना, न भोजन? कितना समय हो गया। दिन ढलने को हुआ।'

भोलाराम अपनी समाधि से जागते हुए से बोले, 'पूजा-पाठ भी करना है और भोजन भी। एक बात सोच रहा था। जब मैं पूजा पर बैठा करता हूं, तभी ईसुरी घर आता है। खाना खाता है और चल देता है। वह मुझे अपनी शकल नहीं दिखाता। तुम उसे कुछ समझातीं नहीं। दलीं के खिलाफ मुकदमा दायर हो गया। यह मुकदमे-बाजी अच्छी नहीं। इसमें न जाने किसकी फजीहत हो। मेरे ऊपर भी कुछ आंच आ सकती है, और ईसुरी के ऊपर भी। मनसुखलाल का पड़रा भारी है। कानूनगो का उन्हें बल मिल गया है। ईसुरी रास्ते पर आ जाये तो अभी भी कुछ बिगड़ा नहीं। सब बात सम्हल सकती है। वह रास्ते पर तभी आयेगा जब वह शादी करा ले। यह सब उठती हुई जवानी का तूफान है। एक बार तो उससे कह कर देखो। मेरी ओर से कहो। यदि वह शादी को तैयार हो जाये तो मैं दलियां पर से मुकदमे को उठवा लूंगा। मुझे तो आशा है कि वह इस शर्त पर शादी को तैयार हो जायेगा, क्योंकि वह दलियां को बहुत चाहता है। वह दलियां का जेल जाना पसन्द न करेगा। किसी भी कीमत पर उसे

बचाना चाहेगा। कह कर देखो तो सही। एक उपाय है मुझे सूझ गया।'

बड़ी बहू कुछ खिसियानी-सी बोली, 'क्या तुम नहीं कह सकते हो उससे? क्या वह मेरे काबू में है। मेरी बात सुनता है क्या? शादी की बात करते ही कोसों भागता है।'

भोलाराम को बड़ी बहू का टका-सा जवाब अच्छा न लगा। कुछ बड़बड़ाते हुए से बोले, 'वह न तुम्हारे काबू में है न मेरे। पर वह तुम्हें मिल तो जाता है। अभी खाना खाने को आने ही वाला होगा। मैं पूजा पर बैठा नहीं कि वह आया। उसके कान में यह बात डाल तो दो। देखो वह क्या कहता है?'

'ठीक है, मैं उससे कह दूंगी! उठो तुम जाओ, नहाओ-धोओ और करो पूजा।'

भोलाराम एक झटके से उठे। घर के पीछे ही उनकी बगिया थी उसमें शिवजी का मन्दिर। बगिया में ही वे कुंए पर नहाते-धोते और शंकरजी की एक घंटे तक पूजा करते।

ईसुरी ताक में रहता कि कब वे पूजा को जावें और वह खाना खाने को पहुंचे। भोलाराम के चौपाल से जाते ही वह आ गया और बड़ी बहू से बोला, 'अम्मा! मैंने बापू की सब बातें सुन ली हैं। यदि वे दलीं पर से मुकदमा उठवा लें तो मैं शादी करा लूं।'

बड़ी बहू मुस्कराती हुई बोली, 'तू कहां छिपा रहा रे! बड़ा चालाक है।
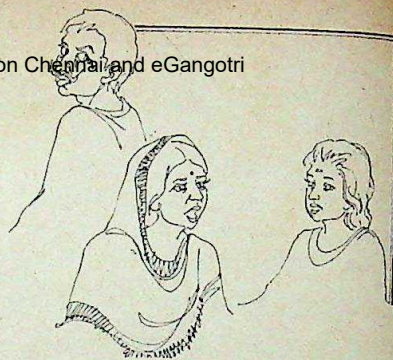
रास्ते पर आ जा। बाप से छिपा-छिपा फिरता है। बाप तेरा कोई दुश्मन है क्या! उस दलियां के पीछे बाप को दुश्मन बनाये है। उसे जाने नहीं देता भाड़ में। देख लेना— मतलब का यार निकलेगा। तू अपनी शादी करा। घर में बहू आने दे। गांव भर के लड़कों की शादी हो गयी। तू फिरता है आवारा-सा, पागल-सा, सिर उठाये, बाल बढ़ाये। न नहाने-धोने की फिकर, न खाने-पीने की। कौन जानता था कि तू इतना बरबाद निकलेगा। चल खाना खा।' ऐसा कहते हुए वह ईसुरी को चौके में ले गयी। प्रेम से उसे खाना परसा।

ईसुरी खाना खाता हुआ बोला, 'अम्मा! दलीं का मुकदमा पहले उठवा दे तब शादी कराऊंगा। दलीं के बिना मैं बारात में न जाऊंगा।'

'अच्छा मैं अभी तेरे बाप से समझ आती हूं। तू खाना खा।' ऐसा कहती हुई बड़ी बहू बगिया को गयी और थोड़ी ही देर में फिर आकर बोली, 'तेरे बापू कहते हैं मुकदमा उठवाना अपने हाथ में

तो है नहीं। मनसुखलाल और कानूनगो से मिन्नतें करनी होंगी। पर देवताओं को किसी तरह मनाऊंगा। 'शादी होने दे, फिर उसके लिए कोशिश करूंगा।'

ईसुरी लोटे से पानी पीता हुआ बोला, 'अच्छी बात है। मैं दलीं दादा से समझ लूंगा। वे कह देंगे तो मैं शादी को तैयार हो जाऊंगा।'

यह सुनते ही बड़ी बहू दांत किड़किड़ाती हुई बोली, 'क्या हो गया है रे तुझे? दलियां ने तुझे खरीद लिया है क्या? बिना उसकी सलाह के क्या खाना खाने को भी नहीं आता। जब वह कह देता है तब आता है। मैं तो तेरी शादी की तैयारी करूंगी। देखती हूं तू कैसे नहीं राजी होता। दलियां के पेट में नहीं रहा, मेरे पेट में रहा है। मैंने पाल-पोस कर बड़ा किया है। दलियां है कौन जो तेरे काम में टांग अड़ावे। तेरी जाति का, न पांति का। तेरा बाप न चाचा, तेरा भाई न भतीजा।'

'मेरा सब कोई,' ऐसा कहता हुआ ईसुरी खाना खाकर भाग गया। थोड़ी ही देर में भोलारामजी पूजा-पाठ करके खाना खाने को आ गये। बड़ी बहू उन्हें खाना परोसती हुई बोली, 'मनुहा तो आया है ईसुरी शादी को। कर चलो तुम उसकी तैयारी। मैं उसे काबू में किये रहूंगी। हां तुम दलियां के मुकदमें को उठवाने की कोशिश अवश्य करना। इसी बात पर वह राजी हुआ है। शादी ही जाय फिर दलीं के प्रति जो उसका प्रेम है वह अपने आप ही दूर हो जावेगा। यहां तक हो सकता है कि दलीं में और उसमें विरोध भी हो जावे। अभी दलीं ही से उसे सहारा मिलता है।'

भोलाराम आसनी पर पालथी मारकर बैठते हुए बोले, 'हां ईसुरी रास्ते पर आ जाय, फिर मुझे करना क्या है! दलीं न जाने भूत-प्रेत विद्या जानता है, न जाने वशीकरण मंत्र सिद्ध किये है? उसने ईसुरी पर कैसा जादू फेरा है! उस कुल्हाड़ी में ही कुछ जादू-टोना रहा है। उसने मंत्र से फूंककर चलाया रहा होगा। कुल्हाड़ी लगते ही ईसुरी को उसके खिलाफ होना चाहिये था, जबकि हुआ विपरीत। वह बिल्कुल उसका चेला बन गया। उसने ईसुरी को हलुआ भी तो खिलाया था। उस हलुआ में भी कुछ रहा होगा। फिर उसने जखम की मलहम पट्टी भी की थी। उसमें ही कोई ऐसी दवा भर दी होगी। परन्तु अब इस सारे दुखरौना रोने से क्या लाभ? सब मंत्रों के ऊपर कामिनी का मंत्र ही चलता है। वह बड़े-बड़े भूले-भटकों को अपने बस में कर लेती है। उसकी आंखों में ऐसा जादू होता है। तुम न देखो मुझे कैसा वश में किये हो।'

बहू रानी मुंह बनाती हुई बोली, 'तुम्हारे ऊपर तो इस उमर में भी भूत सवार रहता है। बैठे भोजन की थाली पर हो और बातें करते हो शंकरजी के

भजन की। धन्य है तुम्हें।

'यह अच्छा कहा तूने', भोलाराम बत्तीसी बिखराते हुए बोले, 'शंकरजी के भजन को ले डूबी। शंकरजी भी मन में क्या कहते होंगे।'

ऐसे मनोविनोद के साथ भोलाराम ने भोजन किया। चौके से उठ कर बाहर मुंह हाथ धोया और बगल के कमरे में एक चारपाई पर जाकर बैठ गये। मन में कुछ शान्ति थी। सोच रहे थे—मनसुखलाल मुकदमा वापस लेने को तैयार तो हो जायेंगे। मुकदमें में रक्खा ही क्या है। दलीं को सजा भी हो गयी तो उन्हें क्या मिल जावेगा! चींटा मारा पानी कढ़ा। दलीं बेचारा अपना लिये-दिये क्या है, फागे गववाई थीं तो क्या हो गया! विवाह-शादी में ऐसी कितनी बेवकूफियां हो जाती हैं। ऐसा सोचते-सोचते उन्हें कुछ नींद आ गयी। खरारी खाट पर ही लेट गये और खुर्राटे भरने लगे।

थोड़ी देर में बुरी तरह से बर्राने भी लगे। बड़ी बहू दौड़ी आयी और उन्हें हिलाकर जगाती हुई बोली, 'क्या सपना देख रहे थे।'

'हां भयंकर सपना,' भोलाराम आंखें मलते हुए बोले, 'देख रहा था कि एक शेर घर में घुस आया। मैं चादर ओढ़ कर लेट रहा। शेर मुझे लांघ कर दूसरी ओर बैठ रहा। मैंने शीघ्रता से उठकर वह चादर शेर के ऊपर डाल दी। शेर उस चादर को लेकर आ गया। मैं उसके पीछे दौड़ने ही वाला था कि तुमने जगा दिया। पता नहीं इस सपने का क्या अभिप्राय है। देखो मेरा शरीर अब भी कांप रहा है।'

भोलाराम पूरी बात भी न कर पाये थे कि किसी ने बाहर द्वार पर आवाज लगायी। वही कलुआ चपरासी था। लाठी लिये खड़ा था। उसे देखते ही भोलाराम कुछ कांप से गये। दांत पीसते हुए बोले, 'जा। जा। अपने घर जा। मैं तुझसे बात न करूंगा। मुझे फुरसत नहीं।'

'बात न कीजिये।' कलुआ चौपाल में बैठता हुआ बोला, 'मेरी भैंस आपके घर में बंधी है। उसे मेरे हवाले कीजिये। दलीं आपके घर बांध गया है। उसी तीन सौ रुपया के बदले में। आपके लड़के ने भी कहा है। फिर मेरा और आपका कोई झगड़ा नहीं। मैं भैंस लेकर जाऊंगा। यह लो बैठा हूं, पंडितजी।'

भोलाराम बड़ी उलझन में पड़े। किड़मिड़ाते हुए बोले, 'तू पागल तो नहीं हो गया? तुझे मेरा घर देखना है तो चल दिखा दूं।'

'घर नहीं देखना, पंडितजी! भैंस देखना है। आप न देंगे तो समझ लीजिये आपकी वह मुर्रा भैंस न बचेगी। सोच लीजिये, आपकी आठ सौ की भैंस जायेगी। सीधी उंगलियों घी नहीं निकलता।'

'हाय राम!' भोलाराम कुछ पगलाये से बोले, 'भाई तू मुझसे तीन सौ रुपया ले जा। मैं इतना ही कर सकता हूं और किसी तरह तो मुझे विश्वास आ ही नहीं सकता। तेरी भैंस मिल जाय तो मेरा रुपया दे जाना, न मिले तो न देना। बस! इससे अधिक और मैं क्या कर सकता हूं।'

'लाइये, पंडितजी। रुपया ही दीजिये। मैं रुपया जमा कर लूंगा तो आपको भी मेरी भैंस ढुड़वाने की पड़ेगी। फिर से आप अपना पोथी-पत्रा देखेंगे। सगुनौती उठायेंगे। बीस उपाय करेंगे।'

भोलाराम ने सोचा था कि वह रुपया लेने को तैयार न होगा। परन्तु उसकी नियत देखकर उन्हें कुछ भय हुआ। सोचने लगे तीन सौ रुपया पहले गया और तीन सौ यह भी चला जावेगा। गया रुपया फिर मिलने का नहीं। दुष्ट लोग देवी-देवता को भी नहीं मानते, पंडितों और पुजारियों को क्या मानेंगे। उसे फिलहाल टालने की गरज से बोले, 'भाई कल्लू! अभी तो मेरे पास रुपया नहीं। कुछ दिन और ठहर जाओ। मैं रुपया का प्रबंध कर लूं सो तुम्हें दे दूंगा। तब तक अपनी भैंस और ढूंढ़ लो।'

'अच्छी बात है,' कलुआ उठता हुआ बोला, 'अब तो मुझे कुंजी मिल गयी है। मेरी भैंस नहीं मिलती तो आपकी भैस की खैरियत नहीं। आप ही ने बताया था कि तेरी भैंस दलीं के कब्जे में है। आप पंडित हैं। आपकी बात झूठ नहीं निकल सकती। दलीं ने उसे आपको ही दे दिया है। दलीं की बात भी झूठ नहीं निकल सकती।' ऐसा कहता हुआ कलुआ चला गया।

उसके जाते ही बड़ी बहू बोली, 'यह क्या जबान हार दी आपने? अपनी भैंस को वह ढूंढ़े न। यह अच्छा न्याय है, जो सगनौती बताये वही चोरी का माल देवे। गंवार लोगों को सगनौती न बताया करो।'

'अरे इस गंवार से तो सुलझूं,' भोलाराम रोनी-सी सूरत करके बोले, 'कितना बदमाश है आदमी? कैसी चाल सोची है उसने। उसका मतलब है कि मैं इसकी भैंस का पता लगवाऊंगा। मैंने दलीं को उलझाया। दलीं ने मुझे। ईसुरी उसके हाथ में है न। शतरंज की चाल है। छोटे आदमी भी बड़ों-बड़ों को मात दे देते हैं।'

'अब अपनी भैंस न ढीलना,' बड़ी बहू ने कहा।

'खैर देखा जायेगा। कुछ सोचूंगा। आजकल ग्रह-दशा कुछ विपरीत चल रही है। दिन के भी बुरे स्वप्न दिखते हैं। उस स्वप्न का यही संकेत था।' ऐसा कहते हुए भोलाराम एक नयी उलझन लेकर भीतर चले गये।

* * *

अध्याय - १८

आशा और निराशा की रस्साकसी में मनुष्य आशा के ही पक्ष में रहता है, परन्तु निराशा एकाकी होने पर भी उसे प्रायः परास्त करती है। रजऊ के मन में रात न दिन यही रस्साकसी चलती रहती थी। कानूनगो ने उसे आश्वासन दिया था कि वे स्वयं उसे भेज आवेंगे। परन्तु वह शुभ घड़ी आती हुई न दिख रही थी। आशा ही आशा में समय बीत रहा था। बब्बू के प्रति उसे कुछ आकर्षण होता, परन्तु भय भी होता कि वह किसी दिन कोई और नयी फागें लेकर न आ जाये। जिस दिन उसे कोई व्यंग्य सुनने को न मिलता, उस दिन अपने को वह धन्य भाग्य समझती। दिन-प्रतिदिन फागें आतीं कहां से। कुछ चैन से कट ही जाते।

परन्तु बब्बू ऐसी फागों की टोह में रहता। एक दिन उसे वे दो फागें भी मिल गयीं, जो ईसुरी ने दलीं की चौपाल में नवीन भावावेश में गायी थीं। फिर रजऊ के सामने बब्बू मुस्कराता हुआ पहुंचा। उन फागों से उसका कुतूहल फिर बढ़ा। उन्हें लेकर जब वह गया वही रात का समय था। वही दीपक उसके कक्ष में फिर टिमटिमा रहा था। रजऊ एकाकी पलंग पर लेटी हुई अर्द्धनिद्रित सी कुछ मधुर स्वप्न-सा देख रही थी। सहसा ही बब्बू आया और बोला, 'रजऊ! उठ, उठ! तेरे प्रेमी ने तेरे लिए नयीं सौगात भेजी है। फाग की सौगात। तेरे मुंह के लिए गुलाल। तेरे सीने के लिए कुमकुमा, तेरे शरीर के लिए साड़ी, तेरे नाश्ते के लिए गुजियां, मीठी-मीठी खोआ की। रस से भरी, मिठास से भरी, कपूर की सुगन्ध से सुगंधित। गोंठ-गोंठ कर बनाई हुई। देख तो सही।'

रजऊ ने चिमाई साधी और लेटी रही। बब्बू ने उसके बगलों में उंगलियां चलायीं और बोला, 'बनती है। जैसे सो गयी हो। उठ अभी संध्या से सो रही।' ऐसा कहते हुए बब्बू ने उसे पेट में गुदगुदा दिया। रजऊ कुछ मुस्कराती कुछ क्रोध दिखाती हुई, उठकर बैठ गयी और बोली, 'फिर बना लाये कुछ अनाप-सनाप। आ गये मुझे तंग करने को।'

'अरी सुन तो, फिर कहना किसकी बनायी है,' ऐसा कहते हुए बब्बू ने फाग सुनायी और फिर बोला – देख तो यह मेरी बनायी है? मैं बना सकता हूं भला ऐसी मधुर फाग। मिसरी-सी मधुर। शहद-सी मधुर। 'सूझे इन आंखन अलवेली-जग में रजऊ अकेली,' देख तो बेचारे को तेरे अतिरिक्त संसार में और कोई दिखता ही नहीं। इसी को कहते हैं मजनूई प्रेम। बेचारा मेरी ईर्ष्या कर रहा है। 'भरके मूठ गुलाल धन्य वे – उनके ऊपर मेली।' मैं धन्य हूं मैंने तेरे

गोरे-गोरे गालों पर गुलाल मली। ऐसा कहते हुए बब्बू ने उसके दोनों गाल मल दिये। रजऊ आंतरिक मुस्कराहट को किस अंचल से छिपाती। मुस्कराहट खिलखिला उठी। और सुन और सुन, बब्बू फिर बोला, 'भागयवान जिनने पिचकारी, रजऊ के ऊपर ठेली।' मैंने तो अपने इस भाग्य की कोई कीमत समझी ही नहीं।' ऐसा कहते हुए उसने रजऊ को आलिंगन में भर लिया। फिर बोला— 'मैं तो उस ईसुरी का अहसान मानता हूं जो मुझे तेरी कीमत करना सिखा रहा है। लगता है तेरे साथ दिन-प्रति-दिन फाग खेलूं। तेरे गालों पर गुलाल। तेरे सीने पर गुलाल। तेरे शरीर पर रंग चढ़ाता ही रहूं। गुलाल की कुमकुमा। रंग की पिचकारी! ससुराल की शोभा। कितना सुन्दर महीना! मतवाला, मस्ती से छलकता, स्वयं इत्र फरोश।'

'और सुन!' ऐसा कहते हुए बब्बू ने दूसरी फाग भी सुना दी और फिर बोला, ''हम पें इक मुख जात न बरनी— रजऊ तुम्हारी करनी,'' सही बात समझ, रजऊ! मैं तेरी करनी को एक मुंह से व्यक्त नहीं कर सकता। शेषनाग से हजार मुख चाहिये, जहर उगलने के लिए नहीं, अमृत उगलने के लिए। 'जंह ठाड़ी हो जातीं जाकें— दिपन लगत वा घरनी,' देख, रजऊ, सारा कमरा तेरे प्रकाश से जगमगा रहा है। तेरे सामने
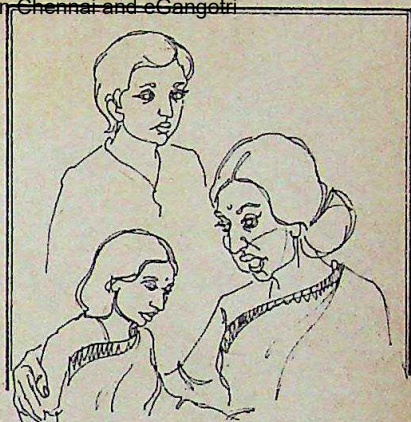
दीपक अपनी कालख में अपना मुख छिपा रहा है। अरी! तीन ताप की हरनी, दुनिया की बैतरनी! तू कैसी तुझे पाकर मैं धन्य हूं, रजऊ! ईसुरी बेचारा मेरी ईर्ष्या में ही जल कर राख हुआ जा रहा है। जा रजऊ उस बेचारे पर भी दया कर। वह भी बैतरनी से पार हो जावे। वह बचपन का तेरे साथ का खिलाड़ी है। उसे छोड़कर तू कैसे आ गयी?'

रजऊ की एक अजीब परिस्थिति थी। वह न समझ पा रही थी कि बब्बू उसे प्रेम करता है या नहीं। वह उसके अंग-अंग मसलता मसोसता, उसके प्रेम को जगाता और फिर व्यंग वाण छोड़कर उसके उफनाते हुए हृदय को आहत कर देता। उसे यह मनोदशा सहन न होती थी। वह अदम्य उद्वेलना से बोली, 'भेज तो दो मुझे एक बार। मैं पता तो लगा आऊं कि यह फागें मेरे ऊपर कौन खेल

रहा है, तुम या ईसुरी? ईसुरी तुमसे जलता है या तुम ईसुरी से?'

रजऊ बड़ी-बड़ी आंखों में आंसू भरे हुए बोली, 'जिसके हाथ में शरीर, उसके हाथ में मन। मन को कोई देखता तो नहीं। रहे जहां भी चाहे। शरीर तो न पिंजड़े से बाहर निकल कर उसके साथ दौड़ पायेगा। बन्द किये रहो न इस पिंजड़े को। देखो उसकी खिड़कियां सब ठीक हैं न।' ऐसा कहती हुई रजऊ फिर सिसक-सिसक कर रोने लगी।

उसे रोता सुनकर देवकी आयी और बोली, 'इस लड़के के मारे बड़ी नाक में दम है। बहू के पीछे ही पड़ा रहता है। उसे रुलाता ही रहता है। उनसे भी कहा कि कुछ दिन को बहू को माइके भेज दो तो नहीं भेजते। बेचारी के यहीं प्राण लिये लेते है। सूखकर आधी नहीं रह गयी। शादी की आयी है। जब वह चली जावेगी तब यह उसकी कीमत समझेगा, उसके लिए रोयेगा।'

बब्बू कमरे से बाहर आकर बोला, अम्मा! तुम मुझे ही दोष देती हो। देखो तो वह ईसुरी इसके लिए कैसा पागल हो रहा है। कैसी-कैसी फागें बना-बना कर भेज रहा है। इससे क्या बदनामी नहीं होती। यह उसे प्रेम न भी करती होगी तो ये फागें सुन-सुनकर करने लगेगी। सुनो अभी जो फागें आयी हैं।' ऐसा कहते हुए उसने दोनों फागें देवकी को सुना दी। उसी समय कानूनगो भी आ गये। बोले 'क्या है?'

बबुआ कुछ शर्माया हुआ सा बोला, 'कुछ नहीं ये फागें हैं फिर से आयीं। कितनी अच्छी फागें हैं। सारा गांव तारीफ करता है। ईसुरी कितना अच्छा लिखता है। वह रजऊ के प्रेम में सर्वांग डूबा है। भला अपनी ऐसी बुराई सुनी जाती है। कान नहीं दिये जाते। लोग हमें चिढ़ाने के लिए नगड़िया बजा-बजा कर फागें गाते हैं। जब चाहे साथ चलिये, सुनवा लाऊं।'

'तो बहू क्या करे?' देवकी उत्तेजित सी होकर बोली, 'कोई मेरे ऊपर भी फागें बनाने लगे तो मैं क्या कर लूंगी? तेरे ऊपर भी बनाने लगे तो तू क्या कर लेगा? छेड़छाड़ करने से लोग और सिर चढ़ेंगे। दूसरों को चिढ़ाने में लोगों को मजा आता है। नगड़िया नहीं वे ढोल बजा-बजा कर फागें गावें, गाने दो।'

'तुम तो घर में घुसी रहती हो,' बब्बू खिसियाया-सा बोला, 'मुझे बाहर निकलना पड़ता है। मुझसे तो ये फागें नहीं सुनी जातीं। इनमें किसी सर्प के मुख का जहर भरा है। ये डसती हैं। नशा आने लगता है। बेचैनी होती है। केवल प्राण निकलने को रह जाते हैं। लोग ये फागें मुझे लिख-लिखकर दे जाते हैं। सुनिये न।' ऐसा कहते हुए बब्बू ने दोनों फागें कानूनगो को सुना दीं।

कानूनगो भी क्रोध से उद्वेलित हो

उठे। एक चारपाई से टिककर खड़े होते हुए बोले, 'यह सब उसी दलियां की शरारत है। उसकी नालिश तो हो गयी है, परन्तु मुकदमे में बहुत देर लगेगी। तब तक वह और नयी-नयी फागें बनाकर भेजेगा। हमें तो धैर्य ही से काम लेना होगा।'

'तब तक क्या बहू के विदा न करोगे?' देवकी ने पूछा।

यह सुनते ही रजऊ जोर-जोर से रो उठी। उसके धैर्य का बांध-सा टूट गया। जैसे कैदी की सजा और बढ़ जावे। उसे लगा।

उसे रोता देख कानूनगो का हृदय पिघल आया। बोले— 'कह दो बहू से करे तैयारी। मैं कल ही भेज आऊं।'

'हां जाओ। समधिन के हाथ की परसी रसोई खा आओ। घूंघट में से ही वह रसगुल्ले, इमरतीं, जलेबी परस-परसकर खिलायेगी। उसकी आंखों में हलवाई की दुकान है।'

कानूनगो देवकी के आक्षेप को समझ गये। सहमे से बोले— 'अपने लड़के को ही भेज दो न! मेरे रसगुल्ले और इमरती तुम्हें अखरती हैं।'

'मैं न जाऊंगा,' बब्बू बोला, 'मुझे वहां वह ईसुरी या दलीं मिल गया तो हाथापायी हुए बिना न रहेगी। साले बदमाश। गुंडे। बेखौफ! दूसरों की औरतों पर कीचड़। फाग की आग! जिसको सुनते धधक उठे कलेजा। आंखों से बह निकले खून। जाइये आप। ले जाइये घर से यह पाप। मुस्कराता पाप। हंसता पाप। आंसू बहाता पाप। दे आइये उसे जिसकी है यह जायदाद! करें उसके ही घर को आबाद। मुझे न चाहिये ऐसा सोना जिससे नाक कटे।'

बब्बू की बात सुनते ही देवकी भौंचक-सी उसकी ओर देखने लगी। फिर एक आंख मींचकर एक आंख से देखती हुई बोली, 'क्या हो गया है रे तुझे। आंखों पर नहीं, अक्कल पर चश्मा चढ़ाये है क्या! इनकी है सारी गलती। अपनी आंखों को कीचड़ में डुबो कर दूसरों के ऊपर छिड़क दिया। अपना ही लड़का मिला कीचड़ी फाग का।'

देवकी की बात से कानूनगो का पारा चढ़ गया। गाल फुलाते हुए बोले, 'तुम्हीं हो सारे पाप की मूल। अपनी नाड़ी पर हाथ रखकर देखो। कलेजा टटोलो। धड़कनें गिनो। तुम्हीं ने न शादी के लिए मजबूर किया था? मेरा रास्ता रोकने को।'

'क्या बुरा किया था!' देवकी फुसकारती हुई बोली, 'पर चलो। अब क्या रक्खा है उन गयी-गुजरी बातों में। उन्हें ढका-मुदा रहने दो। नंगा नाच नहीं नाचना। बहू लड़के के सामने खजुरहाई रूप नहीं दिखाना। जाओ भेज आओ बहू को कल। मुंह में घुसा मच्छर

गुटकते ही बनता है।'

'मैंने तो पहले ही कहा था,' कानूनगो कुछ शान्त पड़ते हुए बोले, 'पर तुम्हीं बब्बू को भेजना चाहती थीं। बब्बू ठीक कहता है उसका जाना ठीक नहीं। जब तक यह फागों का अभियान चल रहा है उसे घर ही में रहने की जरूरत है।' ऐसा कहते हुए कानूनगो अपने कमरे को चले गये। जैसे जाने की बात तै हो गयी हो।

अब प्रश्न उठा रजऊ के सामने — जाय या न जाय। ऐसा न हो कि ये भेजकर फिर न बुलायें। सदैव को छोड़ दें। घूंघट हटाती हुई बोली— 'मुझे नहीं जाना। मैं तो अब इस घर की जायदाद हूं उस घर की नहीं। इसी घर को आबाद करूंगी। यहीं जिऊंगी, मरूंगी।'

'नहीं बहू।' देवकी बोली, 'हो आ कुछ दिन को। मैं जल्दी ही तुझे बुला लूंगी। तू मेरे हिस्से में है। न बब्बू के न कानूनगो के। बब्बू से न पटेगी तो मैं तुझे लेकर अलग रहने लगूंगी। मेरी भी अब कानूनगो से नहीं पटती। चल उठ मुंह-हाथ धो, खाना खा।'

ऐसा कहती हुई देवकी उसे भीतर चौके में ले गयी।

* * *

अध्याय - १९

कहते हैं न आवश्यकता आविष्कार की जननी है। ईसुरी को दलीं का केस लड़ने के लिए रुपये की आवश्यकता थी। वह जानता था कि शादी में उसे रुपया मिलेगा। रुपया न मिलेगा तो दुलहिन का जेवर तो उसके अधिकार में रहेगा ही। जब चाहेगा एक-एक दो-दो पेड़ में पत्थर से मार-मार कर आम जैसे तोड़ लेगा, या पेड़ को हिला-डुला कर एक साथ ही सारे समेट लेगा। भोलाराम ने यह भी वचन दिया था कि शादी करा लेगा तो दलीं के केस को अदालत से उठवा लिया जायेगा। ईसुरी के सामने दोनों प्रलोभन अपना-अपना महत्व रखते थे। यदि केस उठा लिया गया तो बन गया। उसे रुपये की आवश्यकता ही न रहेगी। केस न उठाया गया तो उसके हाथ में रुपया तो आ ही जावेगा। दलीं ने भी उसे शादी करा लेने की अनुमति दे दी थी। अतः उसने शादी करा ली। बड़ी धूमधाम से शादी हुई। भोलाराम को मिला भी खूब। रामनाथ बड़े आदमी थे। उनकी पहली लड़की थी। उन्होंने जी खोलकर दिया। एक पूरी गाड़ी भर दहेज उनके घर आया।

बहू भी पूरी लक्ष्मी थी और लक्ष्मी ही उसका नाम था। पर कुछ सांवली थी, और मुंह में चेचक के कुछ दाग भी। तब भी उसके मुंह में छवि थी। एक मधुर-सी सहज मुस्कान जो देखते ही आंखों को अपनी ओर खींच लेती थी। भोलाराम प्रसन्न थे। बड़ी बहू भी प्रसन्न थी। परन्तु ईसुरी की नज़र न लक्ष्मी के मुख पर जाती
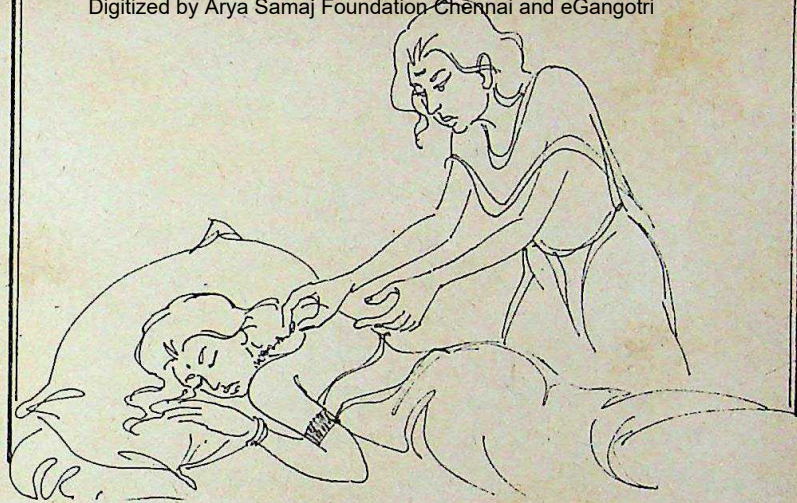
न उसकी मुस्कान को देखता। देखती उसके कंठ में पड़े हुए हारों को, हाथों में पड़ी हुई सोने की चूड़ियों को, कमर में पड़ी हुई पेटी को। वह देखता था दाव को कि किसी बड़ी-सी चीज को छिपाकर रख ले। मौका वक्त पर वह काम आयेगी।

एक दिन वह जिस अवसर की ताक में था वह सहज ही उसे प्राप्त हो गया। वह रात के समय सोने के लिए उसके कमरे में आया। देखा, कमरे में दीपक टिमटिमा रहा है। वह अपने पलंग पर पड़ी गहरी निद्रा में सो रही है। रोज सोते समय कंठ का हार वह उतार कर अपनी पेटी में रख दिया करती थी, पर आज वह उसे पहने पड़ी थी। जाने कैसे उसे रखने को भूल गयी थी। ईसुरी ने तत्काल अपना काम किया। कांपती हुई उंगलियों से हार को उसके कंठ से खोला और उसे छिपा कर अपनी धोती के एक छोर में बांध लिया। हार वही था जो बड़ी बहू ने उसके लिए बनवाया था। लड़के को घर में आयी हुई नयी दुलहिन के साथ ही लेटना पड़ता है। अतः ईसुरी भी टिमटिमाते दीपक को भी सुला कर चुपचाप लक्ष्मी के साथ लेट रहा। रात में नींद कम आयी। जैसे चोरी ने उसकी नींद को ही चुरा लिया हो। उसका मन रह-रहकर उसकी आलोचना-सा कर उठता। यह काम कहां तक उचित है। यद्यपि चीज उसी की है, तब भी चोरी से उसे लेना, यह उसे जंचता नहीं। उसकी अन्तरात्मा की आवाज आप ही दब जाती। दलीं को वह वचन दे चुका था कि केस लड़ने के लिए रुपये का प्रबन्ध उसका। मानसिक खिचाव ने उसे सारी रात अस्तव्यस्त रक्खा, जैसे-तैसे रात कटी। कौओं की

कांव-कांव ने प्रभात के आने की सूचना दी। उसने बिस्तर छोड़ा और चुपचाप घर से बाहर निकल गया।

लक्ष्मी की अब भी नींद न खुली थी। नयी उम्र में नींद भी नयी उमंग के साथ ही आती है, समाधि जैसी। जब कोई जगावे तब वह खुले। सूर्य ने खिड़की में से झांकना शुरू किया नहीं कि बड़ी बहू उसके कमरे में पहुंची। उसे हिलाती हुई बोली, 'बहू। बहू। उठ अभी तक सो रही है। देख तो कितना दिन चढ़ आया। तुझे ऐसी गहरी नींद आती है!'

लक्ष्मी हड़बड़ाई-सी उठकर खड़ी हो गयी और आंखें मलने लगी। कुछ ही देर में निद्रा के प्रभाव से मुक्त होकर वह पूर्ण सचेष्ट हुई और नित्य के क्रिया-कर्म को गयी। सारे दिन उसे अपने कंठ के हार का कोई ध्यान न आया। संध्या समय जब अपनी वेशभूषा फिर सम्हालने का समय आया तब सहसा उसे हार का ध्यान आया। हार कंठ में नहीं था। उसने अपना बाक्स खोला। एक-एक आइटम अच्छी तरह देख डाला। हार गायब था। कल बाक्स में रक्खा था, या रक्खा ही नहीं था। ध्यान आया रक्खा ही नहीं था। उसे पहने ही सो गयी थी। उसे कोई कंठ से उतार ले गया। आहत और घबराई हुई-सी वह बड़ी बहू के पास दौड़ी और बोली, 'अम्मा! हार नहीं मिल रहा, कल उसे पहने ही सो रही थी। ऐसा लगता है जैसे कोई उसे मेरे कंठ से ही उतार ले गया हो। रात को कोई चोर घुसा हो।'

'ऐं! हार नहीं मिलता?' बड़ी बहू भी घबरायी हुई-सी बोली, 'गले से कौन उतार ले जावेगा? ऐसा चोर कहां से आ गया? कहीं रख तो नहीं दिया? सब जगह अच्छी तरह देख तो ले।'

लक्ष्मी खोई-खोई सी होकर बोली, 'एक-एक चीज देख ली है, अम्मा! सारा बाक्स खाली करके देख लिया है। हार तो कोई ले गया!'

'ले गया होगा तो तेरा दूल्हा,' बड़ी बहू कुछ खिसियायी—सी बोली, 'बाहर का कोई चोर नहीं आ गया। बाहर का कोई चोर घुसता, तो और भी कोई चीज ले जाता। तेरा बाक्स ही उठा ले जाता। गले का हार न उतारता। देहातों में ऐसा नहीं होता। यह सब ईसुरी की करतूत है।'

ऐसा कहती हुई बड़ी बहू भोलाराम के पास दौड़ी। उनसे कहा। उन पर जैसे बिना मेघों के बिजली गिर पड़ी हो। निश्चेष्ट से रह गये। फिर कुछ देर में संज्ञा प्राप्त करते हुए बोले, 'बस! बस! समझ गया। ईसुरी ने इसीलिए शादी करायी है। बहू का एक-एक करके गहना उड़ायेगा। बड़े गुरु के कहने में लगा है न? उसे केस लड़ने के लिए रुपये की आवश्यकता है। बिगड़े हुए लड़के की शादी कर देना, और भी उसे बिगाड़ना है। अब तो वह खजाना पा

गया। कारूं का खजाना कुबेर का खजाना। बहू का गला मसकेगा और जो चीज चाहेगा उतार ले जावेगा। हाय राम! मुझे तो लगता है, ईश्वर मौत दें। इस माया-मोह से मुक्ति मिले। कौन किसका लड़का, कौन किसकी बहू? इस लड़के ने जीना मुश्किल कर दिया। अब क्या हो तुम्हीं बतलाओ। तुम्हीं पूछो उस हरामजादे से। मैंने तो हार मानी।'

बड़ी बहू पागल जैसी यहां से वहां दौड़ती रही। घर का एक-एक कोना देखा। कूड़ा छाना। भंडेरी देखी, घिनौची देखी, पर कहीं भी हार न मिला। संध्या हुई। ईसुरी घर आया। भूखी बाघिन-सी उसकी ओर झपटी। उसका हाथ पकड़ती हुई बोली, 'ईसुरी! वह हार दे जा। हम सबकी आंखों में धूल मत झोंक। बहू के गले से हार उतार ले गया। शादी में आयी नयी-नयी दुलहिन को परेशान करने लगा। हार न लायेगा तो मैं घर में न आने दूंगी।'

'कहां का हार!' ईसुरी अज्ञान-सा बनता हुआ बोला, 'अब मुझे चोरी लगाओ। चोर बनाओ। मुझे गिरफ्तार करा दो।'

ईसुरी की आवाज सुनते ही भोलाराम आ गये। उन्होंने ईसुरी का हाथ पकड़ लिया। मृगजाल में फंस गया। हाथ में हथकड़ी-सी पड़ गयी। पीठ पर मुक्का पर मुक्का कसते हुए बोले, 'हरामजादे। वह हार ला नहीं तो तेरे और अपने प्राण एक कर दूंगा।' ईसुरी अवाक् सा रह गया। आंखों से आंसू बहने लगे।

उसे मूर्च्छित-सा होते देखकर लक्ष्मी ही बोली, 'अम्मा! रोक दो बापू को कि न मारें। मैं माइके से दूसरा हार बनवा लाऊंगी। इससे बड़ा।'

ईसुरी संज्ञाशून्य-सा नीचे गिर पड़ा। लक्ष्मी ने गुहार मारी। 'हाय रे! क्या हो गया उन्हें! बुलाओ अब किसी डाक्टर-वैद्य को। ले तो लिए प्राण! मैं न जानती थी कि ऐसे घर में हूं आयी जिसमें कसाई बसते हैं। जिन्हें अपने ही लड़के पर दया-पीर नहीं। न कुछ तोले दो तोले का हार। लड़के के प्राणों से ज्यादा कीमती हो गया!'

भोलाराम को लक्ष्मी की बात अच्छी न लगी। भभकते हुए बोले, 'तूने ही लड़के को पिटवाया है! लक्ष्मी नहीं, तू कुलक्ष्मी है। शादी को आयी बहू क्या इस प्रकार रहती है? आते ही लड़के को चोरी लगा दी। उसे पिटवा दिया। क्यों हार का शोर मचाया। चुप रह जाती न। बनवा लाती माइके से दूसरा।'

'गुस्सा में आकर तुम मार भी तो बेजा देते हो,' बड़ी बहू ने कहा, 'फिर नहीं देखते, ठांव-कुठांव कहां लगे। मैं ईसुरी से पूछ रही थी तो तुम क्यों बड़े तीस मार बनकर आ गये। लड़के के लिए शेर। उस दलीं के सामने स्यार। फिर किसी की सुनते नहीं। हाथ उठाया सो उठाया। परशुरामी रूप दिखा चलते हो। अब

देखो उसे।'

'हाय राम!' लक्ष्मी जोर-जोर से रोने लगी। भोलेराम भी कुछ पछताते हुए से बोले, 'बना हुआ है। हमें बुद्धू बनाता है। जाल से छूटा नहीं कि हिरण जैसा भागेगा।'

लक्ष्मी का रोना सुनकर पड़ोस की कुछ औरतें आ गयीं। क्या हुआ! क्या हुआ! ईसुरी क्यों जमीन में पड़ा है। क्या किसी कीड़े-मकौड़े ने काट लिया। कितने ही प्रश्न बरस पड़े।

यह किसी ने कोई उत्तर न दिया। औरतें मन-मन का अर्थ लगाती हुई चली गयीं। बड़ी बहू फिर क्रोध से बड़बड़ाती हुई बोली, 'दूसरों को पंचांग देख-देखकर सगुन बताते हैं। अपने लिए नहीं पंचांग देखते, न सगुन सोचते हैं कि आज क्या होगा। इकबारगी दिमाग पर भूत सवार हो जाते हैं। अब दौड़ो न किसी वैद के घर। बहुत देर तो हो गयी ईसुरी को पड़े। पहली बार पीटा था महीनों बीमार रहा था। कोमल लड़का, उसे मुट्ठी बांध कर घूंसे मारते हैं! बड़े बहादुर बन जाते हैं।'

भोलाराम अपनी गलती पर पछताते हुए से बाहर जाकर चौपाल में बैठ गये। उन्हें ईसुरी पर नहीं दलियां पर क्रोध था। बहुत सोचते कि सारा झगड़ा कैसे तै होवे, कैसे ईसुरी रास्ते पर आवे? पर कुछ समझ में न आता। उन्होंने सोचा था कि ईसुरी शादी होते ही दलीं का साथ छोड़ देगा, उसकी आंखें खुलेंगी और अपनी घर गृहस्थी देखेगा, परन्तु सब उलटा ही हुआ।

यहां भोलाराम के बाहर जाते ही लक्ष्मी बोली, 'अम्मा! मुझे माइके भेज दो। मैं यहां न रहूंगी। अपना यह सारा जेवर ले लो। मैं इसे न पहनूंगी। यह जेवर दूसरे की हत्या करा दे तो किस काम का! अब वे बेहोश पड़े हैं उनका किसी को ध्यान नहीं। बापू जाकर बाहर बैठ गये।' ऐसा कहती हुई लक्ष्मी उठी, एक लोटे में पानी भर ले आयी और ईसुरी के मुंह में कुछ छींटे मारे। पानी के छींटे लगते ही ईसुरी कुछ सचेष्ट-सा हुआ। हाथ से मुंह का पानी पोंछा और उठकर बैठ गया। फिर सहसा ही उठा और भाग गया।

बड़ी बहू कुछ मुस्कराती हुई बोली, 'देखा कैसा बना हुआ लड़का है! इतनी मार खा गया, पर उस पर कोई असर नहीं। कोई हार के लिए पूछ-ताछ न करे, इसीलिए, ही मुरझाया-सा लेट रहा था।'

'तो क्या मर ही जाते,' लक्ष्मी ने चैन की सांस लेते हुए कहा।

भोलाराम फिर भीतर आये और हाथों में तमाखू मलते हुए बोले, 'देखो मैंने कहा था न, जाल से छूटते ही मृग-सा भागेगा। यह बहू भी उसी से मिली है। इसने ही हार उसे दे दिया होगा। औरत अपने आदमी की तरफ ही झुकती है।

सास-ससुर उसके कौन हैं? समझ लो गया हार दलियां के घर। अब नहीं आता वह। तीन सौ रुपया के लिये बैचेन था, अब यह गया तीन हजार का। और अभी कितने का क्या न जायेगा। डूबा वंश कबीर का उपजा पूत कमाल। वही दशा मेरी होनी है।' ऐसा कहते हुए भोलाराम आंखें पोंछने लगे।

'जैसा बाप तैसा बेटा, अब रोते क्यों हो। बचपन में तुम भी ऐसे रहे होगे।' बड़ी बहू ने ताना कसा।

इतने में बाहर किसी ने आवाज लगायी। कलुआ चपरासी था। उसे देखते ही भोलाराम का पारा चढ़ गया। क्रोध से बोले, 'चपरसिया! तू क्यों मेरे पीछे पड़ा है? भाग, यहां से नहीं है कुछ रुपया-उपया। बड़ा रुपया का लेने वाला। घर में घुसकर मेरा सोने का हार चुरा ले गया और आ गया यह रूपक रचने। देख मैं तेरी रपट लिखवाता हूं।'

'पंडितजी! ऐसे काम न चलेगा। इन गीदड़ भभकियों से मैं डरने वाला नहीं। रुपया लेकर रहूंगा।'

'हां! हां ले लेना।' ऐसा कहते हुए भोलाराम भीतर चले गये। कलुआ उनकी चौपाल की छप्पर में एक लाठी मारता हुआ चला गया। छप्पर के कितने ही खपरे फूट कर नीचे गिर गये!

* * *

अध्याय - २०

जब कोई समस्या बहुत परेशान करने लगती है तो मनुष्य उससे मुक्ति चाहने लगता है। कानूनगो के घर का कलह जब बहुत बढ़ा, उन्होंने रजऊ को कुछ दिन को उसके घर भेजना ही उचित समझा और एक दिन भेज भी आये। रजऊ अपने घर आ गयी। मां-बाप के घर। उसे ऐसी चैन मिली जैसे बन्दीगृह से छूट कर आयी हो। मुख का घूंघट हटा। बाहर द्वार तक आने-जाने की आजादी मिली। पूरा पड़ौस के लोगों से बात करने की भी छूट मिली। ससुराल से आयी थी लड़-झगड़कर। मन पर एक भार लेकर। आलोचना की पात्र सी। दीन-हीन! न रूपगर्विता, न श्रृंगारगर्विता! ससुराल से आयी सी ही नहीं। अस्पताल से आयी हुई सी, एक बड़े आपरेशन के बाद! कुछ कुम्हलाई हुई सी, विवर्ण, जो कोई भी उसे देखता, कहता— 'रजऊ सास ने क्या प्रेम से नहीं रक्खा? खाने-पीने को नहीं दिया?'

ऐसे कितने ही प्रश्न! परन्तु उसके अपने भी कुछ प्रश्न। वह दलियां कहां मिलेगा? कहां वह ईसुरी, जिन्होंने उसके जीवन के साथ खिलवाड़ किया। पूरा पड़ौस के सारे आक्षेप सुन लिये, सह लिये। कुछ दबी हुई मुस्कानों से, गुमसुम भाव-भंगिमाओं से उन्हें टाल

दिया। चिन्ता थी—[illegible] ससुराल वाले अब न बुलायेंगे। क्रोध के वशीभूत हो भेज गये। सारा घर नाराज। यहां भी प्रसन्न कौन। बाप बदला-बदला, मां बदली-बदली। तब भी बेशर्माई से रहना। खाना भी खाना, काम भी करना।

एक दिन रानी बहू बोली, 'बेटी, आज अकती का त्योहार है। चौपाल लीप डाल। देख तो कैसी खुद गयी है! जब सेतू गयी, ऐसी ही पड़ी रहती है।'

रजऊ ससुराल से आयी थी। कानूनगो की बहू बन कर। यदि प्रसन्न आई होती तो कुछ ऐंठ अकड़ भी दिखाती। कह देती लीप न लो तुम्हीं। लिपवा लो किसी नौकरानी से। पर खूंटी के बल पर बछड़ा नाचता है। मां की बात चुपचाप सुन ली। फिर कुछ देर में कुछ सोचती हुई सी बोली, 'अम्मा! दोपहर के लीप डालूंगी। अभी लोग निकल रहे हैं। दोपहर में एकान्त रहेगा।'

दोपहर आया। गोवर लायी और चौपाल लीपने लगी। इसी समय दैवयोग से दलियां निकला। सहसा नजर रजऊ पर पड़ी। उसके आश्चर्य का ठिकाना न रहा। खड़ा हो गया और बोला, 'रजऊ! तू कब आ गयी?'

'तुझे मतलब। जा न अपनी गैल!' रजऊ ने बिना देखे ही कहा।

'अरे रजऊ! भूल गयी क्या? देख तो
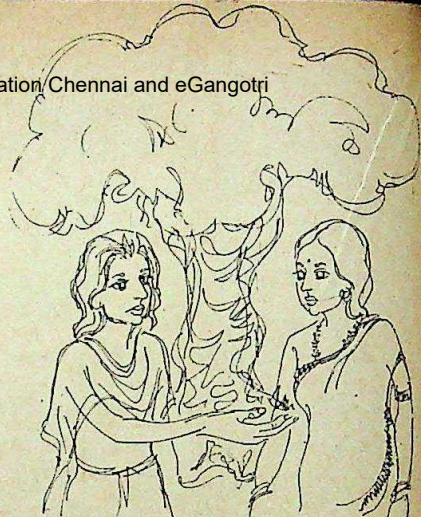
मेरी ओर। मै तेरा दलियां हूं। याद नहीं तुझे बचपन में एक साड़ी दे गया था।'

रजऊ उसका नाम सुनते ही चौंक सी पड़ी। पहले सोचा, भीतर भाग जाये, पर फिर साहस को समेटती हुई बोली, 'मेरे ऊपर फागें बनाता है। तुझे लाज-शरम नहीं आती। जा तुझसे नहीं बोलना।'

'नहीं बेटी!' दलीं शुद्ध हृदय से बोला, 'मैं तुझे बेटी कहता हूं। ऐसा कौन पापी होगा, जो अपनी बेटी पर ही फागें बनावे। उसे बदनाम करे। मेरा भी अपना कुछ धर्म है। कुछ चरित्र! संसार कुछ भी कहे।'

'तब फिर कौन बनाता है!' रजऊ ने भौहें चढ़ाते हुए पूछा।

'वही ईसुरी, जो तेरे साथ बचपन में खेलता रहा। वह तेरे चले जाने से दुखी है। तेरी याद कर-कर तेरे गीत गाता

है। तेरे बिना रोता है। खाना नहीं खाता। आवारा-सा फिरता रहता है। पागल हो रहा है। मैंने उसकी पीर को समझा है। उसे सहारा दिया है। मैंने उसके अपराध को अपने सिर लिया है। लोगों को विश्वास नहीं कि वह फागें बना सकता होगा। लोग मेरे ऊपर शक करते हैं। कहते हैं — यह फागें बनाता है और ईसुरी से गववाता है। मनसुखलाल ने मेरी नालिश भी कर दी है। मुकदमा लड़ना है। मैं जेल जाऊंगा पर ईसुरी को बचाऊंगा। वह बचा ही है। उस पर किसी को शक भी नहीं। गुंडा सब मुझे समझते हैं। मैंने गुंडा बनना स्वीकार भी कर लिया है।'

'उस ईसुरी को भेज न मेरे पास? पूछूं मैं उससे। दूसरे की बहू-बेटी पर क्यों मरता है। अपनी जाति में करावे न अपना विवाह।'

'विवाह हो गया, तब भी वह तुझे नहीं भूल सका, रजऊ। तेरे लिए समस्या कर रहा है। देख! और बताऊं, रजऊ, किसी से कहेगी तो नहीं....।'

'मैं किससे कहने जाती हूं।' रजऊ ने आंखें ऊपर उठाते हुए कहा।

'देख! यह हार अपनी दुलहिन का चुरा लाया है। यह उसने मुझे दिया है। इसको गिरवी रखने जा रहा हूं। कुछ रुपये की जरूरत है। मुकदमा के लिए। तेरे पास रुपया हो तो दे दे मुझे कुछ, रख ले इसे।'

'दिखा,' रजऊ बोली, 'देखूं इसे कैसा हार है?'

रजऊ ने हार लिया और भीतर चली गयी। जैसे रुपया लेने गयी हो। दलीं बहुत देर तक खड़ा-खड़ा देखता रहा, पर वह न लौटी।

थोड़ी ही देर में मनसुखलाल आते हुए दिखायी पड़े। दलीं को अपने द्वार पर खड़ा देखकर भयभीत से हो गये। नाकाबन्दी किये खड़ा है। कुछ फौजदारी करने आया है! खूंखार जानवर। जब उस पर केस चल रहा है, तब क्यों द्वार पर आया?'

थोड़ी देर खड़े होकर सोचने लगे। फिर साहस समेट कर आगे बढ़े और घबराये हुए से त्योरी चढ़ाकर बोले, 'तुम कैसे मेरे द्वार पर?'

'द्वार, द्वार है, वह किसी का नहीं होता। आने को है जाने को है, बाक्स में रखने को नहीं।' ऐसा कहता हुआ दलीं आगे बढ़ गया।

यहां मनसुखलाल घर आये और कांपते हुए से रानी बहू से बोले— 'यह दलीं क्यों द्वार पर खड़ा था? कुछ फौजदारी करने आया रहा है? रजऊ आयी नहीं कि गुंडे ने फिर सिर उठाया। यहां के चक्कर काटने लगा। यह चौपाल कौन लीप रहा था?'

'रजऊ,' रानी बहू ने कहा, 'आप कांप क्यों रहे है? क्या कुछ बातचीत हो गयी? कुछ भला-बुरा कह गया क्या?'

'हां!' मनसुखलाल फिर वैसे ही बोले– 'मैंने कहा– तुम कैसे मेरे द्वार पर– तो बोला– द्वार द्वार है वह किसी का नहीं होता, आने को है जाने को है, बाक्स में रखने को नहीं।'

'इसका मतलब है कि वह किसी दिन घर में घुसेगा। बड़ी परेशानी है।' रानी बहू ने कहा।

'ओ भी करे, गुंडा है सब कुछ कर सकता है।' मनसुखलाल ने चिन्तित सा होकर कहा।

'अम्मा!' रजऊ बोली, 'मैं उसी को देख कर तो भीतर आ गयी थी, चौपाल पूरी नहीं हो पायी। अब तुम जाकर पूरी करना। मैं नहीं जाती। भय के मारे मेरा शरीर कांप रहा है।'

'क्या करे, क्या न करे,' रानी बहू बड़ी चिन्तित सी होकर बोली, 'आज तक कभी इस रास्ते से नहीं निकला। लड़की आयी सो गुंडे चक्कर काटने लगे। राज सरकार में कोई सुनने वाला नहीं। गुंडे यहां भी नहीं रहने देते और ससुराल में भी फागें बना-बना कर भेजते हैं। वहां भी लड़की को रहना कठिन कर दिया है। बब्बू को शक हो गयी है कि रजऊ के चरित्र में कुछ खामी है। इसका झुकाव भी कुछ उस ओर है। इसलिए वह इसे फूटी आंखों नहीं देखता। फागें गा-गाकर सुनाता है। उलहने देता है। भगाता है कि जा उसी फगुवारे के पास! रोती हुई आयी है बेचारी! कहीं नदारा नहीं। न मायके में, न ससुराल में। अब जाय तो कहां जाय?'

रजऊ ने रानी बहू की बातें सुनी नहीं कि उसके धैर्य का बांध टूट गया। सिसक-सिसक कर रोने लगी। मनसुखलाल की आंखों से भी मूक आंसू बहने लगे। पर उन्होंने धैर्य को समेटा और आंखें पोंछते हुए नहाने-धोने को चले गये।

रानी बहू चौके को गयी। यहां मौका पाकर रजऊ ने वह हार चुपचाप अपने बाक्स में रख लिया। सोचने लगी– अब कैसे लेगा हार! शोर मचायेगा तो कह दूंगी– झूठ लगाता है! बदनाम करता है! ईसुरी को ठगता है! मुकदमा के बहाने उससे चोरी से घर का जेवर मंगवाता है! उसे चोरी सिखाता है। जाय न जेल। ईसुरी का क्या बिगड़ जायेगा? झूठा ही जेल जाय। मेरे पिता ने उसकी नालिश की, मैं उसे बचवा दूं। आवे तो वह ईसुरी। मिले किसी दिन! उससे बात करूं।'

यहां मनसुखलाल खाना खाकर लेट रहे। रानी बहू ने चौपाल पूरी लीपी। कुछ देर में सन्ध्या हो आयी। पड़ौस की कुछ लड़कियां आयीं और रजऊ से बोलीं, 'क्यों जीजी! पुतलियां पूजने चलती हो आज अकती है?'

रजऊ ने रानी बहू से पूछा। रानी बहू कुछ सोचती हुई सी बोली, 'कैसे कहूं

गुड़ भरा हंसिया हो रहा है, न कहते बनता है, जा, न कहते बनता है न जा। सारे गांव की लड़कियां इकट्ठी होंगी। गीत गायेंगी। पूजा करेंगी। जाना है तो अपने बापू से पूछ ले। मैं अपने सिर पर बलाय नहीं लेती।'

कुछ लड़कियां मनसुखलाल के पास दौड़ी गयीं और बोलीं— 'चाचाजी, जिज्जी को अकती पूजने को ले जावें?'

मनसुखलाल कुछ अलसाये हुए से बोले, 'ले जाओ। पर तुम सब रजऊ के साथ रहना। उसे अकेला नहीं छोड़ना। वहां लड़के बहुत इकट्ठे होंगे। परेशान न करने लगें।'

रजऊ तो यह चाहती ही थी। उसने अपना श्रृंगार किया— स्वर्ण की मूर्ति सी खिल उठी। सारी लड़कियों से पृथक दिखने लगी। सारी लड़कियां उसे बीच में कर, अपनी-अपनी पुतलियों को तथा पूजा के सामान को लिए हुए गीत गाती हुई चलीं।

बरगद का वृक्ष गांव के बाहर था। उसी के नीचे पूजा होती थी। कुछ लड़के पेड़ के नीचे पहले से ही इकट्ठे हो रहे थे। जानते थे कि लड़कियां पुतलियों को पूजने को आयेंगी। उनसे फूले हुए देवल ले-लेकर खाये जावेंगे। उन्हें छेड़ा जायेगा। आनन्द आयेगा। जिनकी शादी हो गयी है उनसे उनके पतियों का नाम लिवाया जायेगा। बरगद के कोमल-कोमल किसलय पल्लव तोड़-तोड़कर किशोरियों के कोमल कपोलों पर चिपकाने में कितना आनन्द आयेगा। किंशुक की नयी-नयी सराकें तोड़कर नवोढ़ाओं को मार-मार कर पतियों के नाम लिवाने में कितना आनन्द आयेगा!

लड़कियां गुच्छों में आयीं। मधुर-मधुर गीतों से वातावरण को मनोरम बनाती हुई पूजा करने लगीं। जैसी पुतलियां सजीं, वैसी ही स्वयं। लाल-पीली साड़ियां, रेशमी गोटा किनारीदार। चमाचम, लटकती-मटकती हुई। पूजा का समापन हुआ नहीं कि लड़के प्रसाद लेने को दौड़े।

ईसुरी भी था उनमें। पूरी तरह से बदला-बदला वह बचपन का ईसुरी नहीं। युवा ईसुरी, लम्बा-लम्बा बढ़ा हुआ। इकहरे बदन। गौर वर्ण, मुख पर कान्ति पर कुछ धूमिल-धूमिल। निकलती हुई रेख, मचलता हुआ मन। यौवन का उद्यान। रजऊ पर उसकी नजर पड़ी, उस पर रजऊ की। दोनों एक दूसरे को अपरिचित।

एक लड़का पीछे से आया। ईसुरी को चमेली की सटाक मारता हुआ बोला, 'ईसुरी, ले अपनी दुलिहन का नाम।' और भी लड़कों ने सटाकों के प्रहार किये। ईसुरी बोला, 'रजऊ—रजऊ, रजऊ।'

यह सुनते ही सारी बालमंडली खिलखिला कर हंसने लगी। रजऊ ने

तिरछी निगाह से ईसरी की ओर देखा। पुरानी स्मृतियों को खुरदा। हां, वही ईसुरी था, यौवन के आवरण से ढका हुआ।

यहां कुछ सहेलियों ने रजऊ को घेरा। 'रजऊ। ले अपने पति का नाम।' रजऊ सहमी-सहमी सी नीचे को गर्दन झुकाये चुप रही। ईसुरी ने उसे पहचान लिया। जैसे विस्मृति का घूंघट हट गया हो। यह कब आ गयी। प्रश्न उठा। उत्तर नहीं। ईसुरी के सारे शरीर में बिजली सी दौड़ गयी। जैसे उसके हृदय को किसी ने मसोस दिया हो। वह बढ़ा। रजऊ के सामने अपना हाथ पसार दिया। रजऊ ने सहमे-सहमे उसके हाथ में फूले हुए कुछ देवल रख दिये। बोल कुछ न सकी।

पूजा हो गयी। मंगल गीत गाती हुई, मोद-विनोद भरी बातें करती हुईं सब अपने-अपने घर गयीं।

रजऊ भी अपने घर आ गयी, एक नया दर्द लेकर।

* * *

अध्याय - २१

सन्देश भी जब तक यथा स्थान पहुंचा नहीं दिया जाता, वह सिर पर एक बोझ के समान ही रक्खा रहता है। रजऊ ने दलीं से कहा था— भेज न उसे मेरे पास। उसे अर्थात् ईसुरी को। परन्तु ईसुरी न जाने कहां गायब हो गया था। वह उसके पास आ ही न रहा था। कई दिन बीत गये। दलीं उसकी प्रतिदिन प्रतीक्षा करता। सबेरे से शाम तक अपनी ही चौपाल में बैठा रहता। अब आता है, अब आता है। रजऊ ने उससे हार भी हथिया लिया था। इससे उसकी परेशानी और भी बढ़ गयी थी। हार कैसे लिया जाय? ईसुरी ही ले सकता था। उसका अपना कोई चारा नहीं था। यहां पेशी के दिन समीप आ रहे थे। रुपया की आवश्यकता बढ़ रही थी। समस्या पर समस्या, उलझन पर उलझन सामने आ रही थी।

जब कई दिन तक ईसुरी न आया, दलीं स्वयं ही एक दिन उसे ढूंढ़ने को निकला। सारे गांव में ढूंढ़ आया। कहीं पता न पड़ा। निराश घर को लौटा। ईसुरी चौपाल में चारपाई पर लेटा सो रहा था। उत्सुकता से उसे जगाया और बोला, 'वाह रे ईसुरी? कहां गायब हो गया था? कितने दिनों से नहीं आया। कुंओं में बांस डाले, तेरा कहीं पता ही नहीं। कहीं बाहर चला गया था क्या? मेरा मन बड़े सांकरे में पड़ा रहा। कितनी ही कल्पनायें मन में दौड़ती रहीं। जिन्दगी से ऊब कर किसी कुंए तालाब में डूब न गया हो। घर में बीमार न पड़ा हो। कहीं बाहर न भाग गया हो।

'मालूम है कुछ? रजऊ घर आ गयी है। दैवयोग से मेरी उससे भेंट हो गयी।
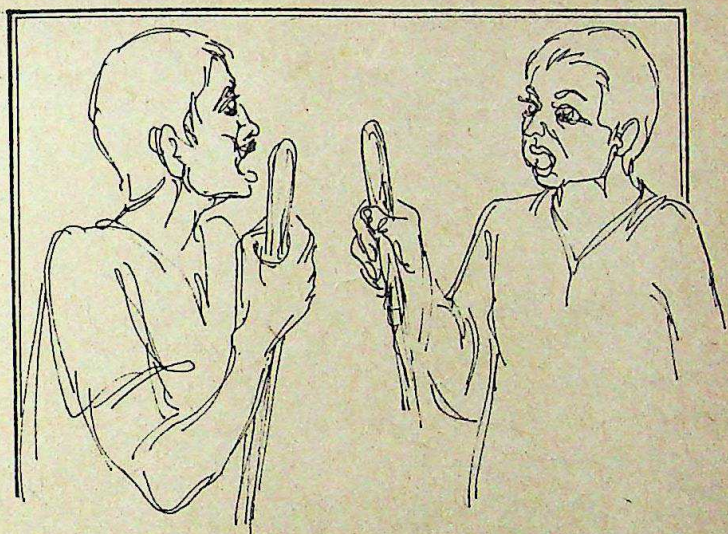
चौपाल लीप रही थी। मेरी नजर उस पर पड़ी। पहले आंखों पर विश्वास न हुआ। पूछा मैंने— 'कौन रजऊ? कब आयी?'

सिर नीचा किये हुए ही बोली, तुझे मतलब। जा न अपनी गैल। मैं फिर बोला— रजऊ। मुझे भूल गयी। मैं तेरा दलियां हूं, जो तुझे बचपन में एक साड़ी दे गया था। इस पर उसने मेरी ओर नफरत भरी आंखों से देखा - बोली - मेरे ऊपर फागें बनाता है। मेरी जिन्दगी दूभर कर दी।

मैंने कहा— बिटिया! मैं तेरे ऊपर फागें बनाऊंगा। मैं तुझे बिटिया कहता हूं। मेरा भी अपना कुछ धर्म कर्म है, कुछ चरित्र है। फागें बनाता है ईसुरी, जो तेरे चले जाने से दुखी है। तेरे लिए पागल है।

बोली — भेज न उसे मेरे पास। आगे क्या बताऊं, ईसुरी! मुझसे कुछ गलती हो गयी। मैंने केस का हाल बताया। हार भी हाथ में था निकला था कि किसी सुनार के घर उसे गिरवी रख आऊं। अकल पर पत्थर पड़े। हार उसे दिखाया। कहा कि इसे तू रख ले, केस लड़ने को कुछ रुपया दे दे। ससुराल से लायी होगी। उसने हार लिया और घर के भीतर हुई। मैं कुछ देर खड़ा रहा। भाग्य से उसी समय, मनसुखलाल आ गये। उनसे बहस हो गयी। अपना-सा

मुंह लिए चला आया। अब क्या लो?'
ईसुरी कुछ सोचता हुआ सा बोला, 'दादा। बड़ी गलती कर आये। अब हार नहीं मिलता। मेरी भी कहानी सुनिये — अकती के दिन कुछ लड़के मुझे बरगद के नीचे ले गये। लड़कियों को आना था, गुच्छों में शैतानी की योजना थी। नयी विवाहिताओं से पतियों के नाम लिवाने थे, नये विवाहितों से पत्नियों के। दैवयोग से वह रजऊ भी एक गुच्छे में गंसी हुई आयी। पूजा के समापन के बाद नाम लिवाने की बारी आयी। कुछ लड़कों ने मुझे घेरा। ईसुरी ले अपनी दुलहिन का नाम। मैंने अकस्मात ही कह दिया 'रजऊ, रजऊ, रजऊ!' रजऊ को भी लड़कियों ने घेरा, रजऊ ले अपने दूल्हा का नाम! रजऊ सहमी सी चुप रही। मैंने रजऊ को पहचाना, रजऊ ने मुझे। बदले हुए आवरण के पीछे से पूर्व परिचित रूप झांक उठे। सोने की प्रतिमा में अलौकिक उभार अलौकिक निखार। दादा, सहमा सा शरमाया सा उसके सामने गया। देवल लेने को उसके सामने हाथ पसारा। बोझिल नेत्रों से मेरी ओर कुछ देखती न देखती सी उसने मेरी हथेली पर कुछ फूले हुए देवल रख दिये। मेरा हृदय उद्यान सा फूल गया।

'तभी से दादा, पागल जैसा उसके घर के चक्कर काटता रहा। पर न निकली वह हेमांगना बाहर। दादा सुनिये, सुनिये, फाग उतर रही है —

हम सें दूर तुम्हारी बखरी —
हमें रजऊ जा अखरी,
बसो चाहिये बोर सामने —
खोर सोऊ है संकरी,
तक छक मिलत न एक घरी कों—
करवे खां हां तकरी,
फिर आउत फिर जात ईसुरी —
बने फिरत हैं चकरी।

'यह फाग है दादा? न जाने क्या है? दिल की पीर! लगता है अपना घर खुदवा के फिकवा दूं। उसे रजऊ के घर के सामने ही होना चाहिये था। पर कितनी दूर? क्या यह दूरी खटकने वाली नहीं। संकीर्ण रास्ता। दोनों के घर आमने-सामने। कितना अच्छा होता। दादा! उस पटवारिया ने अपनी चौपाल में पहरा बैठलवा दिया है। द्वार पर हर समय भीड़। एक घड़ी को भी एकान्त नहीं कि रजऊ निकले और उससे दो-दो बातें कर ले। फिर गया, फिर आया। चकरी जैसा नाचा। पर न मिली वह! थक कर यहां आया और लेट रहा। चारपाई अच्छी लगी। और सुनो, और सुनो दादा, फिर फाग उतरी—

हम खां विसरत नहीं विसारी —
हेरन हंसन तुम्हारी,
जुवन विशाल चाल मतवारी —
पतरी कमर इकारी,
भौंहें कमान बान से ताने —
नजर तिरीछी मारी,

ईसुर कहत हमारी कोरीं —
रजऊ हेर लो प्यारी ।

'दादा । मेरी आंखें ले लो न तुम, देखो रजऊ की हेरन-हंसन । कितनी प्यारी है वह । मतवारी चाल, पतली कमर, इकहरा शरीर । धनुषाकार भौंहें, जैसे बाण ही चढ़ाये हों । तिरछी नजर । बाहरी छवि । अपने आप ही तो उतर-उतर कर आते हैं ये उद्गार । तुम्हें सुना देता हूं, दादा । हृदय कुछ हलका होता है । सोचता हूं, तुम जेल चले गये तो क्या होगा, फिर कौन सुनेगा ? अब तो अपने पास रुपया भी नहीं । एक चीज हाथ लगी थी, वह भी तुमने खो दी, दादा ? अब तो वह जेवरों की दुकान अपने घर चली गयी । एक हार ने ही ऐसा हरा दिया कि आगे जीत की कोई आशा न रह गयी ।' ऐसा कहता हुआ ईसुरी सिसक-सिसक कर रोने लगा ।

दलीं कुछ सोचता हुआ सा बोला, 'ईसुरी ! हार तो तेरी रजऊ के पास ही गया, क्या बुरा हुआ । जिसके योग्य था उसके पास पहुंच गया । विधि का विधान है । भविष्य की योजना । सोच दूर तक । हां यदि मुझे जेल बदी है तो मिलेगी । जाने दे मुझे । तेरे लिए जाऊंगा । मन में एक संतोष होगा । फागें तेरी हैं, लोग विश्वास नहीं करते कि तेरी हैं । उन्हें मेरा समझे हैं । मैं नहीं चाहता कि तेरा गौरव मैं छीनूं । मैं जब तुझसे पृथक हो जाऊंगा तभी लोगों को तेरी प्रतिभा पर विश्वास होगा । मैं अपने त्याग से चमकूंगा, तू अपने अनुराग से । दोनों का मूल्य होगा ।'

'क्या पता क्या होगा,' ईसुरी आंखें पोंछता हुआ बोला, 'अभी तो घर से पिट कर आता हूं, आकर यहां बैठ जाता हूं । आंसू बहा कर अपना दुख हलका कर लेता हूं, फिर किसके पास जाऊंगा ? घर में मेरा नदारा नहीं । बाप ऐसी बुरी तरह मार लगाता प्राण लेने में कसर नहीं रखता । पर मेरे प्राण भी बड़े जड़ हैं, निकलते नहीं । घर बाहर कहीं भी तो चैन नहीं, दादा । रात के नींद आती नहीं, दिन के सो पाता नहीं । लेटने को कहीं जगह भी तो चाहिये । आंधी में तृण जैसा उड़ा-उड़ा फिरता हूं । फिर वही प्रभात, फिर वही रात । बाप ने कहा था, शादी करा ले तो मुकदमा वापस करवा लूंगा । परन्तु अब पूछो उससे ।'

ईसुरी की बात पूरी भी नहीं हो पायी थी कि रास्ते में भोलाराम भयंकर भूत से आते हुए दिखायी दिये । वही परसुरामी मुद्रा, हाथ में एक लाठी । ईसुरी ने उन्हें देखा नहीं कि भागा । वे दलियां के द्वार के सामने रास्ते में खड़े होकर बोले, 'अरे दलियां । दया कर इस ब्राह्मण पर । घर की सारी जायदाद चुरवा लेगा क्या ? लड़का बहू के गले से सोने का हार उतार लाया । दे गया तुझे । इतना बड़ा डाका तो न डलवा । गांव में रहूं कि भाग

जाऊं?'

'पंडितजी!' दलियां लाठी उठाता हुआ बोला, 'हर समय तुम लड़ने को मेरे द्वार पर न खड़े रहा करो। तुम गांव के पंडित हो, इसलिए मैं गम खा रहा हूं। ईसुरी न समझ लेना कि उसे मार-पीट लिया। एक ही लाठी में तोंद पचका दूंगा। अपने लड़के से पूछते नहीं। कभी रुपया ले भागा, कभी हार ले भागा। बड़े धन्नासेठ। हटो यहां से।'

'मेरे लड़के को क्यों बुलाता है?' भोलाराम दांत किड़किड़ाते हुए बोले, 'क्यों यहां बैठने देता है?'

'मैं किसी को बुलाने जाता हूं,' दलीं खड़ा होता हुआ बोला, 'रोक नहीं लेते अपने लड़के को।'

भोलाराम को लड़ते देखकर लोगों की भीड़ लग गयी। स्त्रियां अपने-अपने द्वार पर खड़ी होकर झांकने लगीं। लोग बाहर निकल आये। बच्चे भी नंगे-उघारे उन्हें घेर कर खड़े हो गये।

'पंडितजी!' एक वयोवृद्ध पड़ोसी बोला, 'आपकी और दलीं की तकरार क्या है? आप क्यों आंतरे दूसरे यहां लड़ने को खड़े रहते हैं?'

'मैं इस दलियां से कहता हूं,' भोलाराम मिसमिसाते हुए बोले, 'कि मेरे लड़के को न अपने पास बैठने दिया कर। यह उससे मेरे घर की जायदाद चोरी से मंगवाता है। एक बार तीन सौ रुपया मंगा लिया। दूसरी बार बहू के गले का एक हार। ऐसा घर फूंक तमाशा मैं कैसे देखूं?'

'पंडितजी,' वृद्ध बोला, 'आप लड़के को नहीं रोकते। वह यहां न आये, तो क्या दलीं महाराज, आपके घर बुलाने जायेंगे? घर में कोई आ जाये तो उसे भगाया तो नहीं जाता। दलीं में हुनर है। फागें गाते हैं, नगड़िया बजाते हैं। घूमे-फिरे भी हैं। इसलिए आपका लड़का उनके पास बैठने को आ जाता है। आपके लड़के में भी हुनर है। अच्छा कंठ पाया है। हुन्नरी के पास हुन्नरी जाता है। एक दूसरे की कदर करता है।'

'चलो तुम मुंह देखी बात करने लगे,' भोलाराम गरजे, 'तुम दलियां से डरते होगे। मैं नहीं डरता। इसकी फागों ने ही आग लगायी है। इसे तुम हुनर कहते हो। लड़के को बरबाद कर दिया है। फागें-आगें गाना भले आदमियों का काम नहीं। लुंगे-लफंगों का काम है। दूसरों की बहू-बेटियों पर कीचड़ उछालते हैं। देखना यह दलियां कुछ ही दिनों में जेल के सींकचों के भीतर दिखेगा। मनसुखलाल ने इसकी नालिश कर दी। इसने उनकी लड़की पर फागें गायी थीं, भरी बारात में। गांव में ऐसी गुंडागीरी चाहिये। जैसी अपनी इज्जत वैसी दूसरे की इज्जत। मेरा हार दिलवा दो। इतनी बड़ी दच्च मैं कैसे सहूं?'

'भागता है पंडित कि नहीं,' दलीं

ग़ज़ल

विष घृणा का न घोलें, निवेदन यही ।
बोल कड़वे न बोलें, निवेदन यही ।।

आग घर में लगी है, बुझाएं उसे,
बन प्रभंजन न डोलें, निवेदन यही ।।

आपके हैं सभी, गैर कोई नहीं,
निज हृदय को टटोलें, निवेदन यही ।।

रक्त में हैं सने आपके हाथ जो,
स्नेह-पानिप से धोलें, निवेदन यही ।।

दुःख से हों न गीले किसी के नयन,
स्वप्न स्वर्णिम संजो लें, निवेदन यही ।।

दूसरों को कहें बाद में हम बुरा,
पहले अपने को तोलें, निवेदन यही ।।

पथ प्रगति सामने हैं, विमुखता तजें,
सबके सब साथ हो लें, निवेदन यही ।।

– डॉ. गणेशदत्त सारस्वत

सारस्वत सदन, सिविल लाइन्स, सीतापुर, उ.प्र.

लाठी तानता हुआ बोला, 'वैसा ही उघेरूंगा जैसा तू अपने लड़के को उघेरता है। कसाई कहीं के! गले में माला पहने है। लम्बे तिलक लगाये है। रामनामी ओढ़े है। मुख में राम-राम, कान देखो तो भूत और प्रेत के।'

'चले जाइये, पंडितजी,' एक दूसरा पड़ोसी बोला, दलीं महाराज क्रोध में हैं। आप अपने लड़के को ही रोकिये।'

इतने में कोई लड़का भोलाराम के हाथ से लाठी खींचकर घर भागा। भोलाराम उसके पीछे दौड़ते हुए बोले, 'लाव, मेरी लाठी कहां लिए जाता है?'

पीछे से लड़के हंसते हुए और ताली पीटते हुए चिल्लाये– 'गया भालू, गया भालू! जंगल का भालू!'

सब लोग ठहाका मार-मारकर हंसने लगे।

(क्रमशः)

पंजाबी कहानी

□ महेन्द्र सिंह सरना

सूरज की टिकिया लाल होकर रेतीले टीलों के पीछे गिर पड़ी। बादलों से विहीन आकाश दम तोड़ती सांझ के रक्त से रंगा गया। गरमी अभी भी बेहद थी और रेतीली धरती आंखों में चमक मारती थी। कहीं-कहीं सूखे मारे गेहूं के अकेले बूटे अंतिम सांसों पर अटके ज़िंदगी से चिमटे रहने के लिए भरपूर प्रयत्न कर रहे थे।

फिर चन्द्रमा-विहीन रात्रि की कालिमा रेतीले टीलों पर उतरने लगी। अंधेरा इतना सघन हो गया कि हाथ को हाथ सुझाई नहीं दे रहा था। क्षितिज के निकट तारे आंखें झपक रहे थे, जैसे वे जीवित हों। यदि रात चांदनी होती, तो देखने वालों को कुंडिये गांव की वीरान गलियों में एक परछाईं दबे पांव सावधान होकर चलती नज़र आ जाती। चारों ओर अंधेरा था। फिर भी वह परछाईं मकानों दीवारों की ओट ढूंढ़ रही थी। मंदिर के सामने क्षण भर रुक कर उसने एक धीमी-सी नमस्कार की। मंदिर को पार करके उसके कदम छोटे और चौकस हो गये, जैसे उसकी मंज़िल आ गयी हो।

मंदिर के पिछवाड़े कोने के मकान के पास वह परछाईं रुक गयी। फिर वह बाहर वाली फसील फांद गयी और दौड़ कर सेहन पार करती रसोई के पास रखी लकड़ी की बड़ी घड़ौंची की ओट में छुप गयी, जिस पर तीन घड़े रखे हुए थे।

गहरे अंधेरे के कारण वह बिना किसी की नज़रों में आये चंदन सिंह के घर आ घुसा था, यह सोच कर बलराम सिंह ने एक लम्बी सुखदायक सांस ली। हां, वह वैरी के सेहन के बीच में खड़ा था और चंदन सिंह के साथ पुराना कर्ज़ा चुकाने का अवसर अब उसकी मुट्ठी में था। सात वर्ष बीत गये थे, जब चंदन के बाप गंगा सिंह ने बलराम के बापू का कत्ल किया था। सात लम्बे वर्ष, पर अभी तक कातिल खानदान का दीपक चंदन सिंह बदले की आंधी से बचा रहा था। सात वर्ष वह चंदन सिंह के जवान होने की प्रतीक्षा करता रहा था, और आखिर वह समय आ पहुंचा था, जब उसके पिता की बेचैन आत्मा शांत होकर बैकुंठ-वास लेगी।

बड़ा चौकन्ना होकर वह भनक ले रहा था। उसकी ज़रा-सी लापरवाही उसके अस्तित्व का भांडा वैरी के सेहन में फोड़ सकती थी। सांस रोक कर उसने घर के अंदर से आती हुई आवाज़ों में से चदन सिंह की जवान मरदाना आवाज़ पहचान ली। ...तो चंदन घर में था।

सहसा बलराम सिंह घड़ौंची की ओट से निकला और दबे पांव चलता हुआ उस खिड़की के पास जा खड़ा हुआ, जिस में से लालटेन का मद्धिम प्रकाश बाहर आ रहा था। उसने अंदर झांका। लालटेन की लौ तीन चारपाइयों के काले अंधेरे में अलग करने का प्रयत्न कर रही थी। फिर तीन मानवीय आकृतियों की रेखाएं उभरने लगीं। सामने चारपाई पर चंदन सिंह आलथी-पालथी मारे बैठा था और निकट की चारपाई पर उसकी बूढ़ी मां और छोटी बहन बैठी थी। बलराम ने कान लगा कर सुना। वे तीनों सूखे की बातें कर रहे थे। ऐसा सूखा पिछले दस वर्षों से नहीं पड़ा था और उसके बाद जो अकाल पड़ना था, उसने सारे जैसलमेर ज़िले को बरबाद कर देना था।

आवाज़ें मद्धिम पड़ती हुईं फिर बिलकुल चुप कर गयीं। बूढ़ी और उसकी बेटी सोने की तैयारी करते हुए एक चारपाई पर टेढ़ी-मेढ़ी हो गयीं। एक लम्बी आह भर कर चंदन सिंह उठा और लालटेन बुझाने के खयाल से ताक की ओर बढ़ा।

बलराम सिंह का दिल सिमट कर जैसे खड़ा हो गया हो। फिर वह दिल लोहार की धौंकनी की तरह चलने लगा। लालटेन के प्रकाश में उसका वैरी उसके सामने खड़ा था। नियति ने उसे घेर कर उसकी राइफल की सीध में ला खड़ा किया था। खिड़की के टूटे शीशे में से दोनाली अंदर सरकाते हुए बलराम सिंह ने निशाना लगाया। सहसा बारिश की एक मोटी बूंद उसके दाहिने हाथ की मुट्ठी पर आ गिरी। वह चौंक उठा। इससे पहले कि वह संभल सकता, चंदन

सिंह ने लालटेन बुझा दी थी और कमरे में घटाटोप अंधेरा छा गया था। बिना कोई आवाज किये बलराम सिंह ने दोनाली बाहर खींच ली। आह भरी और वहां से चलता बना।

चंदन सिंह के घर की चहार दीवारी फांद कर उसने अपने होंठ काटे और प्रलयंकारी आंखों से आकाश की ओर देखा। आकाश पर बादलों का एक टुकड़ा भी नहीं था। क्या सचमुच उसके हाथ पर बारिश की बूंद गिरी थी, जिससे उसका निशाना चूक गया था या क्या यह केवल उसके मन का वहम था, लेकिन उसके दाहिने हाथ की पुश्त अभी ठंडी और गीली थी। यह वहम नहीं हो सकता था। सहसा एक अन्य मोटी बूंद उसके माथे पर आ गिरी और उसके चेहरे पर जैसे छिड़काव हो गया। फिर पांच-सात और बूंदें उसकी गरदन और उसके बालों को भिगो गयीं। तो क्या यह सचमुच बारिश थी। बारिश का भ्रम नहीं था। उसने एक बार फिर आकाश की ओर झांका और अपने सिर के ऐन ऊपर उसे एक अकेली-सी बादली की झलक पड़ी और उसका दिल एक अद्‌भुत भय से सिमट गया।

अंधेरी गलियों में से घर को लौटते हुए बलराम सिंह का मन काफी समय तक उस क्षण की थाह पाने के प्रयत्नों में व्यस्त रहा, जब बारिश की पहली बूंद उसके हाथ पर पड़ी थी। उसे लगा, जैसे उसके जीवन में उस क्षण का कोई विशेष महत्व था। उस क्षण से पल भर मात्र पहले उसके अंदर एक भयानक अहसास जागा था, कि वह एक जीवित मनुष्य की हत्या करने लगा था, कि वह एक निर्दोष निहत्थे नवयुवक की होनहार जवानी पर दोनाली दागने लगा था। इस क्षण-भंगुर अहसास ने उसके अंदर अपने आप के लिए घृणा भी पैदा की थी, और बाद में वह बारिश की बूंद मानों विधाता का दूत बनकर आयी थी।

जब वह घर पहुंचा, तो बाप-दादा के उस घर की दीवारों, द्वारों और झरोखों में से भूली-बिसरी यादों की परछाइयों ने बलराम को घेर लिया। उसे याद आयी, वह सांझ, जब उसके पिता का कत्ल हुआ था। पूष की भीषण सर्दी थी। आकाश काले बादलों से ढंका हुआ था और गांव के इर्द-गिर्द जंगल में गीदड़ हुआन रहे थे; गंगा सिंह बंदूक उठाये इस घर में आ घुसा था। वह दबे पांव आया था। कुत्तों को उसने मीठी रोटी डाल कर चुप करा दिया था। उस समय उसका पिता अंगीठी के पास बैठा राजस्थान की एक पुरानी लोककथा बलराम को सुना रहा था, 'होशियार!' दहलीज़ में खड़ा हुआ गंगा सिंह दोनाली तानते हुए गरजा, 'मैं एक पुराना कर्ज़ा चुकाने आया हूं।'

और अगले क्षण उसने बंदूक चला दी। ठाकुर सिंह के होंठ हिले, जैसे कोई

अत्यंत आवश्यक बात कहना चाहते हों, लेकिन शब्द उसके कंठ में अटक गये और उसकी लाश जलती अंगीठी पर लुढ़क गयी। बाद में कितने दिन, कितने महीने औरतों के विलाप, रुदन और चीख-पुकार उस घर में से आकाश पर चढ़ते रहे।

दुख के इस परिच्छेद का आरंभ कोई नहीं जानता था। यह खानदानी वैर कब शुरू हुआ, क्यों शुरू हुआ, कोई नहीं कह सकता था। इतना पता था कि दोनों घरानों का यह वैर पिता-पितामहों से चला आ रहा था। लकड़दादे से पड़दादों को, पड़दादों से दादों को, दादों से पिताओं को, पिताओं से पुत्रों को, पुत्रों से पौत्रों को और पौत्रों से पड़पौत्रों को यदि कोई चीज़ अवश्य विरासत में मिली, तो वह यह वैर था, और कई पीढ़ियों से दोनों खानदानों के जीव यह समझ बैठे थे कि यह विरासत उन पर एक पवित्र कर्त्तव्य लागू करती है— दूसरे पक्ष का काम तमाम करने और खुरा-खोज मिटाने का कर्त्तव्य। स्त्रियों के आंसुओं की बाढ़ और ठंडी आहें नफरत की इस आग को नहीं बुझा सकी थीं।

कत्ल के बाद कितने ही दिन और कितने ही महीने बलराम के सपनों में उसका पिता उसे मिलता रहा। इन मिलनों में बलराम को लगता, जैसे उसके पिता के हिलते होंठों में कोई शब्द कांप रहे हों। 'खून की वासना नहीं मरती, मेरे लाल। गिद्धें मीलों से मरे हुए डंगर सूंघ लेती हैं। इसी प्रकार बदला लेने वाला वैरी के खून का प्यासा उसकी वासना का सुराग निकाल लेता है। मेरी बात याद रखना मेरे लाल। यही जिंदगी का नियम है। सदा रहा है, सदा रहेगा।'

एक भरसक प्रयत्न से बलराम सिंह ने इन सपनों की ओर से अपने कान लपेटे रखे थे। बदले की इस भावना में वह सिवाय एक वहशी रिवाज के और कुछ न देख सका। अपने पितृों के मकानों को ताले लगा कर वह जयपुर चला गया। वहां उसने एक सरकारी दफ्तर में चपरासी की नौकरी कर ली और भूतकाल के संस्कारों से पीछा छुड़ाने के प्रयत्नों में व्यस्त हो गया।

कभी-कभी उसे यह प्रयत्न कठिन लगते। उसे अपना घर याद आता, जहां उसने अपना बचपन और जवानी बिताये थे। उस घर की दीवारों-मुंडेरों के साथ उसकी असंख्य यादें जुड़ी हुई थीं।

वह कुंडिये गांव की गलियों के लिए तरस जाता। एक खयाल उसे रह-रह कर विचलित करता। कहीं उसके गांव के लोग उसे कायर तो नहीं समझ बैठे थे।

उन्हीं दिनों उसे ज़ालिम सिंह की ओर से चिट्ठियां आनी शुरू हो गयीं। ज़ालिम सिंह उसके पिता के चाचा का

पुत्र था। सारी ज़िंदगी ठाकुर सिंह और ज़ालिम सिंह में बनी नहीं थी। ज़मीन-जायदाद के झगड़े से उत्पन्न हुआ तनाव सारी उम्र दोनों के बीच बना रहा।

'गांव के लोग बातें करते हैं,' ज़ालिम सिंह ने लिखा, 'हमारे खानदान को धिक्कारते हैं। मैं किस-किस की ज़बान बंद करूं। लोग चुप रहे, जब तक चंदन सिंह बच्चा था, लेकिन अब तो वह लम्बा-ऊंचा जवान है। बहुत बढ़िया निशाना है।

लोग पूछते हैं, 'बलराम सिंह कब तक अपने पिता की राइफल को ज़ंग लगाता रहेगा।' एक अन्य चिट्ठी में उसने लिखा, 'तुम्हारा पिता और मेरा प्यारा भैया ठाकुर सिंह नित्य मेरे सपनों में आता है। पूछता है, कब मेरा पुत्र बदला लेगा? कब मेरी भटकन खत्म होगी? कब मेरी गति होगी? तुम ही बताओ, मैं क्या उत्तर दूं?'

लेकिन बलराम सिंह ने इन चिट्ठियों को ताक में रख दिया और इनमें लिखी प्रेरणा की ओर कोई ध्यान न दिया। तभी एक रात पौ फटने से कुछ देर पहले उसने सपने में अपने पिता को देखा, 'तेरी रगों में राजपूती खून था,' झुलसे हुए होंठों में से मरियल आवाज़ निकली, 'वह कहां बहा दिया? क्या मैं अब ज़ालिम सिंह का द्वार खटखटाऊं। वह सच्चा राजपूत है। वह मुझे कभी निराश नहीं करेगा।'

इस सपने ने बलराम के मन की सारी शांति हथिया ली। उसकी ज़िंदगी एक दुःस्वप्न जैसी हो गयी। उसने अपनी दफ्तरी व्यस्तताओं में डूब जाना चाहा, पर उसकी मानसिक विक्षिप्तता कम न हुई, बल्कि उसकी मानसिक पीड़ा इस हद तक बढ़ गयी कि उसका अवचेतन मन ज़ालिम सिंह की चिट्ठियों और उनमें लिखी प्रेरणा की प्रतीक्षा करने लगा। इस मानसिक कशमकश से पनाह ढूंढ़ता हुआ वह कुंडिये गांव लौट आया और आते ही ज़ालिम सिंह को मिलने गया।

ज़ालिम सिंह का चेहरा कठोर था, जैसे वह इस्पात पर अंकित हो। उसने बलराम को उन बहादुर राजपूतों की बातें सुनायीं, जिनके बारे में भाट प्रशंसा के गीत गाते हुए नहीं थकते थे। उन योद्धाओं ने कभी अपने बदले की दोपहर पर सूरज नहीं डूबने दिया था। अगर कत्ल रात को हुआ होता, तो उन्होंने कातिल को कभी नये सूरज का मुख देखने नहीं दिया होता।

भाट उसकी प्रशंसा के गीत गायें, ऐसी कोई लालसा बलराम के मन में नहीं थी। फिर भी वह ज़ालिम सिंह की बातों के प्रवाह में बह गया।

ज़ालिम सिंह ने उठ कर खूंटी से राइफल उतारी, जिस पर खाकी कपड़े का चिकना मैला गिलाफ था। गिलाफ

उतार कर उसने ठाकुर सिंह की राइफल एक रस्मी अंदाज़ के साथ बलराम सिंह को पेश की, जैसे वह उसे सिरोपाव दे रहा हो।

फिर कहीं से कोई बारिश की बूंद बलराम सिंह के हाथ पर गिरी और सब कुछ चौपट कर गयी। अब उसे अगली रात तक प्रतीक्षा करनी पड़ेगी। अनिद्रा में सारी रात बिस्तरे पर करवट बदलते वह बदले की अपनी हवस को हवा देता रहा। यह रात उसे असमान्य लगती थी। पल भर भी उसकी पलक से पलक न जुड़ी। अचानक दूर से सुनायी देती बादलों की गरज से वह अपने विचारों में से चौंका। क्या सचमुच बारिश बरसने लगी थी? पिछले आठ महीने से जैसलमेर ज़िला पानी की एक बूंद के लिए तरस रहा था। बादल-रहित दिन निकलते थे और डूब जाते थे और नंगे आकाश से जलता हुआ सूरज हर चीज़ पर आग बरसाता था। कुंडिये गांव के निवासियों के मुख पर मुर्दनी छा गयी थी। अब वह केवल मौत की प्रतीक्षा में जी रहे थे। सुबह से सांझ तक अपनी आंखें सिकोड़ कर वह आकाश को देखते रहते, पर कभी किसी बादल के टुकड़े की झलक न पड़ी। आकाश किसी बांझ स्त्री के मुख जैसा उदास था। बरसती आग तले ज़िंदगी के रंग फीके पड़ते गये। घास पर ओस पड़ने से हट गयी। खेतों की हरियाली तांबे के रंग जैसी हो गयी और खुशियों का मुख राख से आच्छादित हो गया।

केवल सूरज ही नहीं, सारा आकाश आग बरसाने लगा था। यह देख कर धरती की छाती फटने लगी। खेत तो एक ओर रहे, सूखे मारे तलैयों में भी दरारें पड़ गयीं।

बादलों की गरज सुन कर बलराम सिंह चारपाई से उठा। खिड़की खोल कर उसने बाहर झांका। तड़का हो रहा था। क्षितिज के पास एक बदली एक गहरी नीली रेखा की तरह आकाश पर उभरती आ रही थी। फिर वह झुलसा हुआ रेगिस्तान सांस रोक कर जैसे उस रेखा की प्रतीक्षा कर रहा था। फिर वह रेखा फैलने लगी। फैलती-फैलती आधे आकाश पर छा गयी। फिर एक शोले की लपक उसे दो भागों में चीर गयी। गरज से सोया हुआ मरुस्थल जाग उठा। झुलसे हुए वृक्षों ने सुख की सांस ली। घर के दरवाज़े खटाक से खुले और गांव के निवासी आती बरखा के स्वागत के लिए गली में एकत्र हो गये।

सूरज की टिकिया क्षितिज पर उत्पन्न हुई। बादल छम-छम बरस पड़े। पहली बूंदों के स्पर्श से धरती का रोम-रोम झनझना उठा। गेहूं की अधमरी बालियां गरदन उठा कर गीत गाने लगीं। फिर मूसलधार बारिश की चमकीली चादरें एक क्षितिज से दूसरे क्षितिज तक तन गयीं।

टोलियों में खड़े गांव के निवासी बारिश की बूंदों का अनूठा राग सुन रहे थे। हर कोई खुश था। हर कोई उन्मादित था। किसी ने बारिश की तेज़ बौछार से बचने के लिए शरण नहीं ढूंढ़ी। बच्चे, बूढ़े, जवान, स्त्रियां, और मर्द इस बौछार को अपने चेहरों पर झेल रहे थे। पूरे आठ महीने वह इसकी प्रतीक्षा करते रहे थे। आज वह इस बौछार में हड्डियों के गूदे तक भीगना चाहते थे। उनके चेहरों पर एक अनोखा निखार, उनकी आंखों में एक अनोखी चमक थी। सूरज की टिकिया अब क्षितिज से ऊंची उठ आयी थी। बादल चांदनी-रंग के होने लगे।

खिड़की के पास खड़ा बलराम बारिश की तेज़ बौछार में अपने बालों को, अपनी गरदन को भिगोता रहा। फिर उसके अंदर भी आवेग आया और घर से निकल कर वह नाचती, गलबहियां डालती भीड़ में आ शामिल हुआ। पहले हल्ले ही उसने अपने पास खड़े एक जवान को भींच कर गलबहियां डाल लीं। उसने उस जवान की पीठ देखी थी। मुख नहीं देखा था। वह नहीं जानता था, कि वह कौन था, पर आज खुशियों का दिन था। हर कोई हर किसी को गले लगा रहा था। कोई किसी के लिए बेगाना नहीं था।

पर जब उस जवान ने मुंह घुमा कर बलराम की ओर देखा, तो बलराम के चेहरे से जैसे खून की अंतिम बूंद निचुड़ गयी। उसकी आंखों में एक ठंडी फौलादी चमक आ गयी, पर अगले ही क्षण चंदन सिंह के साथ डाली इस संयोगवश गलबहियों की गरिमा उसके रोम-रोम में जाग उठी। उसके खून में जैसे एक साज-सा बजा। उसे हैरानी हुई कि खानदानी शत्रु के साथ डाली गलबहियां उसे बिलकुल घिनौनी नहीं लगी थीं।

चंदन का पीला और संवेदनशील चेहरा डर से बिलकुल सफेद हो गया था। यह देख कर बलराम के दिल में एक नयी भावना की ओस फूट पड़ी। नहीं, वह उस नौजवान को बिलकुल नफरत नहीं कर सकता था। उस पीढ़ियों पुरानी खानदानी नफरत की जलन तो जैसे आज की बारिश में धुल गयी थी और उसकी जगह नरम-नरम प्यार की कोंपलें फूट पड़ी थीं। बीती रात के खूनी इरादों की याद बलराम की आत्मा और उसकी ज़मीर को लज्जित कर रही थी।

सहसा बलराम की नजरें भीड़ में खड़े ज़ालिम सिंह की नज़रों से टकरायीं। ज़ालिम सिंह का क्रुद्ध चेहरा उसे भट्ठी में तप रहे इस्पात की तरह लगा। जैसे ज़ालिम सिंह को दिखाने के लिए बलराम ने एक बार फिर चंदन को अपनी गरिमापूर्ण गलबहियों में भींच लिया।

(अनुवाद : सुरजीत)

जिजीविषा

□ पुष्कर द्विवेदी

ट्रैक्टर चालक एडी रोबिन्सन अपनी १८ हजार किलो की वज़नी गाड़ी को लेकर राजमार्ग पर चला जा रहा था। १२ फरवरी १८७१ के सवेरे की बात है – सामने से आती हुई एक कार फिसली और सड़क पर लुढ़क गई। ऐडी ने ट्रक को रोका भी और बचाया भी, पर बैलेंस सधा नहीं। वह पुल के जंगलों को तोड़ता हुआ बारह मीटर नीचे गिरा और गटरों में फंस गया।

उसका सिर बुरी तरह फट गया। खून की धारा बह चली। मांस लटक गया तो भी वह घबराया नहीं, किसी प्रकार अपने को सम्हाला और निकाला। पंजों के सहारे रेंगता हुआ बाहर आया और पास के अस्पताल में पहुंचा। डॉक्टरों ने अधिक ध्यान न दिया, केवल पट्टी बांध कर उसे घर भेज दिया। उसके सिर में असह्य दर्द हो रहा था, मगर वह हिम्मत करके चुप रहा।

अस्पताल फिर गया और जब उसकी जांच हुई तो पता चला उसकी पसलियां टूट गई हैं। खोपड़ी और कूल्हे की हड्डियों में भी भारी टूट-फूट थी। इलाज के बावजूद उसका स्वास्थ्य काफी गिर गया। वह घर लौट आया। मस्तिष्क की गहराई में आघात थे। धीरे-धीरे वह अंधा हो गया। अब वह कुछ भी करने लायक नहीं था।

एडी ने सोचा – उसे अंधों के स्कूल में भर्ती हो जाना चाहिए। वह उत्साह के साथ स्कूल जाने लगा। उसने स्पर्श-लिपि सीख ली और पढ़ने-लिखने लगा। लेकिन, इसी बीच एक नई मुसीबत खड़ी हो गई, उसके दाहिने हाथ ने जवाब दे दिया। उसे लकवा मार गया था। बात यहीं समाप्त नहीं हुई, उसके कान भी बहरे हो गये। तब उसने एक कान में सुनने वाली मशीन लगवाई। वह बुरी हालत में फंस गया था, लेकिन

हताशा का नामोनिशान उसके पास नहीं था। कुशलक्षेत्र पूछने वालों से सिर्फ इतना कहता – 'ईश्वर को धन्यवाद है, संसार में अनेक संकटग्रस्तों की अपेक्षा अभी भी मैं अच्छा हूं।'

'एडी' का स्वभाव काम में लगे रहने का था। वह बेकार नहीं बैठ सकता था। सो वह पत्नी के घरेलू काम-काज में हाथ बटाने लगा। इससे पत्नी का समय बचने लगा तो उसने कुछ कमाने की जुगाड़ बिठाई। उसके सामने पार्क जैसा मैदान था सो वह उसमें से घास काटने का काम करने लगी। फिर मकानों की खपरैलें ठीक करने लगी।

उधर 'एडी' तनहाई से बचने के लिए चिड़ियों की आवाज नकल करने लगा। धीरे-धीरे उसका अभ्यास अद्‌भुत रंग लाया। जब वह बोलता तो पक्षियों के झुंड उसके आसपास घिर आते। उसे एक अच्छा मनोरंजन मिल गया था। अब एडी खुश रहने लगा था।

एक दिन उसके निवास के पास मुर्गियों से लदा ट्रक उलट गया। उसकी एक घायल मुर्गी एडी के घर में घुस आई। टांगें कट जाने पर भी वह कुछ दिन में अच्छी हो गई। बिना पैरों के भी किस तरह चला जा सकता है? जब एडी ने उसे चलना सिखाया तो वह चलने लगी। मुर्गी और एडी रोविन्सन में अब गहरी दोस्ती हो गई थी। एडी ने मुर्गी का नाम 'टुकटुक' रख लिया था।

४ जून १९८० की बात है। शाम होते-होते घटायें उठीं और वर्षा होने लगी। मुर्गी को आसपास न पाकर एडी आशंकाओं से भर गया और वह उसे तलाशने घर से निकल पड़ा। 'टुकटुक' की आवाज लगा कर उसे खोजने लगा। एडी इस दौरान बुरी तरह भीग गया।

अचानक आसमान से बिजली गिरी और दिल दहलाने वाली भयंकर गर्जना हुई। चौंधियाने वाले प्रकाश से सारा क्षेत्र भर गया। रोविन्सन को भयानक झटका लगा। वह धड़ाम से गिरा और बेहोश हो गया। जब आधा घंटे बाद उसे होश आया तो प्यास से उसका गला सूखा जा रहा था। उसका सारा बदन कांप रहा था। पड़ोसी का घर सामने था, वह उसी में घुस गया। वहां उसने कई गिलास पानी पिया। पड़ोसियों ने एडी को घर पहुंचाया।

सबसे ज्यादा आश्चर्य की बात यह थी कि उसकी नेत्र ज्योति लौट आई थी। सामने दीवार पर लगे पोस्टरों को वह पढ़ कर सुनाने लगा। पत्नी ने घड़ी से समय बताने को कहा तो उसने चटपट घड़ी देखकर ठीक समय बता दिया।

उसके कान की मशीन भी आपाधापी में कहीं गिर गई थी। पर अब वह बिना मशीन के सुन रहा था। पत्नी से सामान्य काल की तरह वार्तालाप करते हुए उसकी प्रसन्नता का ठिकाना न रहा। लंगड़ा कर चलने में मदद करने वाली छड़ी की भी

अब उसे जरूरत नहीं रह गई थी।

दूसरे दिन रविवार था, वह गिरजाघर अपनी पत्नी को लेकर बिना किसी की सहायता के पहुंचा। लोगों ने जब उसे सामान्य स्थिति में देखा तो चकित रह गये।

उसके इस कायाकल्प की चर्चा दूर-दूर तक पहुंची। टीवी वालों ने उसका विशेष साक्षात्कार प्रसारित किया। विवरण सुनाते हुए एडी रोविन्सन ने कहा — 'मुसीबत के दिनों में मैंने उतना जाना था जितना कि पिछली पूरी जिन्दगी में भी नहीं सीख पाया था। मैंने कभी भी हिम्मत और उम्मीद नहीं छोड़ी।'

एडी की यह घटना मानव की अपराजेय सामर्थ्य, उसकी संकल्प-शक्ति और जिजीविषा का ही सत्यापन करती है। यह सिद्ध करती है कि कोई भी व्यक्ति प्रतिकूलताओं से जूझ कर परिस्थितियों को अपने अनुकूल बना सकता हैं।

— कल्पनानगर, सिविल लाइंस, इटावा - २०६ ००१, उ.प्र.

□

इलाज के बदले काम

अफ़सोस

□ शैलेन्द्र चौहान

किसी फ्रेंच लेखिका की कहानी पढ़ी थी 'ट्यूशन'। अध्यापिका महीने की अंतिम तारीख को जब पैसे मांगती है तो उसमें से चाय, नाश्ता, क्रॉकरी और उसके अनुपस्थित रहने के दिनों के पैसे काट कर करीब ठहराई गयी राशि का चालीस प्रतिशत उसे दिया जाता है। अध्यापिका मजबूर होती है। कुछ कह नहीं पाती। लौटते वक्त सोचती है -- जो बैंलेन्स उसने बनाया था उसका क्या होगा? दरअसल ट्यूशन करना इतना वाहियात काम है ये मुझे मालूम नहीं था। जब स्कूल में पढ़ा करता था बहुत से लड़के अध्यापकों के यहां ट्यूशन से पढ़ने जाया करते थे। वे हर माह बंधी-बंधाई राशि अध्यापक को दे देते थे। कभी-कभी ऐसा भी होता था कि किसी के पिता को पहली तारीख को तनख्वाह नहीं मिलती थी तो दो-चार दिन देर से पैसे लेकर आता था।

उन दिनों मैं बहुत कड़की में था, ग्रेज्युऐशन के अंतिम वर्ष में पास नहीं हो पा रहा था। वैसे मैं कॉलेज का रेग्यूलर विद्यार्थी नहीं था। हर वर्ष 'एक्स' होकर परीक्षा में बैठता था। लेकिन मेरे खाने-पीने, रहने-सहने के लिए जिस खर्च की आवश्यकता होती थी उसे देते समय पिताजी मेरी नाकारगी पर पूरा-पूरा एक व्याख्यान दे डालते थे। मुझे हर संभव ढंग से जलील करते थे और फिर जिस तरह एक मालिक गुलाम पर अहसान करता है उसे दो जून रोटी देता है, उस मुद्रा में कम से कम खर्च मुझे उनसे मिलता था। इस दौरान मुझे जिस प्रक्रिया से गुजरना पड़ता था उससे मेरी मानसिक अस्थिरता बेहद बढ़ जाती थी। मुझमें एक अपराधबोध जागृत हो जाता था। और अपने दूसरे साथियों के मुकाबले में, जो अब तक नौकरी पा गये थे, मैं अपने आप को हीन समझने लगता था। पिताजी पर जितनी मुझे झुंझलाहट होती थी, उससे कहीं अधिक रहम आता था। उनके झुर्री पड़े विकृत चेहरे पर एक अजीब-सी बेचारगी झांकती थी। वे प्रायमरी स्कूल के शिक्षक थे और पूरे घर का दाना-पानी उनकी तनख्वाह और
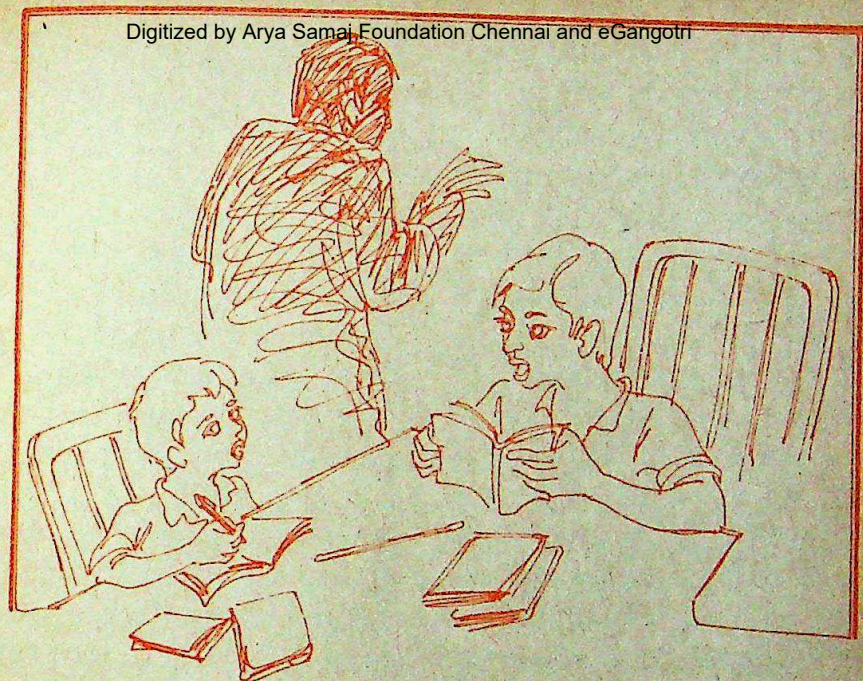
ट्यूशन से आये पैसों पर ही चलता था। उनके व्यंग्य वाक्य मुझे चुभते जरूर थे और मैं संवेदनशील होने के नाते बहुत असंतुलित भी हो जाता था। मैं अपने आप को बहुत कमजोर महसूस करने लगता था। परिस्थितियों से समझौता करने को विवश हो जाता था।

सप्लीमेन्ट्री परीक्षायें उन दिनों गर्मी की छुट्टियों के बाद होने वाली थीं। मुझे परीक्षा में बैठना था। मेरे साथ समस्यायें ये थीं कि गांव पर रह कर बिजली न होने की वजह से बेपनाह गर्मी और अंधियारी रात में पढ़ाई न कर पाने की मजबूरी से पढ़ाई हो पाना संभव नहीं था। गांव में रह कर मिट्टी का तेल भी पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध नहीं हो पाता था। पिताजी की भी छुट्टियां थीं। वह भी गांव पर ही थे, उनकी उपस्थिति भी वहां अखरती थी। उनके चिड़चिड़े स्वभाव से मैं हमेशा परेशान रहता था और गांव पर गेहूं पिसाने से लेकर भैंस को चारा डालने तक का काम मुझे सौंपा जा सकता था। जिससे मुझे सख्त नाराजगी थी, अतः लड़-झगड़ कर मैं शहर चला आया।

शहर रहने पर खर्चा काफी पड़ता था। पिताजी ने किराये के अतिरिक्त पचास-साठ रुपये और दिये थे। मैं भी घर के उस तनाव भरे माहौल से छुट्टी

पाकर सन्तुष्ट था। एक मित्र ने मुझे आश्वासन दिया था कि इस बीच वह मुझे दो-तीन ट्यूशनें दिलवा देगा या फिर कहीं नौकरी की वैकल्पिक व्यवस्था करा देगा। बहुत संभव है इस तरह रोज-रोज की चख-चख से दूर मेरी पढ़ाई हो जाये और मैं अब की बार परीक्षा में पास ही हो जाऊं।

ट्यूशन की बजाय नौकरी करना मुझे अधिक अच्छा लग रहा था। ट्यूशन मैं नहीं करना चाहता था, विद्या का व्यापार मुझे खल रहा था और मेरे दिमाग में ट्यूशन पढ़ाने वाले की इमेज भी किसी बनिये के नौकर से अधिक नहीं थी। बहुत कोशिश करने पर भी नौकरी तो नहीं मिली लेकिन दसवीं कक्षा के एक लड़के की ट्यूशन का इंतजाम मेरे मित्र ने कर दिया। उस लड़के की गणित और भौतिक शास्त्र में सप्लीमेन्ट्री आयी थी। पहले तो ट्यूशन पढ़ाने के लिए मैंने आनाकानी की। मेरा अभिजात मन इसके लिए राजी नहीं हो पा रहा था। लेकिन उस मित्र ने बहुत से सीनियर प्रतिभाशाली छात्रों की मिसालें पेश कीं जो आज अच्छे ओहदों पर हैं, किंतु शुरू में वे भी ट्यूशन के बल पर जिंदा थे। उसने इस बात का भी विश्वास मुझे दिलाया कि पैसे एडवांस मिल जायेंगे। और लोग सज्जन हैं तुमसे गलत व्यवहार नहीं करेंगे। जितने पैसे मैं लाया था सब खत्म हो चुके थे, अतः कोई चारा नहीं था। मैंने ट्यूशन पर जाना प्रारंभ कर दिया।

पहले दिन मेरा भीना-भीना सत्कार हुआ। चाय आयी। जब मैंने चाय पीने से मना किया तो शर्बत लाया गया और फिर रोज की यही दिनचर्या हो गयी। मैंने एकाध बार मना भी किया, लेकिन लोगों ने इस बात पर कोई ध्यान नहीं दिया। मैं जैसे ही पढ़ाने पहुंचता शर्बत मेरी टेबिल पर हाजिर कर दिया जाता। मुझे लगा कि ट्यूशन के बारे में जो बातें लोग उड़ाते हैं, वे बेकार की होती हैं। लोग इस लायक ही नहीं होते होंगे कि उन्हें अच्छे व्यवहार की आशा रहे। लेकिन फिर भी कभी-कभी ये बात मन को कुरेद देती कि कुछ भी हो मैं यहां ट्यूटर हूं इससे अधिक कुछ नहीं।

धीरे-धीरे ये रूटीन मुझे अखरने लगा। किसी तरह का बंधन मुझे कतई रास नहीं आता। यहां भी मैं परेशान-सा होने लगा। मेरे पेपर नजदीक आने लगे लेकिन मैं ट्यूशन पर जाता रहा। कैसा समय था परीक्षाओं की चिंता कम मुझे कुछ पा लेने की ख्वाहिश अधिक थी। मुझमें कुछ आत्म विश्वास भी जाग उठा था कि मैं कुछ कर सकता हूं। साथ ही मेरी मानसिक परेशानी भी कुछ कम हो चली थी। मेरे अभिजात्य मन को भी एक ठोस जमीन मिल रही थी, अतः पेपर देते हुए भी मैंने पढ़ाना जारी रखा।

मजाक-मजाक में एक दो बार मैंने

मित्र महोदय ने कहा कि खातिरदारी इतनी हो रही है लगता है कि ये लोग शर्बत पिला-पिला कर ही टरका देंगे। पैसे-वैसे नहीं मिलने के। फिर ट्यूशन के पैसे मैंने नहीं ठहराये थे। मित्र महोदय कहां तो एडवांस दिलाने की बात करते थे अब तो वे खामोश थे। मेरी परीक्षायें खत्म हो चुकी थीं साथ ही मेरे पास जो पैसा था वह भी खत्म हो चुका था। यहां तक कि कुछ दिन रह कर खाना खाने लायक पैसे भी मेरे पास नहीं बचे थे। ऊपर से पचास रुपये की उधारी हो चुकी थी। अतः अब वहां रहना दुश्वार मालूम पड़ने लगा था। वहां से पैसे मिलने की कोई उम्मीद नहीं थी और मैं ठहरा बेहद संकोची, मांग भी नहीं सकता था। उन लोगों का व्यवहार मेरा मुंह बंद किये हुए था। नौकरी का कोई बंदोबस्त हो नहीं पा रहा था, अतः मैंने गावं जाना ही उचित समझा। उधार लिये हुए पचास रुपयों में से मैंने घर तक का किराया अलग रख लिया। मेरा मन टूट गया था। मैं घर से ये सोच कर आया था कि अब घर तब तक नहीं पहुंचूंगा जब तक कमाने लायक नहीं हो जाता। फिर भी सब कुछ देख सोच कर मैं घर चला गया।

मैं घर पहुंच तो गया लेकिन इस बार घर रहना बेहद त्रासदायी था। पिताजी ने जाते ही ताना दिया — 'क्यों तुम तो लौट आये? यहां से तो बड़े अकड़ कर गये थे?' मैं चुपचाप जहर के घूंट पीकर रह गया। जैसे-तैसे दिन कट रहे थे। मुझे अभी कुछ ऐपर और देने थे जो एकाध महीने बाद होने थे। मैं फिर शहर लौट आया। फिर नौकरी तलाशी रोजनदारी पर ही कहीं मिल जाये। नौकरी नहीं मिली, उल्टे मुझे एक इंजिनियर ने समझाया ऐसे आदमी की डिगनिटी फॉल होती है। कुछ दिनों बाद जब पास हो जाओगे अपने आप अच्छी नौकरी मिल जायेगी। यहां तुम अपने आप को बेहद हीन महसूस करोंगे। झक मार कर मैं अपने उन्हीं मित्र महोदय के पास फिर गया। ट्यूशन फिर शुरू हो गयी। लेकिन अब की एक अहसान के साथ। लड़का सप्लीमेन्ट्री में पास हो चुका था। अगली कक्षा में फिलहाल ट्यूशन की आवश्यकता नहीं थी। फिर भी कुछ लिहाज पहले का देखा और मैं ट्यूशन पर जाने लगा। ठीक एक महीने बाद पचास रुपये का नोट मुझे थमा दिया गया। पैसे कम थे लेकिन मैंने कुछ कहा नहीं। ऊपर का खर्च चल जाये यही क्या कम है? लेकिन अब वहां रोज जाने से कतराने लगा। बीच में एकाध दिन की तड़ी मार देता। इस बात को लोगों ने मार्क किया। उसका अपेक्षित परिणाम हुआ। मुझे स्पष्टतः तो मना नहीं किया लेकिन मेरा विद्यार्थी कुछ अजीब से प्रश्न पूछने लगा। बेवजह ही हंसने लगा और अधिकतर पढ़ने के समय बाहर रहने लगा।

मैं सब कुछ [illegible] रहा था । अब मैंने ट्यूशन बंद करने का फैसला कर लिया । परीक्षायें भी करीब थीं अब की बार तो पास होना ही था । अतः पढ़ाई भी ठीक ढंग से करनी थी । मैंने यह मित्र महोदय को बता दिया कि अब वहां पढ़ा पाना मुश्किल है । मेरे बचे हुए पैसे दिला दो । उन्होंने पैसे दिलाने का आश्वासन दिया । मित्र महोदय को भी परीक्षायें देनी थीं । मेरी जेब के पैसे खर्च हो चुके थे । परन्तु ट्यूशन के मिले पचास रुपयों में से मैंने तीस रुपये उन्हें दे दिये । दोस्ती में आखिर इतना तो करना ही पड़ता है । उन्होंने मेरे पूरे पैसे लौटाने का प्रामिस किया, परीक्षायें शुरू हुईं, खत्म भी हो गयीं । मेरा घर वापस लौटने का प्रोग्राम तय हो गया । उन्होंने न तो बचे हुए ट्यूशन के पैसे दिलवाये न ही उधार लिये हुए पैसे दिये । मुझे बड़ी कौफ्त हो रही थीं आखिर को मैंने ट्यूशन के ये पैसे लिये थी ? बेकार में नाम हुआ ट्यूशन करने का । मैंने मित्र से कहा ये पैसे वापस लौटा दो । बाकी बीस रुपये भी तुम मुझसे ले लो । इतने दिन जब पिताजी का ही खाया-पिया तो कुछ दिन और सही । लेकिन उन्होंने मुझसे कहा कि ये रुपये पास रखो । निराश मत होओ, पैसे मैं तुम्हें मनीआर्डर से भिजवा दूंगा ।

इस बात को गुजरे हुए एक अरसा हो गया है । मुझे इस बात का कतई अफसोस नहीं है कि मुझे पूरे पैसे नहीं मिले, अफसोस बस इतना है कि मैं एक मित्र खो बैठा । असल में एक नौकरी जो मैं अपने लिए तलाश रहा था मेरी अपुपस्थिति में वह येनकेन प्रकारेण मेरे परम प्रिय मित्र ने हथिया ली एवं ट्यूशन के बचे हुए पैसों से शायद उन्होंने एक बार और परीक्षा फीस भर दी ।

— ७२-बी, देवीपथ, तख्तेशाही रोड, जयपुर - ३०२ ००४.

□

दुनिया के अच्छे-से-अच्छे डॉक्टरों से इलाज करवाने के बावजूद श्री घनश्याम दासजी बिड़ला के स्वास्थ्य में सुधार नहीं हुआ । उनके रोग का कारण पूरी तरह किसी की समझ में नहीं आया । गांधीजी ने उन्हें सेवाग्राम में बुलवाया । उनके शरीर का परीक्षण और निरीक्षण बड़ी बारीकी से किया । उनके खाने-पीने की पूरी नाप-तौल और जांच की । बिड़लाजी आहार में संयमी थे । फिर भी वह क्या खाते हैं, कौन-सी चीज उन्हें पचती है, उसकी पूरी विगत में वह उतरे और इस नतीजे पर पहुंचे कि उनके शरीर में वर्षों से प्रोटीन की कमी हो जाने के कारण शारीरिक विकार उत्पन्न हुआ है । खूराक में प्रोटीन और स्निग्धता अधिक मात्रा में बढ़ा देने से उनके स्वास्थ्य को पूरा लाभ हो गया ।

— डॉ. गोपाल प्रसाद 'वंशी'

जयशंकर 'प्रसाद' की सौवीं जयन्ती पर

उसकी स्मृति को शत वन्दन

मानव के मंगलमय युग की मधुमय बेला
धन्य हो गयी काशी में जिसके उद्भव से;
तमस्फाणु को कर विदीर्ण उस ज्योतिपुंज ने
आलोकित कर दिया देश के पुरावृत्त को ।

* * *

वाल्मीकि, कवि व्यास-संबलित निगमागम को,
कालिदास, भवभूति, भास औ बाणभट्ट की —
वाणी को, जिस तपःपूत रससिद्ध कृती ने
गौरव दिया रुचिर रूपों की रचनाओं में

* * *

हिंदी का मुकुलित सरसिज जिसकी आभा से
हुआ सौरभित-विकसित-रंजित शत-शत दल में
जिसकी गरिमा, सुरभि, चारुता, नित नूतनता
अमर रहेंगी श्रीदेवी के स्निग्ध हास-सी ।

* * *

जयशंकर का घोष राष्ट्र का विजयगान था,
नादित हुईं दिशाएं जिससे नवभारत की;
संस्कृति की गरिमा लौटायी जिस विभूति ने
उस महिमामय की पुनीत स्मृति को शत वन्दन ।

—कृष्णदत्त वाजपेयी
-एच १५, पद्माकर नगर, सागर, म.प्र.

नार्वे की लोककथा

लड़की माचिसवाली

□ एच. सी. अन्दर्सन
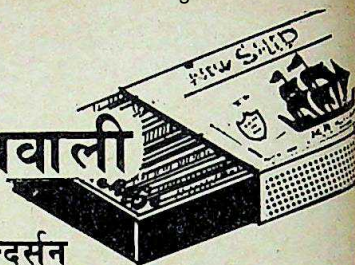
बाहर बहुत सर्दी पड़ रही थी। बरफ गिर रही थी। अंधियारा होना आरम्भ हो गया था। नववर्ष की पूर्व सन्ध्या थी। इस भीषण सर्दी और अंधेरे में एक लड़की जा रही थी। वह लड़की नंगे पांवों और नंगे सिर थी। वह चप्पलें पहन कर चली थी, पर वह चप्पल उसके पांवों के हिसाब से बहुत बड़ी थी। इतनी बड़ी थी चप्पलें कि उसकी मां उन्हें मरने के कुछ दिन पहले तक पहनती थी। जब वह सड़क पार कर रही थी तो एक चप्पल उसके पांव से उतर गयी। जब वह चप्पल ढूंढ़ने लगी तो पहली चप्पल तो उसे मिल गयी। परन्तु दूसरी चप्पल जो उसने उतार कर रख दी थी उसे एक लड़का लेकर भाग गया।

वह अब नंगे पांवों जा रही थी। उसके पांव ठंडक के कारण लाल हो गये थे। उसकी जेबों में बहुत-सी माचिस की तीलियां पड़ी हुई थीं। उसने अपने हाथ में एक छोटी-सी गठरी पकड़ रखी थी। गठरी में बहुत-सी माचिसें थीं। आज तो उससे किसी ने भी माचिस नहीं खरीदी थी। आज उसे किसी ने एक पैसा भी नहीं दिया था। भूख और ठंडक से कांपती हुई दु:खी लड़की चली जा रही थी। उसकी इच्छा थी कि कोई आये और उससे माचिस खरीदे और उसे कुछ पैसे दे जाये। बहुत-सी बरफ उसके रेशमी, घुंघराले, सुनहरे बालों पर पड़ रही थी। हर खिड़की से प्रकाश दिखाई दे रहा था।

एक स्थान पर दो घरों की दीवारों के मध्य छोटी-सी जगह थी। वहां जाकर वह लड़की अपने आप को सिकोड़ कर बैठ गयी। उसने अपनी फ्राक से अपने पैर छिपा लिये थे। फिर भी उसे ठंडक लग रही थी। घर वापस जाने की उसकी हिम्मत न पड़ रही थी। क्योंकि आज उसने एक भी माचिस नहीं बेची थी। एक भी पैसा उसके पास नहीं था। उसे मालूम था खाली हाथ वापस लौटने का मतलब था मार। उसके घर पर भी इतनी गर्मी नहीं थी। घर पर जगह-जगह पर सूराख थे जिससे सर्द हवा आ जाती थी।

उसके हाथ सर्दी के कारण लाल और

नीले हो गये थे। 'ओह' लड़की ने सोचा 'अगर माचिस की तीली जलाने की हिम्मत करूं तो मैं अपने आप को थोड़ा गर्म कर सकती हूं। माचिस की तीली निकालूं और उसे दीवार पर रगडूं और माचिस की तीली देर तक जले।'

लड़की ने माचिस निकाली और दीवार से लगाकर रगड़ी।

'च-चस-स' करके माचिस जल गयी। उसने अपने दूसरे हाथ से तीली को ढक लिया ताकि तीली देर तक जलती रहे। उसे ऐसा लग रहा था कि वह एक अंगीठी के पास बैठी है।

वह अपने हाथ सेक रही थी। जैसे ही उसने पैर सेकने के लिए आगे बढ़ाये, अचानक उसके सामने सभी कुछ ओझल हो गया। उसके हाथ में खाली (जली) माचिस थी।

काश यह माचिस किसी ने खरीदी होती तो शायद उसकी भूख कम हो जाती। उसने एक नई माचिस की तीली ली और धीरे से जला दी। यह क्या? उसके सामने सभी कुछ बदला हुआ था। उसके सामने एक मेज थी जो बहुत अच्छी तरह सजी हुई थी। उस मेज पर तरह-तरह के पकवान रखे हुए थे। अचानक कुछ पकवान उसकी ओर उड़कर आने लगे। जैसे ही उसने उनमें से एक पकवान को छूना चाहा वैसे ही माचिस की तीली बुझ गयी। वह पुनः पुरानी जगह आ गयी थी।

उसने एक माचिस की तीली और जलाई। यह क्या है? 'यह कभी सच नहीं हो सकता' लड़की बुदबुदाई। उसके सामने उसकी मरी हुई नानी खड़ी हुई थी। 'नानी, ओ नानी! तुम कहीं मत जाना। मुझे भी अपने साथ ले चलो। मुझे पता है कि तुम माचिस के बुझते ही गायब हो जाओगी।' लड़की ने कहा और उसने एक-एक करके सभी माचिसें जलानी आरम्भ कर दीं। फिर उसकी नानी ने उसे गोद में उठाया और दोनों बहुत दूर तक उड़ते चले गये। जब दूसरे दिन सबेरा हुआ तो वहां कोने पर लड़की बैठी हुई थी। उसकी आंखें बन्द थीं। चेहरे पर हल्की मुस्कान थी। चारों तरफ जली माचिस की तीलियां पड़ी हुई थीं। अब लड़की मर चुकी थी। जो कोई भी उसे देखता तो यह कहता कि बेचारी ठंडक के कारण मर गयी होगी। किसी को नहीं पता था कि क्या हुआ था!

[रूपांतर : सुरेशचंद्र शुक्ल]

लोकल ट्रेन में यात्रा

□ सीमा चटर्जी

दशहरे के अवसर पर मेरी बड़ी बहन, जीजाजी तथा उनकी बारह वर्षीय बेटी सुरंजना कलकत्ते से बम्बई आये। वे लोग बम्बई में दो दिन रहकर गोवा जाने वाले थे। अतः दीदी ने मुझसे कहा— 'सीमा, हम आज सुरंजना को गेटवे ऑफ इंडिया दिखाना चाहते हैं। पिछली बार जब देखा था तब तो वो बहुत छोटी थी।'

मैंने कहा, 'ठीक है। हम लोग एक टैक्सी कर लेते हैं, और नहीं तो फिर साइट-सीन के लिए बस का टिकट मंगवा लेते हैं। फिर एक साथ कई जगह एक ही दिन में देख लेना।'

दीदी ने कहा— 'नहीं....नहीं.... इस बार टैक्सी या बस में नहीं। मैं तो बम्बई की लोकल ट्रेन से यात्रा करना चाहती हूं। पिछली बार भी हम टैक्सी से घूमे थे।

हम लोगों ने कलकत्ते में सुना है— बम्बई में लोगों को लोकल ट्रेन से चढ़ना-उतरना नहीं पड़ता है। लोग अपने आप ही भीड़ में चढ़ा दिये या उतार दिये जाते हैं।'

मैंने कहा- 'ठीक है, आप तैयार हो जाइये। फिर हम चलते हैं। लेकिन दीदी, रवाना होने से पहले आप प्लीज अपनी ये सोने की चैन घर पर ही उतार कर जाना। चाहे तो मैं आपको नकली हार देती हूं। कहीं ऐसा न हो जाये कि कोई भीड़ में सोने की चैन खींच ले।'

खैर, हम रवाना हुए टिकट की लाइन में बीस मिनट तक जीजाजी खड़े रहे। फिर टिकट खरीदकर जल्दी से लाइन के बाहर आ गये। हिसाब करने के बाद उन्हें पता चला कि माटुंगा रोड से चर्चगेट तक चार रिटर्न टिकट के १६ रुपये की जगह २० रुपये देकर आ गये हैं। जीजाजी को यह नहीं पता था कि बम्बई में जब लोकल ट्रेन का टिकट खरीदा जाता है तो टिकट देने के बाद बकाया रुपया देने में दो मिनट का अन्तर रहता है। जो नये लोग होते हैं वे समझते हैं कि शायद इतने रुपये का ही टिकट है। या जल्दबाजी के कारण बोर्ड पर लिखे किराये को पढ़ना वे अनुचित समझते हैं।

खैर, हम स्टेशन के अन्दर तक पहुंचने के लिए ब्रिज पर चढ़ने लगे। पीछे से एक

व्यक्ति 'मच्छी पानी, मच्छी पानी' चिल्लाता हुआ आ रहा था। दीदी डर के मारे एक किनारे खड़ी हो गयीं। फिर मुझसे पूछने लगीं– 'सीमा, ये मच्छी पानी मच्छी पानी चिल्ला रहा था, किन्तु उसके सिर पर तो सब्जी की टोकरी है!'

मैंने कहा– 'अगर वो सब्जी की टोकरी, सब्जी की टोकरी चिल्लाता तो क्या आप किनारे हटतीं? उसे आगे बढ़ने के लिए रास्ता खाली कर देतीं?'

सुरंजना ने कहा– 'मौसी, यहां के कुली भी कितने बुद्धिमान हैं। अरे बाप रे बाप! मैं तो माटुंगा रोड में ही घबरा रही हूं पता नहीं चर्चगेट तक कैसे जाऊंगी?'

मैंने कहा– 'क्यों तुम लोगों को तो लोकल ट्रेन में यात्रा करनी है न! तो करो। डर क्यों रही हो?'

हम प्लैटफार्म पर पहुंचे। वहां पर बहुत भीड़ थी, तिल धरने की भी जगह नहीं थी। दीदी अपने मुटापे के कारण पसीने-पसीने हो रही थीं। हम लोगों ने कोल्ड ड्रिंक पिया। इतने में गाड़ी आ गयी। भीड़ देखकर दीदी बोलीं –हम अगली गाड़ी से जायेंगे। एक काम करते हैं। हम तीनों लेडीज कम्पार्टमेंट में जाते हैं और तुम्हारे जीजा जैन्ट्स कम्पार्टमेंट में चले जायेंगे। चर्चगेट जाकर तो ट्रेन खाली हो जाती है। वो वहीं पर उतरकर हम लोगों के पास आ जायेंगे।'

जीजाजी ने भी हां में हां मिलायी। इतने में गाड़ी आ गयी। हम सब भागते हुए दरवाजे तक पहुंचे। पीछे से भीड़ ने हमें ऐसा धक्का दिया कि हम लोग अपने आप ट्रेन में चढ़ गये। दीदी बड़ी खुश हो रही थीं। उन्हें लग रहा था जैसे बाजी मार ली है।

इतने में देखा, दीदी को एक महिला गालियां दे रही थी। दीदी कुछ भी समझ नहीं पा रही थीं, कारण वो मराठी भाषा का प्रयोग कर रही थी। उसका गाली देने का कारण यह था कि जब दीदी भीड़ में ट्रेन में अन्दर आ गयी थीं तो वह महिला दीदी के स्वास्थ्य के कारण वहीं पर अटक गयी थी, माटुंगा स्टेशन पर उतर नहीं पायी थी और ट्रेन चल दी थी।

दीदी की बिटिया – सुरंजना ने कहा– 'अरे मम्मी, देखो तुम्हारे पर्स में से चाभी लटक रही है!' पल भर के लिए दीदी को काटो तो खून नहीं। उनका हंसता-खिलखिलाता हुआ चेहरा फक्क पड़ गया। वह एकदम उदास हो गयीं। उन्होंने जैसे ही पर्स की तरफ देखा तो बम्बई के लेडीज कोच की विशेषता को देखकर ठगी-की ठगी रह गयीं। कारण उनके पर्स का चैन ऊपर से बंद था। ट्रेन में चढ़ते वक्त उस एक मिनट के समय में किसी महिला ने उनका पर्स नीचे से काट दिया था और रुपये वाला छोटा पर्स निकाल लिया था।

मैंने दीदी को साहस दिलाते हुए कहा– 'दीदी, जो हो गया, भूल जाओ। मेरे पास रुपये हैं। तुम चिंता मत करो। मैं

इसीलिए घर पर सतर्क कर रही थी।

हम किसी तरह धक्का देकर अंदर सीट तक पहुंचे। इतने में दीदी के सामने जो लड़की खड़ी थी वो कहने लगी—'आप ढंग से खड़ी नहीं हो सकती हैं क्या? पहली बार ट्रेन में चढ़ी हैं। तब से धक्का क्यों दे रही हैं?'

दीदी ने उसे जवाब दिया—'मैं धक्का थोड़े ही दे रही हूं मैं तो सांस ले रही हूं।'

मैं और सुरंजना हंस कर लोटपोट हो गये। हमें हंसते हुए देखकर कुछ और भी महिलाएं हंसने लगीं। उनमें से एक महिला अपनी आदत के मुताबिक जैसे ही ताली बजाकर हंसने लगी तो दीदी के ऊपर गिर पड़ी।

अगले स्टेशन पर एक हिजड़ा ट्रेन में पुलिस के होते हुए भी अंदर घुस आया। वह दीदी की शक्ल से भांप चुका था कि वह बम्बई निवासी नहीं हैं। वह दीदी के मुंह के सामने आकर ताली बजाकर कहने लगा—'हाय-हाय, मैं मर जाऊं तेरी खूबसूरती पर! ला—दे आज शुक्रवार है—मां संतोषी के नाम पर पांच रुपये दे। भगवान तुझे सुखी रखेगा, बेटा देगा। ला—निकाल - जल्दी निकाल।'

दीदी का मुंह गुस्से से लाल हो गया। वे बोलीं—'मेरे पास पैसा नहीं है। माटुंगा रोड में मेरा अभी पर्स कट गया है!'

वो कहने लगा—'हाय-हाय! क्यों झूठ बोलती है? जैसे ही हम लोगों को देने की बारी आती है तो तुम सब सेठ लोगों का

पर्स कट जाता है। ला-ला- निकाल—ब्लाऊज में से रुपये निकाल। जल्दी निकाल नहीं तो फिर ऐसी बददुआ दूंगी की हमेशा याद रखेगी।'

दीदी की घबराहट देख मैंने उससे पीछा छुड़ाने के लिए दो रुपये दिये। हमारी कमजोरी को देखकर पुलिसवाला मुस्करा रहा था। फिर वह हिजड़ा अगली महिला के पास गया। इस तरह सबसे जबरदस्ती रुपया मांगता रहा। स्टेशन पर उतरते वक्त दरवाजे पर खड़े पुलिसवाले की मुट्ठी को गरम करके हाथ हिलाता दूसरी ट्रेन पर चढ़ने के लिए इंतजार करने लगा।

अब एक सूरदास ट्रेन में एक हारमोनियम लेकर चढ़ा। वो गाना गाते-गाते दीदी के पास तक आ गया। और दीदी से टकराकर यह सोचकर लौट गया कि दीवार आ गयी है। सुरंजना ने दया दिखाकर अपने छोटे पर्स में से एक चवन्नी निकाली और उसकी कटोरी में डाल दी। वह कटोरी हारमोनियम पर एक कील से ठुकी हुई थी।

बम्बई सेंट्रल आकर चौथी सीट खाली हुई। दीदी से मैंने कहा– 'दीदी, जल्दी से बैठ जाइये। जगह कम होने के कारण पहले दीदी मना करती रहीं, फिर आखिर ऐसी जोर से बैठीं की तीसरी सीट पर बैठी हुई महिला डर के मारे तुरन्त खड़ी हो गयी। फिर दीदी डेढ़ सीट पर आराम से बैठीं।

अब माला, झुमके, चूड़ी तथा टिकली बेचने वाली लड़कियां, महिलाएं, लड़के सब दीदी के पास आकर माल दिखाने लगे। हर माल तीन-तीन रुपये में, जोर-जोर से बोलने लगे। दीदी ने आठ दस चीजें खरीदीं। फिर एक रूमाल वाला आया। दीदी ने जीजाजी के लिए रूमाल खरीदा। सुरंजना तथा दीदी को बाहर देखने का मौका नहीं मिल पा रहा था, कारण हर खिड़की पर महिलाएं खड़ी थीं। जिसके कारण खिड़की ढकी हुई थी, जो थोड़ी सी जगह किनारे पर थी जिससे बाहर देखा जा सकता था वो भी उनके आंचल या दुपट्टे से ढक गयी थीं। अन्दर हवा ही नहीं आ रही थी।

इतनी भीड़ तथा गर्मी में कोई सूखी मछली का पैकेट खरीद कर लायी थी अचानक भीड़ में उसका पैकेट फट गया। पूरी गाड़ी में मछलियां इधर-उधर बिखर गयीं और दुर्गन्ध फैलाती रहीं।

सुरंजना भीड़ में कभी इधर तो कभी उधर हिल रही थी। फिर भी खुश थी, कारण उसने झुमके खरीदे थे। साथ ही कलकत्ते में बम्बई के बारे में उसने जो सुना था वह अधूरा था। वह तो और भी तरह-तरह के अनुभव ले रही थी।

अब हम चर्चगेट पर उतरने के लिए मरीन लाइंस में आकर दरवाजे पर खड़े हो गये। जैसे ही गाड़ी चर्चगेट पहुंची चढ़ती हुई भीड़ ने दीदी को अन्दर ढकेल दिया। दीदी धक्का खाकर वापिस आकर सीट पर बैठ गयीं।

फिर कहने लगीं, 'सीमा, तुमने ठीक ही कहा था कि दीदी पहले भीड़ को चढ़ जाने दो तब उतरेंगे। मैंने सोचा था कि मैं बड़ी हूं, अतः मुझे जिंदगी का अनुभव अधिक है। लेकिन आज पता चला कि बड़े होने से कुछ नहीं होता हैं। अनुभव ही जीवन में इंसान को बड़ा बनाता है।'

हम धीरे-धीरे ट्रेन से उतरे। करीब पंद्रह मिनट खड़े रहे। फिर दूर से जीजाजी दिखायी दिये। वे छोटा सा मुंह बनाकर हमारे पास पहुंचे। उनका शर्ट भीड़ की खींचातानी में पैंट से बाहर निकल आया था। बाल इधर-उधर
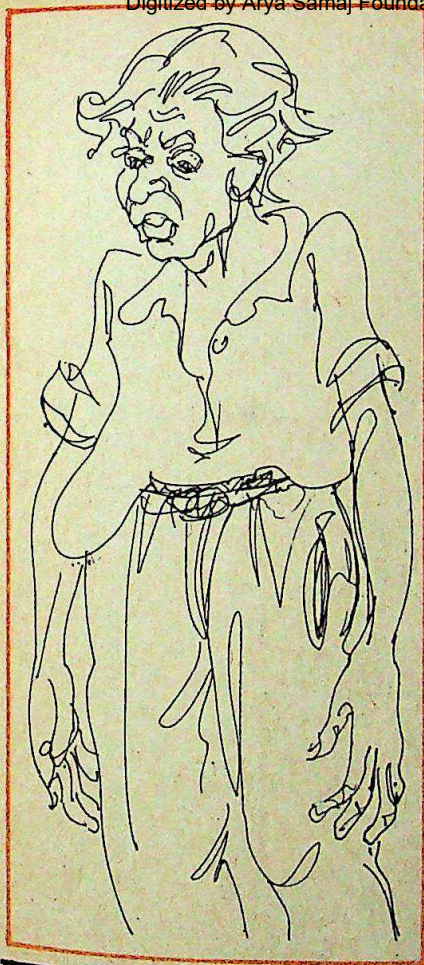
बिखरे थे। उन्होंने आते ही दीदी से पूछा—

'सुनो मनीशा, तुमने मेरे पर्स से कितने रुपये निकाले थे?'

दीदी ने कहा एक भी नहीं।

जीजाजी बोले— 'सत्यानाश हो गया। इसका मतलब हमारा गोवा का टिकट तथा रिटर्न जर्नी का टिकट और साढ़े सात सौ रुपये जो पर्स में थे वो चले गये!'

दीदी ने पूछा— 'चले गये मतलब?'

'चले गये मतलब किसी ने पाकेट मार लिया। और आओ, तुम्हें तो लोकल ट्रेन का अनुभव लेना था न ले लिया— अनुभव। आया न मजा। अब देखो बम्बई से कलकत्ता कैसे लौटोगी? — कौन देगा तुम्हें रिजर्वेशन?'

जो दूसरों के अनुभव को सुनकर नहीं चलते हैं, उनके साथ ऐसा ही होता है। मैं अवाक् होकर उन तीनों का मुंह देखती रही।

— विदेश संचार निगम, स्टाफ क्वार्टर, फ्लैट नं. ४९, मोगल लेन, माटुंगा रोड, बम्बई - ४०० ०१६.

जब बुल्गानिन और खुश्चेव भारत आये तो एक दिन पंडितजी के साथ उस समय बाहर निकले, जबकि दफ्तरों के बंद होने का समय था। अनगिनत कर्मचारी साइकिलों पर बाहर निकल रहे थे और मंत्री लोग अपनी बड़ी-बड़ी गाड़ियों पर घर जा रहे थे। खुश्चेव के प्रश्न करने पर पंडितजी ने हंसकर कहा, 'जो लोग पैदल या साइकिलों पर हैं; वह जनता हैं और जो लोग मोटरों में हैं, वे जनता के सेवक हैं।'

— डॉ. गोपालप्रसाद 'वंशी'

Endi
Endi
The Great and Graceful Fragrance
SEVEN IN ONE
MYSORE SUGANDHI
DHOOP FACTORY PVT. LTD.
13. Commercial Chambers, Yusuf Meharali Rd.,
P.O. Box 3178, Bombay 400 003.

इन्द्रधनुषों के देश में

□ डॉ. चन्द्रिका प्रसाद शर्मा

मारिशस-सतरंगिया इन्द्रधनुषों की छबीली छटा वाला देश, सतरंगिया मनोरम माटी की धरती, हजारों तरह की वनस्पतियों, और फूलों की भूमि भारतीय संस्कृति को छाती से चिपकाये हुलास भरे तन से, आनन्द भरे मन से रामायण महोत्सव में आने वाले प्रतिनिधियों के स्वागत में फूली नहीं समा रही थी।

हमारा वायुयान प्रातः ७.३० बजे मारिशस के सर शिवसागर रामगुलाम हवाई अड्डे की धरती को चूम लेता है। अगस्त की तीसरी तारीख है। हवाई अड्डे पर स्वागत के लिए उनके सरकारी-गैर सरकारी लोग खड़े हैं। धोती, कुर्ता, सदरी और केसरिया साफा बांधे मारिशास के राज-आचार्य पं. उमानाथ शास्त्री व्यवस्था देख रहे हैं। हम लोग डीलक्स कोच में बैठकर पोर्ट लुइस से काये बोर्न को चलते हैं। चौड़ी-चौड़ी समतल सड़क पर मोटर गाड़ी उड़ती हुई चली जा रही है। जिधर दृष्टि जाती है उधर हरीतिमा ही हरीतिमा दिखाई देती है। गन्ने के खेत, नारियल की पौधशालाएं, केले के खेत आम और लीची के बाग हवा में झूम रहे हैं। तभी गाड़ी चालक रेडियों का स्विच दबा देता है – 'यह मारिशस ब्राडकास्टिग है' बस, एक हिन्दी गीत शुरू हो जाता है।

चालक नवीन बताता है– 'हम मारिशस का इंडियन है। हमारा दादा का दादा बिहार से आया था। अब हम यहीं का है। यही हमारा देश है। पर भारत से हमको बहोत-बहोत प्यार है।' इतना कहकर वह गर्व से सिर और ऊंचा कर एक विशेष अदा से स्टेयरिंग घुमाने लगता है। सड़क के किनारे के खेतों में कई प्रकार की सब्जियां दिखाई दे रही हैं। बस स्पीड से चली जा रही है। एक हल्के झटके के साथ बस रुकती है। यही गोल्ड क्रेस्ट होटल है जहां राजकीय अतिथि

ठहराये जाते हैं। कमरा नं. ४०७ मेरे नाम एलाट था। होटल के कर्मचारी ने मेरा असबाब रखते हुए कहा – 'साब! मैं भी हिन्दुस्थानी है। मेरा परदादा यहां मजूर बनकर आया था। हमको इहां खूब अच्छा लगता है।'

मुझे ऐसा लगता है जैसे मैं अपने ही भारत के किसी शहर में हूं। पर कुछ क्षण बाद मन में विचारों का एक तूफान उठता है – 'यही वह मारिशस है जहां अंग्रेजों ने छल-कपट से हमारे देशवासियों को कुली बनाकर नाना प्रकार की यातनाएं दी थीं। दिन भर उनसे खेतों में काम लिया जाता था। काम धीरे करने पर बेरहमी से कोड़े बरसाये जाते थे। भोजन के नाम पर थोड़ा सा चबेना मात्र दिया जाता था। भारत से इन्हें लाते समय प्रलोभन दिया गया था कि वहां तुम्हें पांच रु. महीना वेतन, एक जोड़ा धोती-कुर्ता और रहने के लिए घर दिया जायेगा। वहां तुम पत्थर उठाओगे तो सोना मिलेगा।' ये भोले-भाले गिरमिटिया मजदूर छलावे में फंस गये। यहां इनका सहायक कौन बैठा था? हनुमान चालीसा की चौपतिया और रामायण की पोथी ने इनको सहारा दिया। दिन भर पशुओं की भांति खेतों में काम करते, कोड़ों की बौछारें खाते और शाम को आधा पेट खाकर भाग्य को दोष देते हुए खड़खड़े पत्थरों पर बिना बिछावन के लेट जाते। कुछ अंधकार होने पर जब अंग्रेज स्वामी अपने घरों में सो जाते तो ये एक टिमटिमाते दीपक के प्रकाश में हनुमान चालीसा बांचते और रामायण का पाठ करते। इसी से इनको धैर्य, साहस और संतोष मिलता।

कई पीढ़ियां बीत गयीं अपने पौरुष से पत्थरों के नीचे दबे हुए सोने को इन्होंने खोज लिया है। टिमटिमाते दीपक के प्रकाश ने आस्था के बल पर बल्बों के प्रकाश को बिखेर दिया है। कुली बनकर जो आये थे आज यहां की सरकार चला रहे हैं। भारतवंशियों का आज यहां राज है। आधुनिक मारिशस के निर्माता श्री शिवसागर रामगुलाम मारिशस के महात्मा गांधी के समान माने जाते हैं। मारिशस का एक-एक बच्चा, तरुण और वृद्ध उन्हें देवता के रूप में स्वीकारता है।

जिस रामायण की पोथी ने आस्था और साधना की आंच से पत्थरों को सोने की तरह पिघला दिया, आज उसी रामायण के महोत्सव में सम्मिलित होने के लिए विश्व के विभिन्न देशों से प्रतिनिधि मारिशस की पावन धरती पर पधारे हैं।

दिन के बारह बजे हैं। बसें तैयार हैं। शिक्षा अधिकारी हम सबको "श्रीराम" के अभिवादन के साथ बसों पर बैठाकर त्रिवोलेट की ओर चलते हैं। यहीं लेडी 'सुशील रामगुलाम सेकेन्ड्री स्कूल' में प्रतिनिधियों का स्वागत होता है। विश्व के विभिन्न देशों के प्रतिनिधियों के बीच

मारिशसवासी उछल उछलकर गले मिल रहे हैं। दो बजे का समय हो गया है। हमें सागर तट 'मॉन क्वाइजी पब्लिक बीच' की ओर ले जाया जाता है। आकाश बादलों से घिर जाता है। जलफुहियां गिरने लगती हैं। आकाश पर एक साथ कई इन्द्रधनुष आ घिरते हैं। आकाश की ऐसी मनोहर छवि इस के पूर्व कभी कहीं नहीं देखी। बस की रफ्तार धीमी होती है – बस रुकती है और एक लम्बी छरहरी सांवरिया प्रसन्न वदनी संभ्रांत महिला हमारे सामने आ जाती हैं। गुलाबी ठप्पेदार साड़ी, माथे पर नीली बिन्दी और मांग में सिंदूर – बता रहे हैं कि ये भारतीय मूल की हैं। ये शिक्षा विभाग की अधिकारी हैं, नाम है मनोहरी। हम सब की व्यवस्था इन्हीं को सौंपी गयी है। मनोहरीजी हमें सागर तट दिखाती हैं।

सागर की हरी-नीली धाराएं अपने वेग के साथ ऊपर उठ रही हैं। अब प्रतीत होता है कि ये दूध की धाराएं हैं। सागर की मनोविमुग्धकारी, आनन्द प्रदायिनी छटा को मन की डिबिया में बंद कर हम बस में बैठ जाते हैं। बस सर शिवसागर रामगुलाम वनस्पति उद्यान की ओर चल देती है।

उद्यान में हजारों प्रकार की वनस्पतियां हैं। इसी सुव्यवस्थित, सुसज्जित उद्यान में सर शिवसागर रामगुलाम की समाधि है।

उद्यान की शोभा और समाधि के दर्शन के पश्चात् बस मारिशस के उस संवेदनाओं से पूर्ण स्थल की ओर चलती है जहां भारतीय गिरमिटिया मजदूरों की पहली खेप पानी के जहाज से पहुंची थी।

इस स्थल विशेष को देखकर हम लोग कुछ क्षण मंत्रमुग्ध खड़े रहते हैं। कुछ सोचते हैं, कुछ बिसूरते हैं अपने उन देशवासियों के विषय में जिन्होंने पत्थरों के नीचे दबे हुए सोने को प्राप्त कर लिया है – अपने परिश्रम, पौरुष और पुरुषार्थ के बल पर आज मारिशस में भारत वंशियों की सरकार है। कितने गौरव गरिमा की बात है यह! अब यह 'कुली घाट' 'आप्रवासी घाट' का नाम पा गया है। यहां एक छोटा सा कार्यक्रम होता है। प्रधानमंत्री अनिरुद्ध जगन्नाथ की शोभना धर्मपत्नी श्रीमती सरोजिनी जगन्नाथ अपने पुत्र के साथ सभी प्रतिनिधियों का स्वागत करती हैं। सब से हिन्दी–अंग्रेजी में बातें करती हैं। शिक्षा एवं संस्कृति मंत्री अरगम परशुरामन्, जो इस महोत्सव के अध्यक्ष हैं, सभी प्रतिनिधियों से नमस्कार कर रहे हैं।

विचित्र बात है; प्रधान मंत्री का परिवार तथा अन्य मंत्री सामान्य लोगों की तरह घूम रहे हैं। कोई भी सुरक्षा व्यवस्था नहीं है और न ही नौकरशाहों की आगे-पीछे चलने वाली टोली है।

'आप्रवासी घाट' से हम लोग मीनाक्षी मंदिर के दर्शन के लिए पहुंचते हैं।

विस्तृत परिसर में सुखद वातावरण देने वाला यह मंदिर मदुरै के मीनाक्षी मंदिर का प्रतिरूप – सा लगता हैं।

अगस्त की चौथी तारीख है। मोटर गाड़ियां ठीक नौ बजे हम को पवित्र 'गंगा तलाव' की ओर लेकर चलती हैं। कात्रो बोर्न से ग्रैंड बेसिन का राजमार्ग प्रकृति की संपदाओं के मध्य से गुजरता है। सड़क के दोनों ओर हरियाली का मोहक संसार दिखाई देता है।

हम गंगा तलाव आ जाते हैं। प्रवेश द्वार पर "स्वागतम्" का बैनर लगा है। पवित्र गंगा तलाव के हम सब दर्शन करते हैं। कहा जाता है कि इस तलाव में एक शताब्दि पूर्व भारत से गंगाजल लाकर डाला गया था। तब से इस के जल में गंगाजल जैसी महिमा आ गयी है।

यहां कतार से अनेक कारें खड़ी हैं। कमांडर इन चीफ श्री जे. आर. दयाल कुर्ता-धोती पहने व्यवस्था का निरीक्षण कर रहे हैं। उनका पूरा परिवार वहां उपस्थित है। धर्मपत्नी श्रीमती के. दयाल पीली सीधे पल्ले की साड़ी पहने घूम रही हैं पूरी भारतीय वेशभूषा में। "गंगा तलाव" पर कई मंदिर बने हैं। इसका निर्माण श्री दयाल ने कराया है।

सभी प्रतिनिधि, स्थानीय लोग तथा अधिकारी फर्श पर अपना-अपना आसन ले लेते हैं। अब पूजन प्रारम्भ होता है। सर्वप्रथम मंदिर के बाहर विराजमान नन्दी का पूजन होता है। पं. उमानाथ शर्मा शास्त्री उच्चारण के साथ मंत्र पढ़ रहे हैं। श्री दयाल, श्री परशुरामन, श्री लल्लन प्रसाद व्यास और प्रधानमंत्री के पुत्र पूजन में तल्लीन हैं। "ॐ नमः शिवाय" के स्वर गूंज रहे हैं। रूसी प्रतिनिधि बोलगा वारान्त्रिकोव तथा अन्य देशी-विदेशी प्रतिनिधि बार-बार दौड़-दौड़कर कैमरे में इन दृश्यों को बंद कर रहे हैं।

भव्य शिव मंदिर। मंदिर के सामने गंगा तलाव लहरा रहा है। भारतीय प्रतिनिधि गंगाजल, सरयूजल लाये हैं। गंगा तलाव के जल में सभी तीर्थों के जल मिलाये जाते हैं।

शिवलिंग का यह विग्रह "मारिशसेश्वर" के नाम से जाना जाता है। श्री जे. दयाल एक बार उज्जैन गये थे। उन के मन में आया कि महाकालेश्वर की जैसी मूर्ति वे गंगा तलाव पर भी स्थापित करें। वे वहां से जयपुर गये। पत्थर खरीदा और उसे दिल्ली ले गये। वहां विग्रह बनवाया और मारिशस लाये। उस समय की घटना है– मारिशसेश्वर की प्राण प्रतिष्ठा का पूजन सात दिन तक चला। पांचवें दिन हल्की-हल्की बारिश होने लगी। बिजली कड़क उठी। कमान्डर दयाल साहब के साथ ग्यारह आफीसर जो बाहर थे, अन्दर आ गये। बिजली की भयंकर धरती हिला देने वाली गर्जना हुई। धीरे-धीरे बिजली मंदिर के अन्दर शिव जी में प्रविष्ट हो

गयी। वह पन्द्रह सेकेन्ड तक विग्रह पर चमकती रही और फिर उसी में लीन हो गयी। यह सब प्रत्यक्ष दर्शियों ने बताया।

आज वाकवा के रामकृष्ण मिशन से रामायण रैली निकलनी है। हजारों की संख्या में बच्चे, बूढ़े, स्त्री, पुरुष वहां एकत्रित होते हैं और रैली चलती है। कमांडर दयाल, शिक्षा मंत्री परशुरामन्, सुरेश रामबरन और कई संभ्रांत जन आगे-आगे चलते हैं। उन से भी आगे कंधे पर गदा धरे हनुमानजी सड़क के बीचो बीच चल रहे हैं। तीन किलोमीटर तक फैला यह जलूस अनेक झांकियों से शोभायमान हो रहा है। विभिन्न मंडलियां भजन आदि गाने में तल्लीन हैं। चौराहों पर हरे कृष्ण संप्रदाय के अमेरिका इंग्लैंड वासी मृदंग वादन के साथ उछल-उछल कर नाच रहे हैं।

'हमें निज धर्म पर चलना बताती रोज रामायण' का गीत माइक पर सुनाई दे रहा है। जुलूस हुलास के साथ वाकवा के बड़े चौराहे से जिमखाना ग्राउन्ड पर पहुंचकर एक विशाल सभा में बदल जाता है। सांस्कृतिक कार्यक्रम प्रारम्भ होता है। ग्यारह छात्राएं श्री राम विवाह के प्रसंग की नृत्यनाटिका प्रस्तुत करती हैं। भोजपुरी गीत सबके मन को मोह लेता है। भारत से आया सांस्कृतिक दल "जागा" नृत्यनाटिका प्रस्तुत करता है।

इसी बीच अमिताभ बच्चन, रजनीकान्त और अनुपम खेर आ जाते हैं। अमिताभ हाथ हिलाकर सब के अभिनन्दन का उत्तर दे रहे हैं। कमान्डर दयाल भोजपुरी में भाषण करते हैं। अन्य औपचारिकताओं के साथ कार्यक्रम समाप्त होता है।

आज पांचवीं तारीख है। महात्मा गांधी इन्स्टीट्यूट का प्रेक्षागार लाल-पीली, हरी-नीली झंडियों से सजा है। मंच पर कई राष्ट्रों के राष्ट्रध्वज लगे हैं। भारत के तिरंगे ध्वज के बगल में मारिशस का चौरंगा ध्वज सुशोभित हो रहा है। एक-एक कर वी. आई. पी. आ रहे हैं।

मारिशस के प्रधानमंत्री श्री अनिरूद्ध जगन्नाथ आते हैं। श्री जगन्नाथ एक हल्की मुस्कान के साथ दीप प्रज्वलित करके रामायण सम्मेलन का उद्घाटन करते है। शिक्षामंत्री परशुरामन आए हुए प्रतिनिधियों के प्रति आभार व्यक्त करते हैं। उनका यह वाक्य – 'इस छोटे से पर महान देश में यह आयोजन विश्व को नवीन दृष्टि देगा।' इसके पश्चात् रामायण प्रदर्शनी का उद्घाटनोत्सव होता है। गवर्नर जनरल वीरस्वामी रिंगाड् प्रदर्शनी का उद्घाटन करते हैं।

चार बजने वाले हैं; हम लोग अमिताज गांव (हरमिटेज) आ जाते हैं। रामायण महोत्सव के अवसर पर इस गांव का नाम 'पंचवटी' रखा गया है। इसी प्रकार एक

अन्य गांव का नाम 'चित्रकूट' रखा गया है। यह प्रधानमंत्री का क्षेत्र है। अस्वस्थता के कारण वे नहीं आते हैं। उन की पत्नी और पुत्र उपस्थित हैं। वरिष्ठ मंत्री महेन्द्र उच्चाना, वाणिज्य मंत्री गंगाजी, कृषि मंत्री मदनजी, मंत्री राजनारायण गती तथा मंत्री रामसेवक पहले से ही आ गये हैं। शिक्षा मंत्री परशुरामन सबका स्वागत कर रहे हैं।

इसी गांव का एक युवक कार्यक्रम का संचालन करता है। वह कहता है– 'यह वह गांव है जहां हमारे पूर्वज आये थे। उन्होंने पत्थरों को, जंगलों को साफ किया। गन्ना और सब्जी बोने लगे। ये गन्ने के खेत हमारा सोना हैं। हमने पत्थर उलट कर सोना पाया है! जहां-जहां आप लोगों के पैर पड़ रहे हैं वहां पर न जाने हमारे – आपके कितने ही पूर्वजों का रक्त बहा होगा।' यह कहते-कहते उस तरुण का गला भर आता है। श्रीमती जगन्नाथ साड़ी के पल्लू से आंखें पोंछने लगती हैं, भारतीय प्रतिनिधियों की आंखों में भी आंसू भर आते हैं।

छह, सात, आठ अगस्त को महात्मा गांधी इन्स्टीट्यूट में रामायण पर विभिन्न विद्वान् अपने-अपने पेपर पढ़ते हैं। तीन संगोष्ठियां होती हैं। तीनों की अध्यक्षता क्रमशः डॉ. निर्मला जैन, डॉ. प्रभाकर माचवे और डॉ. जे. झा करते हैं।

और अब आ जाती है नवीं तारीख विदाई की वेला गीले नेत्रों से हम मारिशस की धरती को प्रणाम कर एअर मारिशस के वायुमान पर बैठ जाते हैं। सागर ही सागर – उसी के ऊपर उड़ता हुआ विमान बम्बई की हवाई पट्टी पर उतर जाता है। हम मारिशस से भारत आ जाते हैं। जय भारत - जय मारिशस– जय रामायण।

– सी – १०, के रोड, महानगर (विस्तार), लखनऊ, उ.प्र.

□

वर्धा-आश्रम में, प्रार्थना के बाद, विनोबा कुछ ऐसा बोले, 'गणित-शास्त्र में शून्य (०) बहुत ही अद्भुत. चमत्कारिक और प्रभावशाली है। वह स्वयं कुछ नहीं होते हुए भी जिस अंक पर शून्य लग जाता है उसे एकदम दस गुना कर देता है। किसी भी संख्या को किसी भी संख्या से गुणा करो तो उसका फल बढ़ता है, और भाग दो तो फल घटता है। लेकिन शून्य ही एक ऐसी विचित्र संख्या है, जिससे बड़ी-से-बड़ी संख्या को गुणा करने पर वह उसे शून्य कर देती है, और भाग देने पर छोटी-से-छोटी संख्या भी 'अनंत' हो जाती है। अर्थात बढ़ाने की कोशिश में वह मिटाती है, और मिटाने की कोशिश में बढ़ाती है। यही शून्य का चमत्कार है और अप्रतिम प्रभाव। यदि गणित-शास्त्र में से शून्य को हटा दिया जाय तो उसका लगभग सारा 'रोमान्स' ही खतम हो जायगा।"

– डॉ. गोपाल प्रसाद 'वंशी'
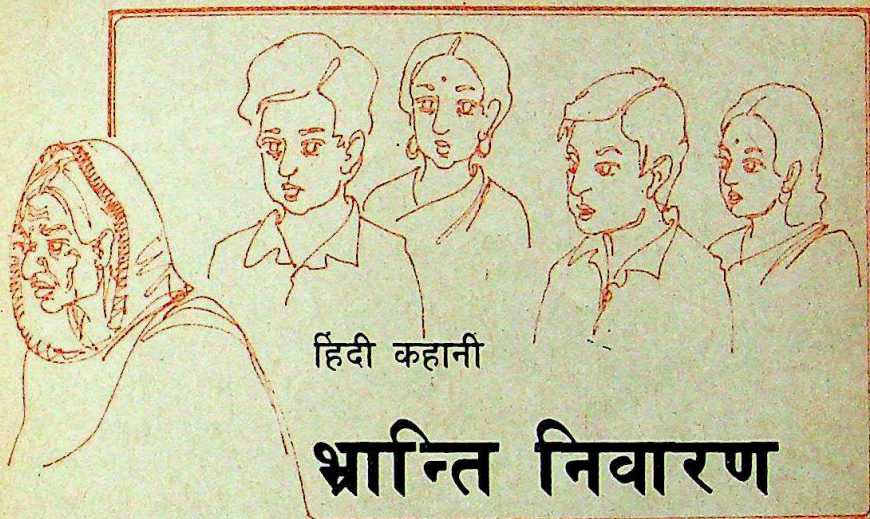
हिंदी कहानी

भ्रान्ति निवारण

□ कमला चमोला

टैक्सी की घरघराहट ऐन गेट के बाहर ही थमते देख बड़की के कान सजग हो गये। तनिक पर्दा सरकाकर उसने खिड़की की झिर्री से झांका तो भौंहें संकुचित हो गयीं और माथे पे बल पड़ गये। चेहरे पे छाये आक्रोश को भरसक दबाकर दरवाजा खोला। सुरेश और रमा थे। जेठानी के पांव छूने की औपचारिकता निभाकर रमा बोली—

'कैसा जी है अम्मां का, जिज्जी? हमें तो तिरलोकीचंद बाबू के बेटे से पता चला। किसी काम से वो बम्बई आया था। उसी ने बताया कि अम्माजी की तबीयत पिछले कई दिनों से खराब चल रही है।'

बड़की बिमला के सीने में सांप सा लोट गया। कलेजे से संशय और रोष का मिला-जुला लावा सा उमड़ा, जिसे वो सायास घूंट गयी। मन ही मन तिरलोकीचंद के छोकरे को ढेरों कही-अनकही सुनाकर प्रकट में चेहरे पे चिंता के बादल औटा दिये—

'ऐसी कोई खास खराब तो नहीं है। बुढ़ापे में तो ये सब चलता ही रहता है। अंदर आ जाओ, क्या दरवज्जे पे ही खड़े रहोगे?'

अंदर कमरे से क्षीण-सा स्वर आया—

'कौन है, बड़की ?'

'इनके कान बुढ़ौती में भी कैसे चाक-चौकन्ने हैं।' बड़की खीझ उठी।

'सुरेशजी और रमा आये हैं बंबई से।'

अम्माजी ने मिचमिची आंखों से बाहर के चुंधियाते उजाले की ओर झांका। सुरेश ने आकर उनके पांव छुये। झुर्रियों भरा कंपकपाता हाथ उठा कर उन्होंने ढेरों आसीसें दे डालीं।

'मीनू-राजू कैसे हैं ?'

'ठीक हैं। पर तुम ये बताओ, तुमने ये क्या हालत बना ली है? कित्ती दुबला गयी हो।' रमा के स्वर से गहरी चिंता फूट पड़ रही थी।

रसोई में चाय बनाती बड़की के कान अन्दर ही लगे थे। वार्तालाप के अंश पिघले सीसे से उसके कान में उतर रहे थे। तनाव से कनपटी की नसें तड़ख रही थीं। भले हाल में तो कभी चिट्ठी-पतरी भी नहीं लिखी जाती और बीमारी की भनक लगते ही कैसे शिकारी कुत्ते से टोह लेते आ जाते हैं, मानो सारी जायदाद अम्माजी ने उसके ही नाम कर दी है। पिछली बार भी अम्माजी की बीमारी की खबर जाने कैसे उड़ते-उड़ते इनके कानों तक पहुंच गयी थी, और दोनों मियां-बीबी तुरंत दिल्ली पहुंच गये थे। अम्माजी की हालत को देखकर सुरेशजी को तो लगा था मानों साक्षात यमराज ही दुआरे आ गये हैं, अम्माजी को लेने। कैसा गिरगिट-सा रंग बदला था कि उनकी आबहवा बदलनी जरूरी है। बिछौने पर पड़ी बीमार बुढ़िया को ऐसे सेंत-मेंत के बंबई ले गये थे मानो नोटों की गठरी उठा रखी हो। नोटों की गठरी ही तो हैं अम्माजी। सारी जायदाद पर कुंडली मार कर बैठी हैं। ससुरजी ने मरती बखत जाने क्या मंतर फूंक दिया था इनके कानों में, जो कभी इन्होंने एक अधेली भी किसी को नहीं दिखायी। उनकी और छोटे सुरेशजी की हजार जरूरतें आन खड़ी हुईं, पर क्या मजाल जो बुढ़िया ने गांठ ढीली करी हो। 'राजेश का मेडिकल में दाखला बिना १० हजार दिये नहीं हो सकता' यह बात उनके पति दिनेश ने हजार बार अम्माजी के आगे बोली थी, पर अम्माजी ने सब कुछ इस कान से सुनकर उस कान से निकाल दिया। सुरेशजी भी कम तिरपट नहीं हैं, घड़ी-घड़ी अम्माजी को सुनाते रहते थे कि बंबई में फ्लैट की पगड़ी देने को पांच हजार रुपये चाहिये। चाहिये तो क्या थे, बस अम्माजी को खसोटने का बहाना भर था, पर अम्माजी ने भी कच्ची गोलियां नहीं खेलीं, तनिक भी कान न दिया सुरेशजी की बात पर।

बड़की को अपने पति दिनेश पर भी गुस्सा आ रहा था। जरूर इन्होंने ही मुहल्ले में किसी के आगे अम्माजी की

बीमारी का रोना रोया होगा। वरना तिरलोकीचन्द के लड़के को क्या सपना होना था। हजार बखत इन्हें टोका है कि अम्माजी की बीमारी का जिक्र बाहर न करें। सुरेशजी के जासूस सारे मुहल्ले में फैले हैं। अब देखो हजारों मील की दूरी ये यूं तय कर आये मानो पिछली गली से आ रहे हों। पर अब की बार वह अम्माजी को इनके संग नहीं जाने देगी। बुढ़ापे का कौन ठिकाना कब अम्माजी आंख मूंद लें। और फिर कोरे कागज पर उनका अंगूठा लगवाना कौन मुश्किल है।

आजकल वो जी-जान से अम्माजी की सेवा कर रही थी। कल ही नगद अस्सी रुपये दे कर बादाम की गिरियां लायी थी। रात जब अम्माजी के पांव दबा रही थी तब अम्माजी कैसी पसीज गयी थीं—

'रहने दे, बड़की, काहे हलकान हो रही है? हाथ-गोड़ तो बुढ़ापे में पिराते ही होंगे।'

इस पर उसने कैसे लाड़ से डपट दिया था—

'चुप रहो, अम्माजी, जो हम ना दाबेंगी तो क्या पड़ौस से कोई आवेगी। अब ये पुन्न तो ना छीनो हमसे।'

अम्माजी की आंखें कैसी पनियाली हो आयी थीं। उनका दिल उसकी मुट्ठी में लगभग आ ही गया था, पर अब सब कुछ मटियामेट करने ये सुरेशजी और रमा आ गये। सुरेशजी तो इत्ते तेज नहीं भी हैं पर ये रमा पूरी मंथरा है। परले दरजे की घुन्नी है। अब देखियो कैसे-कैसे डोरे फेंकेगी अम्माजी पे सब किया-धरा मिट्टी हो जावेगा।

पर जो भी हो इस बार वह अम्माजी को इनके साथ न जाने देगी। सारे बदन की सुईयां तो हमने निकालीं और ऐन आंख की सुई निकालने के बखत ये महारानी बंबई से आन बिराजी हैं। अगर अम्माजी के पास रुपयों की पुटरिया नहीं होती तब न आतीं ये इस तरह खोज-खबर लेने के लिए।

चाय खौल कर बाहर उबल आयी तो बड़की की तंद्रा भंग हुई। दो कप चाय ट्रे में रख अन्दर आयी। सुरेशजी और अम्माजी को घुट-घुटकर बातें करते देख उसके सारे बदन में बीछी-सी दौड़ गयी। रमा हौले-हौले अम्माजी के पैर दबा रही थी। अब उससे रहा न गया—

'सुरेशजी! रमा! आओ बैठक में आ जाओ। अम्माजी भी आराम कर लेंगी।' और जवाब की प्रतीक्षा किये बिना वे बैठक में चाय की ट्रे लेकर आ गयीं। मजबूरन सुरेशजी व रमा को बैठक में आना पड़ा।

अम्माजी लस्त होकर तकिये पे टिक गयीं। उनकी धुंधलाई आंखें सुदूर अतीत में कुछ टटोलने-सी लगीं। दिनेश, सुरेश जब इकट्ठे पाठशाला में जाते तब वे एकटक देखती थीं, तब

उनका कलेजा कैसा सिरा जाता था। राम-लखन की जोड़ी से दिखते थे दोनों भाई। कई बार तो वे तवे की कालिख अंगुलियों में उकेर कर उनके माथे पे डिठौना भी लगा देती थीं। उसे बेटों को लड़ियाते देखकर बाऊजी कह उठते थे–

'दिनेश की अम्मा, तेरी बुढ़ौती का इंतजाम तो हो गया। मैं न भी रहूं तो मुझे फिकर ना होगी। तेरी जांचपूछ करने को तेरे बेटे मौजूद हैं।' जवाब में वह पति के मुंह पर हाथ धर, बरज देती थीं–

'कैसी असगुनी बात बोलते हो दिये बाती के टैम? तुम्हारी जिनगानी लम्बी होवे और मेरा कारज तुम्हारे हाथों हो ये ही तो दिन-रात देवी मइया से मांगती हूं।'

पर देवी मइया ने उनकी कब सुनी थी? ७० बरस के होते न होते बाऊजी चल बसे। तब तक दिनेश-सुरेश दोनों काम से लग गये थे। बड़ा दिनेश दिल्ली में था और छोटा सुरेश बंबई की किसी फर्म में था।

दोनों का ब्याह भी बाऊजी अपने हाथों से कर गये थे।

अपनी आसन्न मृत्यु का पूर्वाभास बाऊजी को हो गया था। गांव की रोजमर्रा की जिंदगी में शहरी बेटों की महानगर में भटकी रागात्मकता और गांव तथा बूढ़े मां-बापों के प्रति निस्पृहता भांपकर वे बहुत कुछ जान-समझ गये थे।

अम्माजी को याद है, कैसे एक दिन सांझ के उदास धुंधलके में बाऊजी ने उन्हें एक बूढ़े की कहानी सुनायी थी, जो जवान बहू-बेटों की निरलपता और लताड़ों से दुखिया कर घर छोड़कर निकल पड़ा था।

फिर अपने एक साथी की सलाह पर उसने लोहे के एक बक्स में कुछ ठीकरे डाल दिये थे। बूढ़ा घर वापिस आया तो भारी बक्स में जंग खाये ताले को देखकर बहू-बेटों के कान खड़े हो गये थे। बूढ़ा बंद कमरे में जब बक्स खड़काता तब उन्हें लगता, जाने कौन-सा खज़ाना अंगेट रखा है, बुढ़उ ने इस बक्स में। बस खजाने के लोभ में उन्होंने बूढ़े को सिर-माथे पर बिठा के रखा।

बाऊजी ने अपने गुजरने से छः महीने पहले ही अधिकांश खेत बेच कर सारी रकम अम्माजी के नाम से बैंक में डलवा दी थी और सख्त हिदायत दे दी थी कि अपने जीते जी वे इस रकम में हाथ नहीं डालेंगी। उनके खर्चे-पानी के लिए अलग से पांच हजार रुपये उन्होंने अम्माजी को थमा दिये थे। पर बैंक की रकम को न निकालने का उन्होंने अम्माजी से वचन ले लिया था। यही उनके सुखी भविष्य का बीमा था।

बाऊजी की अटपटी बातें अम्माजी के गले नहीं उतर रही थीं। जिन बेटों ने

उससे बिना पूछे पानी का घूंट भी नहीं पिया वे ऐसे कपूत नहीं हो सकते जो मां को दूध की मक्खी समझें।

बाऊजी की मृत्यु के बाद दिनेश-सुरेश ने प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष रूप से कई दफे अम्माजी के आगे अपने खर्चों का रोना रोया था। पर बाऊजी की कसम तले दबी अम्मा ने मुंह न खोला था। दोनों बेटे अम्माजी को शहर ले आये थे। बाऊजी के बाद अब भला गांव में रह भी क्या गया था? दिनेश ने हवेली को बेचने की हल्की-सी बात उठायी थी, पर प्रतिक्रिया में अम्माजी के कांपते बदन और जलती आंखों को देखकर वह सहम के चुप हो गया था। हवेली को अनाथ और उनकी रोटी पर पले समेरू के जिम्मे सौंपकर शहर आ गये थे।

दोनों बेटों-बहुओं ने उन्हें पूरे आराम से रखा था। इस प्यार से कभी-कभी अम्माजी का पोर-पोर गद्‌गदा जाता था। काश बाऊजी होते तो देखते कि उनका शक कितना उथला था। दोनों बेटे और लक्ष्मी-सी बहुएं कितनी देखभाल करती हैं उनकी। अब देखो जरा-सी उनकी बीमारी की खबर लगी तो छुटका और उसकी बहू कैसे बंबई से दौड़े आये।

अम्माजी ने पनियाली हो आयी आंखों को पोंछा और हडियाई देह को प्रयास से बाईं और घुमाकर करवट ली। हल्का ताप अब भी था। नींद की खुमारी-सी उन पर छाने लगी और पलकें झिप गयीं। तभी बगल के कमरे से आती हल्की फुसफुसाहट से उसकी नींद उ़चट-सी गयी। फुसफुसाहटों के टूटे-फूटे टुकड़े इस कमरे तक आ रहे थे बड़की बिमला की आवाज थी—

'बहुत बोलते हो तुम। अब देख लिया न मुंह खोलने का नतीजा? तुम्हारे जासूस भाई-भाभी कैसे बंबई से दौड़े आये, मानो बुढ़िया ने सारी जायदाद मेरे ही नाम कर दी हो। पिछले दिनों की सारी सेवा पे पानी फेर दिया नदीदों ने। अब सुरेशजी अम्माजी को बंबई ले जाने की बाबत बोलें तो हरगिज न मानना। ऐन बीमारी के बखत ऐसे आन टपके जानो बुढ़िया के परान ही न निकल रहे हों।'

अम्माजी का सिर घूमने लगा। ये वे क्या सुन रही हैं? अपने कानों पर उन्हें विश्वास नहीं हो रहा था। जिस बेटे-बहू के नेह से उनका तन-मन भींज रहा था, वही अब उन्हें तपते पानी की धार-सा लगने लगा। लगा जैसे सारी देह में पपगेले उठ आये हों। बुढ़ापे ने उनकी मति को कैसे तो भिरष्ट कर दिया जो वे पिछले तीन साल से चल रहे इस डरामे को अब तक ना समझ पायी। ये सब कुछ सुनने से पहले देवी मइया ने उन्हें उठा क्यों न लिया। बाऊजी का बोला एक-एक बोल हथौड़े की नाईं उनके कलेजे में ठकठकाने लगा। आज

बाऊजी के गुजरने के तीन बरस बाद उनका मन हिलक-हिलक कर रोने का हो रहा था। आंखों के कोयों से मन में उमड़ता दुःख और आक्रोश बह-बह कर तकिया भिगोने लगा।

तभी दरवाजे में आहट हुई तो अम्माजी सांस रोककर निश्चल-सी हो गयीं।

'अम्माजी,' सुरेश ने पुकारा, 'अम्माजी!'

कोई आहट न पाकर बोला—

'गहरी नींद सो रही हैं अम्माजी।'

तभी रमा का फुसफसाता स्वर फिर बर्र के डंक-सा अम्माजी के कातर मन को छलनी करने लगा।

'सुनो हर हाल में हमें अम्माजी को संग ले जाना है। जिज्जी बहुत चालाक हैं अम्माजी को बहला-फुसलाकर काबू कर लेंगी। अम्माजी का बुढ़ौती का शरीर है, उस बखत हमारे संग रहेंगी तो बड़ा असर पड़ेगा।'

अम्माजी का मन चीख-चीखकर चाह रहा था कि अभी उनका छुटका रमा के गाल में झन्नाटेदार थप्पड़ मारे और बोले—

'कमीनी औरत, क्या पैसों के लोभ से तू अम्माजी की सेवा करेगी? अरे वो तो हमारा फर्ज हैं। करजा है हम पर अम्माजी का—'

पर अम्माजी को पता था कि उनकी ये चाहना कितनी खोखली और घुन लगी हैं।

'श्ऽश्ऽश' बाहर आहट पाकर सुरेश ने घरवाली को बरजा। रमा अचकचाकर चुप्पा गयी।

अम्माजी के अन्दर भयंकर उथल-पुथल हो रही थी। अगर पैसों के बूते पर ही सेवा करवानी है तो बेटे-बहुओं का अहसान लेना क्या जरूरी है? कितना कड़वा सच बोल गये थे बाऊजी। कैसे उनके अनदेखे बुढ़ापे के माथे में खिंची भागरेखा चीन्ह गये थे। अचानक अम्माजी की बूढ़ी आंखों में फटे थिगलाये कपड़ों में दुबलाया सा समेरू आन खड़ा हुआ। छुटपन में ही उसके बाप महतारी सीतला माता के परकोप से सिधार गये थे। अनाथ समेरू उनके टुकड़ों पर ही पल पूसकर जवान हुआ था। अम्मा-बाऊजी के इशारों पर जान देने को तैयार रहता था। अनाथ समेरू के सारे नेह-नाते अम्मा-बाऊजी तक ही सिमटे हुए थे। बाऊजी के गुजरने के बाद उसका सूखा मुंह अम्माजी को अब तक याद है। कई दिनों तक हवेली की देहली में बैठा टकटकी बांध कर दूर तक फैली मटियाली टेकरियों में जाने क्या देखता रहता था। अम्माजी के जरा बीमार होते ही उनकी खटिया के दायें-बायें डोलता रहता था। बाऊजी कई बार कह उठते थे—

'तेरा तो कोई पिछले जन्म का नाता है हमसे।'

जवाब में वह दांत चियार देता था।

इन कोखजायों से तो उनके टुकड़ों पे पला समेरू भला। उसका पैसे धेलों से कोई वास्ता नहीं। वो तो बस नेह का भूखा है।

एक दृढ़ आत्मविश्वास से अम्माजी की आंखें दिपदिपाने लगीं। लड़खड़ाते कदमों से वह बैठक तक आयीं। दोनों बेटे और उनकी बहुएं बैठी हुई थीं। अम्माजी को बैठक में आया देख दिनेश चौंक गया।

'कैसा जी है, अम्मा? बाहर क्यों आयीं, हमें बुला लिया होता।' छोटा सुरेश तनिक देर अम्मा को निहार कर बोला—

'बड़े भइया, अम्माजी का शरीर ठीक नहीं दीखता। अबकी बार इन्हें बम्बई ले जाता हूं, आबहवा बदलने से शायद तबीयत ठीक हो जाये।'

दिनेश कुछ बोलता इससे पहले ही अम्माजी बोलीं—

'अब दिल्ली-बंबई से मन उकता गया है। सोचती हूं गांव चली जाऊं।'

'क्या?' सभी जैसे आसमान से गिरे।

बड़की बिमला ने बरजा—

'होश में तो हो, अम्माजी, बुढ़ापे का शरीर है वहां भला कौन तुम्हारी सार-संभाल करेगा?'

'समेरू जो है? अब सारी जिंदगानी गांव में गुजारी तब अंत बखत सहर की माटी में क्यों मिलना? अब मेरा जी ठीक है कल से ताप भी नहीं है।'

अम्माजी की अटपटी बातें किसी के गले नहीं उतर रही थीं। ये अचानक उन्हें क्या हो गया है।

पसरे हुए मौन को भंग करती हुई अम्माजी बोलीं—

'छोटे, तू बंबई जाने से पहले मुझे गांव छोड़ आना। समेरू को भी चिट्ठी डाल देना, हवेली झाड़ बुहार देगा।'

'हमसे कोई गल्ती हो गयी, अम्माजी?' हारे स्वर में बड़की बोली।

'नहीं रे! बस अब सहर से जी उचाट हो गया है। फिर गांव कौन दूर है तुम सब आते जाते रहना।'

और सबको सकते की हालत में छोड़ कर अम्माजी जैसी आयी थीं, वैसी चली गयीं।

— १०/७९ नया कैम्पस, हरियाणा कृषि विद्यालय, हिसार, हरियाणा

□

देशभक्त के चरणस्पर्श से कारागार अपने को स्वर्ग समझ लेता है, इन्द्रासन उसे देखकर कांप उठता है, देवता नंदन कानन में उस पर पुष्प वृष्टि कर अपने को धन्य मानते हैं, कलकल करती हुई सुर सरिता और ताण्डव नृत्य में लीन रुद्र उसका जय-जयकार करते हैं।

— अज्ञात

विश्व के अद्भुत निर्माण

□ डॉ. शशि गोयल

सभ्यता के पदचिह्न कहां-कहां कितने पड़े, इसका निर्णय उस समय के खड़े निर्माणों से होता है, जो हजारों साल से सिर ऊंचा किये अपने सामने से गुजरती सभ्यताएं देखते हैं और हंसते हैं कि जो आता है वह कहता है हम सभ्य हैं हम पूर्वजों से अधिक उन्नतिशील स्वस्थ विचारक हैं, लेकिन जब पूर्वजों द्वारा निर्मित अद्भुत महलों और किलों को तथा मूर्तियों को देखते हैं तो आश्चर्य से उंगली दबा लेते हैं कि ऐसा करना कैसे संभव हुआ? उनको देख सिर खपाते हैं और आश्चर्य का नाम दे देते हैं?

कुछ आश्चर्य ध्वस्त हो गये और केवल विगत की बात रह गये। केवल एक आश्चर्य अभी तक हंस रहा है और अपने ऊपर होते जुल्मों को सह रहा है। वे हैं इजिप्त के पिरामिड। ये शाही मकबरे संख्या में सत्तर हैं और नील नदी के पश्चिमी किनारे पर गीजा से प्रारम्भ होते हैं और दक्षिण की तरफ करीब साठ मील तक के एरिया में बसे हुए हैं। ईजिप्त का १२०० साल का इतिहास इनके अंदर बंद है।

दो फ्रांसीसी पिरामिडों के रहस्यों को जानने की कोशिश में उसकी लाइम स्टोन की दीवारों में छेद करके देख रहे हैं कि वे खोखली तो नहीं हैं। १९८४ की अपनी यात्रा के दौरान मि. दोरमियन और गोइडिन ने देखा कि 'रानी के कक्ष' तक गयी दीवारों में पत्थरों को बेतरतीब ढंग से लगाया गया था। इससे उन्हें लगा कि जहां पर इस प्रकार के बेतरतीब पत्थर लगे हैं अन्य गुप्त कक्ष भी हो सकते हैं। इस प्रकार उनके निर्माण विधि जानने के निरंतर प्रयास हो रहे हैं।

अन्य आश्चर्य जो लुप्त हो गयें वे हैं उत्तरी अरेबिया के सीरियन रेगिस्तान के पूर्वी किनारे पर बगदाद से साठ मील दूर यूफोत नदी के किनारे बेबीलोन के राजा नेबूचदनेगार के महल के लटकते बगीचे।

एथेन्स की देवी डायना का मंदिर। पांचवीं शताब्दी में स्मीरिया में इसका

निर्माण हुआ था।

अगेन समुद्र के ३५२ ईसा पूर्व रानी आर्तमीसिया द्वारा निर्मित राजा मोसोलस का मकबरा। मेडीटेरियन समुद्र के पूर्वी हिस्से में रोडस शहर के बंदरगाह पर मेंडस के चार्ल्स द्वारा बनवाई सूर्य देवता हीलियस की तांबे की १०९ फुट लम्बी मूर्ति ओलम्पिया घाटी में बनी जीयस की मूर्ति।

श्वेत संगमरमर का प्रकाश स्तम्भ जिसे राजा पोलेमी ने २६५ ईसा पूर्व फराओं के अलैवजेन्द्रिया द्वीप पर निर्मित कराया।

लेकिन इन सात आश्चर्यों के अलावा भी कुछ ऐसे अद्भुत निर्माण हैं, जिनकी रचना अब अति सभ्य युग में भी संभव नहीं।

ईजिप्त में गीजा के निकट विशाल पत्थर काट-काट कर स्फिंक्स की मूर्ति बनायी गयी है। (स्फिंक्स यूनानी दंतकथा में पंखवाले शेर जैसा प्राणी है) यह १७२.५ फुट लंबा और ६६ फुट ऊंचा है। उसके सामने के दोनों पंजों के बीच ग्रेनाइट पत्थर से निर्मित वेदी हैं। उसके निर्माण की तिथि चौथी शताब्दी करीब २५०० ईसा पूर्व खुदी है।

तीन हजार दो सौ वर्ष पूर्व नासिर झील के पास बनी रेमेसस द्वितीय की तीन मूर्तियां, चौथी मूर्ति टूट गयी है। ये मूतियां ६७ फुट ऊंची बैठी अवस्था में हैं।

माया सभ्यता के अवशेष, उनके शहर जो अब बढ़ते जंगलों की भेंट चढ़ते जा रहे हैं। मेक्सिको में कोवा से यक्सोमा तक सीधी लाइन माया सभ्यता के समय बनी सड़क है। यहां पर सीढ़ीदार अल कैस्टीलियों पिरामिड हैं। इसके चारों और नक्काशी का भी काम हैं। बड़े-बड़े पत्थरों से निर्मित सड़कें और मंदिर हैं। एक मंदिर की ऊंचाई तो सौ फुट तक है।

फ्रांस में वर्सेलस में लुई तेरहवें द्वारा प्रारम्भ किया गया महल जिसे लुई चौदहवें ने बनवा कर समाप्त किया। इसका परकोटा ही केवल ६३४ गज का है, जिसमें ३७५ खिड़कियां हैं। जिसके बगीचे की भूमि ही केवल २५० एकड़ थीं। चालीस लाख फूलों की पौध हालैंड से मंगाकर रोपी जाती थी। जगह-जगह छिपे फव्वारे थे जो आते-जाते अतिथि पर गुलाबजल छिड़ककर आश्चर्य-चकित कर देते थे। एक बार में बीस हजार जनता और ९ हजार सैनिक आराम से आ जाते थे। महल में एक हजार दरबारी और चार हजार नौकर रहते थे।

ईसा पूर्व तीसरी शताब्दी में बनी चीन की विशाल दीवार १६८४ गील लम्बी है। पीले सागर के पश्चिम की तरफ प्राचीन सिल्क रोड को पार करती तुर्किस्तान की सीमा तक पहुंच गयी है। इसका निर्माण सम्राट हुआंग ती चिन ने मंगोल घुड़सवारों के हमलों से बचने के

लिए
कार्य
हो
उत्त
३०
बाद
फुट
जैसे
पड़ा
जिसे
सकत
व
मंदि
द्विती
करा
अद्वि
मच्छ
सैंड
की
हैं।
उन
हैं।
सीि
है।
के
स्वा
अंड
ऊं
जि
बैठ

लिए कराया। यद्यपि सम्राट की मृत्यु कार्य प्रारम्भ कराने के चार वर्ष बाद ही हो गयी थी, लेकिन उनके उत्तराधिकारियों ने कार्य जारी रखा और ३० फुट ऊंची दीवार पर हर २०० फुट बाद एक गुम्बद है और चौड़ाई बत्तीस फुट है। आकाश से यह सड़क लगती है जैसे विशाल अजगर अलस अवस्था में पड़ा है। यही एक मनुष्य निर्मित वस्तु है जिसे आकाश से नग्न आंखों से देखा जा सकता है।

कम्पूचिया में स्थित अंगकोर वाट के मंदिरों का ९०२ ईस्वी में सूर्यवर्मन द्वितीय ने विष्णु मंदिर के रूप में निर्माण कराया। पूरे एशिया में यह मंदिर अद्वितीय है। मंदिर के चारों ओर मगर-मच्छों से भरी खाई है। अंगकोर वाट में सैंडस्टोन पत्थरों पर अद्भुत् कारीगरी की गयी है और आकृतियां उकेरी गयीं हैं। उस समय की अति सभ्यता के दर्शन उन आकृतियों के कार्यकलापों द्वारा होते हैं। यह मंदिर प्रेक्षागृह, पुस्तकालय, सीढ़ियों, गैलरियों से भरी भूल-भुलैया है।

रोम का प्रेक्षागृह ६०५ ईसा. पूर्व नीरो के उत्तराधिकारी वैस्पोसिया ने नीरो के स्वर्ण महल के सामने बनवाया। अंडाकार प्रेक्षागृह में १०० फुट की ऊंचाई तक लाइन में पत्थर की बेंचें हैं जिन पर ५०,००० व्यक्ति एक बार में बैठकर खेल देख सकते थे। सबसे नीचे पदाधिकारियों और सम्मानित व्यक्तियों के बैठने का स्थान था। बीच में शाही सिंहासन।

६१५ एकड़ में बना रोमन कैथलिकों का शवगाह भी अपने आप में एक अजूबा है। चालीस से अधिक गैलरी समूह है और कमरे हैं जो जमीन में कहीं-कहीं ९० फुट की गहराई तक पहुंच जाते हैं।

सीरिया के रेगिस्तान में ईसाई धर्मावलम्बियों द्वारा १०९० में बनवाई गढ़ी भी अदभुत् है, इसकी दीवारें ८० फुट तक चौड़ी हैं। गढ़ी तक पहुंचने का रास्ता सर्पाकार है, जिससे हर आक्रमणकारी को कई बार एक ही स्थान से गुजरना पड़ता था। कार्क की यह गढ़ी सैनिक शिल्पकला की अद्भुत मिसाल है।

किलों की बात आयी है तो अंधकार युग के सर्वाधिक समर्थ यूरोपीय शासक के किले कान्स्टेंटीनोपुल का जिक्र सर्वाधिक महत्वपूर्ण है जिसकी तीन दीवालें हैं। दीवाल के पास बीस फुट चौड़ी और साठ फुट गहरी खाई है। उसके बाद बैरकें बनी हैं। ६० फुट बाद फिर एक दीवाल हैं जिस पर २०० फुट पर एक गुम्बद बनी है और तीसरी दीवाल पर भी ९६ गुम्बदें हैं और यह बीच की दीवार से ठीक दुगुनी ऊंची हैं। उसके कुछ अवशेष अब भी मिल जाते हैं।

इस्ताम्बूल का संत सोफिया का चर्च

५३१-५३८ ईस्वी में सम्राट जुस्तीनियन ने बनवाया।

मध्ययुग के अद्भुत शिल्प कला का नमूना है पीसा की मीनार, ११५४ ईस्वी में संगमरमर से बनी आठ मंजिला गोलाकार इमारत है। इसकी ऊंचाई १८८ फुट है।

वेटीकन शहर रोम की धड़कन है सेंट पीटर्स कैथेड्रल। इसका निर्माण पन्द्रहवीं शताब्दी के निकोलस पंचम ने प्रारम्भ कराया। इसके निर्माण में ३५० साल लगे और अनेक पोपों ने इस पर अपनी पहचान छोड़ी। पहले शिल्पकार अन्तोनियो द सेन्गालो थे और बाद में माइकल एन्जेलों। उसके समाप्त होने तक भी कई कुशल वास्तुकारों ने इस पर अपनी कला आजमाई। लेकिन प्रमुख आधार माइकेल एन्जेलो द्वारा खींची रूपरेखा ही रही।

आगरा का ताजमहल वास्तुकला का नमूना है वास्तुकला के लिए इसे संसार के प्रमुख आश्चर्यों में स्थान मिला और आठवां आश्चर्य सहज ही मान लिया गया। इसका निर्माण मुगल बादशाह शाहजहां ने अपनी बेगम मुमताज महल की याद में उसकी कब्र के ऊपर बनवाया। यह पूरा संगमरमर का बना है।

राजकुमार अल्बर्ट के लिए जोसेफ वैक्सटन नामक वास्तु विशेषज्ञ ने शीशे का महल बनाया। १८४८ फुट ऊंचा ४५० फुट चौड़ा। इस महल में शीशे ही शीशे थे और उन दिनों शीशों के लगाने का कोई अच्छा साधन नहीं था। लोहे की गार्डरों पर बना यह शीश महल अपने ढंग का पहला महल था। यह १८५१ में आठ महीनों में हाइड पार्क में बनकर तैयार हुआ, वहीं पर इसकी प्रदर्शनी हुई। फिर सारी इमारत को ट्रालियों पर दक्षिणी लंदन लाया गया और दावत प्रदर्शनी आदि में प्रयोग में लाया गया लेकिन १९३६ को यह अद्भुत निर्माण आग की भेंट चढ़ गया।

बर्मा में रंगून की सीमा पर बना स्वर्ण पगोडा बुध्द स्तूप है। इसका निर्माण १३ या १४ वीं शताब्दी में हुआ। यहां पर बुध्द के आठ बाल रखे हुए हैं।

१४६० ईसा पूर्व एलेक्जैन्ड्रिया के दो भाइयों जॉन और विनाम डिक्सन ने फॅराड थाटमस तृतीय के लिए ९३ फुट लम्बा नोकदार स्तम्भ बनाया- 'क्लियोपैट्रा की सुई', लेकिन जिस जहाज में एलेक्जेन्ड्रिया से लंदन के लिए रवाना किया गया था वह जहाज कभी नहीं पहुंच पाया और ३५०० साल बाद १८७८ में इसे विस्के की खाड़ी में देखा गया और इसे लाकर टेम्स के किनारे नेपोलियन के ऊपर विजय की याद में स्थापना की गयी।

स्वतन्त्रता की मूर्ति न्यूयार्क के बन्दरगाह पर सिर उठाये खड़ी है। इसकी ऊंचाई इसके आधार स्तम्भ से

कठघरे

कठ्घरे भूगोल के हैं, साक्ष्य हैं इतिहास के
हम यहां मुजरिम खड़े हैं, वक्त के इजलास के

बुर्जियों से धूप फिसली
नालियों में बह गयी
नुक्कड़ों पर रोज
खुफिया की तलाशी रह गयी

खेत में पौधे उगे हैं आदमी के मांस के

गुंजलक में सांप हैं ये
रहनुमा चेहरे नहीं
ताश के पत्ते नहीं
शतरंज के मोहरे नहीं

और गांजे की चिलम में कैद लमहे प्यास के

– रामचन्द्र 'चन्द्रभूषण'
पो. सीतामढ़ी कोर्ट, जि. सीतामढ़ी, बिहार

टार्च की नोक तक ३०५ फुट है। केवल मूर्ति की ऊंचाई १५१ फुट है, इसे फ्रांसीसियों ने अमेरिका के स्वतन्त्रता दिवस की याद में उपहार दिया था। इसकी मशाल में अमेरिका देखने के लिए दर्शक दीर्घाएं बनी हैं और वहां तक मूर्ति के अंदर बनी लिफ्ट से पहुंचा जाता है।

१९१६ में बोर्गम ने जार्जिया की पहाड़ी पर ३०० फुट बड़ा राबर्ट ली का चेहरा बनाना प्रारम्भ किया, लेकिन वह चेहरा नष्ट हो गया। बाद में उसने रशमोर पर्वत की काली पहाड़ियों पर चार चेहरे गढ़े थे। अमेरिका के राष्ट्रपतियों लिंकन, जैफरसन, थियोडोर और रूजवेल्ट के थे। हर चेहरा ठोड़ी से लेकर सिर तक ६० फुट उंचा है।

मातृभूमि की मूर्ति रूस की वोलगाग्रेद पहाड़ियों के बाहरी किनारे पर खड़ी है। १९६७ में यवगेयी वुचीतिक ने उसे आकार दिया।

यह स्त्री मूर्ति २७० फुट आधार से तलवार की नोक तक है।

–चिदम्बरा', जवाहर का नगला रोड, खंदारी, आगरा - २८२००२.

□ पंकज कुमार कर्ण

सब्जियों में टमाटर को विशेष स्थान प्राप्त है। लाल-लाल गोल टमाटर सहज ही हमारा ध्यान अपनी ओर खींच लेता है। वास्तव में यह जितना सुन्दर दिखता है, उतना ही स्वादिष्ट खाने में भी लगता है। शायद यही कारण है कि बच्चों से लेकर बूढ़े तक इसका भरपूर उपयोग करना चाहते हैं। यह स्वांस्थ्यवर्द्धक फल भारत में ही नहीं वरन् सम्पूर्ण विश्व में भोजन का एक प्रमुख अंग है। आयुर्वेदशास्त्र टमाटर के गुणों और उपयोग से भरा पड़ा है।

वैसे ग्रामीण अंचलों में (देहाती भाषा में) कहीं-कहीं इसे 'विलायती बैंगन' के नाम से भी पुकारा जाता है। टमाटर एक विदेशी फल है जो वनस्पति जगत में लाइकोपर्सिकम इस्कुलेन्टम के नाम से मशहूर है। आरम्भ में इसकी खेती पेरू (दक्षिण अमेरिका) में वृहत् पैमाने पर की जाती थी। परंतु उन्नीसवीं शताब्दी के अंत में यह भारत में भी उपजाया एवं चाव से खाया जाने लगा।

बहुत अधिक ठण्डे भागों को छोड़कर संसार भर में इसकी खेती की जाती है। आमतौर से टमाटर गोल होते हैं, लेकिन कुछ टमाटर छोटे और लंबे भी होते हैं। कच्चा टमाटर हरा होता है जो पकने पर पीला और लाल हो जाता है।

प्रोटोपेक्टिन के कारण ही कच्चा टमाटर अत्यधिक कड़ा होता है। पकने पर टमाटर में प्रोटोपेक्टिन की मात्रा बहुत कम हो जाती है तथा पेक्टिन की मात्रा बढ़ जाती है। बीटा कैरोटीन की उपस्थिति के कारण ही पका टमाटर आकर्षक लाल रंग का दिखता है। इसका खट्टापन और इसकी अम्लीयता एस्कार्बिक अम्ल (विटामिन 'सी') की प्रचुरता के कारण होती है।

इसमें विभिन्न प्रकार के विटामिन तथा खनिज लवण पाये जाते हैं, जो बच्चे, बूढ़े

और सयाने सबके लिए रुचिकर, पोषक और स्वास्थ्यवर्द्धक होता है।

पके टमाटर में फ्रुक्टोज, ग्लूकोज एवं सुक्रोज भी प्रचुर मात्रा में पाये जाते हैं। यही नहीं, पके टमाटर में कोबाल्ट, जिंक, आरसेनिक, मैंगनीज, अल्यूमिनियम आदि भी अल्प मात्रा में पाये जाते हैं। कच्चे टमाटर में स्टार्च, लोहा और कैल्शियम की प्रचुरता होती है। लेकिन कच्चे टमाटर के पकने पर स्टार्च की मात्रा कम तथा शर्करा की मात्रा ज्यादा हो जाती है। इसके अतिरिक्त टमाटर में विटामिन ए, बी, ई और के भी उपस्थित रहता है।

टमाटर अम्लीय, मधुर, शीतवीर्य पाचक, रक्तशोधक और दीपन होता है। यह अतिसार, बेरी-बेरी, गठिया, सूखा रोग, मधुमेह, हृदयदौर्बल्य में भी बहुत उपयोगी होता है। यह यकृत को उत्तेजित कर भूख जगाता है तथा स्मृति को तीक्ष्ण बनाता है। खासकर छात्र-छात्राओं को अपने संतुलित मानसिक विकास के लिए इसका सेवन अवश्य करना चाहिए।

यह शरीर के विजातीय तत्वों को निकालने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। इसके नियमित सेवन से कब्जियत पास नहीं फटकती है। यह रक्त विकारों को शीघ्र दूर कर सुन्दर स्वास्थ्य प्रदान करता है। टमाटर कैल्शियम युक्त होने के कारण रक्तवर्धक भी होता है। इसके निरंतर सेवन से लाल रक्त कणों में वृद्धि होती है, जिसके कारण बहुत शीघ्र स्वास्थ्य लाभ होता है।

इसके कच्चे और पके दोनों प्रकार के फल बड़े चाव से खाये जाते हैं। इसे फल के रूप में खाना अधिक फ़ायदेमंद रहता है। सब्जियों में टमाटर को डालने से इसकी अम्लीयता बहुत कुछ नष्ट हो जाती है और हमारे शरीर को पर्याप्त मात्रा में विटामिन 'सी' की प्राप्ति नहीं हो पाती। प्याज, मूली और गाजर के साथ इसे मिलाकर सलाद के रूप में अवश्य खाना चाहिए; क्योंकि इसमें इसके सभी पौष्टिक तत्व मौजूद रहते हैं।

बहरहाल, टमाटर है ही ऐसी चीज जिसका अधिकाधिक उपयोग अवश्य किया जाना चाहिए। सर्वत्र उपलब्ध इस सस्ते फल को यदि गरीबों का सेब कहा जाय तो इसमें कोई अतिशयोक्ति न होगी।

— मुहल्ला : दहियावां, महमूद चौक (अधन्नी बाबू के स्कूल की बगल वाली गली में) पोस्ट : छपरा, जिला : सारण - ८४१ ३०१, बिहार

□

अहो प्रकृति के प्रान्त में यह कैसा आतंक
जहां जहां मधुकोष है वहीं विषैले डंक

लल्लूजी

सौरभ गोदीक

सु. रामकृष्णन् द्वारा भारतीय विद्या भवन; क. मा. मुंशी मार्ग, बम्बई-४००००७ के लिए प्रकाशित तथा एसोसिएटेड एडवरटाइजर्स एंड प्रिंटर्स, बम्बई ४०००३४ में मुद्रित।

INDIA Immortal

11

Varanasi -11 :

Jnanavapi (Well of knowledge) - behind Lord Vishvanatha's temple.

To the left is situated the temple of Lord Badari Narayan

Sponsored by SMITA CONDUCTORS LIMITED Mfrs. of ACC and ACSR Conductors

Regd. No. BYW —203/Licence No.
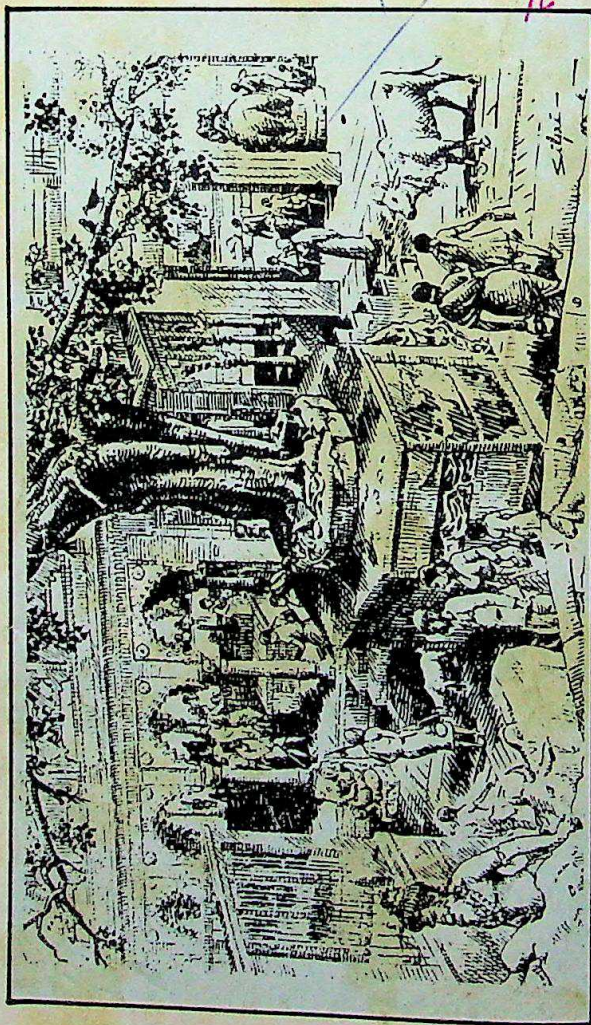
भवन की पत्रिका 'भारती' से समन्वित
नवनीत
हिन्दी डाइजेस्ट
जून १९९१
मूल्य : रु. ६.००
Sponsored by SMITA CONDUCTORS LIMITED Mfrs. of ACC and ACSR Conductors

KHANDELWAL BROTHERS LIMITED

GOLDEN JUBILEE YEAR

यत्र योगेश्वरः कृष्णो यत्र पार्थो धनुर्धरः।
तत्र श्रीर्विजयो भूतिर्ध्रुवा नीतिर्मतिर्मम।।

हे राजन्! जहाँ योगेश्वर भगवान् श्रीकृष्ण हैं और जहाँ गाण्डीव-धनुषधारी अर्जुन हैं, वहीं पर श्री, विजय, विभूति और अचल नीति है – ऐसा मेरा मत है।

'**नवनीत**' (अप्रैल) में 'श्री कृष्ण के उदाहरण का अनुकरण' कु. माधवी पाटील द्वारा लिखित प्रथम पुरस्कार प्राप्त निबंध पर उन्हें बधाई। 'महाभारत' की कथा हजारों वर्षों पुरानी है, लेकिन आज भी ऐसी लगती है जैसे कल की ही बात हो। उनके पात्रों के गुण-दुर्गुण आज भी कलयुग के जी रहे पात्रों में भलीभांति मिलते हैं। 'दूरदर्शन' पर महाभारत सीरियल के इतने लोकप्रिय होने का यह भी एक कारण है कि उसके पात्रों का चरित्र आज के किसी न किसी पात्र से मिलता रहा है। कु. माधवी ने श्रीकृष्ण की तुलना आज के हालात से की है, जो निश्चित ही पठनीय है।

— अविनाश वावीकर, सेंधवा, म.प्र.

* * *

नवनीत का अप्रैल-९१ अंक पढ़ा। अच्छा लगा। विशेषकर पद्य में राजेन्द्र तिवारी की ग़ज़ल ने बहुत प्रभावित किया। क्योंकि मैं गीत-ग़ज़ल में रुचि रखती हूं। अतएव मुझे गद्य से पद्य अधिक अच्छा लगता है। दोहे भी पढ़े, परंतु उनमें कोई नयी बात नहीं मिली। आशा है आप आगे भी इसी प्रकार गीत-ग़ज़ल आदि पढ़वाते रहेंगे।

— माहबानो रिज़वी, आगरा, उ.प्र.

* * *

नवनीत के अप्रैल-९१ अंक में प्रकाशित 'प्रेमतपस्वीः ईसुरी' की तीसरी किस्त बड़े ही चाव से पढ़ गया। लेखक श्री अंबिका प्रसाद 'दिव्य' की यह औपन्यासिक कृति निर्विवादरूप से असाधारण है। एक ओर इसका कथानक जहां पाठकों को बांध रखने में समर्थ है, वहीं दूसरी ओर इसकी आंचलिकता मन को मुग्ध करती है। साथ ही 'आशा और निराशा के बीच की दूरी ही जीवन है' तथा 'शीशा तो मनुष्य का मुख देख लेता है; पर मनुष्य, मनुष्य का मुख नहीं देख पाता' सरीखी पंक्तियों में दर्शन की ऊंचाइयां भी परिलक्षित होती हैं। सर्वोपरि इस धारावाहिक के लिए किया गया चित्रांकन भी अत्यंत सराहनीय है। बधाई....।

— शंभुनाथ पाड़िया 'पुष्कर', चक्रधरपुर, बिहार

* * *

नवनीत के अप्रैल-९१ के अंक में प्रकाशित 'लोक कहावतों में रोगमुक्ति के नुस्खे' (चंद्रकांत यादव) उपयोगी है। निश्चय ही हमारी देशी चिकित्सा पद्धति के नुस्खे लोक कहावतों में बिखरे वह अमूल्य धरोहर हैं, जो आज के रोगों में जकड़े मानव को ऐलोपैथिक चिकित्सा की महंगी प्रणाली की अपेक्षा सरल सस्ता व स्थायी रोग-निदान में सहायक हैं। विभिन्न रोगों के निवारणार्थ प्रयुक्त नुस्खों का जन सेवार्थ प्रकाशन के लिए लेखक व **नवनीत** परिवार को हार्दिक बधाई।

—सुजाता यादव, वाराणसी, उ. प्र.

* * *

नवनीत के अप्रैल-९१ अंक में प्रकाशित सभी लेख, कहानियां व कविताएं रुचिकर हैं। दो-दो साहित्यकारों - 'प्रसाद' एवं 'अज्ञेय' पर प्रकाशित लेख पढ़कर मन प्रफुल्लित हो उठा। इसाक अश्क के गीत श्रेष्ठ हैं। राजेन्द्र तिवारी की ग़ज़ल की हर पंक्ति मन को गहराई तक छू गयी।

— ओमप्रकाश 'मंजुल' जबलपुर

* * *

नवनीत अप्रैल-९१ का अंक प्राप्त हुआ। **नवनीत** ही ऐसी सुरुचिपूर्ण पत्रिका है, जिसे पूरे मनोयोग से पढ़ता हूं। 'अज्ञेय' (रामलाल शुक्ल) महाकवि 'प्रसाद' (डॉ. लक्ष्मीशंकर व्यास) तथा 'योगक्षेमं' (दुर्गाप्रसाद मंडेलिया) लेख उच्चस्तरीय व साहित्यिक तृप्तिदायक हैं। 'प्रेमतपस्वीः ईसुरी' की रोचकता अभिवृद्धि की ओर ही है। 'श्रीकृष्ण' (कु. माधवी पाटील) ने श्रीकृष्ण के जीवन से युक्तियुक्त व ठोस उदाहरण दिये हैं। 'किसकी बहू' कहानी तथा अन्य रचनाएं भी अच्छी बन पड़ी हैं। मुखपृष्ठ का चित्र चित्ताकर्षक है, लेकिन व्यंग्य-चित्र स्तरीय नहीं है।

— प्रमोद त्रिवेदी 'पुष्प', राजपुर, म. प्र.

* * *

विशेष आकर्षक मुखपृष्ठ से सजा **नवनीत** का अप्रैल—९१ अंक पढ़कर मन खुशी से झूम उठा। मैं दो अंकों से **नवनीत** का पाठक बना हुआ हूं। **नवनीत** में अन्य पत्रिकाओं से हटकर कुछ अलग ही सुंदर चीजें पढ़ने को मिलती हैं। वैसे मैं विभिन्न प्रकार की पत्रिकाओं को पढ़ता हूं, लेकिन अब **नवनीत** को ही प्राथमिकता देने लगा हूं। कहानियां तथा लेख मन को बहुत ही भाते हैं। स्वस्थ ज्ञान और स्वस्थ मनोरंजन के लिए **नवनीत** बेजोड़ है। अपने नाम को बखूबी सार्थक कर रहा है।

— दिनेशचंद्र प्रसाद 'दिनेश', अलीपुर, कलकत्ता, प. बं.

* * *

नवनीत का मार्च अंक अपनी वैविध्यपूर्ण रोचक सामग्री के कारण

विशेष पसंद आया। मधुर नज़मी द्वारा आयोजित परिचर्चा 'आज के दौर में कविता' समसामयिक सन्दर्भों को रेखांकित करती है। श्री बद्रीनारायण तिवारी द्वारा 'बरान्निकोव' पर प्रस्तुत तथ्यों से कई अप्रकाशित बिन्दुओं पर प्रकाश पड़ा है। प्रेमतपस्वी : ईसुरी (अम्बिका प्रसाद 'दिव्य') का जीवन्त कथापरक सामाजिक उपन्यास है। श्री कृपाशंकर 'अचूक' की ग़ज़ल ने विशेष प्रभावित किया। डॉ. दुर्गाशंकर मिश्र का जगदम्बा प्रसाद 'हितैषी' पर संस्मरणात्मक लेख प्रभावपूर्ण बन पड़ा है। उन्होंने लिखा है - 'हितैषीजी उर्दू और फारसी के भी अच्छे ज्ञाता थे। उनकी एक ग़ज़ल उन दिनों बहुत लोकप्रिय हुई थी -

शहीदों की चिताओं पर जुड़ेंगे
हर बरस मेले।
वतन पर मरने वालों का यही
बाकी निशां होगा।।

वस्तुतः यह ग़ज़ल 'हितैषी'जी की लिखी नहीं, अपितु शहीद अशफ़ाकउल्ला खां की हैं। इस तथ्य की पुष्टि पं. बनारसीदास चतुर्वेदी सहित कई लेखकों ने की है। शहीद अशफ़ाक पर प्रकाशित ग्रंथ (सम्पादक पं. बनारसीदास चतुर्वेदी) में उक्त ग़ज़ल संकलित भी है। — **उमाशंकर शुक्ल 'उमेश',**
हमीरपुर, उ. प्र.

नवनीत हिंदी साहित्य की उत्तम पत्रिका है। मार्च-१९९१ का अंक तो संग्रह योग्य है। प्रेरणास्पद रचनाएं मन को छू लेती हैं। इस दष्टि से 'एक थी अम्मा' (सरला अग्रवाल) व 'सच्चा साधु' (विजय प्रकाश त्रिपाठी) तथा 'भोर का चिराग' (राज भटनागर देवयानी) को तो मैं विशेष बधाई देना चाहता हूं, जिनकी विशिष्ट रचनाओं द्वारा **नवनीत** पल्लवित हो उठी।

— राम वाजपेयी, चंडीगढ़, पंजाब

* * *

नवनीत का मार्च अंक देखा। **नवनीत** ने उत्कृष्टता की एक परंपरा निभायी है। मार्च-९१ के अंक में 'जगदंबा प्रसाद मिश्र' 'हितैषी', 'सिक्ख दरबार की चित्र शैली', 'गंगा और वोल्गा के सेतु वरान्निकोव', 'एक थी अम्मा', 'गधे का वी.आई.पी. ट्रीटमेंट' विशेष अच्छी लगीं। इनके लेखक डॉ. दुर्गाशंकर मिश्र, डॉ. राम स्वरूप पल्लव, बद्रीनारायण तिवारी, सरला अग्रवाल तथा शीला टावरी बधाई के पात्र हैं।

—जगदीश 'जगेश', कानपुर, उ.प्र.
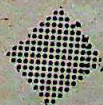
नवनीत

संपादक गिरिजाशंकर त्रिवेदी
उप-संपादक रामलाल शुक्ल
अतिरिक्त सहयोग किशोरीरमण टंडन
प्रकाशक सु. रामकृष्णन्
वर्ष ४०, अंक ६

संस्थापक : कन्हैयालाल मुंशी
भारती : स्थापना १९५६
श्रीगोपाल नेवटिया
नवनीत : स्थापना १९५२

जून १९९१

आवरण-चित्र : एस. निम्बालकर (ले चल नदिया पार)

चित्र-सज्जा : ओके, शेणै, चांद, बम्ब, भारती, भाऊ समर्थ, नैयर आजम

कार्यालय : भारतीय विद्या भवन, क. मा. मुंशी मार्ग, बम्बई - ७

जनजीवन की मान्यता

राहु-कालम् और दक्षिण भारत

□ सुलक्षणा
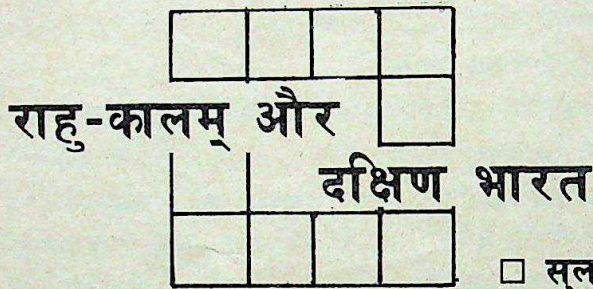
दक्षिण भारत के जनजीवन में 'राहु-कालम्' एक ऐसा शब्द है, जिससे सब परिचित हैं। तमिल, तेलुगु, कन्नड और मलयाली बोलनेवाले दक्षिणवासी हिन्दू हों, ईसाई हों या मुस्लिम हों, सब राहु-कालम् को मानते हैं। नौकरी पेशेवाला हो या व्यवसायी, विद्यार्थी हो या अध्यापक, नौकर हो या मालिक, सब राहु-कालम् के अस्तित्व को स्वीकारते हैं। दक्षिण भारतीय कितना भी आधुनिक हो या शिक्षित हो और पुराने रीति-रिवाजों और अंधविश्वासों को नकारनेवाला हो, पर जब बात राहु-कालम् पर आती है तो वह घुटने टेक देता है। जिस प्रकार हर कैलेंडर में छुट्टियों और त्यौहार अंकित रहते हैं, उसी प्रकार कैलेंडरों में 'राहु-कालम्' को भी एक विशेष स्थान प्राप्त है, अगर कभी आप भूल भी जायें कि राहु-कालम् कब है तो आप कैलेंडर देखकर याद कर सकते हैं।

यह सर्वविदित और सर्वत्र चर्चित राहु-कालम् का परिचय आप भी प्राप्त करना चाहेंगे? राहु नाम सुनकर आप यह मत सोच लीजियेगा कि यह भी कोई ग्रह है, क्योंकि राहु और केतु के बारे में तो आपने जरूर सुना होगा। राहु और केतु की दशा तो मनुष्य के जीवन चक्र में एक बार आती है और चली जाती है, पर राहु-कालम्, प्रतिदिन निश्चित समय पर आता है और जाता है। यह एक ऐसी समयावधि है, जिसे अशुभ माना जाता है और इस अवधि के दौरान कोई भी शुभ काम शुरू नहीं किया जाता, यात्रा के लिए प्रस्थान नहीं किया जाता और महत्वपूर्ण निर्णयों पर फैसला नहीं किया जाता। यह अवधि सूर्य की चाल से निर्धारित की गयी है और सप्ताह के हर दिन में उसका समय निश्चित है। यह समय डेढ़ घंटे का है। यह डेढ़ घंटा अलग-अलग दिन भिन्न-भिन्न समय पर होता है।

सप्ताह का पहला दिन सोमवार है और सोमवार को राहु-कालम् का समय सुबह साढ़े सात बजे से नौ बजे तक होता है। मंगलवार को दोपहर तीन से साढ़े चार बजे, बुधवार को दोपहर १२ बजे से डेढ़ बजे तक, बृहस्पतिवार को दोपहर डेढ़ बजे से तीन बजे तक, शुक्रवार को साढ़े दस से बारह बजे तक, शनिवार को सुबह नौ से साढ़े दस और रविवार को शाम साढ़े चार बजे से ६ बजे तक होता है। दक्षिण भारत में जन साधारण तक को यह समय याद है। आप किसी से भी पूछ लीजिये, इस ज्ञान से सब परिचित मिलेंगे। केवल इसका परिचय ही काफी नहीं, यहां लोग विश्वास के साथ इसको मानते भी हैं।

कभी-कभी ऐसा भी होता है कि राहु-कालम् के समय यात्रा के लिए निकलना ही पड़ता है। ऐसी अवस्था में लोग राहु-कालम् से पहले ही अपना सामान निकालकर घर से बाहर रख देते हैं और बाद में दही-चावल खाकर घर से निकलते हैं। अधिकांश स्त्रियां राहु-कालम् के समय मंदिर जाना और पूजा करना उचित मानती हैं। राहु-कालम् अशुभ समय माना जाता है। इसलिए पूजा पाठ के द्वारा उसको शांत किया जाता है।

राहु-कालम् का जन्म कैसे हुआ, यह कोई नहीं जानता। पर इसकी ख्याति अत्यधिक है। कुछ लोग ऐसे भी मिल जाते हैं जो कि कहते पाये जाते हैं कि वे राहु-कालम् को नहीं मानते, पर यदि उन्हें कोई टोक दे कि इस समय में अमुक शुभ काम नहीं करो तो वे फौरन न चाहते हुए भी सलाह मान लेते हैं। यहां के लोगों के मन मस्तिष्क में राहु-कालम् ने अपनी जड़ें जमायी हुई हैं। राहु-कालम् का विचार करना उनकी आदत में शामिल हो चुका है।

दक्षिण भारतवासियों का यह 'हौवा' राहु-कालम् केवल भारत के दक्षिणी क्षेत्र तक ही सीमित है। भारत के अन्य प्रांत और क्षेत्र इस रोग से अछूते हैं।

— ६५, सी. पी. रामास्वामी रोड,
चौथी स्ट्रीट, अभिरामपुरम्
मद्रास-६०० ०१८

चंदे की दरें : एक वर्ष ६५ रु.; दो वर्ष : १२० रु.; तीन वर्ष : १७० रु.; पांच वर्ष : २९० रु.; दस वर्ष : ५६० रु. □ विदेशों में समुद्री मार्ग से (एक वर्ष के लिए) पाकिस्तान, श्रीलंका : १२० रु.; अन्य देश १८५ रु. □ हवाई डाक से (एक वर्ष के लिए) प्रत्येक देश के लिए : ३१० रु.; □ बम्बई से बाहर के चेक भेजने वाले ७ रु. अधिक भेजें □ चेक ड्राफ्ट 'भारतीय विद्या भवन' के नाम से भेजें।

राजभवन
मलाबार हिल
बम्बई

प्रिय सुहद,

मैंने दिनांक २८ दिसम्बर १९९० को भारतीय विद्या भवन, बम्बई में अखिल भारतीय संस्कृत व्याख्यान समिति की अध्यक्षता की। लगभग दो सौ विद्यार्थियों ने व्याख्यान शैली (काव्य-पाठ) स्पर्धा में भाग लिया था। जो सचमुच बहुत प्रशंसनीय कार्य था। मैं अपने संस्कृत विषयक ज्ञान का आदान-प्रदान आप से करना चाहता हुं।

संस्कृत विगत इतिहास का कोषागार है। यह शताब्दियों से देश को संगठन और एकता के सूत्र में बांधनेवाली शक्ति रही है, जिसने हमें सदियों के भाग्य-विपर्यय और असंख्य आघातों को सहने और आत्मसात करने की क्षमता दी है। हमें उत्तराधिकार में पांच हजार वर्षों से संस्कृत से रीति-रिवाज, आचार और परम्पराएं, धर्म और दर्शन, स्थापत्य निर्माण और शैल्पिक सृजन, संगीत नृत्य, नाटक और चित्रकलाएं और इससे भी अधिक संस्कृत भाषा और संस्कृत साहित्य मिला है। संस्कृत शब्द का अर्थ ही सभ्य या परिष्कृत होना है। संस्कृत काल क्रमानुसार उत्तराधिकार में प्राप्त सर्वश्रेष्ठ भाषा है।

संसार में भारत का सम्मान पुरातन संस्कृति और श्रेष्ठ मूल्यों के कारण है। और संस्कृत सनातन मूल्यों का अविनष्ट संचित अक्षयपात्र है। भारत की प्राचीन भाषा संस्कृत तुलनात्मक दृष्टि से ग्रीक से अधिक पूर्ण, लैटिन से अधिक समृद्ध और विश्व की अन्य भाषाओं की अपेक्षा दूसरे क्षेत्रों में भी अत्युत्तम, परिष्कृत संस्कृति सम्पन्न भाषा है, जो न केवल भारत के लिए है, अपितु सम्पूर्ण मानव-मात्र के लिए भी है।

संस्कृत भाषा का क्षेत्र बड़ा विशाल और व्यापक है, जिसका प्रारंभ ऋग्वेद के अति प्राचीन धार्मिक ऋचाओं से होता है। हमें यह कभी नहीं भुलना चाहिये कि संस्कृत ने ही हमें अठारहवीं शताब्दी में भाषा-विज्ञान के वैज्ञानिक अध्ययन

की प्रेरणा दी। इसके अभाव में तुलनात्मक दर्शन विज्ञान के निरीक्षण और सूक्ष्म ध्वनि-विज्ञान की पद्धति के अध्ययन का अवसर नहीं मिलता जो अपने आप में एक पूर्ण ऐतिहासिक व्याकरण है, जिसका प्राचीन व्याकरणाचार्यों ने ध्वनि-विज्ञान के अन्तर्गत अध्ययन किया है, जो आज वैज्ञानिक अध्ययन और परीक्षण की विधि है। महान वैयाकरण पाणिनि ने, जिनकी तुलना में ग्रीक भाषा के अरस्तू और प्लेटो कहीं नहीं ठहरते, संस्कृत भाषा और उसके शब्दों की रचना की व्युत्पत्ति का अध्ययन अपनी अद्वितीय पुस्तक 'अष्टाध्यायी' में किया है।

केवल तमिल को छोड़कर भारत की सारी भाषाएं संस्कृत की ऋणी हैं।

महात्मा गांधी के शब्दों में, 'संस्कृत हमारी भाषाओं के लिए गंगा के समान है। यदि संस्कृत गंगा सूख गयी तो स्थानीय प्रादेशिक भाषाओं की चेतना और शक्ति ही समाप्त हो जायेगी। मेरी दृष्टि में संस्कृत का प्रारंभिक ज्ञान अत्यावश्यक है।' पंडित जवाहरलाल नेहरू ने 'संस्कृत को हमारी जाति और जातीय मनीषा की वैभवपूर्ण प्रतिभा कहा है। विरासत में मिली संस्कृत का यह महत्व है कि इसके अभाव में भारतीयता की पहचान की कल्पना नहीं की जा सकती।'

दुर्भाग्य से स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद से संस्कृत के अध्ययन को बहुत क्षति पहुंची है। स्वतंत्र भारत ने संस्कृत को शिक्षा-योजनाओं में पूर्व प्रतिष्ठा दिलाने का कोई प्रभावशाली रचनात्मक कार्य नहीं किया, जिसकी वह अधिकारिणी है। विभिन्न शिक्षा-आयोगों से बहुत अपेक्षाएं थीं, किंतु सारे आयोगों ने संस्कृत के प्रति सम्मान प्रदर्शित कर अपने कर्तव्य की इति मान ली।

मुझे पूर्ण विश्वास है कि उपराष्ट्रपति डॉ. शंकरदयाल शर्मा की अध्यक्षता में नवगठित केन्द्रीय संस्कृत बोर्ड में राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर संस्कृत के अध्ययन और प्रचार-प्रसार में नवीन गति आयेगी।

भारतीय विद्या भवन संस्कृत को राष्ट्रीय जीवन में उचित स्थान दिलाने के लिए अपने स्थापना-काल से अनवरत संघर्ष कर रहा है।

१९५१ में सोमनाथ मंदिर के नवनिर्माण और संस्कार (पुनरोद्धार) के समय एक महत्वपूर्ण कदम यह उठाया कि उसने संस्कृत विश्व परिषद की स्थापना की, जिसके अध्यक्ष तत्कालीन राष्ट्रपति डॉ. राजेन्द्रप्रसाद और सभापति कुलपति के.एम. मुंशी बनाये गये।

परिषद ने पहली बार सम्पूर्ण भारत और विश्व के प्रमुख परम्परावादी और आधुनिक संस्कृत-विद्वानों को देश के विभिन्न स्थानों पर होने वाले अधिवेशनों में एक मंच पर एकत्रित किया।

यह संयोग ही था कि डॉ. राजेन्द्र प्रसाद भवन के संस्थापक सदस्य थे।

सन १९५५ में संस्कृत विश्व परिषद के तिरुपति अधिवेशन में भवन के उच्च स्तरीय प्रतिनिधि मंडल में भूतपूर्ण न्यायाधीश श्री चन्द्रशेखर अय्यर, न्यायाधीश एम. पतंजलि शास्त्री, सरदार के.एम. पणिक्कर, अनंत शयनम आयंगार, न्यायाधीश टेक चन्द और प्रो. जे.एच. दवे शामिल थे। अधिवेशन में भारत सरकार से संस्कृत के समन्वयन, मानकांकन और विकास के लिए केन्द्रीय संस्कृत बोर्ड की स्थापना की अपील की गयी। प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू ने हमारी अपील (सुझाव) स्वतः स्वीकार कर ली। तत्पश्चात् अक्तूबर १९५६ में भारत सरकार ने सुनीति कुमार चटर्जी के समापतित्व (अध्यक्षता) में संस्कृत आयोग नियुक्त किया गया, जिसमें भवन का भी एक सदस्य था।

भारतीय विद्या भवन स्वेच्छया संस्कृत के विकास के लिए अपना लघु योगदान देता चला रहा हैं।

भवन की सबसे पुरानी शाखा, मुंबादेवी आदर्श संस्कृत महाविद्यालय, जिसकी स्थापना १९३९ में हुई थी, पिछले पांच दशकों से संस्कृत शास्त्रों के उच्च अध्ययन, वैदिक धर्म संस्कार और भारतीय भौतिक ज्योतिष शास्त्र के अध्यनन के प्रमुख केन्द्र के रूप में विकसित हुआ है। यहां सौ से अधि पूर्णकालिक विद्यार्थी रहते हैं। संभवतः पूरे देश में इस प्रकार पाठशालाओं में अध्ययन करनेवालों सबसे अधिक हैं। महाराष्ट्र, गुजरात मध्य-प्रदेश और हिमाचल प्रदे सरकारों ने भवन दारा प्रदत्त शास्त्री आचार्य पदवियों के बी.ए. और एम. के समकक्ष मान्यता प्रदान की है।

भवन में १९५६ में युवकों औ सामान्य जनता में संस्कृत के प्रचार उद्देश्य से सरल संस्कृत परीक्षा विभा खोला। इसकी परीक्षाएं देश के ३०० विभिन्न केन्द्रों पर होती हैं। विदेशों मारिशस, बर्मा, ट्रिनीडाड, श्रीलंका गुयाना, सूरीनाम, लंदन, लिस्बन न्यूयार्क, बेहरीन और डर्बन में इस केन्द्र हैं। बाल बोध, प्रारंभ, प्रवेश परिचय और कोविद परीक्षाओं के लि हिन्दी, मराठी, सिंधी, गुजराती, तमिल मलयालम, कन्नड और अंग्रेजी स्तरीय पाठ्य-पुस्तकें तैयार की गयी हैं। औसतन ४०,००० विद्यार्थी प्रति वर्ष इन परीक्षाओं में बैठते हैं। अबत दस लाख विद्यार्थी इन वर्गों की सर संस्कृत परीक्षाओं में उत्तीर्ण हो चुके हैं संस्कृत के अध्ययन की विभिन्न क्षेत्रों प्रचारित और प्रसारित करने के उद्दे से भवन ने 'गीता विद्यालय' त 'बुनियादी एवं संस्कृति अध्ययन' विभा (डिपार्टमेंट ऑफ फाउन्डेशन ए

कल्चर कोर्सेज) होता है।

एक सीमित साधनों वाली स्वैच्छिक संस्था द्वारा पूर्णन्याय कर पाना कठिन कार्य है, परन्तु स्वैच्छिक संस्थाएं अपने स्वरूप और कार्य-पद्धति से समर्पित लोगों को सरकारी एजेंसियों की अपेक्षा अधिक आकर्षित करती हैं, जो समस्याओं का समाधान तुलनात्मक दृष्टि से अधिक सस्ते और सरल ढंग से करती हैं। अतः यदि मानव संसाधन विभाग मंत्रालय भवन के प्रमुख केन्द्रों के लिए एक या दो प्रशिक्षित प्रचारक देता है तो भवन प्रसन्नतापूर्वक अन्य गतिविधियां बढ़ा सकता है तथा इन सरल संस्कृत परीक्षाओं का और अधिक व्यापक धरातल पर प्रबंध कर सकता है।

आपका

सी. सुब्रमण्यम

एक कार्यकर्ता जमनालाल बजाज के मुनीम के भाई थे। लगभग ५० वर्ष से उनके परिवार से संबंध रहा होगा। जमनालालजी की वजह से ही सामाजिक व राष्ट्रीय कार्य में वह आगे बढ़े और वर्षों तक उनके नेतृत्व में काम करते रहे। जब उनके जीवन में कुछ विकृति आई तो वह उनके खिलाफ हुए और खुले-आम बुरा-भला कहने लगे।

उन्होंने जमनालालजी के खिलाफ एक किताब लिखी थी। उसको छपाने के लिए उनके पास पैसे नहीं थे। इसका उन्हें क्लेश था। उनका स्वास्थ्य खराब था। जमनालालजी उनसे मिलने गये तो वह सज्जन हमेशा की तरह रोष में ही मिले पर जमनालालजी के यह पूछने पर कि आपने अपना स्वास्थ्य ऐसा क्यों कर रखा है और उसकी देखभाल क्यों नहीं करते, तो उन्होंने कहा कि मैंने आपके खिलाफ एक किताब लिखी है। पैसों की कमी की वजह से उसे छपा नहीं सका, इसका मुझे क्लेश है। जब तक उस चिंता से मैं मुक्त नहीं हो जाता, मेरा स्वास्थ्य ठीक नहीं हो सकता।

जमनालाल बजाज ने उस किताब को छपाने की व्यवस्था करा दी और कहा कि निश्चिन्त होकर अपना स्वास्थ्य ठीक करो, इतनी छोटी-सी बात के लिए अपने-आपको इतनी तकलीफ में क्यों डाल लिया?

वह किताब छपी और जमनालालजी को इस बात से संतोष ही मिला कि उन्होंने अपने एक पुराने साथी के दिल का दर्द दूर करने में मदद की।

— डॉ. गोपाल प्रसाद 'वंशी'
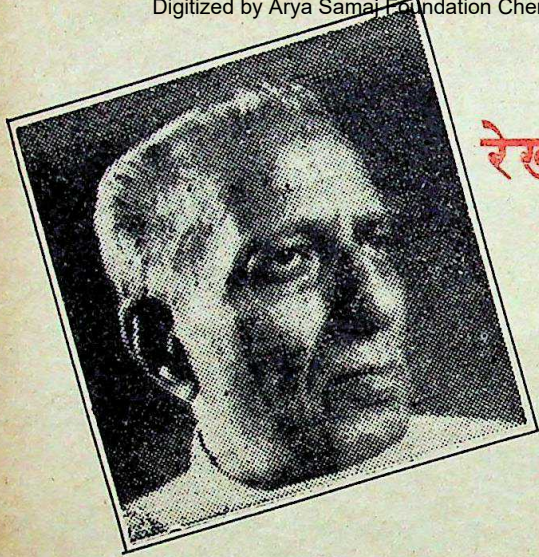
रेखा चित्रकार : भाऊ समर्थ

□

गगन बिहारी दाधीच

चाक्षुष कलाओं में रेखा का तात्विक व सौन्दर्यपरक महत्व माना गया है। पाश्चात्य जगत के कला आंदोलनों से पूर्व रेखा भारतीय कला की शाश्वत पहचान मानी गयी, किन्तु आधुनिक कला ने रेखा को गौण कर व्यक्तिपरक प्रस्तुति व संयोजन के नवीन आयामों में प्रदर्शित करने का अवसर प्रदान किया है। रेखा से जुड़े कलाकारों में नन्दलाल बोस, यामिनी राय व ए. रामचन्द्रन सरीखे कलाकार तो हैं ही, एक अन्य कलाकार और भी है, जिसने आधुनिक भारतीय कला आंदोलनों से प्रभावित कला महाविद्यालय में अध्ययन कर मात्र 'रेखा' को ही अपनी आत्मिक अभिव्यक्ति का साधन मान चेतना के अंतिम क्षणों तक सृजनरत रहा। भाऊ समर्थ नाम के इस समृद्ध रेखा चित्रकार का पिछले दिनों देहान्त हो गया।

मराठी भाषी भाऊ समर्थ बम्बई स्थित जे. जे. स्कूल ऑफ आर्ट से कला शिक्षा के उपरान्त आधुनिक कला आंदोलन से भी कुछ समय तक जुड़े रहे। किन्तु जीवन संघर्ष व आर्थिक परेशानियों से तेल चित्रण करना स्वतः ही बन्द हो गया तो उन्होंने रेखा को कला की मूल आत्मा के रूप में महसूस कर सिर्फ रेखा चित्र ही बनाते रहे, जिनकी संख्या हजारों में है। यायावर प्रकृति के रेखाकार भाऊ समर्थ की कृतियों की एक प्रमुख विशेषता सरलीकृत रूपाकार है, जो बार-बार

देखने पर आकारों की विविधता का सत्याभास कराती है। मूलरूप से भाऊ ने दैनिक जन जीवन के विषयों को आकारित किया है, फिर भी मानवाकृतियों, खास तौर से स्त्री आकृति के प्रति उनके रुझान को उनके सृजन से अलग नहीं किया जा सकता।

ममतामयी व वात्सल्य के भावों से पूरित उनकी स्त्री आकृतियां विषयगत भावों के सांकेतिक रूप में दर्शाती प्रतीत होती हैं। नारी के लगभग तमाम स्थायी व संचारी भावों को उन्होंने इतने सरलीकृत आकारों में संयोजित किया है, कि वे जीवंत स्पन्दन करती महसूस होती हैं। उन्होंने अपनी रेखाकृतियों में शिल्पगत विशेषताओं को अपने नजरिये से इस भांति रचा कि वे इनकी शाश्वत पहचान तक बन गये। उनकी कई कृतियां काव्यात्मक सौन्दर्यबोध के साथ-साथ उनके मार्क्सवादी विचारों को प्रतिभासित कराती हैं। उनकी बनायी कई पुरुषाकृतियां समाज के उस तबके का प्रतिनिधित्व करती हैं, जो मानवीय दुःखों का पर्याय बन चुका है, और जहां अवसाद, संत्रासना, गरीबी के भावों को ढोता 'आम आदमी' भी है।

काव्यमय प्रवृत्ति के इस रेखाकार के रचना संसार में आकृतियों की गूंथन मानवीय भावों को 'फंतासी' से साक्षात्कार कराती है। दैहिक लय की लयात्मकता व भावात्मक सौन्दर्यबोध को आयामों में रखने की कला भाऊ समर्थ बखूबी जानते थे। कला, साहित्य व पत्रकारिता में रुचि रखने वाला शायद ही ऐसा कोई शख्स हो, जो इन्हें न जानता हो। भारत की तमाम हिन्दी भाषी पत्र-पत्रिकाओं के पाठक इनकी रेखात्मक अभिव्यक्ति से परिचित रहे हैं। काव्य व कला के समन्वित रूप को इन्होंने नवीन आयामोन्मुख दिशा प्रदान की। देश के कई प्रमुख समाचार पत्रों में प्रकाशित लेख, कहानी व कविताओं के साथ इनके रेखाचित्र प्रकाशित हुए हैं, साथ ही इन्होंने साहित्य विधा की कतिपय पुस्तकों के आमुख भी डिजाइन किये। इनकी मित्र मण्डली में साहित्यकार मित्रों की अच्छी संख्या थी। यही कारण है कि यदि भारत की प्रमुख लघु व साहित्यिक पत्र-पत्रिकाओं की प्रदर्शनी का आयोजन किया जाये तो भाऊ समर्थ की काव्यात्मक क्षमता को त्वरित रेखानुरूप महसूस कर यह कहा जा सकता हैं कि रेखा की गति शक्ति संकेत का अपना निजी महत्व होता हैं।

तीन वर्ष पूर्व इनके लेखक मित्रों ने इनकी साठवीं वर्षगांठ पर 'भाऊ समर्थः भांत-भांत के रंग' शीर्षक पुस्तक के माध्यम से उनके संघर्षरत, किन्तु कलात्मक व्यक्तित्व व सृजनात्मक कृतित्व को शाब्दिक मूर्तता प्रदान की थी।

अपने रेखाचित्रों के माध्यम से

आधुनिक कला से जुड़े रहने के बावजूद उनकी कला का नजरिया कभी भी व्यावसायिक नहीं रहा। आधुनिक कला के चिर-परिचित मुहावरे 'डिस्टोर्शन' के तात्विक गुणों को इनके रचना संसार में देखा जा सकता है। जहां आकृति के चेहरे व अंगों को सपाट व उभार के आयाम में महसूसना सुखद लगता हैं। रेखाकार भाऊ समर्थ ने अपनी सृजन क्षमता व कलात्मक बिम्बों को समसामयिक साहित्य व पत्रकारिता से संयुक्त कर अपनी शैलीगत पहचान का सत्यापन किया है। इनकी बनायी रेखाकृतियों में स्थूलता व जकड़न का मिश्रण विषयगत अर्थ की परिधि को रेखांकित करता हैं।

पिछले दशक में बनाये कतिपय प्रमुख रेखाचित्रों का कला परिवेश के तहत अवलोकन करें तो महसूस होता है कि संगीत के चरमोत्कर्ष को जिस प्रकार शिल्पकार पाषाण में उत्कीर्ण करता है। उसी भांति मानवीय भावों के स्पन्दन को भाऊ समर्थ अपनी चिर-परिचित रेखाओं के माध्यम से सौन्दर्यानुभूति के क्षण तक सरलीकृत रूप में ले जाने में सफल रहे हैं। उन्होंने अपनी कृतियों को कला नियमों में कभी नहीं बांधा, फिर भी प्राचीन व पारंपरिक कला का रेखामय प्रभाव इन्हें उस परम्परा से जोड़ता प्रतीत होता है। पिछले दो-तीन वर्षों में बनाये इनके रेखाचित्र इस कदर ज्यामितीय लयानुरूप संयोजित हैं कि उनमें भावों की सरलता के साथ ही त्वरित रेखा के नाद-सौन्दर्य को महसूसा जा सकता है।

भाऊ समर्थ होने के व न होने के अर्थ को हम महसूस कर इतना भर कह सकते हैं कि उन्होंने न केवल आधुनिक कला के तहत रेखाचित्रों को उचित स्थान दिलवाया, अपितु युवा रेखाकारों की एक फेहरिश्त भी तैयार की, जिनके लिए भाऊ प्रेरणा व आदर्श पुरुष रहे।

— चित्रकला शिक्षक प्रशिक्षणालय, जैसलमेर - ३४५ ००१ (राजस्थान)
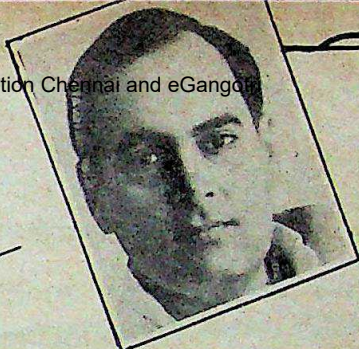
अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी के अध्यक्ष एवं भूतपूर्व प्रधान मंत्री श्री राजीव गांधी का गत २१ मई की रात १० बजकर १० मिनट पर मद्रास के नजदीक पेरुमबदूर नामक स्थान में चुनाव प्रचार के लिए आयोजित एक जनसभा को संबोधित करने के लिए मंच पर जाते समय एक शक्तिशाली बम के फटने से निधन हो गया।

महाराष्ट्र के राज्यपाल एवं भारतीय विद्या भवन के अध्यक्ष श्री सी. सुब्रमण्यम ने स्व. राजीव गांधी के निधन पर अपनी श्रद्धांजलि अर्पित की।

'श्री राजीव गांधी के दुःखद निधन से इस संकटकाल में भारतवर्ष ने एक महान और युवा नेता खो दिया है। मैं नेहरू परिवार से तीन पीढ़ियों से परिचित रहा हूं। यह बड़ी चिंता की बात है कि जब देश लोकतंत्र से गुजर रहा है, उस समय ऐसे व्यापक रूप में हिंसा का प्रसार होना, दुर्भाग्यपूर्ण है। जो भी इस जघन्य कार्य के लिए उत्तरदायी है, उसका यह कार्य अमानवीय है। इस जघन्य कार्य की निन्दा के लिए शब्द नहीं हैं। ऐसे गंभीर राष्ट्रीय संकटकाल में सभी राजनीतिक दलों के नेताओं को एकजुट होकर ऐसा ठोस कार्य करना चाहिये कि भविष्य में हिंसा राष्ट्र पर हावी न होने पाये। मैं पूरी निष्ठा से लोगों से अपील करता हूं कि वे रोष और उत्तेजना से मुक्त होकर इस शोक को मनायें। हमारे दिवंगत नेता के प्रति सही श्रद्धांजलि यही होगी कि इस संकटकाल में हम अपनी एकता बनाये रखें। जिन्होंने यह जघन्य कार्य किया है, उन अपराधियों के प्रति कानून को अपना काम करने देना चाहिये।

मैं श्रीमती सोनिया गांधी और उनके बच्चों के प्रति हार्दिक संवेदना प्रकट करता हूं। ईश्वर उन्हें इस महान आघात को बर्दाश्त करने का साहस प्रदान करे और इस देश को शांति और एकता के पथ पर अग्रसर करे!'

— सी. सुब्रमण्यम

एक रसमयता विसर्जित हो गई जीवन जलधि में

दिवस के द्वादश कलश में, सखि डुबो आई उदधि में ।
एक रसमयता विसर्जित हो गई जीवन जलधि में ।

छलछलाई आंख संस्मृति तिक्त जल पर तैरती है ।
तप्त रेतोली धरणि से सीप शंख बटोरती है ।
एक तन्मयता तिरोहित हो गई अक्षर अवधि में ।
एक रसमयता विसर्जित हो गई जीवन जलधि में ।
दिवस के द्वादशा कलश....।

दूर तक आक्षितिज मेरे प्राण का पंछी उड़ा है ।
भावनाओं का भवन यह नील मणि कौस्तुभ जड़ा है ।
लग रहा सौ बांध बन्धन आप नाची हूं परिधि में ।
एक रसमयता विसर्जित हो गई जीवन जलधि में ।
दिवस के द्वादश कलश .....।

अकृत है कुछ भी नहीं तो, कृत नहीं अपना प्रयोजन ।
कर्म से निर्वेद तक चलना हमें नौ लाख योजन ।
नित्यता को हो समर्पित, खो गई समिधा सुविधि में ।
एक रसमयता विसर्जित हो गई जीवन जलधि में ।
दिवस के द्वादश कलश .....।

शशि वलय को तोड़ती मैं, आ गई रवि के निलय में ।
अमृत अव्यय रूप पौरुष, है जहां नित नव्य वय में ।
एक कांक्षा नित नीमीलित हो गई नैष्कर्म्य निधि में ।
एक रसमयता विसर्जित हो गई जीवन जलधि में ।
दिवस के द्वादश कलश .....।

डॉ. माधवीलता शुक्ला
१५/९१, सिविल लाइन्स, कानपुर - २०८ ००१

मासिक भविष्यफल : जून १९९१

□ पं. वी. के. तिवारी 'ज्योतिषशिरोमणि'

मेष : (१४ अप्रैल - १४ मई)

आपको प्रथम १५ दिवसों में यात्रादि कार्य अपरिहार्य होने पर पर्याप्त सजगता से योजनाबद्ध रूप से करना चाहियें। विशेषरूप से ९ दिनांक उपयोगी सिद्ध नहीं हो सकेगा। यह माह राजनीतिज्ञ एवं प्रतिनिधित्व कर्ता वर्ग के लिए जनसम्पर्क की दृष्टि के श्रेष्ठ है। वाहन सुख उत्तम रहेगा। स्वास्थ्य बाधा संभावित है। निकटतम वर्ग से पूर्वार्ध में तनावपूर्ण वातावरण निर्मित हो सकेगा। मन में कठोरता या क्रोध के परिणाम अच्छे नहीं रहेंगे। धन लाभ की संभावना क्षीण हैं। नये सम्पर्क बनेंगे। उत्तरार्ध में आपकी योजनाएं गतिमान हो उठेंगी।

वृष : (१५ मई - १५ जून)

आपके परिचय का क्षेत्र बढ़ेगा। विरोधी मुंह की खायेंगे। धनलाभ आशातीत होगा। सौभाग्य श्री प्रसन्नता प्रदायनी रहेगी। माह के प्रथम १५ दिन सामान्य ही कहे जा सकते हैं, अनुकूलता की वृद्धि नहीं होगी। कार्य-बाधा मनोबल में कमी करेगी। मनोव्यथा प्रेम संबंधों पर छा जावेगी। विरोधी षड्यंत्र रचेंगे। विवाद या मुकदमे की स्थिति में आपको सफलता मिलेगी।

मिथुन : (१६ जून - १६ जुलाई)

इस माह की विशेषता रहेगी कि समूचा माह पूर्ववत ही व्यतीत होगा। किसी भी प्रकार की उपलब्धि, नये कार्य का श्रीगणेश, मंत्रणा या उद्देश्यविहित यात्रादि कम से कम प्रथमार्ध में अपनी उपादेयता सिद्ध नहीं कर सकेंगे। अपयश, अवमानना, अवहेलना के पल रह-रहकर उपस्थित होंगे। विद्या की दृष्टि से उपयोगी माह है। संतान सुख के पर्याप्त कारण बनेंगे। प्रेम या दांपत्य संबंध और भी मधुर हो उठेंगे। उत्तरार्ध में धन आवश्यकतानुरूप मिलेगा।

कर्क : (१७ जुलाई - १६ अगस्त)

माह के प्रथम १५ दिन वर्ष के श्रेष्ठ समय को लेकर उपस्थित हुए हैं। स्वर्णिम समय को सफलता का सोपान समझकर अपनी आवश्यकतानुरूप कदम निश्चित होकर उठावें। विवाह व संतान दोनों क्षेत्रों में वांछित अनुकूलता प्राप्त होगी। आमोद-प्रमोद, व्यावसायिक सफलता, आय वृद्धि आदि संभावित है। शेष १५ दिनों में शनैः शनैः स्थिति हाथ से निकलती प्रतीत होगी। १८ व २२ दिनांक यात्रादि की दृष्टि से उपयुक्त नहीं हैं।

सिंह : (१७ अगस्त - १६ सितम्बर)

वर्ष की श्रेष्ठ बेला आपके जीवन पथ में उत्थान का आलोक व उत्कर्ष का मार्ग प्रशस्त करने को उपस्थित हुई है। महत्वाकांक्षी मधुरभाषी बनकर समय का सदुपयोग करें। धन लाभ के स्रोत बढ़ेंगे। सहज सफलता-सुयश मन को प्रसन्नता से भर देंगे। परमार्थ कार्यों में रुचि बढ़ेगी। गृह-सुख यथेष्ठ रहेगा। मित्रता व आत्मीयता में वृद्धि होगी। संतान पक्ष से वांछित सुख मिलेगा। स्वास्थ्य व मनोबल दोनों ही दृष्टि से समय अनुकूल है। पत्नी का स्वास्थ्य सुख-बाधा उत्पन्न कर सकता है। यात्रा अथवा स्थान परिवर्तन की संभावना प्रबल है।

कन्या : (१७ सितम्बर - १६ अक्तूबर)

व्यवसायी व राजनीतिक वर्ग हेतु यह माह अंततोगत्वा स्मरणीय यशस्वी वरदान सदृश परिणामदायी सिद्ध होगा। प्रथम १० दिनों में कोई विशेष परिवर्तन नहीं है। यात्रा बाधा अथवा सुख बाधा के साथ उपेक्षा एवं अवमानना मन में दुःख संचारित करेगी। इसके उपरांत शेष समय लंबित प्रकरण आशानुरूप सुलझाने में, सहायक होगा। स्थायी संपत्ति के कार्यों में शीघ्र सफलता मिलेगी। आय में वृद्धि होगी। अधिकारों में वृद्धि होगी। पद व प्रभाव बढ़ेगा।

तुला : (१७ अक्तूबर - १५ नवंबर)

प्रथम १५ दिनों में विरोधी स्थितियों के प्रसार पर नियंत्रण करना दुष्कर होगा। पत्नी का स्वास्थ्य सुख बाधा का कारण रहेगा। अपमान, सफलता व अशांति की स्थिति रहेगी। शेष १५ दिनों में स्थिति एकाएक आपके विपक्ष में होती जावेगी। आकांक्षाएं बलवती होंगी। परंतु विघ्न-बाधाएं एवं असफलताएं बढ़ती जायेंगी। प्रेम संबंध एवं दांपत्य जीवन में कठिनाइयां बढ़ती जायेंगी। नौकरी में उच्चपदस्थ व्यक्तियों के लिए सर्वाधिक पीड़ादायी समय है।

वृश्चिक : (१६ नवंबर - १५ दिसंबर)

इस माह कोई स्थायी या दीर्घकालीन लाभ होने की संभावनाएं उत्तम हैं। पत्नी द्वारा आपके भाग्य में वृद्धि की संभावनाएं प्रबल हैं। मांगलिक कार्य या

उत्सवादि पर व्यय होगा। यात्रा की संभावना प्रबल है। यात्रा अंतिम १५ दिनों में सुखद नहीं रहेगी। रोजगार एवं व्यवसाय में बाधाएं उत्पन्न होंगी। वाहन चालन में सावधानी बरतना उपयोगी रहेगा। शारीरिक व मानसिक कष्ट में वृद्धि होगी। द्वितीय एवं चतुर्थ सप्ताह विशेष बाधा युक्त रहेंगे।

धनु : (१६ दिसम्बर - १३ जनवरी)

प्रथम १५ दिन माह के रोजगार व व्यवसाय की दृष्टि से विशेष अनुकूल रहेंगे। महत्वाकांक्षा बढ़ेगी। मनोबल में वृद्धि होगी। विरोधी पराजित होंगे। धन-लाभ उत्तम होगा। दांपत्य सुख-सुविधा में वृद्धि होगी। राजनीतिक क्षेत्र में आपकी स्थिति यशस्वी रहेगी। माह के शेष १५ दिनों में यात्रा एवं नये कार्य का श्रीगणेश करना उपयुक्त नहीं होगा। धन हानि या अपव्यय बढ़ता जावेगा। मन में खिन्नता रहेगी।

मकर (१४ जनवरी - १२ फरवरी)

दांपत्य सुख या प्रेम संबंधों की दृष्टि से प्रथम १५ दिन आपके लिए सुखकारक नहीं जा सकेंगे। विरोधी-भावनाओं की विषाक्तता आपको त्रस्त कर देगी। मानसिक कष्ट से आप मुक्ति नहीं पा सकेंगे। १६ तारीख से मासांत तक उत्तरोत्तर सुखदायी स्थितियां निर्मित होंगी। आर्थिक स्थिति सुदृढ़ होगी। नयी योजनाएं बनेंगी। सूझ-बूझ एवं धैर्य के साथ विचार उपयोगी रहेंगे।

कुंभ : (१३ फरवरी - १४ मार्च)

यह माह उत्तरोत्तर विषम स्थितियों की वर्षा करंता जावेगा, आप प्रारंभिक दिनों में पूर्ववत अनुकूलता महसूस करेंगे। आर्थिक स्थिति सामान्यतः ठीक रहेगी। स्वास्थ्य यदि खराब है, तो कोई सुधार की गुंजाइश नहीं है। चिंता एवं परेशानियों का सैलाब तो उमड़ता ही रहेगा। परंतु यशवर्धक स्थितियां बनेंगी। प्रथम १५ दिन सामान्य रूप से मिश्रित फलदायी हैं परंतु शेष दिन मासांत तक उत्तरोत्तर प्रतिकूलता से लबालब रहेंगे।

मीन : (१५ मार्च : १३ अप्रैल)

प्रतियोगिता में यश व सफलता मिलेगी । संतान पक्ष से आशानुरूप सुख-संतोष बढ़ेगा। विजयश्री आपके साथ रहेगी। आमोद-प्रमोद का सुखोपभोग होगा। प्रेम संबंध दृढ़ होंगे। प्रथम १५ दिनों में नये मित्र बनेंगे। मनोबल उत्तम रहेगा। धनलाभ होगा सफलता मिलेगी। जबकि उत्तरार्ध में विवाद एवं कष्ट की स्थिति रहेगी।

जून मास के व्रत त्योहार

चतुर्थीव्रत-१; पुत्रदाएकादशी-९; प्रदोषव्रत-१० व २४; मास शिवरात्रि व्रत-११; वट सावित्रीव्रत-१२; रंभा तीजव्रत-१४; विनायक चतुर्थी व्रत-१५; गंगादशहरा-२१; निर्जलाएकादशी व्रत-२२; चतुर्दशीव्रत-२५; पूर्णिमा व्रत-२६; गणेश चतुर्थी व्रत-३०।
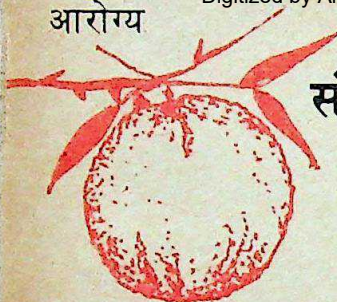
संतरा फल ही नहीं, दवा भी

☐ बालमुकुन्द

संतरा उत्तम स्वास्थ्य के लिए प्रकृति का उत्तम उपहार है। पेड़ पर ही पकने के कारण इसमें विटामिन 'सी' और 'डी' का अद्‌भुत सम्मिश्रण हो जाता है, जो रोगी की रोग निरोधक शक्ति को बढ़ाता है। जीवन तत्वों की दृष्टि से यह बेमिसाल फल है। पर हम इसके गुणों से पूरी तरह परिचित नहीं है, इसलिए इसे भरपूर महत्व नहीं देते।

महात्मा गांधी ने इसके गुणों पर रीझकर ही तो अपना मत इस तरह व्यक्त किया था– 'संतरों के सिवाय और कोई भी फल मेरे लिए आवश्यक नहीं है। अनुभव से मैं बता सकता हूं कि सिर्फ संतरे ही मेरे लिए जरूरी हैं।'

रोग निवारक तत्व

आरोग्यवर्धक और अम्ल रसयुक्त फलों में यह सर्वोत्कृष्ट फल है। आईन-ए अकबरी में इसे 'संतरा' कहा गया है और इसके प्रयोग व गुणों का जिक्र है। इंगलैण्ड के विख्यात डॉ. जानसन संतरे खा-खाकर इसके छिलके जेब में सुरक्षित रखते थे। उन्हें सुखाकर वे चाय, खीर, हल्वे, आमलेट आदि में सुगंध का काम लेते थे। कूड़े को कंचन बना देने वाला यह प्रयोग कितना अच्छा था।

इसमें 'ग्लूलोज' तथा 'डेक्सट्रीज' दो ऐसे तत्व होते हैं जो जीवनदायी तत्वों से परिपूरित हैं। पौष्टिकता की दृष्टि से यह दूध से भी अधिक महत्व का है। इसकी शर्करा में यह विशेष गुण है कि ये शरीर में प्रवेश करते ही रक्त में मिलकर शुद्धिकरण में लग जाती है। इसके पाचन के लिए आमाशय को जरा भी अतिरिक्त मेहनत नहीं करनी पड़ती है।

डॉ. बनारसी जैनी ने इसके गुणों के सन्दर्भ में बड़ी महत्व की बात कही है। वे लिखते है– 'संतरे का सेवन बहुत दुर्बल अवस्था में भी किया जा सकता

है। ऐसी धारणा रखना कि दुर्बल इसे पचा नहीं पायेगा या यह किसी अन्य रूप से हानि पहुंचायेगा सर्वथा मिथ्या है। इसके अतिरिक्त कोई अन्य फल नहीं, जो इसके सदृश सरलता से पच जाता हो। इसके रस का एक न एक अणु स्वास्थ्यप्रद और शक्ति दायक है। दौर्बल्य का तो मानों संतरा घातक शत्रु है। वैज्ञानिकों के विभिन्न प्रयोगों ने सिद्ध कर दिया है कि यदि आधा छटांक संतरे का रस आधा सेर दूध के साथ मिला कर बच्चों को दिया जाये तो उनके वजन में वृद्धि होगी। आंतों की बीमारियां, अजीर्ण आदि उनसे दूर ही रहेंगे।'

प्राकृतिक चिकित्सा विशेषज्ञ डॉ. बिट्ठलदास मोदी ने रक्त शुद्धि के लिए उपवासों में इसके रसाहार पर अनेक प्रयोग किये हैं। वे इसे शरीर शोधक व फलों में महत्वपूर्ण निरन्तर लेने योग्य बताते हैं। इसका रेशा व फांकों का छिलका भी खाना चाहिये।

मानसिक तनावों, रक्तस्राव वृद्धि, हृदय व मस्तिष्क की गर्मी के विकारों, अजीर्ण, कोष्ठबद्धता आदि में भी इसका रस परम गुणकारी सिद्ध हुआ है। मौसम में यह सस्ता व बहुतायत से मिलता है। शरबत शिकंजी आदि के रूप में इसका प्रयोग होता ही है। छिलकों व रेशों की चटनी भी बनायी जाती है, जो स्वादिष्ट पेट के रोगों के लिए गुणकारी होती है।

रोग निवारक नुस्खे :—

इन्फलुएंजा में यदि संभव हो तो संतरे का रस लगातार एक सप्ताह तक लेते रहें। संतरे को रेशों समेत खाना भी बड़ा गुणकारी साबित होगा।

हर तरह के बुखार में रोगी के लिए संतरे का रस, पानी, दवा और भोजन का काम देता है। पेट की गर्मी को रोकता है। बुखार के विषैले माद्दे को रोकता है। इसका शरबत भी प्रयोग करके मुंह का जायका सुधार सकते हैं।

स्कर्वी में ३-४ दिन संतरे का रस सेवन से मसूड़ों में होने वाला रक्तस्राव रुक जाता है।

मुहांसों में संतरे का रस विष शमन करता है। संतरों के छिलके मुंह पर रगड़ने से चेहरा दमक उठता है। संतरों को छीलकर छिलके सुखाकर पीस लें व थोड़े से चने के बेसन में मिलाकर उबटन बना लें। इसे लगाकर सुखा लें। चेहरे पर फिर ताजे पानी से धोकर चेहरा रगड़ लें। मुंहासे कुछ ही दिनों में करीब-करीब मिट जाते हैं।

उदरशूल या पेट के रोगों में बड़ी पीड़ा होती है। ऐसे रोगियों को संतरे के वृक्ष की छाल का क्वाथ केवल एक या दो बार पिलाने से उसकी असहनीय पीड़ा छूमन्तर हो जाया करती है।

संतरे के छिलकों को कूट कर साफ सरसों या खोपरे या तिल के तेल में डालकर धूप में कुछ दिन रख दें तो तेल

मनमोहक सुगन्ध से भर देगा। बालों की जड़ें कमजोर होने, गिरने, सफेद होने और सिर दर्द से बचाव होगा। धैर्यपूर्वक कुछ दिन लगातार प्रयोग करना चाहिये।

अतिसार में छिलके सुखाकर, सूखे मुनक्कों के बीच समान मात्रा में घोटकर पिलाने से रोगी के दस्त बन्द हो जाते हैं। लगातार तीन-चार दिन लेने से पेट की आंव नष्ट हो जाती है। मरोड़े आना बन्द हो जाता है।

पाचन के रोगियों को संतरे का रस गरम करके काला नमक और सौंठ का चूर्ण पीस कर मिला कर दें। आमशय के रोगों में यह पेय रामबाण है।

वमन और जी मिचलाने पर संतरे का रस या शरबत दें। इसके पेड़ की छाल को पीसकर पिलाने से वमन कैसी भी स्थिति का हो रुक जाता है।

पुराने घावों, चोटों आदि के घावों को पकाने के लिए इसके पत्तों को गरम कर उनकी पुल्टिस बांधने से लाभ होगा।

इस तरह संतरा केवल फल ही नहीं, रोग निवारक भी है।

— बी-११६, विजय पथ,
तिलकनगर, जयपुर - ३०२ ००४

□

सच्चा साधु

एक बार बुद्धिजीवियों की एक बैठक में तत्कालीन अमेरिकी राष्ट्रपति अब्राहम लिंकन भी थे। उस बैठक में 'सच्चा साधु कौन है?' विषय पर चिंतन हो रहा था। लिंकन मौनपूर्वक उस बैठक की कार्यवाही देख रहे थे।

अंत में उस बैठक में बुद्धिजीवियों ने सच्चे साधु की परिभाषा प्रस्तुत की— 'मिले तो खाये, न मिले तो चुपचाप ईश्वर का ध्यान करे।'

बुद्धिजीवियों की सभा द्वारा यह परिभाषा स्वीकृत भी हो गयी। तब लिंकन से रहा नहीं गया। उन्होंने खड़े होकर कहा — 'इस परिभाषा में अभी कुछ कमी है,' अपने राष्ट्रपति द्वारा ऐसा कहने पर बुद्धिजिवियों में आत्ममंथन तथा उत्सुकता बढ़ गयी।

उन्होंने, लिंकन से पूछा— 'महोदय! इसमें अभी क्या कमी है?'

तब लिंकन ने कहा था— 'सच्चा साधु वह है, जो न मिलने पर चुपचाप ईश्वर का चिंतन करे तथा मिलने पर बांटकर खाये।'

— उमेशचन्द्र चतुर्वेदी

सांस्कृतिक मंच

रेणु-स्मृति में आयोजन

'निष्ठा' मंच के तत्वावधान में गत दिनों फणीश्वरनाथ रेणु की पुण्य स्मृति में दो दिवसीय साहित्यिक आयोजन इलाहाबाद में हुआ। पहले दिन सर्वप्रथम नवभारत टाइम्स के संपादक राजेन्द्र माथुर एवं गीतकार रमेश रंजक के आकस्मिक निधन पर 'निष्ठा' के अध्यक्ष प्रताप सोमवंशी द्वारा शोक प्रस्ताव पढ़ा गया। बाद में फणीश्वरनाथ रेणु के व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर चर्चा गोष्ठी हुई। जिसकी अध्यक्षता वरिष्ठ कवि एवं चित्रकार डॉ. जगदीश गुप्त ने की। अन्य वक्ताओं में अजीत पुष्कल, यश मालवीय एवं डॉ. अमर सिंह मुख्य थे।

दूसरे दिन प्रथम सत्र में 'हिन्दी ग़ज़ल दशा, दिशा एवं सार्थकता' विषयक गोष्ठी हुई। जिसकी अध्यक्षता बुद्धिसेन शर्मा ने की। मुख्य अतिथि प्रो. फजले इमाम रहे। मुख्य वक्ता प्रख्यात शायर एहतराम इस्लाम थे। गोष्ठी में संजय मासूम, शिवकुटीलाल वर्मा ने भी अपने विचार रखे।

तृतीय एवं समापन सत्र में एक काव्य गोष्ठी हुई। जिसकी अध्यक्षता एहतराम इस्लाम ने की। गोष्ठी में सुषमा सिंह, वसु मालवीय, प्रताप सोमवंशी, सूर्यनाथ, शिवकुटीलाल वर्मा, डॉ. जगदीश गुप्त, कुलदीप 'दीप' तथा अनुज वंसल ने काव्य-पाठ किया। **— बबिता सिंह**

* * *

सम्मान में गोष्ठी

साहित्य अकादमी पुरस्कार से सम्मानित यशस्वी कथाकार डॉ. शिवप्रसाद सिंह के सम्मान में स्वामी सहजानंद सरस्वती महाविद्यालय, गाजीपुर की हिंदी परिषद् के तत्वावधान में आयोजित 'आधुनिक संदर्भ में साहित्यकार की भूमिका' पर एक विचार गोष्ठी संपन्न हुई।

ललित निबंधकार व संस्था के प्राचार्य श्री कुबेरनाथ राय ने कहा कि संन्यास का मौलिक प्रत्यक्ष फल क्या है? कर्म की प्रवृत्ति जैसी होती है, फल की भी वैसी ही प्रवृत्ति होती है।

इस अवसर पर सुविख्यात साहित्यकार डॉ. विवेकी राय ने कहा कि आज के समाज में लोगों के पास समय ही कहां है कि वे कुछ अच्छा पढ़ सकें। प्रो. श्री राम प्रसिद्ध प्रधान ने कहा कि अगर साहित्य

नहीं होता तो हम गंवार हो जाते।

इस समारोह में साहित्यकार, नाटककार, पत्रकार के अलावा हिंदी के कई विद्वान उपस्थित थे। संचालन महाविद्यालय के हिंदी के प्रवक्ता डॉ. मान्धाता राय ने किया।

– मोहम्मद हारून रशीद खान

* * *

अवधी के आयामों पर विचार

सीतापुर 'सुजान साहित्य परिषद' के तत्वावधान में अवधी के विविध आयामों पर एक गोष्ठी आयोजित हुई। अध्यक्षता श्री रामजीदास कपूर ने की। सर्वश्री झंकारनाथ शुक्ल तथा जागेश्वर वाजपेयी की वाणी-वंदना के उपरांत विषय-प्रवर्तन करते हुए श्री सत्यधर शुक्ल (लखीमपुर) ने कहा कि कबीर की 'पूर्वी' अनेक अंशों में अवधी ही है।

श्री बांकेलाल मिश्र 'लाल' (मछरेहटा)तथा डॉ. गणेशदत्त सारस्वत ने अवधी साहित्य की सांस्कृतिक पृष्ठभूमि का सारगर्भित उल्लेख किया।

डॉ. उमाशंकर शुक्ल (लखनऊ) ने कहा कि भाषा की सबसे बड़ी कसौटी यही है कि वह सीधी लोक मानस में उतर जाय। इस दृष्टि से अवधी का वैशिष्ट्य निर्विवाद है। इसी क्रम में उन्होंने पं. वंशीधर शुक्ल को जहां ग्राम्य-प्रकृति का उदात्त शब्द-शिल्पी सिद्ध किया, वहीं पं. चंद्रभूषण त्रिवेदी (रमई काका) को अवधी के विविध आयामों का सफल प्रयोक्ता प्रमाणित किया।

अंत में अवधी भाषा में एक सरस कवि-गोष्ठी में श्री राम सागर शुक्ल, डॉ. सारस्वत, डॉ. उमाशंकर शुक्ल, श्री वासुदेव शुक्ल, कु. अलका बाजपेयी, बांकेलाल मिश्र, 'लाल' तथा अवध बिहारी शुक्ल 'अवधेश' आदि ने भी काव्य-पाठ किया।

आभार-प्रदर्शन 'परिषद' के उपमंत्री श्री हरिशंकर पांडेय ने किया।

– डॉ. गणेशदत्त सारस्वत

* * *
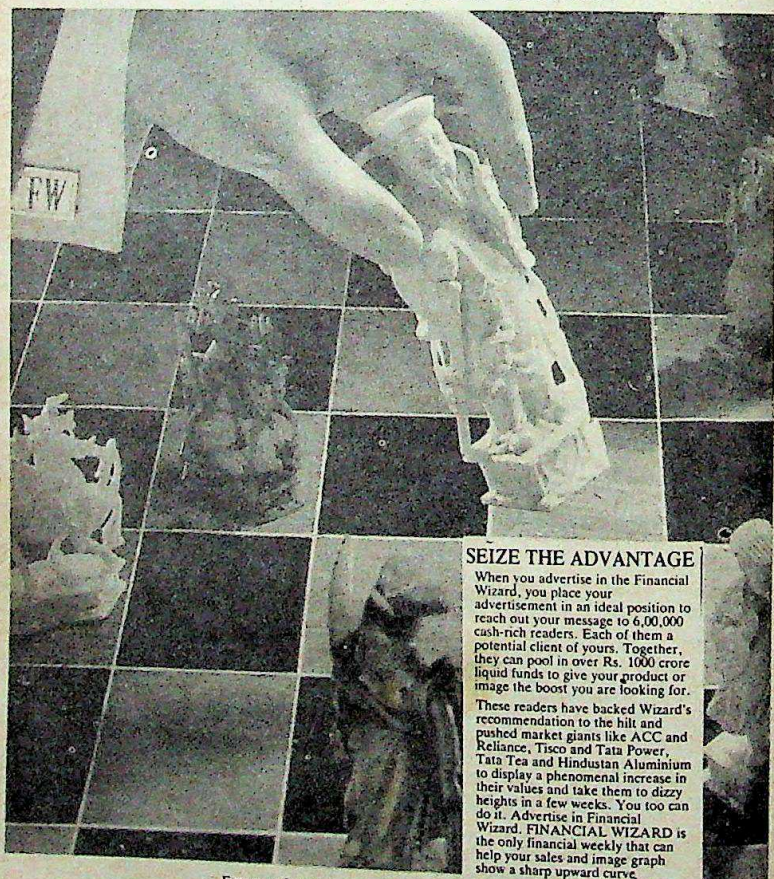
छाया चित्र प्रदर्शनी

सांस्कृतिक राजधानी कही जाने वाली काशी (वाराणसी) में कोई कला दीर्घा नहीं है। यह अन्य नगरवासियों के लिए आश्चर्य का विषय हो सकता है; किन्तु काशीवासियों, विशेषकर कलाप्रेमियों के लिए चिन्ता और दु:ख का विषय है। यह भाव गत दिनों काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के भारत कला भवन में उस समय प्रकट हुआ, जब ललित कला अकादमी के लखनऊ स्थित क्षेत्रीय केन्द्र तथा काशी कलाकार संघ द्वारा ३१ मार्च से ३ अप्रैल '९१ तक प्रथम उत्तर क्षेत्र फोटो प्रदर्शनी-१९९१ का आयोजन किया गया।

सात उत्तरी राज्यों के २८ कलाकारों के सौ से भी अधिक श्वेत-श्याम तथा रंगीन छायाचित्र भारत कला भवन में

लगाये गये। योगीआर्य (चण्डीगढ़), कमर वहीद नकवी तथा अशोक खन्ना (लखनऊ), अनूप साह (नैनीताल) सुरेशचन्द्र शर्मा (शिमला), डॉ. विजय प्रकास सिंह (वाराणसी), ध्रुव यादव (जयपुर), अनिल सराफ (जम्मू) आदि कलाकारों का कमाल दर्शकों ने चाव से देखा। प्रदर्शनी का उद्घाटन काशीराज डॉ. विभूतिनारायण सिंह ने किया। पद्मश्री जदुनाथ सुपकार ने अध्यक्षता की। मानद क्षेत्रीय सचिव, राष्ट्रीय ललित कला केन्द्र, लखनऊ श्री अखिलेश निगम तथा एस.एन. वर्मा ने कार्यक्रम संचालन किया।

— सूर्यकांत त्रिपाठी

* * *

'प्रसाद संदर्भ' का लोकार्पण

डॉ. श्रीमती प्रमिला शर्मा द्वारा सम्पादित 'प्रसाद सन्दर्भ' का लोकार्पण महामहिम उपराष्ट्रपति डॉ. शंकर दयाल शर्मा के हाथों २७ फरवरी १९९१ को उपराष्ट्रपति निवास पर सम्पन्न हुआ। प्रसाद साहित्य के मर्मज्ञ विद्वानों की इस सभा का संयोजन प्रो. विजयेन्द्र स्नातक ने किया। जिसमें डॉ. नगेन्द्र, श्री टी. एन. चतुर्वेदी, आचार्य क्षेमचन्द्र सुमन, श्री के. के.बिरला, श्री प्रभाकर माचवे, श्री वीरेन्द्र नारायण, श्रीमती नन्दिनी डालमिया, श्रीमती राजी सेठ, डॉ. हरदयाल, डॉ. के. के. मित्तल, श्री उषापति भट्ट, डॉ. राजकुमार शर्मा, डॉ. वेदज्ञ आर्य, डॉ. जगदीश गुप्त आदि अनेक विद्वान सम्मिलित थे।

उपराष्ट्रपतिजी ने अपने सारगर्भित भाषण में छायावाद की पृष्ठभूमि से सम्बन्धित अपने संस्मरणों का भी उल्लेख किया।

— प्रज्ञा पारयिता

* * *

श्री मुक्ता शुक्ला का सम्मान

सुप्रसिद्ध कथाकार - नाटककार एवं आकाशवाणी गोरखपुर के सहायक निदेशक श्री मुक्ता शुक्ला के बस्ती आगमन पर 'कला भारती संस्थान' की ओर से एक गोष्ठी, संस्थान के अध्यक्ष श्री राजेन्द्र परदेसी के आवास पर पत्रकार एवं संपादक भारतीय बस्ती के श्री दिनेश चंद्र पांडेय की अध्यक्षता में आयोजित की गयी। सम्मान के प्रति आभार व्यक्त करते हुए श्री मुक्ता शुक्ला ने अपने जीवन के कटु अनुभवों को बताते हुए कहा कि बस्ती का दुर्भाग्य रहा कि यहां की प्रतिभाएं बाहर जाकर ही पनपीं। जिसमें आचार्य रामचंद्र शुक्ल, सर्वेश्वर दयाल सक्सेना और आचार्य लक्ष्मीनारायण लाल आदि हैं। श्री राजेन्द्र परदेसी की ओर इंगित करते हुए आपने कहा कि परदेसी जी अपनी साहित्यिक गतिविधियों के माध्यम से देश के विभिन्न साहित्यकारों को आपस में जोड़ने का सराहनीय कार्य कर रहे हैं। श्री सुरेश श्रीवास्तव के एक प्रश्न

Endi
Endi
The Great and Graceful
Fragrance
SEVEN IN ONE
MYSORE SUGANDHI
DHOOP FACTORY PVT. LTD.
13. Commercial Chambers, Yusuf Meharali Rd.,
P.O. Box 3178, Bombay 400 003.

के उत्तर में शुक्लजी ने कहा कि साहित्यकार को एक प्रबुद्ध पाठक होना चाहिये। — **सुरेश श्रीवास्तव**

* * *

ओरछा में केशव समारोह

पिछले दिनों बुंदेलखंड के ऐतिहासिक व पुरातात्विक स्थल ओरछा (टीकमगढ़)में हिंदी के प्रथमाचार्य महाकवि केशव पर केंद्रित एक समारोह का आयोजन किया गया।

समारोह का उद्घाटन म. प्र. शासन के संसदीय सचिव सुरेन्द्र प्रताप ने किया। इस अवसर पर डॉ. के. डी. वाजपेयी, श्याम सुंदर मिश्र, नर्मदा प्रसाद गुप्त, गार्गी शरण मिश्र, कमला प्रसाद व पूनम चंद्र तिवारी ने 'केशव की कविताई' के विभिन्न पक्षों पर प्रकाश डालते हुए अपने विचार व्यक्त किये।

इस मौके पर साहित्य का ढाई हजार रु. का केशव पुरस्कार श्रवण कुमार त्रिपाठी को उनके उपन्यास 'जय ओरछा' पर दिया गया। इतनी ही राशि का संगीत का रायप्रवीण व मानसज्ञान का रानी कुंअरि गणेश पुरस्कार क्रमशः पवन तिवारी व संत वैदेही शरण को दिया गया।

रात में कवि सम्मेलन में गोपाल दास 'नीरज', इंदिरा 'इंदु', कुंअर बेचैन, डॉ. रमा सिंह, शिशुपाल सिंह 'निर्धन', स्वर्णलता भारती, शशांक प्रभाकर व राजेश दीक्षित ने काव्य-पाठ किया।

संगीत के आयोजन में पद्मश्री असगरी बाई, बृंदावन गंगेले, पन्नालाल जैन, निसार हुसेन, पवन तिवारी, अवधेश द्विवेदी तथा शंभूनाथ कपूर ने शिरकत की।

तीसरे दिन लोकगीत सम्मेलन रेडियो गायक शिवरतन यादव, श्रीमती लक्ष्मी त्रिपाठी, लक्ष्मी प्रसाद तिवारी 'तीर', आजाद यादव, श्रीमती अनीसा बेगम, मालती परमार व व्रजकिशोर पटेरिया ने श्रोताओं का मनोरंजन किया।

चौथे दिन रात्रि को लोकनृत्य 'राई' का आयोजन किया गया। जिसमें ठाकुर सबनसिंह की पार्टी ने अपना गायन व नृत्य प्रस्तुत किया।

समारोह का संयोजन व संचालन श्री हरगोविंद त्रिपाठी 'पुष्प' ने किया। श्री प्रेमचंद जैन ने आभार व्यक्त किया।

— **रामस्वरूप दिक्षित**

* * *

चित्र-प्रदर्शनी

चित्र-प्रदर्शनी का आयोजन कला संस्था 'रंगबोध' एवं स्थानीय सूचना केन्द्र कोटा के संयुक्त तत्वावधान में चार दिवस (२० मार्च से २३ तक) किया गया। प्रदर्शनी का उद्घाटन अंतरराष्ट्रीय ख्याति प्राप्त चित्रकार एवं मेजर जनरल मोतीदर ए. बी. एस. एम. कोटा ने किया। प्रदर्शनी में डॉ.

गोस्वामी के बनाये विभिन्न चित्र शैलियों (राजस्थानी, बंगाली, उड़ीसा, बिहार आदि) के १९ चित्र प्रदर्शित किये गये।

कुल मिलाकर बहुआयामी चित्र शैली से निर्मित डॉ. प्रेम गोस्वामी के ये चित्र कला जगत को एक प्रेरणात्मक संदर्भ प्रदान कर नयी दिशा देते हैं।

— विजय जोशी

* * *

अभिज्ञान परिषद् का उत्सव

विगत १४ अप्रैल को रांची में आयोजित 'अभिज्ञान परिषद' के द्विदिवसीय समारोह के पहले दिन वयोवृद्ध साहित्यकार आचार्य जानकीवल्लभ शास्त्री ने साहित्य एवं कला के क्षेत्र में समर्पित प्रतिभाओं को 'साहित्य गौरव' एवं 'कला गौरव' के अलंकरण प्रदान किये। 'साहित्य गौरव' का अलंकरण छोटा नागपुर के प्रसिद्ध साहित्यकार एवं समाजसेवी श्री जगदीश त्रिगुणायत एवं 'कला गौरव' का अलंकरण संगीत के क्षेत्र में समर्पित प्रतिभा डॉ. सुमन गौड़ को प्रदान किया गया।

समारोह का संचालन डॉ. ऋता शुक्ल एवं धन्यवाद ज्ञापन श्री विपिन तिवारी 'अकुल' ने किया।

— विनोद कुमार लाल

काव्य-संध्या समारोह

डॉ. प्रतीक मिश्र की अध्यक्षता और कमलेश भट्ट 'कमल' के संचालन में तिलक नगर कानपुर में एक काव्य-संध्या का आयोजन किया गया। इसमें नवनीत के संपादक डॉ. गिरिजाशंकर त्रिवेदी मुख्य अतिथि के रूप में उपस्थित थे। उन्होंने सरस्वती की प्रतिमा पर माला पहनाकर कार्यक्रम का प्रारंभ किया। अपने उद्बोधन में डॉ. त्रिवेदी ने कहा कि तमाम विसंगतियों के बावजूद भी हमें निराश न होकर सत्साहित्य की लौ जलाये रखनी चाहिये। सर्वश्री कृष्णानंद चौबे, देवनारायण त्रिवेदी 'देव', प्रेमेन्द्र श्रीवास्तव, राजेन्द्र तिवारी, सत्यप्रकाश शर्मा, अंसार कम्बरी, कमलेश द्विवेदी, दिलीप दुबे, कमलेश भट्ट 'कमल' एव डॉ. प्रतीक मिश्र ने कविता पाठ किया। **— कुसुमलता**

* * *

स्वर्ण जयन्ती समारोह

महाविद्यालय इन्टर कॉलेज, कानपुर का स्वर्ण जयन्ती समारोह मनाया गया। समारोह का उद्घाटन उत्तर प्रदेश के शिक्षा निदेशक श्री वी. पी. खण्डेलवाल ने किया तथा मुख्य अतिथि रहे प्रदेश के राज्यपाल श्री बी. सत्यनारायण रेड्डी।

कार्यक्रम का मुख्य आकर्षण था अन्तरराष्ट्रीय कवि मेला जिसमें यूरोप, इटली, पोलैंड व इंडोनेशिया के कवियों सहित देश के शीर्षस्थ कवियों ने भाग लिया। 'नवनीत' के सम्पादक डॉ.

गिरिजाशंकर त्रिवेदी की अध्यक्षता में सम्पन्न इस समारोह में जिन कवियों ने भाग लिया, उनमें हैं वारसा विश्व विद्यालय पोलैंड की हिन्दी प्राध्यापिका श्रीमती अन्नामीनास, इंडोनेशिया के कवि धर्मचर, गुआना के कवि लथमन ईगोजी, संडे मेल के संपादक कन्हैया-लाल नन्दन, कादम्बिनी के सम्पादक राजेन्द्र अवस्थी, डॉ. गंगा प्रसाद 'विमल', माहेश्वर तिवारी, रमानाथ अवस्थी, भारत भूषण, डॉ. शिव बहादुर सिंह भदौरिया, डॉ. कुंअर बेचैन, श्रीमती शकुन्तला श्रीवास्तव, मधुर नज्मी, माधव मधुकर, विष्णुकुमार त्रिपाठी 'राकेश', मधुरेश चतुर्वेदी, राधेश्याम 'बन्धु', डॉ. माधवीलता शुक्ल, कमल मुसद्दी, गणेश गुप्त तथा सुनील जोगी आदि।

इस अवसर पर डॉ. गिरिजाशंकर त्रिवेदी ने डॉ. माधवीलता शुक्ल की नव्य काव्य-कृति 'बोलते क्षण' का लोकार्पण किया। कार्यक्रम का संचालन किया श्री देव प्रताप नागर ने।

— डॉ. प्रतीक मिश्र

अनोखी सूझ

तेनालीराम ने एक सेठ से ५ सौ रुपये उधार लिये और अपने परिवार के लोगों के साथ कठोर परिश्रम करके एक दुमंजिला मकान बनाया। मकान बहुत सुंदर था। वह अभी नये मकान में गृहप्रवेश भी नहीं कर पाया था कि सेठ आ पहुंचा और बोला, 'तुम पहले मेरा कर्ज चुकाओ फिर मकान में जाना।'

तेनालीराम ने अनुनय करते हुए कहा, 'सेठजी कर्ज चुकाने लायक रकम तो अभी मेरे पास नहीं है। अगर नकद रकम के बदले आप कोई ऐसी चीज चाहें जो मेरे पास हो, तो मैं उसे देकर कर्ज चुकाने को तैयार हूं।'

सेठ यही तो चाहता था। मन ही मन खुश होता हुआ बोला, 'ठीक है अगर तुम्हारे पास नकद रकम नहीं है तो तुम इस मकान की दूसरी मंजिल मुझे दो तुम्हारा कर्जा उतर जायेगा।'

तेनालीराम सेठ की चालाकी समझ गया पर लाचारी में उसने सेठ की शर्त मंजूर कर ली।

सेठ का परिवार तेनालीराम के मकान की दूसरी मंजिल पर रहने लगा।

कुछ दिन बीतने के बाद तेनालीराम ने सात-आठ मजदूरों को बुलाकर मकान की निचली मंजिल तुड़वानी शुरू कर दी। यह देखकर सेठ बौखलाया। तेनालीराम बोला 'तुम्हें इससे क्या? मैं अपनी मंजिल चाहे तोड़ूं, चाहें सजाऊं!'

सेठ को समझते देर न लगी कि तेनालीराम उसकी चालाकी समझ गया है। और इस तरह बदला ले रहा है। तब हाथ-पांव जोड़कर सेठ ने उसे मंजिल तोड़ने से रोका और अपने परिवार को साथ ले वहां से भाग खड़ा हुआ।

□ ज्ञानदेव रा. चौधरी
– शिक्षक, मुलांची शाळा, सावदा-
४२५ ५०२, जि. जळगांव (महाराष्ट्र)

घड़ीसाज घर में आया तो देखा पत्नी किसी ज्योतिषी से बात कर रही हैं। बेचारा चुपचाप बैठ गया। तभी ज्योतिषी की आवाज सुनायी दी। वह भी किसी बुरी घड़ी की चर्चा कर रहा था। घड़ीसाज तुरंत उसके पास गया और बोला, 'घड़ियों के मामले में मुझसे सांठ-गांठकर लो। खराब घड़ियों की मरम्मत करना मैं भी जानता हूं...' बेचारा ज्योतिषी वहां से हाथ मलता हुआ लौट गया।
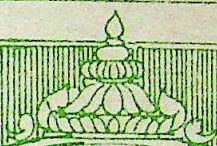
आ नो भद्राः क्रतवो यन्तु विश्वतः

भवन की पत्रिका 'भारती' से समन्वित

नवनीत

मनुष्य के नवोत्थान का सूचक
जीवन, साहित्य और संस्कृति का मासिक

प्रार्थना

यद् द्याव इन्द्र! ते शतं, शतं भूमीरुत स्युः ।
न त्वा वज्रिन् सहस्रं सूर्या अनु न जातमष्ट रोदसी ।।
(अथर्व - २०.८१.१)

एक व्योम क्या ? ऐसे शत-शत अन्तरिक्ष उसमें आच्छादित ।
एक भूमि क्या, सौ भी कम हैं, उसकी थाह अनन्त अगम है ।
एक सूर्य क्या, सूर्य सहस्रों मिल कर भी ना तेरे सम हों ।
पृथिवी और द्युलोक दिवाकर एक नहीं सौ-सौ भी आकर ।
तेरी थाह नहीं पाते हैं तेरे बीच समा जाते हैं ।
तेरा तोल नहीं परिमाण, तुझ सा तू ही है भगवान् ! ।।

(भावानुवाद : **स्व. पं. सत्यकाम विद्यालंकार**

तमिल लघुकथा

बिल्ली की कहानी

□ राजाजी

एक बिल्ली चूल्हे के पास सोयी हुई थी। रात भर चूहे का इंतजार करके थक गयी थी, सो बेचारी दोपहर में गहरी नींद में सो गयी।

पास में उसके तीन बच्चे भी सोये हुए थे। बिल्ली ने एक स्वप्न देखा। उसे हमेशा से एक बाघ बनने की इच्छा थी। आज उसने सपने में देखा कि वह बाघ बन गयी है।

बाघ एक बकरे के पीछे दौड़ने लगा। इसे देख बकरे के मालिक के कुत्ते ने बाघ का पीछा किया। बाघ भागने लगा। कुत्ता उससे भी ज्यादा तेज दौड़कर बाघ के पास पहुंच गया।

इस समय बाघ बनी बिल्ली ने अपनी आदत के अनुसार एक पेड़ पर चढ़कर अपनी रक्षा करनी चाही। लेकिन बाघ बनी बिल्ली को पेड़ पर चढ़ना नहीं आया। अचानक सपने में बाघ फिर बिल्ली बन गया और पेड़ के ऊपर चढ़कर उसने अपनी रक्षा कर ली।
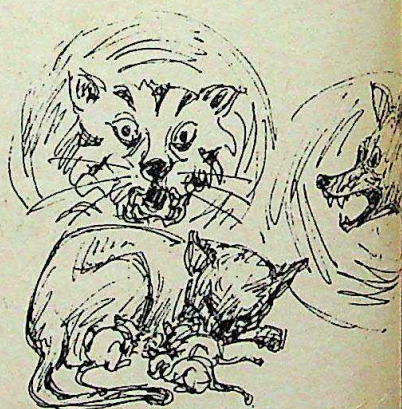
बिल्ली की आंख खुल गयी। उसने सोचा– 'गनीमत है कि मैं बाघ नहीं हूं, बिल्ली हूं। नहीं तो कुत्ते ने आज मेरी जान ले ली होती!'

इसी खुशी में उसने दौड़कर एक गिलहरी को पकड़ना चाहा। गिलहरी पकड़ में न आयी। बिल्ली फिर नीचे उतरकर रसोईघर में छानबीन करने लगी कि किसी ने कुछ खुला रखा है या नहीं। उसे कुछ नहीं मिला, क्योंकि बंदोबस्त पूरा था। वह फिर सो गयी।

दोबारा उसने सपना देखा। अब वह कुत्ता बन गयी थी। एक चोर आया। बिल्ली ने भौं-भौं करके भौंकने के बदले म्याऊं-म्याऊं किया। किसी की नींद न खुली। चोर ने घर के अंदर घुसकर सामानों की सफाई की। दूध नीचे उंडेलकर दूध का भगौना भी ले भागा।

बिल्ली चोर को भूल गयी। नीचे फैले दूध को चाटने लगी। घर की मालकिन ने उठकर ये कहते हुए कि ये कुत्ता निकम्मा है, फिर उसने नीचे पड़ी झाड़ू से उसे मार लगायी। सपने में मार खाते ही बिल्ली जग गयी।

'गनीमत है कि मैं कुत्ता नहीं हूं।' कहती हुई बिल्ली प्रसन्न हुई। दौड़कर मालकिन के चारों तरफ चक्कर लगाते हुए उसके पैरों से लिपटकर लाड़ जताने लगी।

'न बाघ, न कुत्ता, मैं बिल्ली ही बनी रहूंगी', कहकर खुशी में म्याऊं-म्याऊं करने लगी।

मालकिन की समझ में नहीं आया कि बिल्ली क्या कह रही है?

बिल्ली की बातें हम भला क्या समझ सकते हैं? वो तो उसके बच्चे ही समझ सकते हैं। इसीलिए तीनों बच्चे चिल्लाये कि 'वही ठीक है।'

(अनु. : राधा जनार्दन)

नारद को इस बात का बड़ा गुमान था कि उनके जैसा भक्त त्रिभुवन में और कोई नहीं। विष्णु ने उनसे कहा, तुमसे भी बड़ा एक भक्त मेरा है। एक खेतिहर। उसे तुम देख आओ। नारद गये। गरीब खेतिहर बेचारा! तमाम दिन खेत और खलिहान में काम। सुबह जगने के बाद और रात सोने के पहले बस दो बार भगवान का नाम लेता। नारद ने कुछ न समझा। लौटे विष्णु के पास। बोले- 'देख आया आपके भक्त को। ऐसी क्या भक्ति है कि पुल बांध दिया तारीफ का आपने?' विष्णु ने तेल से लबालब भरा एक कटोरा नारद को दिया। कहा, 'हाथ में लिये एक बार शहर का चक्कर काट आओ, मगर देखना एक बूंद भी तेल न गिरे।' नारद तेल-भरा कटोरा लिये शहर का चक्कर काट आये। विष्णु ने पूछा- 'अब बताओ, कितनी बार तुमने मेरा नाम लिया?' नारद बोले- 'नाम? नाम लेने का मौका ही कहां मिला। मैं तो आपके तेल को बचाने की मुसीबत में रहा।' तब विष्णु ने बताया- 'हजारों काम करते हुए भी खेतिहर दो बार मेरा नाम लेता है, वह तुमसे बड़ा भक्त नहीं?'

— डॉ. गोपालप्रसाद 'वंशी'
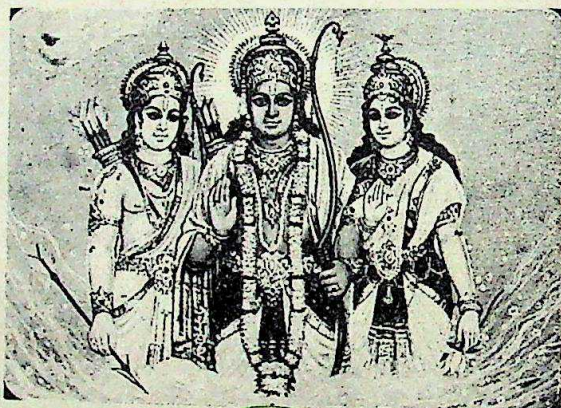
'रामचरितमानस' में लोक-जीवन

☐ कविता राजन

लोक-जीवन का रक्त संस्कृति की शिराओं में सदा से प्रवाहित होता रहा है। काल ने इसे गति दी है, तो भूगोल ने ऊष्मा। फिर साहित्य इनसे कैसे अछूता रहे?

ऋग्वैदिक काल से प्रारंभ हुई 'लोक' शब्द की यात्रा तथा विभिन्न कालों में इसके परिवर्तित अर्थ यह प्रमाणित करते हैं कि कोई भी साहित्य लोक-जीवन की उपेक्षा नहीं कर सकता। वैदिक काल में यह शब्द स्थान-सूचक था। जन-समाज के रूप में इसका रूप बौद्धकाल में सर्वप्रथम सामने आता है। प्राकृत और अपग्रंथ ग्रंथों के 'लोकजत्ता' और 'लोक अप्पवाय' शब्द इसी ओर इंगित करते हैं। व्युत्पत्ति के आधार पर भी 'लोक' शब्द जन समुदाय का बोधक है— 'लोक्यते अनेन इति लोकः'। परिभाषिक विभिन्नताएं हैं, पर विभिन्नताओं की परिधि में भी लोक-

जीवन का तात्पर्यार्थ निकालना कठिन नहीं है। लोक-जीवन नगरों और गांवों में फैली हुई उस सम्पूर्ण जनता का जीवन है, जो शास्त्रीय ज्ञान से रहित है तथा जो परम्परा के प्रवाह में पलती है। शास्त्रीय ज्ञान जब काल के प्रवाह में अनुभव की अग्नि पर तपकर, नम्र होकर, संस्कार का रूप धारण करता है, तभी लोक-जीवन में घुल पाता है। लोक-जीवन की यही वैयक्तिकता रचनाकार को प्रभावित करती है।

तुलसी के संदर्भ में लोक-जीवन और भी अधिक व्यापक रूप में सामने आता है। महाकवि होने के कारण वे स्वभावतः लोक-जीवन के गहन द्रष्टा थे, तो बचपन और युवावस्था में क्रमशः अनाथ और वीतराग होने के कारण लोक-जीवन के भोक्ता! उन्होंने जनता की व्यथा को इतनी गहराई से अनुभव किया है कि रचनाएं अक्सर उनकी व्यथा वेदना बन गयी हैं। उदाहरणार्थ व्यथा, संताप और जीवनानुभव का सम्मिश्र निचोड़ इस वाक्य में सामने आता है – 'जासु राज प्रिय प्रजा दुखारी, सो नृप अवसि नरक अधिकारी'।

प्रबंधकाव्य होने के कारण 'रामचरितमानस' मुख्यतः राम के चरित्र से जुड़ा है। फलतः इससे व्यापक और निरपेक्ष लोक-जीवन के चित्रण की अपेक्षा नहीं की जा सकती। फिर भी परम्परागत भक्ति-प्रधान लोक-चेतना और सरल लोक-परम्पराओं की झलक मिल ही जाती है, क्योंकि हमारी सर्वांगीण संस्कृति के चित्रण के क्रम में इनका होना अनिवार्य हो जाता है। एक बात और है। 'रामचरितमानस' का सर्वोच्च उद्देश्य लोक-जीवन में आदर्शों की प्रतिस्थापना करना है और इस क्रम में ऐहिक आदर्शों के रूप में माता-पिता, पति-पत्नी, गुरु-शिष्य, भाई-मित्र, राजा-प्रजा और सेवक तक का चित्रण किया गया है। व्यक्तिगत, और प्रकारान्तर से समष्टिगत, उलझनों को सुलझाने के क्रम में 'रामचरितमानस' में लोक-जीवन का पारलौकिक आदर्श प्रस्तुत हुआ है। इस प्रकार मानस एक ओर लोक-जीवन की आचार-संहिता है, तो दूसरी ओर जन-जीवन की संस्कृति का दिग्दर्शक!

लोक-जीवन के आचार का मार्गदर्शक होने के अतिरिक्त 'रामचरितमानस' इसके रीति-रिवाजों का प्रस्तोता भी उतना ही है। संस्कारगत रीति-रिवाजों में से लगभग सभी का चित्रण 'मानस' में आया है। यहां जात-कर्म, नामकर्म, चूड़ाकर्म जैसे शास्त्रीय विधानों का चित्रण है, वहीं गौरी-पूजन, गौना (द्विरागमन), भोज-वर्णन, दिव्यप्रथा जैसी लोक-परम्पराओं का भी वर्णन है, जो निःसंदेह तत्कालीन समाज में व्याप्त होंगी। सीता अपने अनुरूप सुभग वर की प्राप्ति के लिए

गौरी-पूजन करती हैं। गौना का उल्लेख सीता की विदाई के अवसर पर राजा जनक के हाथी-घोड़े भेंट करने के संदर्भ में हैं। 'मानस' में भोज-वर्णन दो बार आया है तथा भोज के अंत में पान देने तथा इस अवसर पर स्त्रियों द्वारा गाली-गान के उल्लेख हैं। प्राचीन भारत की 'दिव्य-प्रथा' से सीता भी मुक्त नहीं मानी गयी हैं जिससे इस प्रथा का तत्कालीन समाज में व्यापक होने का प्रमाण मिलता है।

लोक-जीवन से सम्बद्ध कतिपय अलौकिक चीजों का भी वर्णन तुलसीदास ने 'रामचरितमानस' में किया है। मनु और शतरूपा भगवान को पुत्ररूप में पाने के लिए घोर तप करते हैं। राजा दशरथ ऋषि शृंग द्वारा कामेष्टि यज्ञ कराते हैं। अग्नि देवता प्रसन्न होकर हविष्यान्न लिये प्रकट होते हैं, जिसके प्रसाद स्वरूप सभी रानियो को संतान प्राप्ति होती है।

'रामचरितमानस' में दो वैवाहिक वर्णन हैं — शिव-विवाह तथा राम-विवाह। शिव-विवाह में लग्न-पत्रिका, बारात, अगवानी, जनवास, परिछन, जेवनार, यारी, विवाह-लग्न, कन्या का मंडप में आगमन, गणपति-पूजन, कन्यादान, पाणिग्रहण, दहेज और विदाई के उल्लेख किये गये हैं। राम-विवाह में कतिपय अन्य रीतियों का भी समावेश कर लिया गया है। जैसे, सगुन भेजना, वर का मंडप में आगमन, शंखोच्चार, गंठ-बन्धन, भांवरी, सिन्दूरदान, वर-वधू का कोहबर-गमन आदि। विवाहों द्वारा लोक-जीवन के एक महत्त्वपूर्ण पक्ष का ज्ञान होता है, जिसमें अनेक सामाजिक और धार्मिक मान्यताएं सन्निहित होती हैं।

इसी प्रकार मृत्यु और उससे सम्बद्ध आचारों का वर्णन लोक-जीवन के लिए उपयोगी है, परन्तु भारतीय काव्य-परम्परा में इसका चित्रण निषिद्ध माना गया है। तथापि, कथा-प्रवाह के निर्वाह के लिए तुलसी ने 'मानस' में 'दशरथ-मरण प्रसंग' का उल्लेख किया है। शव-स्नान, अर्थी-सज्जा, तिलांजलि और दसगात्र का वर्णन तत्कालीन लोक-जीवन के अध्ययन में समाज-शास्त्रीय दृष्टि से काफी सहायक सिद्ध होता है।

समाजशास्त्रीय दृष्टि से लोक-जीवन में व्याप्त विभिन्न लोकाख्यानों का भी अनन्य महत्व है जो संचित रूप में प्रत्येक समाज में लोक विश्वासों के रूप में पाये जाते हैं। 'रामचरितमानस' में शुभ-शकुन-सूचक अनेक उपादान उपलब्ध हैं। स्वप्न-विचार तथा उससे भविष्य को जान लेने का विश्वास कथानक रूढ़ि के रूप में ग्रहण किया गया है। चित्रकूट में सीता के स्वप्न पर विचार करते हुए राम कहते हैं — 'लख

सपन यह नीक न होई। कठिन कुचाह सुनाइहि कोई।।' इसी प्रकार सुन्दर-कांड में त्रिजटा का स्वप्न भविष्य-निर्देशन की दृष्टि से अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। प्राकृतिक महोत्पात की दृष्टि से रावण की मृत्यु का प्रसंग उल्लेखनीय है जहां आकाश में धूमकेतु दिखायी पड़ते हैं, बिना पर्व के सूर्य-ग्रहण लग जाता है तथा आकाश से रक्त की वर्षा होती है। हस्तरेखा, भालरेखा आदि पर लोक-विश्वास होने का प्रमाण तब मिलता है जब पार्वती की हस्तरेखा देखकर नारद उनके भावी पति के गुणावगुण बतलाने लगते हैं। अमानवीय शक्तियों पर भी विश्वास किया जाता था। तुलसी ने स्वयं अनिष्ट तथा अमंगल दूर रखने के हेतु देव, नर, नाग और किन्नर के साथ इन अमानवीय तत्त्वों की भी वंदना की है। शुभ-अशुभ-सूचक तो अनेक उपादान उपलब्ध हैं। यथा, दक्षिण भाग में काग-दर्शन, नेवला-दर्शन, बछड़े को दूध पिलाती गाय को देखना, पुस्तक लिये दो ब्राह्मणों का आगमन आदि। विशेषता यह है कि तुलसी ने समाज के लिए हानिकारक अंध विश्वासों की भर्त्सना की है। यथा, 'जे परिहरि हरि हर चरन, भंजहिं भूतगन घोर। तिन्ह के गति मोहि देहु विधि जौ जननी मत मोर।।'

कुछ लोकाख्यान ऐसे हैं, जो जन-जीवन में अत्यधिक प्रचलित होने के कारण काव्यरूढ़ि में परिवर्तित हो गये है। 'मानस' में ऐसे लोकाख्यानों का वर्णन विस्तार से किया गया हैं। हंस का नीर-क्षीर विवेक, चंद्र-चकोर, चकवा-चकवी आदि ऐसे ही लोकाख्यान हैं। कुछ लोकाख्यान मूलतः पौराणिक होते हुए भी अपनी प्राचीनता तथा प्रयोग के कारण लोक-जीवन के अंग बन गये थे। तुलसी ने इनका भी सविश्वास वर्णन किया है। जैसे — कल्पतरु, कामधेनु, सर्पमणि, पारस पत्थर आदि।

'रामचरितमानस' की भाषा भी लोक-जीवन की भाषा का प्रतिनिधित्व करती है। शब्द-चयन में तुलसी कभी संकीर्ण नहीं थे। बोलियों से अगणित शब्द चुनकर 'मानस' को अधिक लोक प्रिय और लालित्यपूर्ण बनाया है। सम्पूर्ण 'रामचरितमानस' अवधी में है। इसके अतिरिक्त ब्रज, राजस्थानी, गुजराती, बंगला, बुंदेलखंडी, भोजपुरी आदि उत्तर भारत की लोकभाषाओं के शब्द इसमें प्रयुक्त हैं। लोक-भाषा का प्रयोग मुख्यतः जनता के अशिक्षित, उपेक्षित और पिछड़े हुए वर्गों के लिए हुआ था, जिसमें संत वाङ्मय के अनुरूप तुलसी ने अपने भ्रमणशील जीवन से चुन-चुनकर शब्द संजोये हैं। मुहावरे और लोकोक्तियां जन-जीवन की आत्मा हैं। पगपग पर इनका प्रयोग हुआ है।

डॉ. देवराज का विचार है कि तुलसी ने अपने पात्रों पर — जिनमें जनसमूह
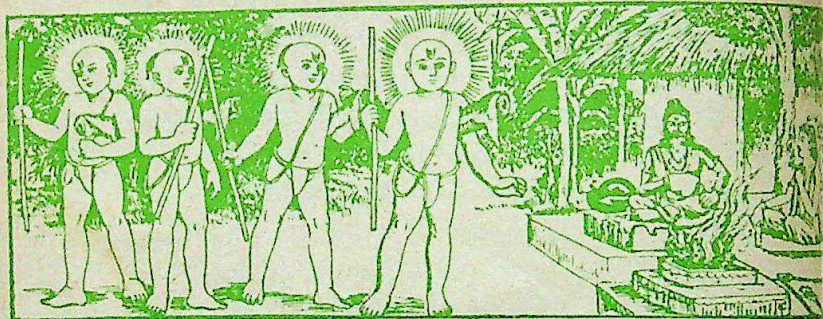
भी शामिल है – व्यक्तिगत भक्ति का आरोप किया है, जिससे लोक-जीवन के चित्रण में अस्वाभाविकता आ गयी है ('आधुनिक समीक्षा: कुछ समस्याएं: पृ. ६८)। पर सोलहवीं शताब्दी के भक्तिकालीन समाज के परिप्रेक्ष्य में यदि मानस में लोक-जीवन भक्त के रूप में चित्रित किया जाता है तो तत्कालीन पाठकों के लिए यह उतना अस्वाभाविक भी नहीं है। सोलहवीं शती तक रामभक्ति की शाखाएं भारतीय समाज में जड़ पकड़ चुकी थीं तथा मानस की रचना के पूर्व रामकथा व्याप्त होकर संस्कार बन चुकी थी, इसलिए तत्कालीन संदर्भों में "अस्वाभाविकता" का आरोप सही नहीं है। किसी भी रचना का मूल्यांकन सर्वप्रथम तत्कालीन संदर्भों में किया जाता है, परवर्ती जीवन-मूल्यों के आधार पर नहीं!

उन्नीसवीं सदी के नवें दशक में डॉ. ग्रियर्सन ने तुलसीदास को बुद्ध के बाद भारत का सबसे बड़ा लोकनायक माना पर लोकनायकत्व का विश्लेषण नहीं किया। बीसवीं सदी के तीसरे दशक में आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने तुलसी की लोकमंगलवादी आस्था की प्रशंसा की पर सामाजिक यथास्थिति के मूल्यों के आधार पर। इस सदी के छठे दशक में डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी ने तुलसी की मौलिकता व्यापक लोक-परंपरा के ज्ञान के कारण मानी। परंतु इन प्रशंसाओं से परे किसी ने यह नहीं देखा कि तुलसी के 'रामचरितमानस' में वर्णित लोक-जीवन का चित्रण तत्कालीन युग की आस्था को समझने की कुंजी सिद्ध हो सकती है। इस दृष्टि से मानस का लोक-जीवन, तुलसी का मानस ज्यादा अच्छा लगता है, जो मनोविश्लेषकों के लिए बहुत मायने रखता है।

– १५ मंदार, बाबूभाई चिनाय रो
बंबई-

हास्य से भी होता है उपचार

☐ जितेंद्रशंकर बजाड़

यह एक विडम्बना ही है कि अधिकांश बुद्धिमान व्यक्ति गम्भीर स्वभाव के होते हैं तथा ज्यों-ज्यों इस प्रकार के लोगों की आयु बढ़ती है वे गंभीर से गंभीरतर होते जाते हैं और एक समय ऐसा भी आता है कि इनकी गंभीरता इन्हें विभिन्न तनावों, रोगों, विकारों से ग्रस्त करके जीवन को दुःखी तथा आनन्दविहीन बना देती है, जबकि ये इस बात को जानते हैं कि सदैव प्रसन्न रहना है हंसते-मुस्कराते रहना एक व्यक्तिगत विशेषता है तो साथ ही साथ शरीर एवं स्वास्थ्य के लिए शुभ भी होता है।

प्रसन्न रहना, हंसना स्वास्थ्य, सौन्दर्य एवं मानसिक संतुलन के लिए एक आवश्यक शर्त है। बिरले पुरुष ही ऐसे होते हैं जो इस बात को पालते होंगे तथा सदैव हंसते रहते होंगे। यह मानना कि हंसोड़ व्यक्ति या बात-बात पर हंसी बिखेरने वाला व्यक्ति सफल प्रशासक, बुद्धिमान एवं विद्वान नहीं हो सकता आज नितान्त गलत है। प्रसिद्ध उपन्यासकार प्रेमचंद व अमृतलाल नागर ने इस बात को अपने ठहाकों से झुठला दिया है। इनके अलावा विश्व में कई प्रसिद्ध वैज्ञानिक, चिकित्सक, राजनीतिज्ञ, सेनाध्यक्ष एवं लेखक, कलाकार आदि हंसोड़ स्वभाव के रहे हैं तथा अपने निजी एवं सार्वजनिक जीवन की प्रत्येक समस्या को सफलतापूर्वक सुलझा कर उन्होंने मानव समाज के समक्ष एक मानदण्ड स्थापित किया है।

महात्मा गांधी के निकटस्थों ने कई स्थानों पर लिखा है कि बापूजी कई बार गंभीर से गंभीर प्रसंगों में भी अपनी विनोदप्रियता के कारण स्थिति को सहज बनाये रखते थे। उन्होंने स्वयं कहा है कि वे भोजन के बिना तो रह सकते थे परन्तु हंसे बिना उनको चैन नहीं पड़ता था। सरदार पटेल जिसे लौहपुरुष कहा गया है स्वयं बचपन से अपने अन्त समय तक हंसोड़ स्वभाव के रहे हैं चाहे उसमें उन्हें

अपने शिक्षक का कोपभाजन बनना पड़ा हो अथवा राष्ट्रपिता बापू तक को ही लक्ष्यगत करके क्यों न हंसने का माध्यम ढूंढ़ना पड़ा हो।

विदेशों में तो हंसने और प्रसन्नचित्त रखने के लिए विभिन्न प्रकार की विधियां, कार्यक्रम एवं प्रयोग बराबर किये गये है तथा उनके परिणाम बेहतर पाये जाने के कारण उनमें उत्तरोत्तर वृद्धि हुई है।

लॉस एन्जिलस के एक अस्पताल में रोगियों की अन्य दवाओं के साथ हंसी की खुराक हमेशा पन्द्रह मिनिट तक पूरी की जाती है। इस हंसाने के कार्य को वहां सवेतन सेवारत हास्य विशेषज्ञ पूरा करते हैं। उन्हें इस अस्पताल में मात्र यही कार्य करने के लिए नौकरी पर रखा गया है। जबकि एक अन्य देश में जेल के कैदियों को सुधारने के लिए एक दिन हंसने-हंसाने के लिए निर्धारित किया गया है। इस दिन कैदियों को हंसी मज़ाक करने की पूरी छूट होती है तथा उन्हें इस दिन काम भी नहीं करना होता है।

शरीर विज्ञानियों के अनुसार हंसने से शरीर का व्यायाम हो जाता है, जो मानसिक सन्तुलन एवं शारीरिक स्वास्थ्य के लिए लाभदायक है। उनकी मान्यता के अनुसार सामान्य हंसी से फेफड़ों, छाती, यकृत, पेट तथा डायफ्राम की कसरत हो जाती है तथा श्वसन तंत्र में रुके विजातीय तत्वों के बाहर निकलने की क्रिया से उसका परिशोधन कार्य होता है। उन्मुक्त हंसी, ठहाकों से भुजाओं, चेहरे तथा पांवों तक में हरकत होकर शान्ति मिलती है, रक्त संचार एवं हृदय गति में बेहतर वृद्धि होती है जो शरीर के लिए जरूरी भी है। शरीर शास्त्रियों के अनुसार विनोदी स्वभाव वालों को पीठ दर्द, तनाव, नीरसता, सिरदर्द और डिप्रेशन जैसी शिकायतें नहीं पाई जाती हैं।

घटना नार्मन किन्सने नामक मनःशास्त्री के जीवन की है। उन्हें रीढ़ की हड्डी में दर्द रहता था, जिसका उपचार वे कई डॉक्टरों व विभिन्न अस्पतालों में करवाकर हार गये थे पर उन्हें इस दर्द से मुक्ति नहीं मिली। एक दिन उनके पास उनके एक विनोदी प्रकृति वाले वकील मित्र आये। वे मित्र नार्मन से कुछ देर तक हंसी-मजाक भरी बातें करते रहे और अन्त में जाते समय एक कागज के टुकड़े पर यह लिखकर चल दिये कि 'प्रत्येक रोग का प्रथम उपचार खिलखिलाना, हंसना, हंसाना ही है।'

नार्मन ने मित्र की इस सलाह को अपनाया तो कमाल हो गया। बीसियों अस्पतालों व डॉक्टरों द्वारा ठीक न हो सकने वाला रोग न जाने कब किस राह से कुछ ही दिनों में निकल भागा कि स्वयं नार्मन को पता तक न चला। नार्मन ने जब हंसने का यह चमत्कार देखा तो उन्होंने यह प्रयोग अपने मित्रों पर भी दोहराया और बड़े अच्छे परिणाम प्राप्त

हुए। इन परिणामों के फलस्वरूप नार्मन ने तो 'लाफिंग पैथी' नामक चिकित्सा पद्धति का विकास किया। इस प्रणाली का मूल सिद्धान्त है 'स्वास्थ्य वृद्धि के लिए दिन में कम से कम एक दर्जन बार खुलकर हंसो!' नार्मन अपनी इस चिकित्सा प्रणाली के तहत मरीजों को हर संभव हंसाने के उपक्रम करते हैं। इनके पास एक ऐसा विशाल पुस्तक संग्रह है जो देश-विदेश से आयातित है तथा इस संग्रह में मात्र हास्य-विनोदपूर्ण सामग्री है जो रोगियों को पढ़ने के लिए उपलब्ध करवाई जाती है।

यही नहीं जब नार्मन के उपचार एवं प्रयोगों की जानकारी एक उस अस्पताल के अधिकारियों को हुई जहां वह अपनी रीढ़ के दर्द का इलाज करवा कर भी दर्द से मुक्त न हो पाये थे तो उस अस्पताल में भी कैटाटोनिक सिजोफ्रेनिया नामक रोग का इलाज हास्य चिकित्सा पद्धति से किया जाने लगा। इसके लिए अस्पताल प्रबंधकों द्वारा एक विदूषक की सेवाएं लेना प्रारंभ किया गया।

अधिक आयु के व्यक्तियों को गंभीरता एवं तनाव अधिक घेरे रहते हैं, क्योंकि वृद्धावस्था के होने से नयी पीढ़ी उन्हें आउट ऑफ डेट समझकर उनसे मिलना-जुलना-बतियाना बन्द कर देती है, जबकि इस अवस्था में उन्हें यह निठल्लापन और एकाकी होना बहुत दुःखदायी होता है। इस समस्या से छुटकारा पाने के लिए वृद्धों के क्लब आदि होते हैं। केलिफोर्निया में इस एकाकीपन को काटने के लिए ये वृद्ध एक निश्चित स्थान पर मिलते हैं आपस में हास्य-व्यंग, कविता, संगीत, विचार-विमर्श और पठन से अपने को खुश रखते हैं। इस माहौल में हास्यप्रद बातें ही ज्यादा की जाती हैं। इस दल के मनोचिकित्सकों ने अध्ययन करके पाया है कि इस प्रणाली से उनके स्वास्थ्य में गिरावट की गति धीमी हुई है तो उनके शरीर के सामान्य रोग एवं दर्द घटे ही हैं।

वर्जिनिया युनिवर्सिटी के डॉ. रेमण्ड ए. मूडी द्वारा लिखित दो पुस्तकें 'द लिविंग पावर्स ऑफ हयूमर' एवं 'लाफ आफ्टर लाफ' को पाश्चात्य देशों में काफी लोकप्रियता मिली है। डॉ. रेमण्ड ए. मूडी के अनुसार हंसना एक श्रेष्ठ कुदरती दवा है। उन्होंने कैन्सर तक के एक रोगी के ट्यूमर का इलाज मात्र हास्य चिकित्सा से ही किया है। कई एक अमेरिकी हेल्थ इन्स्टीट्यूट् में भी हास्य द्वारा उपचार की इकाइयां आज कार्यरत हैं।

विदेशी शरीर-शास्त्रियों द्वारा निकाले गये निष्कर्षों में पाया गया है कि हंसी द्वारा मस्तिष्क को एक विशेष हारमोन स्रावित करने की अभिप्रेरण (उद्दीपन) मिलता है। इस ग्रुप के हारमोन दिमाग को एजोरफिन्स नामक पदार्थ छोड़ने को अभिप्रेरिति देते हैं। इस पदार्थ से एलर्जी एवं तकलीफ में कमी

गीत

भले आये
चले आये
दिन बुजुर्गों से ।

धूप का रूमाल बांधे दोपहर,
फुदकती इस डाल से
उस डाल पर ।

नयन भर
देखे जुड़ाये
दिन बुजुर्गों से ।

कहीं आंगन
औ
कहीं घुसती झरोखे से,
सीढ़ियों से उतर जाती
कहीं धोखे से ।

धूप बिटिया
मन लगाये
दिन बुजुर्गों से ।

मिली नकली डांट की जब
बानगी,
फुनगियों से उतर आयी
मुंहलगी ।

धूप दुबकी
मुंह फुलाये
दिन बुजुर्गों से ।

— वसु मालवीय
'रामेश्वरम्' ए - १११ मेंहदौरी गृहस्थान, इलाहाबाद, उ.प्र.

आती है ।

यदि हमें अपने जीवन को आनन्ददायक ही बनाना है तो क्यों न हम अपने जीवनकाल के प्रारंभ की उस उन्मुक्त, निर्मल, निश्छल स्वभाव वाली हंसी को अपनाये रखें, जिसके कारण बाल्यकाल में हर कोई हमें गोद में उठाने, हमसे बातें करने और प्यार करने को लालयित रहता था ।

प्रौढ़ता या बुद्धिमानी के आवरण में गंभीरता अपना लेना बुरा नहीं है, परन्तु हंसी-मजाक करना, प्रसन्नचित्त रहने का भी अपना ही महत्व और आनन्द है, उपयोगिता है, क्योंकि स्टेनफोर्ड विश्वविद्यालय में चिकित्सा विद्यालय में सेवारत मनोविज्ञान के प्रोफेसर विलियम फॉम के अनुसार हंसी से शरीर के अंगों तथा दिल और दिमाग की कसरत हो जाती है तथा इससे एण्डोक्राइन तंत्र पूरी तरह सक्रिय रहता है और एण्डोक्राइन की सक्रियता से रोगों के उन्मूलन की क्रिया का अग्रिम सम्बन्ध है ।

— भीचोर - ३१२ ०२२
जिला : चितौड़गढ़, राजस्थान

मुम्बई में आयोजित अण्डमान के क्रान्तिवीरों का सम्मेलन

'खींच लायी थी सभी को क़त्ल होने की उम्मीद'

□ जगदीश जगेश

ईश्वर प्रदत्त एक जीवन में फिरंगियों द्वारा दो बार आजीवन कारावास भोगनेवाले भारतीय स्वतन्त्रता संग्राम के दुर्धर्ष योद्धा विनायक दामोदर सावरकर के भव्य राष्ट्रीय स्मारक बम्बई में आयोजित कालद्वीप अण्डमान के सरफरोश क्रान्तिवीरों का अब तक का सबसे बड़ा अखिल भारतीय सम्मेलन दि. २६ तथा २७ फरवरी ९१ को अशेष स्मृतियों की सौगात बांटता हुआ सम्पन्न हुआ था। जीवन-मृत्यु के वे कालजयी सौदागर अति विशिष्ट अवसर पर विशेष अभिप्राय से बम्बई में एकत्र हुए थे। २६ फरवरी सावरकरजी की २५ वीं पुण्य तिथि थी।

कलम कागज के अभाव में अपने दीर्घ अण्डमान बन्दीकाल में मनस्वी सावरकर ने करीब दस हजार काव्य पंक्तियां कांटों की कलम से पत्थर की दीवारों पर लिखी थीं, फिर उन्हें कंठस्थ कर लिया था। ऐसी अतुलनीय काव्य रचना कोई क्रान्तिकारी कवि न कर सका। जब कि बैरिस्टर सावरकर को नंगे बदन, रिसते घावों की परवाह न करते हुए पूरे दिन पशु की जगह तेलघानी में जोता जाता था, दौड़ाकर कोड़े लगाये गये थे, और औंधे मुंह मूंज की रस्सियां बनवायी गयी थीं। शारीरिक क्रूरता की अंग्रेजों की दमन चक्की में निरंतर पिसते हुए भी सावरकर ने मानसिक संतुलन रखकर उषा तथा सन्ध्याकाल में प्रचुर साहित्य की रचना की, जिससे अण्डमान का गुप्त

अत्याचार जग विदित हो गया। सच तो यह है कि अण्डमान के अंग्रेजी अत्याचार की काल कोठरी सावरकर की अमर सांसों का सहारा पाकर उत्तुंग दानवता पर उदात्त एवं अपराजेय मानवता की विजय की गाथा बन गयी। अतएव सावरकर तथा अण्डमान एक दूसरे से घुलमिल गये हैं। इसलिए सावरकर की २५ वीं पुण्य तिथि पर महाराष्ट्र सरकार ने अण्डमान के समस्त जीवित क्रान्तिकारियों को आमंत्रित एवं सम्मानित करने का संकल्प लिया। इस कार्यक्रम का भार पुणे की (लोकमान्य) तिलक स्मारक ट्रस्ट तथा बम्बई की स्वातन्त्र्यवीर सावरकर राष्ट्रीय स्मारक समिति ने संयुक्त रूप से उठाया, जिनके एकमात्र अध्यक्ष, लोकमान्य तिलक के पौत्र तथा महाराष्ट्र विधान परिषद के सभापति श्री जयन्त राव श्रीकान्त तिलक थे। सम्मेलन का स्थान बना दो करोड़ रुपये की लागत से निर्मित विराट् सावरकर राष्ट्रीय स्मारक।

अण्डमान में अंग्रेज दरिन्दों ने उन भारतीय तरुणाई के मकरन्द नवयुवकों को रखा था, जो उनकी निगाह में सबसे 'खूंखार और ख़तरनाक' थे। इस प्रकार का आखिरी बैच १९३३-३४ में भेजा गया था। इससे जो क्रान्तिकारी अण्डमान के बचे हैं वे सब बूढ़े हैं। अधिकांश तो अस्सी वर्ष के आसपास हैं। इनका अधिवेशन तीन वर्ष पर होता है। अतः सन ९१ के संगमन में अनेक हमारे बीच नहीं रहेंगे और जो रहेंगे वे सम्भवतः यात्रा के योग्य न रह जायेंगे। अतः इस सर्व सुयोग की घड़ी में मैंने सब क्रान्तिवीरों का दर्शन करना उचित समझा। मेरे अनुरोध पर अखिल भारतीय आज़ाद हिंद संघ नई दिल्ली के युवक प्रशिक्षण विभाग के प्रभारी लेफ्टिनेन्ट श्री बृजमोहन तिवारी तथा नेताजी की आज़ाद हिन्द सरकार की महिला विभाग की सचिव श्रीमती मानवती आर्या इस श्रद्धान्जलि यात्रा हेतु प्रस्तुत हो गये। कानपुर के विख्यात क्रान्तिकारी साहित्यकार शिव वर्माजी जो भगतसिंह तथा चन्द्रशेखर आज़ाद के सहयोगी तथा कई वर्षों तक अण्डमान की काल कोठरी में बन्दी रहे थे, आमंत्रित थे, अतः हम सब लोग २५ फरवरी को बम्बई पहुंच गये।

भारत की स्वर्णभूमि पर अपने पैर जमाने के साथ ही अंग्रेज उपनिवेशवादियों ने यहां के आर्थिक शोषण हेतु क्रूरता, दमन तथा उत्पीड़न के नये-नये तरीके अपनाये। कुछ जननायकों को फांसी देने से विद्रोह उभड़ सकता था और देश में बन्द रखने से षड्यन्त्र एवं जन जागृति हो सकती थी, अतः उन्हें देश से निकाल देना सबसे सुरक्षित तरीका था। इसके साथ ही इन खतरनाक लोगों को आर्थिक दोहन के ढाल के रूप में इस्तेमाल करके दूसरे

उपनिवेशों के विकास में खपाया जा सकता था। अगर उनका भाग्य हो तो वह क्रान्तिवीर जीवित बच जायं, वर्ना भारत के बाहर उनके भेजने का उद्देश्य उनकी पूरी शारीरिक शक्ति का क्षय करके उनको खत्म करना था। प्लासी की लड़ाई के २० वर्ष बाद भारतीय जननायकों का पहला देश निकाला सुमात्रा द्वीप में आयोजित किया गया था। परन्तु शीघ्र ही उतनी दूर के बजाय भारत की मुख्य भूमि से कोई ९०० मील दूर अण्डमान में यह कार्य कम खर्चीला और सूचारु पाया गया। सन १७८८-८९ में लेफ्टिनेन्ट कोलब्रुक तथा ब्लेअर ने पोर्ट कार्नवालिस, जो बाद में पोर्ट ब्लेअर कहलाया, में अपराधी भारतीय की बस्ती बसाई। आज़ादी की पहली लड़ाई १८५७ के बाद अण्डमान का यह स्थान राजनैतिक बन्दियों की सुनियोजित हत्या का प्रतीक बन गया। जो भारतीयों में 'कालापानी' के नाम से प्रचलित हुआ।

३ मार्च १८५८ को दो सौ क्रान्तिकारी बन्दियों की पहली खेप लेकर जे. पी. वाकर पोट ब्लेअर पहुंचा। इसके बाद तो कई बार में हजारों प्रथम स्वतन्त्रता संग्राम (१८५७) के सेनानी अण्डमान भेजे गये। इन जेलों से इनकी लाशों के सिवाय किसी के बाहर जाने या आने की उम्मीद न थी। पूरा द्वीप समुद्र से घिरा तथा जंगलों, जंगली क्रूर जातियों तथा विषैले सांपों और कीड़ों से भरा हुआ था। एक बार अण्डमान भेजे जाने के बाद उस अभागे का कोई अतापता नहीं मिलता था। जिस अमानवीय तरीके से तंग कोठरियों में ठूंस कर स्वतन्त्रता सेनानियों को ले जाया गया था, उससे क्षुब्ध होकर एवं अनशन करके मितौली, सीतापुर उ.प्र. के ठाकुर लोनी सिंह ने जहाज में १८५८ में अपने प्राण दे दिये थे। भारत के स्वतन्त्रता संग्राम में अनशन करके जीवन उत्सर्ग करने की यह पहली ज्ञात गाथा है। बाद में अण्डमान में अनशनकारी शहीदों की परम्परा पण्डित राम रखा, मोहित मोहन मोइत्र, मोहन किशोर, नामदास, महावीर सिंह (भगतसिंह के साथी मूल स्थान मैनपुरी उ.प्र.) के रूप में पल्लवित हुई। भदोही, वाराणसी के शहीद झूरी सिंह के साथी मुसई सिंह यहां पचास वर्षों तक लगातार कैद रहकर १९०७-०८ में छूटे।

अण्डमान का वर्तमान सेलुलर जेल १८९६ में बनना शुरू होकर १९०६ में तैयार हुआ। मुख्य गेट के भीतर ऊंची चार दीवारी से घिरे परिसर में सात बैरक एक दूसरे से गुंथे बने हुए हैं। इनके केन्द्र बिन्दु में एक चौकसी टावर था। हर बैरक तिमंजिला थी, जिसमें १३x७ फीट की अलग-अलग काल कोठरियां बनी हुई थी। कुल ६९८

कालकोठरियां थीं, जिसमें सूरज ढलने के पूर्व क्रान्तिकारी को बन्द कर दिया जाता था और रातभर उसे मच्छरों से जूझते हुए उसी में पेशाब पाखाना करना पड़ता था। अत्याचारों से ऊबकर नारायण (दानापुर, बिहार) सहित ८६,(१८५७ के) कैदियों ने भागने की कोशिश की, वे सब मार डाले गये। सावरकर के सामने इन्दुभूषण राय ने धोती से फांसी लगाकर अण्डमान की कालकोठरी से मुक्ति पायी थी। उल्हासकर दत्त और अनेक पागल हो गये थे। अण्डमान की मिट्टी में न जाने कितने स्वतन्त्रता संग्राम सेनानियों की हड्डी गल-खप गयी थी। जो अण्डमान के लौटे राजबन्दी हमारे सम्मुख थे उनसे बड़ा तपतपाया स्वतन्त्रता संग्राम सेनानी हम कौन देख सकते हैं?

पूरे अंग्रेजी शासन काल में केवल एक वायसराय मारा गया था लार्ड मेयो। जिसे अण्डमान में बन्द एक राजनैतिक कैदी शेरअली ने १८७२ में एक छूरे से मार डाला था। यह स्पष्ट करती है पूरा दमन, आतंक तथा भय सुदृढ़ इच्छा-शक्ति के सम्मुख पराजित हो जाती है। १८५७ में पटना से इनायत अली और विनायत अली दो भाई भेजे गये थे। इस शताब्दी के दूसरे दशक में विनायक सावरकर तथा उनके अग्रज गणेश सावरकर वहां भेजे गये। यद्यपि सावरकर को बड़े भाई के होने का पता एक साल बाद चला था। स्पष्ट है कि अण्डमान जेल में भी कितनी सख्त पहरेदारी और गोपनीयता थी। बंगाल के गवर्नर को मारने के षड्यंत्र में इस शताब्दी के चौथे दशक में मधु बनर्जी तथा मनमोहन बनर्जी दो भाई अण्डमान भेजे गये थे। श्री मधु बनर्जी का कुछ दिन पूर्व निधन हुआ था। सावरकर राष्ट्रीय स्मारक कुल ६६५० वर्ग मीटर भूमि पर बना है। इसमें क्रान्तिकारियों का राष्ट्रीय संग्रहालय, प्रेक्षागार, सभा-गृह, सैनिक शिक्षा केन्द्र, पुस्तकालय, प्रकाशन विभाग, शारीरिक शिक्षण एवं योग केन्द्र, चिकित्सा केन्द्र तथा शोध केन्द्र है। सामने शिवाजी पार्क तथा शिवाजी की विशाल अश्वारूढ़ मूर्ति तथा पीछे उत्ताल तरंगों से युक्त सागर लहराता है। यह केन्द्र सुरम्य वातावरण में बना एक मोहक अनुभूति प्रदाता है।

अण्डमान को यह सौभाग्य भी प्राप्त है कि यह मुख्य भारत भूमि से पूर्व स्वतन्त्र हुआ। अण्डमान तथा निकोबार २३-३-४२ से ७-१०-४५ तक ब्रिटिश चंगुल से मुक्त रहे थे। जापानियों ने नौ राष्ट्रों द्वारा मान्य नेताजी सुभाष की आज़ाद हिन्द सरकार को ये द्वीप हस्तान्तरित कर दिये थे। क्रान्तिकारियों के कठोर अनशन के कारण १९३७ में अंग्रेजों ने अण्डमान से सभी क्रान्तिकारियों को हटा दिया था, परन्तु २९-१२-१९४३ को सेलुलर

जेल की कालकोठरियों को देखकर नेताजी भाव विह्वल एवं स्तब्ध रह गये। नेताजी अण्डमान में तीन दिन रहे और उन्होंने शहीदों तथा क्रान्तिकारियों के श्रद्धा स्वरूप अण्डमान का नाम शहीद द्वीप तथा निकोबार का नाम स्वराज द्वीप रखा, परन्तु हमने अंग्रेजों के दिये निरर्थक नाम अण्डमान व निकोबार को ही चालू रखा। यही नहीं सात में चार बैरक हमारे शासकों ने तोड़वा डाले। अण्डमान के इन्हीं जीवित क्रान्तिकारियों के विरोध एवं जनता के आग्रह पर सरकार ने ११-२-१९७९ को शेष बचे सेलुलर जेल को राष्ट्रीय स्मारक घोषित किया। इन्दिराजी ने सेलुलर जेल को 'वास्तव में अनेक क्रान्तिकारियों की पौध शाला (नर्सरी)' कहा था। १८५७ के बाद मोपला, वहाबी, गदर पार्टी, अनुशीलन, युगान्तर, बी.बी., हिन्दुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन आर्मी आदि के क्रान्तिवीर यहां रखे गये थे। यहां का फांसी घर, तेलघानी, कोड़ा मारने का स्थान तथा कालकोठरियां अब सुरक्षित रखी गयी हैं।

जब भारत आज़ाद हुआ तो करीब आठ सौ अण्डमान के क्रान्तिकारी थे, किन्तु कठिनाइयों, काल के थपेड़ों और बीमारियों से जूझते हुए इस समय कोई सवा सौ अण्डमान के क्रान्तिवीर जीवित हैं। जिनमें से ५५ इस आयोजन में सम्मिलित हुए, उनमें से २ बंगला देश से आये थे। दि. ४-१-१९३१ को मिदनापुर के अंग्रेज कलेक्टर जेम्स पेड्डी को १५, १६ वर्ष की आयु में गोली मारने वाले विमलदास गुप्त आज मिदनापुर में रहते हैं। ३१-८-३१ को अत्याचारी उप अधीक्षक को १६ वर्ष की आयु में हत्या करनेवाले हरिपद भट्टाचार्य आज जलपाईगुड़ी में रहते हैं। १९२६ में दक्षिणेश्वर बम केस के बैरक में स्पेशल सुपरिन्टेण्डेन्ट जो दो पिस्तौलों से लैस था को चीखने तक का मौका न देकर मार डालनेवाले जेल में बन्द निहत्थे क्रान्तिवीरों में से राखाल दे अभी जीवित हैं। ये सभी असीम अत्याचार के बाद अण्डमान भेजे गये थे। इन अनमोल शौर्य के धनी अण्डमान के क्रान्तिकारियों में इनके संघ के सचिव श्री बंगेश्वर राय, विधुभूषण सेन, रामसिंह राठौर (अजमेर केस), विश्वनाथ माथुर (दिल्ली), शिव वर्मा, गोविन्द चक्रवर्ती (कलकत्ता), एल. के. शुक्ल, ज्योतिष मजूमदार आदि से मैंने व्यक्तिगत सम्पर्क किया। उनकी बातों से स्पष्ट हुआ कि देश की वर्तमान गतिविधि से वे मर्मान्तक पीड़ा अनुभव कर रहे हैं। तथापि भारत के भविष्य के प्रति वे आशान्वित है। देश में मूल्यों का जो ह्रास हो गया है तथा नवयुवकों पर पाश्चात्य संस्कृति का जो अन्ध प्रभाव बढ़ रहा है, इसे वे अंग्रेजों की भांति

खतरनाक समझते हैं और इसके लिए भरसक सब कुछ करने को तैयार हैं।

इस कार्यक्रम में दो अण्डमान के क्रान्तिकारी बंगला देश से पधारे थे। श्री रवीन्द्रचन्द्र नियोगी सियाल्दा राज. डकैनी षड़यंत्र १९३१ के लिए १९३२ में पकड़े गये। १९४६ में छूटे। बंगलादेश के पैतृक घर शेरपुर में रहना पसन्द किया। आज़ादी के बाद पाकिस्-तान और बंगलादेश के शासन में जेल गये। अब तक तीस से अधिक वर्ष जेल तथा फरारी में शेरपुर का यह शेर जो ८० वर्ष का है, बिता चुका है। बंगला देश से ९० वर्षीय अब्दुल कादिर चौधरी जो बंगलादेश के जयपुर हाट में रहते हैं, आये हैं। सभी क्रान्तिकारियों में ये सबसे अधिक आयु के तथा रुग्ण थे। पैर बेकार हो चुके हैं तो भी क्रान्ति की बची ललक इन्हें खींच लायी है। इनसे बात करके हम श्रद्धाभिभूत हो गये। त्रैलोक्य महाराज के प्रभाव से उत्सर्ग के संकल्प के साथ ये २४ वर्ष की आयु में अनुशीलन दल में शामिल हुए। १५ लोगों के साथ हिलि राजनैतिक डकैती में शामिल हुए, जिसमें एक कर्मचारी की मौत हो गयी थी। इससे ४ को फांसी तथा तीन को आजीवन कारावास हुआ, जिसमें कादिर भी थे। ब्रिटिश, पाकिस्तानी और इरशाद के जेलों तथा फरारी को मिलाकर तीस वर्ष से अधिक बीत चुके हैं। अभी हाल में छूटे हैं। शादी नहीं की। आज भी जयपुर हाट में अकेले रहते हैं। बंगलादेश के स्वतन्त्रता संग्राम में भी भाग लिया था। बूढ़े और बीमार डॉ. कादिर उस दिन का सपना देख रहे हैं, जब धर्म व्यक्तिगत वस्तु होगी और राष्ट्र का आधार नहीं रहेगी। बड़ी तड़पती वाणी से वे बोले कि भारत की आज़ादी के लिए वे लड़े, परन्तु भारत से वे आज भी दूर हैं। बंगला देश भारत की आज़ादी की लड़ाई को अपना नहीं मानता, इसलिए उन्हें कोई पेंशन या प्रश्रय नहीं मिलता। भारत को देखने की लालसा उन्हें इतनी दूर खींच लायी। डॉ. कादिर एक बनियान और जांघिया पहने थे वे भी फटे थे। नौजवानों की भोग लिप्सा से वे चिन्तित थे। बाबरी मस्जिद श्रीराम जन्म भूमि के बारे में उन्होंने वेदना से कहा— लोग क्यों उनकी बात सुनते हैं, जो सम्प्रदाय परस्त हैं वे धर्मनिरपेक्ष हो नहीं सकते। उनका सपना है शोषण-मुक्ति। यही क्रान्ति है जो उनकी बूढ़ी आंखों में आज भी बसी है।

समारोह पहले दिन मुख्य मंत्री श्री शरद पवार की अध्यक्षता में हुआ। उन्होंने प्रत्येक क्रान्तिकारी को सावरकर का चित्र, शाल, पुष्प और तीन हजार रुपये भेंट किया। मुख्यमंत्री ने स्वयं सबको शाल पहनाया। उन्होंने कहा कि सावरकर भारत में कभी अप्रासंगिक हो नहीं सकते। दूसरे दिन

गीतिका

आ गया सावन, अंधेरी रात, खिड़की बन्द कर दो।
लूट जाये ना कहीं बरसात, खिड़की बन्द कर दो।।
छा रही काली घटा घनघोर बिजली कौंधती है,
कर रही पुरवा हवा उत्पात, खिड़की बन्द कर दो।।
डाल पर बैठा पपीहा, पी-कहां की धुन लगाये –
साथ सुधियों की लिए बारात, खिड़की बन्द कर दो।
आ रही बौछार, परदेशी पिया, अब तक न आये,
भेज दी बस पीर की सौगात, खिड़की बन्द कर दो।
क्या कहूं, सब कह दिया, अब कुछ कहा जाता नहीं है,
रह गयी बाकी न कोई बात, खिड़की बन्द कर दो।।
भोर में 'स्वप्निल' पवन, कलियों के जब घूंघट उठाये
गीत में ढल जायेंगे जज़्बात, खिड़की बन्द कर दो।।

– स्वप्निल तिवारी
भारतीय स्टेट बैंक, रायबरेली - २२९००१

की अध्यक्षता बम्बई के मेयर श्री छगन भुजबल ने की, जिन्होंने हिन्दी में सेनापति चन्द्रशेखर आज़ाद को श्रद्धान्जलि अर्पित की। उन्होंने कहा पंछी भी घोंसला बनाया करते हैं। क्रान्तिकारी वे हैं जो हमारे घोंसले के लिए अपना जीवन दे देते हैं। आजादी चर्खे से नहीं खून से मिली, जिसे हमारे शहीदों ने बहाया। शिव सेना प्रमुख बालासाहब ठाकरे ने मराठी भाषा में श्रद्धान्जलि दी। उन्होंने कहा हिन्सा केवल विध्वन्सात्मक ही नहीं, रचनात्मक भी होती है। सबसे ओजस्वी भाषण हिन्दी, मराठी तथा बंगला में श्री दत्तोपंत ठेगड़ी का रहा, जिन्होंने भारत के स्वतन्त्रता संग्राम का सुन्दर विवेचन किया। यहां जो आये हैं उन्हें 'कत्ल होने की उम्मीद' एक साथ खींच लायी। उन्होंने अनेक तथ्य और मर्मस्पर्शी प्रसंग बताये। इस अवसर पर हिन्दी लेखक तथा क्रान्तिकारी श्री मन्मथनाथ गुप्त तथा मराठी क्रान्तिकारी लेखक श्री वि. श्री. जोशी का अभिनन्दन किया गया। अपनी भेंट में श्री मन्मथनाथ गुप्त ने कहा कि आज शहीदों की मूर्तियों की ही नहीं, उनके विचारों के प्रसार की महती आवश्यकता है।

– १०९/३७, नेहरू नगर,
कानपुर - २०८०१२, उ.प्र.

चार ग़ज़लें

सच का एक समंदर देख
आकर मन के अंदर देख
दुनिया भर में फूल खिलें
ऐसे प्यारे मंज़र देख
तू कि इतना जोश न रख
होश भी अपने अंदर देख
शीश महल तो टूटेंगे
राजाओं के खंडर देख
दुश्मन-दुश्मन शोर न कर
पहले अपने अंदर देख
आग लगाने वाले सुन
अपनी आग बुझाकर देख !

दुनिया में हैरानी है
यह किसकी नादानी है
रंग-बिरंगे रावण हैं
सादा राम कहानी है
भूख, गरीबी, बेकारी
यह तो बात पुरानी है
क़दम-क़दम दुश्वारी है
बोल कहां आसानी है ?
वादे नारे प्रदर्शन
कब तक खींचातानी है
बूढ़ी सदी तड़पते लोग
साया है या पानी है
रोड पे किसने लिखा है
आगे भोर सुहानी है

लोग आते हैं लोग जाते हैं
रस्मे दुनिया सभी निभाते हैं
अपने घर के चिराग़ हैं हम लोग
दूसरों के मकां जलाते हैं
घर के बूढ़ों की कौन फ़िक्र करे
अपने बच्चे बहुत सताते हैं
यह धुआं रोशनी को डस लेगा
सायरन चीख कर बताते हैं !

प्यासी दुनिया प्यासे लोग
एक दूजे पर पहरे लोग
बाहर फूलों की बातें
अंदर पत्थर जैसे लोग
चोर लुटेरे डाकू खुश
रोते गूंगे बहरे लोग
चेहरे कितने रखते हैं
लेकिन हैं बेचेहरे लोग
मुफ़्त में सब कुछ पाने को
देखें ख़्वाब सुनहरे लोग
जितनी गहरी दुनिया है
हैं उतने ही उथले लोग
मैं हूं सीप में कैद, मियां
मेरे आगे-पीछे लोग ।

— अहद प्रकाश
६० न्यू कालोनी,
जहांगीराबाद, भोपाल, म.प्र.

कैसे रुकेगा मादक पदार्थों का दुरुपयोग ?

□ डॉ. अवधेश शर्मा

आजकल अपराध जगत में धन कमाने का सुलभ और आसान माध्यम मादक पदार्थों का गुप्त रूप से व्यापार करना बन गया है। विश्व का कोई भी ऐसा राष्ट्र नहीं, जहां इस धंधे के खतरनाक अपराधी अमरबेल की तरह समाज के युवावर्ग को अपने शिकंजे में कसे हुए न हों, हालांकि प्रतिवर्ष करोड़ों रुपये के मादक द्रव्यों की पकड़ होती है फिर भी यह धंधा दावानल की तरह और बढ़ता ही जा रहा है। क्या इसकी रोकथाम का कोई उपाय नहीं है? क्या युवावर्ग इस खतरनाक एवं विषाक्त वातावरण से मुक्त नहीं हो सकेगा? चूंकि ये मादक पदार्थ आधुनिक चिकित्सा विज्ञान में औषधि के रूप में इस्तेमाल किये जाते हैं, अतः बाजारों में सामान्य रूप से उपलब्ध रहते हैं। औषध के रूप में इन पदार्थों की अहम भूमिका से सभी परिचित हैं, लेकिन आजकल हो रहे इसके अवांछनीय दुरुपयोग ने समाज में एक नया संकट ला खड़ा किया है।

समाज में मादक पदार्थों के व्यापक प्रसार एवं प्रचार को देखते हुए संयुक्त राष्ट्र संघ ने इसे अब अपना विषय मान लिया है तथा एक स्वतंत्र विंग की स्थापना भी की है, जिसे यू. एन. डिविजन ऑफ़ नारकोटिक विंग कहा जाता है। अन्तरराष्ट्रीय स्तर पर विभिन्न राष्ट्रों में समन्वय, सामंजस्य, मार्गदर्शन एवं तत्संबंधी नियमों-उपनियमों, सम्मेलनों एवं प्रशिक्षण गतिविधियों के संचालन के लिए संयुक्त राष्ट्र संघ के अन्तर्गत अनेक आयोग गठित हैं तथा कार्यरत भी। आपराधिक गतिविधियों पर नियंत्रण, सूचना एवं प्रसारण तथा तत्संबंधी समन्वय बनाये रखने के लिए इन्टरपोल भी कार्यरत है, जिसका सम्बंध राष्ट्रीय इकाइयों, नेशनल सेंट्रल ब्यूरो तथा अन्य संस्थाओं से भी है। हालांकि इन मादक पदार्थों के तस्करी एवं फैलते प्रभाव की रोकथाम के लिए राष्ट्रीय एवं

अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर बड़े सख्त कानून बने हैं फिर भी इसका प्रसार दिनोंदिन बढ़ता ही जा रहा है।

इन नशीले पदार्थों की लत लोगों को क्यों लगती है? इस पर विश्व के कई देशों में सर्वेक्षण हुए हैं। सर्वेक्षण से पता चला कि युवा वर्ग पदार्थों का विशेष रूप से आदी हो रहा है। जिसकी वजह है इससे मिलने वाला आनंद। यह तो सर्वविदित है कि इन पदार्थों के सेवन से निष्क्रियता एवं पलायनवादी वृत्तियां उभरती हैं। यथार्थ की दुनिया से परे आनंद की वांछित दुनिया का दिवास्वप्न नशे के आदी व्यक्ति को व्यसनी बना देता है, जिसके फलस्वरूप व्यक्ति शारीरिक रूप से असमर्थ, बलहीन, मानसिक रूप से अक्षम तथा भावनात्मक रूप से असंतुलित होकर सामाजिक दृष्टि से अनुपयोगी हो जाता है। निराशा एवं कुंठा के अकेलेपन को जीते हुए व्यक्ति का आचरण और व्यवहार हिंसा और उग्रता को अपना लेता है जो आगे चलकर समाज के लिए एक समस्या बन जाती है।

तीन दशक पूर्व भारतीय समाज, मादक पदार्थों के दुरुपयोग का उतना शिकार नहीं था, जितना पश्चिमी देशों का था। पश्चिमी देशों ने इसकी रोकथाम के लिए इसकी तस्करी करने वालों के लिए अपनी दंड प्रक्रिया को सख्त बनाया जिसके फलस्वरूप इन पदार्थों के व्यापारी भारत को अपने शिकंजे में कसने लगे। संयुक्त राष्ट्र संघ की रिपोर्ट के अनुसार १९७९ तक भारत का नाम ऐसे देशों में शामिल नहीं था, जहां से मादक पदार्थों की तस्करी होती थी। इसका कारण स्पष्ट करते हुए रिपोर्ट में कहा गया है कि पश्चिमी देशों के सख्त कानून एवं ईरान- अफगानिस्तान के कानून, मादक पदार्थों के धंधे के लिए उपयुक्त नहीं रह गये।

मादक पदार्थ क्या हैं?

मादक द्रव्यों की पहचान, उत्पत्ति, उपयोग, दुरुपयोग एवं तस्करी जैसे पहलुओं पर जन जिज्ञासा होना स्वाभाविक है। कोई भी प्राकृतिक, रासायनिक या संश्लेषित पदार्थ जो सजीव प्राणी में मादकता उत्पन्न कर उसके अवयव संस्थान में शारीरिक, मानसिक एवं मनोवैज्ञानिक परिवर्तन पैदा करता है, उसे मादक पदार्थ कहा जाता है। ऐसे पदार्थ अपनी रासायनिक प्रकृति के कारण सजीव प्राणी में मानवीय अवयवों की क्रियाशीलता एवं ढांचे में भी परिवर्तन कर देते हैं। अतः जो पदार्थ मनुष्य की मनोदशा, चेतना, अनुभूति, मानसिक एवं शारीरिक क्रियाओं में परिवर्तन करता है, मादक द्रव्य की श्रेणी में आता है।

मादक पदार्थ या तो प्राकृतिक रूप से मिलते हैं या कृषि पैदावर के रूप में प्राप्त किये जाते हैं, जिससे बाद में रासायनिक

क्रिया द्वारा द्रव्यों में रूपान्तरित किया जाता है। प्राकृतिक रूप से प्राप्त मादक पदार्थों में अफीम, कोकीन, गांजा, मेस्केताइन, साइलोकेबिन, वेलेडीना आदि प्रमुख हैं। रासायनिक तथा संश्लिष्ट पदार्थों में बारब्यूच्यूरिट, एम्फिटीमित, एल. एस. डी. आदि हैं— संश्लेषित पदार्थों में भी दो किस्म होते हैं— प्रथम सम-संश्लेषित, जिसका मूल आधार तो प्राकृतिक होता है, लेकिन प्राप्त करने के लिए हल्की प्रारंभिक प्रक्रिया से गुजारा जाता है — इस वर्ग में मारफीन, हिरोइन, केडिन प्रमुख हैं। दूसरा है पूर्ण संश्लेषित — ये रासायनिक तत्वों के आधार पर रासायनिक प्रक्रियाओं से प्रयोगशालाओं में बनाये जाते हैं जिसमें बारब्यूच्यूरेट, एम्फीटेतीन एवं एल. एस. डी. जाति के पदार्थ प्रमुख हैं।

६ अक्तूबर १९८६ को 'न्यूज वीक' ने मादक पदार्थों के सेवन करने वालों से एक सर्वेक्षण का विस्तृत ब्योरा प्रकाशित किया था जिसके तहत मात्र दिल्ली में ही हिरोइन के सेवन करने वालों की संख्या ११ लाख के करीब है। हालांकि देश में इन पदार्थों के व्यसनियों का कोई सही आंकड़ा उपलब्ध नहीं है। फिर भी यह अनुमान लगाया गया है कि इनकी संख्या ३ से ५ करोड़ है। अब इन मादक पदार्थों की बिक्री सम्पूर्ण एशिया के लगभग सभी देशों में धड़ल्ले से हो रही है। लेकिन आज पश्चिमी देशों में हिरोइन से भी ज्यादा असरदार पदार्थ कुकैन तथा इससे उत्पादित पदार्थ क्रेक आदि का उपयोग हो रहा है। मस्तिष्क को उत्तेजित करने वाले, इन पदार्थों का दुरुपयोग आज का युवा पीढ़ी ही नहीं कर रही है, बल्कि इसका उपयोग कच्चे पदार्थ के रूप में पहले से भी होता आया है। प्राचीन मिस्र में अफीम (जिससे हिरोइन और मारफीन बनाये जाते है) खुले बाजारों में बेची जाती थी, लेकिन पिछले बीस वर्षों में इनका उपयोग इस कदर तेजी से बढ़ा है कि सभी राष्ट्रों के लिए एक चिन्ता का विषय बन गया है। इस संदर्भ में प्रभावित देशों ने कानून बनाये हैं विशेषकर मलयेशिया में तो इसके अवैध व्यापार करने वालों को मौत की सजा का प्रावधान है, लेकिन इसके बावजूद भी इसका उपयोग घटा नहीं है। अब तो यह अन्तरराष्ट्रीय उद्योग का रूप ले चुका है जिसमें करोड़ों डालर का लेन-देन शामिल है।

शरीर पर प्रतिक्रिया की दृष्टि से मादक पदार्थों को तीन भांगों में बांटा गया है। उत्तेजक (स्टीम्यूलेंट), अवसादक (डिप्रेसेंट) और भ्रांतिजनक (हेल्यू-सीनोजिन या सेडेटिब्स)। मादक पदार्थों की तस्करी के लिए इनके नाम के कोड बना दिये गये हैं जैसे कोक, बर्निस, लेडी, डामा, शी, स्नो, कोबरा, बु, वीड आदि-आदि। हालांकि इन मादक पदार्थों

में कई ऐसे हैं जिसे औषधि के रूप में इस्तेमाल किया जाता है जैसे मारफीन दर्द की एक कारगर दवा है, मरिजुना ग्लुकोमा में दिया जाता है— लेकिन आज इसे मादकता उत्पन्न करने के लिए खुले आम उपयोग में लाया जा रहा है।

क्यों लेते हैं ये पदार्थ ?

इन पदार्थों की शुरुआत कैसे होती है? ऐसा देखा गया है कि कालेजों में जो नये-नये विद्यार्थी आते हैं उन्हें एक नये माहौल का आभास होता है — जहां अपने साथियों के साथ शराब और सिगरेट पीना शुरू कर देते हैं — कुछ तो प्रयोग के तौर पर तथा कुछ ग्रुप के दबाव के कारण। धीरे-धीरे ये इन खतरनाक पदार्थों को भी लेना शुरू कर देते हैं। पहले तो इनके साथी मुफ्त में देते हैं बाद में आदी हो जाने के बाद देना बंद कर देते हैं। नतीजा यह होता है कि अब ये बिना इन पदार्थों के रह नहीं सकते और फिर यहीं से विनाश का सिलसिला प्रारंभ हो जाता है। कुछ छात्र मानसिक तौर पर अपने को हीन मानते हैं, कुछ की पारिवारिक परिस्थितियां उनके मानसिक अस्थिरता को जन्म देती हैं जिसे ये पदार्थ उन्हें मानसिक एवं भावनात्मक तनावों से दूर कर देती हैं— एक नई ऊर्जा पैदा कर देती हैं।

एक समय था जब कुकैन (कोक) बहुत ही महंगा तथा ग्लेमरयुक्त मादक पदार्थ था जिसका उपयोग केवल मुग़ल, फिल्मी तारे तथा व्यावसायिक खिलाड़ी करते थे लेकिन आज यह इतना सस्ता और आसानी से उपलब्ध है कि कोक देश एंडिज़ में सड़कों पर छोटे-छोटे बच्चे बेचते हैं। एंडिज़ से ही यह अमेरिका, यूरोप और फिर एशियायी देशों में विभिन्न माध्यमों से पहुंचा। वैज्ञानिकों का मत है कि कुछ पदार्थ जैसे कुकैन, मस्तिष्क की रासायनिक क्रियाओं को इतना बदल देता है कि कुछ दिनों बाद वह अपना कार्य ठीक से नहीं कर पाता और धीरे-धीरे व्यसनी मृत्यु की ओर बढ़ने लगता है। मनुष्य इन पदार्थों को इसलिए भी लेते हैं कि ये उन्हें एक विशिष्ट आनंद का अनुभव देते हैं।

कुकैन के व्यसनी यदि एक समय अपना आहार न लें तो उनकी हालत अत्यंत शोचनीय हो जाती है— कभी-कभी तो उनकी मृत्यु भी हो जाती है। कुकैन न लेने के कारण अनेक जटिल लक्षण दिखाई देता है जैसे तेज सांस, पेट दर्द, सर दर्द, उलटी, डायरिया आदि। इस अवस्था में व्यसनी अपना डोज लेने के लिए कोई भी उपाय काम में ला सकता है। प्रारंभिक अवस्था में इन पदार्थों के लेने वालों का पता नहीं चल पाता क्योंकि वे छिपकर इनका सेवन करते हैं। लेकिन जब पता चलता है तब तक डाक्टरी सहायता व्यर्थ हो जाती है। बहुत से तो इन पदार्थों को सिरिंज के माध्यम से सीधे नसों में पहुंचाते हैं, उनके शरीर पर

सुइयों के अनेक निशान आसानी से देखे जा सकते हैं। सबसे खतरनाक बात तो यह है कि एक ही सिरिंज को कई इस्तेमाल करते हैं जिससे विभिन्न रोग मलेरिया, सिफलिस, टिटेनस तथा एड्स भी होने का खतरा बना रहता है।

इन पदार्थों की तस्करी को कैसे रोका जाय? यह एक जटिल समस्या बन गयी है। आज दिल्ली और बम्बई हिरोइन तस्करी के मुख्य केंद्र हैं जहां खाड़ी देशों, वह अमेरिका, अफ्रीका तथा यूरोप से आती है। एक भारतीय जांच अधिकारी का मत है कि अपने देश में ७० प्रतिशत हिरोइन ब्रिटेन से तस्करी की जाती है। नारकोटिक्स विभाग इन पदार्थों के तस्करी रोकने के लिए काफी सतर्कता बरतती है, फिर भी तस्करी में कोई खास कमी नहीं आयी है। अकेले दिल्ली में २ क़रोड़ रुपये की हिरोइन दिसंबर ८७ में दो अफगानियों के यहां से बरामद की गयी। जनवरी ८७ में ६१७ किलो हिरोइन, ५ टन हशीश केरल के समुद्रीय तट के एक गांव तेलिचेरी के एक मकान से पकड़ी गयी। १९८५ में बम्बई में एक पाकिस्तानी के पास से हजारों बैग हिरोइन मिली। १९८३ में १.५ करोड़ की हिरोइन कोचीन बंदरगाह पर पकड़ी गयी जिसे पश्चिमी यूरोप को भेजा जा रहा था।

अभी हाल में मादक नियंत्रण ब्यूरो ने, राज्य सरकार की सहायता से, केरल के इडूकी जिले में लगभग ३०० एकड़ क्षेत्र में अवैध रूप से हो रही अफीम की खेती को नष्ट किया है। मादक पदार्थों की तस्करी के लिए कोचीन का नाम २८ मार्च १९८३ को आया, जब वहां अमेरिकीय तटीय सुरक्षा प्रहरियों ने २५ करोड़ का हशीश पकड़ा जो हेट्री नामक जहाज से भेजा जा रहा था। ईरान-अफगानिस्तान सीमा के सील होने के कारण कच्चा अफीम पाकिस्तान से भारत आने लगा है। भारतीय सीमा में ये पदार्थ राजस्थान के सुनसान इलाकों से ऊटों की मदद से लाये जाते हैं। यू.एस. ड्रग इम्फोर्समेंट एडमिनिस्ट्रेसन के मुताबिक पाकिस्तान में अफीम का उत्पादन पिछले वर्ष की तुलना में दुगुना हो गया है।

मादक पदार्थों के उत्पादन पर प्रतिबंध के बावजूद भी वहां १९८५ में ७० टन की तुलना में १९८६ में १७० टन तथा ८७ में २०० टन अफीम का उत्पादन हुआ। भारत-सरकार इन पदार्थों की तस्करी पर कड़ी नजर रखे हुए हैं। बर्मा सीमा से हो रहे तस्करी की रोकथाम के लिए भारत एवं बर्मा सरकार ने एक समझौता किया है। देखना है इन पदार्थों की तस्करी और दुरुपयोग कब बंद होता है — **पोस्ट बाक्स - ४१, बिलासपुर (म.प्र.) ४९५ ००१.**

बाल-बाल बचते रहिये ...!

☐ के. पी. सक्सेना

हां, 'वन्स अपान ए टाइम' एक ज़माना था, जब महबूब की लम्बी ज़ुल्फ़ों से शायर और प्रिया की लहराती चोटी से कवि परेशान रहा करै था! कंघी माशूक करती थी और जुएं आशिक के दिल पर गिरा करते थे! मैं साइंस का विद्यार्थी था और मन ही मन ऐसे शायरों और कवियों पर कोफ्त होती थी, जो समूची कन्या को छोड़कर सिर्फ़ उसकी ज़ुल्फ़ों में अटके रहते थे! मुझे याद है कि बचपन में हमारे पड़ोस में एक वर्माजी थे, जिनकी मैट्रिक पास कर चुकी कन्या मन्नो इश्क़ करने योग्य हो चली थी! यह लड़की पन्द्रह-पन्द्रह दिन नहाती नहीं थी और खोपड़ी खुजाती रहती थी। फिर भी हमारे ममेरे भाई पुत्तन इस कन्या की ज़ुल्फ़ों की शान में निहायत थर्ड क्लास किस्म के शेर लिखा करते थे। बाद में मन्नो का इन्हीं पुत्तन से विवाह हो गया और पुत्तन भाई उम्र भर अपनी खोपड़ी खुजाते हुए वक्त से पहले गंजे हो गये। मुझे उसी दिन से ज़ुल्फ़ों से चिढ़ हो गयी और अपनी निजी पत्नी को भी ताकीद कर दी कि खबरदार जो मेरे सामने ज़ुल्फ़ लहराने की कोशिश की। धीरे-धीरे ज़ुल्फ़ें छोटी होती गयीं और उनमें नायलोन की एडीशनल चुटिया जोड़ी जाने लगी। जूड़ा देखकर पता ही नहीं लगता था कि इसमें असली नारी कितने प्रतिशत है और नायलोन कितने प्रतिशत? खैर... मेरी अब वह उम्र ही नहीं रही जब लोग नारी सौन्दर्य में मिलावट की मात्रा ढूंढ़ते हैं। मगर अभी हाल में ज़ुल्फ़ों का एक ऐसा दर्दनाक केस पढ़ा कि मेरे अपने सिर के बचे- खुचे २७ परसेंट बाल ग़म से मुर्झा गये। भगवान दुश्मन की बेटी की चुटिया को भी यह दिन न दिखाये। यह घटना जो है सो केरल के कोट्टायम की है, मगर चोट मेरे दिल पर लखनऊ तक आ पहुंची है! कहते हैं कि एक सुबह एक युवती अपने बच्चे को गोद में लेकर भगवान के दर्शन के लिए मंदिर में आयी। पीठ से नीचे झूलतें मीलों लम्बे
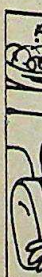
रेशमी बाल उसकी सुंदरता को चार-चांद वगैरा लगा रहे थे ! किसी बदमाश से (जो संभवतः भूतपूर्व कवि या शायर रहा होगा उसकी यह सुंदरता सहन न हुई। महिला आंखे मूंदे पूजा कर रही थी और अगले ने कैंची चला दी। बाल नवगठित मंत्री- मंडल जैसे छोटे रह गये! रोती-बिलखती बेचारी ने जगह-जगह शिकायत दर्ज करायी। पर क्या हासिल ? कहते हैं कि अब मंदिर में पूजा करने वालियां सिर ढंक कर, बाल हिफ़ाजत से बांधकर आती हैं। (आधा मन पूजा में आधा जुल्फों में लगा रहता होगा?) चुनांचे मैं उस फैशन का समर्थक हूं जहां कटे-कटे छोटे-छोटे बाल देखकर आप यह पता नहीं कर सकते कि वे गोद में थमे बच्ची की मम्मी हैं या पापा ? तेल का खर्च कम, संवारने में टाइम की बचत और जूं पड़ने का अंदेशा भी खत्म। आपस में ठन भी जाये तो एक दूसरी की चुटिया खींचने की संभावनाओं से भी मुक्ति ! ... चूंकि खुदा ने मेरे सिर पर से बालों का साया उठा लिया सो मैं दूसरों की जुल्फों के प्रति बहुत चिंतित रहता हूं। न जाने कब किधर कैंची चल जाये और सिर पर सिर्फ़ अरहर के खेत के ठूंठ शेष रह जायें ? प्रभु, इस खेती की रक्षा करो ! ... कंघी घुमाने की संभावना बनी रहने दो !....

— ७२, नारायण नगर, रामसागर,
लखनऊ - २२६ ०१६ (उ.प्र.)

□
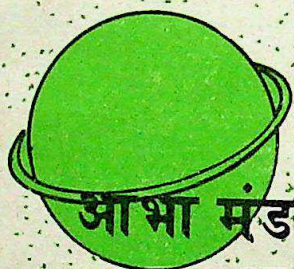
आभा मंडल की प्रभाव क्षमता

□ डॉ. वी. एन. जायसवाल

पाश्चात्य जगत में हुए अनुसंधानों में, जिनका आधार भारतीय ग्रन्थ हैं, वैज्ञानिकों ने यह निष्कर्ष निकाला है और स्वीकार किया है कि सृष्टि की प्रत्येक वस्तु के चारों ओर ऊर्जा का एक अदृश्य घेरा विद्यमान है। भिन्न-भिन्न प्रकार की भिन्न वस्तुओं का ऊर्जा घेरा भी भिन्न-भिन्न होता है। इसे उस वस्तु का आभा मंडल (ऑरा) भी कहते हैं। ग्रह-नक्षत्र, सूर्य, चन्द्र, तारे, मानव, अन्य प्राणी, वृक्ष, वनस्पति, जल, धातु, अधातु और चट्टानें आदि प्रत्येक के घटक निरंतर कंपन करते रहते हैं व अपने चारों ओर एक विशेष प्रकार की ऊर्जा किरणें विकिरित करते हैं। इस प्रकार सृष्टि की प्रत्येक वस्तु से निरंतर विशिष्ट ऊर्जा प्रवाह समष्टिगत ब्रह्माण्ड में निरंतर फैल रहा है। व्यष्टि और समिष्ट में संव्याप्त संबंध ही डाउजिंग प्रक्रिया की वैज्ञानिकता को सत्यापित करता है एवं असीम संभावनाओं का पथ प्रशस्त करता है। वैज्ञानिक कहते हैं कि भूगर्भ स्थित प्राकृतिक संपदा के दोहन हेतु जानकारी लेते समय मानवी तेजोवलय का ऊर्जा घेरा जब धातु या जल भंडार की ऊर्जा से टकराता है तो सगुनिये या प्रयोक्ता वैज्ञानिक के मन मस्तिष्क में एक विद्युत

तरंग दौड़ जाती है, मांस-पेशियों में खिंचाव आता है व हाथ का यंत्र स्वतः नीचे झुक जाता है व खुदाई करने पर विपुल प्राकृतिक संपदा हाथ लगती है। यह सारा चमत्कार उस विकिरित ऊर्जा घेरा का है, जिसे तेजोवलय, आभा मंडल या ऑरा कहते हैं जो किसी-किसी में विकसित होता है।

यह वस्तुतः मनुष्य की प्राण विद्युत या प्रसुप्त ऊर्जा का विकसित रूप ही है, जिसे किसी ने ईथरिक डबल नाम दिया है, किसी ने प्राणमय कोष एवं किसी ने आयडियोस्फीयर कहा है। जैसे पृथ्वी के चारों ओर आयनमंडल विद्यमान है, उसी प्रकार कार्य सत्ता के चारों ओर भी एक ऊर्जा पुंज बिखरा पड़ा है। यह मात्र मस्तिष्क ही नहीं, शरीर के अंग-प्रत्यंग में फैले नाड़ी संस्थान में प्रवाहित विद्युत प्रवाह का बाहर परिलक्षित होने वाला घेरा है, जिसे साधना उपचारों के द्वारा इस सीमा तक विकसित किया जा सकता है कि व्यक्ति न केवल स्वयं अगणित विभूतियों का स्वामी बन जाता है, अपितु अन्य अनेकों को इस आध्यात्मिक ऊर्जा से निरोग और प्राण शक्ति सम्पन्न भी कर सकता है। साइकिक हीलिंग एवं शक्तिपात इसी विकसित ऊर्जा मंडल के माध्यम से सम्पन्न होने वाली प्रक्रियायें हैं।

वैज्ञानिकों ने ज्ञात किया है कि यह प्रभामंडल दो प्रकार का होता है – फिजिकल ऑरा जो बायोप्लाज्मा या बायोफ्लक्स से विनिर्मित होता है, दूसरा साइकिक आरा जो सूक्ष्म ईथरिक तरंगों का एक प्रवाही घेरा है। मानवी काया का यह प्रभा मंडल संबंधी अनुसंधान काफी प्रगति कर अभी अपनी प्रौढ़ावस्था में है। यह तो असीम अपरिमित भाण्डागर है, जिसे समूचा खोज पाना असंभव नहीं तो कठिन अवश्य हैं।

कुछ वैज्ञानिकों ने बहुत मंदी, पर संवेदनशील प्रकाश किरणें मानवी जीव कोशों एवं पौधों की पत्तियों से निकलती हुई नोट किया है। मानवीय नेत्रों व जीव जन्तुओं से विशेष प्रकार की अल्ट्रा-वायलेट किरणें निकलती हैं। इन्हें एक विशेष सेंसीटिव फिलम पर स्पेशल फिल्टर्स का प्रयोग कर रिकार्ड किया जाता है। लाइफ फील्ड के माध्यम से 'इलेक्ट्रो-मैग्नेटिक मैट्रिक्स' के रूप में इस सिद्धान्त को आगे विकसित किया गया है। हाइवोल्टेज फोटोग्राफी (किर्लियन इलेक्ट्रोग्राफी, कोरोना डिस्चार्ज फोटोग्राफी) भी आभा मंडल का मापन करने की ऐसी तकनीक थी, जो क्रमशः विकसित हुई है। यहां तक कि विभिन्न प्रकार के मनोविकार, भय, अंग विशेषों की भावी व्याधि तक विभिन्न रंगों में अंकित करने में सफलता वैज्ञानिकों को मिली है। चिन्तन प्रवाह में परिवर्तन से आभा मंडल भी परिवर्तित होता पाया गया है। यू.सी.एल.

की थेल्मा मास ने योगियों, अतीन्द्रिय क्षमता सम्पन्न व्यक्तियों की उंगलियों से विशिष्ट "कोरोना" निकलते देखा व अंकित किया है। सोवियत संघ के साइकिल हीलर कर्नल एलेक्सी क्रिवो-रोटोव जब अपना हाथ रोगी के पेट पर घुमा रहे थे एवं जब उन्होंने अपना ध्यान एकाग्र किया तब उनके हाथ से तीव्र चमक वाली प्रकाश किरणें, जैसे कि 'लेसर बीम' निकलती हैं, उत्सर्जित हुई व अंग विशेष पर फोकस हो गयी। इस प्रक्रिया को चित्रांकित भी किया गया।

विलियम टीलर एवं डेविड बॉयर्स ने हाथ से उत्सर्जित आभा मंडल को अल्ट्रा वायलेट रेंज का माना है और उसका फोटोग्राफ लेने में उन्हें सफलता मिली है। वस्तुतः अब बायोलॉजिकल प्लाज्मा वाडी एवं हाई वोल्टेज किर्लियन फील्ड में सामंजस्य बिठाने में वैज्ञानिकों को काफी सीमा तक सफलता मिली है।

देवताओं, अवतारों और महापुरुषों आदि के चेहरे के चारों ओर जो प्रभा मंडल चित्रित किया जाता है, वह वस्तुतः प्राण ऊर्जा का ही प्रतीक है। यह उनकी आध्यात्मिक विशिष्टता का परिचय देता है। यों इसे खुली आंखों नहीं देखा जा सकता, किन्तु अतीन्द्रिय क्षमता सम्पन्न व्यक्तियों ने इसे विभिन्न आकार और रंगों में देखा है। वैज्ञानिकों ने विशेष प्रकार के कैमरों से इनका चित्र भी खींचा है। उन्होंने आरा खंड में बताया है कि हृदय से नीला, हाथ के अग्र भाग से नीला-हरा एवं जांघ और जननेन्द्रियों के क्षेत्रों से हरा रंग निकलता है। वे इस निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि इन रंगों में भिन्नता मनुष्य की भावना, विचारणा अंतःकरण की उत्कृष्टता और निकृष्टता के आधार पर निर्धारित होती है। वस्तुतः प्रभा मंडल सूक्ष्म मनोवेगों से बना एक आयन मंडल है, जिससे चारों ओर एक उच्च स्तरीय ऊर्जा क्षेत्र बनता है।

महामानवों, देवमानवों और देवदूतों आदि का तेजोवलय पीली आभा लिए हुए होता है। वे समीपवर्ती लोगों को स्नेह, अनुग्रह, अनुदान अनायास ही देते रहते हैं। ऐसे व्यक्तियों के समीप बैठने वाले एक विधेयात्मक आकर्षण, आंतरिक आनन्द और उल्लास की अनुभूति करते हैं। पाशविक प्रवृत्तियां, निद्रा, भूख, प्यास, क्रोध, वासना, विषय लोलुपता आदि प्रभा मंडल को काले रंग से भर देते हैं। मस्तिष्क की विकृति का मूल कारण मस्तिष्क के अणुओं का रोगी होना माना जाता है। कामोत्तेजना के कारण यदि व्यक्ति रोगी हो तो मस्तिष्क के अणुओं की आभा काले व गहरे लाल रंग की होगी एवं द्वेष से पीड़ित अणुओं की आभा हरे रंग की होगी। इसी प्रकार विभिन्न दुर्गुणों से पीड़ित होने पर अणु आभा अलग-अलग रंगों की होती है एवं

इस आधार पर व्यक्ति के अंतरंग को पहचाना जा सकता है। रूप सौन्दर्य वाले व्यभिचारियों, वेश्याओं, ठगों, क्रूर, आक्रान्ताओं और निकृष्ट चिन्तन वाले लोगों में यह अत्यन्त निम्न स्तर का होता है। इस आसुरी तेजोवलय का रंग कालिख लिये होता है।

मानवीय प्रभा मंडल को तीन भागों में बांटा गया है। पहला शरीर तक सीमित विद्युत विभव, दूसरा शरीर के बाहर तक निकला तेजोवलय एवं तीसरा शरीर को कवच की तरह चारों ओर लपेटे ६ से ८ इंच व साधनात्मक प्रगति पर कई फीट का विस्तार वाला क्षेत्र होता है। पहले में बिन्दु होते हैं, दूसरी में रेखायें और तीसरे में सघन आयनों का समुच्चय होता है। पहले को स्थूल शरीर या वायोप्लाज्मा, दूसरे को प्लाज्मा एवं तीसरे को आयन विकिरण कहा गया है, जिसमें वास्तव में (हीलिंग) चिकित्सा की क्षमता होती है। प्राण प्रत्यावर्त्तन में इसी की प्रधान भूमिका होती है। हाथ, सिर पर या रुग्ण अंग पर रखकर चिकित्सा करने वाले आयन विकिरण प्रक्रिया द्वारा ही यह सायकिक हीलिंग करते हैं।

हमारी यह दुनिया बहुआयामी व विविधताओं से भरी पूरी है। मानवीय काया उस विराट का एक घटक है व उसमें ब्रह्माण्डीय सत्ता की ईश्वर की समस्त शक्तियां सूक्ष्म रूप से विद्यमान हैं। आवश्यकता मात्र उन्हें उभारने व विकसित करने की है, चाहे वैज्ञानिक प्रमाण न मिलें, पर उपरोक्त प्रतिपादनों को झुठलाया नहीं जा सकता।

—फ्लैट नं. सी/११-९, वाल्मीकि नगर मार्ग, पेपर मिल कालोनी, निशातगंज, लखनऊ उ.प्र.

प्रेमतपस्वी : ईसुरी

□ अम्बिकाप्रसाद दिव्य

अध्याय - २२

दौड़ने वाले के साथ समय दौड़ता हुआ चलता है। और लंगड़ाने वाले के साथ लंगड़ाता हुआ। परन्तु दोनों के लिए अपेक्षित दिन आगे-पीछे नहीं आता। दलीं के मुकदमे के दोनों ही पक्ष जिस गति से भी चलते रहे हों, उनकी पेशी का दिन एक साथ ही आ गया।

मनसुखलाल ने शपथ लेते हुए बयान दिया कि दलपतिसिंह उर्फ दलीं ने उनकी लड़की रजऊ को बदनाम करने की चेष्टा की। जिस दिन रजऊ की बारात आयी थी और बाहर द्वार पर नाच गाना जमा हुआ था, उसने नाजायज हरकत की। वह ईसुरी को लेकर आया। पंडित गंगाधर उस समय फागें गा रहे थे। दलीं पंडित गंगाधर से बोला- पंडितजी! यह लड़का भी अच्छी फागें बनाता है। एक-दो फागें इसकी भी सुन ली जावें। पंडितजी ने अपनी प्रसन्नता प्रकट करते हुए ईसुरी को समय दिया। ईसुरी ने ऐसी फागें सुनायीं जो नितान्त आपत्तिजनक थीं। फागें रजऊ को सम्बोधित करके लिखी गयी थीं। ईसुरी उस समय नाबालिग था। वह ऐसी श्रृंगारी फागें नहीं बना सकता था। फागें दलीं की बनायी थीं। दलीं ने ईसुरी के मुंह से अपनी बनायी फागें सुनवायीं। फागें सुनते ही रजऊ के ससुर देवीदयाल कानूनगो ने आपत्ति उठायी। वे बारात वापस ले जाने को तैयार हो गये। परन्तु उन्हें किसी तरह मनाया गया। उन्हें कुछ रुपया और अधिक दिया गया। दलीं पर केस चलवाने का भी आश्वासन दिया गया। दलीं के इस आपत्तिजनक कार्य से उनकी मानहानि हुई। समाज में प्रतिष्ठा गिरी। आर्थिक क्षति भी हुई। दलीं का यह कार्य दफा पांच सौ के अनुसार दंडनीय हुआ।

दूसरा बयान दलीं का हुआ। उसने भी शपथ लेकर कहा कि— फागें उसकी बनायी हुई नहीं थीं। फागें ईसुरी स्वयं की बनायी हुई थीं। उसमें एक प्रतिभा है। उसको प्रोत्साहन देना तथा उसे आगे

लाना वांछनीय था। अतः वह उसे आगे लाया। फागें सुनवाने का अवसर दिलवाया। यह पता नहीं था कि वह कैसी फागें सुनायेगा। उसने आगे फड़ पर आकर ऐसी ही फागें सुना दीं जो रजऊ को सम्बोधित करके लिखी गयी थीं। रजऊ कितनी ही लड़कियों का नाम हो सकता हैं। लड़कियों को प्रायः रजऊ कहा जाता है। परन्तु मनसुखलाल की लड़की का भी नाम रजऊ है, इसलिए फागें उनको अपमानजनक लगीं। यह घटना आकस्मिक हुई। इसके पीछे कोई योजना नहीं थी, न किसी को बदनाम करने का ही अभिप्राय था। ईसुरी अबोध था। कानून से अनभिज्ञ। वह अपनी एक मानसिक लहर में पड़ कर फागें सुना गया।

ईसुरी का भी बयान हुआ। उसने भी शपथ ली और बयान दिया कि फागें उसकी ही बनायी हुई थीं। दलीं की नहीं। दलीं उसे आगे अवश्य लाये। फागें सुनाने के लिए समय दिलवाया। रजऊ और वह बचपन में साथ खेलते रहे हैं। मान-अपमान का किसी को कोई ध्यान नहीं था। दोनों को एक दूसरे के साथ मन-मन के खेल खेलने की पूरी स्वतंत्रता थी। उसी लहर में उसने फागें बनायी। उसे पता नहीं था कि उसकी वह स्वतंत्रता उससे कब छिन गयी? कब से रजऊ को मान-अपमान का बोध हो गया? वह कब से देवीदयाल कानूनगो की बहू बन गयी? बहू बन जाने से उसमें कौन-सी नयी बात आ गयी? उसका रूप बदल गया, रंग बदल गया, जाति बदल गयी, क्या बदल गया? वह उससे पृथक क्यों की गयी? उसकी फागों में कौन सा जहर आ गया? वह सर्प कैसे बन गयीं? उन्होंने मनसुखलाल को कब डस लिया? कब डस लिया कानूनगो को?

रजऊ का चित्र खींचने में क्या विचित्र बात हो गयी। 'अंग-अंग कैसे बनौ बंदवारो।' कहने में क्या किसी अंग में कोई खामी आ गयी। 'अड़िया जबर मसीली जांघें,' कहने में क्या रजऊ का अपमान हो गया। जबर की जगह बजर कहना चाहिये, मसीली की जगह क्या नशीली? तेहरी ओंले पड़े पेट में, तेहरी की जगह गहरी कहना चाहिये क्या? कहां चित्र बिगड़ गया, कहां रंग फीका पड़ गया, कहां गहरा? 'गोरा बदन कहां काला पड़ गया? हम खां रजऊ की बिछुरन व्यापी, यह तो मेरी अपनी मनोदशा का चित्रण है। रजऊ के ऊपर कोई आक्षेप नहीं। जिसके साथ बचपन में खेलता रहा, उसकी बिछुरन क्या दुखदायी नहीं होती? 'कढ़त नहीं जी पापी,' अपने प्राणों का कहा है, रजऊ के प्राणों को नहीं। फिर रजऊ का इसमें क्या बिगड़ गया? बचपन का विकास क्या आगे लुच्चपन कहा जाता है, क्या यह दंडनीय हो जाता है, यदि ऐसा है तो मैं दंडनीय हूं। दलीं नहीं। दलीं रजऊ के साथ नहीं खेले न उन्होंने फागें बनायीं

हैं। उनके हृदय में कोई आस्था भी नहीं। फाग क्या बनायेंगे! जिसके हृदय में होली जलती है, वही केशर रोली से फाग खेलता है।

गवाहों के बयान हुए। कानूनगो ने भी शपथ ली, बयान दिया कि बब्बू उनका लड़का है। वे मनसुखलाल के घर उनकी लड़की रजऊ से शादी करने को बारात लेकर मेढ़की गये। सारी बारात के सामने दलीं ने आकर ईसुरी से कुछ आपत्ति-जनक फागें सुनवायीं, जिनसे रजऊ के चरित्र पर छींटे पड़े। दलीं ने यह शरारत रजऊ को तथा मनसुखलाल को बदनाम करने के इरादे से की। शादी में बाधा डालने के इरादे से की। किसी पुराने बैर का बदला लेने के अभिप्राय से की। मनसुखलाल से वह कोई नाजायज सरकारी काम कराना चाहता रहा है। वे नहीं कर सके, इसलिए उसमें प्रतिक्रिया जागी। उसका अपराध दंडनीय है।

भोलारामजी का भी बयान हुआ। उन्होंने भी शपथ ली और बयान दिया कि ईसुरी उनका लड़का है। दलीं उसे बरगलाये है। पता नहीं उसने कौन-सा जादुई प्रभाव उस पर डाला है। जादू-टोना किया है। ईसुरी को उसने बस में कर रक्खा है। पहले एक दिन उसने ही ईसुरी को कुल्हाड़ी मारी थी। फिर उसी ने ईसुरी के घाव की मलहम पट्टी की। उसी समय से इसने ईसुरी का मन जीत लिया। मलहम पट्टी के द्वारा ही उसने कोई जहर ईसुरी के शरीर में पहुंचाया। ईसुरी तो एक तोता मात्र है। फागें बनाना क्या जाने। इस उम्र में उसे श्रृंगार रस की परख-पहचान कहां। अभी-अभी बालगी प्राप्त की है। फागें सुनाने के समय बिल्कुल नाबालिग ही था। दलीं ने फागें बनायीं; उसके द्वारा सरे आम सुनवायीं। रजऊ के चरित्र पर कीचड़ उछाला। कौन ऐसी लड़की को बहू बनाना स्वीकारेगा, जिसके ऊपर गुंडे फागें बनाते हों। जैसे वह सर्वभोग्या हो। भांवर न पड़ गयी होती तो कानूनगो बारात को वापस ले जाते। मनसुखलाल का बहुत बड़ा नुकसान हो जाता। लड़की अविवाहित रह जाती। उनके मान और प्रतिष्ठा को भयंकर ठेस लगती। दलीं गांव का माना हुआ एक दादा है, जो सारे गांव पर अपना आतंक जमाये है। लोगों के मवेशी चुरवा लेता है। मारपीट करता है। ईसुरी को अपना एक साधन बनाये हुए है। उसके द्वारा उसने पहले मेरा तीन सौ रुपया चोरी करा लिया, फिर एक हार भी, जिसे ईसुरी अपनी दुलहिन के गले से ही उतार कर ले गया। उसने कलुआ चपरासी की भैंस चुरवा ली। उसे मार भी लगायी। पीठ की एक हड्डी तोड़ दी। दलीं आतंकवादी है। अच्छा नागरिक नहीं, दंडनीय है।

और भी कितने ही गवाहों के बयान हुए। दलीं रुपया न जुटा सका, अतः अपने मुकद्दमे की पैरवी के लिए किसी

वकील को न लगा सका। उसकी वही दशा थी, जैसे कोई थका हुआ बैल जुंवा के नीचे गर्दन डाल दे। अदालत से उसे न्याय की कोई आशा नहीं थी। उसके पक्ष में कोई गवाह नहीं थे। कानूनगो का दबदबा था। हाकिम अफसरों तक उनकी पहुंच थी। उनके हाथ में रुपया था। सरकारी पद पर थे।

पर ईसुरी के बयान की चर्चा थी। है तो लड़का ही पर कैसा अच्छा बयान दिया। मजिस्ट्रेट यदि ईमानदार है तो दोनों को निर्दोष छोड़ देगा। क्या प्रमाण कि फागें किसकी बनायी हैं। फागों का बनाना कोई जुर्म नहीं, वे अच्छी हों या गंदी। हां, जुर्म है उनका आम जनता के सामने गाया जाना। पर गाने वाला ईसुरी, नाबालिग, दलीं की केवल इतनी ही गलती है कि वह ईसुरी को फड़ पर लाया। ईसुरी का यह तर्क कितना सशक्त है कि जिसके साथ बचपन में खेले, खेलने की आजादी रही, बड़े होते ही उस आजादी को किस संविधान ने छीन लिया? ऐसी कोई धारा नहीं जो बचपन के साथ खेलने वालों पर ऐसी कोई रोक लगाये कि बड़े होने पर साथ न खेल सकें। एक दूसरे पर कुछ लिख न सकें। एक दूसरे से बोल न सकें। नालिश रजऊ की ओर से होती तो भी कुछ महत्व रखती। पर रजऊ स्वयं नाबालिग। केस है तो रंगतदार। ईसुरी का यह भी एक तर्क विचारणीय है। किसी का चित्र हूबहू बनाया जाता है। हूबहू बात यदि शब्दों में कह दी जाये तो क्यों जुर्म! उसने रजऊ को कोई गालियां नहीं दीं। 'अंग अंग कैसो बनो बंदवारो' कोई गाली नहीं। 'कबजन कोद निहारो' कोई गाली नहीं। 'अंड़िया जबर मसीली जांघें' कोई गाली नहीं। 'माफिक की थुंदवारो' कोई गाली नहीं। चित्रों के अंग हैं, अंगों के चित्र। तूलिका के बनाये नहीं लेखनी के बनाये। तूलिका इतनी कोमल, लेखनी इतनी कठोर। मूर्तियां भी तो बनती हैं, देवी-देवताओं की। अंग-अंग ऐसे ही, सबकी आंखों के लिए खुले। पर देवी-देवता किसी अदालत को नहीं जाते। मान और अपमान के बीच की रेखा कहां है, पता नहीं।

भोलानाथ के बयान की भी आलोचना होती। दलीं के खिलाफ बहुत कुछ कह गये। अदालत के सामने ही उसे गालियां दे गये। गांव का दादा। चोर, बदमाश सभी कुछ तो कह गये। जादूगर भी बना गये। बेचारे दलीं की ओर से वकील पैरवी करने को होता तो पंडितजी स्वयं फंस जाते। भोलानाथ ही ठहरे। कानून कायदा क्या समझें? उंगलियां गिनना जानते हैं। पंचांग के बल पर बात करते हैं। उनसे तो उनका लड़का ही अधिक चतुर चालाक जान पड़ता है।

मुख्तार वकीलों में भी केस की चर्चा थी। कोई कहता, केस कमजोर है। दलीं छूट जायेगा। यह तो साबित नहीं

किया जा सकता कि फागें दलीं की बनायी थीं। वह लड़के को आगे लाया - यही कुल उसका अपराध है। यह कोई ऐसा संगीन अपराध नहीं कि दलीं को जेल की हवा खिलायी जा सके। बहुत होगा - दस-पांच रुपया जुर्माना हो जावेगा। कोई कहता - यार लगता तो ऐसा है कि बेचारे की पैरवी निःशुल्क ही कर दी जावे, गरीब आदमी है। जेल जाने के लिए समर्पित-सा दिखता है। पर एक बात और देखने योग्य है। ईसुरी उसे फंसाना नहीं चाहता। वह भी ईसुरी को फंसाना नहीं चाहता। दोनों में एक दूसरे प्रति कुछ गहरी निष्ठा है, गहरा संकल्प। दोनों के बीच कोई समझौता है, कोई योजना।

कोई कहता - केस तो मैं ले लूं, पर कानूनगो से खामुखां का विरोध होगा। सारे विरोधी लोग दलीं को जेल भिजवाना चाहते हैं। केस में कोई बड़ा राज है। अभी पर्त दर पर्त केस पूरा सामने नहीं आया। जिरह में ही सारी पर्तें खुलेंगी। अभी कुछ गवाह और भी आयेंगे।

इस तरह पेशी होते ही एक नया वातावरण बना। दलीं और ईसुरी ही एक मात्र अपने गुट में थे और कोई तीसरा नहीं। कोई वकील नहीं, कोई मुख्तार नहीं, हाथ में पैसा नहीं, बेचारा ईसुरी निराश सा, अभिशप्त सा, दलीं के मुख की ओर देख लेता और असहाय आंसू बहाने लगता। दलीं उसे धैर्य बंधाता — बेटा ! रो मत। मेरी सजा ही होगी, सजा काट कर फिर आ जाऊंगा। जेल में कोई फांसी पर न चढ़ा देंगे। हां तू अपनी फागें बनाना न छोड़ना। और निखार के साथ आगे आना। सब लोग समझ लें कि तेरे में एक होनहार कवि छिपा है। एक कलाकार। एक प्रेमतपस्वी। मैं इसलिए जेल जाना चाहता हूं कि तू अपने रूप में आगे जावे। लोग तेरी प्रतिभा का, तेरी प्रज्ञा का, तेरी प्रेम साधना का लोहा मान लें। परीक्षा की वेला है। प्रभात की वेला से भी मधुर। प्रकृति ने किसी को अपराधी बनाया है क्या ? प्रेम करना भी अपराध है क्या ? प्रेम प्रकृति की सर्वोत्तम रचना है। उसने किसे नहीं आगे बढ़ा दिया ? किसे नहीं अमर कर दिया। तूने कितनी प्रेम की कथायें सुनी हैं। लैला-मजनूं का नाम सुना है, रानी रूपमती और बाज बहादुर का नाम सुना है। नहीं किसी का सुना तो राधा-कृष्ण का तो सुना ही है।

आंसू पोंछ। अखाड़े में ताल ठोक कर कूद। मैं जेल जाऊं तब यह याद रखना।

* * *

अध्याय - २३

दूर की चीज छोटी भले ही दिखे परन्तु उसके प्रति आकर्षण बहुत बढ़ जाता है। रजऊ जब से अपने माइके गयी थी, उसके बिना न कानूनगो को कुछ अच्छा लग रहा था, न देवकी
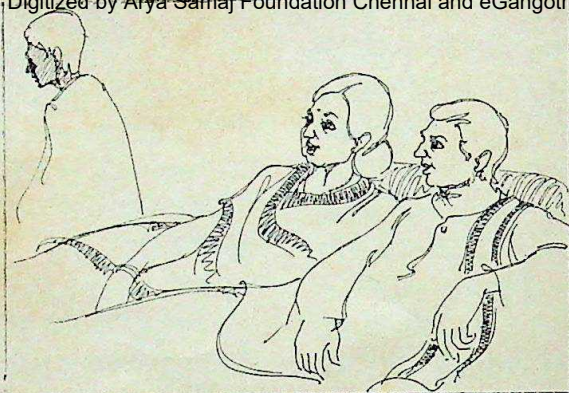
को। बब्बू भी कुछ एकाकीपन का अनुभव-सा करने लगा था। घर की सारी श्री तथा चहल-पहल ही सी चली गयी थी। पड़ौस की जो लड़कियां बैठने को आ जाती थीं, उन्होंने भी आना-जाना छोड़ दिया था। संध्या के समय जो ढोलक बजती, गाना-बजाना होता, मोद-प्रमोद की बातें होतीं वे भी सब बन्द थीं। एक ही व्यक्ति के बिना सारा घर उजड़ा-उजड़ा-सा लगता।

एक दिन कोई त्योहार पड़ा। नाइन पावन लेने को आयी। कुछ व्यंग्य सा करती हुई बोली, 'बब्बू की अम्मा! बहू को नहीं बुलाना अब क्या? कितने दिन तो हो गये। दिवाली सामने है, घर की लक्ष्मी बाहर है। बहू के बिना क्या लक्ष्मी की पूजा कर लोगी? पूजा तो तभी अच्छी लगती है, जब घर की लक्ष्मी करे। सजधज के, सोलह श्रृंगार करके। घर में बहू है तो बहार है, बब्बू की अम्मा! घर बगिया-सा फूला रहता है। फूलों-सा महकता रहता है।'

नाइन की मर्मीली बात सुनकर देवकी बोली, 'काकी! तुम तो ऐसी बात करती हो जैसे हमने बहू को हरदम के लिए भगा दिया हो। माइके ही तो गयी है। दोसरते की बिदा होना है। जब माइके वाले मंजूरी देंगे तभी तो विदा को यहां से जायेंगे।'

'हां, बब्बू की अम्मा!' नाइन कुछ सहमी-सी बोली, 'मेरा तो यही कहना है कि बहू की यहीं की दिवाली हो तो अच्छा।' ऐसा कहती हुई नाइन ने पावन ली और चलती हुई।

थोड़ी ही देर में धोबिन पावन लेने को आयी। वह भी अपनी सुश्रूषा का बाण-सा छोड़ती हुई बोली, 'बब्बू की अम्मा! देखो तो बहू के बिना घर कैसा सूना-सूना लगता है। बुलातीं नहीं अब बहू को। बहुत दिन तो हो गये। इतने

दिन तो हम आसामी भी अपनी बहू को माइके में न छोड़ते ।'

देवकी फिर कुछ परेशान सी बोली, 'अरी धोबिन काकी । अब देखो बहू को बुलाते ही हैं । विदा बनती न थी, इस कारण से देर हो गयी ।' धोबिन ने भी पावन ली और चलती हुई ।

कानूनगो अपने कमरे में लेटे ये सब बातें सुन रहे थे । धोबिन के जाते ही देवकी उनके पास पहुंची और बोली, 'किसको-किसको जवाब दूं । जो कोई आता है वह यही ताना कसता आता है । सबकी जबान पर एक ही प्रश्न । बोलो न? कब तक बुलाना है बहू को ?'

'बब्बू से पूछो न!' कानूनगो कुछ रुखयाने से बोले, 'वह बुलाने को तैयार नहीं तो मैं क्या कर सकता हूं । उसके आते ही फिर वही बात सामने आवेगी । फिर वही कलह । फिर वही रोना-धोना ।'

'तो क्या बहू को छोड़ ही दोगे?' देवकी ने पास बैठते हुए कहा, 'छोड़ दोगे तो क्या लड़के की दूसरी शादी हो जावेगी और छोड़ क्यों दोगे ? बहू ने क्या बिगाड़ा है? गुंडों का मुंह बन्द कराओ न ।'

'गुंडों का तो मुंह बन्द हुआ जाता है,' कानूनगो ने देवकी का मुंह हाथ से बन्द करते हुए कहा ।

देवकी उनका हाथ हटाती हुई बोली, 'हां मेरा तो जब चाहे तब मुंह बन्द कर लो । ऐसा ही उन लोगों का करा दो तब जानूं । मेरा मुंह तो तुम्हारे हाथ में है ।'

'नहीं देवी,' कानूनगो कुछ विनोद से बोले, 'तुम्हारा मुंह बन्द करना उनसे भी कठिन है । तुम्हारा मुंह बन्द कराने को कोई अदालत नहीं । वह तो चौबीस घंटा चलता ही रहता है, घड़ी जैसा टिक, टिक, टिक ।'

'न चावी भरी तो घड़ी बन्द पड़ी रहेगी,' देवकी ने मुस्काते हुए कहा । इतने में बब्बू के आने की आहट मिली । देवकी चारपाई से उतर कर नीचे बैठ गयी । बब्बू बोला, 'अम्मा! ये दो फागें और आई हैं मेढ़की से । पढ़ लो, और सुना दो खत बापू को ।'

देवकी ने परचा हाथ में लिया और फागें कानूनगो को सुनायीं और बोली, 'देखो तो यह ईसुरी कैसा पीछे पड़ा है ?' हमसे दूर तुम्हारी बखरी - हमें रजऊ जा अखरी । हम खां बिसरत नहीं बिसारी – हेरन हंसन तुम्हारी । खुल्लम-खुल्ला यारी कर रहा है । नालिश जो की थी, क्या हुआ ?'

'क्या बताऊं क्या हुआ ?' कानूनगो कुछ हत्प्रभ से होकर बोले, 'अभी पहली ही तो पेशी हुई है । जब फैसला हो जावे तब कुछ कहा जावे कि यह हुआ । हां पर बयान सबके अच्छे हुए । दलीं को सजा हो जावेगी । बचेगा नहीं । बदमाश । पर यह नहीं समझ में आता की फागें ईसुरी ही बनाता है या दलीं । भेद तो तभी खुलेगा जब दलीं कुछ दिन को जेल चला

जावेगा। उसके जेल जाने पर भी यदि फागें आती रहीं तब तो मानना पड़ेगा कि ईसुरी ही शरारत कर रहा है। कुछ दाल में काला है। उसके बयान से भी कुछ ऐसा ही अब आभास मिला है। उसके बयान की बहुत चर्चा है। ऐसा बयान दिया है कि जैसा कोई वकील भी न दे पाता। कुछ धैर्य से ही काम लेना है।'

'पहले बहू को घर बुला लो,' देवकी बोली, 'फिर जिससे चाहो काम लेते रहना। अब हो आयी वह मायके। शादी की आयी थी। फिर कभी न जा पावे। कुत्ते भौंकते रहेंगे।'

'बब्बू।' कानूनगो बोले, 'जाओ तो उन गोपाल पंडित को तो बुला लाओ। कहना पत्रा लेते चलिये। अभी साथ में लिये आना।'

बब्बू चला गया। देवकी मुस्कराती हुई बोली, 'अभी था अटका पंडित को बुलाना, टाल दिया बब्बू को।'

'शुभस्यशीघ्रम्,' कानूनगो भी मुस्कराते हुए बोले, 'दोसरते की विदा सुधवा लूं। कल मैं दफ्तर चला जाऊंगा, फिर समय न मिलेगा।'

देवकी फिर पलंग पर बैठ गयी और बोली, 'हां कल कैसे समय मिला जाता है? समय तो आज है।'

थोड़ी देर में बब्बू के आने की फिर आहट मिली। कानूनगो उठकर बाहर आंगन में आ गये। बब्बू बोला, 'पंडितजी आ गये हैं। भीतर बुला लूं।'

'हां! हां।' कानूनगो बोले, 'पंडितजी से क्या पर्दा!'

देवकी ने कमरे से निकल कर आंगन में एक पीढ़ा डाल दिया। पंडितजी उस पर बैठ गये और पत्रा खोला।

'हां पंडितजी।' कानूनगो बोले, 'बहू की विदा करानी है। दोसरते की विदा है। देखिये तो कब की बनती है।'

पंडितजी पंचांग के पन्ने उलटते हुए बोले, 'हां बहू को गये बहुत दिन तो हो गये। गांव में बहुत चर्चा है। जितने मुंह उतनी ही बातें। कोई-कोई यहां तक कहता है कि कानूनगो भैया बब्बू की दूसरी शादी करने का विचार कर रहे हैं?'

पंडितजी की बातें सुनते ही कानूनगो को ऐसा लगा, जैसे बिच्छू ने डंक मार दिया हो। कुछ रूखे स्वर से बोले, 'इस गांव की कुछ न कहो, पंडितजी! इसमें ऐसे ही लोग रहते हैं जो दूसरों के छिद्र ही ढूंढ़ते रहते हैं। उन्हें इसमें ही आनन्द आता है। नाच-गाना कुछ यहां होता नहीं, अपना मनोरंजन कैसे करें? बब्बू की दूसरी शादी क्यों करूंगा, क्या पागल हो गया हूं। मेरी बहू को क्या दोष लग गया है। साक्षात लक्ष्मी है। आयी है किसी के घर में ऐसी बहू। राजाओं की रानियां नहीं हैं ऐसी। दीपक की लौ देख पतंगे दौड़ते हैं, पर सब जल कर ही नष्ट हो जाते हैं न! रूप में ऐसा ही आकर्षण होता है। कुछ गुंडे उसके नाम पर फागें बनाते हैं, मैं कहता हूं, खूब बनावें। उसका नाम

लोगों के कानों तक पहुंचता है। उसके रूप का गुणगान ही हो रहा है।'

पंडितजी कुछ सहमे से बोले, 'आप ठीक कहते हैं, कानूनगो साहब! बिच्छू का स्वभाव डंक मारना ही है, सर्प का स्वभाव डसना ही है। पर जब आदमी के दाव में पड़ जाते हैं, दोनों कुचल दिये जाते हैं। फंसा तो लिया है आपने एक गुंडे को। क्या हुआ उसके केस का?'

'चल रहा है केस!' कानूनगो बोले, 'सजा होगी, होकर रहेगी। एक-एक का मुंह बन्द करा दूंगा। बड़े घर वायना दिया है। मनसुखलाल ने बहुत बरदाश्त कर लिया। क्या मैं बरदाश्त कर लूंगा। रजऊ अब मेरी बहू है। मेरे घर की शोभा, मेरे घर की लक्ष्मी। मेरे घर की प्रतिष्ठा और शान। कैसे-कैसे अटकल लगाने वाले लोग हैं। दोसरते को कुछ देर हो गयी, सो अटकल लगाने लगे कि बहू को छोड़ दिया। देखिये विदा कब की बनती है। चलेंगे आप भी तो साथ। शान से बहू को लिवा लाऊंगा।'

पंडितजी का मुंह फीका पड़ गया, जैसे वे भी उसी गुंडा पार्टी मे से एक हों। पंचांग के पन्ने पलटते हुए बोले, 'पूर्णिमा की विदा बनती है। फिर जब की आप कहें, तब की बना दूं।'

कानूनगो मुस्कराते हुए फिर बोले, 'मेरे कहने से न बनाइये, जो बनती हो सो बताइये।'

'तो पूर्णिमा की ही ठीक है, लिख दीजिये आप कानूनगो साहब को।' ऐसा कहते हुए पंडितजी ने पंचांग बन्द किया। फिर बब्बू की ओर देखते हुए बोले, 'क्यों बब्बू? लावो कुछ दान-दक्षिणा अपने पंडित को। करो पंचांग की पूजा।'

देवकी ने पान लगाकर उनके सामने रक्खे और दो रुपया भी। पंडितजी ने पान खाया, रुपये उठाये और आशीर्वाद देते हुए बोले, 'कानूनगो भैया, मैने ठाकुर जगजीत की कोठी पर कुछ ऐसी ही चर्चा सुनी थी, इससे ही आपको संकेत दिया था। बुरा न मानियेगा। मैं समझता हूं—मैंने कोई गलती नहीं की, न आप पर छींटा उछालने के अभिप्राय से कुछ कहा है।' ऐसा कहते हुए गोपाल पंडित अपने घर गये। कानूनगो उनके पीछे-पीछे थोड़ी दूर तक बात करते चले गये।

यहां बब्बू बोला, 'अम्मा! तुम्हें चैन से रहा नहीं जाता। फिर तुम अपने सिर के लिए उपद्रव बुला रही हो! रोज-रोज की कलह क्या तुम्हें अच्छी लगती है? काली छछूंदर तुम्हारा सिर मलती रहे, इसमें ही क्या तुम्हें आनंद आता है।'

'कैसा है रे,' देवकी कुछ मुस्कराती कुछ खिसियाती हुई सी बोली, 'सोने-सी बहू को काली छछूंदर कहता है। उसके सामने तू लगता है काला छछूंदरा सा। मिल गयी है भाग्य से ऐसी रूपवती, इसलिए है नखरे दिखाता।'

'अम्मा!' बब्बू फिर चिढ़ाता हुआ-सा बोला, 'रूप-रंग भले ही सोने जैसा हो

गुण तो काली छछूंदर जैसे ही हैं। देखती नहीं कितने गुंडे उसके पीछे पड़े हैं। मैं मेढकी गया नहीं कि उन बदमाशों से टकराव हुआ। उनका मुंह कुचल के आऊंगा। हरामजादे दूसरे की बहू-बेटी पर कीचड़ उछालते हैं। देखूंगा मैं, कैसा है वह ईसुरी। साले की हड्डी-पसुली तोड़ दूंगा। उस दलियां को दलदल घोड़ी बना कर नचाऊंगा।'

इतने में कानूनगो फिर भीतर आ गये और एक पीढ़ा पर बैठते हुए बोले, 'ठाकुर जंगजीत हैं मुझसे कुछ चिढ़े हुए। बड़े गांव के ठाकुर पहाड़सिंह से उनका जमीन सम्बन्धी कुछ झगड़ा चल रहा है। जिस किसी के विपक्ष में मुख से कोई बात निकल जाती है, वही दुश्मन बन जाता है। दोनों जागीरदार हैं, दोनों टक्कर के। दोनों का काम मुझसे पड़ता है। किसके पक्ष में बोलूं किसके विपक्ष में। पंडितजी खुले नहीं। कुछ संकेत मात्र ही किया। ठाकुर जंगजीत कुछ कहते रहे।'

'कोई कुछ कहे,' देवकी उनकी ओर पान बढ़ाती हुई बोली, 'बहू की बिदा कराओ, उसे घर में डालो। गुंडे बकते ही रह जावेंगे। कोई घर में घुस कर बहू को पकड़ न ले जावेंगे। जब से वह गयी है, घर की सारी रौनक सी चली गयी है।'

'रौनक फिर आयी जाती है,' कानूनगो बोले, 'अब देर क्या है? माइके तो बहुओं को भेजना ही पड़ता है।'

'अम्मा की रौनक,' ऐसा कहता हुआ बब्ब भाग गया।

कानूनगो हंसने लगे। 'बड़ा बदमाश है,' देवकी ने प्रेम से कहा, 'अब कैसा चाहने लगा उसे!'

* * *

अध्याय - २४

मनुष्य का नियत किया हुआ समय भी आ ही जाता है। दलीं के फैसले का दिन भी आ गया। अदालत के सामने भीड़ लग गयी। प्रत्येक फैसले के लिए कुछ उत्सुकता रहती ही है। इस फैसले के लिए कुछ विशेष थी। केस ही अपने ढंग का कुछ निराला था।

दलीं और ईसुरी दोनों ही अदालत के सामने एक ओर मुंह लटकाये खड़े हुए थे। ईसुरी की आंखों से आंसू बह रहे थे। दलीं उसे रोता देखकर बोला, 'क्यों रोता है, बेटे! क्यों धैर्य खो रहा है। यह दुनिया है, दुख की दुख से बनी है। जो इस दुनिया में आता है, उसे दुख ही भोगना पड़ता है। सुख की तो एक कल्पना मात्र है। दुख से आना, दुख से रहना, दुख से जाना, यही दुनिया का जीवन है। जेल एक के लिए नहीं, बहुत से लोगों के लिए है। मैं भी उन बहुत से लोगों में जा मिलूंगा। बहुत के साथ भोगने में जेल जीवन भी दुखमय नहीं रह जाता। वहां भी साथी मिल जाते हैं, एक-सी प्रकृति के, दुनिया की दृष्टि में अपराधी। प्रकृति की दृष्टि में कोई नहीं। कानून बनाना ही सबसे पहला अपराध
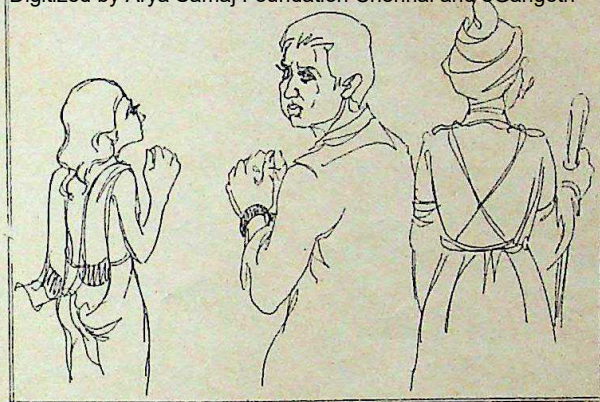
है, और दंड देना दूसरा अपराध। प्रारम्भ से ही जब दुनिया में अन्याय चला आ रहा है, तब उसे सुख का ही एक अंग मान कर क्यों न भोगा जावे। मैं तो चाहता हूं—मजिस्ट्रेट मुझे लम्बी सजा सुनावे।'

ईसुरी को दलीं की बात से कोई सन्तोष न हुआ। वह सिसकियों को रोकता हुआ बोला, 'दादा! तुम बहुत से साथियों के बीच रहने को जा रहे हो। तुम्हें सन्तोष है। मेरे एक ही साथी और वह भी मुझसे छिन जावे, मुझे सन्तोष कैसे हो? जिस नीड़ पर बैठ कर मेरा मन बसेरा लिया करता था, वह भी नीचे से टूट जावे। मेरे पंख भी तो नहीं कि उन्हें फड़फड़ाकर कुछ देर आकाश में शरीर को साध लूं। मेरे कारण तुम जेल भोगो और मैं मुक्त फिरूं। कहां से मेरे मन में वे फागें कुलबुलायीं। मैंने उन्हें रूप दिया, संगीत दिया। तुम्हारे लिए जाल बुन दिया। गजब हो गया। मैं न जानता था — कैसी फागें फड़ पर सुनाना चाहिये थीं। जैसी अकस्मात हृदय से उठीं, गा डालीं। अपराध हो गया। वह भी तुम्हारे लिए।'

'अब तू फाग ही गा,' दलीं उसके सिर पर हाथ फेरता हुआ बोला, 'निकलने दे हृदय की धधकती हुई आग। निकलने दे भीतर मढ़ता हुआ राग! घुमड़ता हुआ अनुराग। गा दीपक राग। गा मल्हार राग। गा विहाग राग। इसी में तेरा भला है, तेरे व्यक्तित्व का विकास, तेरे चरित्र का निर्माण। मस्त होकर गा, पागल होकर गा। दुनिया सुनने को दौड़े, मृग-सी अनुरक्त। तेरे दुश्मन हों तेरे भक्त। बेटे! रोने में कुछ नहीं रक्खा। अपने साहस को समेट। आंधी-पानी जो भी सामने आवे उसे झेल।'

'तो क्या, दादा!' ईसुरी दयावनी-सी शकल बना कर बोला, 'तुम्हें सजा हो ही जावेगी। तुम जेल चले ही जाओगे। कितने दिन रहोगे वहा?'

'हां।' दलीं बोला, 'सजा न भी हो तब भी उसके लिए तैयार रहना चाहिये। मेरे दुश्मनों का जोर अधिक है। उनके मुख्तार वकील लगे हैं, वे रुपया खर्च कर रहे हैं। जो भी काम सम्पूर्ण शक्ति को समेट कर यहां किया जाता है वह होता है, वह सही हो या गलत। उसका परिणाम भी जो भी निकले। मेरी सजा होना निश्चित-सा है। दुनिया में ताकत ही सबसे ऊपर चलती है। सत्य, न्याय सब उसकी सुश्रूषा करते हैं। देखता नहीं उस कानूनगो की, कितने लोग चापलूसी करते हैं। मुझे, तुझे पूछता है कोई। मैं तो फिर अपराधी ठहरा। हो सकता है, फैसला सुनाते ही मेरे हाथों में हथकड़ियां पड़ जायें। मैं जेल को चला जाऊं। उम्मेद ऐसी ही है। पर रोना मत।'

यह सुनते ही ईसुरी और फूट-फूटकर रोने लगा। दलीं स्वयं गला भर कर बोला, 'तू रोता है इससे अब मैं नहीं चाहता कि तुझसे कोई बात करूं। लोग देखते होंगे। तरह-तरह का मतलब लगावेंगे। इससे रो मत। खामोशी भी बहुत कुछ बोलती है। उसकी बात सुन।' ऐसा कहते हुए दलीं चुप हो गया। ईसुरी भी चुप हो गया।

यहां अदालत में उसकी पुकार हुई। उसे फैसला सुनाया गया। उसे अभियोगी ठहराया गया, क्योंकि वह ईसुरी को फागों के फड़ पर फागें सुनाने को आगे लाया। फागें किसी की भी बनायी हों, सुनाने वाला कोई भी हो, सुनाने वाले को आगे लाने वाला ही अपराधी। फिर सुनाने वाला नाबालिग। एक वर्ष की सजा और पांच सौ रुपया जुर्माना, जुर्माना न चुकाने पर छः महीने की सजा और! सजा उसे सुना दी गयी। पुलिस ने उसे हथकड़ियां पहनायीं। उसे जेल को ले चली। हथकड़ियां पहने हुए वह बाहर निकला। ईसुरी निष्प्राण-सा वहीं खड़ा था। दलीं ने कुछ मूक बात की। दलीं जेल को गया। ईसुरी भागा घर की ओर मेढ़की को।

यहां मनसुखलाल ने अदालत से बाहर निकलते ही कानूनगो के तथा भोलाराम के पैर छुए।

भोलाराम आशीर्वाद देते हुए बोले, 'आखिर चला गया दुष्ट जेल को। बहुत सिर उठा रक्खा था उसने। मेरे लड़के को तो उसने बरबाद ही कर दिया। अब भी कुछ ठिकाना नहीं। न जाने क्या-क्या शिक्षा दे गया है। दोनों एक जगह खड़े घंटों बात करते रहे। अवश्य ही कुछ मंत्र फूंक गया होगा। मेरे हार का अब भी पता न पड़ा। कमबख्त यह भी बता जाता कि किसी के घर गिरवी रक्खा है तो उसे उठा लेता। तीन सौ रुपया पहले उसने उड़वा दिये, तीन हजार का यह हार गया। मुझे तो बड़ी खुशी हुई। उसकी ग्रह दशा ही ऐसी आ गयी थी। उसकी जन्मकुंडली में जेल जाने का योग था। अब गांव में शान्ति हो जावेगी।'

'पंडितजी! मनसुखलाल कुछ उल्ल-

सित से होकर बोले, 'मैंने बहुत डरते-डरते नालिश की थी। केस बहुत कमजोर था। यदि आपका लड़का नाबालिग न होता तो उस पर आंच आती। वह सजा खाता, क्योंकि फागें सुनाने वाला वह था। उसे वृद्धि से काम लेना चाहिये था। उसकी नाबालगी काम आ गयी। वह बच गया।'

'बच गया सो तो ठीक,' भोलाराम छालियां काटते हुए बोले — 'अब वह रास्ते पर आ जावे तब न! बहका हुआ व्यक्ति रास्ते पर भी बहका ही रहता है। देखूंगा,' कुछ दिन को उस दलियां की संगति तो छूट गयी। यही क्या कम है।'

'हां पंडितजी!' मनसुखलाल बोले, 'फागों का यह अभियान तो बंद हो जावेगा। ऐसी गंदी-गंदी फागें। गांव की लड़की के नाम पर ऐसा कहीं होता है। पागलपन भी नहीं, निरा गुंडापन!'

कानूनगो चुप थे। कुछ टीका-टिप्पणी न करने में ही वे अपना बड़प्पन समझते थे। मनसुखलाल चाहते थे कि वे भी कुछ बोलें। अतः उनकी ओर संकेत करते हुए बोले, 'वह तो आपकी मरजी हो गयी सो मैं मुकद्दमा जीत गया, नहीं तो दफा पांच सौ के केस कोई जीतता नहीं।'

'मेरी मरजी क्या हो गयी,' कानूनगो कुछ ताव पकड़ते हुए बोले, 'क्या मैं कोई जज-मजिस्ट्रेट हूं या मैंने किसी को लांच-घूंस दी। केस मजिस्ट्रेट की टेबुल पर था। खुला हुआ। उसके जो इन्साफ में आया किया। आप ऐसी नासमझी की बात करने लगते हैं कि सब की मिट्टी पलीत हो जावे। अब ऐसी बात मुंह से न निकालना।'

मनसुखलाल की सुश्रूषा उलटी पड़ी। वे सहमे से रह गये। भोलेराम आग पर पानी-सा छोड़ते हुए बोले, 'पटवारी भैया! तुम जिन्दगी भर पटवारी ही रहे। तुम्हें भगवान ने अक्कल न दी। अरे इतना तो हम पंडित लोग समझते हैं जो राजकाज से दूर रहते हैं। कोई दूसरा सुने तो यही अर्थ लगाये कि कानूनगो भैया ने मजिस्ट्रेट को लांच दी होगी। दोनों, फंसे नहीं तो बदनाम तो हैं। लो जाओ पास की दुकान से पान लगवा लाओ।' ऐसा कहते हुए उन्होंने पैसे निकाले।

'आप क्यों पैसा देते हैं?' कानूनगो ने कहा और अपनी जेब में हाथ डाला

'नहीं-नहीं पैसा मेरे पास है,' मनसुखलाल पान लगवाने को दौड़े गये।

कानूनगो फिर अपनी अकल का डंका-सा पीटते हुए बोले— 'पंडितजी! आपके इन पटवारी साहब को अकल नहीं आती। कितना भी समझाऊं। ये ऐसी ही बात कर डालते हैं। मैं तो इन्हें पटवारगीरी से भी निकलवाने वाला था, इनका सारा काम पसमादा पड़ा है, कोई नक्शा समय पर बनाकर नहीं देते। वसूली भी ठीक नहीं रहती। पर देखिये तो कहां से क्या संबंध होने गया। ये एक बार बगौरा में मेला देखने आये थे। अपने

परिवार को भी साथ लाये थे। इनकी बच्ची और मेरे लड़के बब्बू की वहीं सगाई सी हो गयी। ऐसा जोड़ा दिखा जो सबको जंचा। कुछ पूर्व जन्म का संस्कार होगा। लड़की को ही देख कर सम्बन्ध हो गया, नहीं तो क्या मैं पटवारी के घर शादी करने जाता? और फिर मनसुखलाल से पटवारी पूरे बागड़बिल्ला!' ऐसा कहकर कानूनगो हंसने लगे।

इतने में मनसुखलाल पान लगवाकर आ गये और पहले कानूनगो को देने लगे।

कानूनगो फिर बोले, 'देखो, पंडितजी! मैं ठीक कह रहा था कि पटवारी साहब भगवान के घर से कुछ अक्ल ज्यादा लेकर आये हैं। ये मुझे पहले पान देते हैं। यह नहीं देखते कि हमसे जेठे सयाने, पूज्य पंडितजी सामने खड़े हैं।'

भोलाराम अपनी सुश्रूषा से ऐसे प्रसन्न हुए जैसे कोई मुंह मांगा दान मिल गया हो। खिलखिला कर हंसते हुए बोले, 'भाई कानूनगो साहब। आप तो पटवारी साहब को नौकरी से बरखास्त-सा कर देते हैं। बड़ा कठोर प्रहार करते हैं। पर क्या कहा जावे? वे आपके समधी हैं। इनसे ज्यादा अक्ल तो आपकी समधिन में है। उनका काम कभी पसमादा नहीं रहता। समय पर सब नक्शे पेश करती है। समय पर सब वसूली। देखा है कभी आपने उनको।'

पंडितजी के गहरे व्यंग्य को सुनकर कानूनगो जोर से हंस पड़े। फिर एक ओर पान थूकते हुए बोले, 'आपने समधिन को कहां देख लिया! क्या कभी कोई नुमाइश लगी थी? आपने मुझे क्यों नहीं बुला लिया?'

मनसुखलाल मुस्कराते हुए सब सुन रहे थे। उनका बोलने का कुछ साहस नहीं पड़ रहा था। डरते थे कि मुंह से बात निकले और फिर न उसे कानूनगो पकड़ लें।

पंडितजी फिर बोले, 'पटवारी साहब। बुलाओ न कानूनगो साहब को कभी घर।'

'आयेंगे ही दोसरते में,' मनसुखलाल बड़े सहमे हुए से बोले।

'हां तो अब चला जाय न!' कानूनगो फिर बोले, 'पंडितजी, वह आपका लड़का कहां भाग गया? उसे भी साथ लेते चलते। उसे कुछ समझाते। अब दलियां का साथ छूट गया है, शायद समझाने से अब वह रास्ते पर आ जावे। परन्तु वह तो हम लोगों की शकल देख कर दूर भागता है। जैसे अपराधी पुलिस से दूर रहे।'

'लड़का का कुछ न पूछिये, कानूनगो साहब।' पंडितजी बोले, 'वह मुझे देख कर भी ऐसा भागता है, जैसे कोई भूत को देखकर भागे।'

'आप बने भी तो ऐसे हैं,' मनसुखलाल ने हंसते हुए कहा।

'अच्छा भाई तो अब भूत ही आप

लोगों से दूर भागता है।' ऐसा कहते हुए भोलाराम अपनी बैलगाड़ी की ओर चल गये।

मनसुखलाल को पंडित पर बड़ा क्रोध था। उसके जाते ही बोले, 'यह पंडित बहुत बदमाश है। इसी ने ईसुरी को बरबाद किया है। ऐसी मार लगाता है कि जान लेने में कसर नहीं रखता।'

'खैर देखा जायेगा,' ऐसा कहते हुए कानूनगो भी अपनी बैलगाड़ी की ओर बढ़े। मनसुखलाल भी उनके साथ लग गये।

* * *

अध्याय - २५

समस्यायें सूत जैसी ही उलझती हैं। उन्हें जितनी भी सुलझाने की कोशिश की जाती है, वे उतनी ही अधिक उलझती जाती हैं। भोलाराम की कोई समस्या सुलझी नहीं। उन्होंने सोचा था कि दलीं का साथ छूट जाने से ईसुरी रास्ते पर आ जावेगा और उनके कहने पर चलने लगेगा। परन्तु हुआ कुछ विपरीत ही। उनका अपना भी कुछ दोष था। उन्होंने ईसुरी की शादी के लिए इस शर्त पर राजी किया था कि वे दलीं का मुकद्दमा वापस करा लेंगे। परन्तु उन्होंने दलीं के खिलाफ ही गवाही दी। उसे जेल भिजवाने में सहायक हुए। इससे ईसुरी को उनसे खासी चिढ़ हो गयी। वह उन्हें चिढ़ाने भी लगा।

एक दिन जब वे अपनी चौपाल में बैठे अपना पंचांग पलट रहे थे, ईसुरी अपने उन साथियों की पार्टी लेकर द्वार से निकला, जिनको लेकर वह दलीं को
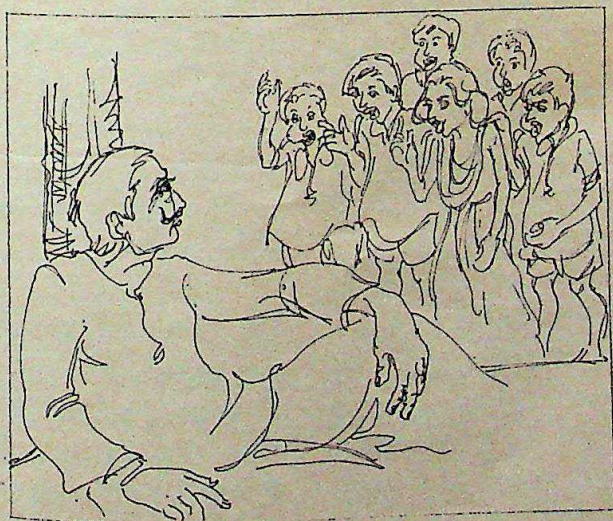
चिढ़ाने जाया करता था। लड़कों ने द्वार पर खड़े होकर कहना शुरू किया– 'भालूराम! भालूराम! भालूराम!'

भोलाराम लड़कों को देखकर झल्लाते हुए उठे। ईसुरी भी उनमें था। उनके आश्चर्य का ठिकाना न रहा। भीतर से बड़ी बहू को बुलाते हुए बोले, 'देखो अपने कपूत का काम। मुझे चिढ़ाने के लिए लड़कों की पार्टी जोड़ कर लाया है।' ऐसा कहते हुए उन्होंने अपनी लाठी उठायी और दौड़े लड़कों के पीछे कहते हुए– 'पकड़ो तो बदमाशों को। मुझे चिढ़ाने को आये हैं। और तो और अपना कुपूत भी उनके साथ है। पागल हो गया है न जाने क्या?' लड़के सतर्क थे ही। भोलाराम के झपटते ही वे नौ दो ग्यारह हो गये। भोलाराम उन्हें दूर तक खरेद आये और फिर हांफते-कांपते अपनी चौपाल में आकर बैठ गये।

बड़ी बहू यह तमाशा देख रही थी। उनके आते ही बोली, 'सारा दोष तुम्हारा है। जैसा किया है सो भोगो। तुमने उससे कहलाया था कि वह शादी करा ले तो मैं दलीं का मुकद्दमा वापस करा लूंगा। उसने इस शर्त पर शादी करा ली। पर तुमने मुकद्दमा वापस न लिवाया। उलटा दलीं के खिलाफ गवाही देने गये। उसे सजा करा आये। वह सब तो कहता रहा है। कह गया है– अब वह कभी दोसरता नहीं करायेगा। अच्छा किया तुमने। दलीं से क्या दुश्मनी थी। छुड़वा न देते उसे। संसार में न बाप लगता है न लड़का, न्याय सब कुछ होता है। जहां कहीं भी न्याय नहीं, होता वहां बाप बेटे में भी नहीं पटती। वह रजऊ से शादी चाहता था। कर क्यों न लेने दी। अपनी जाति-पांति के घमंड में फूले बैठे रहे। अब वह तुम्हारा सारा त्रिवेदीपन निकाले देता है।'

भोलाराम कुछ घबराये से बोले, 'देवी! तू भी लड़के की तरफ मिली है क्या? तू उसे समझाती नहीं। उसी के पक्ष में बोलती है। समाज के नियम कैसे तोड़े टूटते हैं। मैं अकेला नियम तोड़ूंगा तो समाज मेरी कमर न तोड़ देगा।'

इतनी बात हो ही रही थी कि फिर लड़कों की टोली निकली। 'भालू! भालू। भागो! भागो। भालू आया।' ऐसा कहते हुए लड़के उनके सामने से जोरों से भागे। भोलाराम ने फिर लाठी उठायी और फिर उनके पीछे दौड़े। गांव के लोग भी तमाशा देखने के लिए जुड़ आये।

एक पड़ौसी बोला, 'पंडितजी! यह क्या तमाशा है। आपका लड़का भी तो इन लड़कों के साथ है। वह इन्हें मना नहीं करता। वह भी उनके साथ दौड़ता हुआ निकलता है।'

भोलाराम पसीने में तर, हांफते हुए बोले– 'यह मेरे लड़के की ही शरारत है। वह मेरा दुश्मन बन रहा है। सम्भव है, मेरे प्राण लेकर छोड़े। बताओ किसके

कहने जाऊं ? अपने लड़के की शिकायत करूं? दुनिया हंसे। तुम पड़ौसी हो समझाते नहीं लड़के को।'

'पंडितजी,' पड़ौसी बोला, 'हमें कुछ जानकारी भी तो हो। हम समझावें क्या। आपका लड़का क्यों आप से बगावत कर रहा है ? फिर आप भी भालू कहने से क्यों चिढ़ते हैं। कहने दीजिये न उन्हें भालू। आप चिढ़ेंगे तो वे और चिढ़ायेंगे। उन्हें चिढ़ाने में आनन्द आता है। आप जितना ही क्रोध दिखायेंगे वे उतने ही प्रसन्न होंगे। आप शान्त होकर बैठ जाइये। उनके साथ आप भी भालूराम कहिये। हंसिये और तालियां बजाइये।'

'क्या मैं भालू हूं?' भोलाराम किड़किड़ाते हुए बोले, 'सालों को दिखता नहीं। मैं गांव का पंडित! गांव में मेरी क्या प्रतिष्ठा रहेगी। जहां जाऊंगा वहीं लोग भालू-भालू कहेंगे। मुझे पकड़-पकड़ नचायेंगे। मुझे यह बरदाश्त नहीं। जो लड़का भी मेरी आबड़ में पड़ जायेगा उसका सिर तोड़ दूंगा। एक गुंडे ने सिर उठाया था, वह तो गया जेल। दोनों हाथ बंधे चले गये। भूल गया अपनी सारी कलाबाजी। दूसरा उसका साथी यह रह गया है। मेरा लड़का हो या पराया, जो कुमार्गगामी है, वह मेरा दुश्मन है। मैं न्याय का, सद्मार्ग का, सद्गुणों का हिमायती हूं।'

ऐसा बकते बड़बड़ाते हुए भोलाराम आगे और फिर अपनी चौपाल में बैठ रहे।

बड़ी बहू बोली, 'तुम यहां न बैठो, भीतर चलो। लड़के फिर फेरी लगायेंगे। तुम्हें बैठा देखेंगे, फिर चिल्लायेंगे।'

'ठहर जा! चलता हूं। तमाखू खा लेने दे।' ऐसा कहते हुए भोलाराम ने अपनी थैली खोली और छालियां काटने लगे। फिर बड़बड़ाते हुए बोले, 'कलियुग है कलियुग। एक लड़का वह था सरमन जो अपने अन्धे मां-बाप को कांवर में लिये फिरता था, एक यह है मेरा कुपूत जो मुझे चिढ़ाता है। घर में बैठना हराम किये है।'

ऐसा कहते हुए भीतर जाने वाले ही थे कि दीनदयाल और रामनाथ आ गये। दोनों ने भोलाराम के चरण स्पर्श किये और चौपाल में जमीन पर ही विनम्रता-पूर्वक बैठ गये।

भोलाराम कुछ आश्चर्य से उनकी ओर देखते हुए बोले, 'अरे आप लोग अचानक कैसे ? क्या कहीं से लौटे हैं। कहिये घर में सब कुशल है न ? मेरी बहू कुशल से है न ?'

दीनदयाल हाथ जोड़ते हुए बोले, 'आप ही लोगों का बहुत दिनों से कुशल समाचार न मिला था, इसलिए हम आये हैं। लगता था जैसे आप अपनी बहू को भूल ही गये हों। दोसरते की भी बात नहीं उठायी। गांव में चर्चा है कि आपने बहू को छोड़ दिया है। आपको शादी में कुछ

मन चाहा मिला-जुला नहीं, इसलिए अप्रसन्न हैं।'

'क्या बताऊं', भोलाराम भोली-सी शकल बना कर बोले, 'आपका दामाद तो पागल हो गया है। किसके बूते पर बहू को बुलाऊं? वह तो मेरा रहना हराम किये हैं। उसने घर की सारी गृहस्थी चौपट कर दी।'

ठीक इसी समय फिर ईसुरी अपनी टोली लिये हुए निकला। लड़कों ने तालियां पीटीं और शोर मचाया—'भालूराम, भालूराम, भालू आये— नाच दिखाये, भालू आवे — नाच दिखावे। पैसा ले वे नाच दिखा कर — भलुआ नाचे तमाखू खाकर।'

'देख लो, देख लो,' भोलाराम उभकते हुए बोले, 'वह है तुम्हारा दामाद लड़कों की टोली में। पकड़ो उसे और ले जाओ। कुछ दिन ससुराल में ही रखना। हो सकता है ससुराल में उसका दिमाग कुछ ठीक हो जावे। यहां तो वह पागल हुआ ही है। मुझे भी पागल कर डालेगा। बड़ी आफत में हूं। आप लोग, अच्छे आ गये। आंखों देख लीजिये सब हाल। एक बार मेरा तीन सौ रुपया निकाल ले गया। एक बार बहू के गले का तीन हजार का हार उतार ले गया। उस हार का अभी तक पता नहीं। छोटी-मोटी चीज होती तो गम खाकर भी बैठ रहता।'

रामनाथ बड़े दुखी से होकर बोले, 'हाय रे! लड़की की तो तकदीर ही फूट गयी। क्या देख कर लड़की दी थी, और क्या देखने को मिला! पंडितजी का क्या दोष! उन्होंने तो सब आंखों दिखा दिया। तभी है उन्होंने दोसरते की चर्चा नहीं चलायी। नहीं तो शादी के बाद लड़कियों को कोई मायके में रहने देता है! लक्ष्मी तो हो गयी, मायके ही की।'

दीनदयाल भी बड़े दुखी से बोले, 'पंडितजी! यह सब हुआ कैसे? ईसुरी ऐसा कैसे पगला गया। वह तो आपके ही खिलाफ बगावत कर रहा है। कोई गहरा कारण है। आपने उसे उस हार के पीछे ही तो नहीं अधिक परेशान किया। इसी से उसके दिमाग में यह प्रतिक्रिया जागी हो?'

'बुला के पूछो न?' भोलाराम मिसमिसाते हुए बोले, 'है तो तुम्हारा दामाद सामने!'

रामनाथ उठे और लड़कों की ओर बढ़े, परन्तु सब लड़के नौ दो ग्यारह हो गये। ईसुरी भी भाग गया। रामनाथ फिर राख सी खाये, आकर बैठ गये।

दीनदयाल बोले, 'चलो भाई रामनाथ! ईसुरी यहां न आवेगा। उसे कहीं बाहर ही पकड़ें। समझें क्या बात है! हो सका तो ले चलेंगे उसे अपने साथ। हो सकता है वहां सुधर जावे। यहां पंडितजी से उसका युद्ध चल रहा है – राम-रावण युद्ध!'

यह सुनते ही भोलाराम भभक उठे, 'आपने मुझे राम बनाया या रावण।

स्पष्ट कहिये। आप से यह बात कहते न बनी। आप दामाद का ही पक्ष लेंगे। उसे ही राम बनायेंगे। जाइये विभीषण बनकर मिल जाइये उसमें। मैं उसकी सीता उसे दिलवा दूं तो आपकी लड़की सदैव को छूट जायेगी।'

'बड़ी गलती हुई, पंडितजी।' दीन-दयाल हाथ जोड़ और चरण स्पर्श करते हुए बोले, 'कभी-कभी मुंह से कोई ऐसी अनर्गल बात निकल जाती है, जो अपने लिए ही हानिकारक हो जाती है।'

'उसकी सीता क्या,' रामनाथ ने उत्सुकता से पूछा, 'उसकी कोई सीता भी है?'

'हां। है नहीं तो और क्या?' भोलाराम उत्तेजित से होकर बोले, 'उसी कारण तो यह सारा उत्पात बढ़ा है। यह वानरी सेना मेरे ऊपर चढ़ाई कर रही है। अब मैं क्या कहूं! अपनी जांघ उघारने से अपने को ही लाज से मरना पड़ता है। आप सब पता लगाइये। जैसे बने लड़के को रास्ते पर लाइये। वह मेरे वश का नहीं। आपकी लड़की से उसकी जन्मकुंडली मिलाने में कहीं गलती हो गयी। आपके आ जाने से तो मुझे बड़ी चैन मिली। मेरा कुछ सिर का भार-सा कम हो गया। दामाद आपका है। आपको उसकी सारी जानकारी होना जरूरी था। नहीं तो आप मुझे ही दोष देते।'

'पंडितजी?' रामनाथ बोले, 'जब चीज यहां तक बिगड़ गयी तब हमारे सिर पर आप भार छोड़ रहे हैं और पहले ही हमें सूचना मिलनी चाहिये थी। हम भी अपना कुछ उपाय कर लेते। शादी के पहले भी हमें कुछ ऐसा आभास हो जाता तो हम अपनी लड़की को यहां न डुबाने आते। दुनिया में लड़के बहुत हैं।'

'आदमी जब पहले अपना उपाय कर लेता है, तब डाक्टर के यहां जाता है। बात तो बिगड़ चुकी है। अब आप सुधारिये।' ऐसा कहते हुए भोलाराम उठ बैठे। कुछ बेरुखी-सी पैदा हो गयी।

फिर भी बोले, 'आप कुछ दिन रहिये। आपके ठहरने का प्रबन्ध करा दूं। अच्छा हो आप इसी चौपाल में रुक जावें।'

'अब हम चलेंगे, पंडितजी।' ऐसा कहते हुए दोनों ने भोलाराम के चरण स्पर्श किये और चलते हुए।

उनके जाते ही बड़ी बहू फिर निकल आयी। सिर मटकाती हुई बोली, 'कितना बड़ा दोष आपके सिर मढ़ गये। आपको रावण बना गये। पता नहीं उस लक्ष्मी ने मायके जाकर क्या-क्या बात उलझायी है। आप तो कुछ समझते ही नहीं। आपके नाम का असर आपकी सारी बुद्धि पर पड़ा है। आपको सभी बुद्धू बना कर जाते हैं।'

'और सब से ज्यादा बुद्धू तो तू बनाती है,' ऐसा कहते हुए दोनों भीतर चले गये।

* * *

अध्याय - २६

यद्यपि विदा की वेला वेदना की वेला है, तब भी जब विदा कराने वाले द्वार पर आते हैं, कुछ हर्ष होता है। उनकी आवभगत में कुछ थोड़ा सा समय अच्छा बीतता है। कुछ मनोरंजन होता है। कानूनगो अपनी पार्टी लेकर रजऊ की विदा के लिए आ गये। उनका आदर सत्कार होने लगा।

मनसुखलाल की हीन भावना उन्हें इतना दबोचने लगी कि कानूनगो के सामने आते तो कुछ सहमे-सहमे से। कानूनगो, एक तो उनके अफसर दूसरे समधी। तीसरे उनका अपना व्यक्तित्व, ऊंचे पूरे जवान, हृष्ट-पुष्ट और गोरे-चिट्टे। मुख पर एक सहज मुस्कान। मूंछ चढ़ी हुई। आंखो में रसीलापन। सभी आफीसरी लक्षण।

मनसुखलाल ने सारा प्रबन्ध ऐसा कर रक्खा था कि कानूनगो की आवभगत में कोई कमी न आने पावे और कमी थी भी नहीं, परन्तु कानूनगो भी ऐसे अवसर की तलाश में थे कि वे मनसुखलाल को अपना रुआब दिखा सकें। पार्टी को जनवासा दिया गया। कोई कमी नहीं। सब ठीक। कुछ देर में भोजन का समय आया। पंगत बैठी। महिलाओं ने कोकिल कंठ से गीत गाना शुरू किये। सर्वत्र चहल-पहल आनन्द बिखेरने लगी।

दूल्हे ने नेग मांगा– 'कलाई की घड़ी!' किसी को मजाक सूझा। एक पीतल का घड़ा उठा कर दूल्हे के सामने रख दिया।

एक मधुर हंसी से वातावरण मुखर हो उठा।

एक सज्जन ने व्यंग पूर्वक पूछा, 'क्यों, पटवारी साहब! इससे आप समय कैसे देखते हैं?'

मनसुखलाल अपनी सारी बुद्धि को लगाते हुए बोले, 'महाशय, जो यह भरा है तो दिन के बारह बजते हैं और जो यह खाली है तो रात के बारह।'

'हां तो यह अभी खाली है न', एक दूसरे सज्जन बोले, 'आप खाली घड़ा अपने दामाद को दे रहे हैं। इसका अभिप्राय हुआ कि आप रात अपने समधी के घर भेज रहे हैं।'

मनसुखलाल को कोई उत्तर न आया। किंकर्त्तव्यविमूढ़ से होकर बगलें झांकने लगे।

कानूनगो को बोलने का मौका मिल गया— 'मैंने कहा न! पटवारी साहब न बोलते तो भी अच्छा रहता। अपनी सारी बुद्धि खर्च करके बोले और उत्तर उलटा पड़ा। खाली घड़ा भेजने की क्या तुक रही। अब भरिये उसे।'

'किस चीज से भरा जाय!' एक सज्जन ने कानूनगो की ओर देखते हुए कहा।

'चांदी से', कानूनगो ने कहा, 'नहीं तो क्या भुस से। अब जब भर जायेगा तभी पूरी का कौर तोड़ा जायेगा।'

मनसुखलाल के मुख पर हवाइयां-सी उड़ने लगीं। इतना रुपया कहां पाते कि घड़े को भर देते? अपनी मूर्खता पर पछताने लगे। हाथ जोड़कर बोले, 'आबरू-इज्जत सब आपकी है। घर में जो चीज आप घड़े में भरने लायक देखें उसे भर लें।'

एक और सज्जन बोले, 'मैं समस्या सुलझाता हूं। घड़े में समधिन की तौल रुपया आयेगा। अतः पटवारी साहब समधिन को आपकी सेवा में भेजें या उतना रुपया भर दें। जो भी पटवारी साहब को मंजूर हो।'

'बिल्कुल ठीक!' कानूनगो ने मुस्कराते हुए कहा! सबने तालियां बजा कर समर्थन किया।

पर मनसुखलाल की ऐसी दशा हो गयी जैसे मछली जाल में फंस गयी हो। सोचने लगे इतना रुपया होता तो घड़ा भर देता। रानी बहू क्या कहेगी। कानूनगो मनचले आदमी। जवान हराकर कहीं समधिन को वास्तव में सेवा के लिए न बुला भेजें। भरे दरबार में द्रौपदी जैसा उसका चीर हरें। बेचारे दौड़े हुए बहूरानी के पास गये और बोले, 'समधी साहब ने कैसा फंसा लिया है। अब क्या करूं? क्या उत्तर दूं? इतना रुपया कहां है कि घड़े को भर दूं। अब यह पंगत नहीं होती।'

रानी बहू मुस्कराती हुई बोली, 'अरे समधी हैं। हंसी-मजाक करते हैं। तुम्हें बुद्धू बना रहे हैं। कह दो समधिन तो सेवा करती ही है। ज़ब आप चाहेंगे उपस्थित हो जावेगी।'

मनसुखलाल कमरे से बाहर निकले और बोले, 'समधिन तो आपकी सेवा करने के लिए ही है। जब आप कहेंगे...।'

एक और महाशय बोले— 'तो भेजिये न अभी, समधी साहब को थाली परस कर दे जावें।' सबने समर्थन किया।

रानी बहू को मिठाई से भरी हुई थाली लेकर पंगत में बीच में आना पड़ा। वह ज्योंही थाली रखने को झुकीं किसी मनचले ने उसकी साड़ी खींच दी। मुख का घूंघट खुल गया। कानूनगो की आंखों से आंखें मिलीं, दोनो के शरीर में बिजली-सी कौंध गयी। वही छवि फिर सामने आ गयी जो किसी समय बगौरा के मेले में सामने आयी थी। कुछ और निखार लिये हुए। रानी बहू को जोर से हंसी आयी। सारी बारात ने तालियां बजा दीं। रानी बहू भाग गयीं।

एक साहब बोले, 'भाई पटवारी साहब बड़े सीधे-सादे हैं। लो बब्बू अब करो भोजन। तुम्हें घड़ी मिल गयी।'

बब्बू बोला, 'यह घड़ी तो बापू को मिली। मुझे क्या मिला!'

'आपको घड़ा मिल गया। घड़ी पहले ही मिल चुकी है।' एक और सज्जन ने कहा। बात तै हुई। मोद-प्रमोद के साथ सबने भोजन किया। मजा आ गया। मनसुखलाल ही कुछ बुद्धू से बने यहां-वहां जूठी पत्तलों को समेटते हुए से फिरने लगे।

रात बीती। दूसरा दिन आया। रजऊ की विदा की घड़ी समीप आयी। रजऊ एक दिन पहले से ही रो रही थी। सोच रही थी जिस जेल से मुश्किल से छूट कर घर आ पायी थी, फिर उसी में चली। न जाने अब कैसी बीते? सम्भव है दूर रहने से बब्बू में उसके प्रति कुछ आकर्षण बढ़ा हो। अब जिन्दगी तो उसी के साथ काटना है। पर जब ईसुरी काटने दे। वह फिर न उपद्रव कराने लगे। फिर न गीत भेजने लगे। पर अब दलियां तो जेल चला गया। शायद है अब उसे इतनी शरारत न सूझे। पर यदि उसके हृदय में प्रेम है तो वह पराजय मानने वाला नहीं। ऐसी कितनी ही बातें सोचती जाती और आंसू बहाती जाती।

आखिर सब तैयारी हो गयी। बाहर द्वार पर गाड़ियां और डोली भी तैयार खड़ी थी। हां पास ही में एक पड़ौसी की चौपाल में ईसुरी बैठा था। प्रतीक्षा में था कि रजऊ की बिदा देख ले। पड़ौसी बोला, 'ईसुरी तुम कहां से आ गये? क्या कोई फाग सुनाने आये हो?'

गोपाल पंडित भी पड़ौसी की चौपाल में एक चारपाई पर बैठे थे। पड़ौसी की बात सुनकर बोले, 'क्या यही लड़का है, जो फागें बनाया करता है। इसकी तो बहुत तारीफ सुनी है।'

पड़ौसी बोला, 'पंडितजी! यह बहुत अच्छी फाग बनाता है, सुनेंगे? सुनाओ एक फाग पंडितजी को।'

ईसुरी ने एक अंगड़ाई ली, आंखें मिचकाईं और कुछ ध्यान-सा करते हुए फाग उठायी—

मोरी रजऊ सासुरे जातीं —
हमें लगालो छाती,
कह न सकें गरौ भर देतीं —
अंसुआ अंखिया बाती,
बैसई चित्र लिखी सी रह गयी—
मुंह से कछू न काती
हमने करी हमई जानत हैं—
अब पीछू पछतातीं,
ईसुर कौन कसाइन डारी—
विकल विदा की पाती ।

'बनी कुछ!' ईसुरी बोला, 'मैं फाग-आग बनाना क्या जानूं? मेरे कंठ में न जाने कौन देवी-देवता बैठ जाता है और गा चलता है। जैसी जो कुछ बनी हो आप जानो।'

गोपाल पंडित फाग सुनकर बड़े आश्चर्य में पड़े। उनकी उत्सुकता और बढ़ी। फिर बोले— 'भाई तुम तो कमाल करते हो। एक फाग और सुनाओ।'

फिर ईसुरी ने अंगड़ाई-सी ली और तन्मय होकर गाने लगा—

चलती बैर नज़र भर हैरो —
दिल भर जावे मेरो,
मिल जावें आंखन सों आंखें —
घूंघट तनक उघेरौ,
टप-टप अंसुआ गिरैं नयन सौं,
चितै चितै मुख तेरौ,
ईसुर कहत विदा की बैरां —
होत विधाता डेरौ ।

क्यों बनी कुछ! फिर ईसुरी ने पंडित की ओर देखते हुए पूछा।

गोपाल पंडित पड़ौसी की ओर देखते हुए बोले— 'अरे भाई, इस लड़के को तो कोई दैवी आवेश आता है। कैसी मार्मिक फागें गाता है। जान पड़ता है यह रजऊ के प्रेम में डूबा है।'

'क्यों बेटे? तुम क्या करते हो यहां?'

पड़ौसी बोला— 'ये ऐसे ही फागें गाते फिरते रहते हैं। घर से बाप ने निकाल दिया है। जिसके घर पहुंच जाते हैं, दो-चार फागें सुनाते हैं वही इन्हें भोजन दे देता है। अपने किसी मित्र के घर लेट रहते हैं। इनका साथी था दलीं। उसे लोगों ने जेल भिजवा दिया है। लोगों का ख्याल था कि फागें दलीं बनाता है और इनसे गववाता है। वह बेचारा मुफ्त में फंसा।'

'बेटे एक काम करो न।' पंडित बोले, 'तुम बगौरा आ जाओ। वहां तुम्हें जंगजीत जागीरदार के यहां नौकर रखवा दूंगा। उन्हें एक कारिन्दा की जरूरत है। उन्हें भी फागों का बहुत शौक है। तुमसे खूब पटेगी। जागीरदार खुश होंगे।' रजऊ बगौरा ही जा रही थी। जैसे डूबते को तिनके का सहारा मिले। ईसुरी खुश हो गया। बोला- 'पंडित जी, आ जाऊंगा।'

सब लोग गाड़ियों में बैठ चुके थे। पंडितजी भी एक गाड़ी में बैठ गये। और

ईसुरी से बोले – 'पर देखो, ये फागें अभी न गाना, नहीं तो कानूनगो नाराज होंगे।' ऐसा कहते हुए पंडितजी मनसुखलाल की ओर देखने लगे।

यहां औरतों से घिरी हुई रजऊ भी द्वार से बाहर निकली, रोती-चीखती हुई। इस औरत से लिपटती उस औरत से लिपटती। मनसुखलाल भी द्वार पर खड़े थे। उनसे भी लिपट गयी और बुरी तरह से चीखी। मनसुखलाल भी आंसू बहाते हुए बोले, 'बेटी न रो!' बगौरा कौन दूर हैं। फिर बुला लूंगा। अब तो कोई बाधा ही नहीं।' बब्बू से गठजोरा बंधा था। उसे भी जगह-जगह रुक-रुक जाना पड़ता था। रजऊ का रोना सुन-सुन कर उसकी आंखें भी डबडबा आती थीं। रूमाल से उन्हें पोंछ लेता। रजऊ आकर पालकी में बैठ गयी। बब्बू भी पालकी में ही बैठा। गाड़ियां पहले ही रवाना हो चुकी थी। केवल एक गाड़ी कानूनगो की रह गयी थी।

कहारों ने पालकी उठायी और चले। ईसुरी भी चौपाल से उठा और पालकी के पीछे-पीछे दौड़ा। गांव से कुछ दूर निकल जाने पर पालकी कुछ थमथमाई। बब्बू ने पीछे देखा– उसे एक लड़का पालकी के साथ-साथ दौड़ता हुआ दिखायी दिया। रजऊ ने भी घूंघट उठा कर उसकी ओर देखा। ईसुरी था। बब्बू बोला, 'रजऊ देख! यह लड़का कौन हैं?'

रजऊ कुछ न कह सकी। बब्बू समझ गया। कहारों से बोला- 'रोको तो पालकी। दौड़ के पकड़ो तो कोई गुंडा पालकी के पीछे लगा है।'

कहारों ने पालकी को जमीन में रक्खा और ईसुरी को पकड़ने के लिए दौड़े, परन्तु उसे न पा सके। पीछे-पीछे कानूनगो की गाड़ी आ रही थी। उसी में गोपाल पंडित भी बैठे थे। ईसुरी को देखकर बोले, 'कानूनगो साहब, देखा इस लड़के को – यही है – ईसुरी।' पंडितजी के कहने में गहरा व्यंग्य था।

'यह कैसा पागल जैसा हो रहा है?' कानूनगो ने कहा, ' कहां गया होगा यह? पालकी के पीछे तो न दौड़ा होगा! शकल बिगड़ गयी है। कुरता फट गया है। अपने को तबाह करने में लगा है। गनीमत यही रही कि यह बब्बू के सामने नहीं आया।'

* * *

अध्याय - २७

इच्छा से अनिच्छा से मनुष्य अपने भविष्य की ओर ही दौड़ता है। रजऊ की विदा के बाद ईसुरी का मेढ़की में कोई जीवन न रह गया। दलीं का साथ पहले ही छूट चुका था। वह आवारा जैसा सारे दिन गांव में चक्कर काटता, कभी यहां बैठ जाता, कभी वहां, थके मुसाफिर-सा। जिसने कहा ईसुरी फागें सुनाओ, वह तन्मय होकर सुना चलता।

जिसने कहा— ईसुरी खाना खाली - वह खाने को बैठ जाता। कभी- कभी अपने साथियों को समेटता और भोलाराम को चिढ़ाने को पहुंच जाता। इसमें भी कुछ समय कटता और उसे कुछ आनन्द मिलता। कितने ही छोटे- बड़े लड़के उसके साथ लगे रहते। उसके इशारों पर चलते। जैसे सयाने लोग भी उसकी ओर आकर्षित हो जाते। महिलायें भी उसे देखने को घरों से बाहर निकल आतीं। जहां कहीं वह फागें गाने को बैठता, एक खासी बड़ी भीड़ इकट्ठी हो जाती। और ध्यान मग्न होकर उसे सुनने लगती। मधुर कंठ मर्मीली फागें, मुख की संगीतमयी मुद्रायें, सब को मंत्रमुग्ध कर लेतीं। सिर के बढ़े हुए बाल, शरीर का फटा हुआ कुरता, ढीली-ढाली धोती, मुख पर निकलती हुई दाढ़ी। जैसे कोई पहुंचा हुआ बालयोगी! वे किसी को न अपनी ओर आकर्षित कर लेता। सारे गांव का मनोरंजन, सारा गांव उसे चाहता।

तब भी गांव में उसे अच्छा न लगता। रजऊ की याद ही उसे निरंतर सताती रहती। एक दिन जब वह एक जगह बैठा फागें सुना रहा था, सामने से एक बैलगाड़ी निकली। गाड़ीवाले ने उसकी फाग सुनने के लिए गाड़ी खड़ी कर ली। फाग समाप्त होते ही गाड़ीवान बोला, 'ईसुरी, चल तुझे बगौरा घुमा लाऊं। आ बैठ जा गाड़ी में। गैल में फाग सुनाते चलना। गाड़ीवान परिचित था। ईसुरी फौरन ही बैठ गया। बोला, 'यह अच्छा रहा। गोपाल पंडित मुझे बगौरा बुला भी गया था। अब मैं वहीं रुक जाऊंगा। जागीरदार की नौकरी करूंगा।'

बगौरा पहुंचते ही वह गोपाल पंडित के घर पहुंचा। गोपाल पंडित भाग्य से घर पर ही मिल गये। उसे देखते ही मुस्कराते हुए बोले, 'तुम आ गये, ईसुरी। पर तुम्हारी हालत तो बुरी है। फटा हुआ कुरता, मैली-कुचैली धोती, बढ़े हुए रीछों जैसे बाल। क्या ऐसा रूप बनाकर ठाकुर साहब के पास चलोगे? वें तुम्हें नौकर रखने के लिए तैयार हैं पर एक-दो दिन मेरे घर पर ही ठहरो। मैं तुम्हें एक कुरता बनवा दूं, एक धोती ले दूं। तुम्हारी वेशभूषा अच्छी बनवा दूं। तब तुम्हें ठाकुर साहब के पास ले चलूं। यह मजनूंयी शकल को लेकर चलना अच्छा नहीं।'

ईसुरी ठहर गया। उनकी ही चौपाल में उसे एक चारपाई और कुछ कपड़े मिल गये। भोजन पानी भी मिलने लगा। दो-चार दिन में ही उसकी रूपरेखा बदल आयी। उसमें कुछ दर्शनीयता आ गयी।

आखिर को एक दिन संध्या समय गोपाल पंडित उसे लेकर ठाकुर जंगजीत की कोठी पर पहुंचे।

ठाकुर साहब कहीं से घूम कर आये थे। कोठी के सामने ही घूम रहे थे। प्रौढ़ अवस्था, गुलाब जैसा खिला हुआ चेहरा, चढ़ी हुई मूंछ, रोबीली आंखें, दर्शनीय

व्यक्तित्व। गोपाल पंडित ने उन्हें आशीर्वाद दिया। ईसुरी ने भी हाथ जोड़ कर नमन किया। ठाकुर साहब उन्हें देखते ही बोले, 'कहो पंडित। यह किसे ले आये?'

'सरकार!' गोपाल पंडित ने कहा, 'यह वही लड़का है, जिसके विषय में मैंने आपसे बात की थी। नौकरी चाहता है। बाप ने घर से निकाल दिया है। आवारा फिरता है। पढ़ा-लिखा है कुछ थोड़ा सा। हां फाग बहुत अच्छी बनाता है। कुछ देवी गुण है।'

ठाकुर साहब ने अपना बैठका खुलवाया। जमीन पर एक फर्श बिछा हुआ था। फर्श के सिरहाने एक कालीन, कालीन पर सफेद चादर, चादर पर दीवाल से सटा हुआ एक बड़ा तकिया। ठाकुर साहब आकर तकिये से टिक कर बैठ गये। गोपाल पंडित भी एक ओर बैठ गये और यथास्थान उनके पास ही ईसुरी बैठ गये। नित्य के कुछ बैठने वाले लोग भी आ गये और अपने-अपने स्थान पर बैठ गये। ठाकुर साहब ने नौकर को संकेत किया। वह हुक्का भर लाया। ठाकुर साहब उसे गुड़गुड़ाते हुए बोले, 'हां लड़के, सुना कोई फाग।'

ईसुरी कुछ ध्यान मग्न सा, हुआ जैसे किसी अदृश्य छाया को सामने देख रहा हो और गा चला—

जो कोउ फिरत प्रीति के मारे —
संसारी से न्यारे,
करत न खान-पान हू कैसउ —
बसन विशाल उघारे,
ढूंढ़त फिरत बिछुर गये नेहीं —
जांचत द्वारे द्वारे,
भाईबन्द कबीला जुरकें —
घर सौं देत निकारे,
ईसुर कोउ नहीं हमदर्दी —
दरस दक्षिणा डारे।

फाग समाप्त होते ही ईसुरी बोला, 'बनी सरकार, कुछ फाग? मैं फाग-आग बनाना क्या जानूं, न पोथी पढ़ी, न पिंगल। मेरे तो मन में अंट-संट जो कुछ आ जाता है गा देता हूं, सरकार! बनी न बनी आप जानें, और सुनने वाले जानें।

फाग को सुनकर ठाकुर साहब बड़े आश्चर्य में पड़े। भौंचक से ईसुरी की ओर देखते हुए बोले, 'वाह रे ईसुरी! ऐसी सुन्दर फाग तो गंगाधर भी नहीं गा पाते। तू तो एक दिन नाम करेगा। तेरे भीतर कोई दैवी शक्ति छिपी है। हां, और सुना कोई?

ईसुरी ने फिर ध्यान मुद्रा की और तन्मय-सा होकर फिर गाने लगा, जैसे किसी देवी के सामने ही खड़ा होकर आराधना कर रहा हो—

होने जबई करेजौ ओरो —
मिले मिलनियां मोरो,
परचत रहे विरह के अंगरा —
छनक रक्त रओ थोरो,
जल के परत भभूका छूटत —
कितनऊं सपरौ खोरो,

और और परखत है ईसुर –
पंखन पंख झकोरौ ।

'वाह ! वाह ! क्या मार्मिक वर्णन है,' ठाकुर साहब ने हुक्के की कस लेते हुए कहा, 'ऐसा लगता है कि तेरे मुंह से फागें सुनता ही रहूं । ऐसा लगता है जैसे किसी दैवी प्रेरणा से ही ये फागें तेरे कंठ से निकल रही हों । ऐसा गहरा रस तो बड़े-बड़े कवियों की रचनाओं में भी नहीं मिलता । तेरी फागों में स्वाभाविक प्रवाह है, स्वाभाविक लालित्य । फालतू पांडित्य नहीं, कठोरता और नीरसता नहीं, जैसी बहुत से धुरंधर कवियों में होती है ।'

गोपाल पंडित भी ठाकुर साहब की हां में हां मिलाते हुए बोले, 'सही सरकार ! इसकी फागों में पंडितों जैसा वाग्जाल नहीं । सीधी-सीधी भाषा में सीधी-सादी अभिव्यंजना है ।'

'हां ईसुरी ।' ठाकुर साहब फिर उसकी ओर देखते हुए बोले, 'और सुना ।'

ईसुरी ने फिर ध्यान मुद्रा बनायी । आंखें ऊर्ध्व चढ़ायीं । गला साफ किया और गा चला –

जिदना तुमसौं कीन्हीं यारी –
गयी मति चूक हमारी,
भये बरबाद अपाज कहाये –
आन विगार अनारी,
मुंह गओ लौट जानकें खाई –
खांड के धोखें खारी,
पीछ पीछ हाथ बजाकें –
हंसी करत संसारी,
अपने हाथन हमने ईसुर –
पांव कुल्हड़िया मारी

फाग समाप्त करके फिर ईसुरी हाथ जोड़ कर बोला, 'सरकार ! बनी कुछ ? बनी-बिगड़ी सुधारना सब आपके हाथ में है । मेरी तो कच्ची लोई है । न मैं बनी जानता हूं न बिगड़ी । उलटी-सीधी तुकें मिलाता हूं । अर्थ निकले या नहीं, भाव हो या नहीं । अपनी ढपली अपना राग ।'

ठाकुर साहब आंखों में हंसी भर कर बोले, 'कमाल तो करता है रे और ऐसा बनता है जैसे बिल्कुल अनाड़ी हो । सीधी हृदय पर चोट मारता है । मर्म को गुदगुदा देता है । पंडितजी ! आप इस लड़के को अच्छा ले आये । यह नौकरी में रखने योग्य है । कुछ काम भी करेगा और फागें भी सुनाया करेगा ।'

पंडितजी ने ईसुरी की प्रशंसा को अपनी ही प्रशंसा समझा, क्योंकि वे ईसुरी को लाये थे । गद्गद् कंठ से हाथ जोड़ते हुए बोले, 'सरकार ! मैं क्या किसी कूड़े को आपके सामने लाता । मैंने इसमें गुण देखा, हुनर देखा, इसको प्रोत्साहन दिया जाना उचित समझा, तब इसे आपकी सेवा में ले आया । आप से अच्छा आश्रयदाता भी इसे कौन मिलता ? सरकार गुणग्राही हैं । गुण की परख है आपको । रत्नों की परख जौहरी ही जानता है ।'

एक वयोवृद्ध पड़ोसी भी अपनी प्रसन्नता व्यक्त करता हुआ बोला, 'इस लड़के की फागें तो पहले भी कितने ही लोगों के मुंह से सुनी हैं, पर पहले लोग कहते थे, बनाता कोई दूसरा है, गाता यह है। पर आज मालूम हुआ कि बनाता भी यही है! कंठ से ऐसी निकलती जाती हैं जैसे अपने आप बनती जाती हों। यह अच्छा आ गया। अब तो रोज इसकी फागें सुनने को मिलेंगी।'

एक दूसरा पड़ौसी बोला– 'गंगाधर की फागों में ऐसा रस कहां आता है? यह लड़का तो कमाल ही करता है। फड़ में यह सबको पछाड़ेगा। किसी दिन फड़ लगवाया जाये तो अच्छा रहे।'

ठाकुर साहब सहज भाव से बोले, 'कुछ दिन लड़के को यहां रहने तो दो। हाल के पकड़े हुए तोते जैसा तो अभी वह है। पूरे पंख भी नहीं फूटे चित्रकोटी कहना ही सीखा है। कुछ संसार देखे, कुछ अनुभव करे तब उसे फड़ में उतारना।'

'सही मरजी होती है,' पंडितजी बोले, 'आपकी शरण में आ गया है, अब सब ठीक हो जावेगा। आपका वरद हस्त उसे मिल गया है। बस! उसे रहने के लिए कोई छपरिया बता दी जावे। अकेला ही तो रहना है।'

'छपरिया क्यों,' ठाकुर साहब अपना अपमान समझते हुए बोले, 'यहां कोई खेत खलहान है क्या? कोठी की बगल में एक कमरा खाली पड़ा है। उसमें ठाठ से रहेगा।' ऐसा कहते हुए ठाकुर साहब ने अपने एक नौकर को बुलाया और बगल का कमरा खोल देने को कह दिया।

'सरकार!' पंडितजी बोले, 'ईसुरी जैसा बैठा है, वैसा ही है। इसके शरीर पर कुरता भी नहीं था। वह तो मैंने बनवा दिया है कि आपके सामने भिखारी-सा जाता तो अच्छा न लगेगा। धोती भी नहीं थी वह भी ले दी है। अब आपको देखना है।'

'सब हो जावेगा,' ठाकुर साहब ने कहा, 'पर इसकी ऐसी हालत क्यों? क्या इसके मां-बाप कोई नहीं?'

'मां-बाप ने घर से निकाल दिया है, इन्हीं फागों के कारण।' पंडितजी ने कहा।

'फागों के कारण', ठाकुर साहब ने एक सहज जिज्ञासा से पूछा।

'हां सरकार!' पंडितजी बोले– 'बड़ा मजेदार किस्सा है। कानूनगो की बारात मनसुखलाल पटवारी के घर मेढ़की गयी थी। उसमें गंगाधर भी गये थे। भांवरों के समय बाहर फड़ रुका। एक दलीं नाम का व्यक्ति ईसुरी को भी गंगाधर के सामने लेकर आया और बोला, पंडितजी एक-दो फागें इस लड़के की भी सुन ली जावें। इसने जो फागें सुनायी वे थी रजऊ के नाम सम्बोधित। इस पर बड़ा झगड़ा मचा। कानूनगो बिगड़ गये, मनसुखलाल बिगड़ गये। दलीं की नालिश कर

भोर होते ही

भोर होते ही खुला है
अप्सराओं के महल का द्वार
चलो, कुण्डी खटखटाएं ।
अनगनित परछाइयों के
रूप चमके हैं
पेड़ की ऊंचाइयों से
धूप लटके हैं
क्षितिज का आंगन धुला है
शची कोई कर रही,
खड़ी हो, श्रृंगार
चलो थोड़ा बहक जायें ।
खेत के पगडण्डियों की
चूड़ियां खनकीं
शंख में सिहरी पड़ी हैं
सीपियां कल की
नीड़ का छप्पर धुला है
वायु बांटे ज्योतिर्धर के
हाथ से जलधार
चलो जी भर छपछपायें ।

वनमयूरी की पुलक से
नाचते हैं रोम
कल्पनाओं पर चढ़े हैं
पारदर्शी मोम
इन्द्रधनुषी मन धुला है
स्वप्न अपने आप ही
लेने लगे आकार
चलो, जी भर कसमसायें ।

मढ़ गये हैं काग के सब
चोंच सोने से
दौड़ चरवाहा रहा है
ढोर खोने से
ओंठ फूलों के हिले हैं
अभी गाना चाहते हैं
साथ भंवरों के मधुर मल्हार
चलो उनको थपथपायें ।

— निर्मलकुमार श्रीवास्तव
पोस्ट बॉक्स १६२, पोर्ट ब्लेयर - ७४४ १०१

दी गयी कि फागें उसकी बनायी हैं । यह लड़का फागें बनाना क्या जाने ? दलीं बेचारे की सजा हो गयी, जेल में हैं ।'

ठाकुर साहब कुछ खिन्नता से बोले, 'रजऊ तो सभी लड़कियों को कहते हैं ! इसमें क्या अपराध हो गया ?'

'रजऊ कानूनगो की बहू का नाम है ।' पंडितजी ने कहा ।

'किसी का नाम हो,' ठाकुर साहब ने कहा, 'यहां ईसुरी बराबर रजऊ के नाम से फागें बनायेगा । देखूं कानूनगो क्या करते हैं ?'

ईसुरी को बहुत बल मिला । वह ठाकुर साहब का आदमी बन गया ।

* * *

(क्रमशः)

असामान्य इतिहासकार डॉ. रघुवीर सिंह

□ प्रो. कृष्णदत्त वाजपेयी

डा० रघुवीर सिंह

भारत के एक प्रमुख इतिहासकार डॉ. रघुवीर सिंह का ८३ वर्ष की आयु में १२ फरवरी १९९१ को निधन हो गया। जीवन-पर्यंत इतिहास और साहित्य की सेवा में संलग्न रहकर इस मनस्वी ने अपनी इहलीला समाप्त की।

मंदसौर जनपद की सीतामऊ रियासत के राजपरिवार में १९०८ में जन्मे रघुवीर सिंह में किशोरावस्था में ही इतिहास के प्रति रुचि जागृत हो गयी थी। धीरे-धीरे उनकी अन्वेषण-प्रवृत्ति बढ़ती गयी। मालवा के भूभाग का प्रामाणिक इतिहास उपलब्ध न था। उन्होंने उस क्षेत्र के मध्यकालीन इतिहास का विशेष अध्ययन किया। संस्कृत, राजस्थानी और ब्रजभाषा के साथ-साथ उन्होंने फारसी का भी यथेष्ट ज्ञान अर्जित किया, जो उनके अनुसंधान में सहायक हुआ।

उनकी प्रतिभा और इतिहास के प्रति उत्कट लगन के कारण अनेक मनीषियों का ध्यान उनकी ओर गया तथा उनका मार्गदर्शन प्राप्त हुआ। उनमें डॉ. जदुनाथ सरकार, गौरीशंकर हीराचंद ओझा, सरदेसाई और कालिकारंजन कानूनगो के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं। बाबू जयशंकर 'प्रसाद', आचार्य रामचंद्र शुक्ल तथा रायकृष्णदास– जैसे साहित्यकारों का भी आशीर्वाद रघुवीरसिंह को प्राप्त हुआ। आरम्भ से ही राष्ट्रभाषा हिंदी के प्रति उनमें उत्कट लगन थी। इनके लिखे हुए गद्य गीत और निबंध इस बात के द्योतक हैं कि रघुवीरसिंह प्रांजल और सजीव हिंदी लिखने में सिद्धहस्त थे। अपने लेखों से उन्होंने इतिहास के प्रति लोगों में रुचि जगायी। इनके एक निबंध-संग्रह 'शेष स्मृतियां' की भूमिका आचार्य शुक्लजी ने

लिखी थी।

डॉ. रघुवीर सिंह की प्रथम पुस्तक 'पूर्व मध्यकालीन भारत' १९३२ में प्रकाशित हुई। मध्यकालीन भारतीय इतिहास पर यह पहला हिंदी ग्रंथ था। मालवा तथा राजस्थान के इतिहास पर उन्होंने अन्य अनेक ग्रंथ और लेख हिंदी और अंग्रेजी में लिखे। एक सच्चे शोधकर्ता की दृष्टि का आभास उनकी रचनाओं में द्रष्टव्य है। 'मालवा इन ट्रांजीशन' नामक उनकी अंग्रेजी पुस्तक आज तक संदर्भ-ग्रंथ के रूप में मान्य है। इस शोध-प्रबंध पर उन्हें आगरा विश्वविद्यालय की डी. लिट्. उपाधि से विभूषित किया गया।

राजनय तथा संस्कृति के विभिन्न क्षेत्रों में प्राचीन भारत की उपलब्धियों पर डॉ. रघुवीर सिंह को गर्व था। वे चाहते थे कि संर्वाधित तथ्यों को देश-विदेश के विद्वान सही रूप में जानें और उनका आकलन करें। यूरोप के कतिपय इतिहासकारों ने भारतीय इतिहास का जो विवेचन १९वीं शती में तथा २० वीं शती के आरम्भ में किया यह साम्राज्यवादी दृष्टिकोण से ग्रस्त था। तथ्यों को तोड़मरोड़ कर पेश करने तथा प्राचीन भारत के महत्व को घटाने की कोशिशें अनेक अंग्रेज लेखकों ने की थीं। डॉ. यदुनाथ सरकार, रमेशचंद्र मजूमदार, काशीप्रसाद जायसवाल, अनंत सदाशिव अलतेकर, राखालदास बनर्जी, आदि ने उन पूर्वाग्रही विचारों का प्रतिरोध किया। डॉ. रघुवीरसिंह आदि अनेक लेखकों ने इस प्रतिरोध को जारी रखा और भारतीय पुरावृत्त की सही तसवीर सामने रखने का प्रयास किया।

इतिहास में रुचि बढ़ाने के लिए यह आवश्यक था कि तथ्यों को उपस्थित करने के साथ-साथ लेखन को सरल-सरस बनाया जाये। डॉ. रघुवीर सिंह की रचनाओं में इतिहास-लेखन की यह प्रणाली विद्यमान है।

हिंदी में भारतीय इतिहास को प्रस्तुत करने पर वे बहुत बल देते थे। इस बात से वे खिन्न थे कि विश्वविद्यालयों और महाविद्यालयों में इतिहास के अनेक शिक्षक हिंदी के अच्छे ज्ञाता होते हुए भी इतिहास पर पुस्तकें और लेख हिंदी में नहीं लिखते थे। रघुवीर सिंहजी ने स्वयं हिंदी में लिखा और अपने बहुसंख्यक मित्रों को इस ओर प्रेरित कर हिंदी में इतिहास विषयक भंडार को बढ़ाया।

अपने पूर्वज कवि 'नटनागर' जी के नाम पर रघुवीर सिंहजी ने सीतामऊ में 'नटनागर शोध संस्थान' की स्थापना की। उसे केंद्रीय शासन ने मान्यता प्रदान की। संस्थान द्वारा ग्रंथ-प्रकाशन तथा इतिहास-विषयक गोष्ठियों का आयोजन निरंतर किया जा रहा है। संस्थान से संबद्ध ग्रंथालय में मध्यकाल तथा आधुनिक युग पर प्रभूत सामग्री, हस्तलिखित ग्रंथों, फरमानों तथा मुद्रित पुस्तकों के रूप में, संगृहीत हैं। डॉ.

लोचन गीले-से हो गये हैं

दूर वियोग-अमा हुई रास-संयोग की पूर्णिमा आ ही गयी ।
शून्य से भूमि के अंक मिला द्युति दुग्ध के फेन-सी छा ही गयी ।
साधना से लसी भावना में बसी कामना दिव्य जगा ही गयी ।
ये शरदाभ निशा मधु-यामिनी को फिर आंख दिखा ही गयी ।

* * *

फिर वाणी की शक्ति गयी घट-सी, फिर वाक्य हठीले-से हो गये हैं ।
फिर मौनता भाने लगी मन को, पिक-से स्वर ढीले-से हो गये हैं ।
फिर वर्षों में संयम जाग उठा, रंग शब्दों के पीले-से हो गये हैं ।
फिर होठों पै कम्पन छाने लगा, फिर लोचन गीले-से हो गये हैं ।

* * *

चंचल ज्यों ही हुआ मन त्यों ही उपासना और असीम गयी हो ।
देखने को प्रिय की छवि प्राण की याचना और असीम गयी हो ।
संशय मेट वियोग संयोग की कामना और असीम गयी हो ।
सीमित हो गयी वासना विश्व की साधना और असीम गयी हो ।

— डॉ. मनोरमा शुक्ल 'मधुर मनीषा'
सारस्वत-सदन, सिविल लाइन्स, सीतापुर, उ.प्र.

रघुवीर सिंह चाहते थे कि इस दुर्लभ सामग्री का उपयोग देश-विदेश के शोधकर्ता करें। इसके लिए उन्होंने संस्थान में आवश्यक सुविधाएं प्रदान कीं। इतिहास के बहुसंख्यक विद्यार्थियों को इससे लाभ मिला।

डॉ. रघुवीर सिंहजी के साथ मेरा संबंध १९४६ से रहा है। मैं उस समय मथुरा पुरातत्व संग्रहालय का अध्यक्ष था। वे कई बार मेरे अतिथि रहे। उनसे इतिहास-विषयक वार्ताओं में बड़ा आनंद मिलता था। मध्यकाल के संबंध में मुझे उनसे प्रचुर ज्ञानलाभ हुआ। 'ब्रज का इतिहास' नामक मेरे ग्रंथ में मुगलकालीन ब्रज पर उन्होंने एक बड़ा अध्याय लिखने की कृपा की थी। मध्यकालीन इतिहास के स्रोतों का प्रामाणिक ज्ञान रखने वालों में डॉ. रघुवीर सिंह का नाम अमर रहेगा।

— एच १५, पद्माकर नगर, सागर, म.प्र.

महाप्रस्थान

□ शालिनी शर्मा

कमरे के कोने में पड़े पलंग पर पापा लेटे हुए हैं। कान्तिविहीन मुख पर पीलापन गहराता जा रहा है। आंखें जैसे भीतर को धंस गयी हैं। न वे ठीक से बैठ पाते हैं और न ही लेट पाते हैं। अजीब-सी बेचैनी उन्हें घेरे हुए है। कई दिनों से बुखार है उन्हें। कई तरह की दवाएं दी जा चुकी हैं, लेकिन लाभ कुछ भी नहीं हो रहा है। डॉक्टरों ने डिहाईड्रेशन बताया है। कमजोरी बनी हुई है। डॉक्टरों की राय है कि उन्हें तुरन्त आगरा ले जाना चाहिए। भैया एम्बुलेंस की व्यवस्था के लिए निरन्तर इधर-उधर दौड़ रहे है।

रात के बारह बजे का समय है। परिवार के सभी सदस्य पापा के इर्द-गिर्द मौजूद हैं। नींद किसी की भी आंख में नहीं है। मां कई बार आकर घर के छोटे बच्चों से कह चुकी है कि वे सब जाकर सो जायें, लेकिन कोई भी अपनी जगह से हिलता नहीं है। शायद हर कोई पापा के पास अधिक से अधिक समय तक रहना चाहता है। तमाम रिश्तेदार दूसरे कमरे में मौजूद हैं। भैया ने ही सबको बुलवाया है।

थोड़ी देर बाद भैया के एक मित्र आकर सूचना देते हैं कि एम्बुलेंस आ गयी है। पापा को भिजवाने की तैयारी शुरू हो जाती है। मैं बैठी हूं एक कोने में जड़वत। जो कुछ हो चुका है वह देखा ही है और जो हो रहा है वह देख रही हूं। मां बेचैन-सी नज़र आती है। भैया उनसे पूछते हैं—'आप भी साथ चलेंगी।' मां का स्वीकारात्मक उत्तर लौटता है। उनकी आंखों की चमक न जाने कहां गायब हो गयी है। बुझी राख के ढेर जैसी लगती हैं मुझे उनकी छोटी-छोटी आंखें। पापा की आंखों में झांकने का प्रयास करती हूं तो वहां मुझे आकाश का निरा सूनापन दिखलायी देता है, सब कुछ खाली-खाली-सा। आदमी का मन भी

कितना विचित्र है। किन्हीं क्षणों में वह द्रष्टा होने का दम्भ भरता है और किन्हीं क्षणों में मात्र अंजुरी भर सुख के लिए कितना मजबूर हो जाता है।

वे शायद कुछ कहना चाहते हैं। असहनीय पीड़ा से आकुल, बोलने में असमर्थ, हाथ के इशारे से भैया को कुछ समझाने की चेष्टा करते हैं। भैया भी इशारे से उन्हें कुछ समझाते हैं। उन्हें सहारा देकर बैठाते हैं। दो व्यक्ति सहारा देकर स्ट्रेचर पर लेटाते हैं। बाहर लाकर उन्हें एम्बुलेन्स में लिटाया जाता है। मैं भी पीछे-पीछे बाहर आ जाती हूं। परिवार के सदस्य धैर्य खो बैठते हैं। एक दूसरे को अश्रुपूरित नेत्रों से देखते हुए सांत्वना देने का प्रयास-सा करते हैं। पापा जैसे सीधे और सरल व्यक्ति को इतना कष्ट। मैं चाहकर भी कुछ नहीं कर पाती। मुझे अपनी निरर्थकता का अहसास तेज़ी से मथने लगता है। एम्बुलेन्स स्टार्ट होती है। मन बुरी आकांक्षाओं से घिर आता है। एम्बुलेन्स चली जाती है। पापा की आकृति मेरे मानस पटल में घूमने लगती है।

जब मैं बहुत छोटी थी। लगभग दस, ग्यारह वर्ष की रही होऊंगी, तब पापा शहर के ही एक हायर सैकेन्डरी स्कूल में हिन्दी के आध्यापक थे। मैं पांचवीं कक्षा में पढ़ती थी। मंझोले भैया अरुण छठीं कक्षा में और बड़े भैया आठवीं कक्षा में पढ़ते थे। मुझे याद है पापा मेरे लिए चाकलेट लाना कभी नहीं भूलते थे। बेशक मां की बतायी हुई घरेलू चीज़ें लाना भूल जायें। चाकलेट मैं खाती भी बहुत थी। एक और चीज़ थी इमली, जिसे मैं बड़े चाव से खाती थी चोरी छिपे।

हमारे घर के पिछवाड़े पंडित दीनानाथ, मुन्सिफ मजिस्ट्रेट रहते थे। उनका मकान काफी बड़ा था। परिवार भी काफी बड़ा था। तीन लड़के थे। एक सबसे बड़ा और दो छोटे, उनकी दो लड़कियां भी थीं, सुमन और प्रतिभा मेरी हमउम्र। उनके घर के बाहर अहाते में इमली का ऊंचा-सा पेड़ था। मौसम पर खूब मोटी-मोटी, बड़ी जलेबीनुमा इमलियां आती थीं उस पेड़ पर। सुमन और प्रतिभा के छोटे भाई ढेले मार-मार कर खूब इमलियां गिराते थे। इसके लिए हम लोगों को उन छोटे भाइयों की चिरौरी करनी पड़ती थी। मैं ढेर सारी इमलियां घर ले आती थी और बस्ते में भर लेती थी। दिनभर नमक के साथ चटखारे लेकर खाती थी। रात को भी बिस्तर में लिहाफ में मुंह छिपाकर खाती रहती थी। मां मेरी इस इमली खाने की आदत पर बहुत चिल्लाती थी। पापा भी मना करते थे। उसकी वजह भी थी। दरअसल खट्टी चीज़ें खाने से मेरे गले के टान्सिल फूल जाते थे। पापा कई बार डॉक्टरों को दिखा चुके थे। डॉक्टर ने दवा तो दी थी! साथ यह भी निर्देश दिया था कि नमक
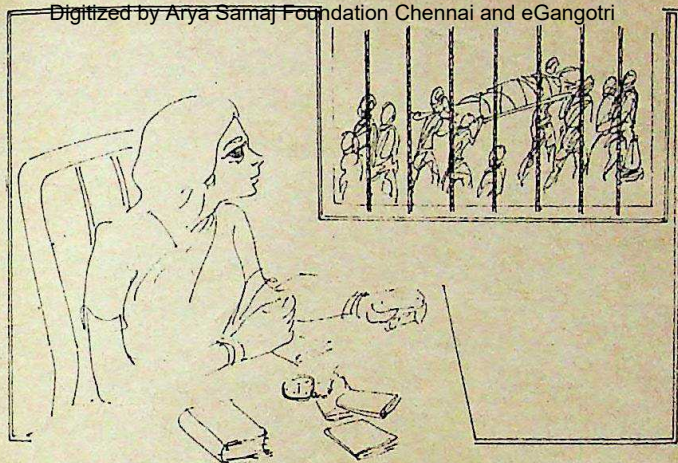
वाले गर्म पानी से कुल्ले करे यह और खट्टी चीज़ें कतई न खाये। पर मैं मानती नहीं थी। चोरी-छुपे खाने से बाज़ न आती और मेरी यह चोरी पकड़ ली जाती थी।

शाम को पापा के घर लौटकर आने पर बाक़ायदा मेरी शिकायत की जाती। मां कहती – 'सुना जी, आपने। आज आपकी इस लाड़ली मधु ने खूब इमलियां खायी हैं। मेरे मना करने का इस पर कोई असर नहीं होता। एकदम ढीठ हो गयी है अभी से।' अरूण भैया भी मां की हां में हां मिलाते हुए पापा से कहते – 'पापा, बिल्कुल सच बात है आज इस सींक-सलाई ने ज्यादा तो खैर नहीं, कम-से कम आधा पाव इमलियां तो ज़रूर ही खायी होंगी।' पापा सब कुछ सुनकर मुझसे कुछ न कहते। बस मुस्करा भर देते। रात में पढ़ाते समय मुझे कहते – 'बेटी, मधु! अगर इस बार तेरे टान्सिल फूल गये तो मैं सचमुच तेरे गले का आपरेशन करवा दूंगा। कुछ सुनूंगा नहीं। मैं यह थोड़े ही ना कहता हूं कि हाथ ही न लगाया कर इमली को। अरे, एकाध टुकड़ा कभी-कभार खा लिया, जब मन हुआ बस।'

छोटी थी तो दुबली-पतली थी। अरुण भैया सींक-सलाई कहकर चिढ़ाते थे। उनकी देखा-देखी पड़ौसी के दूसरे बच्चे भी मुझे ऐसा ही कहकर चिढ़ाने लगे थे। मैंने पापा से शिकायत की तो उन्होंने अरुण भैया को खूब डांटा – 'अबे, ओ छछूंदर! अपनी सूरत तो देख लिया कर आईने में। छोटी बहन को चिढ़ाता रहता है। पढ़ने-लिखने में ज़ीरो, इन कामों में बड़ा मन लगता है। कुछ नहीं कहना मेरी

बेटी को।' अब तो खैर मैं अच्छे-खासे वजूद की हो गयी हूं। पापा इसी चिंता में घुले जाते थे कि मैं मोटी क्यूं नहीं होती? एक बार डॉक्टर के पास ले गये मुझे और उनसे बोले – 'मेरी यह लड़की मोटी क्यूं नहीं होती, डॉक्टर? ज़रा इसके हाथ-पैर तो देखो। कैसी पतली-दुबली है। क्या बीमारी है इसे?' डॉक्टर ने मुझे चेकअप किया फिर हंसकर बोले - 'भई, कोई बीमारी तो है नहीं इसे। आप कह रहे हैं, ठीक से खाती-पीती भी है तो फिर क्या है? स्मार्ट है, स्वस्थ है। फिर आप खामख्वाह इसे मोटी बनाने पर क्यों तुले हैं? लोग हैं कि मुटापे से परेशान हैं। बड़ी होगी तो खुद ब खुद ठीक हो जायेगी। ले जाइये इसे।' पापा गुस्सा होकर लौट आये। घर पर आकर बोले – 'इस साले को कुछ आता-जाता तो है नहीं, डॉक्टर बना बैठा है, उल्लू का पट्ठा!' पापा का मन न माना। वे मेरे लिए खूब सारे सूखे मेवे ले आये और कुछ टानिक की दवा थी। वह यही चाहते थे कि मैं किसी तरह से मोटी हो जाऊं। पर मैं मोटी ही न हुई उन दिनों।

पढ़ने में मैं तेज़ थी। हमेशा फर्स्ट डिवीज़न से पास होती थी। पापा बहुत खुश होते थे। तमाम मुहल्ले के लोगों से कहते रहते – 'भई, मेरी मधु पढ़ने में बहुत होशियार है। हमेशा अव्वल आती है। इसे वकील बनाऊंगा मैं। हमारे खानदान में कोई वकील नहीं हुआ न। लड़की है तो क्या हुआ? कोर्ट में ऐसी जिरह करेगी कि बड़े-बड़ों को नानी याद आ जायेगी। बड़ा लड़का तो मेरा पढ़ने में ठीक-ठाक हैं, लेकिन यह जो बीच वाला है न, बिल्कुल गोबर गणेश है।' कभी-कभी वे मां से भी यही सब कह देते तो मां बिफर जाया करती – 'ज्यादा लाड़ में इस लड़की का दिमाग सातवें आसमान पर न चढ़ाओ। मेरे लड़के किसी से कम नहीं हैं। जिस मंझोले को तुम गधा कहते हो न, देखना यही एक दिन बड़ा इंजीनियर बनेगा।'

मैं जब हाई स्कूल की परीक्षा में फर्स्ट डिवीज़न से पास हुई तो पापा की खुशी का ठिकाना न रहा। तमाम मित्रों को बैठक में बुलाकर शानदार दावत दी। मोहन हलवाई के यहां से देसी घी की पांच सेर इमरतियां मंगवायीं और मुहल्ले के हर घर में भिजवायीं। बैठक में अपने दोस्तों के बीच मेरी तारीफों के पुल बांधते रहे। उसी साल मुझे अलग से कमरा दिया। नयी मेज-कुर्सी के साथ एक बेहद खूबसूरत-सा टेबल लैम्प लाकर दिया। सुबह जल्दी उठने के लिए टाइमपीस भी खरीदकर ले आये। शाम को खाने के बाद वे मेरे कमरे में आकर बैठते। मेरे तमाम विषयों में पूरी दिलचस्पी लेते। हिन्दी और संस्कृत तो वे बहुत ही बढ़िया पढ़ाते थे। वे अक्सर ही कहते – 'हिन्दी में नम्बर कम नहीं आने चाहिए, बेटी मधु, वर्ना मेरी नाक कट जायेगी।' मैं

हिन्दी
कविता
अपनी
गाकर
चल
आसप
कवि-
सारे
पाप
जैसे-
भी न
भी न
खाने-
विशेष
लिया
लिया
गिला-
के प्र
उमड़
किसी
आते
लिए
घर के
थीं।
को प
कभी
जातीं
यह ह
भरा-
के आ
तुक है

हिन्दी का अध्यापक हूं न।' उन्हें कविताएं लिखने का बड़ा शौक था। अपनी लिखी कविताओं को वे तरन्नुम में गाकर सुनाते भी थे। ज़रा भी उन्हें पता चल जाता कि शहर के अन्दर या आसपास के किसी इलाके में कवि-सम्मेलन का आयोजन है तो फौरन सारे काम छोड़कर वहां पहुंच जाते।

पापा के वेतन से परिवार का खर्च जैसे-तैसे चलता भर था। विशेष तंगी भी न थी। उनका अपना कोई खास शौक भी न था। साधु प्रकृति के पापा को खाने-पीने, पहनने-ओढ़ने में भी कोई विशेष रुचि न थी। जैसा मिल गया खा लिया और जो मिल गया पहन, ओढ़ लिया। किसी से कोई शिकायत या गिला-शिकवा वे न करते। गरीब लोगों के प्रति उनके दिल में हमेशा दया उमड़ती रहती। अक्सर ही अपने साथ किसी गरीब, भूखे व्यक्ति को साथ ले आते और बैठक में बिठला देते। उनके लिए खाना बनाने का उनका आदेश जब घर के अंदर पहुंचता तो मां बिगड़ उठती थीं। वे कहतीं – 'पता नहीं, किस-किस को पकड़कर ले आते हैं रोज़-रोज़।' कभी तो वे खाना देतीं और कभी अड़ जातीं कि खाना नहीं बनेगा। मां का तर्क यह होता था दरअसल कि बच्चों का भरा-पूरा परिवार है। रोज़-रोज़ बाहर के आदमियों को खाना खिलाने की क्या तुक है भला? पापा की इस आदत के कारण अक्सर ही घर में चख-चख होती रहती। लेकिन उन पर कोई प्रभाव न पड़ता। वे मुस्कुराते रहते और कहते – 'न बनाओ भई, खाना। मेरे हिस्से का ही दे दो उसे। मैं तो शाम को खा लूंगा लेकिन वह बेचारा तो कई दिनों से भूखा है।' और होता यह था कि पापा के इस तर्क के आगे मां हार मान लेतीं। तब बच्चों के हिस्से की रखी सब्जी, रोटियां बैठक में पहुंचायी जातीं या मां खाना बनाने के लिए किचिन में घुस जातीं।

पापा के पास फन्ड का कुछ पैसा था, जिसे वह यह सोचकर खर्च नहीं करते थे कि पता नहीं कब, क्या जरूरत पड़ जाये? छोटे-छोटे बच्चों का साथ है। इन्हीं दिनों में उनके एक खास मित्र ने उन्हें सुझाया कि प्रिंटिंग प्रेस के व्यवसाय में काफी लाभ है। जितना वेतन वे साल-भर में पाते हैं, उतना तो तीन महीने में ही निकल आयेगा। आधा पैसा लगाने के लिए उन्हें एक साझेदार की ज़रूरत थी। पापा उनकी बातों से प्रभावित हो गये। शायद मन में यह लालच भी पैदा हो गया था कि जल्दी ही उनके पास काफी रुपया हो जायेगा। जिससे वे बच्चों के भविष्य की अच्छी योजनाएं बना सकेंगे। उन्होंने आनन-फानन में फैसला कर लिया कि वे यह व्यवसाय ज़रूर करेंगे और जरूरत पड़ी तो नौकरी भी छोड़ देंगे। पापा ने फंड का सारा रुपया निकालकर लगा दिया। मशीनें खरीद

ली गयीं और बाकायदा प्रेस का काम शुरू हो गया। पापा प्रेस का काम देखने लगे। उनके मित्र आर्डर लेकर आते थे और उनका छोटा भाई बाज़ार से कागज़ खरीदने व पेमेन्ट्स लाने का काम करता था। प्रेस के इस धंधे में अच्छी आमदनी होने लगी। पापा ने नौकरी छोड़ दी और अपना सारा वक्त प्रेस में ही देने लगे। दो वर्ष तक सब कुछ ठीक प्रकार से चलता रहा। पापा घर खर्च के लिए एक मुश्त रकम ही हर महीना लेते थे। प्रेस से जो लाभ हुआ, उससे एक मशीन और खरीद ली गयी।

धीरे-धीरे मित्र के मन में बेईमानी आने लगी। पापा को उन पर कुछ ज्यादा ही भरोसा था। वे थे भी कुछ चालाक किस्म के। लेन-देन के मामले से उन्होंने पापा को दूर ही रखा। बाद में वे हर समय पार्टियों से पैसा वसूल न हो पाने का रोना रोने लगे। प्रेस के नाम पर उन्होंने काफी कर्ज़ सिर पर चढ़ा लिया था। मशीनों की लागत से अधिक बाज़ार का कर्ज़ हो गया था। कागज़ वालों और टाइप फाउन्ड्री वालों की ही हजारों की देनदारी हो गयी थी। पापा के मित्र ने एक दिन प्रेस का दिवाला निकालकर उन्हें दिखा दिया। दरअसल पार्टियों से पेमेन्ट वसूल कर वे हज़म कर गये थे। पापा बहुत परेशान हुए। मशीनें आधे-पौने दामों में बेच दी गयीं। पापा का सारा पैसा डूब गया। इस हादसे से वे दुःखी रहने लगे।

काफी भागदौड़ी के बाद उन्हें फतेहपुर के पास इन्टर कॉलेज में पुनः अध्यापकी की नौकरी मिल गयी। वे वहीं रहने लगे थे। प्रत्येक शनिवार की रात को आते और सोमवार को सवेरे ही पहली गाड़ी से निकल जाते। पापा के जीवन के ये सबसे अधिक तंगदस्ती के दिन थे। थोड़े कर्ज़दार भी वे हो गये। ऐसा नहीं था कि हम कुछ समझते नहीं थे। सब बड़े-बड़े हो रहे थे। भैया सब कुछ समझते थे ही। अरुण भैया में भी अच्छी समझ पैदा हो गयी थी। हम सबकी यह कोशिश रहती थी कि किसी भी प्रकार की फालतू चीज़ की फरमाइश पापा से न की जाये।

पिछले बरस भैया को तमाम सुविधाओं से पूर्ण अच्छी नौकरी मिल गयी थी। अच्छा वेतन और बड़ा बंगला। पापा काफी कमजोर हो गये थे। सिर के तमाम बाल सफेद हो चले थे। आंखें भी भीतर को धंस गयी थीं। चेहरे पर झुर्रियां और अधिक गहरा आयी थीं। भैया ने कई बार कहा कि आप अब नौकरी छोड़कर मेरे पास रहें। पर वे मानते नहीं थे। अभी चंद महीने पहले वे जब बीमार हुए तो भैया जबर्दस्ती उनकी नौकरी छुड़वाकर अपने पास ले आये थे। कुछ दिनों तक वे ठीक रहे। सुबह ही सुबह थोड़ा घूम आया करते थे। अभी सप्ताह पहले उन्हें बुखार आया और उसके बाद हालत गिरती ही चली गयी। भैया का

तार पातें ही मैं दौड़ी चली आयी। पापा जिस कष्ट से गुज़र रहे थे, वह मुझसे देखा नहीं जाता था।

* * *

रात गहरा रही है। दूर कहीं गिरजाघर के घंटे ने दो बजाये हैं। मैं अपनी घड़ी की ओर देखती हूं, यकीनन दो बज गये हैं। घर के सदस्य और बाहर से आये रिश्तेदार सो रहे हैं या सोने का उपक्रम कर रहे हैं, समझ नहीं पा रही हूं मैं पलंग पर लेट जाती हूं और मुंह तक चादर खींच लेती हूं। मेरी आंखों के सामने पापा की तस्वीर घूमने लगती है। पापा के साथ बिताये क्षण एक-एक कर चलचित्र की भांति मेरे मस्तिष्क में तैरने लगते हैं।

सहसा बाहर किसी गाड़ी के रुकने की आवाज़ सुनकर मैं चौंक पड़ती हूं। दरवाज़े पर मां का दारुण चीत्कार भरा स्वर सुनायी देता है। एम्बुलेन्स रास्ते से ही वापस लौट आयी है। पापा अब नहीं रहे।

पापा का स्ट्रेचर नीचे उतार लिया गया है और शव को बैठक के फर्श पर लिटा दिया गया है। पापा की ओर देखती हूं तो लगता है गहरी नींद सो रहे हैं। मुंह सूख रहा है उनका। एक चम्मच पानी क्यों न डाल दूं उनके मुंह में? एक बारगी ऐसा ख्याल आता है मन में। दूसरे ही क्षण ख्याल आता है वे तो ऐसी नींद सो रहे हैं जो कभी नहीं खुलती। मैं गीता पाठ करने लगती हूं। मृत्यु ने विजय प्राप्त कर ली है। ऐसा ही होता आया है, आज भी हुआ है, भविष्य में भी होता रहेगा। नियति बलवान है। पापा का महाप्रस्थान हुआ है!

सुबह अर्थी तैयार की जाती है। अर्थी उठाते समय भैया फूट-फूटकर रोने लगते हैं। मुझे लगता है मेरे अन्दर कुछ है जो घुट-सा रहा है। श्मशान घाट से शाम तब सब लोग घर लौट आते हैं। रात दस बजे वाली ट्रेन से भैया हरिद्वार चले जाते हैं फूल लेकर। मैं और अरुण भैया पापा के कमरे में बैठे हैं गुमसुम। सामने मेज़ पर पापा की पुरानी हाथ घड़ी, कुछ दवाएं, डिक्शनरी, डायरी, कविताओं की कुछ किताबें रखी हैं। मैं उनकी डायरी उठाकर देखने लगती हूं। डायरी के बीच कुछ कागज़ रखे हैं। पढ़ने लगती हूं तो पता चलता है कि अभी पिछले दो महीनों के दौरान मुझे लिखे गये पत्रों की नकलें हैं। सोचती हूं ऐसा तो पापा कभी नहीं करते थे। पढ़ते-पढ़ते मेरी आंखों में आंसू भर आते हैं। मन अजीब तरह का हो जाता है।

कागज़ों को वापस डायरी में रख उसे बंद कर देती हूं।

— के-७४, न्यू स्कीम, यशोदा नगर,
कानपुर - २०८०११.

□

नेताजी का चमचा

□ शेर जंग जांगली

नेताजी का चमचा खो गया था। बताया जाता है कि जब नेताजी इस धरती पर अवतरित हुए थे, तो चांदी का यह चमचा उनके मुख में था। यही चमचा जब नेताजी के स्वर्गीय पिता रायबहादुर साहब पैदा हुए थे, तो उनके मुख में भी था। विस्मय की बात यह है कि चमचा उनके सुपुत्र कुपुत्रचंद के जन्म समय उसके मुख में भी था।

यद्यपि चांदी के इस चमचे का मूल्य बहुत अधिक नहीं था, पर नेताजी और उसके मित्र-साथी, पीढ़ी-दर-पीढ़ी चले आ रहे इस चमचे के खो जाने को अपशकुन समझते थे। उनको लगता था कि उनके सुपुत्र का, जोकि पार्लियामेंट का चुनाव लड़ रहा था, समग्र राजनैतिक जीवन उस चमचे से जुड़ा हुआ है। उनके निजी ज्योतिषियों ने उनको बताया था, कि यदि कुपुत्रचंद, उस भाग्यवान चमचे के साथ सात बार शहद चाट ले, तो चुनाव में उसकी विजय निश्चित है। यदि यह रस्म एक बार पूरी कर दी जाये, तो फिर चाहे कृष्ण भगवान स्वयं चल कर आ जायें, तो भी उनके पुत्र की सीट को किसी प्रकार का कोई खतरा पैदा नहीं हो सकता।

यद्यपि उनके नूरे-चश्म को शहद पसंद नहीं था, तथापि देश की सेवा के लिए उसने यह ज़हर चाटना भी स्वीकार कर लिया था। चमचे को साफ और शुद्ध करने के लिए विशेष रूप से गंगाजल मंगवाया गया था। इस बात से डरते हुए कि मुहूर्त की घड़ी टल न जाये, एक वफादार सेवक हैलीकाप्टर द्वारा स्वयं गंगाजल लेकर आया था। देश के प्रसिद्ध ज्योतिषियों ने पिछले सात दिनों में हवन यज्ञ करके वायुमंडल को पवित्र करने के लिए सात मन देसी घी की आहुति दी थी।

उनके सुपुत्र की ओर से लड़ा जा रहा यह पहला चुनाव था। इसीलिए नेता चाहते थे कि वह न केवल चुनाव जीते,

बल्कि पार्लियामेंट में जाकर देश की सेवा के लिए मंत्री या उपमंत्री भी अवश्य बने।

और ऐसे शुभावसर के लिए विशेष रूप से बैंक के लॉकर में से निकलवा कर लाया गया चमचा खो गया था। नेताजी के बंगले में हाहाकार मचा हुआ था और उनके सारे ही 'वफादार' परेशान दिखायी दे रहे थे।

एक बोला: 'यह बहुत बुरा हुआ। उस चमचे के खो जाने से अवश्य स्वर्गीय रायबहादुर की आत्मा स्वर्ग में तड़प रही होगी।'

दूसरे ने फरमाया: 'माई-बाप, मुझे तो यह चमचे की गुमशुदगी में विरोधी पार्टी का कोई षड़यंत्र लगता है।'

तीसरा वफादार कहने लगा: 'यह भी कोई बड़ी बात नहीं कि चमचे को गुम कर देने में विदेशी शक्तियों का हाथ हो।'

चौथे ने इरशाद फरमाया: 'जनाब, मुझे लगता है कि इसमें के.जी.बी. का नापाक हाथ है।'

पांचवां बोला: 'मुझे तो यह सी.आई.ए. की काली करतूत लगती है।'

छठे ने गला साफ करते हुए कहा 'इससे देश की भीतरी सुरक्षा को खतरा पैदा हो गया है।'

सातवें ने छठे का अनुमोदन करते हुए कहा– 'देश के भीतरी और बाहरी खतरों को मुख्य रखते हुए एमरजेंसी लगा देनी चाहिये।'

नेताजी बोले– 'अब चमचे का क्या किया जाये?'

कमरे में उपस्थित सभी एक स्वर में बोले– 'जनाब, हमारे होते हुए चमचे के लिए चिंता करने की ज़रूरत नहीं।'

बंगले के सभी नौकर-चाकर बुला लिये गये। नेताजी ने गला साफ करते हुए कहना शुरू किया– 'हमने तुम्हें कभी भी अपना नौकर नहीं समझा, बल्कि इस बंगले का एक ही अंग समझा है, पर हम यह बर्दाश्त नहीं कर सकते कि इस प्रकार दिन-दहाड़े बंगले में से चमचा चोरी हो जाये। तुम सभी तो जानते ही हो कि 'अहिंसा परमोधर्म' हमारा और हमारी सरकार का सिद्धांत है। इसलिए मैं तुम सबको यही कहता हूं कि जिसके पास भी यह चमचा हो, वह मेरे हवाले कर दे। मैं नहीं चाहता कि पुलिस को बुला कर कोई हंगामा किया जाये। मुझे यह बात अच्छी नहीं लगती।'

नेताजी की बात सुन कर सभी नौकर उसी प्रकार ही बुत बने खड़े रहे। लगता था कि उनको नेताजी की कही बात की समझ नहीं आयी थी।

नेताजी उनको चुपचाप खड़े देख कर फिर बोले– 'फिर मैं पुलिस को बुला लूं?'

उपस्थित भद्रपुरुषों में से एक बोला– 'हुजूर! इन नमकहलालों के होते हुए पुलिस को कष्ट देने की क्या ज़रूरत है?'

दूसरा कहने लगा– 'हुजूर! पुलिस के

आने से हमारी बड़ी बदनामी होगी।'

तीसरे ने कहा— 'हुजूर! हमें भी तो सेवा का अवसर प्रदान करें।'

चौथे से सातवें तक को कुछ भी कहने का कष्ट नहीं उठाना पड़ा। उन सबने मिल कर नौकरों को दबोच लिया। गालियां दे-दे कर और मार-मार कर वे सभी बुरी तरह थक गये थे। जब वे तनिक रुके, तो नेताजी की पत्नी ने उनके लिए अंदर से चाय भिजवा दी। वफादारों ने ताज़ा-दम होकर अपनी ताकत का दुबारा प्रदर्शन करना शुरू कर दिया। दूसरा दौर भी असफल साबित हुआ। नौकरों में से किसी ने भी इस बात को स्वीकार न किया कि चमचा उसने चोरी किया है।

एक वफादार बोला— 'जनाब, यह हरामज़ादे तो बहुत ढीठ लगते हैं।'

दूसरा कहने लगा: 'हुजूर, हमारे हाथों में दर्द होने लगा है, पर इन पर कोई असर नहीं हुआ।'

'मेरा पुश्तैनी चमचा मिलना ही चाहिये, नहीं तो इसके जो संगीन नतीजे निकल सकते हैं, उनके बारे में आपको अच्छी तरह पता है!' नेताजी ने एक प्रकार का फरमान जारी किया।

बंगले के एक कमरे में चमचे की खोज की जाने लगी। एक वफादार ने एक कमरे में मेज़ पर पड़ी शुद्ध अफीम देख कर नेताजी की लापरवाही का दिल ही दिल में अफसोस किया, और सबकी नज़रें बचा कर उस अफीम को निगल गया।

दूसरे वफादार ने जब एक अलमारी में विलायती स्कॉच की दर्जनों ही बोतलें पड़ी हुई देखीं, तो स्वयं को रोकते हुए भी उसकी आह निकल गयी।

नेताजी के बैडरूम में कला के नाम पर बनायी गयी नंगी और अर्धनग्न पेंटिंग देख कर सभी के होश उड़ गये।

एक-एक कमरे की अच्छी तरह तलाशी ली गयी, पर चमचा कहीं न मिला।

शहद चटाने की रस्म शुरू होने में केवल दो घंटे रह गये थे। उनके निजी ज्योतिषी को बुलाया गया।

वह कहने लगा— 'मेरी विद्या के अनुसार यदि चमचा न मिला, तो कंवर साहब की पराजय निश्चित है।'

नेताजी ने ज्योतिषी जी महाराज के चरण पकड़ कर कहा, 'महाराज, कोई उपाय कीजिये। कंवर को जीतना ही चाहिये। मैं अब तक दस लाख रुपया चुनाव-अभियान पर खर्च कर चुका हूं। मैं तबाह हो जाऊंगा, महाराज। कुछ कीजिये।'

'महा चमचा यज्ञ! बस केवल यही एकमात्र उपाय है।'

'महा चमचा यज्ञ!' नेताजी ने विस्मय से पूछा।

'हां, महा चमचा यज्ञ! यह महान यज्ञ पचास हज़ार रुपये से सम्पूर्ण होगा।

तुलसी बना वारान्निकोव

प्रगटा रसा में बसा राम छबि अंतस में,
पढ़ गया प्रेम पाठ देवदूत दई का ।।
गढ़ गया रूसी अनुवाद श्री रामायण का,
तुलसी बना वारान्निकोव सदी नयी का ।।

मढ़ गया मंत्र जनमानस में 'मानस' का,
चढ़ गया चित्त पै चहैता बन कई का ।।
कढ़ गया रामचरित्चादर पै चंद्रमा सा,
बढ़ गया विश्व बीच बालक बढ़ई का ।।

— अरुण नागर

महाकवि काली मार्ग, उरई - २८५ ००१, उ.प्र.

एमरजेंसी की हालत में यह यज्ञ एक घंटे में भी सम्पूर्ण हो सकता है।'

'माई-बाप! मेरी तुच्छ बुद्धि के अनुसार यह महान यज्ञ करवा ही लेना चाहिये!' एक वफादार बोला।

'यह चमचा यज्ञ चमचों की सुरक्षा के लिए ज़रूरी है!' दूसरे ने कहा।

'कंवर साहब की विजय के लिए यह तुच्छ रुपये खर्च कर दिये जाने में कोई हर्ज नहीं!' तीसरे ने अपनी राय प्रकट की।

'हुजूर! एक बार कंवर साहब मंत्री बन गये, कई पचास हज़ार उनके आगे-पीछे घूमते फिरेंगे!'

महान चमचा यज्ञ की आज्ञा दे दी गयी। ज्योतिषी महाराज ने अपनी आत्मा परमात्मा में लीन करने के लिए स्वयं को एक कमरे में बंद कर लिया। जब एक घंटे बाद, वह कमरे में से बाहर आये, तो चांदी का चमचा अर्थात् नेताजी का पुश्तैनी चमचा उनके हाथ में था।

ज्योतिषीजी महाराज के इस चमत्कार से सबकी आंखें खुली की खुली रह गयीं।

इसके बाद सारी रस्में पूरी की गयीं।

घर के नौकरों को मार खाने की मुआवज़े के तौर पर प्रसाद के दो-दो लड्डू दिये गये। ये सभी बेशरमों की तरह दिखायी दे रहे थे और खी-खी कर रहे थे।

अगले दिन ज्योतिषीजी महाराज अपने एक चेले को कह रहे थे, 'बरखुर्दार, चमत्कार कोई नहीं था। वास्तव में जब नेताजी मुझे चमचा दिखा रहे थे, तो उस समय ही उनका फोन आ गया था। उन्हें प्रधानमंत्री ने बुलाया था। वह फौरन ही उधर चले गये और यह बात भूल गये कि चमचा मेरे पास है। अस्तु, उनका चमचा उनको मैंने महान यज्ञ के बाद वापस कर दिया। पुत्र, नेता लोगों की चमचों की ज़रूरत है, और हमको ऐसे नेता लोगों की!'

[अनुवाद : सुरजीत]

कदमों का साथ

☐ सुखबीर

वह महसूस कर रहा था कि उसके कदम पक्षियों के पंखों की तरह हल्के हैं।

जब वह मोड़ मुड़कर गोखले रोड पर आया, तो उसने साथ चल रही अपनी नवविवाहिता पत्नी को बताया कि उस सड़क के साथ उसके जीवन का एक बहुत बड़ा भाग जुड़ा हुआ है — उसकी तलखियां और खुशियां, गर्दिशें और सैरें, आत्महत्याओं के अन्धेरे और आशाओं भरे भविष्य के सपने...। वास्तव में, उसका पिछले कुछ वर्षों का जीवन इस सड़क से अलग नहीं किया जा सकता था।

सड़क के मोड़ पर उसने एक छोटे-से होटल की ओर संकेत किया। उस इलाके का सबसे घटिया होटल। हां, उस होटल में वह बहुत सस्ता खाना खाया करता था। उस सस्ते खाने ने उसकी अंतड़ियों में जख्म पैदा कर दिये थे। पिछले वर्षों में उसे इतनी बार पेचिश की शिकायत हुई थी कि अब यह उसकी पुरानी बीमारी ही बन गयी थी। फिर भी, वह होटल छूटा नहीं था। आखिर इतना सस्ता खाना और कहां मिल सकता था। लेकिन अब वह इस होटल से छुटकारा पा जायेगा और अपने घर में, मेंहदी रंगे हाथों से बनी नन्हीं-नन्हीं, नर्म-नर्म, चुपड़ी हुई रोटियां खायेगा, और साथ में अपनी मन पसन्द दाल और तरकारी — कम मसालों, कम मिर्चों, और कम पानी वाली दाल और तरकारी।

कुछ आगे जाकर वह रुका। बायें हाथ 'आरोरा' सिनेमा था। हैमिंग्वे के उपन्यास पर बनी फिल्म, 'ए फेयरवेल टू आर्म्स' वही लगी हुई थी। उसमें काम करने वाली अभिनेत्री, जेनीफर जोन्स उसे बहुत पसन्द थी। लेकिन हेमिंग्वे उसे इतना पसन्द नहीं था। पिछले दिनों उसने यह उपन्यास पढ़ना शुरू किया था, तो उकता उठा था। पर अब यह फिल्म देखकर मजा आ जायेगा। और यह फिल्म कैसे मौके पर आयी है। अब उसे देखता हुआ वह अकेला नहीं होगा। सामने जेनीफर जोन्स होगी और उसके साथ ही सीट पर भी एक जेनीफर जोन्स होगी। हिन्दुस्तानी जेनीफर जोन्स। काफी अरसे से उसने कोई फिल्म नहीं
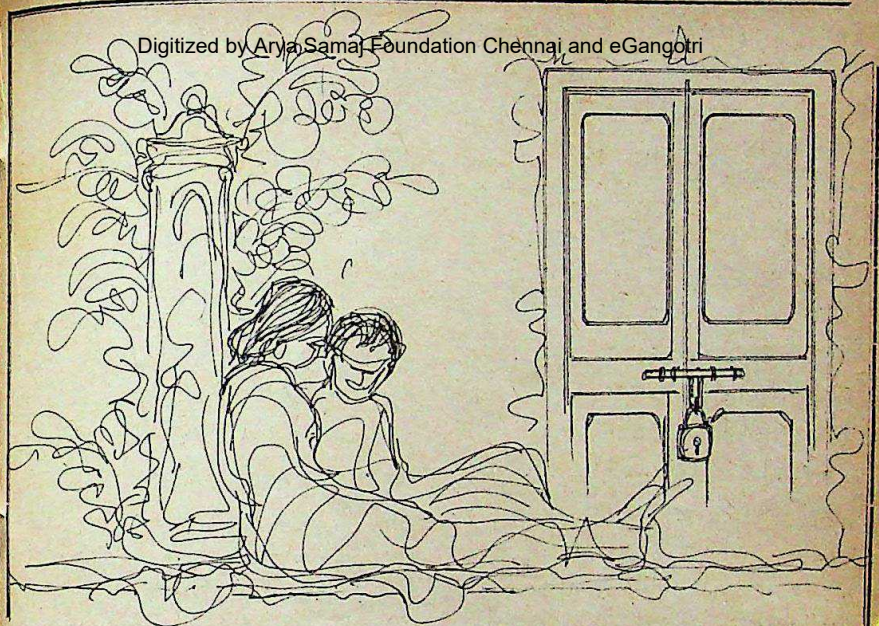
देखी थी। यहां कितनी अच्छी फ़िल्में आयी थीं। जेनीफर जोन्स की भी दो फिल्में आयी थीं। पर वह देख नहीं सका था। कई बार पेट की भूख इतनी तेज होती थी कि वह जेनीफर जोन्स को उस पर कुर्बान कर देता था। परसों शुक्रवार को यह फिल्म लगेगी, तो वे पहला ही शो देखेंगे।

उसने धीरे-से अपनी पत्नी का हाथ अपने हाथ में लेकर दबाया। लहू और मांस की स्निग्धता। आज कई वर्षों के बाद इस सड़क पर चलने का मजा आया था।

आगे जाकर उसने सड़क पार की और एक स्टोर के अन्दर गया। वह एक बहुत सुन्दर डिपार्टमेंटल स्टोर था। वहां हर प्रकार की वस्तुएं मिल सकती थीं। उसने शो-केस में घड़ी देखी, जो वह काफी अरसे से खरीदने के बारे में सोच रहा था, पर आज तक वह खरीद नहीं सका था। उसकी कीमत उसके सामर्थ्य के बाहर थी। वैसे, उसे यह भी आशा थी कि शादी पर उसे ससुराल की तरफ से घड़ी मिल जायेगी। पर घड़ी नहीं मिली थी। और अब फिर वह घड़ी उसके लिए मृगजल बनी रहेगी। ...वह धीरे-से आगे बढ़ गया। एक शो-केस में नये डिजाइनों की बुशशर्टें पड़ी थीं। उसने पत्नी को उनमें से कोई डिजाइन पसन्द करने के लिए कहा। अब वह उसकी पसन्द के ही

प्रदर्शन को नोबेल पुरस्कार विजेता वैज्ञानिक सी.बी. रमन भी देख रहे थे।

नरसिंह स्वामी ने कई प्रकार की तेज शराब पीने के पश्चात पोटेशियम साइनाइड का फांका भी लगा लिया था और बाद में एक कांच की बोतल फोड़कर उसका चूरा भी निगल गये। स्वामी को ऐसा करते देख तमाम उपस्थित लोग एक दूसरे का मुंह देखने लगे।

इस अद्भुत प्रदर्शन के बाद जब नरसिंह स्वामी का शारीरिक परीक्षण किया गया तो यह देख कर और भी आश्चर्य हुआ कि तेजाब, विष और कांच का चूरा उनके पेट में प्रभावहीन होकर पड़े थे। नरसिंह स्वामी के ऊपर कोई भी प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ा था, बल्कि स्वामी एकदम सामान्य स्थिति में थे।

जर्मन की एक सर्कस कंपनी से संबद्ध कुमारी हेलियट अपनी ताकत का अहसास किसी भी हालत में कम नहीं होने देना चाहती थी। हेलियट जब भी बाहर निकलती अपने कंधे पर आठ मन भारी जीवित सिंह को बैठाये रहती।

मैक्लेन वर्ग (जर्मनी) का १८वीं शताब्दी का प्रसिद्ध भारोत्तोलक एडोल्फ बानल्युटजो चांदी के डालर के आकार-वाले चांदी के सिक्कों को बीस फुट की दूरी से बलूत के पेड़ पर इतनी जोर से फेंक कर मारता था कि उन्हें निकालने के लिए छेनी की सहायता लेनी पड़ती थी।

माउंट गॅम्बियार (आस्ट्रेलिया) के एडैम लिडसे जॉर्डन ने अपने घोड़े को ४१/२ फीट ऊंची बाड़ के ऊपर से एक इतनी पतली कगार पर कुदा दिया कि घोड़े को तिरछा होना पड़ा अन्यथा वह तीन सौ फीट ऊंची एक खड़ी चट्टान से नीचे जा गिरता। घोड़ा शांतिपूर्वक तब तक खड़ा रहा जब तक कि दर्शकों ने बाड़ को तोड़ नहीं दिया। इतिहास में घुड़सवारी का सबसे आश्चर्यजनक यह करतब जॉर्डन ने १८६० में दर्शकों को दिखाया था।

नन वर्ग (जर्मनी) के एपिलेन वान गैलिजन को फांसी देने से पहले उसकी अंतिम इच्छा के रूप में अपने खास घोड़े पर चढ़ने की अनुमति दे दी गयी तो वह सैनिकों की एक पूरी रेजिमेंट के बीच से होकर नगर के परकोटे के ऊपर घोड़े के साथ जा पहुंचा। फिर वहां से उसने अपने घोड़े को १०० फीट नीचे एक खाई में कुदा दिया और फिर देखते ही देखते ऐसा उड़नछू हुआ कि किसी के हाथ नहीं आया। विश्व इतिहास में ऐसा कमाल अपने ढंग का अकेला है।

लोहे फ्रुटिजर नामक एक लड़की स्विट्ज़रलैंड के हमेशा बर्फ से ढके रहने वाले १३,२३४ फीट ऊंचे एल्लेलिन हार्न पर्वत पर आठ घंटे में चढ़ गयी थी, जबकि उसकी उम्र आठ वर्ष की थी।

२७ अप्रैल, १६८६ को वासा डाई हरा चिरो नामक एक जापानी ने क्वोटो (जापान) में लगातार २४ घंटे तक

तीरंदाजी का प्रदर्शन किया था, जिसमें ३९६ फीट दूर के एक लक्ष्य पर १३,०५३ तीर छोड़कर कमाल कर दिखाया था।

जर्मन का मैक्स सिक १८७ पौंड भारी किसी भी व्यक्ति को एक हाथ से ऊपर उठा कर सोलह बार ऊपर-नीचे कर देता था और दूसरे हाथ में शराब का एक भरा गिलास पकड़े रहता था, लेकिन शराब की एक बूंद भी बाहर नहीं गिरती थी। मैक्स स्वयं १४७ पौंड भारी था।

इंग्लैंड की बारह वर्षीय लड़की द्विसियारिये १९४ दिन तक लगातार छींकती रही। जुकाम हो जाने के कारण उसने १५ अक्तूबर १९७९ को छींकना आरंभ किया और २५ अप्रैल १९८० तक बिना रुके छींकती ही रही।

इंग्लैंड की बेक्फील्ड जेल के एक कैदी डेविस गबेर गुडविल ने २८ जून १९७२ से १८ जुलाई १९७३ तक यानि ३८५ दिन तक भूख हड़ताल की।

अमेरिका के मि. पाल बारथल ने २५ फरवरी १९७८ को घुटनों के बल चलकर नौ घंटे में १९०९ किलो मीटर की यात्रा तय की।

— उत्तम इंडस्ट्रीज,
सेक्टर - ४/४०,
बल्लमगढ़ - १२१ ००४

उदासियों को भुला दो। अब मैं तुम्हारे संग हूं, तो तुम्हारे जीवन के सारे जहर को होंठ लगा कर पी जाऊंगी।

वह पत्नी की ओर देखकर प्यार से मुस्कराया। उसकी आंखों में आंसू थे।

आज उसका दिल नहीं चाहता था कि बस पकड़ कर घर जाये। वह चाहता था कि चलता रहे, और पत्नी के साथ लम्बी बातें करता रहे, जो कभी समाप्त होने में न आयें।

उसे रात बहुत सुन्दर प्रतीत हुई, जिसमें नींद थी और रोशनियों का दर्द था, और एक लम्बा सफर था, जिसमें किसी नर्म और ठंडे हाथ के स्पर्श की स्निग्धता थी, और दो उदास आंखें थीं, और दो मुस्कराते हुए होंठ थे, और ब्राऊनिंग की कविताओं जैसी समझ में न आनेवाली बातें थीं, और एलिज़ाबेथ के 'सानैटों' जैसा एक आभास था, जो सब कुछ समझा देता था।.....

वह चलता रहा, चलता रहा।
अन्त में, वह अपने घर के पास पहुंच गया।
छोटे-छोटे घरों वाली बस्ती।
रात काफी बीत चुकी थी।
किसी इक्के-बुक्के घर में अभी भी दिया जल रहा था।
उसके कदम धीमे होते गये।
सामने उसका घर था। अन्धेरा बन्द दरवाजा।
उसके कदम एकाएक बोझल होने लगे।
यह कैसी वीरानी थी। कैसी उदासी। कैसा अकेलापन।

आखिर उसने दरवाजे का ताला खोला और अन्दर जाकर बत्ती जलायी। बत्ती जलने पर भी उसे अन्दर अन्धेरा ही दिखायी दे रहा था। उसमें हिम्मत नहीं थी कि कपड़े उतार कर बदले। आखिर वह बूटों सहित बिस्तर पर पड़ गया और आंखें बन्द कर लीं। एक अरसा हो गया था, वह उस कमरे में अकेला ही रहता आ रहा था। वह अकेलापन उसे निगल भी तो नहीं सकता था। और फिर, आज का यह अकेलापन।

— बी-१९, सन एंड सी,
वरसोवा रोड, बम्बई - ६१.

कहा जाता है कि आधा चुटकुला सुनते ही फ्रांसीसी हंसने लगता है। पूरा चुटकुला सुनने और थोड़ा इंतजार करने के बाद अंगरेज हंसने लगता है। जब कोई जरमन चुटकुला सुनता है तो चुटकुला सुनने के बाद वह रात भर सोचता और अगली सुबह हंसता है। जब कोई अमरीकी चुटकुला सुनता है तो वह मुसकराकर कहता है, 'यह बहुत पुराना चुटकुला है, तुम्हें सुनाना नहीं आया।' बिना चुटकुला समझे एक जापानी हंसने लगता है।

— डॉ. गोपाल प्रसाद 'वंशी'

अजब लोग-गजब लोग

□ अतुल गोस्वामी

गोलकुंडा (भारत) के शासक अब्दुल हसन तानाशाह के दरबार में तारामती नामक एक नर्तकी थी। तारामती प्रतिदिन बादशाह को अपना नृत्य दिखाती थी, लेकिन यह नृत्य आम नृत्यों से हट कर होता था। इस अद्भुत नृत्य की अपनी अलग विशेषता थी।

पहाड़ पर बने शाह के महल से तारामती का निवास करीब आधा मील दूर नीचे पड़ता था। एक मजबूत रस्सा महल से तारामती के निवास तक तान दिया जाता था। इस रस्से पर नाचती हुई तारामती अपने निवास की छत से महल की छत पर पहुंच जाती थी। यह नृत्य कार्य नियमित रूप से १६७२ से १६७७, पांच वर्ष तक चलता रहा।

हरमन नामक सर्कस का एक खिलाड़ी अपना हृदय दाहिनी ओर खिसका लेता था। २१/४ इंच चौड़ी और ३/१६ इंच मोटी चमड़े की पट्टी को वह अपनी छाती फुला कर आसानी से तोड़ देता था।

मिस्र के पिरामिड विश्व के सात आश्चर्यों में से एक हैं, परंतु इससे भी जीता-जागता सशरीर आश्चर्य वहां के निवासी अबू नबी को संभवतः गिने-चुने लोगों ने देखा होगा। इस समय अबू नबी जीवित है या नहीं, लेकिन कभी ४८० फीट ऊंचे इस पिरामिड पर छह मिनट में चढ़ना-उतरना उसके के लिए रोजी-रोटी का जरिया था। इतने कम समय में इतनी ऊंचाई चढ़ना-उतरना क्या किसी जादू के करिश्मे से कम है?

पोटेशियम साइनाइड विश्व का सबसे तेज विष माना जाता है। इसको चखना तो दूर, जुबान पर रखते ही मृत्यु हो जाती है। वैज्ञानिक भी इसके स्वाद का पता लगाने में असमर्थ रहे हैं।

इसी पोटेशियम साइनाइड को कलकत्ता (भारत) के नरसिंह स्वामी ने कई वैज्ञानिकों और चिकित्सकों के समक्ष खाकर उनके होश उड़ा दिये। इस

कपड़े पहना जायेगा। इस किस्म की बुशशर्ट पहन कर किसी के संग इन सड़कों और बाजारों में घूमने की उसकी बहुत बड़ी लालसा थी। अब वह लालसा पूरी होगी। ....और यह खिलौनों का शो-केस था। विभिन्न प्रकार के खिलौने। उसका अपना बचपन यद्यपि खाली था, पर उसके बच्चे का बचपन खिलौनों से भरा हुआ होगा। उसके होठों पर हल्की-सी मुस्कराहट आयी, जिसमें एक हल्की-सी उदासी भी थी। और उसने देखा, उसकी पत्नी के चेहरे पर हल्की-सी लाज थी, जैसे वह कह रही हो कि उसे अभी से बच्चों की पड़ गयी है....। और यह साड़ियों की दुकान थी। वह चाहता था कि जो बुशशर्ट उसने पसन्द की थी, उससे मिलते रंग की साड़ी उसकी पत्नी खरीदे। पर वह कह रही थी कि फिर कभी देखा जायेगा। उसके पास अभी बहुत कपड़े हैं। अभी इतना खर्च करने की क्या जरूरत है। ... कितनी समझदार थी वह! उसे लगा कि वह सभी दुःखों में उसका साथ देगी।

वह स्टोर में से निकल कर फिर सड़क पर आ गया। अब किसी दिन वे कुछ जल्दी ही आयेंगे और वे सभी चीजें खरीदेंगे।

कुछ कदम आगे जाकर वह एक बस-स्टाप पर खड़ा हो गया। उस समय वहां बस पर चढ़ने वाले तीन-चार ही व्यक्ति थे। उनमें एक पति-पत्नी का जोड़ा था — कुछ बड़ी उम्र का। दोनों ने उनकी ओर देखा — पत्नी ने उसकी पत्नी की ओर, पति ने उसकी ओर। उसे विचित्र-सी प्रसन्नता का आभास हुआ। फिर, अकस्मात उसका चेहरा उदास हो गया। कभी-इसी बस-स्टाप पर वह खड़ा हुआ करता था— बस पर चढ़ने के लिए नहीं, बल्कि किसी की प्रतीक्षा में। तोषी को उसने यहां मिलने का समय दिया होता था। वह ठीक समय पर पहुंच जाया करती थी। फिर भी, वह यहां काफी देर पहले से आ जाया करता था। तोषी के आने पर वे एक तरफ को चल पड़ते थे। वह बहुत सुन्दर नहीं थी, बहुत अमीर भी नहीं थी। उसका स्वास्थ्य भी खराब था। डाक्टरों ने तपेदिक का शक डाला हुआ था। पीला-सा, पर चन्दन की तरह दमकता हुआ उसका चेहरा था, और स्याह काली आंखों में गहरी उदासी थी। वह सोचता, यह प्यार क्या चीज है, जो बस हो जाता है और कुछ भी नहीं देखता? उसके एक-दो मित्रों ने कहा था कि वह सोच-समझ कर कदम उठाये। तपेदिक की बीमारी पीढ़ियों तक जाती है। उसे खुद भी इससे खतरा है। पर उसे विश्वास था कि तोषी उसके संग रहेगी, तो ठीक हो जायेगी। उसकी आंखों में की उदासी मिट जायेगी। फिर, तपेदिक का नामो-निशान तक नहीं रहेगा।

यह तीन वर्ष पहले के दिन थे। कभी ऐसे लगता था, जैसे यह कल की बात

हो। आखिर तोषी का यहां आना बन्द हो गया था। वह लगातार कई दिन तक यहां आता रहा था और घंटों उसकी प्रतीक्षा करता रहा था। पर तोषी तो ठीक समय पर पहुंच जाने वाली लड़की थी। वह नहीं ही आयी थी। और फिर, लगभग आठ महीनों के बाद वह इस दुनिया से चल बसी थी। मरते समय उसकी उदास आंखों में अपने माता-पिता के प्रति एक शिकायत थी कि उसकी इस मृत्यु का कारण तपेदिक नहीं, वे खुद हैं।....

इस प्रकार सोचते हुए वह चाह रहा था कि पत्नी को तोषी के बारे में सब कुछ बता दे। वह बुरा नहीं मानेगी, बल्कि सहानुभूति प्रकट करेगी। पर फिर, कुछ सोचकर वह चुप रहा। कुछ दिन और निकल जायें, घनिष्ठता बढ़ जायें, फिर बतायेगा।

बस आयी और चली गयी। वह बस में नहीं चढ़ा। आखिर वह फिर सड़क पर आ गया और उसने पत्नी का हाथ अपने हाथ में लेकर नर्मी से दबाया।

उसकी इच्छा हुई कि आगे जाकर सड़क के बायीं ओर जो पार्क है, वहां कुछ देर के लिए बैठे। एक उदासी थी, जो उसकी आंखों में ही नहीं, उसके सभी अंगों में समा गयी थी— तोषी की आंखों की उदासी।

पार्क में उस समय कोई नहीं था। वास्तव में, वह एक उजड़ा हुआ पार्क था। वहां कोई इक्का-दुक्का व्यक्ति ही आता था। उसने बेंच पर बैठते हुए पत्नी को वह बिजली का खम्भा दिखाया, जिसके नीचे बैठकर वह बी.ए. के अन्तिम वर्ष की पढ़ायी किया करता था। वह जहां रहता था, वहां अभी बिजली नही आयी थी। फिर, आधी-आधी रात तक लैम्प जलाने में तेल बहुत खर्च होता था। वैसे भी, तेल राशनिंग में बहुत कम मिलता था। इसलिए वह यहां पर इस खम्भे के नीचे दरी बिछाकर बैठ जाता था और आधी-आधी रात तक पढ़ता रहता था। इन पिछले वर्षों में भी वह कभी-कभी इस पार्क में आया करता था। यहां बैठकर ब्राऊनिंग और एलिज़ाबेथ की कविताएं पढ़ा करता था। ब्राऊनिंग और एलिज़ाबेथ। एलिजाबेथ ब्राऊनिंग से कई वर्ष बड़ी और हमेशा की रोगिन थी – रात-दिन बिस्तर पर पड़ी रहने वाली। पर यह प्यार क्या चीज होता है, जो बस हो जाता है और कुछ भी नहीं देखता।..... तोषी न मरती, कभी न मरती, अगर उसके माता-पिता मान जाते। कई माता-पिता तो तपेदिक से भी ज़्यादा खतरनाक होते हैं। और आज वे तोषी को याद कर-कर के रोते थे।

उसे लगा, जैसे उसकी वह उदासी उसकी पत्नी ने भांप ली थी। तभी तो उसने उसका हाथ अपने दोनों हाथों में लेकर दबाया था। वे हाथ जैसे कह रहे थे – अब तुम्हें उदास होने की जरूरत नहीं। पिछली सभी तलखियों और

उदासियों को भुला दो। अब मैं तुम्हारे संग हूं, तो तुम्हारे जीवन के सारे जहर को होंठ लगा कर पी जाऊंगी।

वह पत्नी की ओर देखकर प्यार से मुस्कराया। उसकी आंखों में आंसू थे।

आज उसका दिल नहीं चाहता था कि बस पकड़ कर घर जाये। वह चाहता था कि चलता रहे, और पत्नी के साथ लम्बी बातें करता रहे, जो कभी समाप्त होने में न आयें।

उसे रात बहुत सुन्दर प्रतीत हुई, जिसमें नींद थी और रोशनियों का दर्द था, और एक लम्बा सफर था, जिसमें किसी नर्म और ठंडे हाथ के स्पर्श की स्निग्धता थी, और दो उदास आंखें थीं, और दो मुस्कराते हुए होंठ थे, और ब्राऊनिंग की कविताओं जैसी समझ में न आनेवाली बातें थीं, और एलिज़ाबेथ के 'सानैटों' जैसा एक आभास था, जो सब कुछ समझा देता था।.....

वह चलता रहा, चलता रहा।
अन्त में, वह अपने घर के पास पहुंच गया।
छोटे-छोटे घरों वाली बस्ती।
रात काफी बीत चुकी थी।
किसी इक्के-बुक्के घर में अभी भी दिया जल रहा था।
उसके कदम धीमे होते गये।
सामने उसका घर था। अन्धेरा बन्द दरवाजा।
उसके कदम एकाएक बोझल होने लगे।
यह कैसी वीरानी थी। कैसी उदासी। कैसा अकेलापन।

आखिर उसने दरवाजे का ताला खोला और अन्दर जाकर बत्ती जलायी। बत्ती जलने पर भी उसे अन्दर अन्धेरा ही दिखायी दे रहा था। उसमें हिम्मत नहीं थी कि कपड़े उतार कर बदले। आखिर वह बूटों सहित बिस्तर पर पड़ गया और आंखें बन्द कर लीं। एक अरसा हो गया था, वह उस कमरे में अकेला ही रहता आ रहा था। वह अकेलापन उसे निगल भी तो नहीं सकता था। और फिर, आज का यह अकेलापन।

— बी-१९, सन एंड सी,
वरसोवा रोड, बम्बई - ६१.

कहा जाता है कि आधा चुटकुला सुनते ही फ्रांसीसी हंसने लगता है। पूरा चुटकुला सुनने और थोड़ा इंतजार करने के बाद अंगरेज हंसने लगता है। जब कोई जरमन चुटकुला सुनता है तो चुटकुला सुनने के बाद वह रात भर सोचता और अगली सुबह हंसता है। जब कोई अमरीकी चुटकुला सुनता है तो वह मुसकराकर कहता है, 'यह बहुत पुराना चुटकुला है, तुम्हें सुनाना नहीं आया।' बिना चुटकुला समझे एक जापानी हंसने लगता है।

— डॉ. गोपाल 'प्रसाद 'वंशी'

अजब लोग-गजब लोग

□ अतुल गोस्वामी

गोलकुंडा (भारत) के शासक अब्दुल हसन तानाशाह के दरबार में तारामती नामक एक नर्तकी थी। तारामती प्रतिदिन बादशाह को अपना नृत्य दिखाती थी, लेकिन यह नृत्य आम नृत्यों से हट कर होता था। इस अद्भुत नृत्य की अपनी अलग विशेषता थी।

पहाड़ पर बने शाह के महल से तारामती का निवास करीब आधा मील दूर नीचे पड़ता था। एक मजबूत रस्सा महल से तारामती के निवास तक तान दिया जाता था। इस रस्से पर नाचती हुई तारामती अपने निवास की छत से महल की छत पर पहुंच जाती थी। यह नृत्य कार्य नियमित रूप से १६७२ से १६७७, पांच वर्ष तक चलता रहा।

हरमन नामक सर्कस का एक खिलाड़ी अपना हृदय दाहिनी ओर खिसका लेता था। २१/४ इंच चौड़ी और ३/१६ इंच मोटी चमड़े की पट्टी को वह अपनी छाती फुला कर आसानी से तोड़ देता था।

मिस्र के पिरामिड विश्व के सात आश्चर्यों में से एक हैं, परंतु इससे भी जीता-जागता सशरीर आश्चर्य वहां के निवासी अबू नबी को संभवतः गिने-चुने लोगों ने देखा होगा। इस समय अबू नबी जीवित है या नहीं, लेकिन कभी ४८० फीट ऊंचे इस पिरामिड पर छह मिनट में चढ़ना-उतरना उसके के लिए रोजी-रोटी का जरिया था। इतने कम समय में इतनी ऊंचाई चढ़ना-उतरना क्या किसी जादू के करिश्मे से कम है?

पोटेशियम साइनाइड विश्व का सबसे तेज विष माना जाता है। इसको चखना तो दूर, जुबान पर रखते ही मृत्यु हो जाती है। वैज्ञानिक भी इसके स्वाद का पता लगाने में असमर्थ रहे हैं।

इसी पोटेशियम साइनाइड को कलकत्ता (भारत) के नरसिंह स्वामी ने कई वैज्ञानिकों और चिकित्सकों के समक्ष खाकर उनके होश उड़ा दिये। इस

प्रदर्शन को नोबल पुरस्कार विजेता वैज्ञानिक सी.बी. रमन भी देख रहे थे।

नरसिंह स्वामी ने कई प्रकार की तेज शराब पीने के पश्चात पोटेशियम साइनाइड का फांका भी लगा लिया था और बाद में एक कांच की बोतल फोड़कर उसका चूरा भी निगल गये। स्वामी को ऐसा करते देख तमाम उपस्थित लोग एक दूसरे का मुंह देखने लगे ।

इस अद्भुत प्रदर्शन के बाद जब नरसिंह स्वामी का शारीरिक परीक्षण किया गया तो यह देख कर और भी आश्चर्य हुआ कि तेजाब, विष और कांच का चूरा उनके पेट में प्रभावहीन होकर पड़े थे। नरसिंह स्वामी के ऊपर कोई भी प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ा था, बल्कि स्वामी एकदम सामान्य स्थिति में थे।

जर्मन की एक सर्कस कंपनी से संबद्ध कुमारी हेलियट अपनी ताकत का अहसास किसी भी हालत में कम नहीं होने देना चाहती थी। हेलियट जब भी बाहर निकलती अपने कंधे पर आठ मन भारी जीवित सिंह को बैठाये रहती।

मैक्लेन वर्ग (जर्मनी) का १८वीं शताब्दी का प्रसिद्ध भारोत्तोलक एडोल्फ बानल्युटजो चांदी के डालर के आकार-वाले चांदी के सिक्कों को बीस फुट की दूरी से बलूत के पेड़ पर इतनी जोर से फेंक कर मारता था कि उन्हें निकालने के लिए छेनी की सहायता लेनी पड़ती थी।

माउंट गॅम्बियार (आस्ट्रेलिया) के एडैम लिडसे जॉर्डन ने अपने घोड़े को ४१/२ फीट ऊंची बाड़ के ऊपर से एक इतनी पतली कगार पर कुदा दिया कि घोड़े को तिरछा होना पड़ा अन्यथा वह तीन सौ फीट ऊंची एक खड़ी चट्टान से नीचे जा गिरता। घोड़ा शांतिपूर्वक तब तक खड़ा रहा जब तक कि दर्शकों ने बाड़ को तोड़ नहीं दिया। इतिहास में घुड़सवारी का सबसे आश्चर्यजनक यह करतब जॉर्डन ने १८६० में दर्शकों को दिखाया था।

नन वर्ग (जर्मनी) के एपिलेन वान गैलिजन को फांसी देने से पहले उसकी अंतिम इच्छा के रूप में अपने खास घोड़े पर चढ़ने की अनुमति दे दी गयी तो वह सैनिकों की एक पूरी रेजिमेंट के बीच से होकर नगर के परकोटे के ऊपर घोड़े के साथ जा पहुंचा। फिर वहां से उसने अपने घोड़े को १०० फीट नीचे एक खाई में कुदा दिया और फिर देखते ही देखते ऐसा उड़नछू हुआ कि किसी के हाथ नहीं आया। विश्व इतिहास में ऐसा कमाल अपने ढंग का अकेला है।

लोहे फ्रुटिजर नामक एक लड़की स्विट्जरलैंड के हमेशा बर्फ से ढके रहने वाले १३,२३४ फीट ऊंचे एल्लेलिन हार्न पर्वत पर आठ घंटे में चढ़ गयी थी, जबकि उसकी उम्र आठ वर्ष की थी।

२७ अप्रैल, १६८६ को वासा डाई हरा चिरो नामक एक जापानी ने क्वोटो (जापान) में लगातार २४ घंटे तक

तीरंदाजी का प्रदर्शन किया था जिसमें ३९६ फीट दूर के एक लक्ष्य पर १३,०५३ तीर छोड़कर कमाल कर दिखाया था।

जर्मन का मैक्स सिक १८७ पौंड भारी किसी भी व्यक्ति को एक हाथ से ऊपर उठा कर सोलह बार ऊपर-नीचे कर देता था और दूसरे हाथ में शराब का एक भरा गिलास पकड़े रहता था, लेकिन शराब की एक बूंद भी बाहर नहीं गिरती थी। मैक्स स्वयं १४७ पौंड भारी था।

इंग्लैंड की बारह वर्षीय लड़की ड्विसियारिये १९४ दिन तक लगातार छींकती रही। जुकाम हो जाने के कारण उसने १५ अक्तूबर १९७९ को छींकना आरंभ किया और २५ अप्रैल १९८० तक बिना रुके छींकती ही रही।

इंग्लैंड की बेक्फील्ड जेल के एक कैदी डेविस गबेर गुडविल ने २८ जून १९७२ से १८ जुलाई १९७३ तक यानि ३८५ दिन तक भूख हड़ताल की।

अमेरिका के मि. पाल बारथल ने २५ फरवरी १९७८ को घुटनों के बल चलकर नौ घंटे में १९०९ किलो मीटर की यात्रा तय की।

— उत्तम इंडस्ट्रीज,
सेक्टर - ४/४०,
बल्लमगढ़ - १२१ ००४

अब दांतों से भी सुना जा सकता है

□ गणेशकुमार पाठक

यह बात सुनने में बड़ी ही विचित्र लगती है कि भला दांतों से भी सुना जा सकता है, क्योंकि सुनने का कार्य तो कान करते हैं। किंतु अब वैज्ञानिकों ने एक ऐसी तकनीक का आविष्कार कर लिया है कि उसकी सहायता से कोई भी व्यक्ति अपने दांतों से भी सुन सकता है। इस आविष्कार की उपयोगिता यहां तक है कि यदि बुढ़ापे में हमारे दांत न हों तो कृत्रिम दांत लगाकर भी उससे सुना जा सकता है।

संयुक्त राज्य अमेरिका के दो वैज्ञानिक डॉ. अर्लकोलार्ड एवं डा. फैड एलव ने दांतों से सुनने की तकनीकी का आविष्कार किया है। दांतों से सुनने के लिए अत्यंत सूक्ष्म वायरलेस उपकरण मुख-ऊतकों के साथ कार्य करना प्रारंभ कर देते हैं। इन वायरलेसों का संयोजन जेबी अथवा प्रेषी-ग्राही द्वारा किया जाता है। इस प्रक्रिया में विशेष तरंगों पर प्रसारित संकेत दांत में लगे विद्युत चुंबकीय ट्रांसड्यूसर में गति आते ही रेडियो संकेत स्पंदन में परिवर्तित हो जाते हैं एवं दांत मसूड़ों के माध्यम से मस्तिष्क में श्रवणेंद्रिय को संचालित करने वाले भाग में पहुंच जाते हैं तो स्वतः ध्वनि में परिवर्तित हो जाते हैं।

इस तकनीकी के माध्यम से अत्यंत बहरे एवं कम सुनने वाले व्यक्तियों को भी फुसफुसाहट तक सुनायी दे सकती है। इस प्रकार यह आविष्कार बहरे एवं ऊंचे सुनने वाले लोगों के लिए वरदान सिद्ध हुआ है।

— प्रतिभा प्रकाशन,
निकट वैशाली होटल,
बलिया - २७७ ००१, उ.प्र.

प्रतिशोध का भय

□ साधना श्रीवास्तव

आगरा के किनारी बाजार में 'रत्नदीप' नर्सिंग होम का बड़ा-सा बोर्ड लगा हुआ है, जिसके नीचे 'निर्धन व असहायों को दवा व सेवा निःशुल्क' साफ शब्दों में अंकित है। नर्सिंग होम के अन्दर इमरजेन्सी वार्ड में डॉ. कौशिक व कृति एक दस-बारह वर्षीय गंभीर रूप से घायल बालक का उपचार करने एवं उसे होश में लाने के लिए बराबर प्रयासरत हैं। उनके तीन दिन के अथक प्रयासोपरान्त बालक चेतन अवस्था में आ सका। उसके होश में आ जाने से

उनके मन को भारी संतोष मिला। अन्य डाक्टरों को उसके प्रति कुछ आवश्यक हिदायत देकर पति-पत्नी नर्सिंग होम से अपने बंगले पर आ गये।

घर आकर डॉ. कौशिक ने स्नानादि किया और कृति के साथ नाश्ता लेकर आराम करने के विचार से पलंग पर पड़ गये। गत तीन दिनों से बच्चे की गम्भीर अवस्था के कारण उन्हें सोते-जागते नर्सिंग होम में ही रुकना पड़ा था। वह तो पांच मिनट के अन्दर ही गहरी नींद में सो गये, लेकिन भारी थकान के बावजूद भी कृति की आंखें सोने को तो दूर रहीं, पलक झपकाने तक का नाम नहीं ले रही थीं। तीन दिन पूर्व का वह दृश्य, जब अमर अपने बुरी तरह से घायल बच्चे को लेकर उसके दवाखाना में आया था – आंखों के सामने घूमता रहा।

अमर ने उसे दस-बारह वर्ष पूर्व का अतीत याद दिला दिया था, जो कुछ भी उसने किया उसके लिए उसे कभी शिकायत न रही, पर इतनी आकांक्षा उसकी अवश्य थी कि वह अपनी विवशता उसको बता कर उससे दो अक्षरों की माफी तो मांग लेता। कृति की आंखों के समक्ष विगत की सभी बातें व घटनायें बिल्कुल तरोताजा होकर घूमने लगीं– जैसे सब कल की ही बात हो– और वह उसी में समाहित होती गयी।

अमर के भारत आने की खबर कृति को उसके घरवालों से ही मिली थी। पृथक रूप से पत्र लिखकर उसे सूचित करने का न उसने कष्ट किया और न ही जरूरत समझी। कृति को समझ में नहीं आ रहा था कि अमर ने ऐसा क्यों किया? फिर भी उसके आने की सूचना मिलते ही वह अपने ताऊजी के साथ उसे रिसीव करने दिल्ली पहुंच गयी।

ठीक समय से हवाई जहाज ने धरती का स्पर्श किया। यात्रियों को उतरते देख कृति की उत्सुक आंखें अमर के दीदार को बेचैन हो उठीं। हाथ ऊपर को हिलाता वह उतरा भी पर पहले अपने पिताजी, बड़े भाई व मां से मिला, तत्पश्चात् उससे व ताऊजी से। उसके ठीक पीछे एक विदेशी लड़की गोद में आठ-दस माह का बच्चा लेकर उतरी। अमर ने सबसे उसका परिचय कराया' – 'यह मेरी पत्नी लिजा और बेटा काकुल।'

कृति जैसे आसमान से गिरी – सहसा कानों पर विश्वास न हुआ, पर अविश्वास का भी प्रश्न कहां था! उसे चक्कर-सा आने लगा। घड़ी भर में उसकी समझ में आ गया कि अमर ने पत्र लिखने में क्यों ढील डाली – क्यों उसकी तरफ से उदास हो गया? उसकी उलझन को भांप कर उसके ताऊजी ने उससे टैक्सी पर बैठने को कहा और सीधे रेलवे स्टेशन आ गये लखनऊ की

ट्रेन पकड़ने के लिए। कृति के साथ उसके ताऊजी को भी आघात लगा था। बचपन के साथी अमर के इन्जीनियर होते ही डाक्टरी पढ़ रही कृति की शादी उसके साथ तै कर दी गयी थी, पर अचानक अमर के विदेश जाने के कारण विवाह रोकना पड़ा। कृति का पासपोर्ट नहीं बन सका अतः वह न जा सकी। बहरहाल यह तय किया गया कि अमर अकेला चला जाये, वापस आते ही दोनों की शादी हो जायेगी, पर अमर ने वहां विदेशी लड़की से शादी कर ली— किसी को खबर भी नहीं दी।

कृति मानसिक रूप से सन्तुलन खोती जा रही थी — उसके साथ सगाई के बाद भी अमर ने ऐसा क्यों किया — जबकि वह उसकी प्रतीक्षा में सुबह से शाम और शाम से सुबह करके बेसब्री से दिन काटती रही। अचानक सीढ़ियों से उतरती कृति का पैर केले के छिलके पर पड़ गया और १५-२० सीढ़ियों से ढुलकती वह सीधे नीचे प्लेटफार्म पर आ गिरी।

अत्यन्त गम्भीर अवस्था में उसे अस्पताल में भरती किया गया। मस्तिष्क में गहरी चोट आ जाने के कारण लगभग एक माह तक वह किसी को पहचानने में असमर्थ रही। पर धीरे-धीरे उपचार के साथ स्थिति नार्मल होती गयी। दाहिने पैर की हड्डी दो जगहों से टूट चुकी थी, जो ठीक हो गयी, लेकिन बुरी तरह जख्मी बायां हाथ जहर फैलने के भय के कारण काटना पड़ा— कृत्रिम हाथ के लिए तुरन्त आर्डर भेज दिया गया।

पूरे दो माह कृति को अस्पताल में भरती रहना पड़ा। घर आने पर भी डाक्टर ने १५ दिन और आराम करने की सलाह दी। लिहाजा ढाई माह के बाद ही वह अस्पताल में ड्यूटी देने योग्य हो सकी। अपने को अत्यधिक व्यस्त रखने पर भी उसे अपने एक हाथ के न रहने का एहसास बार-बार व्यथित कर देता। अस्पताल के इन्चार्ज डॉ. प्रकाश जोशी ने उसे अधिकतर टेबुल वर्क के साथ हल्के केस देखने की जिम्मेदारी सौंप दी थी। कृति भी सन्तुष्ट थी।

अस्पताल से आकर वह चुपचाप अपने कमरे में पलंग पर पड़ जाती। घर में अधिक लोग नहीं थे, पर जितने थे उनसे भी वह आवश्यकता से अधिक बातें नहीं करती। ढाई वर्ष की प्रतीक्षा के बाद उसे जिस नतीजे को झेलना पड़ा, उसके लिए वह कतई तैयार न थी। व्यथित मन बार- बार अतीत में भटक जाता। बचपन के साथी अमर के साथ हुई सगाई— उसके वायदे— उसका विदेश जाना— कुछ दिनों तक पत्रों का आदान-प्रदान और फिर सब कुछ ठप्प, इसी बीच अस्पताल के इन्चार्ज डॉ. कौशिक चन्द्रा के साथ उसको लेकर अफवाहों के बाजार का गर्म हो जाना

और हिम्मत करके उसका डॉ कौशिक के पास जाना और पूछना।

वह समझ नहीं पा रही थी कि आखिर ऐसी खुराफात की बात सबके दिमाग में आयी क्यों? उसने तो डॉ. कौशिक को अस्पताल के अधीक्षक और अपने बॉस के अतिरिक्त किसी और दृष्टि से कभी देखा ही नहीं– सोचते-सोचते वह डॉ. कौशिक के कमरे के बाहर बरामदे में पहुंच गयी। दरवाजे पर उसने थाप दी। अन्दर से कौशिक की आवाज आयी– 'आइये'।

कृति अन्दर आ गयी– 'गुड मार्निंग, सर।'

'गुड मार्निंग' – डॉ. कौशिक ने सर उठा कर कृति की तरफ देखते हुए कहा। आज गुलाबी सलवार-कुर्ते पर हल्के गुलाबी मेकअप ने उसके सौंदर्य में चार-चांद लगा दिये थे। घड़ी भर को डॉ. कौशिक उसको अपलक देखते ही रह गये कि स्वयं झेंप कर बोले– 'ओह बैठ जाइये,'

'सर, आप नाराज मत होइयेगा। आज आप से कुछ पूछना चाहती हूं,' झिझकती हुई कृति ने कहा, 'क्या अस्पताल में फैली हुई अफवाह से आप भिज्ञ नहीं हैं?'

'डाक्टर जब स्वयं मरीज बन जाये तो बाहर की खबर कहां तक रख सकता है।' कृति के कहने का आशय समझते हुए डॉ. कौशिक ने कहा। उनके चेहरे पर हल्की मुस्कराहट तैर गयी।

'मैं कुछ समझी नहीं, सर।'

'मिस कृति, बुरा मत मानियेगा, मैं अपने दिल की बात साफ-साफ आपको बता दूं– आप मुझे बहुत अच्छी लगती हैं।'

कृति का दिल जोर-जोर से धड़कने लगा। चेहरा लाल पड़ गया और उसे लगा जैसे हाथ-पांव ठंडे पड़ जायेंगे। बड़ी मुश्किल से वह कह सकी– 'सर, आप को मालूम होना चाहिये कि मेरी सगाई हो चुकी है और मेरे होने वाले पति के विदेश से लौटते ही हम परिणय सूत्र में बंध जायेंगे।'

डॉ. कौशिक को अपने कानों पर विश्वास न हुआ – क्योंकि अभी तक उन्हें उसकी सगाई से सम्बन्धित किसी बात की जानकारी नहीं थी, पर अब जबकि कृति ने सब कुछ साफ-साफ कह दिया तब अविश्वास का प्रश्न ही कहां था। उन्हें ऐसा प्रतीत हुआ जैसे उनके दिल के प्रणय-मंदिर में स्थापित देवी को किसी ने छीनकर घड़ी भर में उनकी जवां उमंगों का स्वप्न-महल धराशायी कर दिया है। फिर भी अपने पर पूर्ण नियंत्रण रखते हुए उन्होंने उदास, किंतु नियंत्रित शब्दों में कहा– 'मिस कृति, आप निश्चिन्त रहिये, मेरे साथ आपका नाम जोड़कर कोई आपको बदनाम करने की हिम्मत नहीं कर सकता है।'

'धन्यवाद' कह कर कृति सिर झुकाये

आहिस्ता-आहिस्ता उनके कमरे से बाहर हो गयी।

अस्पताल की ड्यूटी पूरी कर संध्या समय कृति घर आयी तो सिर में भारी दर्द हो रहा था, अतः चुपचाप अपने कमरे में पड़ गयी। मां ने चाय देते हुए स्नेह से कहा— 'सिर में दर्द है क्या, बेटी। दबा दूं।'

कृति अपने को इस समय बिल्कुल अकेली रखना चाहती थी, अतः बोली— 'नहीं मां, कुछ थक गयी हूं। थोड़ी देर चुपचाप लेटी रहने से आराम मिल जायेगा।' 'ठीक है', कहती हुई वह कमरे का दरवाजा भेड़ कर बाहर निकल गयी।

कृति सोचती रही— अभी तक अस्पताल में फैली अफवाह को वह भूठा समभती रही, पर आज डॉ. कौशिक से बात करके सत्य की जानकारी हो गयी, आठ माह पूर्व वह इस अस्पताल में आयी थी, तब से लेकर आज तक की सभी घटनायें चलचित्र की भांति उसकी आंखों के सामने घूमती गयी....

अस्पताल के उप-अधीक्षक डॉ. शरद जोशी अक्सर उसकी तथा रेखा टंडन की बारी-बारी करके तीन-चार दिन की लगातार नाइट ड्यूटी लगा देते थे। ऐसी ही एक ड्यूटी के तीन दिन पूर्ण कर लेने पर डॉ. कौशिक ने उसे बुलवाया— 'मिस कृति, क्या आज भी आपकी नाइट ड्यूटी है ?'

'जी, सर,'

'मैंने आज की आपकी ड्यूटी डॉ. नरेश को करने के लिए कह दिया है। लगातार तीन-चार रात एक साथ जागते-जागते आप अस्वस्थ भी हो सकती हैं।' डॉ. कौशिक इस तरह का फेर बदल कई बार कर चुके थे, वह अस्पताल के प्रति अपने कर्तव्य को अच्छी तरह समभते थे और जहां भी उन्हें अनुचित रवैया दिखता उसे वह तुरन्त सुधारते।

'धन्यवाद' कह कर कृति ने कृतज्ञ नेत्रों से उनकी (डॉ. कौशिक की) तरफ देखा, आकर्षक व्यक्तित्व के हकदार डॉ. कौशिक उसे दिल से भी अच्छे लगे।

* * *

छः मई को उनका जन्म दिन पड़ता था। सभी डाक्टरों को दावत दी थी उन्होंने। जूनियर डाक्टर विशेष रूप से आमंत्रित किये थे। शोर-शराबे के बीच केक काटा गया। दावत के बाद डॉ. कौशिक ने सबको परफ्यूम की एक-एक शीशी बतौर जन्म दिन का तोहफा अपनी तरफ से भेंट किया। उसे पैकेट पकड़ाते समय उनका हाथ उसके हाथों से छू गया था। उसे तो कुछ विशेष महसूस नहीं हुआ था, पर कौशिक ने आंखों में कुछ अजीब भाव भर कर उसकी तरफ देखा था— घड़ी भर देखते ही रह गये थे— जैसे कुछ

कहना चाहते हों, वह पैकेट लेकर परे हट गयी थी। परफ्यूम तो उसने इस्तेमाल कर डाला, पर खाली शीशी आज भी उसके ड्रेसिंग टेबुल पर पड़ी है।

वह दिन भी उसकी स्मृति में तरोताजा हो आया, जब एक सीरियस केस को बहुत प्रयास के बाद भी वह बचा न सकी थी। दुःख और पश्चाताप में डूबी हुई वह एक तरफ बैठी थी कि डॉ. कौशिक आ गये थे। आंख उठाकर उनकी तरफ देखने का साहस वह न कर सकी तो उन्होंने स्वयं कंधे पर धीरे से हाथ रख कर पूछा— 'क्या बात है, मिस कृति, तबियत तो ठीक है?'

'सर वह केस—' कृति आगे बोल न सकी, उसका गला भर आया। कौशिक समझ गये— उसे समझाते हुए बोले— 'वह नाजुक केस था ही। आपको इस कदर परेशान होने की जरूरत नहीं है। हम सबने भरसक पूरा प्रयास किया, पर जब ऊपर वाले की इच्छा नहीं थी तो किया क्या जा सकता है! उठिये जाइये मुंह-हाथ धोइये मन ठीक होगा।'

उसने पलक उठा कर कौशिक की तरफ देखा— पर उनकी आंखों में तैर रहे अपने प्रति जज्बातों को वह समझ न सकी थी। हां, स्वयं उसके दिल में उनके प्रति एक और भाव उभरा था— ऐसे नेक व हमदर्द डॉ. कम मिलेंगे। और वह चुपचाप मुंह धोने वाश-बेसिन की तरफ बढ़ गयी थी।

* * *

वह किसी और की अमानत है— जानकर कौशिक के मन को भारी आघात पहुंचा था। साथ ही में अस्पताल में हर पल उसे देखते हुए उससे दूर रहना भी उन्हें अपने लिए नामुमकिन-सा प्रतीत हुआ। लिहाजा अपनी पीड़ा कम करने के उद्देश्य से उन्होंने प्रयास करके अपना स्थानान्तरण आगरा के लिए करा लिया। एक नेक इन्चार्ज डॉक्टर के अचानक तबादले से सभी को आश्चर्य और दुख हुआ। उनकी फेयरवेल-पार्टी में सभी डाक्टर भरे दिल से सम्मिलित हुए। सभी ने कुछ-न-कुछ उपहार भी उन्हें भेंट किये..... जैसे रिस्टवाच, ब्रीफकेस अथवा सूट का कपड़ा आदि। पर कृति ने अपने हाथ से बनायी कश्मीर के डल झील की एक मनमोहक प्राकृतिक सीनरी भेंट की। उसका तोहफा लेते हुए डॉ. कौशिक ने धीरे से कहा था— 'मिस कृति, आज हम अपने दिल में आपकी यादों का समुद्र लेकर विदा हो रहे हैं। पर याद रखियेगा— आप जब भी हमें दिल से याद करेंगी— आपका पैगाम हम तक जरूर पहुंच जायेगा,' सुन कर उसका दिल भर आया था।

सबके कीमती उपहारों में कौशिक को कृति का उपहार ही सबसे अमूल्य व प्यारा लगा— जिसको देखते-देखते वह

अनायास डल झील के मनोरम वाता-वरण में अपने व कृति को ढूंढ़ने लगते।

तब से फिर उसे कौशिक की कोई खबर न मिल सकी। उसे कभी उनके विषय में कुछ जानने की कोई विशेष उत्सुकता भी न रही। यह जानते हुए भी कि वह उससे बेपनाह मुहब्बत करते हैं– उसने उन्हें कभी किसी प्रकार की लिफ्ट नहीं दी– वह अपने मंगेतर अमर के प्रति पूरी तरह से वफादार रहना चाहती थी।

अब जब अमर ने उसके साथ विश्वासघात किया, तब उसका टूटा उदास दिल अनायास कौशिक की यादों के झुरमुट में खो गया। उसने उठ कर ड्रेसिंग टेबुल से उसकी दी हुई परफ्यूम की खाली शीशी उठायी। बहुत देर तक वह उस शीशी को ऐसे घूरती रही जैसे कोई अजूबा चीज देख रही हो। दो-ढाई वर्ष बाद उसे उस खाली सूखी पड़ी शीशी से कौशिक की मुहब्बत की खुशबू आ रही थी– उसके दिल ने स्वीकारा– सचमुच कौशिक-सा प्यार उसे किसी और से नहीं मिल सकता। अचानक मां की आवाज उसके कानों में पड़ी– 'देख तो कृति, कौन आया है?'

'होगा कोई....' सोच कर वह चुपचाप बिना जवाब दिये पड़ी रही। पर मां की दुबारा आवाज ने उसे चौंका दिया– 'कृति, आ देख तो आगरा से डॉ. कौशिक आये हुए हैं।'

सहसा उसे विश्वास नहीं हुआ– पर झांक कर उसने देखा मां की बात सच थी। उसे स्मरण में आया– फेयरवेल पार्टी के दिन उन्होंने कहा था –'मिस कृति, जब भी आप हमें दिल से याद करेंगी आपका पैगाम हम तक जरूर पहुंच जायेगा' तो क्या उसके दिल की आवाज उन्हें सचमुच सुनायी पड़ गयी – सोचती हुई कृति बाथरूम में घुस गयी और फ्रेश होकर धीरे-धीरे ड्राइंग रूम की तरफ बढ़ी। सामने ही सोफा पर वह बैठे थे। उन्हें नमस्कार कर वह एक तरफ खड़ी हो गयी।

कौशिक मुस्करा कर बोले– 'अब मैं आप का बॉस नही हूं, बैठ जाइये' कृति सामने सोफे पर बैठ गयी तो मां ने वहां रुकना उचित न समझा, अतः चाय लाने के बहाने अन्दर चली गयी।

'अब तो आप बिल्कुल स्वस्थ हैं।'

'जी।'

'आपके साथ हुए हादसे की खबर मुझे बहुत देर से मिली– सुन कर कैसा लगा– बयान करने के लिए मेरे पास अल्फाज नहीं हैं।'

'सर' कृति ने पलक उठा कर कौशिक की तरफ देखा और भारी आवाज में बोली– 'मैं कम-से-कम आप की दृष्टि में तो सहानुभूति की अधिकारिणी नहीं हूं।'

'ऐसा कहने का हक आपको किसने दिया?' कहते हुए कौशिक अपनी जगह

से उठकर कृति की बगल में बिल्कुल करीब बैठ गये और उसका हाथ अपने हाथों में लेकर बोझिल आवाज में पुनः बोले– 'मैं जानता हूं अब तक तुमने दिन-रात आंसू बहाये होंगे और निश्चय तुम्हारे आंसुओं ने तुमको मेरी पीड़ा का भी बोध करा दिया होगा, पर अब मैं तुम्हारी और अपनी मुस्कराहट वापस लौटाने आया हूं।'

कृति सहम सी गयी– उसको विश्वास नहीं हुआ कि जिसको उसने दो टूक जवाब दे दिया था, गत ढाई-तीन वर्ष की अवधि में जिसकी कोई खबर न जाननी चाही, वह उसको इस विकलांग अवस्था में अपनाने को तैयार है, पर अब वह ऐसा नहीं होने देगी– सोचती हुई कृति ने धीरे से अपना हाथ खींच कर रूखी आवाज में कहा–'मैंने पहले हालातवश आपका दिल तोड़ा था और आज भी परिस्थितियोंवश विवश हूं।'

'पर क्यों, कृति, ऐसा क्यो? उसके अर्न्तमन में उठी विवशता के कारण से अनभिज्ञ कौशिक ने दुखी होकर पूछा।

कृति ने सोचा– शायद उन्हें मेरे हाथ के बारे में जानकारी नहीं है अन्यथा हमें अपनाने की बात कभी न करते। अतः स्पष्ट पर उदास आवाज में बोली– 'आपको पता होना चाहिये कि मेरा हाथ....' बीच में ही उसकी बात काट कर कौशिक बोले– 'मुझे सब पता है कृति, पर सच्चा प्रेम अपने महबूब की कमियां नहीं देखता, फिर हमें एक, दूसरे के दुःख-सुख को बांट कर ही तो चलना होगा।'

कृति ने डबडबाई आंखों से कौशिक की तरफ देखा– उसके अन्तर्मन ने स्वीकार किया– सचमुच वह इन्सान से आगे कुछ और हैं।

* * *

जीवन आहिस्ता-आहिस्ता अपने सही ढर्रे से सरकता रहा। कृति के पिछले जीवन की कड़ुवाहट को कौशिक के साथ की मिठास ने दूर कर दिया। वह दो प्यारे-प्यारे बच्चों की मां बन गयी। लगभग बारह वर्षों के बाद डॉ. कौशिक और क़ृति ने सरकारी नौकरी से इस्तीफा देकर अपने बच्चों के नाम पर अपना निजी नर्सिंग होम 'रत्नदीप' खोल लिया। उनकी आकांक्षानुसार केवल पैसेवालों और सक्षम लोगों से ही फीस और दवा का पैसा लिया जाता, निर्धन व विवश लोगों को दवा, शैया व सेवा मुफ्त्त उपलब्ध की जाती। डॉ. दम्पत्ति को इस नेक काम से निहायत संतोष प्राप्त होता।

एक दिन अपरान्ह लगभग चार बजे जब डॉ. कौशिक आराम कर रहे थे, फोन की घंटी खनखना पड़ी। 'हैलो' उन्होंने रिसीवर उठाया।

'सर, मैं डॉ. अजय बोल रहा हूं। दस-बारह वर्षीय एक बच्चे के ऐक्सीडैन्ट का गम्भीर केस आ गया है, तुरन्त

आने की कृपा करें।'

'ठीक है, मैं पहुंच रहा हूं,' कौशिक ने कहा और आनन-फानन में कपड़े पहन नर्सिंग होम में पहुंच गये। कृति भी साथ में थी।

बच्चे को आकस्मिक कक्ष में रखा गया था। बाहर उसके पिता खड़े थे। डॉ. कौशिक को आया देखकर वह हाथ जोड़कर गिड़गिड़ाये— 'डाक्टर साहब, मेरे बच्चे को बचा लीजिये।'

'घबराइये मत, धैर्य रखिये,' कह कर वह तेजी से इमरजेन्सी वार्ड में घुस गये। उनके पीछे चल रही कृति नें घड़ी भर रुककर उस आदमी को देखा, अभी जो उसके पति के समक्ष गिड़गिड़ाया था। क्षण भर के लिए दोनों की आंखें चार हुई, फिर वह भी इमरजेन्सी वार्ड में दाखिल हो गयी।

बच्चे की हालत काफी चिन्ताजनक थी। हाथ-पैर व शरीर के अन्य भागों में चोट व फ्रैक्चर था। सिर में गम्भीर चोट के कारण तीन दिन तक वह अचेत रहा, परन्तु डॉ. कौशिक ने धैर्य नहीं छोड़ा और निरन्तर प्रयासरत उचित उपचार करते रहे। उनके अथक प्रयास व ईश्वर की कृपा से चौथे दिन बच्चे को होश आ गया।

* * *

दोपहर के भोजन के लिए आया की आवाज से कृति की तंद्रा टूटी। तीन-चार घंटे पूर्णरूप से वह अतीत में खोयी बिखरी रही कि समय का अंदाजा ही नहीं लगा, फिर उठ कर उसने पति को जगाया और हाथ मुंह-धोकर भोजन करने बैठ गये।

* * *

अमर ने एक दृष्टि में ही कृति को पहचान लिया था— पहचानने के साथ ही उसका मन भावी अमंगल की आशंका से कांप उठा। उसने सोचा— यदि कृति ने उसे पहचान लिया होगा तो निश्चय ही प्रतिशोध के लिए हाथ में आया इतना अच्छा अवसर खोने न देगी— गम्भीर रूप से घायल बच्चे की जीवन लीला समाप्त करने में न अधिक समय की जरूरत और न कहीं शक की गुंजाइश।

पर कृति इस प्राइवेट अस्पताल में कैसे? वह समझ न सका। यदि उसे जरा भी पूर्वाभास होता कि इस अस्पताल में वह हो सकती है तो वह घायल काकुल को वहां कतई न लाता। लेकिन अब तो हाथ से तीर निकल चुका था— उसके बेटे का जीवन भगवान के बाद कृति के ही हाथों में है। यह भी कैसी विडम्बना कि वह परिवार सहित आगरा घूमने आया था और दुर्भाग्यवश इतनी हृदय विदारक दुर्घटना का शिकार हो गया।

उसने अपने आप को धिक्कारा— स्वयं के प्रति मन ग्लानि व नफरत से भर उठा। कितना भारी विश्वासघात किया

उसने कृति के साथ। बचपन से ही साथ-साथ खेलते, रहने व पढ़ने के कारण उसके मन में एक दूसरे के प्रति चाहत के अंकुर पनप उठना स्वाभाविक था। युवा होने पर उनकी इच्छानुसार दोनों की सगाई भी कर दी गयी। जीवन भर साथ निभाने के वायदे के साथ वह कृति से विदा लेकर तीन वर्ष के लिए विदेश गया। पर वहां विदेशी हवा ने उसे अपने वेग में ऐसा बहा लिया कि वह कृति का प्यार और उसके साथ सगाई की बात बिल्कुल ही भुला कर लिजा का हो बैठा। इतना ही नहीं, स्वदेश लौटने पर उससे दो अक्षरों की माफी मांगना भी उसके लिए दुश्वार हो गया — उसके टूटे दिल का हाले-दर्द भी पूछने नहीं गया। आज उसी कृति के हाथ में उसके घायल बच्चे का केस पहुंच चुका है। यदि वह उससे इस रूप में प्रतिशोध ले ले तो आश्चर्य की गुंजाइश कहां है? पर क्या नारी इतनी पाषाण हृदय हो सकती है कि अपने प्यार का प्रतिशोध निर्दोष बच्चे के प्राणों से ले?

अमर ने निश्चय किया— अब वह अपने को कृति के सामने पड़ने नहीं देगा— हो सकता है उसने उसे जल्दबाजी में पहचाना न हो। पर जब तक बच्चे को होश नहीं आया था, उसके मन में वही विकृत आशंकायें उठती रहीं। चौथे दिन उसके होश में आने पर ही उसके भयग्रस्त मन का भय कुछ हल्का पड़ा।

कृति ने अमर को पहचाना न हो, ऐसी बात नहीं थी, पर कुछ सोच कर वह उसके सामने पड़ने से वह अपने को बचाती रही।

* * *

लगभग डेढ़ माह लग गया बच्चे को पूर्ण रूप से स्वस्थ होने में। आज उसके रिलीव होने का दिन था। राउन्ड लेते हुए जब डॉक्टर कौशिक एवं कृति अन्य डाक्टरों के साथ उसके वार्ड में पहुंचे तो उसके जाने की तैयारी पूरी हो चुकी थी। कौशिक को देखकर काकुल ने मुस्कराकर कहा— 'अंकल, आप कितने अच्छे हैं, मुझे बिल्कुल ठीक कर दिया। मेरे घर आइये, अंकल।'

'जरूर आऊंगा, बेटे,' पुचकार कर कहा कौशिक ने। कृति ने भी आगे बढ़कर उसे प्यार किया।

'डाक्टर साहब, मैं आपका एहसान कई जन्मों तक नहीं भूल सकूंगा,' अमर ने कृतज्ञता व्यक्त की और तभी उसकी दृष्टि कौशिक की बगल में खड़ी कृति पर टिक गयी— उसके नर्सिंग होम में होने के अपेक्षित अनुमान से भिन्न होने पर भी अमर ने कृत्रिम आश्चर्य व्यक्त किया—

'डाक्टर कृति— आप?'

'हां, यह हमारा हीं नर्सिंग होम है और डाक्टर साहब मेरे पति हैं।'

'पर आप किसी दिन दिखलाई नहीं

पड़ीं?'

'हां, मैं जानबूझ कर आपके सामने पड़ने से अपने को बचाती रही, इसका भी कारण था— बच्चे की हालत चिन्ताजनक थी— मुझे उसके साथ देखकर निश्चय ही आपको गलतफहमी हो सकती थी। भगवान न करे, बच्चे को कुछ हो जाता तो आप यही समझते कि कृति ने प्यार के साथ हुए विश्वासघात का प्रतिशोध ले लिया। पर मैं इतनी गयी-गुजरी नहीं अमर, कि निर्दोष बच्चे के जीवन से खेलने की बात भी मेरे मन-मस्तिष्क में आती। ईश्वर जानता है कि डाक्टर कौशिक जैसा पति पाकर मुझे तुमसे भी कोई शिकायत न रही— देखो मुझ जैसी एक हाथ की विकलांग नारी को कौशिक ने अपनाया है।'

'मुझे तुम्हारा ही बच्चा क्या, अमर, दुनिया के सभी बच्चे अपने बच्चों जैसे ही प्यारे हैं।' कृति ने धाराप्रवाह स्पष्ट शब्दों में कहा।

अमर को लगा कि वह कितना गया-गुजरा इन्सान है। कितनी गलत और घिनौनी बात उसके जेहन में आयी— उसने कभी उस देवीरूपी कृति को पहचानने की कोशिश न की। अपने मन के घिनौने भय को प्रकट होने से बचाते हुए उसने कृति से कहा— 'ऐसा आपको नहीं सोचना चाहिये— मैं आपको संशय की दृष्टि से कभी नहीं देखता। आज आपके नर्सिंग होम और आप दोनों के नेक कार्यों और इरादों की प्रशंसा चारों तरफ हो रही है, मैं भी तो इससे अछूता नहीं रहा। आपका और डाक्टर साहब का मैं तमाम उम्र शुक्रगुजार रहूंगा, जिन्होंने मेरे बच्चे को दुबारा जीवन-दान दिया,' फिर वह अपनी पत्नी लिजा से बोला— 'लिजा, ये मेरी बचपन की साथी डाक्टर कृति और उनके पति हैं।'

लिजा को सबका परिचय पाकर बहुत अच्छा लगा। अपने बेटे को पुनर्जीवन देने वाले डाक्टर दम्पत्ति के प्रति उसने भी भावपूर्ण कृतज्ञता व्यक्त की। उनके सद्व्यवहार एवं सेवाभाव से प्रभावित एवं अनुगृहीत अमर व लिजा को परमार्थ भावना से पूर्ण 'रत्नदीप' एवं ऐसे अन्य नर्सिंग होम को अपनी सामर्थ्य भर आर्थिक सहायता करने की प्रेरणा भी मिली।

— १९, डी रोड, निशीथ निकेतन, इलाहाबाद, उ.प्र.

भरमा लेती चांद को उधर चांदनी रात
हंसता इधर चकोर पर अरुणोदयी प्रभात

गीत

तन की नदिया सूख गयी पर, मन का सागर ज्वार उठाये ।
पात-पात झर गया उम्र का, किन्तु हरापन बाज न आये ।

जाने कितने फूल निचोड़े ।
चुरा-चुरा बगियों से तोड़े ।

इतनी खुशबूदार हथेली, महके, जो भी हाथ मिलाये ।

रैना पंख पसार रही है ।
कपड़े शाम उतार रही है ।

समय किसी का सगा न होता, कहकर मुझसे आंख चुराये ।

अधर, अधर पर गीत लिख गये ।
जीवन भर की प्रीत लिख गये ।

बैठा हूं पलकों पर अब तो, अनगिन पारावार उठाये ।

नभ को मुट्ठी में भींचा था ।
धरती का तालू सींचा था ।

पाला-पोसा था सूरज को, हवा अभी तक गीत सुनाये ।

खाली हाथ नहीं आते हम ।
खाली हाथ नहीं जाते हम ।

यहीं सोचकर, घूम रहा हूं, मैं सिर पर संसार उठाये ।

— ज्ञानेन्द्रसिंह चौहान
दादूपुर पं. बंथरा,
जि. लखनऊ-२२७ १०१, उ.प्र.
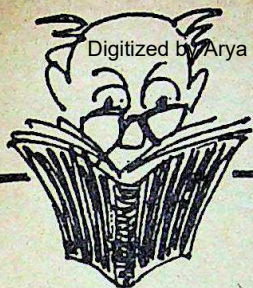
* तलाश (काव्य संग्रह) * डॉ. प्रभाशंकर 'प्रेमी'; शरण प्रकाशन, बेंगलूर; मूल्य : २५ रुपये।

डॉ. प्रभाशंकर 'प्रेमी' का दूसरा कविता संकलन 'तलाश' प्रकाशित हुआ है।

अपने इस नये कविता संग्रह में कवि प्रेमी ने जिंदगी की तलाश में कविता के नये-नये संदर्भ तलाशे हैं। कविता हमारे वर्तमान की प्रतिध्वनियों के रूप में उभरकर सामने आती हैं। हमारे समय की सच्चाइयों को कवि ने सहजता से अभिव्यक्ति दी है। धर्मांधता, अलगाव, निराशा और मूल्यहीनता को 'प्रेमी' ने सहजता से रेखांकित किया है। जीवन की विसंगति और विरोधाभास भी कविता में उभरकर सामने आये है: 'तथास्तु' में कहते हैं:

'बेकार रहो/भूखे रहो/चिल्लाते रहो/हड़ताल करते रहो/मगर, मरना नहीं/मेरे गौरवशाली देश के/अभागे बंधु! तुम्हारा भी दिन आयेगा/जैसे श्राद्ध-पक्ष कौवों का!'

संग्रह में डॉ. प्रेमी ने जहां सामाजिक संदर्भों की कविताएं लिखी हैं, वहीं, प्रकृति, प्रेम और घर-परिवार की भी रचनाएं संकलित की हैं। कविताएं सीधी-सपाट बयान करती हैं। क्षणिकाओं के माध्यम से 'थोड़े में बहुत' कहने की कोशिश की गयी है।

— डॉ. दामोदर खड़से

* * *

*** क्रिकेट प्रश्नोत्तरी * लेखक : विकास लूथरा; प्रकाशक : डायमंड पाकेट बुक्स, २७१५, दरिया गंज, नई दिल्ली; मूल्य: २० रुपये।**

क्रिकेट विश्व का सर्वाधिक लोकप्रिय खेल है। अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर इसकी ख्याति और क्रिकेट-प्रेमियों की विशाल संख्या इसके लोकप्रिय होने का प्रमाण है।

इस पुस्तक के लिखने का उद्देश्य है क्रिकेट को जानने के उत्सुक सभी प्रकार के जिज्ञासुओं को एक ही स्थान पर तत्संबंधी अधिक से अधिक जानकारी देना। इस दृष्टि से प्रस्तुत पुस्तक में

लेखक ने क्रिकेट-संबंधी २००० से भी अधिक प्रश्नों के उत्तर दिये हैं।

पुस्तक में क्रिकेट के इतिहास; क्रिकेट की उत्पत्ति, विकास, महत्वपूर्ण घटनाओं विभिन्न देशों के टेस्ट क्रिकेट, एक दिवसीय अंतर्राष्ट्रीय मैच, क्रिकेट सम्बन्धी नियम, अम्पायरिंग, अम्पायर, क्रिकेट पत्रकारिता आदि के साथ-साथ महिला क्रिकेट एवं क्रिकेट-संबंधी रोमांचक घटनाओं की भी जानकारी दी गयी है।

* * *

*** आर्य पुष्पांजलि * संपादक : हुकुमचंद्र वेदालंकार; प्रकाशक : डायमंड पाकेट बुक्स, २७१५, दरिया गंज, नई दिल्ली; मूल्य : १२ रुपये।**

महान् समाज-सुधारक स्वामी दयानंद ने सामाजिक अन्यायों से लड़ने तथा वेदों को संस्कृति का आधार मानते हुए आर्यसत्यों की स्थापना करने के लिए आर्यसमाज का गठन किया। आर्य मत के अनुयायी एक स्थान पर एकत्र हों इस दृष्टि से अन्य नियमों के साथ पूजा-हवन आदि की सहज विधि निर्धारित की गयी।

प्रस्तुत पुस्तक में आर्य समाज की नित्य पूजा-विधि और सभी प्रकार के धार्मिक अनुष्ठानों में प्रयोग किये जाने वाले वैदिक श्लोकों का संकलन किया गया है। श्लोकों का सरल भावार्थ भी उनके साथ दिया गया है। इसी के साथ एक सौ पचास से अधिक धार्मिक भजन भी इस पुस्तक में संकलित किये गये हैं।

* * *

*** प्रेमचंद की सर्वश्रेष्ठ कहानियां * प्रकाशक : डायमंड पाकेट बुक्स, २७१५, दरिया गंज, नई दिल्ली; मूल्य: १५ रुपये।**

प्रेमचंद की कहानियों का रचना-संसार अत्यधिक व्यापक है। उनकी प्रत्येक कहानी मानव-मन के अनेक दृश्यों, चेतना के अनेक छोरों, सामाजिक कुरीतियों तथा आर्थिक विषमताओं के विविध आयामों को अपनी विशिष्ट कलात्मकता के साथ उद्घाटित करती है।

प्रेमचंद ने कहानी के स्वरूप को पाठकों की रुचि, कल्पना और विचार-शक्ति का निर्माण करते हुए विकसित किया। स्वाभाविक पात्रों, विश्वसनीय घटनाओं और सहज स्थितियों के रूपांकन में उनकी कहानी मानों जीवन का चित्र बन जाती है।

गत दिनों प्रेमचंद-साहित्य के सुलभ संस्करण प्रकाशन की दिशा में महत्वपूर्ण कार्य हुआ। प्रेमचंद के महान साहित्य के सुरुचिपूर्ण एवं अल्पमोली संस्करण छापकर डायमंड पॉकेट बुक्स ने भी अपनी सार्थक भूमिका निभाई है।

'प्रेमचंद की सर्वश्रेष्ठ कहानियां' इसी प्रयास की एक कड़ी हैं, जिसमें प्रेमचंद की

१८ प्रसिद्ध कहानियों को संगृहीत किया गया है।

* * *

***१. परम प्रेम स्वरूपा भक्ति, २. भक्ति विराट का अनुभव, ३. भक्ति : शून्य की झील में प्रेम का कमल, ४. भक्ति : निराकार से एकाकार, ५. भक्ति : जीवन रूपांतरण की कला ओशो के व्याख्यान * प्रकाशक : डायमंड पॉकेट बुक्स, २७१५, दरिया गंज, नई दिल्ली, मूल्य : १२ रुपये प्रत्येक।**

ओशो के साथ भक्ति का अमृत-रस पीना और आनन्द-सागर में गोते लगाना स्वयं में आध्यात्मिक अनुभव है। ऐसा लगता है कि रहस्यों की उलझी गांठें पलक झपकते खुल जाती हैं। वाणी की काव्यात्मकता, अभिव्यक्ति की सहजता, तर्क की मुखरता, विवेक की प्रखरता, विचारों की ताज़गी और भाषा की सादगी वहां एक साथ उपलब्ध है।

"नारद भक्ति सूत्र" की सरलतम व्याख्या करते हुए ओशो के बीस व्याख्यान पांच खंडों में प्रकाशित हुए हैं:— परम प्रेमस्वरूपा भक्ति, भक्ति: विराट का अनुभव, भक्ति: शून्य की झील में प्रेम का कमल, भक्ति: निराकार से एकाकार, भक्ति: जीवन रूपांतरण की कला।

ओशो के इन व्याख्यानों में प्रस्तुत विचार दृष्टान्तों, अंतः कथाओं और उद्धरणों से समर्थित है। जहां कहीं वे रहस्य की गांठ खोलते हैं किसी भी दृष्टांत को प्रस्तुत कर देते हैं और फिर अपनी विचार-यात्रा पर निकल पड़ते हैं। कितना सार्थक है उनका यह मत, "भक्ति को अगर तुम ठीक से समझो तो तुम पाओगे, धर्म की उतनी सहज, स्वाभाविक और कोई व्यवस्था नहीं है।"

* * *

*** १. "गीता : मनोविज्ञान का परम शास्त्र", २. "गीता : कृष्ण का योग-विज्ञान," ३. "गीता : विज्ञान, कला, अध्यात्म", ४. "गीता : समस्त योगों का सार" * प्रकाशक : डायमंड पॉकेट बुक्स, २७१५, दरिया गंज, नई दिल्ली; मूल्य : प्रत्येक खण्ड १०.०० रुपये।**

गीता योग का विज्ञान है, मनो-विज्ञान का परम शास्त्र है, निष्ठा की संहिता है, अध्यात्म का सार है, कर्तव्य-कर्म की प्रेरणा है, त्याग का संदेश है, कर्मयोग का महामंत्र है, भक्ति का बीज है, पलायन के विरुद्ध विद्रोह है, कर्तव्य-कर्म की प्रेरणा है, त्याग का संदेश है, कर्मयोग का महामंत्र है, भक्ति का बीज है, पलायन के विरुद्ध विद्रोह है, जीवन की समस्याओं का समाधान है, ज्ञान का सागर है।

ओशो ने अपने १६ महत्वपूर्ण

प्रवचनों के द्वारा गीता की व्यावहारिक समीक्षा करते हुए विज्ञान और मनोविज्ञान की पृष्ठभूमि में गीता के संदेश को व्याख्यायित किया है।

एक स्थल पर उन्होंने कहा है– 'गीता मनुष्य जाति का पहला मनोविज्ञान है, वह पहली 'साइकोलॉजी' है। इसलिए उसके मूल्य की बात ही और है। अगर मेरा वश चले तो कृष्ण को मनोविज्ञान का पिता मैं कहना चाहूंगा। वे पहले व्यक्ति हैं जो दुविधा ग्रस्त चित्त, संताप ग्रस्त मन, खंड-खंड टूटे हुए संकल्प को अखंड और ''इण्टिग्रेट'' करने की कोशिश करते हैं।'

– डॉ. गिरिराजशरण अग्रवाल

* * *

*** आग का राग (ग़ज़ल संग्रह) *माधव मधुकर; वैभव प्रकाशन, १/१०६०७, ए मोहन पार्क, नवीन शाहदरा, दिल्ली; मूल्य: ५० रुपये।**

माधव मधुकर रचित 'आग का राग' में संकलित एक सौ नौ ग़ज़लों में से अधिकतर हिन्दी ग़ज़ल की उस मुख्यधारा से संबंद्ध हैं, जो परिवेश की प्रामाणिकता से लैस होने के साथ-साथ जनधर्मी दृष्टि से सम्पन्न भी हैं।

इन ग़ज़लों में माधव मधुकर ने जहां-तहां अपने रचना-कर्म के प्रयोजन और हेतु की चर्चा की है। 'कलम को बेच कर खाने लगे हैं' और 'फन का तुम रोज़गार मत करना' आदि पंक्तियों से स्पष्ट है कि वे लेखन से जुड़ी व्यावसायिकता के स्पष्ट विरोधी हैं। चूंकि स्वयं उनका लेखन जीवन की ठोस और बुनियादी सच्चाइयों के इर्द-गिर्द घूमता है, अतः उन्हें विश्वास है कि उनकी रचनाएं समय की मार झेलने में पूर्णतः समर्थ हैं।

साफ सुथरी अभिव्यंजना के बावजूद माधव मधुकर की ग़ज़लों का महत्व मुख्यतः वैचारिक ऊर्जा से दीप्त है और परिवेश-बोध से सम्पन्न उनके जनधर्मी कथ्य के फलस्वरूप है। उनका यह शेर उनकी ग़ज़लों के संदर्भ में सर्वथा सटीक है–

हमने ग़ज़लों से शिलालेख लिखे हैं युग के
आप पढ़-पढ़ के ज़माने को सुनाते रहिये।

- डा. वेद प्रकाश अमिताभ

* * *

*** अनुभूति के प्रतिबिम्ब * विजया गोयल; प्रकाशक: लोक भारती प्रकाशन, १५ ए महात्मा गांधी मार्ग, इलाहाबाद; मूल्य : ४५ रुपये।**

हिन्दी अंग्रेजी साहित्य जगत की उदीयमान प्रतिभा श्रीमती विजया गोयल की हाल ही में प्रकाशित काव्यकृति 'अनुभूति के प्रतिबिम्ब' ने साहित्य प्रेमियों का ध्यान अपनी ओर आकर्षित किया है।

विजयाजी की इस नूतन कृति में विभिन्न रस एवं रंगों के अड़तीस कविता-सुमन संजोये गये हैं। किसी कविता में मृदुल भावनाओं की अभिव्यक्ति है, तो किसी में विद्रोह के तेवर। किसी में समाज को बदल डालने की बैचेनी है, तो किसी में प्रियतम के विरह की कसक। वस्तुतः यह संग्रह कवयित्री के उदात्त विचारों और उद्‌गारों का आईना है।

इस कविता संग्रह की "तुम लौट आओगे", तुम्हारे बिना, उजाला, भीख आदि रचनायें सुन्दर बन पड़ी हैं। वियोग, पीड़ा और दैन्य से ओत-प्रोत होने के कारण उनकी कतिपय पंक्तियां तो अत्यन्त मर्मस्पर्शी है 'तुम लौट आओगे' कविता का निम्न उदाहरण देखिये :

उड़ आये अतीत का पंथी
कुछ रोता सा कुछ हंसता सा
इच्छा बन कर मेरी आंखें
ताका करती हैं चांद के रथ को

काव्य संग्रह की भाषा प्रवाह पूर्ण है और एक ही संग्रह में कई रसों का आस्वादन है।

—विश्वनाथ प्रसाद कैलखुरी

* * *

***सत्यमय सौंदर्य * कवि स्व. पं. नीलकण्ठ तिवारी; प्रकाशक : जीवन प्रभात प्रकाशन, गोरेगांव (पूर्व) बम्बई-६३, मूल्य : चालीस रुपये।**

यह कविता संग्रह पंडित नीलकंठ तिवारी की अन्तिम कवितायें हैं, अतः इनका धरातल यथार्थ पर आधारित है। यह कवि के परिपक्व मस्तिष्क और गहन लम्बी अवधि का अनुभव लिये हुए है।

इन कविताओं को किसी बाद से नहीं जोड़ा जा सकता, यद्यपि इसमें प्रयोगवाद, प्रगतिवाद, नई कविता दिख पड़ती है।

हमारी परम्परा और संस्कृति जितनी उच्च और स्वच्छ थी, आज के भौतिकवाद ने उसे उतना ही भ्रष्ट किया है— इस प्रक्रिया पर कवि के उद्‌गार स्पष्ट हैं— कि वे किस पक्ष के पक्षधर हैं।

'बेच दो ईमान तुम
दुनिया की दौलत लूट लो,
मैं गरीबी में पला,
ईमान केवल चाहता हूं।'

आज का समाज शोषणकर्ताओं से भरा है। अतः ठगों पर से कवि का विश्वास का उठ जाना स्वाभाविक है—

'इतना ठगा संसार ने विश्वास उठ गया
मेरे मधुर विश्वास का मधुमास
लुट गया।'

— दिनेश वर्मा

कोयल और किसान

☐ ब्रह्म देव

एक कोयल ने अपना घोंसला गेहूं के खेत में बना लिया था। एक दिन जब कोयल अपने बच्चों के लिए खाना खोजने गयी हुई थी, उस खेत का किसान आया और बोला, 'अब तो गेहूं की बालियां पक गयी हैं। इसे कटवाने में पड़ोसी को मदद के लिए बुला लाऊंगा और कल ही काटना शुरू कर देंगे।'

जब कोयल लौटी तो उसके नन्हें-नन्हें बच्चों ने शोर मचाना शुरू कर दिया। जब कोयल ने उनको शांत करके उनकी बात सुनी और कहा कि उन्हें अपना
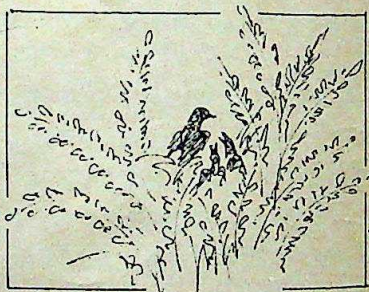
घोंसला बदल लेना चाहिये।

कोयल ने उन्हें धीरज बंधाते हुए कहा, 'घबराओ नहीं, जो किसान अपने
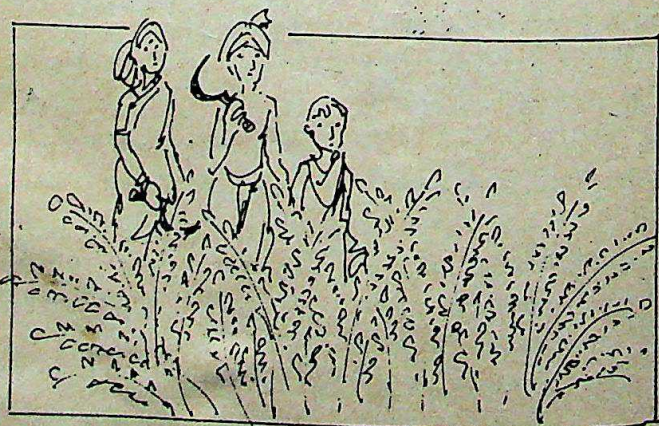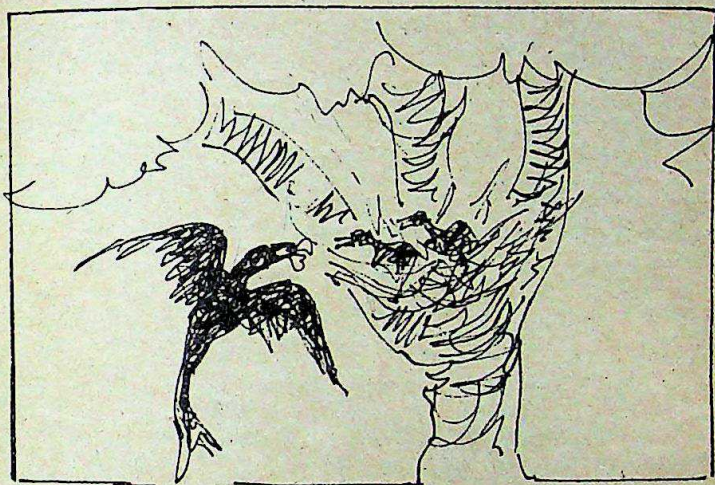
पड़ोसी की सहायता के भरोसे अपनी फसल काटने की बात कह रहा है, वह जल्दी काटने वाला नहीं है।'

इसके कुछ दिन बाद वह किसान फिर आया और फसल देखकर बोला, 'अब तो फसल कट ही जानी चाहिये। कल ही कुछ लोगों को मजदूरी पर लगा दूंगा।'

उस दिन फिर कोयल के बच्चों ने शोर किया और कहा, 'अब तो हमें अपना घोंसला बदलना ही पड़ेगा।'

कोयल ने उन्हें धीरज बंधाया और बोली, 'इन खेतों का किसान आलसी लगता है। अब तक तो सब मजदूर अलग-अलग खेतों में काम पर लग गये होंगे सो अब मजदूर कहां मिलेंगे!! तुम लोग चैन से रहो।'

दो-तीन दिन पश्चात् वह किसान फिर फसल को निहारता खड़ा था। वह फसल को देखकर बोला, 'अरे यह बालियां तो पूरी पक गयी हैं। अगर अब भी न काटीं तो सारी फसल बेकार हो जायेगी। कल सबेरे ही अपनी पत्नी और बच्चों को साथ लाकर फसल काटनी होगी।'

उस शाम फिर कोयल के बच्चों ने मां के लौटने पर सारी बात बतायी तो कोयल बोली, 'अब किसान ने दूसरों का भरोसा छोड़कर स्वयं काम करने का फैसला कर लिया है, तब तो हमें यह घोंसला छोड़ना ही होगा।'

फिर उन्हें आदेश देती हुई बोली, 'चलो अभी उड़ने की तैयारी करो, क्योंकि इस बीच मैंने एक घोंसला पास के बन में एक पेड़ पर बना लिया है।'

– पोस्ट बाक्स ६६,
एंसलेहाल, देहरादून, उ.प्र.

कार्टून चित्रावली

सु. रामकृष्णन द्वारा भारतीय विद्या भवन, क. मा. मुंशी मार्ग, बम्बई ४०० ००७ के लिए प्रकाशित तथा एसोसियेटेड एडवरटाइज़र्स एंड प्रिन्टर्स, बम्बई ४०००३४ में मुद्रित।

कॉम्प्लान चैम्पियन्स!

Complan
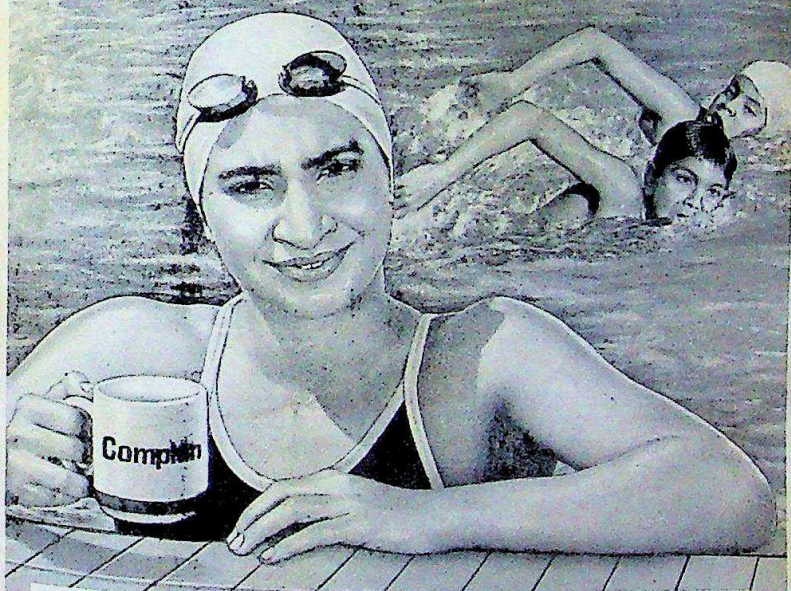
"कॉम्प्लान स्वस्थ चहुमुखी विकास के लिए आदर्श है."
– अनीता सूद

Anita Sood
राष्ट्रीय तैराकी चैम्पियन.

अनीता सूद, नए उभरते तैराकों को तैराकी के गुर और कौशल सिखाते हुए पोषकता पर ख़ास ध्यान देती हैं. इसीलिए वह कॉम्प्लान की ही मांग करती हैं. कॉम्प्लान, स्वस्थ चहुमुखी विकास के लिए एक नियोजित आहार.

याद रखिए, आपके बढ़ते हुए बच्चों के लिए कॉम्प्लान एकदम सही है.

23
अत्यावश्यक
पोषक तत्त्व
नियोजित मात्रा में
दूध मिलाने की ज़रूरत नहीं.

कॉम्प्लान®
परिपूर्ण नियोजित आहार

GX/45/163 HIN
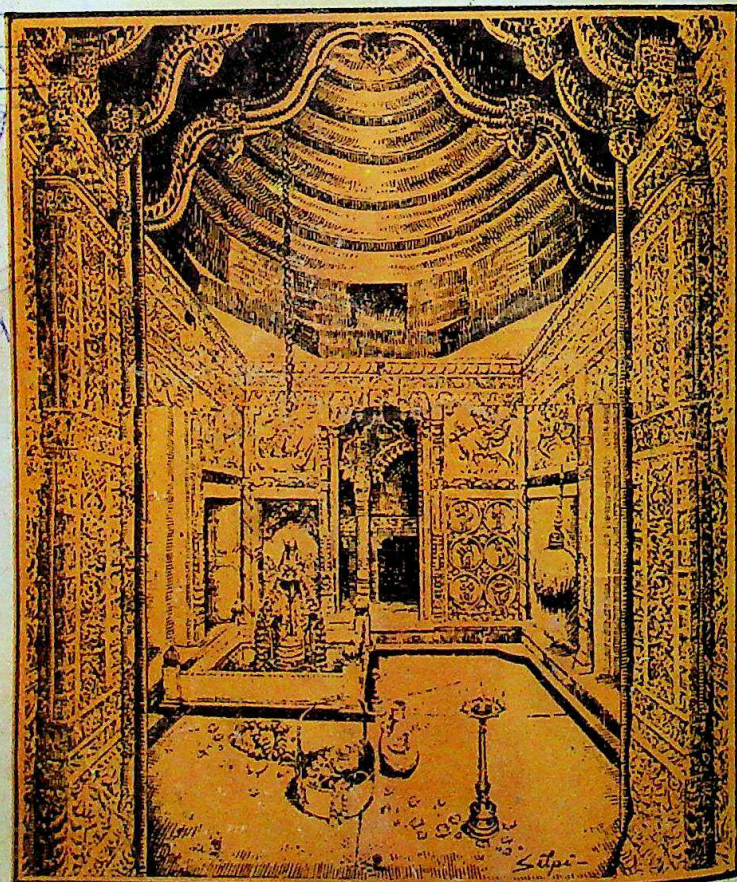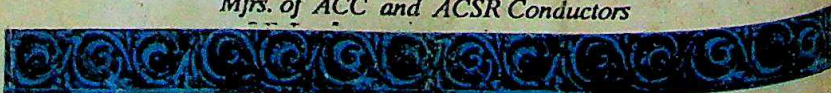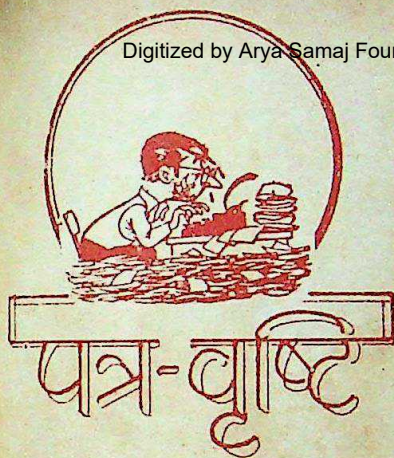
नवनीत का मई-९१ का अंक पढ़ने को मिला। इस अंक की अधिकांश सामग्री पर्याप्त स्तरीय है। कविताओं में डॉ. गणेशदत्त सारस्वत की ग़ज़ल अभिव्यंजन-ऋजुता की दृष्टि से काफी अच्छी लगी। पं. रामेश्वर शुक्ल 'अंचल' की 'प्रजातंत्र की पुकार' शीर्षक रचना भी बड़ी भाव-प्रवण है। डॉ. चंद्रिकाप्रसाद शर्मा का 'इंद्रधनुषों के देश में' शीर्षक निबंध रोचक यात्रा-संस्मरण है। डॉ. परिपूर्णानंद वर्मा के 'नैमिषारण्य'' शीर्षक लेख में गोमती नदी के तट पर अस्सी हजार ऋषियों के रहने की बात लिखी गयी है। पुष्ट प्रमाण अट्ठासी हजार ऋषियों के स्वाध्याय-रत रहने के हैं। पं. गिरिजाशंकर त्रिवेदी का 'विद्यामार्तंड पं. सत्यकाम विद्यालंकार' से संबंधित श्रद्धांजलिपरक लेख निश्चय ही अत्यंत प्रेरक है।

— डॉ. सुधा मेहरोत्रा, वाराणसी, उ.प्र.

* * *

नवनीत मई-९१ अंक में प्रकाशित 'भ्रांति निवारण' एक युग की व्यथा कहने वाली रचना लगी। वास्तव में समाज जैसे-जैसे सभ्य होता चला जा रहा है, वैसे-वैसे मानव मानसिकता—नैतिकता व कर्तव्य से विमुख होकर आर्थिक चकाचौंध में फंसकर केवल अपने लिए ही जीना सीख रहा है।

— शशांक शेखर झा,
मुजफ्फरपुर, बिहार

* * *

नवनीत का मई अंक का अवलोकन किया। यों तो यह अंक प्रत्येक दृष्टि से परिपूर्ण था, किन्तु 'बारिश' नामक कहानी मेरे मस्तिष्क पर अभूतपूर्व प्रभाव छोड़ गयी। इस कहानी के लेखक ने सूक्ष्म दृष्टि से सटीक चित्रण किया है और इसका हर पात्र वास्तविक प्रतीत होता है। कविता 'कटघरे' हृदयस्पर्शी थी। अन्य सामग्री प्रशंसनीय रही।

— प्रणय मिश्र, जमालपुर

* * *

नवनीत मई-९१ अंक पढ़ा। कहानियों में 'भ्रांति निवारण' सर्वाधिक अच्छी लगी। इस कहानी में लेखिका कमला चमोला ने एक कटु सत्य को उजागर किया है। पंजाबी कहानी 'बारिश' भी काफी रोचक लगी।

धारावाहिक उपन्यास 'प्रेमतपस्वी : ईसुरी' बहुत अच्छा है। इसी के साथ नवनीत के लिए एक छोटी-सी शिकायत यह है कि जगदीश किंजल्क के लेख 'तन से मारीशियन मन से भारतीय' में श्रीमती असलषा का चित्र भी होता तो बेहतर रहता।

— ओमप्रकाश पाटीदार, शाजापुर, म.प्र.

* * *

नवनीत के अप्रैल-९१ अंक में प्रकाशित श्री अमरध्वज सिंह की कहानी 'किसकी बहू ?' अत्यंत स्वाभाविक और मार्मिक लगी। बदलते परिवेश के परिप्रेक्ष्य में ग्राम्य-परिस्थितियों का ऐसा स्वाभाविक चित्रण दुर्लभ ही है।

— जितेन्द्र सिंह, छतरपुर, म.प्र.

* * *

गागर में सागर भरने वाली रचनाओं से भरपूर **नवनीत** का अप्रैल-९१ अंक बहुत ही अच्छा रहा। आद्योपान्त पढ़कर विशेष प्रसन्नता हुई। 'महाकवि प्रसाद और उनका महाकाव्य,' 'एक अभागा सम्राट', 'तुम्हें शर्म नहीं आती', 'गर्मी में रोगों से बचें', 'गुरुजी महाराज के चरणों में एक रात' तथा 'लोक कहावतों में रोग मुक्ति के नुस्खे' रचनाएं विशेष रुचिकर लगीं।

— डॉ. शकुनचंद गुप्त, लालगंज, रायबरेली, उ.प्र.

* * *

आपके द्वारा निकाला गया अप्रैल-९१ का अंक बहुत अच्छा लगा। आपकी पत्रिका में कहानियों का अच्छा संग्रह है। इस अंक में प्रकाशित (सामयिक समस्या) 'अनादर का युग बनाम श्रद्धा' नामक लेख वास्तव में अच्छा है। इसको पढ़कर मैं आपका तहेदिल से शुक्रगुजार हूं।

— संदीप दवे, बिलासपुर, म.प्र.

* * *

नवनीत का अप्रैल-९१ अंक की संपूर्ण सामग्री पठनीय है। गीतों और ग़ज़लों से सजी अपने आप में अनूठी पत्रिका है। कुछ लेख 'पाल और वर्जिनी में भारतीयता की कड़ी', 'श्रीकृष्ण के उदाहरण का अनुकरण,' 'प्रेमतपस्वी : ईसुरी' विशेष अच्छे लगे। राजेन्द्र तिवारी की मार्मिक ग़ज़ल तथा स्वप्निल तिवारी की ग़ज़ल ने मन मोह लिया।

— कृष्ण गोपाल गुप्ता, दिल्ली

प्रत्येक मनुष्य के तीन रूप होते हैं — एक तो जैसा कि, वह स्वयं अपने को समझता है, दूसरा — जैसा कि, अन्य व्यक्ति उसको समझते हैं। और तीसरा — जैसा कि, वह वास्तव में होता है!

— डॉ. गोपाल प्रसाद 'वंशी'

नवनीत

संपादक गिरिजाशंकर त्रिवेदी
उप-संपादक रामलाल शुक्ल
अतिरिक्त सहयोग किशोरीरमण टंडन
प्रकाशक सु. रामकृष्णन्
वर्ष ४०, अंक ७

संस्थापक : कन्हैयालाल मुंशी
भारती : स्थापना १९५६
श्रीगोपाल नेवटिया
नवनीत : स्थापना १९५२
जुलाई १९९१

आवरण-चित्र : देवब्रत बनर्जी (सूर्यास्त)

चित्र-सज्जा : ओके, शेणै, यादव, चांद, अजम,

कार्यालय : भारतीय विद्या भवन, क. मा. मुंशी मार्ग, बम्बई - ७

फोन : ८११४४६२/८११८२६१

बढ़ते कदम

पगडंडी से राजमार्ग तक

□ रामनारायण उपाध्याय

एक छोटे से गांव की पगडंडी से जब मैंने यात्रा प्रारंभ की, तब वृक्षों ने हाथ हिलाकर मुझे विदा दी। नदी-निर्झरों ने कल-कल करते छलकते हृदय से मेरे पांव पखारे। पंक्षियों ने समवेत स्वर में स्तुति गान किया। और मन के मृगछौनों ने कुलांचें लगाते हुए आगे बढ़ने की प्रेरणा दी।

खेतों-मैदानों में काम करते किसान मजदूरों के गीतों ने पंख बनकर मेरा साथ निभाया, और दही बिलोने के साथ गीतों को भी बिलोते और चक्की पर आटे के साथ अंधेरे को भी पीसकर सफेद झक दिन में बदल देने वाली ग्राम वधुओं ने मुझे संघर्ष में सफलता का संदेश सुनाया।

कहीं-कहीं समय की गिल्ली को परिस्थितियों के डंड़े से पीटकर, पुनः पकड़ने, तो कहीं वदली के द्वारा धूप को पकड़कर चूहे-बिल्ली के खेल की तरह पुनः छोड़ देने के खेल ने, मुझे जीवन को हंसते-हंसते जीना सिखाया।

कहीं पनघट पर बिसूरती बहुओं, मण्डप के दिन भाई की राह देखती बहनों, और अपनी सूनी कुटिया में दिया जलाकर पिया की राह देखने वाली प्रेमिकाओं ने मुझे इतना दिया कि मेरी सारी जेबें, फाइलें, और मन उनसे लबालब भर उठे। अब उन्हें रखूं तो कहां रखूं? अतएव मुक्त मन से बांटता चल रहा हूं। जितना बांटता हूं उतना रीतता हूं। और जितना रीतता हूं उतना

मुझे प्रभु कृपा का आशीर्वाद मिलता जाता है।

गांव की पगडंडी से आगे बढ़ने पर, जब मैं पक्की सड़क पर पहुंचा तो वहां कारखानों में काम करने वाले वे मजदूर मिले, जिनकी दरवाजे पर तलाशी ली जाती है, और जिनके गीत तो बाहर रख लिये जाते थे तथा आदमी को अन्दर जाने दिया जाता था। दफ्तरों में काम करने वाले वे बाबू मिले, जिनकी मेहनत से तैयार फाइल पर 'चिड़िया' बनाने वाले अपने आपको उच्चाधिकारी मानने में गर्व अनुभव करते आये हैं। बड़ी सुबह चौराहे पर बिकने के लिए तैयार खड़े वे मजदूर मिले, जिनके शोषण पर इमारतें ऊंचे से ऊंची उठती चली गयीं और जिनका जीवन स्तर नीचे से नीचा गिरता चला गया। होटलों, दुकानों और व्यावसायिक प्रतिष्ठान में काम करने वाले वे नौकर मिले, जिनका रोना था कि सुबह आठ तो जल्दी बज जाते हैं लेकिन रात को आठ जल्दी क्यों नहीं बजते!

हर नुक्कड़, कोने पर बैठने वाला वह पानवाला मिला, जिसे मुझे खड़ा रखने में इसलिए आनन्द आता था, जिससे वह यह गर्व कर सके कि एक साहित्यकार के मेरी दुकान पर आने से मेरा रुतबा बढ़ता हैं। इन सब पर लिखने के लिए मैं शब्द कहां से लाऊं?

पक्की सड़क से आगे बढ़कर जब राजमार्ग पर पहुंचा तो वहां की फिसलन भरी राह पर पांव टिकते ही नहीं थे। जब एक साहित्यकार बन्धु को फोन किया तो वे बोले – 'यार घर पर तो काम रहता है ऑफिस में आ जाओ'। जब ऑफिस पहुंचा तो बोले– 'यार, यहां तो लोग बातें नहीं करने देंगे, चलो काफी-हाऊस में गपशप करेंगे'। जब काफी हाऊस पहुंचा तो उन्हें भुनाने वालों ने ऐसा घेरा कि, पुल पर से नदी पार करने की तरह, उनसे मिलकर भी बिना मिले ही वापस लौटना पड़ा।

जब नेताओं से मिला तो उनकी आंखें पथराई सी लगीं, जो आदमी की पहचान खो चुकी थीं। कुछ उच्चाधिकारी मिले, जिनकी आंखों पर ऐसा चश्मा पड़ा था, जिसमें से देखने पर किसी को पांच हजार में दिखता था तो किसी को पच्चीस हजार में। सोचा क्यों नहीं लोक से चुने गये लोकसभा सदस्य से मिला जाये। लेकिन जब उनसे मिलने पहुंचा तो वे भी लोक से कटकर लोक-परलोक की, देश-विदेश की यात्रा करने में संलग्न थे। लाचार राजमार्ग छोड़कर अपनी पगडंडी पर लौट आया और उसने ममता से अपनी दोनों बांहें फैलाकर कहा, 'दादाजी, आप कहां चले गये थे? हम कब से आपकी राह देख रहे हैं।'

– **'साहित्य-कुटीर'**
ब्राह्मणपुरी, खंडवा, म.प्र.

अध्यक्ष के पत्र

राजभवन,
मलाबार हिल,
बम्बई

प्रिय सुहद,

विश्व के अनेक संविधानों की क्रियाशीलता के एवं सरकारों के संचालन से प्राप्त अनुभवों के अनन्तर राज्य के सम्बन्ध में व्यक्ति की भूमिका और उसके अधिकारों को लेकर मतभेद तथा स्वतंत्रता, समानता और न्याय जैसे सहज गुणों में सामंजस्य स्थापित करने की कठिनाई बनी हुई है। यदि आज भी इसे बिना हल किये टाल दिया जाता है तो भविष्य में संस्थाओं की बैधता और उसकी प्रभावशीलता तथा समाज के क्रमिक विकास के लिए ये गम्भीर चुनौती बन सकते हैं। संयुक्त राज्य अमेरिका, भारत तथा ग्रेट ब्रिटेन जैसे देश जिनके पास लिखित अथवा अलिखित संविधान है तथा जहां पर व्यक्ति और राज्य के बीच पूर्ण सामंजस्य स्थापित करने का प्रयास किया गया है और स्वतन्त्रता को स्वेच्छाचारिता से, समानता को व्यक्तिगत उदारता से तथा न्याय को केवल कानून पास कर देने मात्र से अलग दर्शाया गया है, वहां पर भी नागरिकों का अवमूल्यन हुआ है। वहां भी कार्यवाहकों के हाथ में चाहे वे कार्यपालिका के रूप में हों अथवा विधायक के रूप में, अन्तिम निर्णय का अधिकार पहुंच गया है और वे खुद को अर्ध देवताओं की कोटि में समझने लगे हैं।

भारत में तो नागरिक यदि चाकू, बन्दूक या बम का भय न पैदा करे तो उसकी गणना पद धूल के समान ही होती है। उसके पत्रों का उत्तर नहीं दिया जाता, उससे टेलीफोन पर बात नहीं की जाती तथा भेट के लिए उसे समय नहीं दिया जाता है। इस तरह से उपजी हिंसा की प्रवृत्ति को राज्य की उदासीनता का परिणाम कहा जा सकता है।

सचमुच राज्य के पक्ष में इस प्रकार के

मापदण्ड को अपनाये जाने को कुछ शिक्षाविद कोई गम्भीर मामला नहीं मानते हैं, किन्तु समाजशास्त्रियों ने इसे उथल-पुथल तथा हिंसा की जड़ बताया है। पुरानी धारणा कि जो राज्य सैनिक तानाशाही अथवा निरंकुश शासन प्रणाली में सैनिक अथवा पुलिस, बल के दबाव में चलते रहते हैं, धीरे-धीरे अभ्यस्त हो जाते हैं और उनमें भावना समाप्त हो जाती है। आज बर्मा, चीन, पाकिस्तान, रूस और पूर्वी यूरोप की हाल की घटनाओं ने उसे गलत सिद्ध कर दिया है।

इससे उत्साहजनक एवं निराशाजनक दो प्रकार के निष्कर्ष निकलते हैं। उत्साहजनक इसलिए है कि स्वतंत्रता, समानता एवं न्याय के लिए बलवती भावना व्यक्ति को राज्य के सम्मुख खड़ी कर देती है और तब राज्य के संचालकों में ठीक समझ आ जाती है। कभी-कभी व्यक्ति अपने विचारों को रचनात्मक ढंग से नहीं कह सकता है, किन्तु जब उसका अभाव महसूस करता है तो अवश्य ही व्यक्त कर देता है। निराशा इस बात से होती है कि इतिहास व्यक्ति की राज्य पर विजय के उदाहरणों से भरा पड़ा है। कभी उसने कठोर प्रशासक को चुनाव द्वारा हटा दिया है तो कभी रक्तरंजित क्रांति द्वारा हटा दिया है, फिर भी अस्थायी रूप से राज्य के सत्ताधारी इससे कोई सबक नहीं सीखते और व्यक्ति को झुठलाने, वरगलाने तथा उसकी आंखों में धूल झोंकने के नित नये तरीके ढूंढ़ निकालते रहते हैं।

इक्कीसवीं सदी में और चाहे जो कुछ हो राज्य रूपी संस्था नष्ट नहीं होने जा रही है और उससे गरीब और दलित जो अब जागरूक हो गये हैं एक न एक दिन अपना हिसाब अवश्य मांगेंगे। बड़ी खींचातानी होगी और इसमें निःसंन्देह राज्य को ही झुकना पड़ेगा और सत्ताधारी मकड़ी के जाले की तरह बिखर जायेंगे। यदि इस बीच राज्य समझदारी और खुले दिल से व्यक्ति की सत्ता को स्वीकार कर लेता है और संवेदनशीलता, करुणा, उत्तरदायित्वपूर्ण दूरदृष्टि, चारित्रिक गठन, सेवा-भावना से समर्पित हो जाय तो उत्तम होगा।

आपका

सी. सुब्रमण्यम

एक बार जब एक व्यक्ति को चुनाव का टिकट दिया जा रहा था तो पंडित नेहरू ने उसका विरोध किया, क्योंकि वह व्यक्ति भ्रष्ट था। प्रदेश के मुख्यमंत्री ने उसकी सिफारिश करते हुए कहा कि वह कई बार जेल गया है। पंडितजी ने तुरंत कहा, 'हां अब तो एक कांग्रेसी और एक गुंडे में बस यही अंतर रह गया है कि कांग्रेसी पहले जेल जाता था और फिर मंत्री बनता था और बदमाश जो है वह पहले मंत्री बनता है और फिर जेल जाता है।'

— डॉ. गोपाल प्रसाद 'वंशी'

□ कान्तीलाल मोदी

अक्सर गांव-देहातों में या जाति-विशेष के लोगों में आपने देखा होगा कि औरतें मरदों से पर्दा करती हैं। लेकिन क्या आपको यह भी पता है कि भारत में एक क्षेत्र ऐसा भी है, जहां मर्द औरतों से परदा करते हैं। जी हां, मर्द भी परदा करते हैं।

उत्तर-प्रदेश के बुलंदशहर जिले के बुलंदशहर-मुक्तेश्वर राजमार्ग से करीब ३२ कि.मी. दूर एक शहर है, औरंगाबाद। इस शहर को मुगल-बादशाह औरंगजेब ने बसाया था और उसी के नाम पर इस शहर का नामकरण भी हुआ।

यों इस शहर में लगभग सभी धर्मों के व्यक्ति रहते हैं, लेकिन एक विशेष मुस्लिम – शिया – धर्म के परिवार की स्त्रियों से मरदों को परदा करना पड़ता है। मुस्लिम - शिया परिवार की कोई भी स्त्री चाहे वह बुज़ुर्ग हो या युवा क्षेत्र की किसी गली-मुहल्ले से आ रही हो तो उसके सामने पड़ने वाले व्यक्ति को मुंह पर रुमाल रखकर या कोई अन्य कपड़ा रखकर अपना मुंह ढंक लेना पड़ता है। यदि वह ऐसा नहीं करता है तो वह एकदम पलटकर अपनी पीठ उस स्त्री की ओर कर देता है। आगंतुक महिला परदा करे या न करे, सामनेवाले पुरुष को परदा करना पड़ता है।

पर इस अद्भुत प्रथा के पीछे आखिर कौन-सी परंपरा है?

समझा जाता है कि नव वधुओं के आगमन पर इस संप्रदाय विशेष के बड़े-बूढ़ों ने अदब-दर्शाने के लिए ही ऐसी प्रथा कायम की होगी। लेकिन धीरे-धीरे यह शिया महिलाओं के लिए

परंपरा बन गया और यह परंपरा आज यहां रहनेवाले सभी धर्म के व्यक्तियों को माननी पड़ रही है।

वैसे प्रगति के इस युग में इस परंपरा का निर्वाह सभी लोग तो नहीं करते फिर भी बुजुर्ग महिलाएं इस परंपरा का निर्वाह करती हैं। अक्सर कोई बुजुर्ग महिला जब बाहर निकलती है तो उससे कुछ आगे पर एक छोकरा 'परदा है... परदा' कहता हुआ निकलता है। इस आवाज से राह में मौजूद पुरुष सतर्क हो जाते हैं तथा वे परदा कर लेते हैं। जो परदा करने से कतराते हैं वे वापस पीछे लौट आते हैं। ताकि आगंतुक महिला से सामना हो न हो।

है न, यह रोचक व दिलचस्प परंपरा?

आपको बता दें कि अफ्रीका में सहारा के तोरेग जाति के पुरुष भी परदा करते हैं। तोरेग जाति के लोग गहरे नीले रंग का बुर्का पहनते हैं: जबकि इस जाति की औरतें खुले मुंह रहती हैं। इस जाति के पुरुषों द्वारा नीला बुर्का पहनने का यह रिवाज काफी पुराना है और वे ऐसा क्यों करते हैं इसके पीछे भी कई धारणायें हैं।

— देवरी-कंला, सागर, म.प्र.

याददाश्त दिलाने वाली हारमोन की खोज

□ गणेशकुमार पाठक

वर्तमान समय में बढ़ती हुई भाग-दौड़, परेशानियों एवं तनाव आदि के कारण हमारी याददाश्त भी कमजोर होती जा रही है। आजकल अक्सर लोगों में चर्चा होती रहती है कि हमारी स्मरण शक्ति कम होती जा रही है, जिससे अनेक महत्वपूर्ण बातें हम भूल जाते हैं और हमें परेशानियों का सामना करना पड़ता है। किंतु अब घबड़ाने की जरूरत नहीं है, क्योंकि वैज्ञानिकों ने एक ऐसी हारमोन की खोज कर ली है, जो याददाश्त कायम रखेगा।

मनुष्य के मस्तिष्क में ३०,००० करोड़ तंत्रिका कोशिकाएं पायी जाती हैं, ये तंत्रिका कोशिकाएं ही बीती हुई बातों का लेखा-जोखा रखती हैं। किंतु वृद्धावस्था में या किसी बीमारी से इन कोशिकाओं में शिथिलता आ जाती है, जिससे मनुष्य की याददाश्त कम होने लगती है।

ब्रिटेन के वैज्ञानिकों ने याददाश्त को बनाये रखने हेतु मनुष्य के पीयूष ग्रंथि में एक ऐसे हारमोन की खोज कर ली है, जो अब तक शरीर में जल की मात्रा के संयोजन में सहायक था। किंतु अब यह हारमोन याददाश्त को बनाये रखने में भी सहायक होगा। जिस व्यक्ति की याददाश्त कमजोर हो उसे तीन दिन तक दिन में तीन बार अपनी नाक में हारमोन का छिड़काव करना चाहिये। ऐसा करने से उस व्यक्ति की याददाश्त लौट आयेगी।

इस प्रकार भुलक्कड़ लोगों के लिए यह हारमोन वरदान सिद्ध हुई है।

— प्रतिभा प्रकाशन,
निकट वैशाली होटल,
बलिया - २७७ ००१, उ.प्र.

एक बन्दर-घर की कहानी

□ रामलखन सिंह

उम्र के साथ मानव मन की अन्तर्दशा किस प्रकार बदलती रहती है, इसका अनुभव तो हम सभी को अपने जीवन में होता रहता है, किन्तु वन्य-जीव भी मनोभावों के ज्वार-भाटे से अनछुये नहीं हैं। इसका विचित्र अनुभव मुझे लखनऊ प्राणि उद्यान के निदेशक के रूप में एक लंगूर परिवार के जीवन का अंतरंग अध्ययन करने के दौरान देखने को मिला।

असम, चटगांव और बर्मा के घने वन क्षेत्रों में पाये जाने वाले "टोपीदार लंगूर" (कैप्ड लंगूर प्रेस्बाइटिस पाइलिएटस)का एक युवा जोड़ा जब लखनऊ प्राणि उद्यान में पहली बार रहने के लिए आया तो उसे अलग से एक बड़ा, गोल, जालीदार घर देकर उसकी पसन्द के फल-फूल-सब्जी उपलब्ध कराने की व्यवस्था हमने बड़े उत्साह से किया था। चढ़ती उम्र का कुछ ऐसा उछाह था इन दोनों में कि उनकी छेड़-छाड़, मान-मनौवल, प्रणय व्यापार पर, प्रायः इनके घर को घेरे खड़ी रहने वाली पर्यटकों की भीड़ का कोई प्रभाव नहीं पड़ा।

अन्ततः जब इनके घर में एक नन्ही बच्ची का जन्म हुआ तो समूचे प्राणि उद्यान में खुशी मनायी गयी। प्रथम तो इसलिए कि "टोपीदार लंगूर" का चिड़ियाघरों के सीमित पर्यावरण में प्रजनन अत्यंत दुर्लभ उपलब्धि मानी जाती है। दूसरे इसलिए भी कि अब विश्व भर में चिड़ियाघरों के प्रबन्ध एवं रख-रखाव की कसौटी यही मानी जाती है कि वहां रखे गये पशु-पक्षियों के घरों में बच्चे हैं या नहीं। वन्य जीवों में बच्चों की उपस्थिति मां-बाप के सुखी और स्वस्थ जीवन का पर्याय मानी जाती है। क्योंकि जब तक पशु-पक्षी अपने पर्यावरण से खुश नहीं होते तब तक वह प्रजनन के लिए उत्प्रेरित नहीं होते।

अचानक ही एक चंचला युवती से बदल कर व्यस्त माँ बन गयी थी। रात-दिन बस उसे ही लेकर वह दूध पिलाती, गोद सुलाती, दुलराती दिखायी पड़ती थी। उसके जीवन क्रम का यह परिवर्तन, नर बन्दर को निपट अकेला कर गया था। एक सप्ताह तक तो किसी प्रकार उसने इस एकाकीपन को झेला, फिर वह चिड़चिड़ा हो उठा। जाकर पहले वह मादा की जूंए बीनता, उसके बालों में उंगलियां दौड़ा कर सफाई करता और फिर स्वयं सामने लेट कर बदला पाने की अपेक्षा करता। लेकिन जब उसने बच्ची को छोड़ कर उसकी सेवा करने की ओर ध्यान नहीं दिया तो वह उसे दांत दिखाने लगा।

धीरे-धीरे उनके संबंध कटु होते गये और नर की उग्रता बढ़ती गयी। वह बलपूर्वक मादा की सेवायें प्राप्त करने को उन्मत्त दिखायी पड़ने लगा। अन्ततः जब उसे, बच्ची को छीन कर मार डालने का प्रयास करते देखा गया तो हमारी चिन्तायें बढ़ गयी थीं।

समस्या के हल के लिए हमने उस ''टोपीदार लंगूर'' के लिए एक नयी सजातीय मादा की व्यवस्था कराने हेतु लंगूरों के व्यापारियों को संदेशा भेजा। सोचा यह गया कि जब तक इसकी पहली मादा संगिनी अपने बच्चे के पालन-पोषण में व्यस्त है, तब तक के लिए नर रहेगी तो यह उसकी सेवा-प्रतिसेवा में व्यस्त रहेगा और पहली मादा को बच्चे के प्रति पूर्ण ध्यान देने का अवसर मिल जायेगा। जंगल में प्राकृतिक रूप से भी टोपीदार लंगूरों के दमदार नर, छुटभइयों को खदेड़ कर, एक से अधिक मादाओं का साथ जुटा कर रहते देखे गये हैं। वैसे मादाओं के साथ के लिए इनकी जाति में निरन्तर संघर्ष चलता रहता है और जैसे ही कोई छुटभइया, खा-पीकर कद्दावर होता है, किसी कमजोर दल नेता को परास्त कर उसकी मादा साथियों के साथ रहने लगता है। कुछ स्थितियों में यह भी देखा गया है कि दल नेता बनते ही नर लंगूर, पहले नेता के बच्चों को पाल रही मादाओं की उपेक्षा दूर करने के लिए उनके बच्चों को छीन कर मार डालता है, जिससे वह पुनः, उसके बच्चों की, मां बनने को प्रस्तुत हो जाती हैं।

लंगूरों के इस स्वभाव का स्मरण करते ही, नयी मादा की व्यवस्था नहीं होने तक, हमने उद्विग्न नर को उसी लंगूर-घर के एक कटघरे में बन्द कर दिया। किन्तु शीघ्र ही हमारी मांग पर एक लंगूर-व्यापारी, नयी मादा ले आया था। उसके आते ही हमने, लंगूर-घर में चल रहे तनाव को शांत करने के उद्देश्य से नवागंतुक को उसी घर में छोड़ कर, कटघरे में बन्द नर लंगूर को भी खोल दिया था। किन्तु हमारे समक्ष उस समय

एक नयी ही समस्या खड़ी हो गयी, जब पहली मादा ने अपनी बच्ची को एक ओर छोड़ कर, नर के साथ घुलमिल रही नवागन्तुका को जा पटका और स्वयं नर की सेवाओं को प्रस्तुत हो गयी।

इन दोनों मादाओं के बीच का तनाव तभी शान्त हुआ, जब दूसरी मादा ने, पहले से उस घर में रह रही मादा की उपेक्षिता बच्ची की देखभाल करने का दायित्व सम्हाल कर उसको पूर्ण रूपेण नर साथी की देखभाल करने के लिए मुक्त कर दिया। टोपीदार लंगूरों के स्वभाव एवं दल-गत व्यवस्था के अध्ययन के इस मोड़ तक पहुंच कर हमें यही निष्कर्ष निकालना पड़ा कि दल में आने वाले प्रत्येक नये सदस्य को वरीयता क्रम में निचला दर्जा ही स्वीकारना पड़ेगा।

इस प्रकार नयी मादा द्वारा स्वतः घर की नौकरानी का दर्जा स्वीकार लेने से लंगूर-घर में पुनःशान्ति स्थापित हो गयी। किन्तु यह शान्ति स्थायी नहीं निकली। नर के साथ रहने के परिणामस्वरूप पहली मादा पुनः गर्भवती हो गयी। जैसे-जैसे उसके मां बनने के दिन निकट आते गये, हम उसका पहले का व्यवहार स्मरण कर चिन्तित होते गये। क्योंकि हम सोच रहे थे कि मां बनते ही, यह नर की ओर से उदासीन हो जायेगी और तब इसका नर साथी, नौकरानी बन कर रह रही दूसरी मादा की ओर उन्मुख हुए बिना नहीं रहेगा, उस दशा में लंगूर-घर में कलह मचेगी।

लेकिन इस बार हम गलत निकले। मां बनते ही, पहली मादा लंगूर, अपनी प्रथम संतान की सहायता से नये बच्चे की देखभाल में व्यस्त हो गयी। इस ओर उसने रंचमात्र भी ध्यान नहीं दिया कि उसका नर साथी, पिछले कई महीनों से उसकी बच्ची की देखभाल कर रही दूसरी मादा की जूंए बीनने लगा है।

इस स्वभाव परिवर्तन का एक कारण तो यह हो सकता है कि हर शौक की एक उम्र होती है।

लेकिन वन्य जीव, ठीक हमारी भांति ही नहीं सोचते। हो सकता है, उनकी दल-गत व्यवस्था यही हो कि पहले, नये सदस्य, वरिष्ठता क्रम में ऊपर आने वाले सदस्यों की सेवा करें, तभी दल नेता की निकटता के अधिकारी बनें।

कारण कुछ भी हो मादाओं के इस गृह-कलह में नर लंगूर की अनवरत तटस्थता ने मुझे कम आश्चर्यचकित नहीं किया। किसी भी स्तर पर उसने दोनों मादाओं के मध्य झगड़ा शान्त कराने अथवा किसी एक के पक्ष में बोलने की आतुरता नहीं दिखायी। इसी का परिणाम था कि लंगूर-घर में कोई दुर्घटना नहीं घटी।

— प्रोजेक्ट टाइगर
पर्यावरण एवं वन मंत्रालय
भारत सरकार, नई दिल्ली

मासिक भविष्यफल : जुलाई - ९१

□ पं. वी. के. तिवारी

मेष : (१४ अप्रैल - १४ मई)

इस माह संतान की ओर से विशेष चिंता एवं सुखबाधक स्थितियों का निर्माण हो सकता है। राजनीति में विरोधी मनोपीड़ा में वृद्धि करेंगें। उच्चाधिकारी एवं मित्र वर्ग के सहयोग से आपकी पीड़ा शांत होगी। १६ तारीख तक व्यावसायिक लाभ में वृद्धि होगी। यश व पद-प्रभाव का सुखोपभोग हो सकेगा। अधिकार का लाभ मिलेगा। स्वास्थ्य में आशातीत सुधार होगा। १७ तारीख से मासांत तक दांपत्य सुख में बाधाओं का समावेश बढ़ता जायेगा। स्थायी संपत्ति के क्षेत्र में स्थिति प्रतिकूल रहेगी। पूर्व विचारित कार्य की प्रगति अपेक्षित नहीं हो सकेगी। बाधाओं के सैलाब आपको आराम के जीवन से अलग-थलग कर देंगे, परंतु प्रतियोगिता एवं आत्मीय संबंधों में सफलता मिलेगी।

वृष : (१५ मई - १५ जून)

आपको इस माह आकस्मिक उपलब्धि प्राप्त होगी। अभीष्ट मंतव्य की पूर्ति होगी। जनप्रियता बढ़ेगी, राजनीति एवं व्यावसायिक वर्ग को लाभ प्राप्त होगा। १८ जुलाई तक पूर्ववत स्थितियां रहेंगी। सामान्यतः निराशावादी प्रकृति विभिन्न चिंताओं को जन्म देगी। स्वास्थ्य बाधा रहेगी। जन सामान्य छल का सहारा लेगा। दांपत्य जीवन में बाधा रहेगी। १९ से मासांत तक मैत्री संबंधों में वृद्धि होगी। दांपत्य मनमुटाव या सुखबाधक कारणों की निवृत्ति होगी।

मिथुन : (१६ जून - १६ जुलाई)

यह माह वर्ष का सर्वाधिक प्रतिकूल समय यात्रा, मंत्रणा एवं नये कार्यारंभ हेतु सिद्ध हो सकता है। १, ६, ७, १८, २८ व २९ दिनांक इस दृष्टि से सर्वथा वर्जित हैं। प्रथमार्ध माह आय व लाभ की दृष्टि से उत्तम है। मानसिक अथवा शारीरिक पीड़ा बनी रहेगी। विरोधी पराजित होंगे। आपके यश का प्रकाश फैलेगा। सूझ-बूझ एवं तर्कशक्ति के

प्रत्यक्ष लाभ मिलेंगे। स्वास्थ्य उत्तम रहेगा। दांपत्य सुख यथेष्ठ रहेगा। विद्या-पक्ष सफलतादायी रहेगा। उत्तरार्ध में प्रतिकूलता धीरे-धीरे बढ़ती जायेगी।

कर्क : (१७ जुलाई - १६ अगस्त)

२० जुलाई तक स्थितियों में परिवर्तन प्रतिकूल रहेगा। आकस्मिक व्यय में वृद्धि से आर्थिक संतुलन गड़बड़ायेगा। मानसिक कष्ट व निराशावाद की स्थिति बनी रहेगी। पारिवारिक सुख की प्राप्ति में व्यवधान उत्पन्न होंगे। व्यावसायिक दृष्टि से की गयी यात्राओं के वांछित परिणाम मिलना संदिग्ध है। २० के उपरांत मासांत तक स्थितियों में उत्तरोत्तर सुधार होता जायेगा। धन-लाभ में वृद्धि होगी। दांपत्य सुख-सुविधा एवं आमोद-प्रमोद में वृद्धि होगी। राजनीति के क्षेत्र में सफलता हस्तगत होगी।

सिंह : (१७ अगस्त - १६ सितम्बर)

१९ जुलाई तक विद्यार्थी एवं कमीशन एजेंट विशेष लाभान्वित होंगे। प्रेम संबंधों में वृद्धि होगी। व्यावसायिक सफलता हस्तगत होगी। संतान पक्ष से गौरवान्वित होंगे। परिवार में सुख, संतोष एवं सौहार्द्र रहेगा। २० से मासांत तक मन उद्वेलित, संतापित होता जायेगा। सफलता की मृग मरीचिका आपको हतप्रभ कर देगी। आकस्मिक रूप से संचित धन में कमी के अवसर उत्पन्न होंगे।

कन्या : (१७ सितम्बर - १६ अक्तूबर)

यह माह मिश्रित प्रभाव से संपन्न है। यदाकदा प्रतिकूलता आपको चौंका देगी तो कभी सहज सफलता आपको आश्चर्यान्वित कर देगी। अस्तु इसे वर्ष का विशेष उपादेय समय भी कहा जाना अतिशयोक्ति नहीं। पत्नी की अस्वस्थता की पूर्वापेक्षा रखें। भाई या विशेष मित्र वर्ग से विचार अंतर से मनोपीड़ा संभव है। यात्रा का योग प्रबल है। कार्यशैली या दायित्व में वृद्धि की संभावना है। नये सम्पर्कों में वृद्धि होगी। पद वृद्धि के यथेष्ठ अवसर हैं। नये रोजगार को कार्य रूप देने हेतु उपयुक्त अवसर है। आध्यात्मिक एवं मांगलिक कार्य के प्रति आपकी रुचि बढ़ेगी।

तुला : (१७ अक्तूबर - १५ नवंबर)

वर्ष के श्रेष्ठ समय की पदचाप आपको सुनायी देने लगी होगी। ग्रहों के समन्वित-सुखदायी क्षणों का आमोद-प्रमोद में या भोग विलास में अपव्यय होने से बचाने वाले व्यक्ति निश्चय ही 'सौभाग्य' के भागी होंगे। माह के १८ अंतिम दिन आपके लिए वर्ष के सर्वश्रेष्ठ दिन प्रमाणित हो सकते हैं। राजनेता एवं उच्चाधिकारी वर्ग निश्चय ही उच्चस्थिति प्राप्त कर सकेंगे। व्यावसायिक सफलता उत्तम रहेगी।

कार्यशैली में परिवर्तन उपयोगी सिद्ध होगा। पद, प्रभाव, प्रतिष्ठा एवं पराक्रम में वृद्धि होगी। उलझे प्रकरणों का निपटारा आपके पक्ष में होगा। भूमि-भवन से आय में वृद्धि होगी। प्रसन्नता, मनोबल, सफलता एवं निर्णय क्षमता के अच्छे अवसर हैं।

वृश्चिक : (१६ नवंबर - १५ दिसंबर)

इस माह धार्मिक कार्यों में मन रमाना चाहिये। विद्वान, निःस्वार्थ एवं दांपत्य साथी से विचार-विमर्श के पश्चात समस्याओं का हल सहजता से व श्रेष्ठ हो सकेगा। रोजगार में सुख बाधा एवं चिंता का सैलाब उमड़ता प्रतीत होगा। राजनीति में विरोधी आपकी स्थिति खराब करने में सफल हो सकेंगे। सफलता की प्राप्ति संदिग्ध रहेगी। मनोपीड़ा आपको उद्भ्रांत कर देगी। १९ के उपरांत आपकी स्थिति अनुकूल होती प्रतीत होगी। गृह-सुख-बाधा रहेगी। व्यवसाय में व्यवधान बढ़ेंगे। कोई भी जोखिम न लें। रोजगार में अवकाश आपको कई समस्याओं से सुरक्षा प्रदान कर सकेगा।

धनु : (१६ दिसम्बर - १३ जनवरी)

वर्ष के प्रतिकूल समय की अवधि उपस्थित हो रही हैं। इस माह यात्रा, जोखिम, महत्वपूर्ण वार्ता, नया कार्य आदि अपेक्षित परिणाम दे सकेंगे, इसकी संभावना अत्यल्प हैं। अतः सूझ-बूझ एवं धैर्य से निर्णय लें। दांपत्य जीवन के सुख में कमी होगी। परिवार पक्ष से सुख की प्राप्ति के अवसर कम हैं। धन का व्यय अथवा हानि के अवसर पर्याप्त हैं। विचारों में मतभेद की जड़ें मजबूत होंगी। अवमानना, अपयश, उपेक्षा एवं अपमानजन्य कष्टों में वृद्धि होगी। परिवार के सदस्यों से कष्ट होगा। १७ जुलाई तक विपरीत स्थितियों पर आंशिक सफलता एवं सामाजिक सुयश प्राप्त होता रहेगा, परंतु इसके पश्चात् विरोधी स्थिति में वृद्धि होती जायेगी।

मकर : (१४ जनवरी - १२ फरवरी)

प्रारंभिक १६ जुलाई के दिनों में दांपत्य साथी से विवाद एवं प्रियमित्रों से विरोध के अवसर उत्पन्न होंगे। यात्रा लाभदायी नहीं रहेगी। कार्य-सफलता के सुयोग हैं। व्यक्तिगत प्रभाव में वृद्धि होगी। अन्न, वस्त्र आदि का लाभ होगा। शत्रु पराजित होंगे। १७ जुलाई से मासांत तक दांपत्य सुख-बाधा रहेगी। संतान अस्वस्थ रहेगी। व्यावसायिक बाधायें उत्पन्न होंगी। मनोक्लेश, उदरपीड़ा में वृद्धि। मनोबल बनाये रखें, प्रयासों की परिणति आपके ही पक्ष में होगी। शत्रु अंततोगत्वा पराजित होंगे। विद्यार्थी सफल होंगे। सुख-समृद्धि में वृद्धि होगी।

कुंभ : (१३ फरवरी - १४ मार्च)

इस पूरे माह में दांपत्य साथी को स्वास्थ्य बाधा, क्लेश रहेगा। रोजगार

में कठिनाइयां बढ़ेगी। प्रेम संबंध अपयश के कारण बनेंगे। यात्रा में वृद्धि होगी। प्रारंभिक १५ दिनों में मानसिक व शारीरिक सुख यथेष्ठ रहेगा। लेखक, संगीतज्ञ एवं कलाकार यशस्वी होंगे। शत्रुओं पर विजय होगी। इस माह में उत्तरोत्तर प्रतिकूलता बढ़ती जायेगी, परंतु नये निर्णय से बचना ही हितकर होगा।

मीन : (१५ मार्च - १३ अप्रैल)

माह के प्रथम २० दिन सामान्यतः सुख रहित ही व्यतीत होंगे। गृह सुख-सुविधा की सामान्य आवश्यकताओं की पूर्ति में भी व्यवधान उत्पन्न होंगे। व्यर्थ की आलोचना एवं अकर्मण्यता के प्रतिकूल प्रभाव अब मिलना प्रारंभ होंगे। अपयशदायी स्थितियों का निर्माण होगा। उच्चाधिकारी वर्ग से मतभेद की स्थितियां बचाने का प्रयास करें। यात्रादि में हानि की संभावनायें हैं। प्रेम संबंधों में कड़वाहट उत्पन्न होगी। आर्थिक क्षेत्र में परेशानी रहेगी। २१ से मासांत तक उत्तरोत्तर अनुकलता आयेगी। राजनेता शत्रुजयी होंगे। शारीरिक सुख एवं मानसिक संतोष में वृद्धि होगी। व्यक्तिगत यश के प्रवाह में तेजी आयेगी। परंतु पूरे माह में साझेदारों से विवाद की स्थिति से बचने का प्रयास करें। यात्रा अति आवश्यक होने पर ही करें।

जुलाई मास के व्रत एवं त्यौहार

योगिनी एकादशी - ९; हलहारिणी अमावस - ११; रथयात्रा एवं चंद्र-दर्शन- १३; वैनायकी चतुर्थी - १५; कुमार षष्ठी व्रत - १७; विवस्त सूर्यपूजा - १८; दुर्गाष्टमी व्रत - १९; कंदर्प नवमी; देवशयनी एकादशी - २२; गुरुपूर्णिमा गोवद्म व्रत, कोकिला व्रत - २६; सौभाग्यसुंदरी व्रत - २९; नागपंचमी - ३१; प्रदोष व्रत ९ व २३ जुलाई।

— देवलोक कालोनी, सी.टी.ओ. बेरागढ़ (भोपाल), म.प्र.

महादेव गोविन्द रानडे भोजन कर चुके थे, उनकी पत्नी ने आम की एक प्लेट उनकी ओर बढ़ाई और कहा, 'तुम्हारी ससुराल से आये हैं, बहुत पके और मीठे हैं।'

रानडे ने एक फांक उठाई, खाकर बोले, 'बहुत अच्छे हैं, मीठे और रसीले।'

पत्नी ने बार-बार आग्रह किया पर रानडे ने दृढ़ता से मना कर दिया।

पत्नी ने कहा, 'आप की तबीयत ठीक नहीं है या आम अच्छे नहीं लगे?'

रानडे : 'मेरी तबीयत बिल्कुल ठीक है और ऐसे स्वादिष्ट आम कभी-कभी ही मिलते हैं। जीभ चटोरी न हो, इसीलिए और नहीं ले रहा।' **— विजय भारद्वाज**

सांस्कृतिक मंच

'स्वयंसिद्धा' का गठन

बम्बई महानगर की कुछ प्रबुद्ध महिलाओं ने 'स्वयंसिद्धा' नामक संस्था की स्थापना ११ मई को की। श्रीमती मालिनी बिसेन इसकी मुख्य संघटक हैं। इस अवसर पर उपस्थित डॉ. राम-मनोहर त्रिपाठी, श्री विश्वनाथ सचदेव, श्री नंदकिशोर नौटियाल एवं डॉ. गिरिजाशंकर त्रिवेदी ने संस्था के उज्ज्वल भविष्य की कामना की। इसके बाद हुई कवि-गोष्ठी की अध्यक्षता श्री राहुल देव ने एवं संचालन डॉ. गिरिजाशंकर त्रिवेदी ने किया। काव्य-पाठ करने वालों में सीमा चटर्जी, शुक्ला शाह, डॉ. सुशीला गुप्ता, कुसुम जोशी, मालिनी बिसेन, शिवशंकर वशिष्ठ, अमर चतुर्वेदी, अरुण सिंह 'मख्मूर', मयंक, मधुकर गौड़, जोगिंदर सिंह चावला, मुरलीधर पाण्डेय, अंगद सिंह बिसेन, धीरेंद्र अस्थाना और डॉ. गिरिजाशंकर त्रिवेदी आदि थे।

* * *

समकालीन कविता पर संगोष्ठी

फीरोज गांधी महाविद्यालय, रायबरेली द्वारा हिंदी की समकालीन कविता पर एक द्विदिवसीय संगोष्ठी डॉ. देवराज की अध्यक्षता में संपन्न हुई। कानपुर वि. वि. के उपकुलपति डॉ. विश्वंभरनाथ उपाध्याय ने कहा कि हम समकालीन कविता के अर्थ को सुनिश्चित नहीं करते। समकालीन कविता वह कविता है, जो प्रधानतया अपने समय का बोध कराती है। डॉ. देवराज ने कहा कि कविता मानवीय चेतना को अग्रसर करने का साहित्य है। डॉ. श्याम तिवारी, डॉ. श्यामनारायण शुक्ल, डॉ. यतीन्द्र तिवारी, डॉ. शिव स्वरूप तिवारी, डॉ. रोहिताश्व अस्थाना, डॉ. उद्भ्रांत, डॉ. उमाशंकर शुक्ल, डॉ. रमेश द्विवेदी तथा डॉ. देवीशंकर द्विवेदी आदि विद्वानों ने संगोष्ठी में भाग लिया। महाविद्यालय के प्रबंध मंत्री ओंकारनाथ भार्गव तथा प्राचार्य डॉ. महेश जौहरी ने आभार व्यक्त किया और डॉ. रामेन्द्र

पांडेय ने संचालन किया।

- आनंद स्वरूप श्रीवास्तव

* * *

समन्वय-संकल्प गीत-संध्या

बंबई महानगर की सामाजिक-साहित्यिक पत्रिका 'समन्वय-संकल्प' की ओर से आयोजित 'इंद्रधनुषी गीत-संध्या' के अवसर पर श्री अनिरुद्ध कुमार पांडेय द्वारा कवियों और अतिथियों के स्वागत के बाद गीत-संध्या की शुरुआत हुई। देवमणि पांडेय के संचालन में संपन्न इस इंद्रधनुषी गीत-संध्या में महानगर के सात गीतकारों, किरण मिश्र, कैलाश सेंगर, हरिश्चंद्र, सुमन सरीन, आनंद त्रिपाठी, हृदयेश मयंक एवं डॉ. सुधाकर मिश्र ने अपने गीत पाठ किये। कार्यक्रम के मुख्य अतिथि थे, शायर निदा फाज़ली। सम्मेलनाध्यक्ष थे वरिष्ठ कवि पं. वीरेन्द्र मिश्र।

* * *

वरिष्ठ रचनाकारों का सम्मान

साहित्यिक संस्था 'कला मंदिर,' भोपाल के ४० वे वार्षिकोत्सव पर महेश श्रीवास्तव ने कालजयी कृतिकारों पं. प्रभुदयाल अग्निहोत्री तथा डॉ. चंद्रप्रकाश वर्मा को सम्मानित किया।

इस अवसर पर समारोह स्मारिका व सिंधी कवि प्रेमचंद जेठवानी के काव्य-संकलन 'अमलतास' का विमोचन भी किया गया।

कार्यक्रम की अध्यक्षता वरिष्ठ कवि, पत्रकार तथा स्वतंत्रता संग्राम सेनानी भाई रतन कुमार ने की व संचालन किया डॉ. देवेन्द्र दीपक ने तथा आभार व्यक्त किया श्री केदार पुरोहित ने।

* * *

'भारतीयता की पहचान' गोष्ठी

भोपाल : विगत दिनों यहां स्वामी प्रणवानंद सरस्वती भारतीय साहित्य न्यास के तत्वावधान में 'भारतीयता की पहचान' विषय पर संगोष्ठी का आयोजन हुआ।

इसकी अध्यक्षता म.प्र. शासन के सहकारिता मंत्री श्री लक्ष्मी नारायण शर्मा ने की।

संगोष्ठी को सम्बोधित करते हुए विख्यात ,रातत्वविशेषज्ञ, इतिहासकार श्री के. डी. वाजपेयी ने कहा कि विश्वपुराण में भारतीय की व्याख्या की गयी है कि भारत में रहने वाले भारतीय हैं, सत्य और नैतिकता ही उनकी पहचान है।'

डॉ. प्रभुदयाल अग्निहोत्री ने कहा कि 'मैं भारतीय उसे मानता हूं' जो भारत की विरासत पर श्रद्धा रखता हो।'

डॉ. चंद्रप्रकाश वर्मा ने कहा कि भारतीय संस्कृति नैतिकता और धर्म के स्तम्भ पर खड़ी है।

इसी प्रकार पुष्पेन्द्र वर्मा, डॉ. ओम

...नारायण शर्मा, डॉ. देवेन्द्र दीपक, डॉ. शकीला फरहत, अम्बा प्रसाद श्रीवास्तव ने अपने-अपने पक्ष प्रस्तुत किये। सगोष्ठी का संचालन किया डॉ. देवेंद्र दीपक ने।

— अरुण नागर

* * *

शुक्ल शताब्दी समापन

'हिंदी और संस्कृत दोनों देश को जोड़ने वाली भाषायें हैं।' यह उद्‌गार राज्यपाल श्री वी. सत्यनारायण रेड्डी ने सुप्रसिद्ध पत्रिका 'सरस्वती' के भूतपूर्व यशस्वी संपादक पं. देवीदत्त शुक्ल के शताब्दी-समापन समारोह के अवसर पर लखनऊ में व्यक्त किये। इस अवसर पर श्री रमादत्त शुक्ल द्वारा प्रयाग में पं. देवीदत्त शुक्ल संस्थान' की स्थापना, आधुनिक हिंदी के निर्माता आचार्य पं. महावीर प्रसाद द्विवेदी और पं. देवीदत्त शुक्लजी की स्मृति में हिंदी के प्रचार-प्रसार में उल्लेखनीय योगदान करने वाले साहित्यकारों को एक-एक पुरस्कार प्रतिवर्ष उक्त शोध संस्थान द्वारा दिये जाने की घोषणा की गयी।

डॉ. चक्रपाणि पांडेय द्वारा कविता-पाठ के उपरांत डॉ. विश्वनाथ मिश्र ने पं. देवीदत्त की प्रकृति, व्यक्तित्व एवं उनकी साधना तथा 'सरस्वती' मासिक पत्रिका के संपादन एवं प्रबंधकीय क्षमता के बारे में विस्तृत रूप से प्रकाश डाला।

राज्यपाल महोदय ने यह भी कहा कि वे दक्षिण भारत के हैं और दक्षिण भारत के लोग हिन्दी-विरोधी नहीं हैं। हिन्दी तो राष्ट्रभाषा है। उन्होंने उत्तर भारतीय लोगों से देश की अन्य भाषाओं को भी सीखने पर बल दिया।

समापन-समारोह की अध्यक्षता माननीय श्री त्रिभुवनप्रसाद तिवारी, भूतपूर्व उपराज्यपाल, पांडिचेरी ने की। श्री कैलाशचंद्र मिश्र ने कहा कि हिंदी जगत यह बात सदियों तक न भुला पायेगा कि हिंदी निर्माण व प्रचार-प्रसार के लिए श्रद्धेय शुक्लजी ने अपने नेत्रों का दान किया था। अंधे होने के बाद भी वे साहित्य-साधना में निरंतर जुटे रहे।

शताब्दी-समारोह समिति के संयोजक पं. रमादत्त शुक्ल ने दोनों मान्य अतिथियों को सम्मानित किया।

— मुहम्मद अशरफ

* * *

दो अक्षर पुत्रों का सम्मान

सीतापुर : 'जनपद साहित्य सभा', बिसवां के तत्वावधान में साहित्यकार अभिनंदन समारोह संपन्न हुआ। इस अवसर पर जनपद के दो सुख्यात अक्षर-पुत्रों कविवर पं. उमादत्त सारस्वत 'दत्त' तथा डॉ. कुंवर चंद्रप्रकाश सिंह का अभिनंदन किया गया।

कार्यक्रम का प्रारंभ अध्यक्ष श्री रामजीदास कपूर के द्वारा सरस्वती-

पूजन, कु. संजीता श्रीवास्तव द्वारा सरस्वती-वंदन, डॉ. के. जी. मिश्र द्वारा स्वागत भाषण तथा श्री गिरिजाशंकर मिश्र द्वारा वार्षिक आख्या-वाचन से हुआ। तदुपरांत श्री सोमदत्त शुक्ल ने पं. उमादत्त सारस्वत को तथा श्री गिरिजाशंकर मिश्र ने डॉ. कुंवर चंद्रप्रकाश सिंह को उत्तरीय, उपनिषदों का 'सेट' तथा अभिनंदन-पत्र प्रदान कर सम्मानित किया।

इस अवसर पर डॉ. शिवमोहन सिंह, डॉ. उमाशंकर शुक्ल, श्री महेन्द्र कुमार शास्त्री 'सरल', डॉ. कृपाशंकर शुक्ल श्री रामस्वरूप अवस्थी, प्रो. अनुराग गुप्त तथा अवधी के सुकवि श्री चतुर्भुज शर्मा आदि ने 'दत्तजी' तथा 'कुंवर' जी के लिए कहा कि राष्ट्रभाषा को अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर प्रतिष्ठित करने में इन दोनों का महत्वपूर्ण योगदान है।

कार्यक्रम का संचालन डॉ. गणेशदत्त सारस्वत ने तथा आभार-प्रदर्शन श्री सोमदत्त शुक्ल ने किया।

– डॉ. गणेशदत्त सारस्वत

* * *

गीत अन्तर आत्मा की आवाज

नगर-ज्योति बंबई द्वारा आयोजित दो दिवसीय गीत-महोत्सव बंबई के एस.एन.डी.टी. विश्वविद्यालय में संपन्न हुआ।

प्रथम दिन की अध्यक्षता 'नवभारत टाइम्स' के स्थानीय संपादक श्री विश्वनाथ सचदेव ने की। प्रमुख अतिथि 'धर्मयुग' के संपादक श्री गणेश मंत्री, डॉ. राममनोहर त्रिपाठी, श्री शिवशंकर वशिष्ठ एवं ब्लिट्ज के संपादक श्री नंदकिशोर नौटियाल उपस्थित थे। दो दिवसीय गीत-महोत्सव का संचालन मधुकर गौड़ ने किया। वक्ताओं ने कहा कि गीत मनुष्य को हमेशा गुदगुदाता रहा है और समूह के समवेत स्वरों को जोड़ने में सफल रहा है। इसलिए गीत की उपादेयता कभी खत्म नहीं होगी।

गीत-पाठ में भाग लेने वाले सर्वश्री विश्वनाथ सचदेव, उदय खन्ना, श्रीमती कुसुम जोशी, नामवर, देवदत्त वाजपेयी, जयप्रकाश त्रिपाठी, सुरेश मिश्र, आनंद त्रिपाठी, अशोक तिवारी, कमल शक्ल, किरण मिश्र म. ना. नरहरि, मुरलीधर पांडेय, रामनगीना सिंह, सुमन सरीन एवं कपिल पांडेय थे।

दूसरे दिन के आयोजन की अध्यक्षता बंबई विश्वविद्यालय के हिंदी विभाग के अध्यक्ष डॉ. चंद्रकांत बांदिवड़ेकर ने की। विशेष अतिथि के रूप में उपस्थित 'नवनीत' के संपादक डॉ. गिरिजाशंकर त्रिवेदी एवं डॉ. उमा शुक्ला थे। आयोजन की शुरुआत श्रीमती सरिता मारवाह की सरस्वती वंदना से हुई।

गीत पाठ करने वालों में सर्वश्री शिवशंकर वशिष्ठ, अमर चतुर्वेदी, श्रीमती पूजाश्री, डॉ. गिरिजाशंकर

त्रिवेदी, मधुकर गौड़, किशोरीरमण टंडन, हरिश्चंद्र, डॉ. सुधाकर मिश्र, प्रमिला गुप्ता, मालिनी बिसेन, डॉ. मोहनलाल गुप्त, अनुभा शर्मा, के. के. सिह मयंक, देवमणि पांडेय, अमरनाथ सिंह मोही, रमेशचंद्र शर्मा एवं श्रीमती शुक्ला शाह थे।

स्वागत श्री बी. एन. दाधीच ने किया। नगरज्योति द्वारा एक गीत संकलन प्रकाशित करने की भी घोषणा की गयी।

– कविता शर्मा 'हरीमणी'

* * *

अज्ञेयजी की प्रतिमा

गत ७ मार्च को पटना स्थित कामता सेवा केंद्र के परिसर में अज्ञेयजी की प्रतिमा का अनावरण किया गया। वत्सलनिधि की सचिव इला डालमियां ने प्रथम माल्यार्पण कर अनावरण को आत्मीयता प्रदान की।

उसके बाद बिहार के तीन मंत्रियों सर्वश्री हिन्द केसरी यादव पर्यटन मंत्री, विजय कृष्ण राजभाषा मंत्री तथा रामनरेश प्रसाद विधि मंत्री ने माल्यार्पण के साथ अज्ञेयजी को बिहार की जनता का प्रणाम अर्पित किया। तत्पश्चात श्रीमती लतिका रेणु, श्रीमती दुर्गावती सिंह और श्रीमती काननबाला सिंह ने प्रतिमा पर पुष्प गुच्छ भेंट किये।

इस अवसर पर श्रद्धा हेतु उपस्थित जन समुदाय को श्री विजय कृष्ण और श्री राम नरेश प्रसाद के अतिरिक्त अज्ञेयजी के भाई श्री नित्यानंद, औरंगाबाद के जिलाधिकारी श्री एस. एन. गुप्त, श्रीमती दुर्गावती सिंह तथा इला डालमिया ने भी संबोधित किया। सभा की अध्यक्षता बिहार के पर्यटक मंत्री श्री हिन्द केसरी यादव ने की और संचालन किया श्री जितेन्द्र सिंहजी ने।

इस समारोह के संयोजक थे सांसद श्री शंकर दयाल सिंह। **–रंजन कुमार**

* * *

डॉ. अंबेडकर स्मृति पुरस्कार

भोपाल : संसदीय संवैधानिक और विधायी विषयों पर हिन्दी में उत्कृष्ट लेखम के लिए डॉ. अंबेडकर स्मृति पुरस्कार अंबेडकर शताब्दी १४ अप्रैल १९९१ को मध्य प्रदेश विधानसभा अध्यक्ष श्री ब्रिजमोहन मिश्र द्वारा प्रदान किये गये। पंद्रह हजार रुपये का स्मृति पुरस्कार पत्रकार जगदीश प्रसाद चतुर्वेदी को उनकी पुस्तक 'राष्ट्रपति, संसद और प्रधानमंत्री' पर दिया गया और पांच हजार रुपये का सांत्वना पुरस्कार श्रीमती मीनाक्षी टेलर को उनके शोध प्रबंध 'भारत में संसदीय शासन के औचित्य का परीक्षण' नामक पांडुलिपि पर दिया गया।

- कृष्णलाल सचदेव

तो वह एकाकीपन में नहीं थे। यह एक समन्वित सुधार प्रक्रिया के अनिवार्य और ताने-बाने के अभिन्न अंग थे। ग्रामीण स्वराज्य तो स्वावलम्बीपन की एक महत्वपूर्ण आधारशिला थी। किंतु जिस तरह प्रगति को हासिल करने के

अंतर्द्वन्द्व

□ कमल टावरी

इन दिनों जहां मैं काम करता हूं, उस संगठन की जड़ें आर्थिक, सामाजिक, राजनैतिक तथा ऐतिहासिक रूप से अति गहरी हैं। इसका संबंध मानव के विकास तथा समय-समय के उतार-चढ़ाव से जुड़ा है। अजंता, एलोरा जैसे स्थल उसके जीवन्त प्रमाण हैं। जो व्यवस्था अपने अतीत से पाठ नहीं लेगी, वह लम्बे समय तक स्थायित्य प्रदान नहीं कर सकती। समय ने अपनी परीक्षा के कई खट्टे-मीठे मापदंड अपनाये हैं और जो उस स्थायित्व की परीक्षा में अपने आप जुड़ नहीं पायेगा, हारकर अस्तित्व- विहीन हो जायेगा। अच्छी मान्यताएं, विचार एवं पुस्तकें समय के साथ अपने महत्व तथा ग्राह्यता को और मजबूत बनाती चलती हैं।

ऐसे संगठन को जब महापुरुषों द्वारा पुनर्जीवित करने का प्रयास किया गया प्रयासों को डब्बे-डब्बे पर नापना एवं महसूस करना ज़रूरी है, उससे भी ज़्यादा आघात करनेवालों के लक्षणों को ध्यान में रखना ज़रूरी है। तांत्रिक ज्ञान जीवन के प्रत्येक स्तर में घुस चुका है, किन्तु विदेशी होने के कारण देशी ज़मीन में, यहां की आबोहवा में गहरी जड़ें नहीं बन पा रही हैं। समय के प्रकोप ने अपनी समस्याओं के परिप्रेक्ष्य में इसकी अग्राह्यता स्पष्ट बना दी है। गांधीजी को हम चाहे जितना कोसने के लिए बिन्दु ढूंढ़ें, उनकी प्रासंगिकता शायद बढ़ोतरी पर ही है।

कुछ एक अव्यावहारिक मान्यताओं को पकड़ कर अन्य व्यावहारिकताओं को भी दफन करना भयंकर भूल है। फिर संगठित संगठनों द्वारा असंगठित लक्ष्य-समूह को कई विदेशी सिद्धांतों पर आधारित कार्यक्रम देने का प्रयास

असफल रहा है। गरीबी तथा अमीरी के जो पाकेट्स बन गये हैं, उनमें सबसे अधिक शोषित असंगठित संगठन ही रहे। चाहे वह पर्वतीय महिलाओं का हो या आदिवासियों का। दैनिक जीवन की आवश्यकताएं जो कभी स्थानिक रूप से नज़दीक ही उपलब्ध हो जाती थीं, आज दूर-दूर हो रही हैं। इतना ही नहीं संगठित प्रशासनिक विकासात्मक तथा अव्यावहारिक कार्यक्रम फैलानेवाली अति महंगी सरकारी, अर्ध सरकारी व्यवस्थाएं अपने दोष से अविश्वास फैलाये हैं। हम भी मानसिकता से बौने होते गये। आय तथा जीवन-स्तर औसतन बढ़ा है, किन्तु मानसिकता उतनी ही संकुचित हुई है। ऐसा न होता तो राष्ट्रीय भावना इतनी सिमटी हुई दिखायी न देती। फिर जो भौतिकवादी जीवन शैली ने हमें ग्रस्त किया है, उसका तो मूल्यांकन करना ही मुश्किल है। ऐसी स्थिति मे कोई संगठन जब वर्तमान की कार्यशैली, नीति तथा उपलब्धियों का निष्पक्ष मूल्यांकन करता है तो उसे अनिवार्य रूप से अन्य संगठनों के साथ तुलना करने का उलाहना दिया जाता है। कहीं पर अपव्यय या ग्रांट सबूसीडी को समाप्त कर काम करने की बात भी की जाती है तो कृषि, कृत्रिम खाद, परिवहन, नुकसान में चल रही मिलों तथा अन्य फैक्टरियों का अरबों का नुकसान का उदाहरण दिया जाता है। बड़ा अंतर्द्वन्द्व चलता है कि ऐसे बिन्दुओं का क्या उत्तर है?

बहरहाल यह तो ज़रूरी है कि जो अपने आप को गांधीजी के वारिस कहलाते हैं और उनके नाम पर सुविधाओं के उपभोग की बात करते हैं, उन्हें एक नैतिक अधिकार हासिल हो जाता है। किंतु जो संगठन गांधीजी के क़दम-क़दम पर दोहाई देकर, उनकी मान्यताओं की शाश्वतता का नगाड़ा पीटते हैं, कम से कम उन्हें तो ऐसी संकुचित, दूषित विचारधारा का उदाहरण देने का नैतिक अधिकार हासिल नहीं है। कोई यदि कुएं में बार-बार गिर रहा है और हम जानते हैं कि उसका गिरना ठीक नहीं है, तब भी क्या हम वही ग़लती कर सकते हैं, जो स्पष्ट कह रहा है कि शोषण करके जी रहे हैं तथा उसे किन्हीं सिद्धांतों में विश्वास नहीं है, वह ज़्यादा वंदनीय है, बनिस्बत उससे जो सिद्धान्त की रोटी खाकर सिद्धान्त के नाम पर सिद्धान्त का ही कत्ल कर रहा है।

यह मानते हुए कि विडम्बनाएं तथा विषमताएं वर्तमान युग की अनिवार्यताएं हैं, तंत्रज्ञान, विज्ञान तथा अध्यात्म का समन्वयन करने की आवश्यकता बदलने वालों का महत्व ऐसी स्थिति में बहुत बढ़ जाता है। शासकीय संगठन, सामाजिक सुधारों के लिए कहीं भी सफल नहीं है। मगर स्वैच्छिक संगठन

भी उन्हीं बीमारियों से कम ग्रसित नहीं है। ऐसी स्थिति में अपनी मान्यताओं के अनुसार वैज्ञानिक तरीके से समस्याओं को दूर करने के प्रयासों के तरीके, उनके विश्लेषण तथा क्रमबद्धता बहुत ज़रूरी है।

विभिन्न घटकों के बिना पोषित एवं संरक्षित वर्ग-समूह में क्षमता लाना संभव नहीं है। शांतिपूर्ण तरीके से मिल-जुल कर जीवन-यापन करना ही विकल्प बचता है। मगर राष्ट्रीयता की मान्यताएं तो अनिवार्य ही हैं। ये मान्यताएं उन जड़ों से ही पनप सकती हैं, जिन्होंने समय की परीक्षा में अपने को तपाया और टिकाया है। इस देश का इतिहास हज़ारों वर्षों से विकसित रूप से उपलब्ध है और उसके उतार-चढ़ाव के कारणों को समझ कर ही सिद्धान्तों को व्यावहारिक रूप दिया जा सकता हैं। इसमें जहां आदर्शवादिता पर व्यावहारिकता स्वयं ढूंढ़ना ज़रूरी है, वहीं अपनी मान्यताओं को भी बनाये रखना ज़रूरी है।

अंतर्द्वन्द्वता इसी का एक रूप है, जो न तो स्वयं शांति तथा स्थायी जीवन जीने देते हैं और न ही स्पष्ट सोचने दे सकते हैं।

जो संगठन पिछले ५-१० वर्षों में बना और बढ़ा है, उसमें नयी पीढ़ी के व्यक्तियों का प्रादुर्भाव होना संभव है। जो जवान है और वर्तमान की मान्यताओं में अनुकरणीय हैं। किंतु जो संगठन सत्ता के समय संगठित हुए, आज उनमें वरिष्ठ पदों पर अधिकतर सेवानिवृत्त वाले ही मिलेंगे। उनमें इतिहास की यादें हैं, मगर वर्तमान की क्षमता नहीं।

गांधीजी की प्रासंगिकता जहां बढ़ी है, वहीं उनके विचारों की मान्यताएं भी बढ़ी हैं। ऐसी स्थिति में उनके नाम पर बड़े-बड़े संगठनों का भी अपना अध्ययन उन्हीं मान्यताओं के अनुरूप अनिवार्य हो जाता है। समय के साथ आत्म-परीक्षण भी अनिवार्य है। ऐसी स्थिति में २१वीं शताब्दी के आने के पूर्व १९९१ से २००० के इस दशक में हर एक को अपनी मान्यताओं का पुनर्निरूपण का समय आ गया है। चाहे वह अधिकतम व्यय में न्यूनतम व्यय का बिन्दु हो, या अपव्यय। गरीबी के विरुद्ध अमीरी हो या मानसिकता। विचार परिवर्तन हो या शासन की अविरक्तता। ऐसी स्थिति में अंतर्द्वन्द्व तथा वैचारिक क्रांति का महत्व इसपर अधिक निर्भर करेगा कि उसे किस दृष्टिकोण से देखा और दिखाया जाता है। दृष्टिकोण के अंतर का अध्ययन करते वक्त हमारे अब तक के अनुभवों को समय के परीक्षण में वह कैसे उतरा है, उन्हें निष्पक्ष रूप से देखना और भी महत्वपूर्ण है।

२. अभिषेक, रो सोसायटी,
डीं. एन. नगर, अंधेरी (पं.),
बंबई-४०० ०५८.

लंबी जिंदगी जीने का रहस्य

□ डॉ. अनामिका प्रकाश

अमेरिकी जनगणना बताती है कि इस देश में कुल मिलाकर २९ हजार व्यक्ति ऐसे हैं जो लगभग सौ वर्ष की आयु पर पहुंच चुके हैं। जबकि सामान्य मनुष्य उससे कहीं कम आयु में प्रयाण कर जाते हैं, तब इनके लिए इतनी लम्बी अवधि तक जीवित रह सकना कैसे सम्भव हुआ? इस प्रश्न का समाधान आवश्यक समझा गया और उपयोगी भी। अस्तु इस सम्बन्ध में खोज की गयी और महत्वपूर्ण उत्तर प्राप्त किये गये।

डॉ. जार्ज गेलुप और डॉ. एविन हिल ने खोज में विशेष दिलचस्पी ली और उपरोक्त २९ हजार में से ९५ वर्ष से अधिक आयु के ४०२ में १५२ पुरुष और २५० महिलायें थी। संख्या अनुपात के हिसाब से रखी गयी, क्योंकि दीर्घ-जीवियों में पुरुषों की अपेक्षा महिलायें ही अधिक थीं।

आशा यह की गयी थी कि ऐसे उत्तर प्राप्त होंगे जिनसे दीर्घ-जीवन सम्बन्धी किन्हीं अज्ञात रहस्यों पर से पर्दा उठेगा और कुछ ऐसे नये गुर प्राप्त होंगे, जिन्हें अपनाकर दीर्घ-जीवन के इच्छुक लोग लम्बी आयुष्य भोगने का मनोरथ पूरा कर सकें। तैयारी यह भी की गयी थी कि जो उत्तर प्राप्त होंगे, उन्हें अनुसन्धान का विषय बनाया जायेगा और देखा जायेगा कि उपलब्ध सिद्धांतों को किस स्थिति में – किस व्यक्ति के लिए किस प्रकार प्रयोग कर सकना सम्भव है। किन्तु जब उत्तरों का संकलन पूरा हो गया तो सभी पूर्व कल्पनायें और योजनायें निरस्त करनी पड़ीं। जैसी कि आशा थी – कोई अद्भुत रहस्य मिल नहीं सका। वरन् उल्टे यह प्रतीत हुआ है – जो इस विषय में अधिक लापरवाह रहे हैं, वही अधिक जिये हैं। हां इतना जरूर रहा है कि उन्होंने सीधा और सरल जीवन क्रम अपनाया था।

आप लम्बी अवधि तक कैसे जिये? इसके उत्तर में २८ प्रतिशत ने कहा – हमें इसका कोई रहस्य नहीं मालूम। यह अनायास ही हो गया। २२ प्रतिशत ने

इसे ईश्वरेच्छा बताया, १७ प्रतिशत ने कहा वे अपनी समस्याओं की ओर से उदासीन रहे और हंसती-खेलती जिन्दगी काटते रहे हैं। १६ प्रतिशत ने परिश्रमशीलता और नियमितता को कारण बताया, ११ प्रतिशत ने कहा हमारे पूर्वज दीर्घजीवी होते रहे हैं सो हमें भी उनकी विरासत मिली। केवल ६ प्रतिशत ने ही नियमित आहार-विहार और जानबूझ कर दीर्घ-जीवन के लिए प्रयत्नशील रहने की बात बतायी। इन वृद्ध व्यक्तियों के आहार-विहार का अन्वेषण किया गया तो इतना पता जरूर लगा कि उनमें से तीन चौथाई सादा-जीवन जीते रहे हैं। उनका आहार-विहार सरल रहा है और मानसिक दृष्टि से उन पर कोई अतिरिक्त तनाव या दबाव नहीं रहा। उन्होंने निश्चिन्त और निर्द्वन्द्व मनन स्थिति में जिन्दगी के दिन बिताये है।

दीर्घ-जीवन के रहस्यों का पता लगाने के लिए शरीर-शास्त्री विभिन्न प्रकार की खोजे करते रहे हैं और विभिन्न निष्कर्ष निकालते रहे हैं। पर यह निष्कर्ष सबसे अद्भुत है कि हल्का-फुल्का और सीधा सरल जीवनक्रम अपनाकर भी लम्बी आयुष्य प्राप्त की जा सकती है।

पूछताछ में दीर्घायुष्य नर-नारियों द्वारा जो उत्तर डॉ. गैलुप और डॉ. हिल को मिले वे आश्चर्यजनक भले ही न हों पर कौतूहलवर्धक अवश्य हैं। वे ऐसे नये तथ्यों पर प्रकाश डालते हैं, जिन पर इन नवीन आविष्कारों की खोज में आकुल-व्याकुल लोगों को सन्तोष हो सकना कठिन है। फिर उनसे मनोरंजन हर किसी का हो सकता है और सोचने के लिए एक नया आधार मिल सकता है कि क्या सभ्यता के इस युग में 'दकियानूसी' पन भी दीर्घ-जीवन का एक आधार हो सकता है?

११५ वर्षीय सिनेसिनोंटी ने नशेबाजी से परहेज रखा। ९५ वर्षीय जान राबर्ट्स ने कहा उन्हें पकवान कभी नहीं रुचे। ९९ वर्षीय दन्तचिकित्सक रहैट्स् को सदा से मस्ती सूझती रही है। वह गवैयों की पंक्ति का अभी भी दीवाना है और अपने पुराने गीतों तथा भर्राये स्वर में लोगों का मनोरंजन नहीं कौतूहल अवश्य बढ़ाता है।

विलियम्स ने बताया उन्होंने सदा पेट की मांग से कम भोजन किया है और पेट में कभी कब्ज नहीं होने दिया। श्रीमती मौंगर १०३ वर्ष की हैं वे कहती हैं आलू और रोटी ही उनका प्रिय आहार रहा है तरह-तरह के व्यजंन न तो उन्हें रुचे न पचे।

स्त्रियों में से अधिकांश ने कहा— अपनी घर-गृहस्थी में वे इतनी गहराई से रमी रहीं कि उन्हें यह आभास तक नहीं हुआ कि इतनी लम्बी जिन्दगी ऐसे ही हंसते-खेलते कट गयी। उन्हें तो अपना बचपन कल-परसों जैसी घटना लगता

है।

१०६ वर्षीय हैफगुज नामक गडरिये ने कहा – उसने अपने को भेड़ों में से ही एक माना है और ढर्रे के जीवनक्रम पर सन्तोष किया है। न बेकार की महत्वाकांक्षायें सिर पर ओढ़ीं और न सिर खपाने वाले झंझट मोल लिये। केलो रेडे का कथन है, एक दिन जवानी में उसने ज्यादा पी ली और बीमार पड़ गया, तबसे उसने निश्चय किया कि ऐसी चीजें न खाया-पिया करेगा, जो लाभ के स्थान पर उल्टे हानि पहुंचाती हैं। मेर्नवोके ने जोर देकर कहा उसे भलीभांति मालूम है कि जो ज्यादा सोचते और ज्यादा खीजते हैं वे ही जल्द मरते हैं।

यह एक आश्चर्यजनक तथ्य सामने आया कि दीर्घजीवी परिवार की सन्तानें भी दीर्घजीवी होती हैं। जिसके बाप कम उम्र में चल बसते रहे हैं, उनकी सन्तानें भी बहुत करके बिना किसी बड़े कारण के अल्पायु ही भोग सकी हैं। ऐसा क्यों होता है? इसके पीछे क्या रहस्य है? यह निश्चित रूप से तो नहीं मालूम पर इतना कहा जा सकता है कि इस प्रकार के वातावरण में यह निश्चिन्तता रहती होगी कि पूर्वजों की तरह हम भी अधिक दिन जियेंगे। विश्वास भी तो जीवन का एक बहुत बड़ा आधार है।

गहराई से इन दीर्घजीवियों के चारित्रिक स्तर का विश्लेषण किया गया तो यही तथ्य सामने आया कि उन्होंने किसी के साथ छल, विश्वासघात या निष्ठुर व्यवहार नहीं किया, उन्होंने सज्जनता की नीति बरती और अपनी जीवन पुस्तक का हर पृष्ठ खुला रखा। छिपाने जैसी कोई घटना उनके पास थी हीं नहीं। उन्होंने न किसी का बुरा चाहा और न किया। फलत: कोई भी तो उनका दुश्मन बना न रहा। कभी भी नोंकझोंक हुई थी तो वह ऐसे ही कुछ समय बाद हवा में उड़ गयी। किसी अप्रिय घटना क्रम को उन्होंने मस्तिष्क में गांठ बांध कर नहीं रखा। बेकार की बातों को अनसुनी कर देने और भुला देने के स्वभाव ने ऐसा मानसिक तनाव नहीं पड़ने दिया।

नियमित व्यायाम करने वाले तो इन वृद्धों में से १० प्रतिशत भी नहीं थे। शेष ने यही कहा – हमारा दिन भर का काम ही ऐसा था जिसमें शरीर को थक कर चूर-चूर हो जाना पड़ता था, फिर हम क्यों बेकार व्यायाम के झंझट में पड़ते? वर्ग विभाजन के अनुसार साधे से अधिक लोग ऐसे निकले जो श्रमजीवी थे। स्त्रियां मजदूर श्रमिक थीं। दिमागी काम करने पर भी दीर्घजीवन का आनन्द ले सकने वाले केवल ८ प्रतिशत ही निकले।

सैन फ्रांसिस्को के १०३ वर्षीय विलियम मेरी ने कहा – युद्धों में उसे कई बार गोलियां लगीं और हर बार गहरे आपरेशनों के सिलसिले में अस्पतालों में रहना पड़ा, पर मरने की आशंका कभी उसे छू तक नहीं पायी। उन कष्टकर

दिनों में भी कभी आंसू नहीं बहाये वरन् यही सोचा, इससे जल्दी ही छुट्टी लेकर वह और भी शानदार दिन गुजारेगा। आशा की चमक उसकी आंखों में से एक दिन के लिए भी बुझी नहीं।

सुगृहिणी मेरुचीने का कथन है— उसने परिवार-पड़ोस के बच्चों से अपना लगाव रखा है। उन्हीं के साथ हिलमिल कर रहने में खुद को इतना तन्मय रखा है कि अपना आपा भी, बचपन जैसी हर्षोल्लास भरी सरलता का आनन्द लेता है। शरीर से वृद्धा होते हुए भी मन से मैं अभी भी एक छोटी लड़की ही हूं।

दीर्घजीवियों में व्यवसाय के हिसाब से वर्गीकरण करने पर ज़ाना गया कि नौकरीपेशा लोगों की अपेक्षा स्वतन्त्र व्यवसायी अधिक जीते हैं। उन्हें मालिकों की खुशामद नहीं करनी पड़ती है और न डांट-डपट सहनी पड़ती है। उससे शारीरिक काम भले ही अधिक करना पड़े, हीनता और खिन्नता का दबाव उन पर नहीं पड़ता। कई व्यक्ति नौकरी की अवधि तक अस्वस्थ रहते थे पर रिटायर होने के बाद निरोग रहने लगे। इसका कारण था, उन्होंने निश्चित दिनचर्या और भावी योजना अपने ढंग से बनायी थी, उस पर किसी दूसरे का अंकुश या दबाव नहीं था।

बहुत जीने के लिए अलमस्त प्रकृति का होना जरूरी है, इसके बिना गहरी नींद नहीं आ सकती और जो शान्तिपूर्ण निद्रा नहीं ले सकता, उसे लम्बी जिन्दगी कैसे मिलेगी? इसी प्रकार खाने और पचाने की संगति जिन्होंने मिला ली। उन्हीं को निरोग रहने का अवसर मिला है और वे ही अधिक दिन जीवित रहे हैं। एक बूढ़े ने हंसते हुए पेट के सही रहने की बात पर अधिक प्रकाश डाला और कहा — कब्ज से बचना नितान्त सरल हैं। भूख से कम खाया जाय तो न किसी को कब्ज रह सकता है और न इसके लिए चिकित्सक की शरण में जाना पड़ सकता है।

हेफकुक ने कहा — मैंने ईश्वर पर सच्चे मन से विश्वास किया है और माना है कि वह आड़े वक्त में जरूर सहायता करेगा। भावी जीवन के लिए निश्चिन्तता की स्थिति मुझे इसी आधार पर मिली है और शान्ति, सन्तोष के दिन काटंता हुआ लम्बी जिन्दगी की सड़क पर लुढ़कता आया हूं। जेम्स हेनरी ब्रेट का कथन है कि यह एक धार्मिक व्यक्ति है। विश्वासों की दृष्टि से ही नहीं आचरण की दृष्टि से भी। धार्मिक मान्यताओं ने मुझे पाप पंक में गिरने का अवसर ही नहीं आने दिया। शायद सद्उद्देश्य भरा क्रियाकलाप ही दीर्घजीवन का कारण हो।

पेट्रिस को इस बात का गर्व था कि उसका अतीत बहुत शानदार था। वह कहता था — भला यह भी क्या कोई कम गर्व और कम सन्तोष की बात है? आज के अवसान की तुलना करके अतीत की

सुखद कल्पनाओं को क्यों धूमिल किया जाय? हेन्स बेर्ड का कथन था उसने जिन्दगी भर आनन्द भोगा है। हर घटना से कुछ पाने और सीखने का प्रयत्न किया है। अनुकूलता का अपना आनन्द और प्रतिकूलता का दूसरा। मैंने दोनों प्रकार की स्थितियों का रस लेने को उत्साह रखा और आजीवन आनन्दी बन कर रहा।

दीर्घ-जीवियों में से अधिकांश वर्तमान स्थिति से सन्तुष्ट थे। वे मानते थे बुढ़ापा अनिवार्य है और मौत भी एक सुनिश्चित सच्चाई। फिर उनसे डरने का क्या प्रयोजन? जब समर्थता की स्थिति थी, अतः मन को स्थिति के अनुरूप ढाल कर सन्तोष के दिन क्यों न काटें।

इनमें से सब लोग सदा निरोग रहे हों ऐसी बात नहीं। बीच-बीच में बीमारियां भी सताती रही हैं और दवा भी करनी पड़ी है पर मानसिक बीमारियों ने उन्हें कभी त्रास नहीं दिया। लम्बी अवधि में उन्हें अपने स्त्री-बच्चों तक को दफनाना पड़ा। कितनों से तलाक लिया और कितनों के बच्चे कृतघ्न थे, पर इन सब बातों का उन्होंने मन पर कोई गहरा प्रभाव पड़ने नहीं दिया और सोचते रहे जिंदगी में मिठास की तरह ही कड़ुआपन भी चलता है।

उपरोक्त अन्वेषण के आधार पर हम एक नये निष्कर्ष पर पहुंचते हैं- सीधे-सरल जीवन क्रम को अपना कर भी लम्बी आयुष्य प्राप्त की जा सकती है, भले ही बहुचर्चित स्वास्थ्य साधनों का अभाव ही क्यों न बना रहे।

— आर.बी. २/६२, जी.एफ.बी.
रेलवे कालोनी, बाद (मथुरा)

काम आने योग्य वस्तु

बंगाल के प्रसिद्ध विद्वान एवं समाज सुधारक ईश्वरचंद्र विद्यासागर के यहां एक बार खुदीराम बोस पधारे। विद्यासागर ने उन्हें नारंगियां दीं। खुदीराम नारंगी की फांकें चूस-चूसकर फेंकने लगे। यह देखकर विद्यासागर बोले, 'देखो भाई, इन्हें फेंको मत, ये भी किसी के काम आ जायेंगी।' खुदीराम बोले, 'इन्हें आप किसे देने वाले हैं?'

विद्यासागर ने हंसकर कहा, 'आप इन्हें खिड़की के बाहर रख दें और वहां से हट जायें तो अभी पता लग जायेगा।'

चूसी हुई फांकों को खिड़की के बाहर रखने पर कुछ कौए उन्हें लेने आ गये। अब विद्यासागर बोले, 'देखो! जब तक कोई चीज किसी भी प्राणी के काम में आने योग्य हो, तब तक उसे फेंकना नहीं चाहिए। उसे इस प्रकार रखना चाहिए कि धूल-मिट्टी लग कर वह खराब न हो जाये और दूसरे प्राणी उसका उपभोग कर सकें।'

— डॉ. गोपालप्रसाद 'वंशी'

आ नो भद्राः ऋतवो यन्तु विश्वतः

भवन की पत्रिका 'भारती' से समन्वित

नवनीत

मनुष्य के नवोत्थान का सूचक
जीवन, साहित्य और संस्कृति का मासिक

प्रार्थना

समह मेषां राष्ट्रं स्यामि समोजोवीर्यं बलम् ।
वृश्चामि शत्रूणां बाहुनानेन हविषाऽहम् ।।

(अथर्व १२.१)

हम राष्ट्र गौरव की रक्षा करने का प्रण लेंगे ।
राष्ट्र-शक्ति संरक्षण-वर्धन के हित तन-मन देंगे ।
शत्रु गर्व खंडित कर देंगे,
कोटि-कोटि बाहु बलवान ।
राष्ट्र-यज्ञ की अग्निशिखा पर,
जीवन कर देंगे बलिदान ।

(भावानुवाद : **स्व. पं. सत्यकाम विद्यालंकार**)

मिल ही जाते हैं सहारे ढूंढ़ने से

□ मंजु चंद्रमोहन नागोरी

बात आज से पच्चीस-छब्बीस वर्ष पूर्व की है। मैं बी.ए. कर चुकी थी, एम.ए. करना चाहती थी, पर मां की जिद थी कि– बहुत हो ली पढ़ाई, अब शादी करेंगे, ज्यादा पढ़-लिख ली तो ढंग का बराबरी का लड़का मिलेगा नहीं। अकेली व लाड़ली लड़की हूं मैं, वैसे तो हर जिद मां पूरी कर दिया करती थीं पर न मालूम क्यों पढ़ाई के मामले में अड़कर ही रह गयीं। खैर अगले दो-तीन बरस मैंने सारे गृह-उपयोगी कोर्स करके काटे। दिल्ली सुपर-बाज़ार में नौकरी करी और वहां अपनी कार्यदक्षता व मेहनत निष्ठा से मैनेजर का पद, प्राप्त होने को ही थी कि मां ने एक नया अड़ंगा लगाया– 'अब नौकरी नहीं, वरना रिश्ता होने में परेशानी होगी, लोग कहेंगे बेटी की कमाई चाहिये, अब, बस ब्याह करेंगे। पिछले बरसों से सुनते-सुनते मेरे कान पक गये थे। मैं विद्रोह पर उतर आयी थी। मैंने मां से कहा-'मैं खाली नहीं बैठ सकती, मुझे पढ़ने दो। आप इस बीच लड़का घर खोजो, जब भी कोई आप लोगों को जंचे बता देना, मैं पढ़ाई छोड़ दूंगी।' पर मां राजी नहीं हुईं।

एक दिन मैंने मां से फीस के रुपये मांगे तो उन्होंने साफ ना कर दी,

पिताजी शहर में थे नहीं, उसी समय वक्त की बात मुझे दसवीं-ग्यारहवीं में जो मास्टरजी – द्वारकानाथ कक्कड़ पढ़ाया करते थे मेरे घर किसी काम से आये। उन्होंने पूरी बात जानकर मेरी मां से कहा– 'भाभीजी, फीस तो जमा करा दो, खाली बैठे से क्या होगा? इसे पढ़ लेने दो, कभी काम ही आयेगा' पर मां ने उनके मुंह पर ही साफ मना कर दिया व भीतर चली गयीं। मैं तो रोने लगी– कुछ अपमान से व कुछ विवशता के कारण। मैंने दयनीय भाव से द्वारकाजी से कहा– 'द्वारकाजी (मैं उन्हें यही सम्बोधन देती थी), क्या आप मेरी एक सौ पैंतीस रुपये फीस जमा नहीं करा सकते? पिताजी के आते ही लौटा दूंगी।' द्वारकाजी ने एक क्षण भी लगाये बगैर कहा– 'कल सुबह तैयार रहना, मैं संग चला चलूंगा।'

मैंने मां को कुछ नहीं बताया, सम्भवतः जरूरत भी नहीं समझी। अगले रोज तैयार हो जब घर से निकलने लगी तो मां ने पूछा – 'सुबह-सुबह कहां जा रही है?' 'एम.ए में एडमीशन लेने' और मैं यह कहकर बिना उनकी बड़बड़ाहट की परवाह किये सीढ़ियां उतर लीं।

प्राइवेट कालेज से फार्म भरा व सेमीसटर सिस्टम से मैंने दो बरस में एम.ए. हिन्दी विषय लें प्रथम श्रेणी व यूनीवर्सिटी पंजाब में पांचवें स्थान पर लों पास किया। कालेज के बोर्ड, मैग्जीन में मेरा नाम लिखा गया, बोर्ड पर तो आज भी लिखा है। अब मां सभी से उछल-उछल कर कहती फिरीं– 'हमारी मंजु एम.ए. में फर्स्ट आयी है!' मजा यह कि मां को मेरी जोड़ का वर अब तक नहीं मिला था।

हिन्दी में किये एम.ए. ने मुझे लेखन की तरफ प्रवृत्त किया। मैं लिखने लगी। खूब छपने भी लगी। मेरे एक छपे लेख से प्रभावित हो ग्वालियर के दैनिक पत्र नवप्रभात के सम्पादक चन्द्रमोहन नागोरी ने मुझमें रुचि ली व मिले। विवाह का प्रस्ताव रखा और कुछ महीनों बाद हम विवाह सूत्र में बंध भी गये।

आज द्वारकाजी जाने कहां रहते हैं, उनका पता मुझे नहीं मालूम पर जब भी मेरी पढ़ाई, लेखन की चर्चा चलती है उनके प्रति मेरा मस्तक आदर और कृतज्ञता से नत हो जाता है। मेरे भाई लोग जब दिल्ली से मेरे पास आते हैं तो मैं पूछती हूं– 'द्वारकाजी कभी दिखे क्या?' उत्तर नकारात्मक रहता है। तब भी मुझे आशा है कि जब कभी भी मुझे दिखेंगे मैं सादर उनको प्रणाम कर सुख व संतोष पाऊंगी व उन्हें बता पाऊंगी कि उन्हीं की वजह से मैं आज अपनी पहचान बना पायी हूं।

'नवप्रभात' पड़ाव,
ग्वालियर - ४७४ ००२

मिथिला की स्थापत्य कला

□ डॉ. मोहनानन्द मिश्र

पूर्वी भारत में आंचलिक स्थापत्य का विकास अधिक हुआ। कभी इसमें सांस्कृतिक आदर्श का समन्वय किया गया और कभी उत्तरी भारत के विकसित स्थापत्य की अनुकृति हुई। कालिदास के काव्यों में हम महाकाल के मंदिर का उल्लेख पाते हैं और सारनाथ के भाष्कर में भी मंदिर स्थापत्य का स्वरूप मिलता है। सातवीं शताब्दी से ही भारतवर्ष के राष्ट्रीय और सांस्कृतिक इतिहास में स्थापत्य कला के क्षेत्र में नवीन दृष्टिकोणों को अवसर मिलने लगा था। आंचलिक आदर्श और कल्पना को मंदिर स्थापत्य में रूपांकित किया जाने लगा। छोटे-छोटे राजा और सामन्त समाज की सांस्कृतिक गतिविधियों पर हावी होने लगे और स्थापत्य कला के परिवेश में यह चेतना साकार होने लगी। स्थापत्यकला के क्षेत्र में यह क्रम निरन्तर जारी रहा। इस प्रकार ग्यारहवीं शताब्दी तक आते-आते पूर्वांचल की स्थापत्य कला में आंचलिक रूप और रीति का व्यापक सम्मिश्रण होने लगा। विशेषकर पालवंश के शासन में मंदिर और देवविग्रह के निर्माण में लोकरंजक शैली का शुभारम्भ हुआ, जो मुस्लिम शासकों के आगमन के पूर्वतक वर्तमान था।

मिथिला की कला और शैली के सम्बन्ध में भारतीय धार्मिक ग्रन्थों के सिद्धान्त ही व्यवहार्य थे। कला और संस्कृति के क्षेत्र में भी स्थापत्य के स्वरूप को स्थान दिया गया है और प्रतिमा को धर्म की पत्नी के रूप में स्वीकार किया गया है। स्थापत्य कला का विकास मिथिला में सामाजिक मूल्यों की प्रशस्त व्यवस्था के अनुरूप ही हुआ। इसका सम्बन्ध नैतिक धार्मिक और आर्थिक मूल्यों से भी था। ऐसे तो समस्त उत्तर भारत की स्थापत्य कला को महत्वपूर्ण माना जाता है, किन्तु मिथिला की स्थापत्य कला आज भी इतिहासकारों के लिए खोज की वस्तु है। मिथिला की

स्थापत्य कला का विकास पालों के शासन के युग में हुआ और क्रमशः कर्णाट और ओइनवार के शासन के युग में भी स्थापत्य कला की नयी शैलियां विकसित हुईं, जिसे मिथिला की मौलिक स्थापत्य कला के नाम से अभिज्ञात किया जा सकता है। इन्हीं शासकों के युग में स्थापत्य का सम्बन्ध संगीत, नाटक और साहित्य से जुड़ गया। इस समय मिथिला में कला के क्षेत्र में एक व्यापक अभियान प्रारम्भ हुआ। सबसे बड़ी बात यह थी कि इस समय हिन्दूधर्म की एक सहिष्णु धारा भागवत और शैवधर्म के रूप में नाटक, गीत और नृत्य के ताल से जनमानस को उद्वेलित कर रहा था। इसीलिए यह माना जाता है कि पालों के शासन में कोमल और अलंकृत कला का विकास मिथिला में हुआ और मिट्टी के बर्तनों और वस्त्रों पर तरह-तरह के फूल और चित्र बनाये जाने लगे। इन चित्रों को घर की दीवारों पर और देवालयों में भी देखा जा सकता था। इस समय मूर्तिकला के विभिन्न रूप मिथिला में मिलते हैं, जैसे कांसा, पत्थर और हाथी दांत आदि पर अंकित चित्र-फलक। उस समय मिथिला में त्रिमूर्ति का व्यापक प्रचार था। बौद्ध साधकों के युग में मिथिला में इस प्रकार की मूर्तियां बनती थीं, किन्तु इन देव विग्रहों में शिव की प्रतिमा और शक्ति की प्रतिमा तांत्रिक मुद्रा के आधार पर गढ़ी जाती थीं। योगिनी का रेखाचित्र आज भी अरिपन में प्रचलित है, जिससे सिन्धुघाटी सभ्यता की कलाविधि का संकेत मिलता है।

जहां तक स्थापत्य कला का सम्बन्ध है मिथिला में दो प्रकार के स्थापत्य थे— एक राजप्रासादों का स्थापत्य होता था और दूसरा आर्थिक साधन विहीन सामान्य प्रजाओं का आवास था। कोशी, कमला और बागमती के किनारे प्राप्त अवशेषों से भी प्राचीन स्थापत्य के अवशेषों के सम्बन्ध में ज्ञान मिलता है। मिथिला के मंदिरों के सम्बन्ध में व्यापक वर्णन नहीं मिलता है, केवल राजाओं के भव्य भवनों का मनोरंजक वर्णन है।

विद्यापति ने भी कीर्तिलता में राजभवनों का उल्लेख किया है और उन्होंने निम्नलिखित स्थापत्य की चर्चा की है— क्रीद शैली, धारागृह, प्रमदवन, पुष्पवाटिका, यंत्र यज्ञ, शृंगार संकेत, माधवी मंडप, खटवाहिडोल, कुसुम शय्या, चतुशील और चित्रशाल आदि।

ज्योतिरीश्वर ने वर्णरत्नाकर में मिथिला के नौवीं सदी के स्थापत्य का उल्लेख किया है, जो विद्यापति से कई सौ वर्ष पूर्व का है और जिसमें मिथिला की स्थापत्य कला के निम्न लिखित स्वरूप की चर्चा है— स्फटिक भूमि, कर्पूरक आंसिस, सोनाक पगारी, मंजरूशी कांचक चनवा, श्री खण्डस्तम्भ, मरकतक सीर, भेदक भवन, वैकण्ठ जयधरणी, चंदकबात, अगरक मुंह ओत,

कस्तूरिक बड़ेरा, मुखशा झबौह, चतु: समक विलेपन, पद्मरागक कलश और स्थान मंडप आदि।

स्पष्ट है कि ज्योतिरीश्वर के समय में स्थापत्य कला का जो स्वरूप था विद्यापति के युग तक आते-आते उसमें एक विराट परिवर्तन उपस्थित हो गया। किन्तु इसकी परम्परा निरन्तर जारी रही। ऐसे विद्यापति ने मुस्लिम प्रभाव के अन्दर प्रचलित स्थापत्य का भी उल्लेख किया है, जैसे खास दरबार, दरसद्वार, राजद्वार, निमाजगृह, खबरगृह और शर्मगृह आदि। ज्योतिरीश्वर के वर्णन से मिथिला के स्थापत्य पर पर्याप्त प्रकाश तो नहीं पड़ता है, किन्तु उस समय जो स्थापत्य कला विकसित थी, उसका वर्णन प्राप्त होता है। ऐसे विद्यापति ने जो मुस्लिम स्थापत्य की चर्चा अपने ग्रन्थों में की है उसमें भारतीय और इस्लामी शैली का सम्मिश्रण अवश्य ही प्रकट हो जाता है। विद्यापति ने जौनपुर के शिव मंदिर की भी चर्चा की है, जिसमें बहुत बड़ा ध्वज फहराया जाता था। मिथिला के मंदिरों में यह परम्परा पीछे विकसित हुई। पीछे चलकर कमल और अन्य चित्र फलक भी बनाये जाने लगे और इसकी लोकप्रियता भी बढ़ती गयी। इस प्रकार मिथिला के मंदिर स्थापत्य का एक व्यापक आधार तैयार हो गया, जो मिथिला के समाज में ही नहीं, धीरे-धीरे सुदूर बंग प्रदेश में भी पहुंचने लगा।

मिथिला के मंदिरों की ऐतिहासिकता के सम्बन्ध में यह कहा जा सकता है कि यहां मंदिर निर्माण कला की शैली अत्यन्त ही विकसित थी। मिथिला के मंदिर स्थापत्य के सम्बन्ध में स्पूनर ने विस्तृत विवरण प्रस्तुत किया है और इसे तिरहुत मंदिर प्रकार के नाम से सम्बोधित किया है। इन्होंने फर्ग्युसन के विचार का खण्डन किया है और समस्त उत्तर भारत के मंदिर निर्माण कला को तिरहुत प्रकार के मंदिर के नाम से सम्बोधित किया है। तिरहुत प्रकार के मंदिर में गर्भगृह, शिखर और द्वारमंडप की प्रधानता रहती थी। प्रायः सभी उत्तर भारत के मंदिर इसी शैली के बने हैं। मिथिला के मंदिर निर्माण प्रकार में प्राचीरों में सजावट नहीं होती थी और गर्भगृह के अन्दर में जो छत होती थी, उसमें भी सजावट नहीं होती थी। मंदिर का आकार चतुर्मुखी होता था। मंदिर का भीतरी भाग धीरे-धीरे शिखर की ओर अग्रसर होता हुआ संकीर्ण होता जाता था। मिथिला के मंदिर प्रकार की शैली को प्रमुखता दी जाती थी।

मिथिला के मंदिर प्रकार में शास्त्र सम्मत विधि को प्रश्रय दिया जाता था, क्योंकि मिथिला में पंचदेवोपासना की परम्परा अत्यधिक लोकप्रिय थी। इसे मध्ययुग के पूर्व की शैली के रूप में स्वीकार किया जा सकता है। परवर्ती मंदिर निर्माण शैली का जो विकास हुआ

ग़ज़ल

बन्द कमरों में घुटन है खिड़कियां ही खोलिये ।
इस कदर खामोश क्यों हैं कुछ न कुछ तो बोलिये ।।

चढ़ चुका दिन, धूप दस्तक दे रही है बार-बार
जागिये सोयेंगे कब तक आप काफी सो लिये ।

ढूंढ़िये खुद राह अपनी मंज़िलों के वास्ते,
है ग़लत जो भी चला जिस ओर, पीछे हो लिये ।

हो कहीं ऐसा न घुटकर खुश्बुएं दम तोड़ दें,
अब हवा में और नफरत का ज़हर मत घोलिए ।

बोझ का अंदाज क्या करना, इसे ढोना ही है
तौलना ही है तो अपने बाज़ुओं को तौलिये ।

— राजेंद्र तिवारी
तपोवन, ३८ बी, गोविंदनगर, कानपुर, उ.प्र.

उस शैली में मंदिर के द्वार बड़े फैले हुए होते थे और प्रवेश का मार्ग भी सुव्यवस्थित होता था। द्वार सदैव पूर्वाभिमुख का होता था। चतुर्मुखी शैली अपनायी जाती थी और सीढ़ियों की भी व्यवस्था होती थी। मंदिर में विशाल कक्ष होते थे। देव और देवी के विग्रह भी बड़े होते थे। इन प्रकारों को ज्यामितीय प्रणाली से व्यवस्थित किया जाता था। प्राचीन भारत में भी मंदिर निर्माण की शैली में यज्ञवेदी के निर्माण का आधार ही प्रधान था। कुंड सिद्धि और शुल्वसूत्र आदि ही समस्त माप के आधार थे। इसलिए वैदिक साहित्यों में भी प्रमा या नापजोख की विधा थी और मिथिला के देवालयों के आधार के मूल में उन्हीं मौलिक विधाओं की चर्चा थी। अमरकोश में जिस संजवन, चतुर्दश-शाल, चैत्य, प्रमा और क्षात्रनिलय की चर्चा है, मिथिला के मंदिरों में उन्हें आज भी देखा जा सकता है।

इस प्रकार मिथिला मंदिर प्रकार को प्राचीन मंदिर स्थापत्य के रूप में स्वीकार किया जा सकता है। पुराविद् विजय-कान्त मिश्र ने भी मिथिला के मंदिर प्रकार को सातवीं शताब्दी से ही विकसित और उन्नत माना है।

— चन्द्र दत्त द्वारी रोड,
पो. टी. - बिलासी - ८१४११७,
बैद्यनाथ-देवघर, बिहार

नयी पीढ़ी किसे निर्दिष्ट माने ?

भटकते पंथ, गलियां और अंधे मोड़,
नयी पीढ़ी किसे निर्दिष्ट माने ?

राह अनबूझी, अपरिचित मार्गदर्शक,
रश्मियां परतंत्र, बन्धित है उजाला ।
पंथद्रष्टा स्वार्थ के व्यापार में रत,
मानवीय आदर्श का निकला दिवाला !

अब नहीं पद-चिह्न बापू के कहीं पर,
नयी पीढ़ी किसे मग-बोध माने ?

जो स्वयं आदर्श की देते दुहाई
आज वे आदर्श के भक्षक बने हैं ।
और इससे क्या अधिक उपहास होगा ।
काक-वंशी शांति के शिक्षक बने हैं ।

बन रहे योगी, सतत भोगी यहां पर,
नयी पीढ़ी किसे निर्लिप्त माने ?

भूख, कुण्ठा, वेदना से ग्रस्त लवकुश,
भीष्म, राणा दुर्दिनों से लड़ रहे हैं ।
कृष्ण, अर्जुन, भीम के पौरुष थके हैं,
द्रौपदी के नयन लज्जित गड़ रहे हैं ।

हो रही अधिकार की हत्या बराबर,
नयी पीढ़ी किसे कर्तव्य-माने ?

यह दिशा दुर्बोध, हत्या कोपलों की,
यह दमन की नीति सच्चा पथ नहीं है ।
द्रोह की चिन्गारियां नित-नित जगाना,
यह अहिंसा का सनातन मत नहीं है ।

देवता जब लड़ रहे दानव सरीखे,
नयी पीढ़ी किसे निज इष्ट माने ?

— शंकर सुल्तानपुरी

साहित्य वाटिका, सी-२१६७१, इंदिरानगर, लखनऊ

ऐतिहासिक अतीत

उमा-महेश्वर (मल्हार)

प्राचीन संस्कृति की धरोहर – मल्हार

□ अश्विनी केशरवानी

भारतीय इतिहास का अतीत उन अद्भुत ऐतिहासिक सम्पदाओं का विपुल भंडार रहा है, जिसके परिणामस्वरूप हमारी प्राचीन संस्कृति एवं ऐतिहासिक महत्व की सामग्रियां, जन-जीवन से संबंधित अनेकानेक वस्तुओं का भंडार उसकी गहराइयों में भरा पड़ा है। इसी श्रृंखला में मध्यप्रदेश का प्राचीन दक्षिण कोशल क्षेत्र जिसमें छत्तीसगढ़ अंचल का अधिकांश भाग आता है, पुरातात्विक सम्पदाओं और प्राचीन संस्कृति का इतिहास बेजोड़ रहा है। यदि हम इसे भारतीय इतिहास की श्रृंखला में प्रथम मानें तो अतिशयोक्ति नहीं होगी। इस क्षेत्र की धरती पर अनेक प्राचीन संस्कृति एवं इतिहास को उजागर करने वाले स्थान देखने को मिलते हैं, जिसमें 'मल्हार' का नाम भी प्रथम श्रेणी के पुरातात्विक महत्व के लिए चिर प्रसिद्ध है।

मल्हार बिलासपुर जिला मुख्यालय से ३२ कि.मी. की दूरी पर दक्षिण पूर्व में बिलासपुर-शिवरीनारायण मार्ग में जोंधरा जाने वाली सड़क के पार्श्व में बसा है। पाण्डु वंशीय एवं कलचुरि के समय इस ग्राम का विस्तार १० वर्ग कि.मी. था। छत्तीसगढ़ के महत्वपूर्ण ऐतिहासिक नगरों में मल्हार का स्थान सर्वोपरि माना जाता है, क्योंकि मल्हार के समान अन्य किसी स्थान पर ईसा पूर्व छठवीं से तेरहवीं शताब्दी तक क्रमबद्ध सभ्यता का विकास क्रम नहीं मिलता। सांस्कृतिक उत्थान की दृष्टि से मल्हार की भौगोलिक स्थिति भी अत्यंत महत्वपूर्ण है, क्योंकि यह स्थान अपरा, लीलागर और शिवनाथ नदियों से क्रमशः पूर्व एवं दक्षिण में सीमांकित है। कौशम्बी से दक्षिण-पूर्व में समुद्र तट की ओर जाने वाला प्राचीन मार्ग मल्हार–शिवरीनारायण-सारंगढ़ एवं सम्बलपुर से होकर जगन्नाथपुरी की ओर जाता था।

'डॉ. हरिसिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर' के तत्वावधान में यहां हुए उत्खनन कार्य से दक्षिण कोशल के प्राचीन इतिहास का पता चलता है। मल्हार को दक्षिण कोशल के प्रमुख राजवंशों की राजधानी होने का गौरव प्राप्त है। गुप्तकालीन ब्राह्मीलिपि में महाराज महेन्द्रस्य की पकी मिट्टी की मुहर यहां प्राप्त हुई है। इससे पता चलता है कि समुद्रगुप्त की प्रयाग प्रशस्ति में कौशल के जिस शासक महेन्द्र का उल्लेख है, वह मल्हार में राज्य कर रहा था, समुद्रगुप्त ने ३६० ईसवीं के आसपास दक्षिण कोशल पर आक्रमण किया था और उस समय वहां महेन्द्र का शासन था।

मल्हार का प्राचीन नाम मल्लारिपत्तन, मल्लालपत्तन, मल्लिकापुर, मलार आदि है। पातालेश्वर मंदिर की सफाई के समय प्राप्त कलचुरि नरेश पृथ्वीदेव द्वितीय के कलचुरि संवत ९१५ से ११६३ के एक शिलालेख में इसे 'मल्हापत्तन' कहा गया है। मल्लाल का प्राचीनतम पुरावशेष यहां का गढ़ है। मल्लाल संभवतः 'मल्लारि' से बना है। जो भगवान शिव की संज्ञा है। पुराणों में मल्लासुरनामक असुर का उल्लेख मिलता है। इनके नायक शिव को 'मल्लारिशिव' कहा गया है। कलचुरि नरेश भी अधिकांशतः शिवभक्त थे। अतः इनके शासनकाल में इसका नाम

डिडिनबाई (मल्हार)

'मल्लाल' या मल्लालपत्तन रखा गया हो। मल्हार से प्राप्त पुरावशेषों के आधार पर इस गढ़ का निर्माण ईसा पूर्व दूसरी सदी माना गया है। गढ़ का सम्पूर्ण क्षेत्रफल ५०.१६ एकड़ तथा प्राचीन आवासीय दुर्ग का ६.८७ एकड़ था।

मल्हार के इतिहास में जिस प्रकार तालाबों की महत्ता है, उसी प्रकार प्राचीन कुओं की भी है। कण-कण व्यापी पातालेश्वर के द्वार, और मंदिर के समीप बीस फुट वाला एक कुआं है जो महाशिवरात्रि के समय अनेक तीर्थ यात्रियों को १५ दिनों तक शीतल जल प्रदान करता है। इसका जलस्तर कभी कम नहीं होता। लोगों का ऐसा विश्वास है कि इसका जल गंगा की तरह पवित्र है। शिव की अर्चना के लिए इस कुएं से जल का उपयोग होता था। इसलिए इसे

'कनकन कुआं' या 'कंकणं कूप' कहा जाता है।

एक किंवदंती के अनुसार एक बार भगवान शंकर को जब कैलाश पर्वत त्याग कर इधर-उधर भटकना पड़ा तब काशी में गंगा के तट पर वे निवास करने लगे। काशी का यह निवास स्थान 'कंकण' नामक लम्बी पहाड़ी पर बसा है। संभवतः शिव के कंकण पहाड़ के नाम पर ही इस कुएं का नाम 'कनकन' पड़ा हो?

मल्हार सदियों पुरानी मूर्तिकला, चित्रकला, शिल्पकला, पुराने सिक्के, ताम्र पत्रों के माध्यम से प्राचीन काल की गाथाओं को अपनी चिरस्थली भूमि के गर्भ में संजोये समाधिस्थ योगी के समान बैठा हुआ है। जिसके परिणामस्वरूप आज भी हमारी प्राचीन संस्कृति, सामाजिक, नैतिक, धार्मिक, आध्यात्मिक विषयों पर निरंतर प्रभाव डाल रही हैं। ईसा पूर्व दूसरी शताब्दी की चतुर्भुजी विष्णु की मूर्ति दक्षिण कोसल क्षेत्र में ही नहीं, अपितु भारत के उन पाषाण प्रतिमाओं में से एक है, जो इस अंचल की प्राचीनता एवं ऐतिहासिकता को मुखरित कर रहा है। मूर्ति स्थानक मुद्रा में स्थित है। सिर में मुकुट, कानों में कुंडल, गले में हार, सौम्यभाव तथा हाथों में चक्र, दंड तथा कृपाण लिए हुए विराजमान है। कमर में प्राचीन ताड़ के पत्ते के समान वस्त्र धारण किये हुए हैं। [illegible] पाषाण प्रतिमा भारत में निर्मित भगवान विष्णु की सर्वप्रथम प्रतिमा है, जो भारतीय पुरातत्व के मल्हार में स्थित संग्रहालय में सुरक्षित है। पास में मांस्कंद की प्रतिमा में रखी हुई है। प्रतिमा प्राचीन है। मूर्ति में स्कंध को गोद लिये हुए दिखायी देता है। यह मूर्ति साल वृक्ष के नीचे खड़ी है तथा उसके प्रत्येक अंगों पर अलंकरण धारण किये हुए हैं, मल्हार की प्राचीन मूर्तिकला की बाहुल्यता को देखते हुए यह कहा जा सकता है कि यह नगर पाषाण मूर्तियों का नगर रहा होगा। दस किलोमीटर तक प्राचीन प्रस्तर मूतियां दबी मिल रही हैं। खुदाई से मिली मूर्तियों में सभी सम्प्रदायों की मूर्तियां हैं, जिससे यह पता चलता है कि यह प्राचीन नगर कला संस्कृति के साथ-साथ सभी सम्प्रदायों के धर्मो का भी केन्द्र बिन्दु रहा होगा? यहां प्राप्त मूर्तियों में जैन मूर्ति, बौद्ध मूर्ति तथा शैल मूर्तियां प्रमुख हैं।

मल्हार के उत्खनन से प्राप्त पुरातात्विक जानकारी के अनुसार पातालेश्वर केदार मंदिर भूमिज शैली का है। गर्भगृह एक तलघर की तरह है और नीचे तक पहुंचने के लिए नौ सीढ़ियां बनी हैं। प्राप्त शिलालेख और ताम्रपत्र के अनुसार जाजल्यदेव द्वितीय के शासनकाल कलचुरि संवत ९१९ में गंगाधर ब्राह्मण मंत्री के पुत्र सोमराज

द्वारा केदारेश्वर मंदिर का निर्माण कराया गया। इस मंदिर का पता १९३५ में ग्रामवासियों को खुदाई करते समय चला। कलचुरि युग (१०० से १३०० ई.) के इस मंदिर में शंकरजी की विलक्षण मूर्ति गौमुखी आकार में एक सुन्दर चमकदार पत्थर से निर्मित जलहरी के मध्य त्रिकोणात्मक रूप से स्थित है। इस मूर्ति में जल चढ़ाया आंतरिक छिद्र में समाहित हो जाता है। इसी कारण इसे 'पातालेश्वर' की संज्ञा से अभिहित किया गया। भूमिज शैली के बने इस मंदिर की आधार पीठिका १०८ कोणों वाली है। मंदिर के मंडल का चबूतरा भूमि से लगभग ६ फुट ऊंचा है। प्रवेश द्वार की पट्टिकाओं में दाहिनी ओर शिव-पार्वती (कल्याण-सुन्दर) ब्रह्मा-ब्रह्माणी, ललितासन में बैठे उमा-महेश्वर, नृत्य मुद्रा में गणेश, गजासुर संहारक, शिव, चौसर खेलते हुए शिव-पार्वती, नंदी सहित कौलाचार्य तथा प्रेमालाप करते हुए सुन्दरी सहित शौवाचार्य, ललितासन में प्रेमासक्त विनायक और विनायिका, चतुर्भुजी नटराज शिव, लकुशीश प्रदर्शित है।

मंदिर की द्वार पीढ़िका पर गाय, बैल, अश्व, गज, शार्दूल, नाग-कन्या, पुजक-युगल का कलात्मक अंकन है। मंदिर के चारों ओर पत्थर में उत्खनित मूर्तियां दर्शनीय हैं। प्रत्येक को लोहे की विशेष कीलों द्वारा जोड़ा गया है और
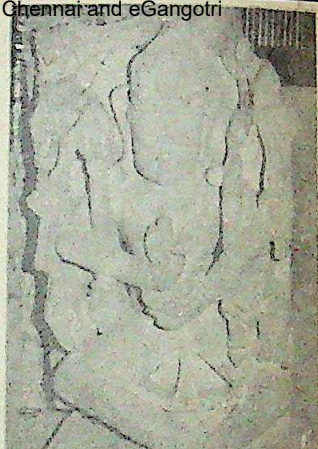
तांडव नृत्य की मुद्रा में शंकरजी

मंदिर का ऊपरी भाग क्षतिग्रस्त हो गया है।

पातालेश्वर मंदिर के निंकट एक अन्य शिव मंदिर के अवशेष हैं। जनश्रुति के अनुसार यहां एक चमत्कारी ज्योतिर्लिंग था। जिसे कोई उठाकर ले गया। कलचुरि संवत् ९१५ शिलालेख में कहा गया है कि पृथ्वीदेव द्वितीय के सामंत ब्रहमदेव के द्वारा मल्लाल में शिव मंदिर का निर्माण कराया गया। दीवार पर विविध अलंकरणों से युक्त ललितासन में बैठे उमा-महेश्वर, तीन पंचमुख लिंग और एक पद्चिन्ह है।

मल्हार के बाहर पूर्व दिशा में डिडनेश्वरी देवी का मंदिर है। यहां की मूर्ति कलचुरि संवत ९०० से १३०० की है। काले रंग की, ग्रेनाइट पत्थर पर बनी यह प्रतिमा विभिन्न अलंकरणों से

सुसज्जित, अंजलविद्ध, प्रसन्न मुद्रा में पद्मासन में विराजमान है। मुख्य मंदिर ध्वस्त हो गया है और गांव के केवट समाज द्वारा एक नये मंदिर का निर्माण कराया गया है। मूर्ति में किसी ठोस वस्तु से ठोंकने से धातु के समान ध्वनि निकलती है। स्थानीय लोग इसे 'सिद्धदेवी' के रूप में मानते हैं। मंदिर में रखे अन्य मूर्तियों में उमा-महेश्वर, नटराज-शिव, कुबेर, सरस्वती, रौद्र-शिव आदि हैं।

मोती सागर, तालाब के किनारे एक मंदिर है, इसे 'देऊर मंदिर' कहते हैं। खंडहर के रूप में स्थित इस मंदिर के स्तम्भों में गणेश-शिव-पार्वती की आकर्षण मुद्रायें मुद्रांकित हैं। शिखर शैली का यह शिव मंदिर पांचवीं-छठी शताब्दी का माना जाता है। दसवीं से तेरहवीं शताब्दी के मध्य में मल्हार में विशेषरूप से शिव मंदिरों का निर्माण हुआ था। इस काल में शिव, गणेश, कार्तिकेय, दुर्गा आदि की मूर्तियां निर्मित की गयीं, मल्हार में प्राप्त, मूर्तियां, ग्रेनाइट पत्थर और लाल बलुएं पत्थर की बनी हैं। इसके अतिरिक्त स्थानीय सफेद पत्थर और हल्के, पीले रंग के चूना पत्थर का प्रयोग भी हुआ है।

उत्खनन से यहां अनेक दुर्लभ मूर्तियां पायी गयी हैं, इनमें कुबेर की मूर्तियां प्रमुख हैं। लगभग ५ फुट ऊंची कुबेर की मूर्ति सातवीं सदी की है। कुबेर की मूर्ति बैठी हुई मुद्रा में है। दायें हाथ में फूल और बायें हाथ में थैली लिये हुए हैं। गले में यज्ञोपवीत और कानों में कुंडल है। सूर्य की प्रतिमा में सूर्य के मुख की ओर देखते हुए वृषभ की मूर्ति एक ऐसी विशेषता है, जो अन्य सूर्य प्रतिमाओं में नहीं मिलती। यह मूर्ति कलचुरि कालीन का उत्तम उदाहरण है। यहां प्राप्त अम्बिका की ६ फुट ऊंची प्रतिमा भी अत्यंत भव्य और आकर्षक है। अम्बिका अपने बायें हाथ से एक बालक को संभाले हुए सिंहासन पर खड़ी है, ऊपर दोनों ओर गंधर्व युगल पार्श्व में चंवर धारिणी और नीचे उपासक उत्कीर्ण हैं।

मल्हार में जैन और बौद्ध मूर्तियां भी बड़ी संख्या में प्राप्त हुई हैं। इनमें बुद्ध, पार्श्वनाथ, सुपार्श्वनाथ महत्वपूर्ण हैं। बुद्ध की प्रतिमा के मस्तक के ऊपरी हिस्से में 'ये धर्म हेतु प्रभवा...' अंकित है जो सातवीं शताब्दी की कुटिल नागरी-लिपि में है।

मल्हार के उत्खनन में प्राचीन भवनों के अवशेष बड़ी संख्या में मिले हैं। इससे यह पता चलता है कि मौर्यकाल से १३ वीं सदी तक यहां इमारतों का निर्माण विस्तृत रूप से हो चुका था। यहां की भौतिक सभ्यता का विशेष विकास गुप्त युग से लेकर कलचुरियों के शासनकाल तक हुआ। धातुओं और पत्थरों से बने विविध कलापूर्ण आभूषण

एवं दैनिक जीवन की अन्य वस्तुएं भी यहां अत्यधिक मात्रा में मिली हैं। इससे इस बात का पता चलता है कि इस भू-भाग में सभ्यता के विशेष अंगों का विकास हुआ था।

वाल्मीकि रामायण से ज्ञात होता है कि अयोध्या के महाराजा दशरथ की बड़ी रानी तथा राम की माता कौशल्या कोसल की थी। यह कोसल राजा दशरथ द्वारा शासित कोसल से भिन्न रहा होगा, इसमें संदेह नहीं। यहां से उत्खनन से ईसा की दूसरी सदी की ब्राह्मी लिपि में लिखित एक मुद्रा प्राप्त हुई है, जिस पर 'गामस कोसलिया' (कोसली ग्राम) अंकित है। वर्तमान में मल्हार से १६ कि.मी. की दूरी पर उत्तर-पूर्व में स्थित कोसलाग्राम से संबंधित प्रतीत होती है।

रामायण से यह भी पता चलता है कि भगवान राम ने अपने वनवासी जीवन के १० वर्ष पंचतारा नामक स्थान में व्यतीत किये थे, जो कि मल्हार के समीप स्थित है। यहीं कहीं शबरी के जूठे बेर राम ने खाये थे। शबरी के नाम पर बसा शिवरीनारायण यहां से ५० कि.मी. दूर महानदी (चित्रोत्पला) के तट पर स्थित है तथा शबरी की मूर्ति खरौद के प्रवेश द्वार पर 'सौराइन दाई' के रूप में स्थित है। यहां शबर निषाद लोगों के हथियार प्राप्त हुए हैं। यहां जिन अनार्यों का उस समय निवास था, उनमें से कुछ

बौद्ध प्रतिमा (मल्हार)

का उल्लेख करते हुए हर्षचरित, कादम्बरी और महाभारत के रचनाकारों ने दस्यु के रूप में शबरों का नाम भी गिनाया है। उनके कल्लोल से गूंजा करता था यह क्षेत्र। इस प्रकार मल्हार की महिमा प्राचीन इतिहास के साथ वेद-पुराण में भी वर्णित है।

मल्हार के निकट बर्गि ग्राम बूढ़ीखार में भी दुर्लभ मूर्तियां मिली हैं। यहां प्राप्त अम्बिका आम के पेड़ के नीचे खड़ी है। उनके बायें हाथ में कमलपुष्प है। यह मूर्ति ५ फुट ९ इंच की तथा सातवीं शताब्दी की है, यहां प्राप्त चतुर्भुज मूर्ति करीब ५ फुट की है। मूर्ति के दोनों हाथों में चक्र तथा दंड है तथा दो हाथ छाती के सम्मुख अंजलि मुद्रा में हैं। चक्र के नीचे खड्ग भी दिखायी देता है। मूर्ति के दंड

कविता गड़रिये की

☐ राजकुमार जैन

बहुत पहले की बात है। एक दफा उदयपुर के महाराणा फतहसिंह अपने कुछ दरबारियों के संग सैर को निकले। साथ में चारण भी थे, जो अपनी कविताओं से महारणा का मनोरंजन कर रहे थे। रास्ते में एक गांव के पास पानी-भरती पनिहारिनों, और चरती हुई गायों को देखकर एक चारण ने चितकबरी घोड़ी पर सवार मूंछों पर हाथ फेरते राणा की ओर देखकर कहा –

'गायां तो सींग बांकीं,
रंग बांकीं घोड़ियां,
मरद तो मूंछ बांका,
नैन बांकीं गोरियां !'

महाराणा ने चारण की इस कविता पर खुश होकर 'वाह वाह' की। यह सब एक ग्वाला, जो गायें चरा रहा था, सुन रहा था। वह एक लंगड़ाती गाय को हांकता हुआ बोला– 'चल री ठूंठी, चारी बातां झूंठी !'

फतहसिंह ने यह सुना तो, उनको ताज्जुब हुआ। गड़रिये को रोककर उन्होंनें पूछा – 'तुमने कहा कि चारों बातें झूठी हैं। तो फिर सच क्या हैं ?'

यह सुन गड़रिये ने चार पंक्तियां सुनायीं –

'गायां तो दूध बांकीं,
चाल बांकीं घोड़ियां,
मरद तो रण बांका,
लाज बांकी गोरियां !'

महाराणा गड़रिये की यह कविता सुन प्रसन्न हुए और उसे ढेर सारा इनाम दिया।

– ३४, बंदा रोड,
भवानीमंडी (राजस्थान)

में अंकित एक पंक्ति का लेख दूसरी शताब्दी की ब्राह्मी तथा प्राकृत भाषा में है। इससे ऐसा लगता है कि यह वैष्णव प्रतिमा ईसा पूर्व पहली या दूसरी शताब्दी की होनी चाहिये। इस मूर्ति की अन्य विशेषता उसका अधोवस्त्र है, जो मयूर पंख तथा पत्रों का आदिवासी घाघरा सा प्रतीत होता है। पैर तक लटकते घाघरे के ऊपर तीन पट्टे मोर पंखों के तथा नीचे का अंतिम चौथा पट्टा पत्तों का है। इस अधोवस्त्र तथा अंजलि मुद्रा के कारण पुरातत्ववेता इसे विष्णु की प्रतिमा के स्थान पर द्वारपाल की मूर्ति बताते हैं।

– शासकीय स्नातक महाविद्यालय
चांपा - ४९५६७८
जि. बिलासपुर, म.प्र.

हिमालय की प्राकृतिक छटा से भरा-पूरा सिक्किम एक अभूत-पूर्व राज्य है। प्रकृति के प्रेमी पर्यटक दार्जिलिंग तक पहुंचकर, सिक्किम की भी यात्रा अवश्य करते हैं। दार्जिलिंग से मिला हुआ सिक्किम का राज्य है। दार्जिलिंग पहुंचकर सिक्किम देखे बिना लौटना हमारे मन ने स्वीकार न किया। सिक्किम के प्राकृतिक सौन्दर्य की प्रशंसा हम बहुत सुन चुके थे। हमने दार्जिलिंग से ही सिक्किम की राजधानी गन्गटोक तक की यात्रा करने का कार्यक्रम बना लिया।

वैसे सिलीगुडी तथा जलपाईगुड़ी से सीधी बस तथा टैक्सी गन्गटोक जो सिक्किम की राजधानी है, वहां तक जाती है। बागडोगरा हवाई अड्डे से भी सीधे सिक्किम की राजधानी गंगटोक तक बस या टैक्सी से पहुंचा जा सकता है। दार्जिलिंग के पूर्व में 'तीस्ता नदी' के उस पार सिक्किम राज्य है। तीस्ता नदी के किनारे 'रंगपो' नगर मार्ग पर पड़ता है। रंगपो एक छोटा सा बाजार है। यहां पर आसपास के पहाड़ी गांवों से संतरे बिकने के लिए आते हैं। यहां पर शराब का कारखाना भी है। इसके आगे

यात्रा वृत्तांत

छुकलाखाङ् विहार, गान्तोक
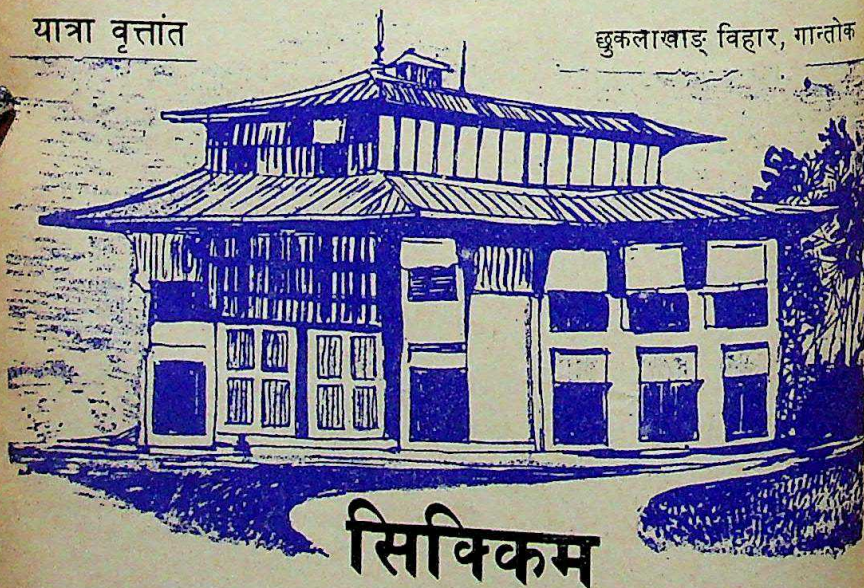
सिक्किम

□ शारदा त्रिवेदी

सिक्किम राज्य शुरू हो जाता है। यहां से गंगटोक ४० कि.मी. है। गंगटोक जाने के लिए दार्जिलिग से हमने सुबह की ही एक बस पकड़ ली। यह बस 'घूम' होते हुए नीचे उतरती हुई तीस्ता नदी के किनारे- किनारे चलकर नदी के तट तक पहुंच जाती है। तीस्ता नदी के किनारे 'तीस्ता बाज़ार' है, जहां की ऊंचाई समुद्र सतह से कुल २१४ मीटर है। यहां पर पुल द्वारा तीस्ता नदी के पार करके मार्ग पुनः चढ़ाई की ओर चलने लगता है। मोटर मार्ग तीस्ता नदी के किनारे- किनारे ही जाता है। तीस्ता नदी की घाटी हरियाली से भरी-पूरी है। घाटी में से होकर नदी के किनारे-किनारे चलना एक सुखद अनुभव है। तीस्ता घाटी अपनी हरीतिमा लिए हुए प्राकृतिक छटा में निराली है। दार्जिलिग से गंगटोक लगभग ११५ किलोमीटर दूर है। तीस्ता नदी के बिलकुल किनारे तक आकर मार्ग पुनः चढ़ाई की ओर चढ़ने लगता है।

खुले मौसम में कंचनजंगा की हिंम से ढकी पर्वत माला सिक्किम में हर जगह से दिखायी देती है। पहाड़ों की श्रृंखला के पीछे श्रृंखलायें ही श्रृंखलाये हैं, जो क्षितिज तक फैली हुई हैं। यहां धान के सीढ़ीनुमा हरे-भरे खेत देखने में बड़े मोहक लगते हैं। यहां चारों ओर ऊंचे-ऊंचे हरे वृक्षों के घने छायादार वन हैं। पहाड़ी ढलानों पर दूर से गिरते

कल-कल करते झरने आंखों को अपनी ओर बांध लेते हैं। आने वाला रुक कर यहां की छटा को निहारता रह जाता है। पूर्व में भूटान है तथा दक्षिण पश्चिम में दार्जिलिग है। सिक्किम एक छोटा-सा राज्य है फिर भी यहां की भूमि बिलकुल नीची सतह ८०० फीट से लेकर बिलकुल ऊंचाई तक २०,००० फीट तक ऊंची है। यहां का मौसम भी इसी तरह का है, कहीं बिलकुल गर्म कहीं बिलकुल बर्फीला। मई से अक्तूबर तक सिक्किम में बरसात का मौसम रहता है लेकिन इस बरसात के मौसम में भी बीच-बीच में धूप निकल आती है। आकाश मेघरहित हो जाता है, तब यहां के हिमशिखर सद्यःस्नात हिम की

प्रखर चमक से हीरे से जगमग करने लगते हैं। यहां की सघन हरीतिमा लकदक करके धूप की प्रखर किरणों में चमक उठती है।

गंगटोक

"रंगपो" से भारतीय सीमा को पार करते ही गंगटोक तक रास्ता सीधी खड़ी चढ़ाई का है और यह ४० किमी. का मार्ग ४२४ फीट की ऊंचाई से शुरू होकर गंगटोक तक १७५९ मीटर अर्थात् ५००० फीट की ऊंचाई तक पहुंच जाता है। गंगटोक सिक्किम की राजधानी है। यही सिक्किम राज्य का अकेला बड़ा शहर है। यहां की जलवायु सुखद और स्वास्थ्यवर्धक है।

हम तो गंगटोक जून के महीने में पहुंचे थे, लेकिन गंगटोक जाने के लिए फरवरी से मई तक तथा अक्तूबर से दिसम्बर तक का मौसम सबसे अच्छा होता है। जब आकाश प्रायः खुला रहता है।

गंगटोक के आस-पास फूलों और हरियाली का साम्राज्य है। एक सिक्किम वनस्पतिशास्त्री से पता चला कि उन्होंने यहां पर "आरकिड" के लगभग ७०० नमूने एकत्र किये हैं। बुरांस के फूलों का तो जैसे यह प्रदेश सबसे अधिक धनी है। बसंत के मौसम में पहाड़ी ढलानों के जंगल बुरांस के फूलों से लद जाते हैं। यहां पर बुरांस के फूल लाल के अलावा पीले, गुलाबी तथा सफेद रंग के भी होते हैं। यहां बुरांस की ४० से अधिक जातियां पायी जाती हैं। अधिक वर्षा के कारण यहां पुष्पों और वृक्षों की अधिकता है। चारों ओर हरियाली का राज्य है शाल और चीड़ के वृक्ष यहां की पहाड़ी ढलानों पर खूब देखने को मिलते हैं। उत्तर की ओर गंगटोक शहर में हर जगह से कंचनजंगा की पर्वत श्रेणियां चमकती हुई दिखायी देती हैं। आठ हजार फीट की ऊंचाई तक बुरांस के फूल खूब मिलते हैं। उसके ऊपर धूप के वृक्ष तथा बुरांस के छोटे फूल मिलते हैं। अधिक ऊंचाई पर भी कई तरह के सदा- बहार फूल खिले मिलते हैं, जिनमें "प्रिमुला" विशेष रूप से प्रसिद्ध है।

गंगटोक के चारों ओर घूमने-फिरने के लिए अनेक सुंदर स्थान हैं। पहाड़ी ढलानें चीड़ के सघन वनों से ढकी हुई हैं। रंग-बिरंगी तितलियां फूलों के चारों ओर उड़ती हुई दिखायी देती हैं। इस सबके ऊपर कंचनजंगा का हिमशिखर नगर के प्रहरी के रूप में हर जगह से दृष्टिगोचर होता है। कोहरे से भरी वादियों में बीच-बीच में सिक्किम निवासियों के पूजा के झंडे दिखायी पड़ते हैं। तिब्बत को जाने वाली सड़क भी दूर तक एक पतली रेखा सी जान पड़ती दिखायी पड़ जाती है।

छुकलाखांग गुम्बा

सिक्किम की जनता धर्मभीरु है। सिक्किम में चारों ओर जनता की श्रद्धा

आस्था के अनुसार अनेक बौद्ध स्तूप, बौद्ध बिहार पूजा के झंडे तथा पूजा के प्रतीक चारों ओर बिखरे हुए हैं। छुकलाखंग गुम्बा सिक्किम के राजा के महल के निकट ही स्थित है। लाल चोगा पहने हुए लामाओं का दल देख इस प्रदेश में आने वाला यहां के वातावरण की धार्मिक पवित्रता के प्रति श्रद्धा से नत हो उठता है। इस बिहार में पूजा-पाठ भी होता है, साथ ही यहां सिक्किम राज्य की सभा की बैठक भी होती है। यह मंदिर सिक्किम भवन निर्माण शैली का सुंदर नमूना है। मंदिर के भवन के चारों कोनों में लकड़ी के शरों के सिर सजाये गये हैं। मंदिर के अंदर भगवान बुद्ध की विशाल प्रतिमा स्थापित है। अन्य बोधि- सत्वों की मूर्तियां भी मंदिर के अंदर हैं। मंदिर के भीतरी भाग को लकड़ी की महीन कारीगरी से संवारा गया है। मंदिर की दीवारों पर बौद्ध धर्म की महायान शाखा के चरित्र अंकित हैं। मंदिर में घी का अखंड दीपक जलता रहता है। धूप के सूखे पत्तों की सुगंध मंदिर में हर समय सुवासित होती रहती है।

इसी छुकलाखंग विहार में सिक्किम के सारे धार्मिक पर्व और राष्ट्रीय उत्सव मनाये जाते हैं। हिमालय की पूजा का उत्सव जिसे ''कंचनजंगा की पूजा'' का उत्सव भी कहते हैं सितम्बर के महीने में बड़ी धूमधाम से मनाया जाता है। इस समय बहुत से पर्यटक भी घूमने के लिए बाहर से यहां आये होते हैं। ''लोसार'' का त्योहार, जो तिब्बत के नव वर्ष के शुरू होने पर मनाया जाता है, यहां के लोग बड़े उत्साह से मनाते हैं। मंत्रियों की शपथ भी इसी विहार में होती है। राजा का राज्याभिषेक तथा राजाओं के विवाह के उत्सव इसी विहार में मनाये जाते हैं।

मृगदाव हिरन उद्यान

गंगटोक में इस उद्यान के लिए आसपास के देशों से मृग लाकर रखे गये हैं। यह मृगदाव सारनाथ के मृगदाव के समान ही बनाया गया है। यह मृगों का सुरक्षित बन है। मृगदाव में भगवान बुद्ध की प्रतिमा स्थापित है।

❖❖❖

सिक्किम की पूरी जनसंख्या का बहुत बड़ा भाग गंगटोक में ही निवास करता है। गंगटोक सिक्किम का बड़ा व्या-पारिक केन्द्र भी है। यहां पर कई तरह की शराब बनायी जाती है। अच्छी किस्म की शराब के कई कारखाने भी हैं। इन दुकानों में से अधिकांश के मालिक भारतीय या नेपाली हैं।

राजमहल और उसके आसपास जो भवन बने हैं, उनमें कई तरह के विचित्र चिह्न दीवारों पर बने हुए है। यहां के निवासियों का यह विश्वास है कि इन चिह्नों के कारण भूत-प्रेत भवन के अंदर प्रवेश नहीं कर पाते। दफ्तरों के

अंदर भी भगवान बुद्ध की प्रतिमायें बनी हुई हैं। प्रायः सभी भवनों के ऊपर प्रार्थना के झंडे लहराते दिखायी देते हैं। दफ्तरों के मुख्य द्वार लकड़ी से बने भयानक सिहों के सिरों से सजाये गये हैं। सिक्किम निवासियों का विश्वास है कि ये भयानक सिह-मुख भूतों-प्रेतों को भीतर नहीं घुसने देते।

इन्स्टीट्यूट आफ तिब्बतोंलाजी

गंगटोक नगर के निकट ही चीड़ और भोज वृक्षों के सघन वनों के बीच यह संस्थान बना हुआ है। १९५८ में स्वर्गीय प्रधानमंत्री पंडित जवाहरलाल नेहरू ने इस भवन का उद्घाटन किया था। सिक्किम बौद्ध धर्म की महायान शाखा का मुख्य केन्द्र है। महायान बौद्धों से संबंधित अनेकों विहार तथा गुम्बा पूरे सिक्किम में फैले हुए हैं। यह संस्थान महायान बौद्ध धर्म के अध्ययन के लिए संसार भर में सबसे प्रमुख केन्द्र है। यहां लगभग ढाई हजार पांडुलिपियां सुरक्षित हैं। इन पांडुलिपियों के अतिरिक्त बौद्ध देवी- देवताओं की लगभग २०० मूर्तियां रखी हुई हैं। अनेकों रेशम पर बने चित्रपट भी हैं। इन चित्रपटों और मूर्तियां में यहां की कला के उत्कृष्ट नमूने देखने को मिलते हैं।

संस्थान में तिब्बती लामाओं को संस्कृत और अंग्रेजी पढ़ायी जाती है। भारत, मंगोलिया, जर्मनी, जापान, इटली, हंगरी, ब्रिटेन तथा अमरीका के विद्वान यहां के शोधकार्य में सहायता करते हैं।

हिम मानव

गंगटोक नगर से दो मार्ग निकलते दिखायी देते हैं। एक मार्ग तिब्बत को चला जाता है। दूसरा मार्ग कंचनजंगा हिमालय की ऊंचाइयों की ओर को बढ़ता है। इसी मार्ग से हिमालय की यात्रा के प्रेमी लोग आगे बढ़ते हैं। मार्ग घूम-घूम कर ऊंचाई की ओर बढ़ता जाता है। कंचनजंगा हिमशिखर पास और पास आता लगने लगता है। काफी दूर आगे पहुंचने पर बर्फ का प्रदेश आ जाता है। सड़क यहां समाप्त हो जाती है। चारों ओर बर्फ ही बर्फ दिखायी पड़ती है। यहीं पर 'येती' हिम मानव के होने की संभावना बतायी जाती है।

'नाथुला'

१९६२ के चीन के आक्रमण के समय से यह पहाड़ी क्षेत्र बहुत प्रसिद्ध हो गया है। गंगटोक से ही नाथुला के लिए रास्ता जाता है। मार्ग में एक स्थान पड़ता है "शेरपाथाग" इसकी ऊंचाई समुद्र सतह से १५००० फीट है। यहां पर अधिक ऊंचाई के कारण आक्सीजन की कमी है और ठंडक भी बहुत अधिक है। नाथुला तक पहुंचने का मार्ग बहुत ही घुमावदार है। मार्ग के एक ओर ऊंचे-ऊंचे आसमान को सिर पर उठाये हिमालय के शिखर हैं तो दूसरी ओर

गहरी खाइयां हैं, जिनकी गहराई मापी नहीं जा सकती। सुंदर पहाड़ी झरने रास्ते में कई जगह ऊंचाइयों से गिरते हुए मिलते हैं। इतनी ऊंचाई पर कहीं-कहीं झीलें भी दिखायी देती हैं। ऊंचे पहाड़ों पर मार्ग के बीच में छोटे-छोटे गांव भी मिलते हैं। यहां के रहने वाले इन्हीं पहाड़ी ढलानों पर कठिन परिश्रम करके खेती भी करते हैं। खेती में यहां पथरीली जमीन होने के कारण उपज बहुत कम होती है। यहां की विशेष पोशाक जिसे 'बोक्खू' कहते हैं। छोटी-छोटी भोली लड़कियां बोक्खू पहने हुए भेड़ों को चराती हुई दूर से दिखायी पड़ती हैं

समटेक विहार

गंगटोक से चौदह किलोमीटर की दूरी पर सिक्किम में समटेक विहार है। यह विहार प्रकृति के अति सुंदर परिवेश में बनाया गया है। विहार प्राचीन सिक्किम शैली का एक नमूना है। मंदिर पत्थर की बनी हुई दो मंजिली इमारत का बना है। मुख्य द्वार के सामने बड़ा प्रांगण है जिसमें धार्मिक उत्सव मनाये जाते हैं।

यहां बौद्ध विहार गंगटोक से केवल २ किलोमीटर दूर है। गंगटोक से नाथूला जाने वाले मार्ग पर ही यह विहार दिखायी पड़ने लगता है। यहां पर बच्चों को बौद्ध धर्म की शिक्षा दी जाती है।

सिक्किम कई जाति के लोगों का निवास स्थान है। मुख्य रूप से यहां के आदिम निवासी "लेपचा" बताये जाते हैं। अब भी ये लोग सिक्किम में रहते हैं। लेपचा लोग प्रकृति पूजा में अधिक विश्वास करते हैं। ये लोग फूलों और वृक्षों की पूजा करते हैं। भूतों-प्रेतों में विश्वास करते हैं। देवता को प्रसन्न करने के लिए बलि चढ़ाते हैं। अंधविश्वास और तरह-तरह के विचित्र प्रतीकों में इन लोगों का विश्वास है।

तिब्बत पर चीनी आक्रमण के कारण "तिब्बती" लामा लोग भागकर सिक्किम में आ गये। इन्हीं लामाओं के वंशज सिक्किम के महाराजा भी हैं। तिब्बती लामाओं ने सिक्किम में बौद्ध धर्म का प्रचार किया।

सिक्किम के पड़ोस में नेपाल का राज्य है। नेपाल की जो जमीन सिक्किम से कम उपजाऊ थी, वहां के नेपाली सिक्किम में आकर बस गये। लेपचाओं की अपेक्षा नेपाली कुशल किसान और परिश्रमी थे। उन्होंने यहां खेती करना शुरू कर दिया और यहीं के निवासी बन कर रह गये।

इस प्रकार से सिक्किम में मुख्यतया तीन जाति के लोग हैं लेपचा, भेटिया तथा नेपाली।

राजा का राज्याभिषेक

यहां के राजा छोग्याल कहलाते हैं। राजा के राज्याभिषेक के समय राज-परिवार से संबंधित प्रधान लामा

पेमायांगचे विहार में निवास करते हैं। राजा के राज्याभिषेक के समय जल देने के लिए प्रधान लामा पधारते हैं। सिक्किम की महारानी को 'ग्यालमों' कहा जाता है।

बौद्ध धर्म सिक्किम का राष्ट्रीय धर्म है। लेकिन सिक्किम में बौद्ध धर्म के साथ ही साथ हिन्दू धर्म की भी समान मान्यता है। यहां पर हिन्दू धर्म और बौद्ध धर्म अलग-अलग नहीं हैं। सिक्किम का रहने वाला हर व्यक्ति जो धार्मिक है वह समान रूप से बौद्ध और हिन्दू देवी-देवताओं की पूजा करता है। बौद्ध गुम्बा में सभी लोग पूजा करते हैं। दीपक जलाते हैं प्रार्थना चक्र को भक्ति से घुमाते हैं। बौद्ध लोग भी हिन्दू पर्वो को पूरे उत्साह से मनाते हैं।

लामाओं को सिक्किम में बहुत ही आदर का स्थान प्राप्त है। किसी लामा से उत्पन्न अवैध सन्तान को यहां के लोग अवैध नहीं मानते।

विवाह पद्धति

प्राचीन रीति-रिवाजों के अनुसार सिक्किम निवासी विवाह का उत्सव बड़ी धूमधाम से मनाते थे। राज परिवारों में यह उत्सव पूरे अठारह दिनों तक चला करता था। अब समय के बदलने के साथ-साथ विवाह का उत्सव केवल तीन दिनों तक चलता है। इस उत्सव के समय सिक्किम निवासी तीन दिनों तक खूब जमकर शराब पीते हैं। एक तरह से शराब की नदियां बहती हैं।

सिक्किम में स्त्री-पुरुष के संबंधों को बुरा नहीं समझा जाता। नवयुवक और नवयुवती अपनी इच्छा से विवाह कर सकते हैं। स्त्री अपने पति को छोड़ सकती है। इसके लिए उसे कुछ रकम पति को देनी पड़ती है और विधवा होने पर अगर उसके कोई सन्तान हो जाय तो वह उसके स्वर्गवासी पति की ही सन्तान कहलाती है। दूसरा विवाह अगर हो जाय तो फिर दूसरे पति की संतान कहलायेगी।

सिक्किम की महिलायें गहने पहनना पसंद करती हैं। तिब्बती गहने यहां बहुत लोकप्रिय हैं। इन गहनों में सोना, जड़ाऊ, फिरोजा तथा मोती की मालायें होती हैं। पोत के जेवर भी पहने जाते हैं। ग्रामीण महिलायें कानों में बड़े-बड़े कर्णफूल पहनती हैं, गले में बड़े-बड़े मोतियों का या सोने की गुरियों का कंठा पहनती हैं। हाथ में सोने या चांदी के कड़े पहने जाते हैं।

पर्व और उत्सव

कंचनजंगा का पूजोत्सव सितम्बर माह में बड़े उत्साह और उल्लास के साथ मनाया जाता है। इस उत्सव के लिए राज्य में सबको दो दिन का अवकाश दिया जाता है। राजमहल के पास के छुकलाखंग विहार के विशाल प्रांगण में यह उत्सव सम्पन्न होता है।

उत्सव में सिक्किम के हर तरह के नृत्यों का आयोजन होता है। "कंचनजंगा" को सिक्किम के लोग अपनी रक्षा करने वाला देवता मानते हैं। सिक्किम के चित्रों में कंचनजंगा को एक देवता के रूप में सिंह पर आरूढ़ दिखाया जाता है। सिक्किम का रहस्यमय मुखौटों को लगाकर होने वाला नृत्य सबसे अधिक लोकप्रिय है। यह "मुखौटा" नृत्य "सिंगी" नृत्य भी कहा जाता है। यह नृत्य उछल-उछल कर वीरतापूर्ण ढंग से युद्ध की तरह किया जाता है। यह सिक्किम का राष्ट्रीय नृत्य है।

* * *

लोसार सिक्किम के नववर्ष का त्योहार है। इसे भी सिक्किम निवासी नृत्य और संगीत के साथ बड़े आनंद से मनाते हैं। इसमें काली टोपी वाले नृत्य तथा बारहसिंगा नृत्य किये जाते हैं। यहां की महिलायें धीमी गति वाले नृत्य करती हैं।

बौद्ध धर्म यहां का राष्ट्रीय धर्म है। अतः बुद्ध पूर्णिमा को बड़े जोश के साथ मनाया जाता है। इस दिन धार्मिक ग्रन्थों को सुंदर रेशमी चादरों में बांध कर जुलूस निकाला जाता है।

धान की फसल तैयार होने पर यहां ढोल नृत्य किया जाता है। नेपालियों का मारूनी नृत्य बहुत ही सुंदर होता है। इस नृत्य को पुरुष स्त्रियों की पोशाक पहनकर करते हैं।

सिक्किम जैसा सुंदर देश है, वैसे ही यहां के निवासी भी यहां की संगीतमयी प्रकृति के बीच संगीत और नृत्य से भरा उल्लासपूर्ण जीवन बिताते हैं।

— ३३-ए, चन्द्रलोक, लखनऊ, उ.प्र.

○

ज़ार के मुख्यमंत्री काउंट बिटी ने एक दिन अपने सेक्रेटरी से कहा कि ऐसे तमाम लेखकों की सूची बना दो, जिन्होंने अखबारों में मेरे विरुद्ध लिखा है। सूची तैयार करके दी गयी। उसमें कई सौ लेखकों के नाम थें। जब बिटी ने कहा कि इनमें से उन लेखकों के नाम चुनो, जिन्होंने मेरी सबसे कठोर आलोचना की है। यह नई सूची जब बन गयी, उसे बिटी के सामने पेश करते हुए सेक्रेटरी ने पूछा — कि अब इन्हें क्या सजा दी जायेगी? 'सजा? कैसी सजा?' बिटी बोले — 'अब मैं इनमें से अपने सबसे कठोर आलोचक को चुनूंगा और उसे अपने समाचार-पत्र का संपादक बनाऊंगा। अनुभव ने मुझे सिखाया है कि हमारा सबसे कठोर आलोचक हमारा सबसे सच्चा हितैषी होता है।'

— प्रभाती,
देवरी कंला, सागर, म.प्र.
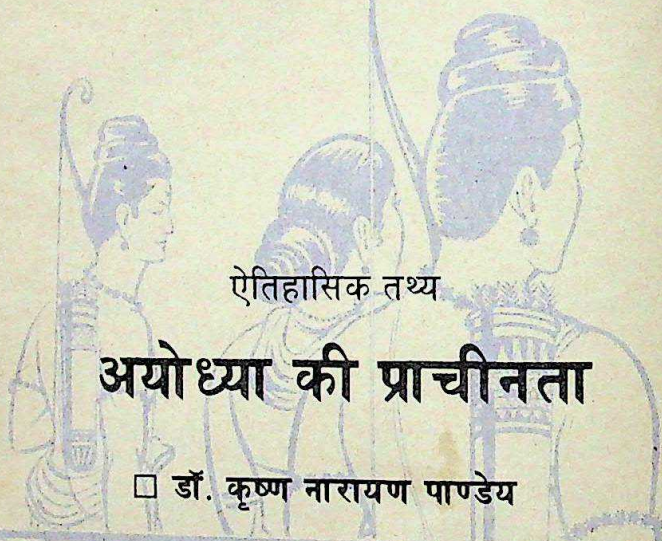
ऐतिहासिक तथ्य

अयोध्या की प्राचीनता

□ डॉ. कृष्ण नारायण पाण्डेय

भारतवर्ष के प्राचीनतम सूर्यवंश की राजधानी अयोध्या का शब्दार्थ है एक ऐसी सुरक्षित नगरी जिसे युद्ध में जीता न जा सके।

महर्षि वाल्मीकि कृत रामायण के अनुसार इस पुरी की स्थापना महाराज मनु के द्वारा की गयी थी– मनुना मानवेन्द्रेण सा पुरी निर्मिता स्वयम्। (रामायण - १/५/६)

वैदिक साहित्य में अथर्ववेद में (१२/२/३१) अयोध्या का प्रथम उल्लेख प्राप्त होता है।

पौराणिक साहित्य में स्कंदपुराण में अयोध्या के तीर्थों, आश्रमों तथा मुख्य स्थलों का विस्तृत भौगोलिक वर्णन किया गया है। स्वर्गद्वार, ब्रह्मकुण्ड, चक्रहरि, लोमश, वसिष्ठ, सीताकुण्ड, एवं जन्म-स्थान की स्थिति का दिशा निर्देश भी किया गया है।

'कनक भवन' श्री राम-जानकी मंदिर में संरक्षित शिलालेख में अयोध्या का इतिहास इस प्रकार वर्णित है–

'द्वापर के आरम्भ में महाराज कुश ने अयोध्या का विशेष रूप से अवतरण किया, महाराज ऋषभ ने इसका संस्करण किया, श्रीकृष्णचंद्र ने विचरण, विक्रमादित्य ने पुनर्निर्माण तथा समुद्रगुप्त ने जीर्णोद्धार किया।'

पुरातात्विक उत्खननों में अयोध्या की प्राचीनता सुनिश्चित रूप से ८०० ई.पू. निस्संदेह प्रमाणित हुई हैं।

अयोध्या के वर्तमान ऐतिहासिक अवशेषों में मणिपर्वत का अशोकस्तूप, नागेश्वर शिव लिंग का मौर्यकालीन स्थापत्य तथा श्री राम जन्म भूमि के गुप्तकालीन शैली के कसौटी के स्तम्भ अयोध्या की ऐतिहासिकता को स्पष्ट आधार प्रदान करते हैं।

कालेराम मंदिर की तथा लक्ष्मण किला मंदिर की मूर्तियां प्राचीनतम सुरक्षित कला की प्रतीक हैं।

अश्वमेध यज्ञकर्ता सेनापति पुष्यमित्र शुंग के द्वितीय शताब्दी ईस्वी पूर्व से लेकर ग्यारहवीं शताब्दी के धारापति राजा भोज तक के ऐतिहासिक अभिलेखों में प्रकारांतर से अयोध्या एवं अयोध्या के राजाओं का उल्लेख प्राप्त होता है। मनु, इक्ष्वाकु, ककुत्स्य, ययाति, नाभाग, नहुष, पृथु, सगर, रघु, दशरथ, राम और लक्ष्मण का ऐतिहासिक पुरुषों के रूप में कथित ऐतिहासिक अभिलेखों में वर्णन है।

नेपाल देश के पशुपतिवंश प्रशस्ति शिला लेख में इक्ष्वाकु से लेकर राजा दशरथ तक की सूर्यवंश परम्परा को अभिलेखित किया गया है। इसका अभिलेखन सन ७४७ ई. में किया गया है।

पुरातात्विक प्रमाणों से महात्मा बुद्ध का निर्वाण सिद्ध है। जिसकी मृत्यु हुई है उसका जन्म भी हुआ होगा, इस प्रत्यक्ष प्रमाण से महात्मा बुद्ध एक ऐतिहासिक महापुरुष घोषित हुए हैं।

पौराणिक सूर्य वंशावली में महात्मा बुद्ध के पितामह शाक्य, पिता शुद्धोदन, पुत्र राहुल तथा पौत्र प्रसेनजित को अयोध्या के शासक के रूप में उल्लेख है।

ऐतिहासिक बौद्ध संदर्भों में राम को बुद्ध का पूर्वज बताया गया है। श्रीलंका की ऐतिहासिक परम्परा में अवधेश राम को शाक्य राजकुमार कहा गया है। पूर्वजन्म में महात्मा बुद्ध बोधिसत्व के रूप में राम ही थे, यह भी स्पष्ट उल्लेख है। इन आधारों पर भी भगवान बुद्ध के पूर्वज के रूप में मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान श्री राम की ऐतिहासिकता और अयोध्या की प्राचीनता प्रकारान्तर से प्रमाणित होती है।

प्राचीन अयोध्या की स्थिति

श्री राम के समकालिक महर्षि वाल्मीकि ने रामकथा के यात्रा वर्णन में मार्गस्थ नदियों, पर्वतों, जनपदों तथा स्थानों का क्रम से उल्लेख किया है।

महर्षि विश्वामित्र के साथ राम और लक्ष्मण की पूर्व दिशा में जनकपुर यात्रा, सरयू के किनारे से गंगा तथा सोन नदियों के मार्ग से गिरिव्रज होती हुई सम्पन्न होती है।

पश्चिमोत्तर में भरत की केकय राज्य की यात्रा में गोमती, गंगा, यमुना,

सरस्वती, शतद्रु (शतलज) विपाशा (व्यास) ह्लादिनी (रावी) तथा सुदामा (चिनाब) नदियों की स्थिति का वर्णन है।

अयोध्या से लंका तक के भूभाग में रामायण में वर्णित भूगोल के अनुसार क्रमशः तमसा (टोन्स) वेदश्रुति (विसुही) गोमती, गंगा, यमुना, नर्मदा, वरदा (वर्धा), गोदावरी, महानदी, कृष्णवेणी (कृष्णा) कावेरी तथा ताम्रपर्णी नदियों की स्थिति थी।

इन सभी नदियों की वर्तमान स्थिति के आधार पर प्राचीन अयोध्या की स्थिति वर्तमान अयोध्या से शत-प्रतिशत मिलती है।

अयोध्या का प्राचीन स्वरूप

मैदानी भाग में स्थित अयोध्या नगरी की चहार दीवारी पानी की गहरी खाई तथा शाल वृक्षों की पंक्ति से विनिर्मित थी। वर्तमान वाराणसी के प्राचीन भवनों की तरह अयोध्या के नागरिकों के भवन भी काष्ठ निर्मित ही थे।

धनुष-बाण के प्रयोग के लिए मध्यकालीन पत्थर के कंगूरों वाले किलों के स्थान पर प्राचीन दुर्ग, मिट्टी के ऊंचे टीलों के रूप में प्राप्त हुए हैं। अयोध्या में इस प्रकार के मैदानी रामकोट दुर्ग के चार अवशेष अब भी देखे जा सकते हैं। ये चार मिट्टी के मानवनिर्मित टीले हनुमान गढ़ी, सुग्रीवटीला, अंगदटीला, तथा मत्त गजेन्द्र हैं। हनुमान गढ़ी का मंदिर एक विकसित किले का ही रूप है। सरयू नदी तट पर स्थित इस प्रकार का पांचवां प्राचीन स्थल लक्ष्मण किला है।

पुरातात्विक दृष्टि से इस प्रकार के प्राचीन मृतिका- दुर्गों का एक स्पष्ट उदाहरण लखनऊ नगर के पास स्थित 'किला मोहम्मदीनगर' में दर्शनीय है। लखनऊ में गोमती नदी के किनारे स्थित लक्ष्मणटीला यही कहानी अपने में संजोये हुए है।

समय सीमा

महात्मा बुद्ध से पूर्व महाभारत युद्ध में अयोध्या के राजा बृहत्बल ने भी भाग लिया था। महाभारतकार कृष्ण द्वैपायन वेदव्यास ने रामकथा से संबंधित स्थलों का तीर्थों के रूप में वर्णन किया है। स्थान-स्थान पर रामकथा के प्रसंगों की उपमायें दी हैं। इन आधारों पर अयोध्या महाभारत युद्ध (१५०० ई.पू. से ३००० ई.पू. तक) से पहले वर्तमान थी।

कल्प-मन्वन्तर-युग-संवत्सर की काल मान गणना के अनुसार तो वैवस्वत मनु का समय लाखों वर्ष प्राचीन सिद्ध होता है। भौगोलिक परिवर्तनों की वैज्ञानिक पद्धति से समय गणना करके सत्य के निकट पहुंचा जा सकता है। ये परिवर्तन इस प्रकार हैं :

१ - वैदिक 'सप्त सैन्धव' क्षेत्र, शतलज, व्यास, रावी, चिनाव, झेलम, सिन्धु तथा सरस्वती इन सात नदियों से युक्त है। वैदिक साहित्य में सरस्वती के लुप्त होने का स्थान 'विनशन' नहीं है।

सरस्वती नदी का प्रवाह समुद्र पर्यन्त था। वर्तमान पुष्कर होते हुए गुजरात की साबरमती नदी वैदिक सरस्वती का मार्ग था। यह तथ्य वेदों के रचना काल के शोध का मार्गदर्शक हो सकता है।

२ - रामायण काल में सोन नदी गिरिव्रज (राजगृह) के पांच पर्वतों के बीच से होकर बहती थी। राजस्थान के थार मरुस्थल में समुद्र लहराता था। सांभर झील उसी समुद्र का अवशेष है। आबू पर्वत की चट्टानों में समुद्र की लहरों से निर्मित विवर आज भी देखे जा सकते हैं।

३ - रामायण काल में पूंछधारी वानर और वनवासियों के औजार प्रागैतिहासिक शिलाग्र और वृक्षाग्र हैं। दोनों को मिलाकर बनाया गया 'गदा' उनका प्रसिद्ध हथियार है।

४ - महाभारत के समय में गोकर्णतीर्थ पश्चिमी समुद्र तट पर एक द्वीप था तथा रामेश्वरम् तीर्थ मुख्य भूमि से जुड़ा हुआ था। वर्तमान में स्थिति विपरीत हैं।

इन आधारों पर अयोध्या की समय सीमा प्रागैतिहासिक काल तक पहुंचती है।

— सहायक निदेशक राजभाषा
१४ वां माला, १०१ महर्षि कर्वे मार्ग,
मुंबई - ४०० ०२०

'नवनीत हिंदी डाइजेस्ट' की चंदे की दरें

*** एक प्रति (भारत में)** रु. ६.००

भारत में (साधारण डाक से)

* एक वर्ष : ६५ रु.; दो वर्ष : १२० रु.; तीन वर्ष : १७० रु.; पांच वर्ष : २९० रु., दस वर्ष : ५६० रु.

विदेशों में समुद्री मार्ग से (एक वर्ष के लिए)

* पाकिस्तान, श्रीलंका, रु. १२०; अन्य देश रु. १८५

विदेशों में हवाई डाक से (एक वर्ष के लिए)

* प्रत्येक देश के लिए रु. ३१०

* बम्बई से बाहर के चेक भेजने वाले रु. ७ अधिक भेजें।

— व्यवस्थापक, नवनीत हिंदी डाइजेस्ट, भारतीय विद्या भवन, बम्बई - ४०० ००७.
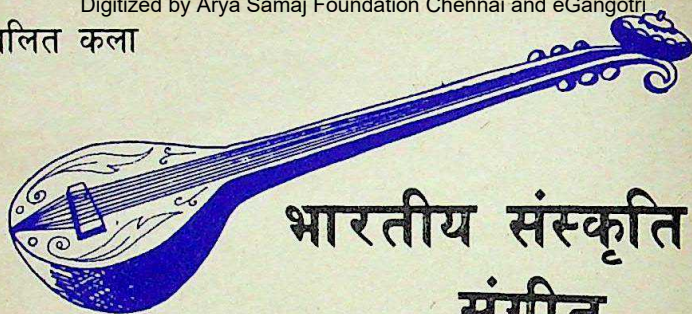
भारतीय संस्कृति में संगीत

□ बालकृष्ण गर्ग

भारतीय समाज में आदिकाल से ही संगीत-कला का समावेश पाया जाता है। प्रागैतिहासिक काल से ही जन-जीवन से जुड़ी हुई यह कला आज तक निर्बाध गति से आनन्दधारा के रूप में बहती चली आ रही है और भविष्य में भी बहती रहेगी। ऐसी चिरसंगिनी कला के विषय में जानने-समझने के लिए भावुक जन-मानस में जिज्ञासा होना स्वाभाविक है।

प्रत्येक कला स्थूल रूप से दो भागों में विभक्त होती है, जिन्हें 'शास्त्रीय' (थ्योरिटिकल) और 'क्रियात्मक' (प्रेक्टीकल) अथवा 'शस्त्र' और 'क्रिया' कहा जाता है। जहां संगीत के शास्त्र की बात उठती है, वहां 'सामवेद' का नाम आता है। इसके बाद ही 'भरतनाट्य-शास्त्र', 'संगीत-रत्नाकर', 'बृहद्-देशी', 'संगीत-मकरंद', 'नारदीय शिक्षा', 'संगीत-पारिजात', 'स्वर-मेलकलानिधि', 'संगीत-दर्पण', 'संगीत-समयसार' तथा आधुनिक काल में 'भातखंडे संगीत-शास्त्र', 'भरत का संगीत-सिद्धांत', 'संगीत-चिन्तामणि' इत्यादि अनेक संगीत-शास्त्रीय ग्रंथों की रचना हुई है। इन सभी ग्रंथों में कालानुसार अपने-अपने ढंग से संगीत के सिद्धांतों का विशद वर्णन पाया जाता है। विदेशियों और विधर्मियों द्वारा किये गये हमारे बहुत-से विशिष्ट उपयोगी ग्रंथों के विनाश के बावजूद भी संगीत का शास्त्र-भांडार इतना विशाल है कि उसके समुचित और सम्पूर्ण अध्ययन के लिए एक ज़िंदगी अपर्याप्त है।

शास्त्र के बाद जब क्रियात्मक यानी प्रैक्टीकल का प्रश्न आता है तो उसकी शिक्षा में सर्वप्रथम गुरु-शिष्य-परंपरा का नाम आता है। इसी परम्परा के अन्तर्गत घराने जन्मे हैं। घरानों के बाद संगीत-शिक्षण-संस्थानों का जन्म हुआ

है। संगीत के स्वरूप में परिस्थितिवश अथवा समयानुसार काफी परिवर्तन होते रहे हैं। फिर भी, आज के संगीत-संसार में गुरु-शिष्य-परम्परा से सीखे हुए कलाकारों का ही वर्चस्व है। संगीत के प्रचार-प्रसार के नाम पर संगीत के स्कूल-कॉलेजों की बाढ़ आयी हुई है, किन्तु इनमें शिक्षा-प्राप्त शायद ही कोई शीर्षस्थ कलाकार निकला हो। ठीक भी है, केवल पुस्तकों के सहारे अथवा स्कूलों में चालीस मिनट वाले एक-दो पीरियड (घंटे) पढ़कर कलाकार बनने का स्वप्न देखना मृग-मरीचिका-मात्र है। इसके लिए चाहिये घोर परिश्रम, कला के प्रति पूर्ण समर्पण और गुरु के प्रति अटूट श्रद्धा-भक्ति!

'संगीत' शब्द में तीन विधाएं समाहित हैं— गायन, वादन और नृत्य। ध्वनि और लय संगीत-कला के आधार-स्तंभ हैं। ध्वनि के वैसे तो अनेक रूप हैं— हो सकते हैं, किन्तु संगीत की भाषा में ध्वनि का मतलब है कंठ या किसी साज़ की आवाज़। यह आवाज़ यदि अनियंत्रित है, तो संगीतोपयोगी नहीं हो सकती। इसी प्रकार लय के भी कई अर्थ और रूप होते हैं, किन्तु संगीत के दायरे में, ध्वनि को नियंत्रित रखनेवाले समय का नाम 'लय' है। मोटे तौर पर इसके तीन भेद हैं— धीमी (विलंबित), मध्यम (मध्य) और तीव्र (द्रुत)।

ध्वनि (आवाज़) के अनेक स्रोत होते हैं। ध्वनि को साधारणतः कर्कश और मधुर, दो रूपों में विभाजित किया गया है। संगीत में ध्वनि का मधुर रूप ही प्रयोज्य है। इसी को 'स्वर' कहा गया है। इसी स्वर की ऊंचाई-नीचाई अथवा कमी-बेशी के आधार पर सप्त स्वर 'स, रे, ग, म, प, ध, नि, (षड्ज, ऋषभ, गांधार, मध्यम, पंचम, धैवत, निषाद) निर्धारित कर लिये गये हैं। इन स्वरों के समूह का नाम 'सप्तक' रख लिया है। इसी सप्तक के आधार पर संगीत का सम्पूर्ण कारोबार चलता है। स्वर-गुच्छों से ही विभिन्न राग-रागिनियों का निर्माण हुआ है।

लय को मर्यादित रखने के लिए ताल का निर्माण किया गया है। राग और ताल का पारस्परिक संबंध शरीर और प्राण का है। रागों की तरह तालों की संख्या भी सैकड़ों में है। परन्तु आजकल संगीतज्ञ प्रायः बीस-पच्चीस रागों को ही गाते—बजाते देखे गये हैं। इसी प्रकार दस-पंद्रह ताल भी हिर-फिर कर प्रयोग में आ रही हैं।

गायन की आजकल अनेक शैलियां प्रचार में हैं। अति प्राचीन काल में साम-गान प्रचलित था। उसके बाद जाति-गान प्रचार में आया। तत्पश्चात् प्रबंध और ध्रुवा-गान प्रचलित हुए। मुग़ल-काल में ध्रुवपद-धमार-गान का बोलबाला रहा। फिर ख़याल, ठुमरी,

दादरा, सादरा, भजन, गीत, ग़ज़ल-गायन अस्तित्व में आये। वर्तमान में फिल्म-संगीत सब पर हावी हो गया।

उपर्युक्त गायन-शैलियों के अलावा गायन की एक और भी शैली है, जिसे 'लोक-गीत' कहा जाता है। लोक-गीत हमारे देश में अति प्राचीन काल से प्रचार में हैं। हर प्रांत (क्षेत्र-विशेष) के अपने लोक-गीत होते हैं। इन्हें प्रायः त्योहारों, मांगलिक अवसरों – विवाह, जन्मोत्सवादि - पर लोग सामूहिक अथवा एकल रूप में गाते हैं।

गायन के बाद संगीत की दूसरी विधा आती है, जिसे 'वादन' कहते हैं। वादन किसी वाद्य (साज़) पर ही होता है। वाद्य वैसे तो अनेक प्रकार के हैं, किंतु इन्हें प्रमुख चार वर्गों में बांट दिया गया है। ये वर्ग हैं- तत, सुषिर, अवनद्ध और घन।

तत वाद्यों को दो श्रेणियों में विभाजित किया गया है – तत और वितत। तत वाद्यों की परिधि में वीणा, सरोद, सितार, तंबूरा, इकतारा, संतूर आदि वाद्य आते हैं। इन्हें मिज़राब या अंगुली से बजाया जाता है। वितत वाद्यों में सारंगी, वायलिन, इसराज आदि आते हैं। इन्हें गज से बजाया जाता है। सुषिर वाद्यों में फूंक से बजनेवाले साज़ आते हैं। जैसे बांसुरी, शहनाई, अलगोज़ा, तुरही (तूर्य) आदि। अवनद्ध वाद्यों में चमड़े से मढ़े हुए वाद्य आते हैं– डमरू, नगाड़ा, मृदंग, तबला, ढोलक, ढोल, चंग, डफ आदि। घन वाद्यों में - जलतरंग, काष्ठतरंग, मंजीरा, झांझ, करताल इत्यादि ऐसे वाद्य आते हैं, जो आघात (चोट) द्वारा बजते हैं।

संगीत की तीसरी विधा है नृत्य। नृत्य का श्रीगणेश (भारतीय संस्कृति धर्मप्रधान होने के कारण) भगवान शिव से माना जाता है। नृत्य के दो प्रधान स्वरूप 'तांडव' और 'लास्य' क्रमशः भगवान क्रमशः भगवान् शिव और पार्वती से उद्भूत हैं। इन्हीं के अन्तर्गत भारत में प्रचलित सभी नृत्य-शैलियां आती हैं।

आजकल भारत में प्रमुख चार नृत्य-शैलियां प्रचलित हैं। भरतनाट्यम्, कथक, मणिपुरी और कथकलि। इनमें से भरतनाट्यम् तथा कथकलि दक्षिण भारत में और कथक तथा मणिपुरी उत्तर-भारत में प्रचलित हैं। इन सभी नृत्यशैलियों का अपना-अपना शास्त्र-विधान है, इसीलिए इन्हें 'शास्त्रीय नृत्य' संज्ञा दी जाती है।

शास्त्रीय नृत्यों के अलावा भारत के हर प्रांत में लोक - नृत्यों की स्वच्छंद धाराएं लहराती हैं। इनकी संख्या कई सौ हो सकती है। कुछ प्रख्यात लोक-नृत्यों के नाम हैं– गुजरात का गरबा, असम का लाईहरोबा, पंजाब का भंगड़ा, राजस्थान का घूमर, हिमाचल-प्रदेश का बंजारा, महाराष्ट्र का दिंडी, ब्रज-प्रदेश के मंडल-रासक तथा रास-

लीला, बंगाल का कीर्तन-नृत्य, उड़ीसा का छाऊ-नृत्य तथा आंध्र-प्रदेश का कुचिपुड़ी।

संगीत की उपर्युक्त तीन विधाओं के अलावा एक विधा और है, जिसे 'नृत्य-नाटिका' कहा जाता है। वैसे तो यह विधा नृत्य के क्षेत्र में ही आ जाती है, लेकिन नाटक का संयोग होने के कारण इसे संगीत की एक अतिरिक्त विधा के रूप में स्वीकार कर लिया गया है। विदेशी संगीत में जो स्थान 'बैले' का है, वही स्थान भारतीय संगीत में 'नृत्य-नाटिका' का है।

संगीत के प्राचीन शास्त्रों पर नज़र डालने से इस बात की पुष्टि होती है कि संगीत-कला प्रारंभ में भगवत्-प्राप्ति के साधन-रूप में ही प्रयुक्त होती थी। मध्य-काल में भी भक्ति-संगीत के रूप में इसका बोलबाला रहा। सूर, मीरा, कबीर, तुलसी, हरिदास, रैदास आदि अनेक भक्त कवियों ने संगीत के माध्यम से ही प्रभु-आराधना की। उस समय भारत पर यवनों का शासन था। ये लोग शीत-युद्ध की तरह शनैः शनैः भारतीय संस्कृति और धर्म को समाप्त करने में लगे थे। यदि उस समय उपर्युक्त भक्त गायक न होते तो निस्संदेह हम भारतीय अपने धर्म और संस्कृति से सर्वथा वंचित हो जाते।

सच बात तो यह है कि उस आपत्ति-काल में संगीत ही हमारे काम आया। परंतु समय तो परिवर्तनशील है। मुग़ल-शासकों की दो-तीन पीढ़ियां बीत जाने के बाद ही संगीत को मनोरंजन और वासनापूर्ति का माध्यम बनना पड़ा। संगीत-कला का आध्यात्मिक स्वरूप भौतिक हो गया। संगीत शाही दरबारों और वेश्याओं की हवेलियों में कैद हो गया। समाज ने भी इसका बहिष्कार कर दिया। इन परिस्थितियों में संगीत-कला जनता-जनार्दन से एकदम अलग-थलग पड़ गयी।

कुछ समय बाद भारतीय संगीत के पुनः दिन बदले। विष्णुद्वय (पं. विष्णुनारायण भातखंडे और पं. विष्णु-दिगम्बर पलुस्कर) का भारतभूमि पर अवतरण हुआ। इन्होंने घोर परिश्रम करके संगीत-कला का पुनरुद्धार किया। संगीत को कारामुक्त करके उसे जनता के बीच में लाये और उसकी खोयी हुई प्रतिष्ठा पुनः स्थापित की। आजकल हमारे देश में जिसे हिन्दुस्तानी संगीत कहा जाता है, वह इन्हीं विभूतिद्वय के सत्प्रयासों का प्रतिफल है।

— 'शाकुन्तलम्' ६४७ गंगाधर गली, मुरसान द्वार, हाथरस, उ.प्र.

प्रेमतपस्वी : ईसुरी

□ अम्बिकाप्रसाद दिव्य

श्री अम्बिका प्रसाद दिव्य
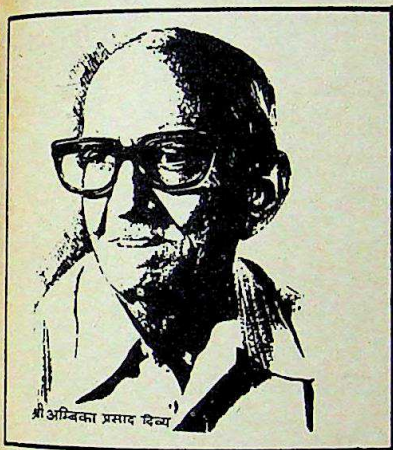
अध्याय - २८

अपनी बोझिल गाड़ी खींचता हुआ थके हुए बैलों-सा समय आगे बढ़ गया। कानूनगो भी जैसे उसी गाड़ी में बैठे हों, धीरे-धीरे अपने जीवन के पथ पर बढ़ चले। जब उन्हें कुछ चैन का अनुभव-सा हो चला था। सामने कोई समस्या नहीं दिखती थी। रजऊ घर आ गयी थी। बब्बू में और उसमें अब उतनी अनबन नहीं दिखती थी जितनी पहले थी। देवकी भी प्रसन्न थी।

परन्तु घटना क्रम को जीवित रखने के लिए अज्ञात दिशा से भी कोई न कोई प्रेरणा आ जाती है। एक दिन प्रभात काल में ही जब वे अपनी चौपाल में आकर बैठे, बड़े गांव के ठाकुर पहाड़सिंह उन्हें आते हुए दिखायी दिये। ज्यों ही वे समीप आये, कानूनगो उठ खड़े हुए और विनम्रता पूर्वक बोले, 'आज सवारी कहां को निकल पड़ी?'

पहाड़सिंह ठिठकते हुए बोले, 'आया तो आपके पास ही हूं, जान पड़ता है, आप बुलाना-बैठालना नहीं चाहते। कानूनगो ठहरे। हो सकता है, मेरा आना आपके कानून के कुछ खिलाफ पड़ता हो।'

'कैसी मर्जी होने लगती है?' कानूनगो ने आंखों में अहसान-सा भरते हुए कहा, 'आइये न! सबेरे-सबेरे मेरा कुछ भला होना होगा, तभी आपके दर्शन हुए। मैं तो अपना यह गौरव समझता हूं कि आप जैसे लोग मेरे गरीबखाने पर पधारें।'

ठाकुर साहब चौपाल में आये और पड़े हुए तखत पर बैठ गये। नौकर साथ था। उसे पांच रुपया देते हुए बोले, 'जा रे बाजार से बच्चों के लिए मीठा लाकर दे।'

नौकर रुंपया लेकर चला गया। उसके जाते ही पहाड़सिंह इधर-उधर देखते हुए बोले, 'कानूनगो साहब! एक काम से आया हूं। आजकल ठाकुर जंगजीत बहुत सिर उठाये हुए हैं। जिस जंगल में मेरा सदामत से निस्तार होता

आया है, उसमें निस्तार नहीं करने देते। कहते हैं जंगल मेरी सरहद में है। नौकरों को उनके आदमी मार भगाते हैं। कहिये क्या उपाय किया जाय? आप से सलाह लेने आया हूं।'

'क्या कहूं,' कानूनगो कुछ मजबूरी-सी जाहिर करते हुए बोले, 'मेरा भी उन पर कुछ चारा नहीं चल पा रहा है। मेरे भी वे पीछे पड़े हैं। मेरे उनके बीच बहुत दिनों से अनबन चल रही है। उनका कुछ अजब-सा रवैया हो रहा है। चौबीस घंटे कोठी पर नगड़िया ठनकती है। दूसरों की बहू-बेटियों पर कीचड़ उछाला जाता है। उन पर गंदी-गंदी फागें गायी जाती हैं। एक लड़के को नौकर रक्खा है। उसको अपना कारिन्दा बनाया है। वह केवल फागें गाया करता है। भाई उनका राज्य है। हम छोटे आदमी उनका क्या बिगाड़ सकते हैं? लोहे से टक्कर लोहा ही ले सकता है। आपसे उलझे हैं तो मुंह की खायेंगे। बड़े घर वायना दिया है। मैं तो कहता हूं अच्छा हुआ जो वे आपसे उलझे।'

पहाड़सिंह की यह बात सुनते ही, ठकुरायसी पौरुष जाग उठा। मूंछ पर हाथ फेरते हुए बोले, 'कानूनगो भैया! मैं उनके दांत खट्टे कर दूंगा। उनके द्वार पर जो नगड़िया ठनकती है, उसे बन्द करा दूंगा। मुझे पता है जिसे उन्होंने नौकर रक्खा है, ईसुरी उसका नाम है। वह आपकी बहू पर गंदी-गंदी फागें बनाता है। मेरे नौकर को उसकी कई फागें याद हैं। जंगजीत को ऐसे गुंडे को

आश्चर्य नहीं होना चाहिये था। भुनी घास है। मद की बौखलाहट है।'

'ठीक है,' कानूनगो पराजय का श्वास लेते हुए बोले, 'बनवाने दीजिये उन्हें फागें। पर मुझे तो इसी बात की बडी खुशी है कि वे आपसे टकरा गये। इस टकराव में चूर-चूर हुए बिना न रहेंगे। आपके सामने हैं क्या चीज वे। आप चाहें तो उनकी गर्दन पकड़ कर मरोड़ दें।'

'मरोड़ूंगा,' पहाड़सिंह ताव से बोले, 'समय आने दीजिये। यह बताइये जंगल के निस्तार के लिए क्या करूं?'

'सीधा-सा उपाय है,' कानूनगो ने धीरे-से कुछ भय का अहसास करते हुए-सा कहा, 'जो तूदा बना है उसे साफ करा दीजिये। उसका नाम निशान न रह जावे। फिर सारे नक्शे तो मेरे हाथ में हैं। जंगल पर अपना कब्जा कर लीजिये। उनके मवेशी चरने को आवें उन्हें कानीहौद दिखाइये। बस! आपको इतना ही करना है।'

'बस! बस!' पहाड़सिंह कुछ आन्तरिक उल्लास से बोले, 'मैं इतनी ही तो सलाह चाहता था। कागजी नक्शे ही मजबूर किये थे। आपका बल मिल गया। अब तो जीत मेरी है।' ऐसा कहते हुए उन्होंने पचास रुपया निकाले और कानूनगो की जेब में डाल दिये।

कानूनगो जाहिरा एतराज करते हुए बोले, 'सरकार! यह किसलिये? घर के काम के लिए भी मैं बेगार और मजदूरी लेने लगूं? आप कहें तो, आपकी कौन-सी सेवा नहीं कर सकता। कभी किसी काम को इंकार भी किया है क्या? आप मेरे मालिक हैं। आपका मुझे बहुत सहारा है। गाढ़े सांकरे में आप ही काम आने वाले हैं। एक यहां के जंगजीत हैं जिनसे कभी किसी को रोटी की जली पपटी भी नहीं मिलती। आज तक उनकी कोठी पर कभी एक बीरा पान भी नहीं खाया। कितने ही काम कराये पर सब कोरे-कोरे। मैं यहां रहता हूं, इसलिये अपना मेरे ऊपर कुछ अधिकार समझते हैं। क्या करूं-दबा बनिया देय उधार।'

पहाड़सिंह अपनी परोक्ष प्रशंसा से और फूलते हुए बोले, 'कानूनगो, रुपया को मैं हाथ का मैल समझता हूं। खुद खाओ, दूसरों को खिलाओ, मेरा सिद्धान्त है। हम ठाकुर हैं, बनिया नहीं। हमारी तलवार में लक्ष्मी बास करती है। ये भुजायें मजबूत हैं तो ये मूंछें चढ़ी हैं। अभी तो यह पचास रुपया यों ही डाले लाया था। इसे आप अपने पान-तमाखू के लिए ही समझिये।'

इतने में वह नौकर मिठायी लेकर आ गया। कानूनगो ने बब्बू को आवाज लगायी। बब्बू आया नहीं कि वे बोले – 'बेटे! कक्का जू के चरण स्पर्श करो। कक्का जू अपने मालिक हैं और लो यह मिठायी भीतर रख आओ। कक्का जू

तुम्हारे लिए आये हैं । कक्काजू के लिए पान लगवा लाओ ।'

बब्बू ने पहाड़सिंह के पैर छुए, मिठायी ली और भीतर चला गया। मिठायी भीतर पहुंचते ही देवकी और रजऊ भी कक्का जू को देखने के अभिप्राय से द्वार पर किबाड़ों की ओट में आकर खड़ी हो गयीं। वब्बू भी द्वार पर आकर बैठ गया।

पहाड़सिंह ने विषय बदला। नौकर की ओर देखते हुए बोले, 'सुना तो रे – ईसुरी की कोई फाग। तुझे बहुत आती हैं।'

कानूनगो नहीं सुनना चाहते थे। बब्बू भी चौपाल में बैठा था, जानते थे कि रजऊ और देवकी भी पीछे छिपी खड़ी होंगी। संकट-सा टालने के अभिप्राय से बोल, 'रहने दीजिये। क्या सुनना है उस गुंडे की फागें। फाग नहीं गाता सुनने वालों के हृदय में आग लगाता है। वह एक दलियां था, वह बना-बनाकर दिया करता था। यह गाता था। दलियां जेल चला गया। यह भी कभी न कभी जायेगा। यह समाज की मर्यादा का, लोकोपचार का उल्लंघन है।

सही है!' पहाड़सिंह सहज भाव से बोले, 'तब भी सुनिये तो एक दो फागें। मुझे तो ऐसा लगता है कि फागें ईसुरी ही बनाता है। गा रे! सुना एक दो!'

कानूनगो को ऐसा लगा जैसे मुंह पर कोई तमाचा मार रहा हो। पर कुछ न कह सके। नौकर ने फाग उठायी –

चलती बैर नजर भर हेरो –
दिल भर जावे मेरो,
मिल जावें आंखन सौ आंखें –
घूंघट तनक उघेरौ,
टप-टप अंसुवा गिरैं नयन सौ –
चितै चितै मुख तेरौ,
ईसुर, रजऊ विदा की बेरा –
होत विधाता डेरौ ।

'और सुना एक-दो –' पहाड़सिंह ने कहा।

मोरी आशा रही विदा लो –
लिवा गयो घरवालो,
घूंघट में हो प्यारी झांके –
खड़े रहे डोला लौ,
लपटत झपटत भगत गये हम –
फटत गओ झोला लौ,
ईसुर हम रजुआ के लाने –
दौड़े कोस सवा लौ।

कानूनगो विष का घूंट पीते हुए बोले, 'आप ही देखिये सरकार क्या यह भलमनसाहत है या शराफत। खुल्लमखुल्ला इस तरह दूसरे की बहू-बेटी को बहकाना, बदनाम करना। जान पड़ता है, यह ईसुरी ही बदमाश है। दलीं बेचारा बेकार ही फंस गया है! ये फागें निश्चय ही ईसुरी की बनायी हैं। अब तो उसे बड़े का सहारा मिल गया है, अब और जहर उगलेगा। सरकार! अब आपके हाथ में इज्जत

है।' ऐसा कहते हुए कानूनगो की आंखों में आंसू आ गये।

पहाड़सिंह फिर अपने बड़प्पन का अहसास करते हुए बोले, 'कानूनगो साहब, आप धीरज रखिये। सब ठीक हो जावेगा। यह चीज किसी को अच्छी नहीं लगती। हमारी बहू-बेटी पर कोई इस तरह का कीचड़ उछालता तो कभी का उसका सिर काट लेते। पर आप लोग तो कलम चलाना जानते हैं तलवार चलाना नहीं। खैर अब चलता हूं।' ऐसा कहते हुए ठाकुर साहब उठ खड़े हुए। उसी समय गोपाल पंडित द्वार से निकले। वे कुछ व्यंगपूर्वक आशीर्वाद देते हुए चले गये।

कानूनगो फिर बोले – 'सरकार! ये ठाकुर जंगजीत के जासूस हैं। सारे गांव में चक्कर काटते रहते हैं। यहां की वहां, वहां की यहां करना ही इनका काम है। चलते-फिरते समाचार-पत्र हैं।'

ऐसी बात करते हुए कानूनगो पहाड़सिंह को कुछ दूर भेजने को चले गये। लौट कर आये तो देखते क्या हैं कि रजऊ जोर-जोर से रो रही है। उसका रोना सुनते ही, उन्हें जो रुपया और मिठायी मिलने से थोड़ी खुशी हुई थी, वह नौ दो ग्यारह हो गयी। मुंह लटकाये हुए बोले, 'यह क्या होने लगा? बहू क्यों रोने लगी? बहू को किसने क्या कह दिया? क्यों, बब्बू, तुमने कुछ कहा क्या?'

देवकी बीच में ही बोल पड़ी, 'किसी ने कुछ नहीं कहा, पर ऐसी फागें जिस पर लिखी जावेंगी, उसे क्या अच्छा लगेगा। ठाकुर साहब कह गये न कि आप लोग लेखनी चलाना ही जानते हैं, तलवार चलाना नहीं। किसी ठाकुर की लड़की पर अभागे ने ऐसी फागें बनायी होतीं तो कभी का इस दुनिया से कूच कर गया होता। न रहता बांस न बजती बांसुरी।'

बब्बू ने ताना कसा – 'सब मिली भगत है,' और उठ कर चला गया।

कानूनगो उसके अभिप्राय को समझ गये। उन्होंने जितनी आग बुझायी थी, वह फिर भभक उठी। फिर जल छोड़ते हुए से बोले, 'कलम में कुछ बल न होता तो ये तलवार के धनी ठाकुर साहब मेरे द्वार पर न आते, न मिठायी लाते न रुपया दे जाते! कलम की मार बड़ी गहरी होती है। कुछ दिन ठहर जाओ। बहू को समझाओ। रोने-गाने का क्या काम? उसका क्या दोष? कोई गुंडा कुछ भी बकता रहे। लाओ मिठायी खायी जावे। सब बैठ कर मिठायी खाने लगे।

* * *

अध्याय – २९

जहां जिसका कुछ भविष्य होता है, उसे वहां स्थान मिल जाता है।

ईसुरी को नौकरी भी मिल गयी और रहने को एक कमरा भी। वह ठाकुर जंगजीत सिंह के घर का एक सदस्य-सा ही बन गया। उनका सारा कामकाज सम्हालने लगा और सदैव ठाकुर साहब के हुक्म पर हाजिर रहता। इसलिये ठाकुर साहब भी उसे बहुत चाहने लगे थे। उसे ठाकुर साहब के रसोईघर से ही दोनों वक्त भोजन मिलता और इसलिये अपना चुल्हा भी न फूंकना पड़ता। आनन्द से मनमाना खाता-पिता और आनंद से रहता। ठाकुर साहब भी जब कभी भी फुरसत से बैठे होते उसे बुला लेते और उससे फागें सुनने लगते।

एक दिन ठाकुर साहब शिकार से लौटकर सन्ध्या होने के पूर्व भी घर आ गये। शिकार अच्छा मिला था। एक तेंदुआ को मारकर लाये थे। मन में प्रसन्नता थी। दिन भर में अपनी ड्यूटी-सी करके लौटे थे और कोई काम सामने नहीं था। कमरे में बैठ गये। ईसुरी को बुलाया और बोले, 'सुना ईसुरी, कुछ अच्छी फागें। नगड़िया उठा। मैं बजाऊंगा। नगड़िया की आवाज सुनते ही कितने ही सुनने वाले और आ गये। ईसुरी ने फिर अपनी इष्ट देवी की आराधना की और गाना शुरू किया –

सब कोउ रजऊ को देखन दौरे –
रजऊ न देखत औरे,
रजऊ को मनुआ धन कौ वारो –
रहत एक ही ठौरे,
मानुस की केतान बात है –
देवतन कौ मन बोरे,
तुम्हें सनेही ऐसें चाहत –
ज्यों चाहत शिव गौरे,
हाल दिनन में ईसौं ईसुर –
बसती बसत बगौरे।

'वाह! वाह!' ठाकुर साहब प्रसन्नता बिखेरते हुए बोले, 'तुझे अवश्य कोई सिद्धि है! क्या चित्र खींचता है। रजऊ न देखत औरे। लड़कियों के स्वभाव की बात है। किसी की ओर नजर नहीं उठातीं। सीधी अपने रास्ते चली जायेंगी। दायें-बायें नजर न दौड़ायेंगी। देखेंगी तो तिरछी नजर से, जैसे कोई चीज चुरा रही हों। बसती बसत बगौरे – क्या मजे की तुक आयी। बगौरा को भी फाग के रंग से रंग दिया। और होने दे।'

ईसुरी ने फिर अपनी वही मुद्रा बनायी और गाना शुरू किया –

नीकौ नहीं रजऊ मन लगवौ –
एइतें करत हटकबौ,
मन लागे लग जात जनम कौ –
रोमइ रोम कसकबो,
सुनतीं तुम्हें सहो न जैहे –
सब सब रातन जगबौ,
कछू दिनन में होत कछू मन –
लगन लगत लै भगवो,
ईसुर यह आसान नहीं है –
प्राण पराये हरबौ।
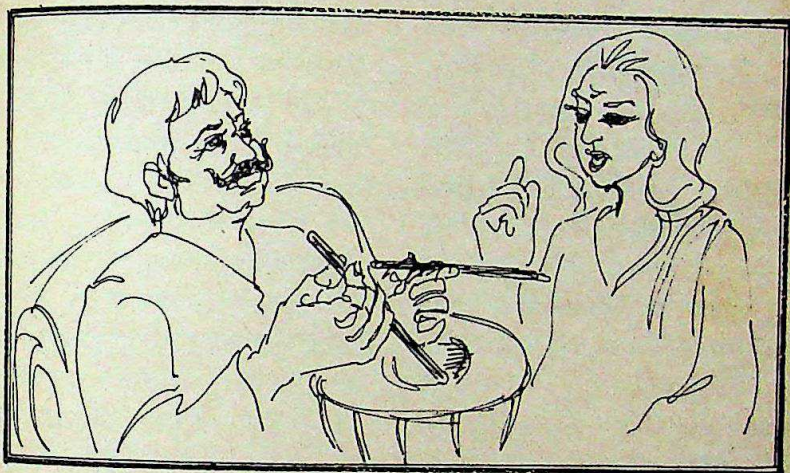
'सही है, सही है,' ठाकुर साहब भाव विभोर से होकर बोले, 'मन लगना अच्छा नहीं। मन का लगना गोली लगने से भी अधिक बेचैन करता है। रोम-रोम में पीड़ा होती है। सारी-सारी रात नींद नहीं आती। दूसरे के प्राण लेने के लिए अपने प्राण पहले दाँव पर लगा देने पड़ते है। और सुना –

ईसुरी ने फिर स्वर साधा, ध्यान-सा किया और फाग उठायी–

नेहा कौन धरम निभाये –
गुनागार हो आये,
मां की कूंखन मानुस कौ तन –
इनई के लिववाये,
अपनी आंख यार खां देखत –
दरद न जात छिपाये,
हड्डी गार उगा दई उनकें –
स्वारथ पीस लगाये,
रजऊ हाथ ऊ जनम ईसुरी –
हम करिया तिल खाये ।

'वाह! वाह!' ठाकुर साहब आसन से उछलते हुए बोले, 'हम करिया तिल खाये। कमाल! कमाल! क्या गजब की तुक आयी। तूने तो अपने नहीं मेरे मन का चित्र खींच कर रख दिया। जवानी में सभी की कोई न कोई रजऊ होती है। पर इसमें कोई बुरा क्यों माने। मन है जिसका जिससे लग जावे। प्रेम किसी बन्धन से तो बंधा नहीं। वह पूर्व जन्म के संस्कार से ही होता है। वे मूर्ख हैं जो उसके रास्ते के रोड़ा बनें।'

इसी समय गोपाल पंडित भी आ गये। ठाकुर साहब को आशीर्वाद देते हुए ईसुरी की ही बगल में बैठ गये।

ठाकुर साहब बोले, 'पंडित! फागें सुन रहा था। तुम्हारी भी कोई रजऊ हैं? बनायी है तुमने कभी उस पर फागें?'

पंडितजी मुस्कराते हुए बोले, 'महाराज! रजऊ की फागें तो मैं सुन ही नहीं सका। आज आने में मुझे कुछ देर हो गयी या आप ही आज कुछ जल्दी कमरे में विराज गये। फागें सुनी होतीं तो बताता कि मेरी भी कोई रजऊ रही है या नहीं?'

ठाकुर साहब फिर भी मुस्कराते हुए बोले, 'अच्छी जुगत से भाग निकले। बैठिये अभी सुनेंगे आप फागें, फिर बतलाना पड़ेगा।'

इसी समय एक मोटा-ताजा आदमी कमरे के द्वार पर आकर खड़ा हो गया। उसे देखते ही ठाकुर साहब बोले, 'क्यों मस्तराम कैसे आये। सब खैरियत है न?'

'कहां खैरियत है सरकार? मस्तराम कुछ हांफता-कांपता-सा बोला, 'बड़ेगांव के ठाकुर पहाड़सिंह ने आपके सारे मवेशी कानीहौद में बन्द करा दिये हैं। चरवाहों की काफी मारपीट की है। वह तूदा भी वहां नहीं दिखता जो बगौरा और बड़ेगांव की सीमा पर बना हुआ था। उसका नाम-निशान भी कहीं नहीं जैसे कभी रहा भी न हो। वे सारे जंगल को अपना बतलाते है। कहते हैं कि अब हमारे जंगल में निस्तार को आये तो सब को नहीं ढेर कर देंगे। मालिक आप तक को बुरी-बुरी गालियां बकते हैं। मेरे तो एक ही लाठी लग पायी है। मैं घर भागा नहीं तो मेरा तो कचूमर ही निकाल लेते। सब बक रहे थे— पकड़ो साले मस्तराम को, पचकादो इसकी तौंद। यही खैरियत है, सरकार!'

यह सुनते ही ठाकुर जंगजीत का खून खौल उठा। ऐसे भभक उठे जैसे कोई ज्वालामुखी फूट पड़े। आंखें लाल-पीली करते हुए बोले, 'साले तुम भाग कर क्यों आये? क्या खाना नहीं खाते? क्या तुम्हारे हाथ में लाठी नहीं थी? उनके सारे आदमियों को ढेर न कर देते!' ऐसा कहते हुए ठाकुर साहब उठे और मस्तराम को जमीन पर पटक कर मार लगाते हुए फिर बोले, 'साले हरामखोर! भगैला! प्राण लेकर भागा। तेरी लाश आती तो मुझे खुशी होती।'

ठाकुर साहब अपने क्रोध को थोड़ा-सा निकाल कर फिर अपनी जगह पर बैठ गये। पंडितजी को मस्तराम पर कुछ तरस आया। पर ठाकुर का हाथ कैसे पकड़ते। उनके शान्त होकर बैठ जाने पर बोले, 'महाराज! मस्तराम की मरम्मत तो ठीक हुई। पर इस घटना के पीछे कोई और रहस्य है। एक दिन मैंने ठाकुर पहाड़सिंह को कानूनगो के घर चौपाल में बैठा देखा था। मुझे तो कुछ ऐसा समझ में आता है कि इस घटना की योजना उसी समय बनी थी।'

'बनी होगी,' ठाकुर साहब हुक्के का कस खींचते हुए बोले, 'कानूनगो मुझसे उलझ रहा है। तालाब में रहकर मगर से बैर नहीं करना होता। मेरी तलवार के सामने उसकी कानूनगोई जमीन में लोटती दिखेगी। बड़े घर बायना दे रहा है। बाद में पछतायेगा।'

'महराज!' पंडितजी कुछ सोचते हुए बोले,' उन्हें किसी दिन बुला लिया जावे और सब समझा दिया जावे। वैसे तो आपका कहना सही है, तलवार के सामने तलवार ही ठहर सकती है। इसीलिये उन्होंने तलवार से तलवार लड़वायी है। कानूनगो भी तो आखिर कच्चे पौबारा नहीं खेलते। उनके हाथ में सारे सरहद्दी कागजात हैं। नक्शे हैं। केस आगे बढ़ा तो तलवारों के बल पर जीत न होगी, नक्शों के और कागजों के बल पर ही जीत होगी। फिर जैसा महराज समझें। मैं तो पंडित हूं। पोथी-पत्रा मैं समझता हूं। वह तो आपकी डेवड़ी पर आते-आते कुछ राजनीति के दावपेंच भी समझने लगा हूं।'

'आप ठीक कहते हैं, पंडित!' ठाकुर साहब कुछ ठंडे पड़ते हुए बोले— 'आजकल कलम और कागज का ही राज्य है। सारा राजकाज कलम और कागज से ही चलता है। पुराना जमाना होता तो मैं फौरन ही बड़ेगांव के ठकरा से लोहा लेने पहुंच जाता। ईंट का जवाब पत्थर से देता। खामुखां अन्याय! मेरे जंगल पर कब्जा। चोरी और सीना जोरी। बड़ा आया ठाकुर।'

मस्तराम सिसकता हुआ बोला, 'सरकार तो मवेशियों का क्या हो? उन्हें कैसे छुड़ाया जावे? वे कानीहौद में भूखे-प्यासे मर न जावेंगे। मुझे कुछ आदमी दीजिये। मैं लाठी के बल से अपने मवेशी छुड़ा लाऊं और कल मवेशी कहां ले जाना होंगे, सो भी बता दिया जावे। ठाकुर पहाड़सिंह से टक्कर लेना है तो कुछ हथियारबन्द आदमी दिये जावें या मालिक आपका चलना हो। मस्तराम तो पस्तराम है। वहां भी मार खायी, यहां भी मार खायी।'

'बोलो, पंडितजी।' ठाकुर साहब किंकर्तव्यविमूढ़ से होकर बोले— 'क्या किया जावे कुछ समझ में नहीं आता। मवेशियों को छुड़ाना तो जरूरी है। और काम आगे-पीछे देखा जावेगा।'

'तो सरकार।' पंडितजी नेक सलाह के पिटारा से बनते हुए बोले— 'बाद में फिर देखियेगा अभी रुपया दे दीजिये। कानीहौद में रुपया ही तो लगेगा। टकराव लोहे का लोहे से है। चिनगारियां फैलेंगी। गर्जनायें आकाश में गूंजेंगी। सहज में नहीं सुलझेगा यह झगड़ा। बड़े गांव के ठाकुर साहब को बड़े गुरू का दिया हुआ मंत्र है।'

'ठीक कहते हैं आप,' ठाकुर साहब कुछ शान्त पड़ते हुए बोले, 'अच्छा

ईसुरी! तू रुपया ले जा। मस्तराम के साथ चला जा। कानीहौद से मवेशी छुड़वा दे। जितना रुपया दे, उसकी रसीद बनवा लेना। रसीद आगे काम आयेगी।'

'कल मवेशी चराये जावेंगे, सरकार! मस्तराम ने फिर खड़े होकर पूछा।

ठाकुर साहब फिर कुछ सोचते हुए से बोले, 'कल से मवेशियों को जंगल मत ले जाना। थान पर ही खिलाना, जब तक यह झगड़ा न हो जावे। इसमें बहुत देर लगेगी। साधारण झगड़ा नहीं है।'

ईसुरी मस्तराम को लेकर कानीहौद से मवेशी छुड़ाने को चला गया। यहां पंडितजी फिर अवांछित सुश्रूषा करते हुए बोले, 'महराज! उस दिन तो बड़ेगांव के ठाकुर साहब ने कानूनगो के सारे घर को मिठायी छकवायी और जेब में भी कुछ डाल गये। कानूनगो अक्सर कहा करते हैं कि ठाकुर जंगजीत की कोठी से तो कभी एक पान भी खाने को नहीं मिलता। बिना घी चुपड़ी रोटी कभी कंठ के नीचे उतरती है क्या? मैं बगौरा में रहता हूं सो मेरे ऊपर अपना कुछ अधिकार समझते हैं। बहुत होगा मैं बगौरा छोड़कर चला जाऊंगा, तब क्या कर लेंगे।'

'यह तो मैं मानता हूं,' ठाकुर साहब ने व्यंग्यपूर्वक कहा, 'न कभी कुछ उस कानूनगो को यहां से मिला है न आपको। पर मैं तो [illegible]-घूंस से काम नहीं कराता, घूंसा-लात से कराता हूं। पर यदि आप कहेंगे तो अब कुछ उसकी जेब में भी डाल दूंगा और कुछ आप की जेब में भी।'

पंडितजी इस आक्षेप से कुछ घबराये हुए से बोले, 'सरकार, मुझे कुछ न चाहिये। ऐसी मरजी न हो। मुझे यहां से बहुत मिलता है। आपही का तो खाता हूं। हां, उन कानूनगो साहब को ही आप कुछ देना चाहें तो दे दें। तब भी मैं समझता हूं कि बड़ागांव के ठाकुर साहब उन्हें खरीद ही चुके हैं, अच्छी कीमत देकर।'

यह सुनते ही ठाकुर साहब का फिर क्रोध भभक उठा। क्रोध से बोले—'आप मेरे सामने बार-बार ठाकुर साहब, ठाकुर साहब क्यों कहते हो। मेरी बेइज्जती करते हैं। वह मेरे सामने साहब हो सकता है? उसे ठकरा क्यों नहीं कहते। आप भी उससे मिले हुए जान पड़ते हैं।'

यह सुनते ही पंडितजी बहुत सकपकाये। मस्तराम की दशा देख चुके थे। समझ गये बहुत चापलूसी अच्छी नहीं। चुपचाप उठे और आशीर्वाद देते हुए चले गये।

उनके जाते ही ठाकुर साहब बोले, 'साला मुझे बनाता है।'

* * *

अध्याय - २०

किसी बड़े की नौकरी से भी नौकर को कुछ बड़प्पन मिल जाता है। ईसुरी अब ठाकुर जंगजीत सिंह का कारिन्दा था। उसमें भी कुछ बड़प्पन आ गया था। अपने को कुछ समझने लगा था। उसकी हीन भावना कुछ कम हो गयी थी और उसका साहस कुछ बढ़ गया था। उसे बात करने का ढंग भी कुछ आ गया था।

आखिर एक दिन प्रभात में ही उसे कानूनगो को बुला लाने का आदेश मिला। ठाकुर साहब का आदेश था। उसे कैसे टालता। जानता था कि उनके घर जाने में खतरा है। बब्बू से सामना हो गया तो अवश्य ही कुछ बाद-विवाद उठ खड़ा होगा। मारपीट भी हो जाये तो आश्चर्य नहीं। यह भी संभावना थी कि रजऊ की भी एक झलक देखने को मिल जाये। पुरानी याद फिर हरी हो जाये।

ऐसे कितने ही तर्क-वितर्क मन में करता हुआ, वह कानूनगो के घर पहुंचा। दैवयोग से उसकी दृष्टि रजऊ पर पड़ ही गयी। वह सहज ही क्षण एक को द्वार पर आकर खड़ी हो गयी थी। उसे देखते ही ईसुरी के शरीर में बिजली-सी दौड़ गयी। साहस समेटता हुआ बोला— 'कानूनगो साहब कहां हैं ?'

कोई उत्तर नहीं। रजऊ आंख खुलते ही एक स्वप्न के समान ओझल हो गयी। ईसुरी ने कुछ देर प्रतीक्षा करके द्वार खटखटाया। बब्बू बाहर निकला। ईसुरी को द्वार पर देखते ही उसे एक बड़ा आश्चर्य-सा हुआ। यह कैसे आया, क्यों आया ? कुछ अवश्य दाल में काला है। ईसुरी की ओर देखता हुआ बोला— 'किसे चाहिये, रजऊ को ?'

'नहीं,' ईसुरी सहमा हुआ-सा बोला, 'कानूनगो साहब से बात करना है, उन्हें ठाकुर जंगजीत साहब ने बुलाया है।'

'अच्छा ठहरो।' बब्बू बोला, 'कानूनगो साहब को अभी बुलाये देता हूं। गोपाल पंडित के घर तक गये हैं।' ऐसा कहता हुआ बब्बू भागा और अपने कुछ साथियों को लेकर आ गया।

ईसुरी बब्बू की शरारत को समझ गया। उसने चाहा कि भाग जाये। परन्तु एक लड़के ने उसका हाथ पकड़ लिया और बोला, 'बेटा ईसुरी! जाते कहां हो! एक-दो फागें सुनाओ। तब तक कानूनगो साहब आते हैं।' ऐसा कहते हुए लड़कों ने उसे पकड़ कर बैठाल लिया। बब्बू ने सिर पर एक तमाचा कसा और चिल्ला कर बोला, 'सुना फाग, नहीं तो अभी तुम्हारा कचूमर निकाल लेंगे।'

'हां। हां।' ईसुरी साहस से बोला, 'सुनो फाग, अभी सुनाता हूं, तुम मेरा कचूमर निकालोगे, ठाकुर जंगजीत सिंह तुम्हारा कचूमर निकाल लेंगे। मैं अब

उनका आदमी हूं। लल्लू [illegible] नहीं।' ऐसा कहते हुए उसने अपनी ध्यान मुद्रा बनायी और फाग शुरू की :

देखो रजऊ खां पटियां पारें —
सिर सबयार उघारें,
ठंड़ी हती टिकी चौखट सें —
सहजै अपने द्वारे,
मौतिन मांग भरें सैंदुर से —
बेंदा देत बहारें,
काम समर में सिर कटवे खां —
खौंसें दो तलवारें,
सोने के गुम्बज में ईसुर —
केका पंख पसारे ।

'हां! बेटा ने अभी है फाग बनायी।' बब्बू बोला, 'बापू ने दलियां को फंसवाया। बदमाश यही है। दूसरों की बहू-बेटियों को ताकता है। उन्हें कुदृष्टि से देखता है। उनसे ऐयाशी करता है।' ऐसा कहते हुए उसने लड़कों को संकेत दिया। सब लड़के उस पर टूट पड़े और बुरी तरह उसे लात-घूंसों से मारने लगे। बब्बू बोला, 'साले को रस्सी से बांध कर इस नीम के पेड़ से बांधो, फिर झुला-झुला कर मार लगाओ।'

एक लड़का दौड़ कर एक लम्बी रस्सी उठा लाया। ईसुरी के हाथ-पैर बांधे और उसे नीम के पेड़ से टांग दिया। उसे झुला-झुला कर मारने लगे। एक लड़के ने पैर में कुल्हाड़ी भी मार दी। टप-टप खून बहने लगा। ईसुरी जैसे समाधि मुद्रा में हो, उसने फिर फाग उठायी —

जा भई दशा लगन के मारे —
रजऊ तुम्हारे द्वारें,
काटत नहीं शीश सोउत है —
जो कोऊ जी के द्वारें,
जिन पै फूल छड़ी न टूटी —
तिन्हें घली तरवारें,
कर का सकत अकेलो मैं हों —
सबरउ गांव उतारें,
ईसुर मित्र ढाल दुख आगे —
सुख में रहत पछारें ।

'देखो कितना बशर्म है यह आदमी,' बब्बू बोला, 'हम लोगों को चुनौती है दे रहा कि मारो कितना मारोगे — मैं फागें बनाना न छोड़ूंगा। तुम्हारे सामने फागें बनाऊंगा। बना साले,' ऐसा कहते हुए बब्बू ने उसे एक लाठी पसुलियों में मार दी। वह बुरी तरह से चीख पड़ा।

उसकी चीख सुन कर रजऊ से न रहा गया। पर्दा को छोड़ कर बाहर निकल आयी। क्रोध से बोली — 'हत्यारो! क्यों उसे मारे डालते हो, सबके सब जेल चले जाओगे। फांसी पर चढ़ोगे। एक के पीछे इतने बरबाद होंगे।'

रजऊ को बाहर निकला देखते ही बब्बू के क्रोध की सीमा न रही। उसकी ओर झपटता हुआ बोला, 'भाग बेशरम कहीं की! छिपे-छिपे ऐयाशी करती है, मेरे घर का नाम डुबाने आयी है। अपने यार को बचाने को आ गयी। कितने दिन तो हो गये ये फागें सुनते। आज हरामी

की होली न जलायी तो कुछ न किया।'

पड़ौस के लोग भी यह हंगामा देखने को जुड़ आये थे। एक वयोवृद्ध पड़ौसी बोला, 'बब्बू भैया! तुम अभी लड़के हो। ऐसा नहीं करना होता। बेचारे की जान न लिये लो, छोड़ दो उसे। मर गया कहीं तो तुम सब बरबाद हो जाओगे।'

एक कोई दौड़ा और कानूनगो को ले आया। साथ में गोपाल पंडित भी आ गये। ईसुरी बेहोश हो गया था। गर्दन नीचे को झुकी पड़ी थी।

'यह क्या? यह क्या? किसने बांधा इसे?' कानूनगो घबराये से चिल्लाये। 'छोड़ो, उतारो इसे। जानबूझ कर फांसी पर चढ़ने का काम कर रहे हो। अकल पर पत्थर पड़ गये हैं क्या?'

गोपाल पंडित भी क्रोध से भभकते हुए बोले, 'कानूनगो! तुम्हारा लड़का पागल हो गया है। वह तुम्हारी कानूनगोयी को चाट लेगा। ऐसा भी किसी को बांध कर टांगा जाता है, मरे पशु-सा। देखो अब उसे। उसमें जान है कि मर गया! ठाकुर जंगजीत का आदमी है। अब देखना क्या होता है?'

कानूनगो ने शीघ्रता से ईसुरी को खुलवाया। गनीमत थी कि उसमें प्राण शेष थे। कानूनगो की जान में जान आयी। उसके पैर में पट्टी बंधवायी। मुख पर पानी के छींटें मारे। वह कुछ होश में आया। घर के भीतर से चीखने की आवाज आ रही थी। कानूनगो ने देखने को दौड़े। बब्बू बुरी तरह से रजऊ को पीट रहा था। कानूनगो ने क्रोध के आवेश में बब्बू को दो-चार तमाचे कस दिये और बोले, 'तुझे क्या हो गया है रे। पागल हो गया है क्या।

जानबूझ कर मौत बुलाता है। मेरी नौकरी तपवाता है। तू ही यहां का राजा हो गया है क्या? किसी ने तेरा अपराध किया है तो उसके लिए कानून है। अदालतें खुली हैं। कायदे-कायदे की लड़ाई सबको अच्छी लगती है। यह गुंडापन किसी को अच्छा नहीं लगता। अब सारा गांव ईसुरी की ही दया देखेगा। तेरी तरफ कोई न बोलेगा। वहां उसे संसता हुआ छोड़ कर आया यहां बहू को उघेरने लगा। कसाई कहीं के। तेरी कैसी मां खड़ी-खड़ी देख रही है!'

बब्बू भी क्रोध के आवेश में लज्जा को ठुकराता हुआ बोला, 'जब मैं ईसुरी को मार रहा था तो यह चुड़ैल उसे बचाने गयी थी। पर्दा तोड़ कर बाहर निकल गयी थी। इससे यह जाहिर नहीं कि यह उससे छिपे-छिपे ऐयाशी करती है। उसे मन में चाहती है। कहती न कि और मारो साले को। बहुत फागें बनाता है। यह सब तुम्हारी गलती है जो ऐसी औरत को मेरे गले से बांध दिया, जो मेरी होने को नहीं। दूसरे के नाम पर बिक चुकी है।'

'यह मेरी गलती नहीं,' कानूनगो बोले, 'यह सारी तेरी मां की गलती है। वही तेरी शादी करने को मेरे पीछे पड़ी थी।'

'मुझसे कहवाओ न,' देवकी भी क्रोध से बोली, 'तुम्हें ही अपनी समधिन के हाथ के रसगुल्ले खाना थे। नहीं तो पटवारी के घर डूबने को न जाते।'

रजऊ को भी बब्बू का आक्षेप सहन न हुआ। सिसकती हुई बोली, 'पिंजड़े में तोते जैसा तो बन्द रखते हो, घर की देहली लांघ नहीं पाती, खिड़की-झरोखे झांक नहीं पाती, तब भी मुझे दोष लगाते हैं। वह घर के द्वार पर मर जाता तो कैसा होता! मैंने उसे नहीं बचाया, इन्हें ही बचाया है। अब भी न जाने क्या हो?'

'बहू ठीक कहती है,' कानूनगो बोले, 'वह ठाकुर जंगजीत का कारिन्दा हो गया है। उनके किसी काम से मेरे घर आया रहा है। यहां बब्बू ने यह करा। ठाकुर जंगजीत बड़े बैझड़ ठाकुर हैं। सुनते ही आग बबूला हो जावेंगे। ऐसी ही हमारी दशा करने लगे तो कौन उनका हाथ पकड़ लेगा। सारा गांव हमसे जलता है। कोई आधी बात भी हमारे पक्ष में न कहेगा। सब ठाकुर साहब की तरफ ही बोलेंगे। इस बब्बू ने तो सब नाश मिटा दिया। मेरे गले में है फांसी डाल दी। अब क्या करूं समझ में नहीं आता।' ऐसा बकते बड़बड़ाते हुए कानूनगो घबराये हुए से फिर बाहर पहुंचे। ईसुरी बैसा ही पड़ा कराह रहा था। उसका सारा शरीर सूज गया था। अंग-अंग में पीड़ा थी। गोपाल पंडित उसके पास बैठे उसके सिर पर हाथ फेर रहे थे।

कानूनगो डबडबायी आंखों से उसे देखते हुए बोले, 'बताओ पंडितजी, अब क्या किया जाय? यह आपका लड़ा कितना बुरा काम कर बैठा है। घर आये किसी आदमी के साथ कहीं ऐसा सलूक करना होता है। फिर यह भी नहीं देखा कि वह किसका आदमी हैं। ठाकुर जंगजीत सुनते ही ज्वालामुखी जैसे फट पड़ेंगे। उनके क्रोध से बचने का क्या उपाय है? बब्बू ने मेरी तो नौकरी तापली और मुझे भी ताप लिया। पंडितजी! अब मेरी इज्जत आपके हाथ में हैं। जाइये ईसुरी को ले जाइये और ठाकुर साहब को किसी तरह समझाइये। आपका बड़ा अहसान मानूंगा, पंडितजी। आपके सिवा इस संकट से कोई नहीं बचा सकता।'

पंडितजी कुछ सोचते हुए से बोले—'पहले एक काम तो करो। हल्दी चूना मंगवाओ। इसके सारे शरीर पर लेप करो। देखो तो कैसा सूज गया है। कुछ सूजन पटकेगी। अब मैं क्या कहूं? बब्बू ऐसी नालायकी कर बैठा, उसके प्राण लेने में कसर ही नहीं रक्खी। अरे फागों की जगह फागें थी। सभी कोई बनाता है। क्या रजऊ एक मात्र आपके हैं। घर-घर में रजऊ है और यदि वह आपकी रजऊ ही से प्रेम करता है, तो आप क्या कर लेंगें? प्राण लेंगे तो प्राण देने भी पड़ेंगे। सरकार किसलिये है।'

'पंडितजी!' कानूनगो आंखें पोंछते हुए बोले, 'मेरी बुद्धि काम नहीं करती। अब आपही कुछ सोचिये।'

'हां!' पंडितजी सबको पास से हटाते हुए बोले, 'एक उपाय है यदि वह काम कर जावे। वैसे ठाकुर बड़ा बैभड़ है, बड़ा क्रोधी। उसको काबू में लाना सरल काम नहीं। उसका न कोई मंत्र है न झार फूंक। अगर बदल पड़ा तो समझ लो मौत आयी। हां, ठाकुर पहाड़सिंह से उसका एक झगड़ा है। यदि उसे आप इस झगड़े में सहायता देने कहें तो मैं किसी तरह ठाकुर को ठंडा कर सकता हूं। सरहद्दी झगड़ा है। कागजात, नकशे सब आपके हाथ में हैं। यदि आपको स्वीकार हो तो बताइये। मैं ईसुरी को गाड़ी में चढ़ाकर ले जाऊं और उसे मनाऊं।'

'पंडितजी! खूब सोचा!' कानूनगो आंखों में कृतज्ञता भर कर बोले, 'अनीटले से बीसा सौ। फिलहाल यह संकट तो टलवाइये। फिर तो आप जैसा कहेंगे, करूंगा। आपके ही हाथ में झगड़े की कुंजी रहेगी। पंडितजी चांदी बरसेगी। आप मेरा इतामीनान रखिये। एक वार मेरा साथ देकर देखिये।'

पंडितजी ने मन में सोचा, अच्छा उल्लू फंसा। अब साले को नाग जैसा नचाऊंगा। ऐसा सोचते हुए बोले, 'अच्छा कानूनगो साहब बैलगाड़ी मंगवाइये। मैं जाता हूं ईसुरी को लिवा कर। देखिये क्या होता है। अभी

आपका ठाकुर के सामने जाना उचित नहीं। अच्छा हो आप बब्बू को ले कहीं बाहर चले जावें। आग ठंडी पड़ने पर आवें।'

कानूनगो ने गाड़ी मंगवा दी। पंडितजी ईसुरी को उसमें लिटा कर उसके डेरे को ले गये। कानूनगो भी बब्बू को लेकर सदर को चले गये।

* * *

अध्याय - ३१

प्रत्येक खिलाड़ी अपना दांव चलना जानता है। गोपाल पंडित ने भी अपना दांव खेला। आये हुए संकट से कानूनगो को एक बार बचा देने में उन्होंने कोई हानि न देखी। कुछ लाभ होने की ही सम्भावना देखी। अतः उन्होंने एक बड़ी बलाय अपने सिर ले ली। वे गाड़ी के आगे-आगे चलते हुए ठाकुर जंगजीत की कोठी को आ गये। ठाकुर जंगजीत सिंह कोठी के बाहर ही मैदान में एक पेड़ के नीचे पत्थर पर बैठे हुए हुक्का पी रहे थे। एक नौकर समीप खड़ा था। वे उन्हें देखते ही बोले, 'इस समय कैसे आये पंडित?'

'क्या बताऊं, सरकार!' पंडितजी बड़े दीन भाव से बोले, मैं आपके कारिन्दा को लेकर आया हूं। कानूनगो के लड़के ने कुछ और लड़कों को साथ लेकर इसकी मारपीट कर दी है। सारा शरीर सूज गया है। बेहोश पड़ा है।'

'हैं! कानूनगो के लड़के ने?' ठाकुर जंगजीत ने ताव पकड़ते हुए कहा, 'उसकी ऐसी जुर्रत।' ऐसा कहते हुए वे उठे और गाड़ी में पड़े हुए ईसुरी को देखा। पारा और भी चढ़ गया, जैसे किसी ने आग में घी डाल दिया हो। नौकर से बोले, 'और दो आदमियों को बुला और इसे चारपाई पर लिटा। यह तो मरणासन्न हो रहा है। शीघ्र ही वैद्य को दौड़।'

नौकरों ने ईसुरी को उसके कमरे में चारपाई पर लिटा दिया। एक नौकर वैद्य को बुलाने के लिए दौड़ गया।

ठाकुर जंगजीत को इस समय क्रोध भी चाहता तो अपने वश में नहीं रख सकता था। वे और दो-चार आदमियों को बुलाते हुए बोले, 'जाओ तो रे! उस हरामजादे कानूनगो को और उसके लड़के को अभी पकड़ लाओ। मैं दोनों के सिर का भूत उतार दूं। मुझे चुनौती दी है। मेरे कारिन्दा को मारा है।'

गोपाल पंडित समझते थे कि यह बात सामने आयेगी, अतः वे पहले ही से कानूनगो और बब्बू को कहीं को भाग जाने को कह आये थे। हाथ जोड़ कर बोले, 'महराज। वे तो पहले ही से कहीं को नौ दो ग्यारह हो गये। सब के सब। क्या जानते नहीं थे कि आपका क्रोध भयंकर है। यह तो मैं भाग्य से पहुंच गया। ईसुरी अकेला द्वार पर पड़ा-पड़ा कराह रहा था। उसे आपका आदमी

समझ यहां लिवा कर आ गया। मर जाये तो ताज़ुब नहीं। कानूनगो का लड़का कानूनगो से भी अधिक उद्दंड हो उठा है। पर अब आप दोनों की मस्ती उतार ही देंगे। कब तक हजरत छिपेंगे। बड़े घर बायना दिया है!'

'ठीक कहा,' ठाकुर साहब कुछ शान्त पड़ते हुए बोले, 'अब तो मिल गयी बाप बेटे की चोटी पकड़ने को। इतनी हलदी उन दोनों के शरीर पर न चढ़वाऊं तो मैं कैसा?'

'इसी डर से तो वे भाग गये हैं,' गोपाल पंडित बोले, 'पर महराज! मैं एक बात सोचता हूं। अर्ज करूं या न करूं, डरता हूं। आपके क्रोध को देखे बैठा हूं। उस दिन मस्तराम ने सारी रात सेंका होगा। करघा छोड़ तमाशे जाय — नाहक चोट जुलाहा खाय। इसलिये मैं किसी के बीच में अकारण ही नहीं पड़ना चाहता।'

'कुछ कहो तो,' ठाकुर साहब कुछ उत्सुक होकर बोले, 'भूमिका तो इतनी लम्बी बांधी, आपके हाथ में तो पंचांग रहता है, फलाफल सब जानते हैं, तब फिर डरने की क्या बात?'

'महराज!' पंडितजी फिर समीप बैठते हुए बोले, 'कानूनगो को या उनके लड़के को लतया लेना तो आपके लिए बायें हाथ का खेल है। हां कठिन मुकाबला आपका ठाकुर पहाड़सिह से ही है। यदि उन्हें नीचा दिखाना है, ईंट का जबाब पत्थर से देना है तो अब मौका है। कानूनगो की चोटी आपके हाथ में आ गयी है। उससे सारे सरहद्दी

नकशे और कागजात दबा, धमका कर खींच लिए जावें। फिर ठाकुर पहाड़सिंह झक मारेंगे। वे उसे लांच से वश में किये हैं आप लात से वश में कर लीजिये, जैसा आपका सिद्धान्त है।'

'ठीक कहते हो, पंडित,' ठाकुर साहब कुछ अनुकूल मुद्रा बनाकर बोले, 'पर अब वह कानूनगो मिलेगा कैसे? सबको लेकर सदर भाग गया है, तब न जाने कब तक आवे! उससे कुछ समझने के लिए ही तो ईसुरी को भेजा था, पर वह यह दशा कराकर लौटा। इससे तो मेरा खून खौलता है। इस वक्त कानूनगो या उसका लड़का कोई भी मिल जाता तो अपना गुस्सा उतार लेता!'

इतने में वैद्य आ गये। वैद्य को देखते ही ठाकुर साहब बोले, 'वैद्यजी, जरा मेरे कारिन्दा को तो देख लीजिये। उसे कुछ लड़कों ने मिलकर मार-पीट कर दी है।'

आदेश पाते ही वैद्यजी ने जाकर ईसुरी को भली-भांति देखा, कुछ दवा खिलायी। ईसुरी कुछ होश में आया। वैद्य उसे देखकर ठाकुर साहब के पास गये और बोले, 'सरकार! चोटें तो बहुत गम्भीर हैं। ईसुरी को अच्छा होने में बहुत देर लग जावेगी। उसकी तो जान जाने में कोई कसर ही नहीं रही। दवा बनानी पड़ेगी। कुछ रुपया की जरूरत पड़ेगी। एक नौकर भी चाहिये जो मरीज की दिन-रात देखभाल करे।'

ठाकुर साहब ने वैद्यजी को कुछ रुपया दिलवा दिया। वैद्यजी रुपया लेकर चलते हुए।

पंडितजी उन्हें फिर बुलाते हुए बोले, 'वैद्यजी! ईसुरी बच तो जावेगा न? उसे बाहर ले जाने की जरूरत तो नहीं है?'

'नहीं, पंडितजी!' वैद्यजी बोले, 'मैं उसे यहीं ठीक कर लूंगा। बाहर ले जाने की कोई जरूरत नहीं। हां कुछ समय अवश्य लग जावेगा। सम्भव है महीना दो महीना लग जावे।'

'तो आप अब उसकी देखभाल करते रहिये,' ठाकुर साहब ने कहा।

'हां सरकार! मेरी देखभाल रहेगी।' ऐसा कहते हुए वैद्यजी चले गये।

ठाकुर साहब को फिर कुछ उबाल आया। फिर हुक्का को कस लगाते हुए बोले, 'पंडित! एक बात तो सोचो। मेरे कारिन्दा को कानूनगो के लड़के ने पीट लिया। इसमें मेरी कितनी बड़ी प्रतिष्ठा गिरी। गांव में लोग क्या समझेंगे। सब यही कहेंगे न कि कानूनगो ठाकुर साहब से भी बड़ा है। गम खाकर रह जाना तो बुजदिली है। सरहद्दी झगड़ा सुलझे या न सुलझे, मैं तो चाहता हूं कि कानूनगो की और उसके लड़के की मरम्मत कर लूं। आप यह बताइये कि दोनों हैं कहां? उन दोनों की भी खटिया बिछवा दूं, तब मेरे जी को चैन मिलेगी।'

'सही है, सरकार!' पंडितजी बोले, पर जब वे मिलें तभी तो उनकी खटिया

बिछवायी जा सकेगी। कभी न कभी वे मिल ही जावेंगे? अब आज्ञा हो तो चलूं।' ऐसा कहते हुए पंडितजी उठे और ठाकुर साहब को आशीर्वाद देते हुए चले गये।

ठाकुर साहब थोड़ी देर तक पत्थर पर बैठे हुक्का ही पीते रहे और कुछ सोचते रहे। वे उठ कर जाने को ही हुए कि कानूनगो आते हुए दिखायी पड़े। उन्हें देख कर खड़े हो गये। कानूनगो आये और उन्होंने ठाकुर साहब को बाकायदे नमन किया। ठाकुर साहब तब भी कुछ क्रोध से बोले, 'तुम्हारे लड़के ने ऐसी शरारत की? मेरे कारिन्दा को कैसी बुरी तरह पीट कर रख दिया। वह पंडित तो कह रहा था कि मेरे डर से बाप-बेटे दोनों कहीं को भाग गये।'

'भाग गये थे, सरकार! फिर कुछ सोच कर आ गये।' कानूनगो ने कहा—'मैंने सोचा कि भागने से काम न चलेगा। माफी मांगने से काम चलेगा। यह लड़कों-लड़कों की लड़ाई है, इसमें मैं क्यों अपराध अपने सिर लूं। बब्बू आपका लड़का है। आप उसे जो सजा देना चाहें दें। आप बड़े हैं। आप से हम टकराव कैसे ले सकते हैं। तालाब में रहकर मगर से बैर नहीं किया जाता।'

'और वह पंडित कहता था,' ठाकुर साहब फिर बोले, 'कि ठाकुर पहाड़सिंह को तुमने ही मेरे सिर चढ़ाया। वह तुम्हारे घर मिठायी दे जाता है, तुम्हारी जेब गरम कर जाता है। उस ठकरा ने एक दिन मेरे सारे मवेशी कानीहौद में बन्द करा दिये। मुझे काफी रुपया लग गया। मेरे जंगल पर वह अपना कब्जा कर रहा है। उसने तूंदा भी खुदवा कर फिंकवा दिया है।'

'सरकार मैं भला आ गया,' कानूनगो बोले, 'पंडितजी की सारी करतूत तो मालूम हो गयी। पंडितजी बड़े गुरूघंटाल हैं। यहां की वहां, वहां की यहां ही करते रहते हैं। पंडितायी नहीं करते राजनीति में भाग लेते हैं। जो न जुझा जायें सब थोड़ा है। बड़ेगांव के ठाकुर कब मेरे घर आये, कब मुझे मिठायी दे गये, कब रुपया? क्या पंडितजी यह साबित कर सकेंगे! वे मुझसे जलते हैं। ईसुरी को लेकर मैं ही आ रहा था। सो वे आगे हो गये। अपनी सुश्रूषा दिखाने को, मेरे खिलाफ कुछ भिड़ाने को। मैं जानता था कि वे यह करेंगे। इसीलिये मैंने उन्हें मौका दे दिया। अब सरकार समझ गये होंगे कि पंडितजी कैसे आदमी हैं?'

'मैं समझता हूं,' ठाकुर साहब घमंड से बोले, 'मुझे आदमी की परख बहुत है। चेहरा देखते ही पहचान लेता हूं।'

ऐसी बात चल ही रही थी कि वह मस्तराम फिर आया और हाथ जोड़कर सामने खड़ा हो गया।

'क्या है रे?' ठाकुर साहब ने उसकी ओर देखते हुए कहा।,

'सरकार!' वह बोला, 'कुछ कहूंगा तो आप मुझे ही मारेंगे। उस दिन की मार अभी तक नहीं भूला। वहां चलके देख लीजिये ठाकुर पहाड़सिंह क्या कर रहे हैं? उन्होंने आपकी मेड़ का जंगल कटवाना शुरू कर दिया है। आधा जंगल रातो-रात साफ करा दिया। क्या मेरे वश का है कि मैं उनका हाथ पकड़ लूं?'

ठाकुर साहब को फ़िर ताव आया, 'सुन लिया कानूनगो। कितना उपद्रव क़िये है वह बड़े गांव का ठकरा। मेरी मेड़ पर जबरन कब्जा किये लेता है। मैं गया नहीं कि लोहे से लोहा बजा।'

'सरकार!' कानूनगो कुछ धीरे से बोले, 'वे कब्जा न कर पायेंगे। कागजात और नकशे तो मेरे हाथ में हैं।'

'पर तुम तो उनके हाथ में हो,' ठाकुर साहब ने ताना कसा।

'महराज! ऐसी मरजी न हो,' कानूनगो हाथ जोड़ कर बोले, 'मैं उनके हाथ में नहीं हूं। उन्होंने मुझे खरीद नहीं लिया। मैं तो सरकारी कर्मचारी हूं। कागज मेरे हाथ में हैं और मैं कागजों के हाथ में। एक बिनती करूं?'

ठाकुर साहब में कुछ जिज्ञासा जागी। उन्होंने मस्तराम को हटा दिया और फिर बोले, 'हां अब कहिये। ये छोटे छोटे आदमी ही सारी फिसाद की जड़ होते हैं। जैसे वह पंडित आ जाया करता है। मान न मान, मैं तेरा मेहमान। संकोच के मारे मैं उसे आने से मना नहीं कर पाता। पर उसे खूब जानता हूं।'

'सरकार! आप ऐसे बावन गंडा खिला चुके हैं,' कानूनगो बोले, 'आप एक काम करें। दूसरा तूदा जो बना है, उसे आप उखाड़ कर फिंकवा दें, और उस जमीन पर आप कब्जा कर लें। आप वहां का जंगल कटवाना शुरू कर दें। ऐसा करते ही बड़ेगांव के ठाकुर केस सरकार में ले जाने को मजबूर हो जावेंगे। तब फिर मेरे हाथ में बात आयेगी। मुझसे नक्शे तलब किये जावेंगे। मैं दूसरे नक्शे तैयार करा रक्खूंगा। हां, उनमें कुछ खर्च पड़ेगा। सो खर्च की कौन सी बात है। आपके यहां से सब मिल जावेगा। ऐसा करने से बड़ेगांव के ठाकुर की आधी जमीन आपके हाथ में आ जावेगी।'

ठाकुर साहब यह बात सुनते ही पिघल गये जैसे किसी ने गुरुमंत्र कान में फूंक दिया हो।

नौकर को बुलाया और बोले— 'जा रे ठकुराइन से दौ सौ रुपया ले आ।' नौकर रुपया लेने चला गया। फिर ठाकुर साहब बोले — 'सबेरे-सबेरे इसीलिये आपको बुलाया था। पर न जाने लड़के-लड़के आपस में क्यों लड़

बैठे?'

'सरकार! लड़कों ने कहा रहा कि फागें सुना। ईसुरी ने फागें सुनाने से इंकार कर दिया। इस पर सब बिगड़ पड़े। ईसुरी की फागें सबको बहुत अच्छी लगती हैं। थोड़ी-सी बात पर इतना झगड़ा बढ़ गया। मैं तो आप ही का आदमी हूं। भला मैं आपके खिलाफ कैसे जा सकता हूं? लड़कों की लड़ाई से मुझे क्या लेना-देना। बब्बू आपका लड़का है। आप चाहें अभी बुला कर उसे लतया दें।'

ठाकुर साहब हंसने लगे। इतने में नौकर दौ सौ रुपया लेकर आ गया। ठाकुर साहब ने रुपया कानूनगो के हाथ में रक्खा।

कानूनगो ने उनके चरण स्पर्श किये और एक प्रसन्नता के साथ घर लौटे।

* * *

अध्याय - ३२

दाव-पेंच भी अपना काम करते हैं और बड़ी से बड़ी शक्ति को भी प्रायः पछाड़ देते हैं। कानूनगो ने अपने सिर पर आये हुए उस दिन के संकट को बड़ी चालाकी से टाला। लोगों की धारणा थी कि ठाकुर जंगजीत उनका कचूमर निकाल लेंगे। उनके कारिन्दा को मारा है। यह उनकी चुनौती है। परन्तु जब कई दिन निकल गये और कुछ न हुआ, लोगों की धारणा बदल [illegible] लगे कि कानूनगो के हाथ में भी तो कुछ ताकत है। सरकारी ताकत। इस ताकत से बड़ी कौन ताकत होती है। उससे सब डरते हैं। पर गोपाल पंडित यही सोचते थे कि कानूनगो को उन्हीं ने बचाया। उस दिन से उनकी कानूनगो से भेंट न हो सकी थी। वे सोचते थे कि कानूनगो बब्बू को लेकर कहीं बाहर भाग गये हैं। उन्हीं के कहने से भागे हैं। पर एक दिन उन्हें पता पड़ा कि कानूनगो यहीं हैं। वे आये, उस दिन की बहुत-सी बातें करना थीं। आकर बाहर चौपाल में बैठ गये और उन्हें आवाज लगायी। कानूनगो कुछ मुस्कराते हुए से आये, नमस्कार करते हुए उन्हीं की बगल में तखत पर बैठ गये। उन्हें देखते ही गोपाल पंडित बोले, 'भैया! आप कब आ गये? मुझे तो आज पता पड़ा कि आप यहीं हैं।'

'पंडितजी! मैं गया ही कहां हूं?' कानूनगो हंसते हुए बोले, 'मैं क्या इन पड़ा-भैंसों से डरता हूं। परन्तु आपका आभार मानता हूं। आपने ढाल का काम किया। ऊपर दौड़ते हुए भैंसा से मुठभेड़ बचाना पड़ती है। यदि मैं ईसुरी को लेकर जाता तो क्रोध में भरा ठाकुर न जाने क्या कर बैठता!'

'हां, कानूनगो भैया!' पंडितजी उन पर अहसान की बोरियां-सी लादते हुए बोले, 'उस दिन ठाकुर का क्रोध देखते ही बनता था। आपे के बाहर! नौकरों

को बुलाया।
हरामजादे उस कानूनगो को और उसके कपूत को। मेरे कारिन्दे को मारा। मुझे चुनौती दी। मैं कैसा जो दोनों की खटिया ईसुरी की ही बगल में न बिछवा दूं। यहां का राजा बन गया है!

'जब मैंने देखा कि ठाकुर अपने आदमी भेज ही रहा है– मैं बोला, सरकार! कानूनगो तो अपने सारे परिवार को लेकर पहले ही फरार हो गये। क्या वे आपके क्रोध को जानते नहीं? अपना कचमूर निकलवाने को क्या वे रह जाते! आखिर उनके भी तो समझ है। यह तो लड़कों-लड़कों की लड़ाई है। कानूनगो का इसमें कोई दोष नहीं। वे आपको क्या चुनौती देंगे?'

'पंडितजी!' कानूनगो ने उनके चरण स्पर्श करते हुए कहा, 'आपने बड़ी बुद्धिमानी से काम लिया। आखिर आप पंडित हैं। विद्वान हैं। आपके बराबर है कौन आसपास में।' ऐसा कहते हुए उन्होंने जेब से दस रुपये निकाले और पंडितजी की ओर बढ़ा दिये। पंडितजी और फूल कर कुप्पा हो गये। आंखों में प्रसन्नता भरते हुए बोले, 'कानूनगो भैया! मैं आपका पंडित हूं, आज का नहीं, पुश्तैनी। भला मैं आप पर आंच कैसे आने दे सकता हूं! घुटना पेट की ओर ही झुकता है। खैर भैया! जो हुआ सो हुआ। ईसुरी मार जरूर अच्छी खा गया है। अब शायद वह ऐसी फागें न

'पंडितजी!' कानूनगो फिर बोले, 'पहले तो मैं समझता था कि यह लड़का ऐसी रस भरी फागें क्या बनावेगा अभी जमीन से तो यह उठा नहीं। दलियां है फागें बनाता, पर पंडितजी यह मेरा भ्रम निकला। ईसुरी ही फागें बनाता है और बड़े गजब की, जैसे उसे कोई सिद्धि हो। न जाने उसके कंठ में कौन देवी-सी आकर बैठ जाती है। उसके पिटने से तो मुझे बड़ा दुख हुआ। बब्बू को भी मैंने उस दिन दो-चार झापड़ मार दिये। होनहार होती है। मैं घर पर नहीं था। लड़कों-लड़कों में वाद-विवाद हो गया। ईसुरी ने भी ठाकुर साहब का बल पाकर कुछ हेकड़ी दिखायी। बात बढ़ गयी। हां हुआ बुरा। ईसुरी के पिटने का सबको बुरा लगा। ठाकुर साहब को गुस्सा क्यों न आता?'

'खैर जो हुआ सो हुआ,' पंडितजी ने कहा, 'मेरे योग्य और जो सेवा हो बताते रहिये।'

'हां, पंडितजी!' कानूनगो धीरे से बोले, – 'ठाकुर पहाड़सिंह भागवत बैठालना चाहते हैं। चार-पांच सौ रुपये का हाथ है। यही पूछने उस दिन आये थे कि किसकी भागवत बैठलवाऊं? कुछ मिठायी लेते आये थे। बड़े उदार ठाकुर हैं, यह तो आप भी मानेंगे। इन ठाकुर जंगजीत से तो कोई पाई नहीं पा सकता। पोथी-पुराण में भी उन्हें श्रद्धा
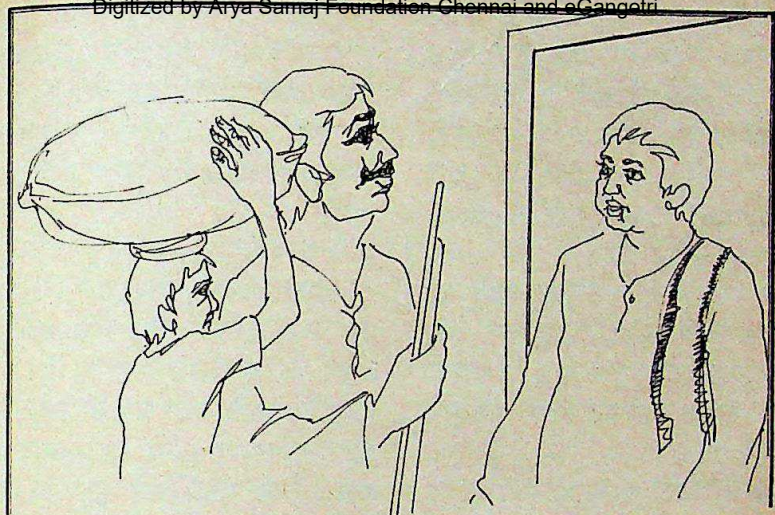
नहीं। फूहड़ फागें सुनना ही जानते हैं। कहिये तो आपकी भागवत लगवा दूं। चार-पांच सौ तो यों ही कह दिया है, हजार रुपया भी हो जावे तो कोई आश्चर्य नहीं। बर्तन भी चढ़ेंगे, कपड़े भी चढ़ेंगे। मैंने कहा था कि चांदी बरसेगी। वह घड़ी आ गयी है, अब चांदी बरसेगी। वह घड़ी आ गयी है, अब चांदी समेटना काम आपका है। कहिये।'

कानूनगो की बात सुनते ही पंडितजी के मुंह में पानी आ गया। अपना सगौट दिखाते हुए बोले, 'भैया कानूनगो। नेकी और पूछ-पूछ। हां एक बात अवश्य है – ठाकुर जंगजीत खार खा जावेंगे।'

'खा जावेंगे... खा जायें,' कानूनगो ने शय लगायी, 'उनके कारण क्या आप अपना पेशा छोड़ देंगे? क्या वे आपको अभी एक हजार रुपया दे देंगे। दे दें तो न भागवत को स्वीकारें। समझ लीजिये उनसे। वे तो आपके पूछते ही खार खा जावेंगे। आप तो ऐसा करें कि उन्हें कुछ मालूम ही न हो। कुछ दिन को बाहर जा रहा हूं, यही उनसे कह दीजियेगा। जब वे ही कुछ बात उठावें तब जवाब दीजियेगा।'

'है तो ठीक,' पंडितजी बोले, 'सब चल जावेगा। मैं क़ौन उनका नौकर हूं। मुझे कुछ वेतन नहीं देते। मैं तो यों ही उनकी कोठी पर बैठने को पहुंच जाता हूं। आप तो बैठलवा दीजिये मेरी भागवत। आती लक्ष्मी कोई टटिया नहीं देता। फिर देखा जावेगा।' ऐसा कहते हुए पंडितजी उठ खड़े हुए।

कानूनगो भी हंसते हुए बोले, 'पंडितजी! लोहे को लोहे से लड़ाना होता है। कांटे को कांटे से निकालना होता है। दुनिया में अपना स्वार्थ सभी देखते हैं। बुद्धू बनने से काम नहीं चलता। आप तो मेरा साथ देते रहिये, फिर देखिये।'

'अवश्य! अवश्य!' ऐसा कहते हुए पंडितजी चले गये।

कानूनगो भीतर गये नहीं कि देवकी बोली, 'सबेरे-सबेरे यह पंडित किसलिये आ गया था?'

'जानती नहीं,' कानूनगो ने कहा, 'ये गांव के चलते-फिरते समाचार-पत्र हैं। यही ईसुरी को बगौरा ले आये हैं। इन्होंने ही उसे ठाकुर जंगजीत के घर नौकर रखाया है, नहीं तो ईसुरी क्यों यहां आता। उसका यहां आने का जरिया ही क्या था? इन्होंने ही ठाकुर जंगजीत से कहा था कि एक दिन ठाकुर पहाड़सिंह आये थे– कानूनगो को मिठायी दे गये और उनकी जेब भी गरम कर गये। इन्हें कोरा पंडित न समझो, बड़े राजनीतिज्ञ हैं, पर वे डाल-डाल तो मैं पात-पात। उन्हें भी ऐसा मजा चखाऊंगा कि बेटा रोवेंगे।' ऐसा कहते हुए वे गुसलखाने की ओर चले गये।

थोड़ी देर में लौट कर आये तो सुना कि द्वार पर कोई आवाज लगा रहा है। द्वार पर पहुंचे। सामने रास्ते पर बैलगाड़ी खड़ी थी। उसमें गल्ले के कुछ बोरे लदे हुए थे। उन पर फर्श पड़ा हुआ था। उस पर ठाकुर पहाड़सिंह अपनी बन्दूक लिए हुए बैठे थे। उन्हें देखते ही कानूनगो कुछ घबराये हुए से बोले, 'अरे आप हैं! आइये! भीतर ही बैठेंगे।'

ऐसा कहते हुए कानूनगो ने अपना कमरा खुलवाया। उसमें पलंग पड़ा था और कुछ कुर्सियां भी। एक कुर्सी पर ठाकुर साहब बैठ गये और नौकर से बोले, 'वे बोरे गाड़ी पर से उतरा कर भीतर रखवा दे।' ये थोड़ा गल्ला है आपके लिए लेता आया हूं। इस साल अच्छी खेती हुई है। जितनी जमीन फालतू पड़ी मुझे मिली सब मैंने जुतवा दी। उसमें अच्छा तिल हुआ। सब आपकी दया है।'

कानूनगो गल्ला आने से तो प्रसन्न थे, पर मन ही मन डरते भी थे कि ठाकुर जंगजीत को न कहीं खबर लग जावे। परन्तु खबर देने वाला एक ही आदमी था – गोपाल पंडित! उसे उन्होंने पटा लिया था। ठाकुर साहब के सामने खड़े होकर बोले, 'बड़ा कष्ट किया आपने। कितना ख्याल रहता है आपको। गुरवापरवरी इसी को कहते हैं। किसी-किसी में ही यह होती है। आप अच्छे पधारे। आपसे कुछ जरूरी बात भी करना थी।'

'तो बैठ जाइये न,' पहाड़सिंह बोले।'

'आपके सामने कुर्सी पर कैसे बैठ

जाऊं? ऐसी [illegible] तो मुझसे नहीं हो सकती।' कानूनगो ने कहा।

'अरे बैठिये, ऐसा कहते हुए पहाड़सिंह ने उन्हें खींच कर कुर्सी पर बैठा लिया और बोले – 'कहिये, अब क्या कहना है?'

'मैने आपसे कहा था,' कानूनगो बोले, 'कि यहां एक गोपाल पंडित है, वह यहां की वहां चुगली किया करता है। ठाकुर जंगजीत का आदमी है। उस दिन जब आप पधारे थे उसकी भी सारी बात उनसे कह आया। इसको वश में करने के लिए मैंने सोचा हैं कि आप इसकी बड़ेगांव में भागवत बैठाल दें। फिर इसका मुंह बन्द हो जावेगा। पर देखिये पावे कुछ अधिक नहीं।'

'हां! हां!' पहाड़सिंह बोले – 'यह तो आपने अच्छी बात सोची। मेरा भी बहुत दिनों से भागवत सुनने का इरादा था। इसको ही बैठाल दूंगा। आप भी किसी दिन बड़े गांव आइये न?'

'आज ही आने का विचार कर रहा था,' कानूनगो बोले, 'पर आपका पधारना यहीं हो गया। इसी भागवत के विषय में आपसे बात करनी थी। सो हो ही गयी। वह सब जमीन तो अब आपके कब्जे में हो गयी न!'

'उसी में तो तिल बो दिये थे। एक बोरा ले तो आया हूं आपके लिए। अच्छी जमीन हाथ लगी। कितने दिन से बेकार पड़ी थी। तो अब आप कब तक आयेंगे?'

'मैं तो आऊंगा तब आऊंगा, आप अपने उस बब्बू को कुछ दिन के लिए लेते जाइये। उसे आप अपने पास ही रख लीजिये। यहां लोग उसे मारने की ताक में हैं। बातें ऐसी हुई हैं कि एक दिन ठाकुर जंगजीत ने उस ईसुरी को यहां भेजा। मुझे बुलाने को। यहां मैं नहीं था। वह बब्बू था। बब्बू से और ईसुरी से कुछ वाद-विवाद हो गया। ईसुरी आप जानते ही है, उसकी दुलहिन रजऊ के नाम पर फागें बनाया करता है। बब्बू ने उसकी अच्छी मरम्मत कर दी। खूब मारा, उन्हीं की कोठी पर बीमार पड़ा है। इससे ठाकुर जंगजीत बहुत बिगड़े। आपे से बाहर। मुझे सैकड़ों गालियां दीं। अब बब्बू को मारने को आदमी छोड़े हैं। रात सांझ कहीं मिले तो उसे मारें। मैं अभी उसे घर से बाहर नहीं निकलने देता। आपकी सेवा में रहेगा तो कोई उसका बाल न बांका कर सकेगा।'

'हां! हां! आप अभी मेरे साथ भेज दीजिये। यह बैलगाड़ी है ही। उसने अच्छा किया जो ईसुरी की मरम्मत कर दी और कौन न कर देता? अपनी बहू-बेटी की बेइज्जती कौन देख सकता है। मैं तो बड़ा खुश हुआ। बुलाओ बब्बू को चले मेरे साथ। हो जावे तैयार। बहुत आराम से रहेगा।

विश्वास रखिये।'

कानूनगो ने बब्बू को आवाज लगायी। बब्बू आया नहीं कि कानूनगो बोले, 'बेटा, कक्का जू के पैर छुओ। कक्का जू के साथ कुछ दिन को बड़ेगांव चले जाओ। वहीं मौज से रहना। कक्का जू की सेवा करना। जब तबियत चाहे चले आना। यहां तुम्हारे कुछ दुश्मन तुम्हें मारने को फिरते हैं। अनी टालना है। कुछ दिन रह जाओ।'

बब्बू ने ठाकुर साहब के पैर छुए और बोला — 'मैं अभी तैयार नहीं हूं। फिर आऊंगा। अभी तैयारी करने में देरी लगेगी।'

'ठीक है जब तुम्हारी इच्छा हो आ जाना।' ठाकुर साहब ने कहा।

'सरकार! भोजन न हो जावे? रसोई तैयार है।' कानूनगो ने कहा।

'नहीं, अभी मुझे आगे एक गांव तक जाना है।' ऐसा कहते हुए ठाकुर साहब उठ खड़े हुए। कानूनगो ने उनको पान छालिया दिया। वे चले गये। (क्रमशः)

ओ मां! मैं अपने दुःख के आंसुओं से तेरे लिए हार बनाऊंगा। सितारों ने अपने प्रकाश-पुंज-पायल से तेरे पांव संवारे हैं, किंतु मेरा हार तेरा सीना ऊंचा करेगा। यश और वैभव तुझसे ही प्राप्त होते हैं और तेरे लिए या सुरक्षा के निमित्त होते हैं, किंतु मेरा यह दर्द नितान्त मेरा है और जब मैं इसे प्रसाद स्वरूप तेरे पास लाता हूं तो तू मुझे अपनी दया से पुरस्कृत कर देती है।

* * *

क्या कोई जानता है कि नींद जो बच्चे की आंखों से शीघ्र चली जाती है - कहां से आती है? हां, एक किंवदन्ती है कि जंगल की घनी छायाओं में जुगनुओं की मद्धिम रोशनी से जगमगाते परी-गांव में इसका आवास है, जहां दो आनंद की उदास कलियां लटकी हैं। वहीं से नींद बच्चे की आंखों का चुम्बन लेने आती है।

क्या कोई बता सकता है कि निद्रावस्था में बच्चे के होंठों पर तरंगित मुस्कान का जन्म कहां हुआ? हां, ऐसा सुना जाता है कि जहां अर्धचन्द्र की पीली युवती किरन ने अदृश्य होते शरद ऋतु के बादलों के एक कोर को छुआ वहीं ओस-स्नाता भोर के सपनों में प्रथम वार बच्चे के होंठों की मुस्कान का जन्म हुआ।

क्या कोई बता सकता है कि बच्चे के अंगों पर खिलनेवाली मधुर कोमल ताजगी इतने दिनों तक कहां छिपी रही? हां, जब मां युवती कन्या थी, तब उसके कोमल मूक हृदय में प्यार के रहस्य के रूप में थी।

—रवीन्द्रनाथ टैगोर

यादों के फूल

यादों में अब भी खिलते हैं
पीले फूल कनेर के

रस के प्याले कलश सुनहरे
शाख़ें, शाख़ें, सहन दरीचे,
परदे खिड़की खोल हवाएं
सांसों में सौरभ कन सींचे
मोहक पल आमंत्रण देते

बेणू-वन से टेर के

पृष्ठों पर से धूल उतरती
शब्द उभरते अंश निखरते,
आहट पाकर मौसम खिलता
धूप सिहरती, रंग निखरते
जोड़-तोड़ फिर संदर्भों के

रखते मन को घेर के ।

नयन बांचते भाव नयन के
अधरों पर अधरों की बानी,
दुहराते फिर जीवन-लय को
गहरे नाते - प्रीत पुरानी
रख देता पत्थर पर जैसे

शिल्पी चित्र उकेर के ।

— प्रो. शकुंतला श्रीवास्तव
४१७/१ सोही स्ट्रीट, कालेज रोड,
लुधियाना

रेहन आंसू हो गये

धूमिल सी पड़ने लगी,
गुलमोहर की छांव ।
लौट वहीं पर आ गये,
हैं कोहरे से पांव ।।

* * *

सारे आखर एक से,
एक रंग और रूप ।
खुशी यहां पर लग रही,
है बदली की धूप ।।

* * *

फांकों की गिनती करें,
पढ़कर चेहरा मौन ।
रेहन आंसू हो गये,
उन्हें छुड़ाये कौन ?

* * *

'धनिया' यहां गरीब की,
बिकती है बेमोल ।
कौन यहां पर पूछता,
है माटी के मोल ?

* * *

पगडंडी सुनसान है,
पनघट भी बीमार ।
बोझा सा ढोने लगे,
हम सब अब त्योहार ।।

— कुसुम शुक्ला
गोकुलपुरी, लखीमपुर — खीरी, उ.प्र.

*** राष्ट्रीय अस्मिता और हिन्दी ***
संपादक: डॉ. सुशीला गुप्ता; प्रकाशक : दीर्घा साहित्य संस्थान, २५ बेंग्लो रोड, दिल्ली; मूल्य : पचास रुपये।

'राष्ट्रीय अस्मिता और हिन्दी' पुस्तक राष्ट्रीय अस्मिता के प्रश्न को भाषा के संदर्भ में व्याख्यायित करने का प्रयत्न है। हिन्दी को लेकर लम्बे समय से पक्ष-विपक्ष में बहस चल रही है, यह अत्यंत आश्चर्यचकित करनेवाला तथ्य है कि आज़ादी से पूर्व राजनीतिक स्वतंत्रता और राष्ट्रीय अस्मिता की खोज में अनेक सशक्त और महत्वपूर्ण शस्त्रों में से हिन्दी भाषा एक शस्त्र का काम करती रहीं। आजादी के बाद उसी हिन्दी को धकेलकर नेपथ्य में डाल दिया गया। लेकिन आज फिर हिन्दी को लेकर एक नयी बहस शुरू हो रही है। उसी बहस का संकेत हमें इस पुस्तक में मिलता है।

पुस्तक में संकलित पन्द्रह निबन्ध हिन्दी प्रयोग के विविध क्षेत्रों की जानकारी देते हुए उसके विस्तृत फलक की संभावनाओं का उद्घाटन करते हैं। इसके अन्तर्गत एक ओर यदि साहित्य और भाषा के रूप में हिन्दी की चर्चा की गयी है तो दूसरी ओर शिक्षा-क्षेत्र और कार्यालयों में हिन्दी प्रयोग की स्थिति का चित्र उभारा गया है।

सभी आलेख हिन्दी प्रयोग को लेकर कुछ महत्वपूर्ण संकेत देते हैं, इनमें कुछ सुभाव उभरते हैं, कुछ निष्कर्ष सामने आते हैं। हिन्दी भाषा के सम्मुख अपनी अभिव्यक्ति क्षमता को लेकर एक चुनौती भी है तो साथ ही अधिकाधिक सम्पन्न होने के लिए विविध क्षेत्रों के द्वार भी उसके सामने खुल चुके हैं।

साहित्यिक चेतना की वाहिका और व्यावहारिक बोलचाल के उपयोगी माध्यम के रूप में अब तक जानी जानेवाली हिन्दी के सामने भी आधुनिक चुनौतियों का सामना करने व अपनी क्षमता को प्रमाणित करने के अवसर उपस्थित हुए हैं। पर इस पुस्तक में

संकलित लेख उसकी क्षमता के प्रति आश्वस्त करते हैं। – डॉ. माधुरी छेड़ा

* * *

***लट्ठ राम की जय* कवि उमादत्त सारस्वत 'दत्त'; प्रकाशक : हिन्दी साहित्य भंडार, ५५ चौपटिया रोड, लखनऊ; मूल्य : चालीस रुपये ।**

'लट्ठराम की जय' पं. उमादत्त सारस्वत 'दत्त' की हास्य-व्यंग्य की रचनाओं का संग्रह है। कवि व्यंग्य को इंजेक्शन मानता है, जिसका प्रभाव रोगी (श्रोता-पाठक) पर तत्काल पड़ता है। इन रचनाओं के केन्द्र में नेता, अध्यापक, चेला, क्लर्क, कवि, रिश्वत-खोर, पंडित, सुधारक, वोटर, अवसर-वादी और खद्दरधारी दोहरे चरित्रों के व्यक्तित्व हैं, जो प्रजातांत्रिक दुष्प्रणाली और स्वार्थपरकता के पर्याय हैं। राष्ट्रीय पर्वों की पवित्रता और भारतीय संस्कृति के भयानक शत्रु हैं। सारे राष्ट्र को गोबर में सानकर, लोटा थाली बेचकर होली और दिवाली मनायी जाती है।

'साहित्यिक खेती' सांड़ चर रहे हैं और 'साहित्यिक चोर' पूरी की पूरी कविता हड़प रहे हैं। लट्ठराम काव्य की छाती पर मूंग दल रहे हैं। 'कुर्सी चिपकू' नेता ब्रह्मा से बढ़कर हैं। इनसे मत झगड़ो, ये प्रजातंत्र के डाकू हैं। ये कफन नोचनेवाले हैं। इन पर रिश्वत की विशेष कृपा है, इन्हें 'सदाचार' और 'सदाचोर' में अन्तर नहीं दिखाई देता। ये रो-रोकर दीन-दुखियों की बातें करते हैं परन्तु तिजोरियां भरते हैं सबलों की। इन्हें पद दो, इनका पेट भरो। इनकी शरण में जाओ। जय हो, चार सौ बीस महाराज की।

नगरपालिका जब तक 'नरक-पालिका' न बन जाय नगरपालिका कैसी!

सड़क जब तक कुएं का रूप अख्तियार न कर ले तबतक अधिकारियों और ठेकेदारों की मिली भगत कैसी! आधुनिक वृहन्नलाओं की जेबें खाली होती हैं, किंतु आंखों पर काले चश्मे अवश्य रहेंगे।

सूर तुलसी की रचनाओं पर लिखी गयी पैरोडियां वर्तमान विसंगतियों और समस्याओं को व्यंग्यात्मक शैली में प्रस्तुत करती हैं। अवधी और खड़ी बोली में कविता छंदों में लिखी अधिकांश कविताएं भले ही आज की रचना शैली से तादाम्य स्थापित नहीं करती हों, किंतु लीची और नारियल, कुम्हड़ा और मूली जैसे प्रयोग रचनाओं को नयी ताजगी देते हैं। पाठकों का भरपूर मनोरंजन करते हैं।

—सच्चिदानंद सिंह समीर

* * *

***नर्मदा (काव्य)* कवि : अनंतराम मिश्र 'अनंत'; प्रकाशक : साहित्य रत्नालय, श्रद्धानंद पार्क, कानपुर; मूल्य : ४० रुपये ।**

नर्मदा को कवि ने एक चिरकुमारी प्रणयवंचिता के रूप में पेश किया है। पूरी पुस्तक आत्मकथनात्मक है— यानी नर्मदा स्वयं अपनी जीवनी प्रस्तुत करती है। साहित्य में यह एक सर्वथा नवीन प्रयोग है। अनन्त की योजना है कि गोदावरी, कृष्णा और कावेरी पर भी ऐसे ही काव्यग्रन्थ प्रस्तुत किये जायें। यमुना, सरयू एवं गंगा पर उनकी ऐसी ही काव्यकृतियां रचित तथा प्रकाशित भी हो चुकी हैं। योजना सराहनीय अवश्य है— पर कौमार्य-व्रत नारी- मनोविज्ञान के अनुभव के विरुद्ध प्रतीत होता है।

यह कहा नहीं जा सकता कि 'नर्मदा' जीवन के लिए कोई उदात्त दृष्टि-संकेत नहीं दे रही है या इसमें कोई नया जीवन-दर्शन नहीं प्रतिपादित है। मगर यह जरूर कहा जा सकता है कि इसमें बहुत कुछ पोशीदा है। मंन्थन करने से ही अमृत की प्राप्ति सम्भव है। साहित्य समुद्र जैसा है। मन्थन जरूरी है तभी कोई रत्न हाथ लगेगा।

'परिशिष्ट' शीर्षक से पुस्तक के अन्त में अनन्त ने जन श्रुति पर आधारित एक सुन्दर आख्यानिका भी काव्यबद्ध की है, जिसमें नर्मदा-शोण और जोहिला की प्रेमकथा है।

'नर्मदा' में अनेक काव्य पंक्तियां चिरस्मरणीय हैं। जैसे 'नारी एक खिलौना है नर के लिए, खेले जी चांहे तोड़े सब ठीक है।' 'क्या शिव ही विषपान करते सर्वदा। प्रश्न करो यदि, तो स्रष्टा भी मौन है'

—आनंद शंकर माधवन

* * *

आंखों के रोग - बचाव और उपचार
डॉ. राजेन्द्र कृष्ण कपूर; हिन्दी संपादन: डॉ. सुकभाल जैन, सन्मति प्रकाशन, बम्बई - ४, मूल्य : १०० रुपये।

नव रस की सशक्तवाहिका - आंखें। का सब कुछ झलकता-छलकता रहता है इन नेत्रों में। तो दिल के इस दर्पण को स्वस्थ - सक्षम कैसे रखें? इस प्रश्न का सटीक उत्तर मिलेगा — डॉ. आर. के. कपूर की सद्यः प्रकाशित पुस्तक "आंखों के रोग - बचाव और उपचार" में।

१३६ पृष्ठ की इस पुस्तक की सबसे बड़ी विशिष्टता यह है कि यह उस डॉक्टर की रचना है, जो नेत्र विषयक ज्ञान और अनुभव दोनों का धनी है। बम्बई अस्पताल से अरसे से जुड़े लेखक — डॉ. कपूर भारत के जाने-माने नेत्र-विशेषज्ञ और शल्य-चिकित्सक हैं।

नेत्र उपचार के नवीनतम अनुसंधानों और तकनीकियों को जानने-समझने के लिए वह कई बार अमेरिका, इंग्लैंड, रूस, जर्मनी, जापान आदि देशों का भ्रमण कर आये हैं। इस उपलब्ध ज्ञान और अनुभव का उपयोग वह बरसों से जन-सेवा के लिए करते चले आ रहे हैं।

इस पुस्तक में कुल चौंतीस अध्याय हैं, अधिकांश लघु काय। इनमें आंख के सभी पहलुओं की सरल, किन्तु वैज्ञानिक विवेचना की गयी है। आंखों की तकलीफों से बचने के लिए हमें क्या-क्या सावधानियां बरतनी चाहिये, उनमें यदि कोई रोग पनपने लगे तो उसे कैसे रोका जाये अथवा सही इलाज या राहत के लिए नेत्र-विशेषज्ञ से कब और कैसे मदद ली जाये इन सबका समुचित मार्ग-दर्शन उपलब्ध है इस कृति में। लोग नेत्र-विषयक सही जानकारी पायें और भय तथा दकियानूसी परम्पराओं से दूर रहें, इस बारें में भी इसमें ज़रूरी सलाह दी गयी है।

जहां तक मैं जानता हूं, हिन्दी में यह प्रथम पुस्तक है, जिसमें इतनी सहज और सुबोध शैली में आंखों में होने वाली विविध बीमारियों का विशद, गहन और वैज्ञानिक विवेचन हुआ है। मोतिया-बिन्दु, ग्लोकोमा, भेंगापन, कार्निया का प्रतिरोपण, रेटिना के रोग, आंख के आम संक्रामक रोग आदि का वैज्ञानिक वर्णन तो इसमें हुआ ही है, साथ ही आम रुचि की बातें भी – जैसे निकट दृष्टिता, चश्मे और कान्टेक्ट लेन्स, दैहिक विकारों का आंखों पर प्रभाव, नेत्र-व्यायाम, आंखों की विभिन्न चिकित्सा पद्धतियां आदि भी अछूती नहीं रह गयी हैं। पढ़ाई-लिखाई के समय प्रकाश-व्यवस्था कैसी हो, टी.वी. फिल्म आदि कैसे देखें, और आंखों में धूल, धुआं अथवा रेत पड़ जाने पर क्या उपचार करें, इन सबकी भी इसमें जरूरी जानकारी दी गयी है।

संक्षेप में यदि हम इस मध्य काय पुस्तक को 'नेत्र-ज्ञान-कोष' कहें, तो शायद अतिशयोक्ति नहीं होगी।

एक बात और। डॉ. कपूर की इस बहुआयामी रचना में सरलता और निपुणता - इन दोनों का बड़ा मनोहारी मिश्रण हुआ है। यदि एक ओर भाषा में सहज प्रवाह है, तो दूसरी ओर तकनीकी ज्ञान की अजस्र धारा। और इन दोनों का संयोग इस पुस्तक को पठनीय ही नहीं, संग्रहणीय भी बना देता है। हां, अतितकनीकी विषय को समझाने के लिए लेखक को कहीं-कहीं पारिभाषिक शब्दों का प्रयोग अवश्य करना पड़ा है, पर वह अपरिहार्य था।

पुस्तक की छपाई, उसका कलेवर सभी नयनाभिराम हैं। बीच-बीच में दिये ज्ञानवर्द्धक चित्र कथ्य को और ग्राह्य बना देते हैं। किताब के आकार-प्रकार को देखते हुए, महंगाई के इस युग में उसका मूल्य भी अधिक नहीं। 'बहुजन हिताय, बहुजन सुखाय' लिखी गयी इस अनूठी कृति के लिए हिन्दी जगत सचमुच डॉ. कपूर का अनुग्रहीत रहेगा।

– समर बहादुर सिंह

एक और सीता

□ शकुन्तला वर्मा

उस दिन मेरा ऑफ़ डे था। खाना बनाकर चौका समेट रही थी कि देखा सामने दीपशिखा खड़ी है। छुट्टी के दिन अचानक उसे आया देख मैं चौंक पड़ी। सहसा मेरे मुंह से निकला – 'अरे शिखा तुम? आज कैसे छुट्टी के दिन निकल पड़ी?'

'क्यों छुट्टी के दिन आना मना है' – हंसकर उसने मुझसे पूछा।

'नहीं मेरा यह मतलब नहीं था। आज संजीव और बच्चे घर पर होंगे, इसलिए पूछा' – कह मैं खिसियाकर चुप हो गयी।

'देख इला, संजीव मेरे पल्ले से तो बंधे नहीं हैं, जो सारा दिन उन्हें पकड़े बैठी रहूं। नंदिता, वंदिता मां-पापा के साथ दिल्ली गयी हुई हैं। सोचा तुम अकेली होगी तो चली आयी।'

'सच शिखा, तुम्हें मेरा कितना ख़्याल रहता है' – कह मैं उसके लिए गैस पर चाय का पानी रखने लगी।

मुझे चाय बनाते देख वह बोली- 'जाओ हाथ-मुंह धोलो। तब तक चाय मैं बनाये लेती हूं।'

दोपहर खाना खाकर हम दोनों देर तक इधर-उधर की बातें करते रहे। अचानक दीपशिखा ने पूछा – 'सच-सच बताना, इला क्या इतने सालों बाद भी तुम यहां एडजस्ट नहीं कर पायी हो?'

'नहीं शिखा, शादी के बाद हृदय ने कभी इसे अपना घर स्वीकार नहीं किया। आज भी लगता है मानो मुसाफ़िरखाने में ठहरी हूं। क्या करूं मन को बहुत समझाती हूं पर न वह असित को भुलाने को तैयार है, न अपने घर को। नंदी और बिन्नू न होतीं तो पता नहीं मैं जीवित होती भी या नहीं' कहते-कहते मेरी आंखों में आंसू डबडबा आये।

'मुझसे तो तुम ही अच्छी हो, इला। कम से कम विवाहित जीवन की थोड़ी ही सही, लेकिन मीठी यादें तो हैं तुम्हारे पास। जिनके सहारे तुम जी रही हो और

एक मैं हूं' – कहते वह सहसा खामोश हो गयी।

'क्यों शिखा, क्या बात है? बताओ न प्लीज़। तुमने तो मुझे उलझन में डाल दिया–' मैंने जिज्ञासा से पूछा।

'सुनकर क्या करोगी इला? तुम्हारे पास अपना ही गम क्या कम है, जो अपनी बात कह तुम्हें और दुखी करूं'।

'इसके मतलब तो यह हुए कि तुम मुझे अपना नहीं समझतीं। तभी मुझसे छिपा रही हो। बताओ न, शिखा, आखिर बात क्या है?'

कुछ क्षण वह मूक बैठी रही। जैसे दुविधा में सोच रही हो कि कहे या न कहे। फिर सहज होने का प्रयास करते हुए बोली – 'इला, तुम्हीं एक मेरी अपनी हो। तभी तुम्हारे सामने अनजाने मुंह से निकल गया। नहीं तो विवाह के इक्कीस वर्षों में सुख क्या होता है, मैंने नहीं जाना। लेकिन किसी के सामने एक शब्द न कहा। रंजीत और सुजीत के भविष्य की खातिर आज भी एक छत के नीचे पत्नी की तरह संजीव के साथ रह रही हूं।'

'लेकिन शिखा, तुम्हारी जैसी सुन्दर, सुशील, गुणवती पत्नी कितनों को मिलती है? संजीव को तो अपने भाग्य सराहने चाहिये थे कि तुम उसकी पत्नी हो फिर.....।'

'जिसे घर के बजाय बाहर की दुनिया सुहाती हो उसके लिए क्या कहोगी?' थामी संजीव.... इसके आगे मेरे मुंह से शब्द न निकले।

एक पल मुझे निहार वह बोली– 'इला, तुम खुशनसीब थीं जो असित ने तुम्हें इतना प्यार दिया कि उसे सम्बल बना तुम जीवन-नैया सहज रूप में ढो रही हो। लेकिन संजीवं वह.... वह तो....' कहते-कहते उसका चेहरा विवर्ण हो गया।

'तुम कह क्या रही हो, शिखा?' मैंने आश्चर्य से पूछा।

'जो कुछ कह रही हूं सत्य कह रही हूं। तुम विश्वास नहीं करोगी। विवाह के चन्द महीनों बाद ही संजीव अपनी एंग्लो-इण्डियन गर्ल-फ्रैंड को घर में रहने ले आये थे। अगर उस दिन मैंने चण्डी का रूप न धारण किया होता तो आज वह सौत बनी मेरे सीने पर मूंग दल रही होती।'

'तुम्हारे घर वालों ने विवाह से पहले संजीव के बारे में पता नहीं किया था?'

'दरअसल विवाह का प्रस्ताव मामाजी ने इंदु का दिया था। एक रिश्तेदार की शादी में इन लोगों ने मुझे देख लिया। बस मेरी खुबसूरती मेरे भाग्य फूटने का कारण बनी। उधर से मेरे लिए पैगाम भेजा गया। पिताजी मेरे विवाह की जल्दी में थे। सोचा जब इंदु की बात चल रही थी तो सब ठीक ही होगा। मैंने बहुत आफ़त उठायी कि जब इंदु की बात चल रही है तो मैं वहां नहीं करूंगी। मामाजी

से पूछा गया तो उन्होंने सीधा सा जवाब दिया कि उन्हें क्या एतराज़ हो सकता है। चाहे भाई का बोझ हल्का हो या बहन का। बस आंख मूंद ब्याह दी गयी।'

'मां-पिताजी ने अपना बोझ उतार कर तुम्हारे गले में जीवन भर को डाल दिया। भाग्य की भी क्या विडम्बना है?'

'तुम ठीक कह रही हो, इला। मेरी तक़दीर में शायद यों ही घुट-घुट कर जीना लिखा है। वह लोग तो कन्यादान कर उद्धार पा गये। और मैं मुंह सिले सारे अत्याचार-अनाचार सहती रही। बरसों किसी के सामने जाहिर नहीं किया कि मेरे ऊपर क्या बीत रही है? जब तक अकेली थी चुपचाप सब सहती रही। लेकिन जब रंजीत और सुजीत बड़े होने लगे तो उनकी ज़रूरतें बढ़ीं। स्कूल की फ़ीसें, ड्रेस, किताबें-कॉपी, रोज़मर्रा के खर्चे। ऊपर से गृहस्थी। संजीव सिर्फ़ दस रुपये रोज़ ख़र्च को देते थे। इतने में तो घर का ख़र्च पूरा डालना मुश्किल होता था। मजबूरन टाइपिंग सीख कर एक प्राइवेट कंसर्न में काम करने लगी। मेरी आत्मनिर्भरता ने संजीव के अहम् को चोट पहुंचायी। ऊपर से वह ख़ामोश रहे। फिर धीरे-धीरे मुझे विश्वास में ले मेरी वह नौकरी छुड़वा दी।

कुछ दिन तो सब ठीक-ठाक चला। मुझे लगा शायद मेरे दिन भी बदले हैं। लेकिन जल्दी ही मेरा भ्रम टूट गया। संजीव का वही पुराना रवैया शुरू हो गया था। घर देर से लौटना। रात-रात बाहर रहना। औरत संजीव की कमज़ोरी है। उसके लिए वह किस हद तक गिर सकता है। तुम सोच भी नहीं सकतीं।'

'लेकिन शिखा, रंजीत तो डाक्टरी पढ़ रहा है और सुजीत बी.ए. में है। इनकी पढ़ाई कैसे चल रही है?' पूछे बिना मैं रह नहीं पायी।

वह बोली – 'बहुत दिनों तो मैं मां-पिताजी से सब कुछ छिपाये रही। लेकिन पता नहीं मामाजी को कैसे सब पता चल गया। तबसे पिताजी रंजीत की पढ़ायी का ख़र्च उठाये हुए हैं। सुजीत को मैं अपने प्राविडेंट फंड के रुपयों से पढ़ा रही हूं।'

'तुम संजीव से कहती क्यों नहीं कि इतने में तुम्हारा और बच्चों का खर्च पूरा नहीं पड़ता।'

'उसका तो सदा घिसा-पिटा एक ही जबाब रहता है कि जितनी बिज़नेस से आय होती है, उसमें से जो कुछ बन पड़ता है वह देता तो हूं।'

'मगर शिखा, तेरे ससुरालवाले इतना देख-सुनकर कुछ नहीं कहते?'

'एक बार एक लड़की को लेकर घर में फिर हंगामा हुआ था। तब रंजीत और सुजीत छोटे थे। मेरे मना करने पर इन्होंने मुझे घर से बाहर निकाल दिया था। तब इनके छोटे भाई सुमीत ने कहा कि भाभी इस दुष्ट को छोड़ दो। यह कभी नहीं सुधरेगा। आज से तुम्हारी और

बच्चों की ज़िम्मेदारी मैं लेती हूं। मेरे कौन आगे-पीछे है।'

'फिर ?'

'फिर क्या ? उस समय मुझे लगा था कि दुनिया क्या कहेगी ? पति के होते हुए देवर के साथ रहती है। बच्चे बड़े होंगे तो क्या सोचेंगे कि पिता के होते चाचा के संरक्षण में क्यों पले ? बस मैंने इंकार कर दिया। कहा आइन्दा ऐसी बात ज़बान पर मत लाना। उसने इस बात का इतना बुरा माना कि घर छोड़ कर चला गया। चलते समय कह गया, 'अब कभी नहीं आऊंगा। मुझसे यह सब बेइंसाफ़ी देखी नहीं जायेगी। न सामने रहूंगा न बुरा लगेगा।

'इला, सुमीत का घर छोड़ना मेरे लिए अभिशाप बन गया। पहले ही संजीव से कौन से अच्छे सम्बन्ध थे। इस हादसे ने आग में घी का काम किया। अब वह बात-बात पर मुझे सुमीत के साथ लांछन लगाता है। कहता है मेरे ही कारण उसके भाई को घर छोड़ना पड़ा। मैंने ही उसे अपने प्रेम-जाल में फांसा था। सारी फसाद की जड़ मैं हूं।'

'और तुम सब कुछ चुपचाप सुन लेती हो ?'

'क्या करूं, इला ? जब तक रंजीत और सुजीत बड़े नहीं हो जाते मेरे पास यहां रहने के और कोई चारा नहीं है। मैं नहीं चाहती कि हम दोनों के झगड़ों में बच्चों से उनका बचपन और पिता का संरक्षण छिन जाये। तुम्हीं सोचो उन मासूम ज़िन्दगियों से खिलवाड़ करना कहां का न्याय होगा ?'

'तुमने कभी अपने लिए भी सोचा है ? जिस माहौल में रह रही हो क्या मालूम कब ऐसे मोड़ पर आ खड़ी हो कि स्वयं एकाकी जीना पड़े तब....।' कह मैं ख़ामोश हो गयी। लगा जैसे शब्द मेरे गले में फसनें लगे हों।

वह सहज होने की कोशिश करते हुए बोली— 'क्या तुम्हें नहीं लगता कि मैंने इन पहलुओं पर सोचा होगा ? सुमीत के जाने के बाद पार्ट-टाइम काम करके बी.ए. फिर एम.ए. किया। आज भी जैसे बनता है अपने और बच्चों के गुज़ारे लायक कमा ही लेती हूं।'

फिर कुछ पल ठहर कर बोली — 'कुछ भी कहो इला, लाख असित अब इस संसार में नहीं हैं, लेकिन उसकी मधुर स्मृतियों के सहारे तुम मुझसे बेहतर जीवन जी रही हो। ऊंचे पद पर काम करती हो। समाज में तुम्हारी प्रतिष्ठा है। नंदी और विन्नी को अपने मन-माफ़िक पाल रही हो। इससे बड़ा आत्मसंतोष और क्या हो सकता है ? और यहां पति के होते हुए भी...।' कह उसने रुमाल से अपनी गीली आंखें पोंछ लीं।

मैं अवाक् ठगी-सी बैठी रह गयी। ऊपर से सदा हंसने-मुस्कराने वाली दीपशिखा का जीवन कितने झंझावातों से घिरा है, उसने कभी आभास तक न होने
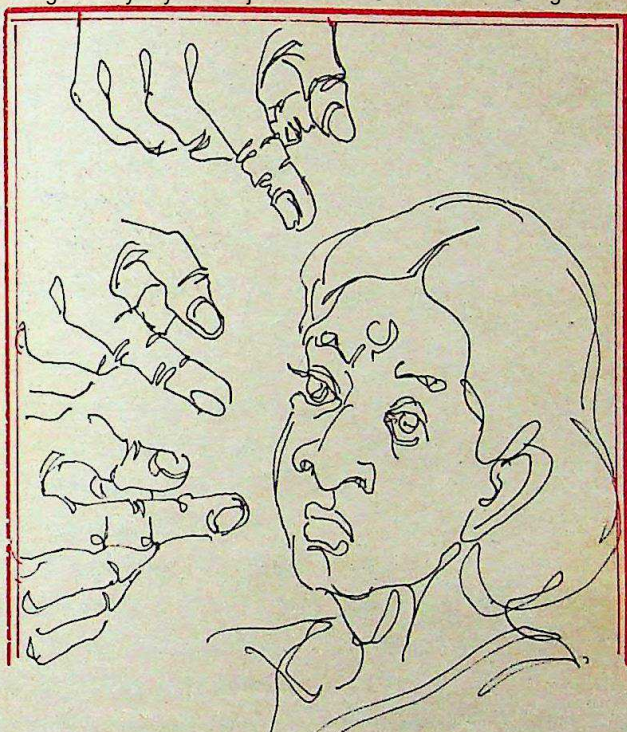
दिया। अपनी संतान के लिए यह कितना बड़ा त्याग है।

* * *

उस दिन कुछ देर बाद वह तो चली गयी। लेकिन मैं कई दिनों तक सहज न हो पायी। बार-बार उसका मायूस चेहरा मेरी आंखों के आगे आ जाता। लगता ईश्वर के यहां भी न्याय नहीं है। नहीं तो शिखा को ऐसा नारकीय जीवन बिताने पर क्यों विवश होना पड़ता?

बड़ी से बड़ी पीड़ा या दर्द को समय की पर्त अपने नीचे ढांक लेती है। लगता है हम उस पीड़ा को भूल चले हैं। मैं भी अपने घर-परिवार और नौकरी को लेकर व्यस्त हो गयी। दिन बीतते गये। एक के बाद एक। समय का चक्र कब थमता है।

एक दिन आफ़िस में मैं कुछ ज़रूरी फाइलें निबटा रही थी। तभी चपरासी ने आकर कहा — 'दीपशिखा मेमसाहब आपसे मिलना चाहती हैं।'

मैंने फ़ाइलें एक ओर खिसकाते हुए कहा— 'उन्हें भेज दो। और हां, कैंटीन में दो चाय भेजने को कह देना।'

कुछ सेकिंड बाद दीपशिखा मुस्कराती

हुई मेरे सामने थी। देखते ही बोली– 'तुम्हें यहां आकर डिस्टर्ब किया है। लेकिन क्या करती, इला, घर आने का समय मेरे पास नहीं था। रात की गाड़ी से दिल्ली जाना है। दो दिन बाद की फ्लाइट है। अभी वीज़ा और क्लीयरन्स सभी कुछ लेना बाकी है।'

अचानक मेरे मुंह से निकला– 'क्या तुम स्टेट्स जा रही हो?'

'हां, मेरा छोटा देवर सुदीप आया है। उसकी पत्नी मालिनी काफ़ी दिनों से बीमार है। बच्ची छोटी है। इतना पीछे पड़ा कि इंकार नहीं करते बना। संजीव ने भी कहा कि जब कह रहा है तो चली क्यों नहीं जातीं–' कह कर वह चुप हो गयी।

'मगर रंजीत, सुजीत इन सबकी देखभाल कौन करेगा?' मैंने जिज्ञासा से पूछा।

'क्यों उनके पापा तो हैं? चलो इसी बहाने बाप-बेटे नज़दीक आयेंगे। बीच की दीवार तो हटी जा रही है–' उसने हंसते हुए कहा।

'कहीं कोई और चक्कर तो नहीं है जो इतने उदार भाव से जाने को कह दिया?'– मैं अपने मन की शंका दबा न पायी।

'क्या पता? बात जब हद से ज़्यादा बढ़ जाती है, तब मालूम होती है। फिर अब इन बातों से कोई खास फर्क मुझे नहीं पड़ता। आदी जो हो गयी हूं'– उसने निर्विकार भाव से उत्तर दिया।

फिर घड़ी पर नज़र डाल उठते हुए बोली– 'अब चलूंगी। थोड़ी पैकिंग बाकी है। जाकर खत डालूंगी। जवाब देना। और देखो मेरे पीछे अपना और बच्चियों का ख्याल रखना।'

उसके स्नेह पूरित स्वर ने मुझे कहीं भीतर तक भिगो दिया। उसे गेट तक छोड़ कर लौटी तो फिर काम में मन नहीं लगा।

* * *

शिखा को गये साल से ऊपर होने आ रहा था। उसके पत्र नियमित रूप से आते थे। उन्हीं से पता चला कि रंजीत और सुजीत को भी उसने अमेरिका बुला लिया है। रंजीत अस्पताल में अटैच हो गया है। सुजीत ने कम्प्यूटर कोर्स करके एक फर्म ज्वाइन कर ली है।

कुछ दिनों बाद दोनों के विवाह का समाचार मिला था। लगा था चलो देर से सही पर शिखा की तपस्या सफल हुई। उसके जीवन में ठहराव तो आया।

आज जब आफिस पहुंची तो मेज पर सरकारी डाक के साथ एक 'एयर-मेल' लिफ़ाफ़ा भी रक्खा था। राइटिंग से ही समझ गयी शिखा का पत्र है। लगभग दो साल के अन्तराल के बाद अचानक उसका पत्र देखकर पहले उसे ही खोला। लिखा था–

इला, तुम मुझसे बहुत नाराज़ होगी! सोचती होगी कि सुख पाते ही मैंने तुम्हें भुला दिया। पर व्यस्त ज़िन्दगी में अपने

कहने को कुछ क्षण भी नहीं मिलते थे।

एक रात खाने की मेज़ पर रंजीत ने किसी बात से नाराज़ होकर सुमीत के साथ चरित्रहीनता का कलंक लगाकर जो मेरा अपमान किया। उससे लगा बीच चौराहे पर किसी ने मेरी अस्मिता को चुनौती दी हो।

इतना सब हो जाने के बाद उस घर में ठहरने का औचित्य क्या था?

पहले समझ में न आया इस अजनबी जगह में कहां जाऊं। सहसा मोना की याद आयी। वह मेरे साथ बी.ए. में पढ़ी थी। बस उसी के पास न्यूयार्क चली आयी। अब मैं न भारत लौटना चाहती हूं न अमेरिका में रुकना। उसी ने कोशिश करके मुझे आस्ट्रेलिया में केयर-टेकर की नौकरी दिलवा दी है। अगले सप्ताह वहां चली जाऊंगी।

अब यहां किसके लिए रुकूं? जिन बेटों की ख़ातिर सारे जीवन पति की उपेक्षा, निरादर, अपमान सब मूक बनी सहती रही, वे ही आज इतने पराये हो गये कि, दूसरे घर की बेटियों के सामने अपनी मां को निर्वस्त्र करते, उन्हें एक क्षण को भी संकोच न हुआ। पिता द्वारा लगाया झूठा लांछन आज उनके लिए सबसे बड़ा सत्य हो गया। कुछ कहने से पहले उन्होंने इतना भी नहीं सोचा कि मां की पवित्रता पर कौन सी कीचड़ उछाल रहे हैं!

इला, इतनी अग्नि-परीक्षाओं से गुज़रने के बाद यह निष्कासन ही भला लग रहा है। कम से कम नये लोगों के बीच कोई मुझसे मेरा अतीत तो पूछने नहीं आयेगा। वर्षों जिस ममता के मोह-पाश में बंधी यंत्रवत सब कुछ झेलती रही, उन बन्धनों से मुक्त हो, स्वावलम्बी जीवन जीकर, अपने व्यक्तित्व को ढूंढ़ने का प्रयास करूंगी।

शिखा का पत्र मेरे हाथ में है। और मन हज़ारों मील दूर विदेश में बैठी सखी दीपशिखा के आस-पास मंडरा रहा है। जिसने अपनी संतान के जीवन में प्रकाश भरने के लिए, स्वयं तिल-तिल जल कर अपने अस्तित्व तक को दांव पर लगा दिया। वे ही वक्त निकल जाने पर उसका वजूद तक मिटाने पर तुल गये। यह कैसा न्याय है?

सतयुग में राम ने अग्नि-परीक्षा के बाद भी सीता को लोगों के कहने से, बिना अपराध उनका परित्याग कर, उन्हें वनवास दे दिया था। और आज कलियुग में समाज की तो जाने दें, पति के साथ पुत्रों ने भी निर्दोष, गंगाजल-सी पवित्र नारी को दंडित कर, आजीवन वनवास भोगने को विवश कर दिया। सोचती हूं तो हृदय कांप उठता है। लगता है सीता को अपनी निर्दोषता सिद्ध कर, माथे पर लगा कलंक मिटाने को और कितने जन्म लेने होंगे।

— कोठी राजा इमाम बक्श,
मशकगंज, लखनऊ - २२६ ०१८.

हिंदी कहानी

अनाम रिश्ते

डॉ. किशोरी लाल त्रिवेदी

आस-पास में मनाये जाने वाले बच्चों के जन्म दिवस पर वह प्रायः आया करता। उसके आते ही वातावरण में चारों ओर निस्तब्धता छा जाती। भयभीत मन एवं कांपते हाथों से माताएं अपने बच्चों को उसकी गोद में दे देतीं जिन्हें वह प्यार से चूमकर अपने चौड़े वक्ष से काफी देर तक लगाये रहता। सिर पर हाथ फेरता और भाव विभोर होकर अपनी रुंधी हुई आवाज और टूटे किन्तु गम्भीर शब्दों में आशीर्वाद देने लगता, 'खुश रहो, कालू! जिन्दगी.... में.... खूब फूलो-फलो।.... मुझ जैसे.... नीच इन्सान का तुम पर साया भी न पड़े।' इसके उपरान्त उसकी आंखें सजल हो जातीं। अपनी जेब से एक विचित्र प्रकार का लॉकेट, जिस पर चिपके कागज पर लिखा रहता 'अभागे बाप की भेंट', निकाल कर वह बच्चों के गले में बांध देता। बच्चों की माताओं की उत्सुक फैली बाहों में सौंप कर वह अपनी हथेली से आंखें पोंछता हुआ उत्सव मंडप से बाहर चला जाता और द्वार पर प्रतीक्षारत खड़े अपने साथियों सहित घोड़े पर सवार होकर आस-पास में फैले अंधकार में विलीन हो जाता। उसके जाते ही माताएं किसी अनिष्ट की आशंका से उसके द्वारा दी गयी भेंट को बच्चों के गले से नोंच फेंकतीं और अपने बालकों को अपनी धड़कती छाती से लगा उसके लिए ईश्वर से मंगल कामना करतीं। इसी के साथ उत्सव में खोया हुआ हर्षोल्लास धीरे-धीरे पुनः लौट आता। उसके खिलाफ पुलिस में सूचना देने की कीमत कई लोगों को अपनी जान देकर चुकानी पड़ी थी। इसी भय से उसके विपरीत मुंह खोलने की हिम्मत किसी में नहीं थी। इसके अतिरिक्त स्थानीय पुलिस उससे अपना बंधा हिस्सा प्राप्त करती थी। और कभी-कभी उसके
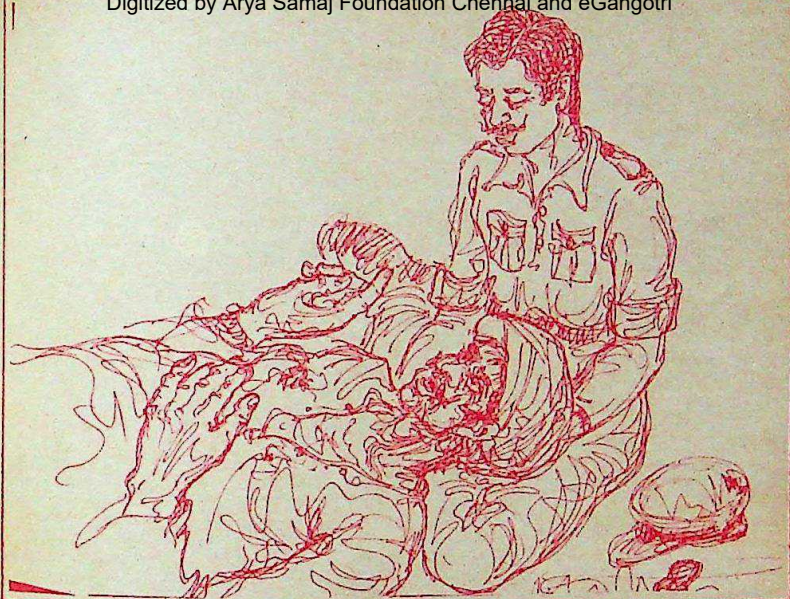
भाग जाने में उसकी सहायता भी करती या उत्सव एवं घटनास्थलों पर उस समय पहुंचती जब वह वहां से कोसों दूर निकल जाता।

ठाकुर राघव प्रताप सिंह की हवेली रंग-बिरंगे बल्बों से जगमगा रही थी। आज उनके पौत्र की दूसरी साल गिरह थी। मेहमानों का आना-जाना बन्द-सा हो चुका था। केक एवं भोजन सामग्री यथास्थान मेजों पर सजी थीं। नौकर-चाकर दौड़-धूप छोड़ रसोईघर में खाली बैठे सुस्ता रहे थे। उदास बैठा हुआ पुरुष समाज समय व्यतीत करने के उद्देश्य से देश की वर्तमान राजनीतिक स्थिति से लेकर अपने निजी कारोबार के बारे में बातचीत कर रहा था। स्त्री वर्ग फैशन के क्षेत्र में हुए आधुनिकतम आविष्कारों की आलोचनात्मक व्याख्या, मेकअप के लिए ईजाद की गयी नयी-नयी वस्तुओं की ऊंची-नीची कीमतों, साड़ी-सलवार पहनने के नये-नये तौर तरीकों, भिन्न-भिन्न प्रकार के व्यंजनों को तैयार करने की नयी — नयी विधियों एवं अपने बच्चों एवं पतियों की नटखट आदतों और शरारत भरी शिकायतों जैसे महत्वपूर्ण विषयों की धज्जियां उड़ाने में रत था। तैयार व्यंजनों से उड़ती हुई मनमोहक सुगंध वायु के साथ वातावरण में तैर कर सभी के मुंह में पानी भर रही थी। कार्यक्रम प्रारम्भ होने में कुछ देर थी

क्योंकि सभी लोग उत्सुकतापूर्वक [illegible] के मशहूर डाकू झल्लासिह के आने की प्रतीक्षा कर रहे थे। अचानक घोड़ों की टापों की आवाज सुनायी दी और वातावरण में थोड़ी-सी फुसफुसाहट के उपरान्त सन्नाटा छा गया। अन्य जन्मोत्सवों के समान ही झल्लासिह दोनों ओर खड़ी भीड़ के मध्य बने संकरे रास्ते से सामने बिछी हुई चौकी पर गया और एक बार अपने चारों ओर खड़ी जनता को गर्व के साथ इस प्रकार देखा जैसे कोई राजा अपनी प्रजा को देखता है। कुछ ही क्षण के उपरान्त नियमानुसार भयभीत माता ने अपने बच्चे को उसकी गोद में दे दिया। लेकिन आज जब वह बच्चे को मां की आतुर बांहों में देकर आंसू पोंछता हुआ वापिस लौट ही रहा था कि भीड़ में से निकलकर सामने आते हुए व्यक्ति के इन शब्दों ने – 'हैंड्स अप! अगर किसी ने भी हिलने की कोशिश की तो गोलियों से भून दिया जायेगा!' उसे चौंका दिया। झल्लासिह का सधा हुआ दाहिना हाथ अपनी फेंट में लगे रिवाल्वर को कुरते की आस्तीन से छुपाता हुआ ऊपर उठ गया। उसने जानबूझकर रिवाल्वर का प्रयोग सामान्य पोशाक में सामने खड़े एस.पी. राजीव पर नहीं किया था। उसकी विस्मित आंखें टकटकी बांधकर आगे बढ़ते हुए पुलिस अफसर को देखती रहीं। ऐसा प्रतीत होता था मानो झल्लासिह की पैनी निगाहें एस.पी. राजीव को देखकर [illegible] किसी छिपे हुए रहस्य को खोजने के लिए आकुल हों। हाथ ऊपर उठाते समय छिपे हुए रिवाल्वर को देख एस.पी. साहब के रिवालवर से दो गोलियां दगीं और झल्लासिह के सीने में जाकर समा गयीं। शारीरिक पीड़ा से तड़पता हुआ झल्ला दोनों हाथों से अपना सीना पकड़कर जमीन पर बैठ गया लेकिन उसकी आंखें अभी भी सामने खड़े हुए पुलिस अफसर पर जमी थीं। रिवाल्वर उसने अपने हाथ से जमीन पर फेंक दिया था।

जख्मों से बह-बह कर उसका गर्म खून उसके शरीर को भिगोता हुआ फर्श पर फैलता जा रहा था। एस.पी. राजीव न जाने क्यों उन आंखों के जादू से बंधा उसकी और खिंचा चला आ रहा था! उसने अपने आप पर नियंत्रण पा सामने दम तोड़ते झल्लासिह से एक प्रश्न किया – 'इस तरह मुझे क्यों देखते हो, झल्लासिह?' ''तुम... तुम... दीनारपुर के सेठ... रघुनन्दन प्रसाद के बेटे... राजीव हो... न?' झल्लासिह की आवाज लड़खड़ाने लगी थी।

'हां, हूं! लेकिन इससे तुम्हारा क्या मतलब?'

इतना सुनकर झल्ला के चेहरे पर प्रसन्नता की एक लहर-सी दौड़ गयी। उसकी निस्तेज पथराई आंखों में एक रहस्यमय चमक छा गयी। अतीत का एक-एक संस्मरण चलचित्र के समान

उसके मस्तिष्क पर उभरता और मिटता चला गया।

*   *   *

आज से लगभग २५ वर्ष पूर्व इलाहाबाद में त्रिवेणी के संगम पर माघ पूर्णिमा के अवसर पर कुम्भ का विशाल मेला लगा था। उत्तर प्रदेश से ही नहीं, देश-विदेश से करोड़ों की संख्या में तीर्थयात्री इस पावन अवसर पर गंगा, यमुना एवं सरस्वती के पुनीत संगम पर स्नान करने आये थे। प्रयागराज में उमड़ते इस विशाल जन-समूह में गांव का एक मामूली भोला किसान झल्ला भी अपनी पत्नी एवं ३ वर्षीय पुत्र कालू के साथ पवित्र नदियों के जल में अपने जीवन के पाप धोने आया था। स्नान करते समय किसी ने इसका फूल-सा नन्हा बच्चा उठा लिया था। कितनी मन्नतों और जप-तप के बाद भगवान ने उसको यह बच्चा दिया था। उसको पाने के लिए पति-पत्नी ने न जाने कितने पीर-पैगम्बरों के मजारों में जा-जाकर सजदे किये थे और चादरें चढ़ाई थीं। कितने ही ओझाओं और धार्मिक पंडितों के दिये गये ताबीज गले में बांधने के बाद भगवान ने झल्ला की पत्नी की सूनी गोद खुशियों से भरी थी। कालू को पाकर झल्ला अपनी जिन्दगी के सब गम भूलकर निहाल हो गया था। उसके अंधकारमय निराश जीवन में आशा की एक किरण बनकर आया था कालू। कालू के साथ झल्ला अपनी बनावटी तोतली भाषा में घंटों तुतलाया करता, उसका घोड़ा बन जोर-जोर से हिनहिनाया करता। मेले में उसने अपने कालू को अपनी गोदी में, चक्करदानी हाथी पर न जाने कितनी देर झुलाया था। अपने बच्चे सहित जीवन में पहली बार एक फोटू भी खिंचवाया था। अपनी सामर्थ्य से बाहर उसने न जाने कितने रंगबिरंगे, छोटे-बड़े खिलौने खरीद कर अपना थैला भर लिया था। उसके अरमानों की दुनिया लुट चुकी थी। उसकी पत्नी उन खिलौनों को देख-देखकर खूब फूट-फूट कर रोयी थी। झल्ला के धरती-आसमान एक कर देने पर भी कालू नहीं मिल पाया था। दोनों पति-पत्नी उदास मन से रोते-धोते गांव लौटे थे। घर पहुंचकर उसकी पत्नी पुत्र-वियोग में ऐसी बीमार पड़ी कि कुछ ही दिनों पश्चात् दम तोड़ दिया।

मनुष्य जीवन भर जिसके लिए कमाता है, बुढ़ापे के जर्जर शरीर और थके कम्पित हाथों में पुनः नवीन शक्ति का संचार पाता है। पाप और पुण्य से धन कमाकर जिनके लिए एक-एक पैसा संजो-संजो कर रखने का प्रयास करता है। आज उन्हींने झल्ला का साथ छोड़ दिया था। उसकी छोटी-सी दुनिया उसी की आंखों के सामने बस कर उजड़ चुकी थी। सांसारिक जीवन से निराश झल्ला माया-मोह के बन्धनों से मुक्ति पाकर घर-बार छोड़ कर संन्यासी बन गया

था। एक दिन एक डकैती के जुर्म में पुलिस निर्दोष झल्ला को डंडे लगाती हुई थाने तक ले गयी थी। पुलिस के चंगुल से वह किसी तरह बच कर भाग निकला था। कुछ ही समय में भोला किसान झल्ला संन्यासी और संन्यासी से डाकू झल्ला सिंह बन गया था। उसने अपने अपराधी जीवन में केवल दो काम, जिनसे वह घृणा करता था, नहीं किये थे - प्रथम, उसने किसी अबला की लाज नहीं लूटी थी और द्वितीय उसने किसी अबोध बच्चे का अपहरण कर उससे मां-बाप का प्यार नहीं छीना था। धनवानों के लिए वह एक राक्षस था और गरीब उसे देवता मानकर अपने मन-मंदिर में उसकी आराधना करते थे। दुःख-सुख और शादी-विवाह के समय प्रायः वह उनकी आर्थिक सहायता करता रहता था। आसपास के गांव व कस्बों में मनाये जाने वाले बच्चों की वर्ष-गांठ समारोहों में वह जाया करता था। इन बच्चों में उसकी प्यासी आंखें अपने कालू की झलक देखतीं और वह दुःखी मन से, 'खुश रहो कालू! तुम्हारे... ऊपर मुझ जैसे नीच... न पड़े।' कहता हुआ किसी अज्ञात स्थान को लौट जाया करता।

* * *

आज से २२ वर्ष पूर्व घटित घटना उसके मानसपटल पर ऐसे अंकित थी जैसे कल की बात हो। दीनारपुर के सेठ रघुनन्दन प्रसाद के ५ वर्षीय पुत्र राजीव की वर्ष-गांठ के अवसर पर वह गया था। बच्चे को गोदी में लेकर जैसे ही उसने चूमा था, उसके माथे पर बने तिल के निशान को देखकर उसे अपने खोये हुए कालू को पहचानने में जरा भी कठिनाई नहीं हुई थी। रघुनन्दन को एकांत कमरे में ले जाकर अपने रिवाल्वर की नाल उसके सीने पर टिका कर अपनी स्वाभाविक आवाज में उसने कड़क कर पूछा था, 'बोल, कहां से मिला तुझे यह बच्चा?'

रघुनन्दन का चेहरा भय से पीला पड़ गया था। उसने कांपते हुए उत्तर दिया था, 'त्रिवेणी के संगम पर, कुम्भ के मेले में।' और इसी के साथ पुत्र-वियोग में छटपटाती, दम तोड़ती उसकी पत्नी, उसका उजड़ता हुआ हरा-भरा छोटा-सा संसार सब एक साथ उसकी आंखों में घूम गये। दैत्य के समान अपनी बड़ी-बड़ी खूंखार आंखों से कांपते हुए रघुनन्दन को घूर कर झल्ला ने गरज कर कहा था, 'मेरे अबोध कालू को चुराने वाले कुत्ते.... मेरी पत्नी के कातिल.... मेरी बसी-बसाई दुनिया उजाड़ कर बोल.... क्या मिला तुझे? इन्सान के रूप में छिपे हुए शैतान जिन्दा नहीं छोड़ूंगा तुझे...।'

'लेकिन.... लेकिन.... मुझे मारने से पहले सिर्फ मेरी एक बात और सुन लो, झल्ला!' कांपते किंतु कुछ स्थिर शब्दों में रघुनन्दन ने कहा था।

'बोल! क्या कहना चाहता है?'

झल्ला ने उसके गले पर लगे हाथ को कुछ ढीला करते हुए पूछा था।

'मेरे मरने के बाद क्या तुम जानते हो कि झल्ला, कि तुम्हारे कालू का क्या होगा...? शायद नहीं जानते...। मैं बताता हूं, मुझे मारने के उपरान्त तुम इसे यहां से ले जाओगे। इसे चोर और डकैत बनाओगे... और... फिर... और... फिर... कुत्तों की तरह पुलिस के हाथों एक दिन तुम्हारी तरह यह भी बेमौत मारा जायेगा... दुनिया इसके नाम पर थूकेगी... जीवन की खोज में यह दिन में सौ बार मरेगा, झल्ला! इसे एक पल के लिए भी चैन नसीब नहीं होगा... पुलिस के भय से बीहड़ जंगलों की खाक छानता फिरेगा।'

अपने घृणित जीवन की वास्तविकता सुन, झल्ला मूर्तिवत स्तब्ध-सा खड़ा रह गया था। अपने अस्तित्वहीन, पापमय, एवं समाज के द्वारा त्याज्य जीवन का प्रत्येक पहलू उसके सामने उभरने लगा था। माताएं उसके नाम का भय दिखा कर रोते हुए बच्चों को भयभीत कर चुप कराती थीं। अबलाएं उसके सम्मुख आने में घबराती थीं। लोग उसके पीठ पीछे उसके नाम पर थूकते थे। अपने बीते हुए अपराधी जीवन में उसने चैन का एक पल भी नहीं भोगा था। एक बार भटकने के बाद, लाख कोशिश करने पर भी वह जीवन के सही रास्ते पर नहीं आ सका था। उसके चेहरे पर हवाएं उड़ रही थीं। अनायास ही उसके मुंह से निकल पड़ा था, 'तो फिर...?'

'तो फिर ले जाओ अपने कालू को....। तुम्हारे रोते, भूख से बिलबिलाते खोये बच्चे को पाकर मुझ निःसन्तान की दुनियां आबाद हो गयी थी। कुछ दिनों के लिए, झल्ला! कालू को पुत्र रूप में पा कर हमारी सामाजिक प्रतिष्ठा ही नहीं, हम पति-पत्नी के मन में जीवन के प्रति चाह भी बढ़ गयी थी। हम निःसन्तानों को देखना सुहागवन्ती अपने लिए अपशकुन मानती थीं। कालू को पाकर हमारे पाप धुल गये थे। हमारे माथे पर लगा कलंक मिट गया था... तुम्हारे बच्चे को हृदय से लगा कर ऐसा लगा था मानों गंगा मैया ने मेरी उजड़ती हुई फुलवारी को सजाने के लिए नन्हा माली दे दिया हो... मेरी इन बुझी हुई आंखों में चमक लौट आयी थी, झल्ला...! कितने सुनहरे सपने सजाये थे मैंने इन आंखों में...। सोचा था बेटे को पढ़ाऊंगा, लिखाऊंगा। और एक दिन इस समाज, इस देश का एक सच्चा एवं प्रतिष्ठित नागरिक बनाऊंगा इसे... लेकिन हम बदनसीबों की दुनिया में धन तो है, औलाद का प्यार कहां? ले जाओ झल्ला इसे... हम मूर्ख किराये के मकान को अपना निजी मकान समझ बैठे थे। इसे बरबाद होने से बचाना, झल्ला... इसकी जिन्दगी कहीं अपनी तरह...।'

अबोध बच्चे की तरह, झल्ला शायद जीवन में पहली बार फूट-फूट कर रोया

था। शायद अपनी वास्तविकता का आभास भी उसे जीवन में पहली बार हुआ था। अपने दोनों हाथ जोड़कर उसने रघुनन्दन के पैरों पर गिर कर कहा था, 'कालू तुम्हारा है... कालू नहीं राजीव... राजीव तुम्हारा है रघुनन्दन! मुझ जैसे निकृष्ट व्यक्ति के जीवन में सुख कहां। मेरे पत्थर दिल में बाप का प्यार कहां? और फिर बन्दूक की नाल पर टिकी इस जिन्दगी का क्या भरोसा। न जाने बीहड़ों के किस गर्त में पुलिस की गोली का शिकार बन दम तोड़ दूं। मेरे इस नीच शरीर को दो गज कफन भी नसीब नहीं होगा, सेठ रघुनन्दन... समाज मुझे अपना दुश्मन समझता है। हरेक सभ्य आदमी मेरी सूरत से घृणा करता है...। राजीव तुम्हारे उपवन का फूल है, रघुनन्दन। मेरा इससे कोई नाता नहीं... कोई नाता नहीं...।' झल्ला की आवाज रुंध गयी थी। अपने हाथों से मुंह छुपाकर वह सुबकियां ले रहा था।

'तो... जाने से पहले एक वचन और देते जाओ, झल्ला। मेरे सामने कसम खाओ झल्ला, कि आज के बाद राजीव पर तुम्हारा साया भी नहीं पड़ेगा। तुम किसी को यह रहस्य भी नहीं बताओगे कि मेरा राजीव तुम्हारा कालू है। उसे जीवन में यह आभास भी नहीं होना चाहिए कि उसकी रगों में उस नीच व्यक्ति का खून बह रहा है जो मानव सभ्यता के नाम पर कलंक है।' रघुनन्दन गम्भीर स्वर में बोलता गया, 'राजीव मेरा होकर रहेगा और आज के बाद तुम्हारा उससे कोई सम्बन्ध नहीं होगा।'

मैं मां दुर्गा भवानी को साक्षी मानकर कसम खाता हूं रघुनन्दन, कि जीवन में कभी भी तुम्हारे बच्चे से मिलने की कोशिश नहीं करूंगा... लेकिन मेरी एक प्रार्थना...' झल्ला के हाथ अनायास फिर जुड़ गये। 'मान लो, रघुनन्दन...।'

'क्या? बोलो।'

'वर्षगांठ के अवसर पर खींचा गया राजीव का एक फोटो मेरे पास प्रतिवर्ष भेजते रहना, बस।'

झल्ला सिंह की दीन कातर आंखों में झांकने का साहस रघुनन्दन में और न रह गया था। उसने और अधिक वार्तालाप से बचने के लिए कह दिया था, 'मैं प्रतिज्ञा करता हूं, झल्ला!'

उस दिन के बाद रघुनन्दन राजीव का एक फोटो प्रतिवर्ष झल्ला के पास भेज देता और वह उसे अपनी अमूल्य धरोहर समझ कर सीने से लगाये फिरता।

* * *

लगभग २२ वर्ष बाद आज उसने अपने कालू को देखा था। पुत्र विछोह में तड़पती हुई उसकी आंख आज पागल सी हो गयी थी। देखते ही देखते उसका कालू क्या से क्या हो गया था! भावनाओं के अथाह भंवर में चक्कर काटता हुआ झल्ला का मन कभी डूबता कभी तैरता। आंसू की दो गर्म बूंदें उसकी पथराई

आंखों से लुढ़क कर चमकते फर्श पर फैले खून में विलीन हो गयीं। उसकी सांस धीमी पड़ चुकी थी!

दर्शक समूह दम तोड़ते हुए डाकू झल्लासिंह को घेरे खड़ा था। उसमें से अधिकांश लोग मन ही मन खुश हो रहे थे, लेकिन इनमें कुछ ऐसे भी थे जो इस देवता की मृत्यु पर शोक मना रहे थे। उनके मतानुसार गरीबों का सच्चा भगवान आज धरती से मुंह मोड़ कर जा रहा था।

झल्ला ने कराहते हुए कहा, 'एस.पी. राजीव, एक विनती करना चाहता हूं।'

'बोलो, झल्लासिंह! क्या कहना चाहते हो?' एस.पी. ने सहानुभूति के साथ पूछा।

झल्ला ने टूटे हुए शब्दों में कहना प्रारम्भ किया, 'रघुनन्दन... प्रसाद को... मेरा... चरण स्पर्श... कह देना... एस.पी. साहब। मैं... मैं... बहुत शांति के... साथ शरीर... त्याग रहा हूं... इतनी सुखद... मृत्यु की तो... मैंने... कभी कल्पना... भी... नहीं की थी।' उसकी कराहटें बढ़ती जा रही थीं। सांस एक-एक झटके के साथ चलने लगी थी। हाथ-पैर ठंडे पड़ चुके थे। न जाने उसके प्राण पखेरू किस लालसा में उसके शरीर में ठहरे थे। उसने फिर कहना प्रारम्भ किया — 'अगर... बुरा... न मानो... तो... मेरी एक... इच्छा और... पूरी कर दो... एस.पी. राजीव... मनुष्य... द्वारा... उठाई गयी... ऊंच-नीच की... बे-बुनियाद... दीवार... को गिराकर... मेरा सिर... अपनी गोद में... रख लो... मेरी भटकती... आत्मा को... शान्ति... मिल... जायेगी।'

झल्ला की आवाज में कुछ ऐसी कसक थी कि एस. पी. राजीव आज्ञाकारी बालक की भांति जमीन पर बैठ गये और दम तोड़ते हुए डाकू के सिर को अपनी गोद में रख प्यार से सहलाने लगे। न जाने क्यों उनका अपना हृदय दुःख से फटा जा रहा था। लाख कोशिश करने पर भी संयम के बांध को तोड़ आंसू की धारा उनकी आंखों से फूट निकली।

झल्लासिंह अपने जीवन की अंतिम घड़ियां गिन रहा था। उसने फटी हुई आंखों से अंतिम बार अपने कालू को देखा और सदा-सदा के लिए अपनी पलकें बन्द कर लीं। उसके फड़फड़ाते होंठ अस्पष्ट आवाज में कुछ टूटे हुए शब्दों को बड़बड़ा रहे थे। एस.पी. राजीव ने उसके मुख पर कान लगाकर सुना था। मृत्यु शैया पर पड़ा हुआ दोआबे का मशहूर डाकू झल्लासिंह कांपते होठों से अपने जीवन के अंतिम शब्द फुसफुसा रहा था, 'खुश रहो... कालू... मुझ जैसे... नीच... व्यक्ति का... साया भी... तुम्हारे... जीवन... में... न पड़े।'

झल्लासिंह के निर्जीव चेहरे से एक अलौकिक छवि छिटक रही थी। आज जीवन में उसे अपनी खोई अमूल्य वस्तु

ग़ज़ल

कोई मंज़िल है, न मक़सद है, जिये जाते हैं
सूखे पत्ते हैं, हवाओं में उड़े जाते हैं

अपनी तस्बीह का एक दाना बना दे मुझको
उंगलियों ही से तेरे दिल में चले जाते हैं

उनमें पत्थर से ख़ुदा बनने की तौफ़ीक कहां
जो बड़ी शान से ज़ेवर में जड़े जाते हैं

इन गरीबों के मुकद्दर में तो बचपन भी नहीं
कोख ही से ये बुढ़ापे में ढले जाते हैं

मेरे अन्दर ही मिले मुझको हजारों दुश्मन
बेबसी देखिए, आपस में लड़े जाते हैं

दर्दों-ग़म से तेरी रहमत ने दिला दी है नजात
तेरे एहसान से मख़्मूर दबे जाते हैं

— अरुण सिंह "मख़्मूर"
देना बैंक भवन, दूसरा माला, दूसरी पास्ता लेन, कोलाबा, बम्बई - ४०० ००५

फिर मिल गयी थी... । शायद जीवन में पहली बार वह सुख की नींद सोया हो ।

थाने ले जाकर झल्लासिंह के शव की तलाशी ली गयी । एक पैजामा, कुर्ता, सिर पर साफा, कमर पर बंधी रिवाल्वर की गोलियों से भरी एक पेटी और सदरी के अस्तर में दिल के ऊपर लगी जेब से निकला, एस.पी. राजीव का पिछली वर्षगांठ के अवसर पर खींचा गया फोटो, जो एस.पी. राजीव के लिए ही नहीं, बल्कि दीनारपुर के सेठ रघुनन्दन प्रसाद को छोड़कर सम्पूर्ण मानव समाज के लिए एक न सुलझने वाली पहेली थी !

— १४ अध्यापक आवास, सैनिक स्कूल घोड़ाखाल, नैनीताल

पंजाबी कहानी

कूड़े का ढेर

□ महेन्द्रसिंह सरना

यह कहानी उस कूड़े के ढेर की है जो मेरे घर के पिछवाड़े के मुहल्ले का कूड़ा-कर्कट इकट्ठा करने के लिए नगर-पालिका की ओर से रखे गये ड्रम के चारों तरफ उभरा हुआ है। लीजिए, आप तो चिढ़ गये। यदि आप यह समझते हैं कि इतनी निकम्मी, गंदी और बदबूदार चीज के बारे में कोई कहानी नहीं लिखी जा सकती तो यह केवल आपका भ्रम है। अगर आप भ्रम, व्यर्थ की झिझक और दुविधा को छोड़कर यह कहानी सुनेंगे, तो इसमें आपको बड़ी भीनी सुगंध मिलेगी।

हां तो सबसे पहले जो बात मैं आपको इस ड्रम के बारे में बतलाना चाहता हूं, वह यह है कि यह ड्रम सदा खाली रहता है। इसमें कूड़ा डालने वाले कोई सधे हुए निशानेबाज तो हैं नहीं और न सलीके से काम करना उनकी आदत है। नगर-पालिका की अनेक चेतावनियों के बावजूद भी उनकी आदतें नहीं बदली हैं। निशाना लगाकर कूड़ा फेंकने की तकलीफ वे नहीं उठा सकते। उनका कहना है कि कूड़ा फेंकें या निशानेबाजी करें? और आप तो जानते ही हैं कि एक वक्त में दो काम नहीं हो सकते। परिणामस्वरूप ड्रम के इर्द-गिर्द एक छोटा-सा कूड़े का ढेर उभर आया है, जिसके बीच यह खाली ड्रम टिका रहता है। मैं जानता हूं कि टिका शब्द पर आप एतराज करेंगे। आपका एतराज उचित है। टिकने का अर्थ है अचल और स्थिर खड़े रहना, परंतु यह ड्रम तो किसी शराबी की नाई बड़बड़ाता और लुढ़कता रहता है।

हां, तो मैं कह रहा था कि यह ड्रम लगभग खाली रहता है। पूर्वी सभ्यता का यह एक विशेष गुण है कि यहां पर हर चीज 'लगभग' ही होती है। हमारी ट्रेनें लगभग ठीक समय पर पहुंचती हैं। हमारी कान्फ्रेंसें और गोष्ठियां भी लगभग ठीक समय पर शुरू होती हैं। और लगभग ठीक समय पर खत्म होती हैं। कोई भी बात निश्चित समय पर नहीं होती। क्रिकेट की गेंद को छोड़कर

हमारी और कोई चीज निशाने पर नहीं बैठती। शायद इसीलिये जब से टेस्ट-मैचों का रिवाज फैला है, भारतीय क्रिकेट टीमें बरसाती मेंढकों की नाई बढ़ने लगी हैं। भारत का वह कौन-सा मुहल्ला या मैदान या नुक्कड़ है, जहां पर भारी टेस्ट-मैचों के लिए एक होनहार टेस्ट-कैप्टन को ट्रेनिंग न मिली हो? आप सोच रहे होंगे कि यह क्रिकेट की बात कहां से आ घुसी तो वह इस तरह कि आज सुबह जो सबसे पहली चीज उस ड्रम में गिरी, वह क्रिकेट की एक गेंद ही थी।

गेंद बुरी तरह गिरने के कारण खिलाड़ियों की गुगलियों और सिक्सर मारने का सारा जोश ठंडा पड़ गया और वे ड्रम के आसपास टोली बनाकर खड़े हो गये। जब उन्होंने ड्रम के भीतर झांका तो उनके आश्चर्य का ठिकाना न रहा। एक कुतिया, जिसने पन्द्रह दिन पहले बच्चे दिये थे, अपने सातों पिल्लों सहित उस ड्रम के भीतर बैठी थी। वे सब यही सोच रहे थे कि आखिर सीधे खड़े ड्रम में वह कुतिया बच्चों समेत कैसे पहुंच गयी! कई तरकीबें सोची गयीं। जब कुछ समझ में न आया तो वे गेंद निकालने का उपाय सोचने लगे। अंत में उन्होंने ड्रम उल्टा कर दिया। पिल्ले कूं-कूं करने लगे। बुड़बुड़ाकर गालियां देती हुई कुतिया बच्चों सहित एक ओर चली गयी। वह बड़े स्पष्ट शब्दों में कह रही थी— पन्द्रह दिनों से मैं इन नन्हीं-नन्हीं निर्दोष जानों को घर-घर, गली-गली फिराती रही। परंतु किसी ने मुझे आश्रय न दिया। आखिर मैंने यह ड्रम खोजा है, पर आप लोग मुझे यहां भी नहीं ठहरने देते। यदि इस धरती पर कुतियों का राज्य होता और कोई औरत अपने बच्चों को लेकर इस ड्रम में घुस जाती और मेरे पिल्ले क्रिकेट खेल रहे होते, गुगलियां और सिक्सर मार रहे होते, टेस्ट-कैप्टन बनने की ट्रेनिंग ले रहे होते और अगर वे उस औरत और उसके बच्चों के साथ ऐसा ही व्यवहार करते तो आप लोगों के हृदय पर क्या बीतती?

जब कुतिया अपने बच्चों को लेकर वहां से ओझल हो गयी, तो एक मुर्गा पंख फटकार कर उस लुढ़के हुए ड्रम पर सवार हो गया। उसने अपनी सिन्दूरी कलंगी फैलायी और एक जोरदार बांग दी। उसके बाद वह अपनी सफेद मुर्गी के साथ मिलकर उस कूड़े-करकट के ढेर में से अपना नाश्ता खोजने लगा। उस कूड़े के ढेर में अनेक दुर्लभ पदार्थ थे। गोभी के डंठल, मटर के छिलके, मूली और शलजम के पत्ते, जंगखायी गरगलों का अचार, तीन दिन की बासी उड़द की दाल, अंडों के छिलके, एक सड़ा गला टमाटर, बदबूदार कांजी की गाजरें, और ऐसी ही कई छोटी-मोटी चीजें। मुर्गा मटर के छिलकों में छुपे हुए दाने खोज रहा था पर मुर्गी गरगलों के खट्टे अचार

पर ही जान दे रही थी। वह बहुत भूखी नज़र आ रही थी। बड़ी जल्दी-जल्दी वह एक गरगले के टुकड़े में चोंच मार रही थी। उसकी आंखें गोलगप्पे खा रही लड़कियों की भांति चमक रही थीं। जब मटरों के गिने-चुने दाने खत्म हो गये तो मुर्गे का ध्यान दूसरी चीजों की ओर गया। उसने अंडों के छिलकों में चोंच मारी, पर उनमें से उसे अपने ही खून की बू आयी। उसके अंग-अंग में झुरझुरी-सी दौड़ गयी। उड़द की दाल के चिकने ढेरों से पांव बचाता हुआ वह फिर से मटर के छिलकों को टटोलने लगा। तभी कौओं का एक दल नीचे उतरा और दाल पर टूट पड़ा। देखते-ही-देखते उन्होंने सारी डाल सफाचट कर डाली।

मुर्गे ने अपनी गर्दन ऊपर उठायी, सीना ताना, पंख फटफटाये और एक छोटी सी उड़ान भरकर कूड़े के ढेर से किनारा कर लिया। कौवों की कलमुंही, बिरादरी के साथ मिलना वह अपमान समझता था। दूर खड़ा होकर वह कुकडूं-कुंकर अपनी मुर्गी को बुलाता रहा, पर मुर्गी आज गरगलों के अचार पर ऐसी रीझी थी कि उसे अपने आत्माभिमान की भी चिन्ता न रही।

उसने अपने पति की आवाज की ओर कान न दिये और कलमुंहों के दल से घिरी अपने पंखों के सफेदी पर कालिख पोतती रही। तब मुर्गे ने भी उसके आने की आशा छोड़ दी। वह जानता था कि

मुर्गियों की जाति ही ऐसी कमीनी होती है। उसमें आत्मसम्मान की भावना नाम मात्र को भी नहीं होती। उन कलमुंहों की बिरादरी में खड़ी वह न केवल अपनी मर्यादा खो रही थी, बल्कि अपने पति की इज्जत भी धूल में मिला रही थी। उसकी कलंगी की चमक को फीका कर रही थी।

एक कौवे को वह गला-सड़ा टमाटर मिल गया। सारे कौवे उसके इर्द-गिर्द इकट्ठे हो गये। टमाटर के रस में अपनी चोंचें डुबाते हुए वे तिरछी नजर से एक-दूसरे की ओर देखते थे। टमाटर उन्होंने बिलकुल चटकर डाला। कहीं उसका नामोनिशान भी न रहा। फिर वे बिलकुल नये सिरे से कूड़े के ढेर को कुरेदने में लग गये।

ड्रम की ओट से एक काली बिल्ली मुर्गी को बहुत घूर-घूर कर देख रही थी। अपने शिकार की लापरवाही से उसने फायदा उठाना चाहा। वह उस पर तेजी से झपटी। कूं-कूं करती मुर्गी मुर्गे की ओर भागी। मुर्गा मरने-मारने को तैयार हो गया। मुर्गी को अपनी ओट में करता हुआ वह स्वयं छाती फुलाकर खड़ा हो गया, जैसे वह उस जालिम बिल्ली का मुकाबला कर लेगा। उस समय वह अपनी मुर्गी की रक्षा के लिए अपने प्राणों तक की बाजी लगा सकता था। क्या हुआ यदि वह कमीनी थी। आखिर थी तो वह उसकी प्रियतमा, उसकी जीवन संगिनी, उसके दुख-सुख की साझेदार और उसके [illegible]

नुक्कड़ वाले मकान से एक आदमी बाहर आया। उसके हाथ में चूहेदानी थी, जिसमें एक मूर्ख चूहा फंस गया था। बीसवीं सदी के सारे चूहे भी मेकनिक हो गये हैं। चूहेदानी की सादी-सी मशीनरी को वे अच्छी तरह समझते हैं। यह कोई बेहद भोला और सीधा-सादा चूहा था। जिसे अभी दुनिया की हवा नहीं लगी थी। तभी तो वह आज के यांत्रिक-युग में एक मामूली-सी चूहेदानी में फंस गया था। उस आदमी ने ड्रम को खड़ा करके एक ओर टिकाया और चूहेदानी खोलकर चूहा उसमें फेंक दिया। अपना दांव खाली जाने के कारण बिल्ली बड़ी उदास-सी होकर बैठी थी। अब उसकी आंखें पारे की नाई चमकीं और वह तुरंत ड्रम में कूद गयी।

बिल्ली के झपटने से कौवे उड़ गये। मैदान खाली देखकर कुछ ममोले (एक पक्षी) सामने के रोशनदानों में से नीचे उतरे। वे नये मौसम के नये ममोले थे। इसी कार्तिक में उनका जन्म हुआ था। चोंचें केशर के रंग की थीं, और पंख रेशम से भी ज्यादा कोमल। अभी वे बर्फीली हवाओं के शिकार न बने थे। उनके लिए तो अभी सब कुछ मधुर ही था। जिन्दगी अभी उनके लिए एक करामात थी और कूड़े-कर्कट का यह ढेर एक विचित्र तिलिस्म। कुछ ही महीनों बाद वे बुजुर्गी के दायरे में कदम रखने लगेंगे। आनेवाली गरमियों की

चिलचिलाती धूप उनकी चोंच को बसती कर देगी और उनके पंखों को मटमैला बना देगी। अगले जाड़ों तक वे नये ममोलों के माता-पिता बन जायेंगे। कौवों की लूट-पाट के बाद भी ममोलों को उस कूड़े के ढेर में से छत्तीसों पदार्थ मिल गये थे। नई जिन्दगी की ख़ुशी में वे फुदक रहे थे।

दो बछड़े आये और गोभी के डंठलों तथा मूली के पत्तों में मुंह मारने लगे। उनके शरीर धूप में साटन की नाईं झिलमिला रहे थे। ममोलों के नन्हें-नन्हें पेटों की भूख शांत हो गयी थी और वे मस्ती से बछड़ों की रेशमी पीठों पर अपनी चोंचें साफ कर रहे थे।

पशु-पक्षियों के बाद मानव-जाति का नंबर आया। तीन लड़कियां और एक लड़का आकर उस कूड़े के ढेर को टटोलने लगे। सबसे बड़ी लड़की लगभग चौदह साल की थी। उसका मुंह लंबा और बदन इकहरा था। यौवन की किरणें उसके गंदे शरीर से फूट रही थीं। वह मरदाने तरीके का एक पट्टेदार पायजामा पहने हुए थी। और उसी नमूने का एक थैला भी पकड़े हुए थी। यूं लग रहा था कि उसने अपने बाप के पुराने पायजामे को काटकर यह थैला और अपना पायजमा बनाया था। मझली लड़की पीली और बीमार-सी थी। उसने अपना सिर मैली चुनरी से दबाकर बांधा था और उसकी कनपटियों पर आटे की टिक्कियां चिपकी हुई थीं। वह पुराने सिर-दर्द की शिकार नजर आती थी। बचपन में ही वह बूढ़ी हो गयी थी। उससे छोटी लड़की बिलकुल जोंक जैसी थी।

लड़का लगभग छह बरस का था। उमर के लिहाज से वह सबसे छोटा था।

बड़े ध्यान से वे कूड़े का ढेर टटोल रहे थे। अभी वहां बहुत कुछ बाकी था। चीनी की दो टूटी प्लेटें, कांच के टूटे हुए गिलास, पुराने चिथड़े घिसे-पिटे बूट, हुक्के की टूटी हुई चिलम, ब्रुकबांड चाय का फटा हुआ गत्ते का डिब्बा। अचानक उन्हें एक ऐसी चीज मिली कि मझली लड़की और लड़के में छीना-झपटी शुरू हो गयी।

मझली लड़की बोली — 'पहले देखा तो मैंने ही था न?'

लड़का बोला— 'तो तुम्हें उठा लेना था।'

'ठीक बात है।' बड़ी लड़की ने फैसला करते हुए कहा— 'देखने से क्या होता है? जिसने उठा लिया, उठा लिया।'

वह लकड़ी का बना हुआ एक आइसक्रीम का चम्मच था। लड़के ने कहा— 'मैं इससे आइसक्रीम खाऊंगा।'

मझली लड़की ने पूछा — 'आइसक्रीम लोगे कहां से?'

लड़का गहरे सोच में पड़ गया, फिर तुरंत बोला 'मैं झूठमूठ की आइसक्रीम खाऊंगा।'

मझली लड़की व्यंग्य-पूर्ण ढंग से हंसकर बोली, 'वह कौन सी आइसक्रीम होती है?'

लड़का फिर सोच में डूब गया। इस बार लंबी चुप्पी के बाद उसने कहा– 'मैं इससे खिचड़ी खाऊंगा।'

उस लड़की के चम्मच के अलावा उस लड़के को एक पुराना लिखा हुआ पोस्टकार्ड और एक ग्रामोफोन का टूटा हुआ रिकार्ड भी मिला। फिर उसे एक टीन की स्लेट मिल गयी, जिसका सारा रंग उड़ चुका था। स्लेट को अपनी छाती से चिमटाते हुए वह बोला– 'इससे मैं पढ़ा करूंगा।' जैसे उसकी पढ़ाई केवल एक स्लेट के कारण रुकी हुई थी।

'लेकिन पढ़ोगे कहां?' मझली लड़की आज उसके पीछे पड़ गयी थी।

'स्कूल में।' उसने उत्तर दिया।

'पर स्कूल की फीस कहां से दोगे?'

वह फिर चुप हो गया। पर उसका उत्साह ठंडा न हुआ। बड़े आत्म-विश्वास से बोला– 'मैं स्वयं पढ़ लूंगा। देखो, मुझे कितना आता है– अलिफ..बे..पे..पे..पें..मीम..जीम.. मिकिये बडिए यका...'

उर्दू भाषा की इस निपुणता के प्रदर्शन से प्रभावित होकर मझली लड़की खामोश हो गयी।

छोटी लड़की इधर-उधर बिलकुल न देखती थी। वह सबसे अधिक एकाग्रता से कड़े का ढेर टटोल रही थी। एक चीज उसको ऐसी मिली जो उसने बड़े ध्यान से अपनी सबसे नीचे वाली कमीज में संभालकर रख ली। बड़ी लड़की के कहने पर उसने उसे वह चीज दिखायी। वह आंखों में दवाई डालने का एक टूटा हुआ ड्रापर था।

'इसका क्या करोगी?' बड़ी लड़की ने पूछा।

'इससे मैं अपने बापू की आंखों में दवा डाला करूंगी। उनकी आंखें बहुत खराब हो गयी हैं। अब तो उन्हें कुछ भी दिखायी नहीं देता।'इससे आंखें ठीक हो जायेंगी।

बड़ी लड़की ने कुछ कहना चाहा पर वह खामोश रही। अंधे बाप की उस भावुक लड़की के सुखद विश्वास को वह तोड़ना न चाहती थी।

वे चले गये पर कूड़े के ढेर का खज़ाना तो खत्म न हुआ था। खैरात जारी रही और एक व्यक्ति भी निराश न लौटा।

शाम के समय एक बूढ़ी आयी। उसके चेहरे पर झुर्रियों का जाल बिछा हुआ था। वह एक काला गरारा पहने हुए थी और पांवों में मरे हुए चमगीदड़ों जैसी जूतियां घसीट रही थी। उसे भी इस ढेर में से बहुत कुछ मिला। सिर के फटे-पुराने दुपट्टे की उसने एक बड़ी-सी गठरी बांध ली। गठरी के बोझ के नीचे उसका सिर कांप रहा था। उसका काला गरारा झूलता रहा और उसका धुंधला आकार संध्या के झुटपुटे में छिप गया।

(अनुवाद : कान्तिलाल जैन)

टोह

थोड़ी दूर साथ हो लो तो, तनहाई बंट जायेगी,
उखड़ी सांसें दम ले लेंगीं बेचैनी हट जायेगी,

पथरीला पथ, चलने में ही,
सुबहें ढल कर शाम हुईं,
पहुंचे कहां गिरे या सम्हले
इसमें उम्र तमाम हुई

हारजीत की नहीं बात, मुस्कान लौट फिर आयेगी,
उखड़ी सांसें दम ले लेंगीं, बेचैनी हट जायेगी,

पांव जमाते, राह थाहते,
अनुभव शेष पड़ाव नहीं
मौसम गुजरे तन से होकर
जैसे राग जुड़ाव नहीं

दिलचस्पी की नयी बात नीरसता में जुड़ जायेगी
उखड़ी सांसें दम ले लेंगी, बेचैनी हट जायेगी,

मंज़िल तक चलना ही होगा,
यहां कोई घर घाट नहीं
ढली दुपहरी कितना चलना,
इसकी कोई थाह नहीं,

साथ एक विश्वास जगाता चाल तनिक सध जायेगी
थोड़ी दूर साथ हो लो तो, तनहाई बंट जायेगी ।

– शशि भूषण अवस्थी
बिन्दकी, फतेहपुर (उ.प्र.)

नीड़ की तलाश

□ डॉ. शीतांशु भारद्वाज

सुबह हो आयी थी। सामने के तिकोने पार्क से पक्षियों के टी-वी-टुट्-टुट् के स्वर आने लगे थे। खिड़की की सलाखों से मुट्ठी भर धूप अंदर कमरे में बिछ आयी थी। रसोई-घर की खटर-पटर से अंजु की नींद उचट गयी। जमुहाई लेती हुई वह बिस्तर से उठ गयी। बाबूजी बड़े सवेरे ही सैर के लिए निकल गये थे। हाथ-मुंह धोकर वह खिड़की पर खड़ी हो गयी।

पार्क में चिड़ियों के चूजे फुदक रहे थे। चीं....चीं....। नीड़ से निकल कर वे धरती से हवा में उड़ने का प्रयास कर रह थे।

– पर उग आने पर ऐसा ही हुआ करता है। अंजु अपने आप ही बुड़बुड़ा दी। सड़क के उस पार झोंपड़पट्टी की लंबी कतारें हैं। इस ओर सरकारी बस्ती है। पिछले दस-बारह बरस से वे लोग इसी इकलौते कमरे में भेड़-बकरियों की तरह से रहते आ रहे हैं। समय सबसे बलवान हुआ करता है। कभी के फुटपाथी लोग आज नगर विकास प्राधिकरण के फ्लैटों में रह रहे हैं। झोपड़पट्टी तक के भाग्य जाग गये हैं। एक वही हैं जो अब भी अंधेरे में ही लटके हुए हैं। यह भी कैसी विडंबना है कि कभी प्राधिकरण से लोगों को छतें मुहैय्या करने वाले बाबूजी इन दिनों पराई छत के नीचे सिर छिपाये हुए हैं!

बरसों पहले के उस हादसे ने इस खाते-पीते परिवार के ऊपर जैसे कहर ही ढा दिया था। अंजु उन दिनों दसवीं में पढ़ती थी। बड़ी बहन मंजु कॉलेज जाने लगी थी। तब बाबूजी प्राधिकरण में हेड कैशियर हुआ करते थे। वे अपने काम से काम रखा करते थे। घर से दफ़्तर और वहां से घर! उनकी दुनिया यहीं तक सिमटी हुई थीं। किंतु उस दिन बड़ी रात गये भी जब बाबूजी घर नहीं लौटे तो परिवार वाले उनके लिए चिंतित हो उठे थे। मां ने पड़ोसियों का दरवाजा खटखटाया था। सकलानी अंकल उसी समय स्कूटर करके उनके ऑफिस चल दिये थे।

– 'रामलाल तो थाने में हैं।' वहां से लौटने पर सकलानी अंकल ने बताया था।

– 'थाने?' मां की आंखें फटी-की-फटी ही रह गयी थीं।

– 'हां। उन पर गोलमाल का आरोप है।' उन्होंने बताया था, 'उसी जुर्म में पुलिस उन्हें थाने ले गयी है।

वह उन लोगों के लिए काल-रात्रि थी। अगले दिन अंजु को लेकर मां उसी थाने में जा पहुंची थी। बाबूजी का चेहरा उतरा हुआ था। पुलिस शायद उनके साथ कुछ ज्यादती ही करती रही हो। उन्होंने बताया था कि चीफ इंजिनियर के कारण ही उन्हें यहां आना पड़ा। ऑफिस में आते ही चीफ साहब ने उनसे पांच हजार रुपये मांगे थे। रसीद मांगने पर उन्होंने कहा था, अभी आकर दे देंगे।

जीप लेकर चीफ इंजिनियर साइट निरीक्षण पर चल दिये थे। उन पर अविश्वास करने का कोई कारण न था। यों भी आफिस में इस तरह कदम-कदम पर अविश्वास करने, हर चीज पर तुरंत रसीद लिखने-लिखवाने से काम कहां चलता है?

अचानक ही दोपहर बाद विजीलेंस वालों ने उनका कैश चेक किया था।

उन्होंने उसमें पांच हजार रुपये का गोल-माल पाया था। उन्होंने सही बात कही थी। चीफ के कमरे में जाकर वे उनके आगे गिड़गिड़ाये थे। किंतु बड़े साहब की भी नीयत बदल गयी थी। गबन के उसी आरोप में पुलिस उन्हें थाने ले गयी थी।

– 'हाय दैया!' मां ने अपने माथे पर उल्टा हाथ मारा था, 'अब क्या होगा?'

बाद में बाबूजी जमानत पर छूट गये थे। बात का बतंगड़ बनने लगा था। नौकरी से निलंबित होते ही बस्ती भर में उनके ऊपर थू-थू होने लगी थी। दफ्तर ने उनके ऊपर मुकदमा चलाया था। नामी वकील रखने पर भी वे अपनी सच्चाई की रक्षा न कर सके थे। उन्हें दो बरस की सजा हुई थी। इस्टेट वालों ने भी उसी हफ्ते उनका सरकारी आवास खाली करवा लिया था। उस मुसीबत में अगर ध्यानचंद मौसा न होते तो उनके परिवार की न जाने क्या दुर्गत हुई होती!

– 'कोई नहीं, सुमित्रा!' मौसाजी असहाय मां को धैर्य बंधाने लगे थे, 'बहादुर लोग मुसीबतों का डट कर मुकाबला किया करते हैं।'

मंजु का कॉलेज जाना छूट गया था। मौसाजी ने उसे एक प्राइवेट फर्म में नौकरी दिलवा दी थी। हायर सेकेंडरी पास अंजु भी तो टाइप-शॉर्टहैंड सीखने लगी थी। रोजगार कार्यालय में नाम दर्ज करवा कर मौसाजी ने उसे भी एक प्राइवेट कंपनी में टाइपिस्ट की नौकरी दिलवा दी थी। बाबूजी न सही, घर में दूसरे चार-चार हाथ कमाने वाले हो गये थे।

सरकारी आवास से वे लोग इसी क्वार्टर में सिमट आये थे। यह भी उन्हें मौसाजी ने ही दिलवाया था।

दिन बीतते गये। बाबूजी सजा काट कर घर लौट आये थे। डब्बू उन दिनों ग्यारहवी कक्षा में पढ़ा करता था। एक दिन उसने चाकू निकाल लिया था। उसका चेहरा क्रोध से तमतमा आया था, 'बाबूजी, मैं उस कमीने इंजिनियर को....।'

देख कर बाबूजी स्तब्ध रह गये थे। बेटे में प्रतिशोध की भावना न जाने कब से सुलगती आ रही थी! मुसकराकर बाबूजी ने उसके हाथ से चाकू छीन लिया था, 'पागल नहीं बना करते, डब्बू!' सुनते हैं मलकानी साहब हृदय-गति रुक जाने से खुद ही खुदा को प्यारे हो गये हैं।'

बाबूजी को बेटियों की कमाई अखरने लगी थी। सरकारी नौकरी से तो वे पहले ही नकारा हो चले थे। उस झूठे लांछन ने उन्हें सुखा कर कांटा बना दिया था। बीड़ी-सिगरेट न पीने पर भी वे असमय ही दमे के मरीज हो आये थे। रोजी-रोटी के लिए उन्होंने बहुत भाग-दौड़ की। किंतु कहीं भी तो उन्हें नौकरी नहीं मिल पायी। हार कर वे एक डेयरी में मुनीमगीरी का काम करने लगे थे।

लेकिन उन्हें वह काम भी रास नहीं आ पाया था। दो महीने बाद उन्होंने उसे छोड़ दिया था।

मंजु और अंजु दोनों बहनें परिवार के लिए दिन-रात खटती रहतीं। मंजु तीस को पार करने लगी थी। मां-बाबूजी ने कभी भी तो उसके विवाह का प्रसंग नहीं छेड़ा था। बाबूजी की समझ को तो जैसे लकवा मार गया था। मां हर समय ही 'कंगाली में आटा गीला' की दुहाई देती रहती। उन दोनों के सहारे ही तो घर-गृहस्थी की गाड़ी चल रही है। बस्ती से जब-तब उस परिवार की ओर अंगुली उठ जाया करती है। ऐसे में मां होंठ चबा कर ही रह जाती है। बाबूजी के माथे पर भी तो विवशता की सलवटें उभर आती हैं। एक दिन मौसी ने ही मां को उसके कर्तव्य का बोध कराया था, 'सुमी, तू मंजु के हाथ पीले क्यों नहीं कर देती! उसने तुम लोगों के लिए बहुत कमा लिया है। पराये भांडे को कब तक...।'

मौसी ने पते की बात कही थी। मंजु का यौवन ढलने लगा था। घर का भार ढोते-ढोते उसके चेहरे का सारा रूप-लावण्य धुल-पुंछ गया था। उसकी आंखों के इर्द-गिर्द सियाह झाइयां पड़ने लगी थीं। कहीं कोई फिर से अंगुली न उठाने लग जाये! उसके रिश्ते के लिए बाबूजी उधर-उधर भटकने लगे। किंतु दहेज के अभाव में उन्हें कहीं भी तो कोई योग्य लड़का नहीं मिल पाया था। जल्दबाजी में तब उन्होंने उसका हाथ स्थानीय नगरपालिका में काम कर रहे अधेड़ उम्र के एक बाबू को थमा दिया था।

डब्बू बी.कॉम. कर चुका था। इस बार मौसाजी ने कहीं से जैक भिड़ा कर उसे एक राष्ट्रीयकृत बैंक में लगवा दिया था। अंजु पिछले वर्ष से मिनिस्ट्री में काम करती आ रही है। डब्बू का उससे ड्योढ़ा वेतन है। मां इन दिनों कुछ अनोखे ही सपने देखने लगी है। हर किसी के आगे वे उन सपनों को हवा देती रहती हैं। हर समय ही उनकी आंखें बहू का मुंह देखने को तरसती रहती हैं।

— 'सुमी!' एक बार मौसी ने कहा था, 'क्या हर बात पर तुझे याद ही दिलवानी होगी?'

— 'नहीं, ऐसी कोई बात नहीं है।' मां मुसकरा दी थीं, 'डब्बू की बहू आ जाती तो मैं अपनी अंजु के हाथ भी पीले कर देती।'

अंजु जब भी अपनी सहेलियों को देखती है, उसका मन भर आता है। तो क्या उसके साथ भी यही सब कुछ होगा? मां कब तक अपनी जायाओं का शोषण करती रहेगी?

और जब वह खुद के बारे में सोचती है तो उदास हो जाती है। वह भी तो पचीसवां पार करने जा रही है।

बाहर से लड़ने-झगड़ने के स्वर आये। अंजु वर्तमान में लौट आयी। वह

खिड़की से हट गयी। देखा तो बाहर प्रभा और विभा एक-दूसरे की चोटियां पकड़े लड़ रही थीं।

— 'ऐ विभा!' अंजु ने बड़ी को डांटा, 'छोड़ दे उसे। वह छोटी है।'

विभा ने प्रभा को छोड़ दिया। ऊं-ऊं करती हुई प्रभा चौके की ओर चल दी। अंजु वहीं एक ओर नींद में खर्राटे भरते हुए डब्बू को देखने लगी। वह कितनी बेफिक्री के साथ सोया करता है! नौकरी लग जाने पर भी उसे अपने कर्तव्य-बोध का अहसास नहीं हो पाता। ऑफिस से भी वह बड़ी रात गये लौटा करता है।

'अंजु, ले, चाय पी ले!' मां अंदर कमरे में आ गयी।

अंजु वहीं एक ओर तख्त पर बैठ कर चाय पीने लगी। उसके बाद उसने सिर के खुले बालों को जूड़े में समेट लिया। मां ने उसके लिए दो परावंठे अखबार में लपेट दिये थे। उसके ऑफिस जाने का समय हो आया था। उसने पैकेट बैग के हवाले कर लिया।

अंजु ऑफिस जाने को हुई तो उसके पास मां आ खड़ी हुई। अंजु उन्हें प्रश्न-सूचक दृष्टि से देखने लगी।

— 'अपने बाऊजी के लिए दवाइयां ला देगी?' मां ने उसकी ओर एक पर्ची बढ़ा दी।

— 'डब्बू से मंगवा लेतीं न।' अंजु उस पर्ची को देखने लगी। डॉक्टर ने उस पर दो-चार कीमती दवाइयां लिखी थीं।

— 'दो सालों से आया!' मां ने गहरी सांस खींची, 'तीन-चार दिन से उसके पीछे पड़ी हूं।'

अंजु ने चुपचाप वह पर्ची बेग के हवाले कर ली।

खट्-खट् करती हुई अंजु बस स्टॉप की ओर चले दी। वहां वह क्यू पर लग गयी। खड़ी-खड़ी वह फिर से आत्म-मंथन करने लगी। आखिर अकेली वह कब तक मरती-खपती रहेगी? तो क्या परिवार की सारी जरूरतों को पूरा करने का ठेका एक उसी ने लिया है? वे लोग डब्बू से क्यों नहीं मंगवाते?

— 'हेलो अंजु!' सुभाष ने उसके पास आकर उसे विश किया।

प्रत्युत्तर में अंजु मुसकरा दी। जब भी वह सुभाष को देखा करती है, उसके अंतर में सतरंगे फूल खिलने लगते हैं। वह एफ ब्लॉक में रहा करता है। दोनों उसी बस से ऑफिस आया-जाया करते हैं।

सुभाष क्यू में सबसे पीछे जा लगा। सामने से एक खाली बस आ खड़ी हुई। क्यू के लोग आगे सरकने लगे। बस में चढ़ती हुई अंजु ने पीछे देखा। सुभाष रह गया था। बस में खड़ी वह अपने सहयात्रियों को देखने लगी। सामने ही एक नवविवाहित जोड़ा बैठा हुआ था। युवक जब भी पत्नी से बात करता, वह शरमा जाती। बीच-बीच में वह सिर से खिसक रहे साड़ी के पल्लू को भी ठीक

करती जा रही थी। उसकी कनपटी तपने लगी। उसकी कल्पना को पंख लगने लगे। लगा जैसे कि उस सीट पर सुभाष के साथ वही बैठी हुई हो।

– 'माफ कीजिए!' पीछे खड़े सहयात्री ने अंजु की तंद्रा भंग की, 'साइड देंगी?'

– 'ओह!' अंजु कल्पना-लोक से नीचे उतर आयी। उसने सहयात्री को राह दे दी।

लगभग बीसेक मिनट बाद बस बड़े दफ्तर के केंद्रीय टर्मिनल पर जा पहुंची। अन्य यात्रियों के साथ अंजु भी बस से नीचे उतर गयी। वह सीधी ही अपने ऑफिस की ओर चल दी।

उपस्थिति पंजिका पर अपने हस्ताक्षर करके अंजु अपनी सीट की ओर चल दी। उसकी मेज पर बहुत-सा काम जमा हो आया था। उसने उसमें से कुछ जरूरी फाइलें एक ओर छांट लीं। वह मन लगा कर काम करने लगी। गति के साथ वह एक अर्जेंट लेटर को टाइप करने लगी– किट-किटा-किट्...।

– 'मिस साब, आपका फोन है।' सेक्शन के चपरासी ने अंजु की सीट पर आकर कहा।

अंजु की की-बोर्ड पर थिरकती हुई अंगुलियां एक साथ ही रुक गयीं– किट्! सुभाष का फोन होगा। सीट से उठ कर वह फोन के पास चल दी। उसने उसका चोंगा कान से सटा लिया, 'हलो!'

– सुभाष बोल रहा हूं। लंच पर नीचे आओगी? तुमसे कुछ जरूरी काम है यों मौसम भी आज अच्छा है।' उधर सुभाष बोला, 'थोड़ी देर के लिए घूम भी आयेंगे।'

– ठीक है।' कह कर अंजु ने फोन रख दिया।

अंजु का मन काम से उखड़ने लगा। पत्र के एक-एक पैरे में अनेक गलतियां जा रही थीं। वह सुभाष के ही बारे में सोचती जा रही थी। पिछले दो बरस से वे दोनों बहुत समीप आ चुके हैं। एक बार उसने उसे अपने घर बुलवा लिया था। उसके चल देने के बाद वह मां के आगे सुभाष की प्रशंसा करने लगी थी।

– 'अंजु!' मां ने उसकी उपेक्षा-सी कर दी थी, 'अखबारों में कमाऊ बहुवें मिल जाती हैं न?'

– 'अखबारों में?' वह मां की बात नहीं समझ पायी थी।

– 'हां री।' मां ने आंखें नचायी थीं, 'कहते हैं, अखबारों में कमाऊ बहुवें मिल जाया करती हैं।'

बात समझ में आने पर अंजु देर तक हंसती रही थी। वह नहीं समझ पा रही थी कि मां-बाप कब तक उसके परों को कुतरते रहेंगे? कहीं ऐसा न हो कि समय के साथ-साथ वे उसे पूरी तरह से परकटी ही बना दें! तब भविष्य की उस कल्पना से वह शंकाओं के जाल में उलझने लगी। तभी उसके अंतर में एक ज्योति

प्रज्वलित हो उठी। नहीं-नहीं, ऐसा नहीं होगा। उसकी अंतर्रात्मा उसे ढाढ़स बंधाने लगी। वह सुभाष का दामन नहीं छोड़ेगी। सुभाष का हाथ थामे हुए वह जीवन की हरी-भरी वादियों में कुलांचें भरती रहेगी।

सुभाष पिछले वर्ष से हर समय ही उसके आगे विवाह का प्रस्ताव रखता आ रहा है। किंतु वह है कि समय को निरंतर आगे ही ठेलती आ रही है। आगे और आगे!

लंच का समय हो आया था। अंजु ऑफिस से निकल कर नीचे चल दी। सामने ही लेटर बॉक्स के सहारे सुभाष खड़ा था।

– 'अंजु, आज मुझे तुमसे बहुत जरूरी बात करनी है।' सुभाष मुसकरा दिया।

- 'वो तो मैं भी जानती हूं।' अंजु भी मुसकरा दी।

– 'आओ, उधर चलते हैं।' सामने ही पेड़ों से घिरे हुए हरे-भरे मैदान की ओर संकेत करते हुए सुभाष ने कहा, 'थोड़ी घुमाई भी हो जाएगी।'

–'चलो।' अंजु उसी की बगल में हो ली।

रास्ते में उन्होंने मूंगफलियां ले लीं। उन्हें छीलते-चबाते हुए वे दोनों मैदान की ओर चल दिये। एक पेड़ की छांह के नीचे बैठ कर अंजु ने कहा, 'हां तो जनाब, अब बताइए कि ऐसी कौन-सी जरूरी बात है?'

सुभाष कुछ समय तक सोचता रहा। वह नहीं समझ पा रहा था कि बात कैसे आरंभ हो? फिर उसने कहा, 'अब हमें निर्णय कर ही लेना चाहियें।'

अंजु उसका आशय समझ गयी। उसने कहा, 'किस बात का निर्णय?'

– 'विवाह का।' सुभाष ने सधे शब्दों में कहा, 'दोनों के विवाह का।'

अंजु कुछ नहीं बोली। मूंगफली का एक दाना उसने मुंह के हवाले किया। उसकी आंखों के आगे हजारों-हजार फूल खिलने लगे।

– 'तुम चुप कैसे हो?' सुभाष ने अधीरता से पूछा।

– 'यों ही। सोचती हूं कि...।'

– 'अब तक सोचना बहुत हो गया।' सुभाष ने कहा, 'अब सोचना नहीं है। तुम कल की छुट्टी ले लो। कल हम लोग कोर्ट में जाकर विवाह की अर्जी दे देंगे।'

– 'सच! इतनी जल्दी?' अंजु चकित रह गयी।

– 'हां!' सुभाष ने दृढ़ निश्चय से कहा, 'जानती हो कि मेरे मां-बाप तुम्हारे साथ विवाह करने पर राजी नहीं हैं। उनकी आंखों में तो मोटे दहेज का लालच है।'

– 'और मेरे मां-बाबूजी भी राजी नहीं होंगे।' कहती हुई अंजु ने अपना सिर सुभाष के कंधे पर रख दिया, 'आखिर मैं उन लोगों के लिए हर महीने पैसे कमा कर जो ले जाती हूं।'

– 'इसीलिए तो मैंने कोर्ट में अर्जी देने की बात कही है।'

– 'लेकिन बड़े-बूढ़ों के आशीर्वाद के बिना.... ।' अंजु के माथे पर परेशानी की सलवटें उभर आयी।

– 'स्वार्थी लोगों के आशीर्वाद बेअसर हुआ करते हैं, अंजु!' सुभाष ने उसकी परेशानी पोंछ ली।

– 'फिर ठीक है।' अंजु ने अपना मन पक्का कर लिया।

लंच का समय समाप्त होने को था। लॉन से उठ कर वे दोनों वहां से अपने ऑफिसों की ओर चल दिये। अंजु ने आते ही अगले दिन की छूट्टी की अर्जी दे दी। उसकी प्रसन्नता का कोई ओर-छोर न था।

संध्या के साढ़े पांच बजें अंजु घर जाने के लिए बस में बैठ गयी। अब उसके सोच की दिशा ही बदल गयी थी। उस सोच में बाबूजी का घोंसला धीरे-धीरे धुंध में डूबता जा रहा था। अब तो उसकी दृष्टि के आगे एक नन्हां-सा घर-आंगन उजागर हो रहा था।

– १३८, विदूया विहार,
पिलानी, (राज.) - ३३३ ०३१

ग़ज़ल

ग़म की परछाइयां ओढ़कर धूप में।
ज़िन्दगी ने किया है सफ़र धूप में।।

अब्र वीरानियों में बरसते रहे।
और झुलसता रहा मेरा घर धूप में।।

जो बनाते हैं छत हर किसी के लिए।
वो पसीनें से हैं तरबतर धूप में।।

ज़ुल्फे जाना के साये में आराम लो।
क्यों भटकते हो यूं दरबदर धूप में।।

दिन चढ़े बाम पर वो गये तो लगा।
जैसे निकला हो कोई कमर धूप में।।

गम का सूरज चढ़ा तो झुलसने लगे।
हम इधर धूप में वो उधर धूप में।।

चढ़ते सूरज की पूजा करें जो बशर।
क्यूं वो ग़मगीन हैं इस क़दर धूप में।।

यकबयक बदलियों से जो निकला 'मयंक'।
थी चकाचौंध उसकी नज़र धूप में।।

अब्र - बादल, बाम - छत, कमर - चांद, बशर - लोग

– के. के. सिंह मयंक
रेल यातायात सेवा,
मध्य रेलवे, बम्बई

गीत

व्याकुल हैं प्राण, सुनो
ओ मेरे मनचीते ।

जीवन अनमोल, यहां
माटी के मोल बिका ।
यह कंचन देह-भवन
बालू की नींव टिका ।।

मेघ-हृदय मेरा
बिन बरसे कैसे रीते ?
ओ मेरे मनचीते ।

अंतर अनुराग भरा
ज्योति दिया आंखों को ।
पांवों में गति बांधी
कर्म दिया हाथों को ।।

देव पवन पंखी मन
जग रण कैसे जीते ?
ओ मेरे मनचीते ।

कोमल कलियों का तन
कांटों में उलझाया ।
गंध भरे बागों को
फणिधर ने सहलाया ।।

चंदन के वन कब से
शिव बन कर विष पीते ?
ओ मेरे मनचीते ।
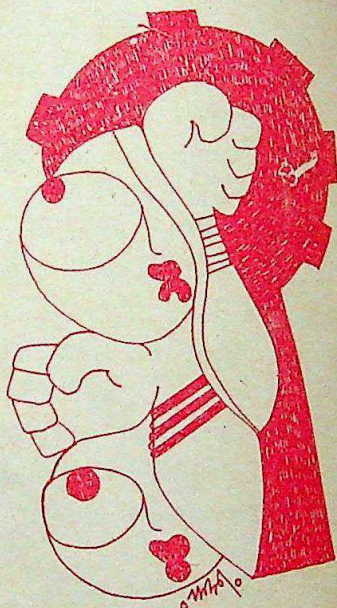
चित्र : चंदन यादव

संवेदन भावों से
तुमने संसार रचा ।
स्वप्निल संबंधों के
छलने से कौन बचा ?

मेरे मिठबोले दिन
रो-रो क्योंकर बीते ?
ओ मेरे मनचीते ।

— सावित्री शर्मा
बी ६९, सेक्टर सी, महानगर,
लखनऊ - २२६००६, उ.प्र.

संसद के द्वार खुले बच्चों के लिए

□ डॉ. प्रेमशरण शर्मा

सुन कर आश्चर्य तो सभी को होगा। बच्चे और संसद भवन में ? लेकिन यह सच है। खुली आंखों के सपने जैसा सच। उस दिन रेड क्रास रोड पर रंग-बिरंगे कपड़ों में पक्षियों जैसा कलरव करते हुए बच्चों की उमड़ती भीड़ को देखा जा सकता था। किसी के हाथ में थैला था, किसी का बैग पीठ पर लटका था और वह दौड़ रहा था कि मेरे पहुंचते-पहुंचते द्वार बन्द न हो जाये। अनेक विकलांग बच्चे अपनी ट्राई साइकिल पर, या बैसाखी के सहारे चले आ रहे थे। उनके चेहरे की चमक उस दिन देखने योग्य थी। लगता था संसद सौंध में रंगों की नदियां अनेक दिशाओं से उमड़ कर चली आ रही थीं। संसद के द्वार उस दिन बच्चों के लिए शायद संसदीय इतिहास में पहली बार खुले थे।

एक छोटा-सा बच्चा गेट तक आया और अपना पेंटिंग का सामान अपने पापा से लेकर बोला— 'आप बाहर लान में बैठें, मैं पेंटिंग करने जा रहा हूं। आप यहीं मेरा इंतजार करना।' उस छोटे से बच्चे की समझदारी पर मुझे आश्चर्य-चकित होना पड़ा।

ये ड्राइंग कम्पटीशन का भारतीय बाल शिक्षा परिषद की ओर से आयोजन किया गया था। इसमें दो वर्गों के बच्चों ने भाग लिया। एक वर्ग वह जिसमें सात से ग्यारह वर्ष के बच्चे आते हैं, दूसरे वे, जो ग्यारह से सोलह वर्ष की आयु के बच्चे आते हैं।

संसद के द्वार बच्चों के लिए कैसे खुले, इसके बारे में परिषद के महामंत्री व बाल-पत्रिका 'नंदन' के सम्पादक श्री जयप्रकाश भारती से मालूम हुआ कि यूं तो परिषद देश के अनेक क्षेत्रों में चित्रकला प्रतियोगिता का आयोजन करती है। इस बार पता नहीं कैसे उनके मन में आया कि भारत का भावी निर्माता क्या संसद में नहीं जा सकता ? इस बारे

में उन्होंने लोकसभा अध्यक्ष रवि राय से बात की कि यदि यह चित्रकला प्रतियोगिता संसद में आयोजित की जाय तो बच्चे संसद की सैर करके आनन्दित तो होंगे ही, वे यह भी देख सकेंगे कि देश के कर्णधार जहां बैठकर देश के भाग्य का फैसला करते हैं वह स्थान कैसा है? फिर बच्चे तो भगवान का रूप होते हैं, उन पर प्रतिबन्ध कैसा?

शायद रवि राय के मन में बच्चों की बाल सुलभ चंचलता ने गुदगुदी पैदा कर दी। पहले तो उन्होंने यही कहा कि संसद में संसदीय कार्य के अलावा और किसी कार्यक्रम की इजाजत नहीं दी जा सकती। लेकिन फिर उन्होंने इस कार्य की स्वीकृति दे दी।

उस दिन संसद सौध के घास के मैदान में ऐसा लग रहा था जैसे तितलियों के स्थान पर रंग-बिरंगे फूल हंसते-खिलखिलाते उड़ते फिर रहे हैं। आश्चर्य तो इस बात का रहा कि इतने व्यस्त होते हुए दिल्ली के उप राज्यपाल श्री मार्कण्डेय सिंह वहां उपस्थित थे। उस दिन उनके चेहरे पर बच्चों जैसी ही सहज मुस्कान थी। जब वे आये तो हजारों नन्हें हाथों ने तालियां बजाकर उनका स्वागत किया।

उस दिन उप राज्यपाल श्री मार्कण्डेय सिंह ने परिषद के आयोजकों का धन्यवाद किया कि 'उन्होंने मुझे यहां बुलाकर मेरे ऊपर बड़ा अहसान किया है, अन्यथा मैं इस निश्छल मुस्कानों के समुद्र में स्नान करने से वंचित रह जाता।' अपनी आंतरिक प्रसन्नता को व्यक्त करते हुए उन्होंने कहा– 'मुझे आज यहां आकर लगा कि मैं आज दादा बन गया हूं।'

यूं तो बच्चे पुलिस के नाम से ही डरते हैं, लेकिन यह जानकर भी कि उप राज्यपाल महोदय पहले पुलिस में भी रह चुके हैं बच्चों ने उन्हें घेर लिया। अपनी-अपनी आटोग्राफ बुक लेकर उन्होंने उप राज्यपाल महोदय के चारों ओर घेरा डाल लिया। उप राज्यपाल महोदय के सुरक्षा अधिकारी यह देख कर खड़े मुस्कराते रहे। वे भी बच्चों की किलकारियों से अभिभूत हो रहे थे।

बच्चों को सेब, बिस्कुट और टाफियां दी गयीं। सबसे सुन्दर उपहार बच्चों को लोकसभा अध्यक्ष रवि राय की ओर से दिया गया। वह एक कलम थी जिस पर संसद का चित्र बना था और हिन्दी-अंग्रेजी में उस पर संसद लिखा हुआ था। बच्चे इस उपहार को पाकर बहुत खुश हुए कि लोकतंत्र की एक पहचान यह कलम उन्हें उपहार में मिली थी।

अंत में बच्चों ने संसद सौंध में बने म्यूजियम को देखा और बाद में संसद की सैर की, जहां जाने के लिए बड़े-बड़े लोग तरसते हैं!

– २२६५, शादीपुर,
नयी दिल्ली – ११० ००८

अक्ल का ताना-बाना

□ सुखबीर

राजा का दरबार लगा हुआ था कि एक राजदूत वहां आया।

उससे आने का कारण पूछा गया, तो उसने बिना कुछ बोले राजा के सिंहासन के गिर्द एक दायरा खींचा और फिर से अपनी जगह पर जाकर खड़ा हो गया।

राजा ने पूछा, 'इसका क्या मतलब हैं?'

राजदूत ने कोई उत्तर न दिया।

राजा को हैरानी हुई, और साथ ही चिन्ता भी। तब उसने अपने मंत्रियों से उस दायरे का मतलब पूछा, पर उनमें से कोई भी कुछ न बता सका।

राजा को बहुत गुस्सा आया और उसने अपने मंत्रियों को बुरा-भला सुनाते हुए कहा, 'क्या हमारे राज्य में कोई भी ऐसा बुद्धिमान व्यक्ति नहीं हैं, जो यह बता सके कि राजदूत ने दायरा क्यों खींचा हैं?'

सभी मंत्री और दरबारी सहमे हुए चुप बने बैठे रहे।

आखिर राजा ने हुक्म दिया कि उसके सारे राज्य में ऐसा व्यक्ति ढूंढ़ा जाये, जो राजदूत की पहेली को सुलझा सके। फिर क्या था, शहरों, कसबों, गांवों में – हर जगह ऐसे बुद्धिमान व्यक्ति की खोज होने लगी।

एक दिन राजा के कर्मचारी एक गांव में से गुजर रहे थे कि पानी पीने के लिए एक छोटे-से घर में दालिख हुए। उन्हें यह देखकर हैरानी हुई कि वहां एक पालना झूल रहा था, लेकिन उसे झुलाने वाला कोई नहीं था। आखिर वे घर से बाहर निकले। तभी घर की छत पर कुछ आहट पाकर एक कर्मचारी ऊपर गया, तो क्या देखता है कि वहां गेहूं सूखने के लिए डाला हुआ है और कुछ पक्षी, उसके ऊपर उड़ते हुए मंडरा रहे हैं, लेकिन नीचे आकर दाने चुगने का साहस नहीं कर पा रहे, क्योंकि वहां लगा सरकंडों का एक पंखा घूमता हुआ उन्हें नजदीक नहीं आने दे रहा था।

उस कर्मचारी ने अपने साथियों को ऊपर बुला कर यह सब दिखाया, तो उन्हें भी बड़ी हैरानी हुई। तब वे पूरे घर की

तलाशी लेने के लिए नीचे उतरे। जब वे घर के पिछले कमरे में गये, तो वहां उन्होंने एक जुलाहा देखा, जो हाथखड्डी पर कपड़ा बुन रहा था।

'यह कैसा चमत्कार है,' एक कर्मचारी ने कहा, 'कि पालना अपने आप झूल रहा है, और छत पर पंखा भी अपने आप घूम रहा हैं, हालांकि हवा नहीं चल रही!'

'इसमें चमत्कार वाली कोई बात नहीं है,' जुलाहे ने बड़े सहज-भाव से कहा। 'मैं ही उन्हें हिला रहा हूं।'

'वह कैसे? तुम तो यहां बैठे हुए कपड़ा बुन रहे हो।'

'बड़ी सीधी-सी बात है,' जुलाहे ने मुस्करा कर कहा। 'मैंने अपनी हाथखड्डी से दो रस्सियां बांधी हुई है, जो पालने और पंखे के साथ बंधी हुई हैं। कपड़ा बुनते समय जब रस्सियों को खींच पड़ती है, तो पालना और पंखा दोनों हिलने लगते हैं।'

'तुम तो सचमुच बहुत अक्लमंद हो!' कर्मचारियों ने कहा। फिर, उन्होंने आपस में सलाह करते हुए कहा, 'इसे राजा के पास ले चलना चाहिये।'

'राजा के पास?' जुलाहे के मुंह से निकला।

'हां। वहां एक पहेली सुलझाने की समस्या उठ खड़ी हुई है, जिसके लिए तुम्हारे जैसे अक्लमंद आदमी की ज़रूरत है।'

'कैसी पहेली?' जुलाहे ने पूछा।

कर्मचारियों ने उसे सारी बात बताई और तैयार होने के लिए कहा।

जुलाहे ने कुछ देर सोचा और उठ खड़ा

हुआ। उसने एक छोटा-सा डिब्बा खोल कर उसमें से कुछ कौड़ियां निकाली और उन्हें जेब में रखते हुए कर्मचारियों से कहा, 'चलिये।'

जुलाहे को राजा के दरबार में पेश किया गया। उसने सिंहासन के गिर्द खींचे गये दायरे को एक नज़र देखा और फिर राजदूत की ओर देखा। तब उसने जेब में से कौड़ियां निकाल कर राजदूत की ओर फेंकी।

राजदूत कुछ नहीं बोला। उसने कौड़ियों को देखते हुए सिर हिलाया और फिर अपनी जेब में से बाजरे के कुछ दाने निकाल कर राजा के सामने फेंके।

राजा को हैरानी हुई। वह समझ न पाया कि राजदूत ने वे दाने क्यों फेंके हैं। तभी उसने जुलाहे की ओर देखा।

जुलाहे ने कहा, 'क्या एक मुर्गी मिल सकती है?'

राजा ने उसी समय मुर्गी लाने का हुक्म दिया।

मुर्गी आने पर जुलाहे ने उसे लेकर बाजरे के दानों के पास छोड़ दिया। मुर्गी सभी दाने खा गयी।

राजदूत ने यह देखा, तो राजा के सामने सिर झुकाया और उसी प्रकार चुप बना वहां से चला गया।

अब हर कोई आश्चर्यचकित बना जुलाहे को देख रहा था।

आखिर राजा ने उसे पूछा, 'राजदूत किसलिए आया था और क्यों चला गया?'

जुलाहे ने कहा, 'महाराज, उसने आपके सिंहासन के गिर्द लकीर खींच कर यह जताया था कि उसके देश का राजा हमला करके आपका राज्य हड़पना चाहता है और साथ ही यह जानना चाहता है कि उसके हमले के जवाब में आप लड़ेंगे या हथियार फेंक देंगे?'

'तो तुमने राजदूत की ओर कौड़ियां क्यों फेंकी?'

'यह बताने के लिए कि आप उससे कहीं ताकतवर हैं। सो, हमला करने के बजाय अच्छा है कि वह उन कौड़ियों से खेले।'

'वाह, जवाब नहीं है तुम्हारी अकल का!' राजा के मुंह से निकला। 'अब यह बताओ कि राजदूत ने बाजरे के दाने क्यों फेंके थे और तुमने मुर्गी क्यों मंगवाई थी?'

'राजदूत ने बाजरे के दाने फेंक कर बताया था कि उसके राजा के पास अनगिनत फौजी हैं। जवाब में मैंने मुर्गी छोड़ी, जो सारे दाने खा गयी। यानी मैंने उसे यह जताया कि अगर उन्होंने हम पर हमला किया तो उनका एक भी फौजी बच नहीं सकेगा।'

'वाह वाह!' राजा ने कहा और अपने गले से मोतियों की माला उतार कर उसे दी। 'यह रहा तुम्हारी बुद्धि का इनाम। और भी जो चाहो मांग सकते हो।'

जुलाहे ने सिर झुका कर राजा का

धन्यवाद किया।'

'हां, एक बात और बताओ,' राजा ने जुलाहे से कहा। 'राजदूत ने यह सब कुछ बोल कर क्यों नहीं बताया? वह गूंगा नहीं था। दरबार में आने के लिए उसने बोल कर इजाज़त मांगी थी। आखिर उसने अपने राजा की बातें पहेली बना कर क्यों पेश कीं?'

'शायद उसका राजा यह जानना चाहता था कि क्या आपके राज्य में ऐसे अक्लमंद आदमी भी हैं, जो उन पहेलियों को सुलझा सकें। अक्ल आदमी की सबसे बड़ी ताकत समझी जाती है न!' जुलाहे ने कहा।

'बहुत खूब!' राजा ने गद्‌गद होकर कहा। 'और तुमने साबित कर दिखाया कि हमारे राज्य में अक्ल की कमी नहीं है। और वह सिर्फ तुममें है। और ऐसे अक्लमंद आदमी की हमें जरूरत है। हम उसे अपना मंत्री बनाना चाहेंगे। सो, जाओ और अपने परिवार को लेकर वापस आओ और हमारे मंत्री बन कर राज्य का भार सम्भालो।'

— बी-१६-सन एण्ड सी, वरसोवा रोड, बम्बई - ४०० ०६१

शेर पर संगीत का प्रभाव

पं. ओंकारनाथ ठाकुर के जीवन की एक रोचक घटना है। लाहौर के चिड़ियाघर में एक बार एक बहुत खतरनाक शेर आया हुआ था। पंडितजी ने अपने एक मित्र से कहा– 'चलो, अपना बेला साथ ले चलो। कुछ प्रयोग करेंगे। हमें चिड़ियाघर चलना है।'

'क्या पागल हो गये हो, ठाकुर?' मित्र ने उत्तर दिया। पंडितजी ने कहा– 'हां, प्रयोग करनेवाले पागल तो होते ही हैं।' बेला लेकर दोनों चले। चिड़ियाघर पहुंचे। परन्तु चौकीदार ने अंदर जाने से मना किया। शेर बड़े जोर से दहाड़ मार रहा था।

चौकीदार को कुछ दक्षिणा देकर दोनों अंदर चले गये। पंडितजी के आदेशानुसार मित्र ने बेला पर काफी राग का सुर छेड़ दिया। दोनों धीरे-धीरे शेर के पिंजड़े की ओर बढ़ते गये। निकट पहुंचने पर दोनों के विस्मय की सीमा न रही यह देखकर कि शेर ने बिल्कुल गुर्राना बंद कर दिया था और जंगले के बाहर पंजे इस प्रकार निकाल दिये थे, मानो वह इनके साथ खेलना चाहता हो। शेर की आंखों से कुत्ते की आंखों जैसा प्यार टपक रहा था। पंडितजी ने अपने मित्र से कहा– 'मुझे यही देखना था कि कोमल गांधार में दिल को कोमल करने की क्षमता है अथवा नहीं। बेला के बजाय यदि मेरे साथ सारंगी होती, तो शेर पर अधिक प्रभाव पड़ता।'– **डॉ. गोपाल प्रसाद 'वंशी'**

कार्टून चित्रावली

सु. रामकृष्णन् द्वारा भारतीय विद्या भवन, क. मा. मुंशी मार्ग, बम्बई ४००००७ के लिए प्रकाशित तथा एसोसियेटेड एडवरटाइजर्स एंड प्रिन्टर्स, बम्बई ४०००३४ में मुद्रित।

Regd. No. BYW —203/Licence No. 58

INDIA Immortal

13

Varanasi - 13

Sri Vaikunteswarar's shrine on Annakoota day. The prasad will be distributed to devotees after neivedya.
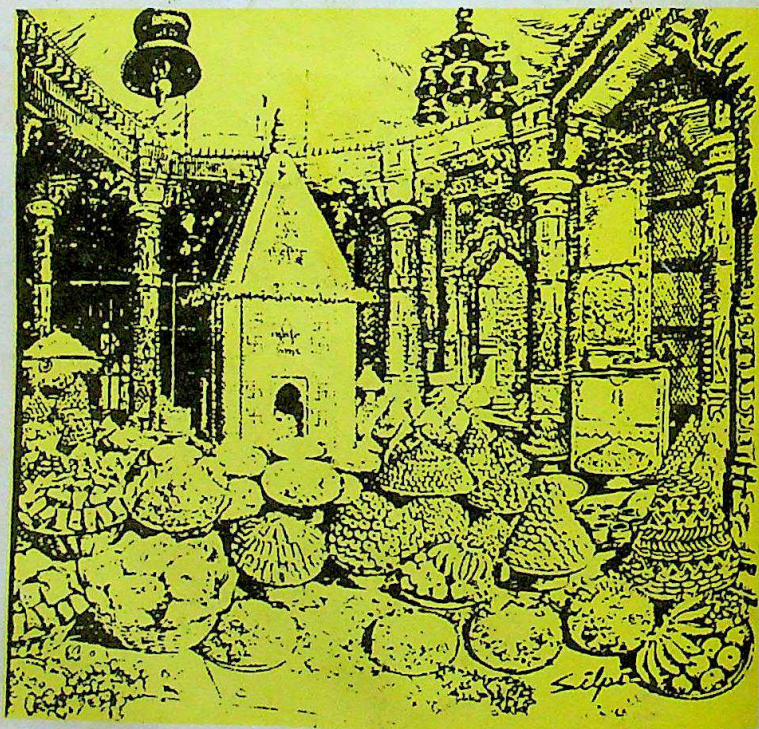
Sponsored by SMITA CONDUCTORS LIMITED
Mfrs. of ACC and ACSR Conductors
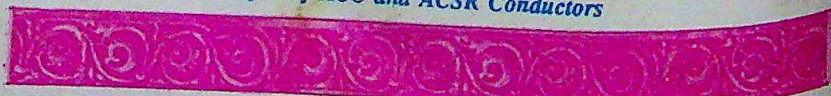
अक्तूबर १९९१
मूल्य : रु. ७
भवन की पत्रिका 'भारती' में समन्वित
नवनीत
हिन्दी डाइजेस्ट
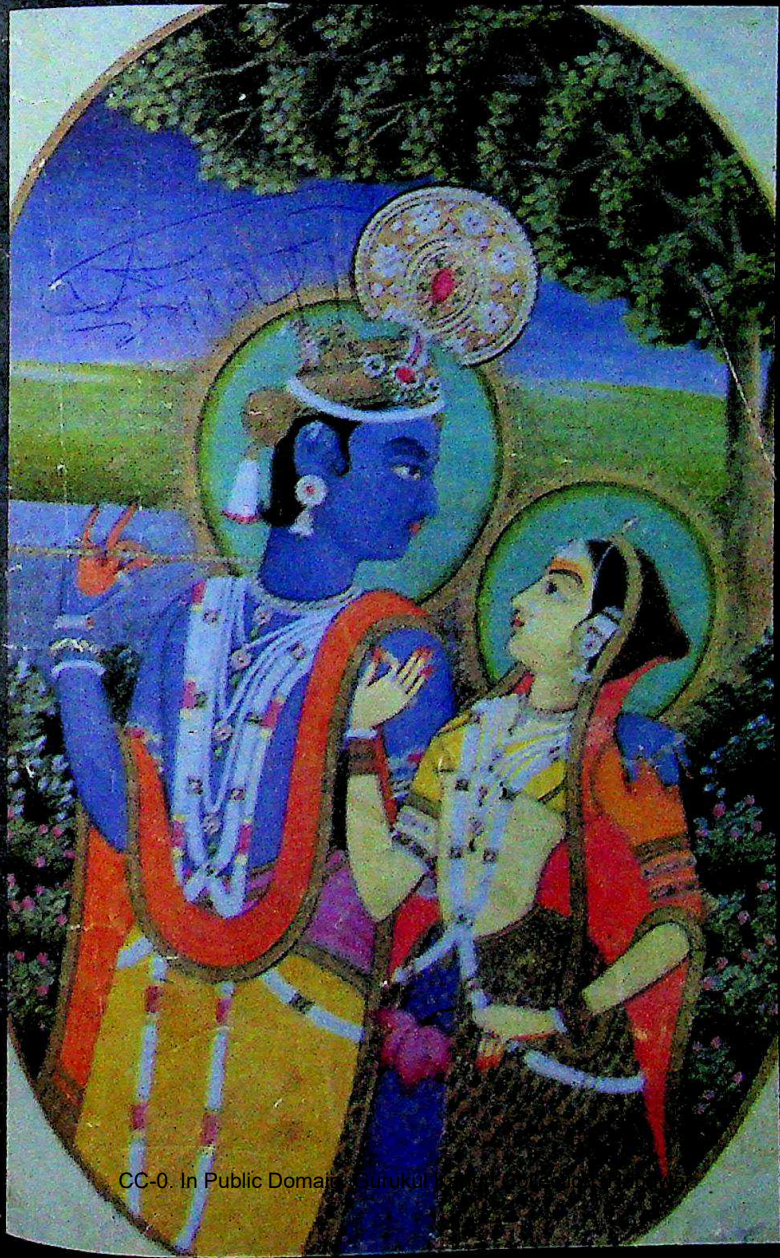
STRATEGIC ADVERTISING CAN MAKE ALL THE DIFFERENCE BETWEEN SUCCESS AND FAILURE

FW

SEIZE THE ADVANTAGE

When you advertise in the Financial Wizard, you place your advertisement in an ideal position to reach out your message to 6,00,000 cash-rich readers. Each of them a potential client of yours. Together, they can pool in over Rs. 1000 crore liquid funds to give your product or image the boost you are looking for.

These readers have backed Wizard's recommendation to the hilt and pushed market giants like ACC and Reliance, Tisco and Tata Power, Tata Tea and Hindustan Aluminium to display a phenomenal increase in their values and take them to dizzy heights in a few weeks. You too can do it. Advertise in Financial Wizard. FINANCIAL WIZARD is the only financial weekly that can help your sales and image graph show a sharp upward curve.

For assured success, contact: The Advertising Manager,

6 D Rajabahadur Compound, Ambalal Doshi Marg, Bombay 400 023. Phones: 276343, 276345, 271180.

अगस्त अंक पढ़ा। बुन्देलखंड के काली कवि लेखक प्रो. कृष्णदत्त जोशी, एक खिड़की की खातिर (अंग्रेजी कहानी) तथा साहित्य में दोहरी नैतिकता (परिचर्चा) रचनाएं पर्याप्त प्रभाव छोड़ती हैं। शिक्षा की ज्वलंत समस्याओं को लेकर यदि कोई सारगर्भित रचनाएं **नवनीत** के माध्यम से पढ़ने को मिलें तो सोने में सुहागा।

वैसे **नवनीत** की एक अलग से पहचान तो है ही।

— शांति राजपाल, नया बास, अलवर

* * *

मैं हिंदी भाषा में प्रकाशित सभी पत्रिकाओं का अवलोकन करता हूं, परंतु **नवनीत** पढ़ता हूं। क्या आप अपनी पत्रिका का एक खासा भाग धारावाहिक उपन्यास के रूप में प्रकाशित करने के बजाय इन पृष्ठों का उपयोग अन्य सामग्रियों के लिए कर सकेंगे?

— बी. सहाय, धनबाद, बिहार

* * *

नवनीत अपने नाम को सार्थक करने वाली एक श्रेष्ठ साहित्यिक पत्रिका है। आज के वातावरण में यदि साहित्यिक पत्रिकाओं के सागर का मंथन किया जाये तो नवनीत स्वरूप एक ही पत्रिका हाथ लगती है और वह है **नवनीत**।

नवनीत का प्रत्येक अंक पठनीय ही नहीं, अपितु ज्ञान-लाभ की दृष्टि से संग्रहणीय भी है।

नवनीत का अगस्त - ९१ अंक मनोहारी था। अंग्रेजी कहानी, 'एक खिड़की की खातिर' ने हृदय को झकझोर दिया। प्रेमतपस्वी : ईसुरी धारावाहिक रोचक ढंग से अपने पथ पर अग्रसर हो रहा है। **— उमाकांत दुबे, गुना, म.प्र.**

* * *

'साहित्य में दोहरी नैतिकता का सवाल' (अगस्त अंक) विषयक परिचर्चा के अंतर्गत प्रमुख साहित्यकारों के विचार जानने को मिले। इसके लिए **नवनीत** द्वारा पहल प्रशंसनीय है। आपने इस परिचर्चा के माध्यम से साहित्य के स्पंदित हृदय को छूने का प्रयास किया, निस्संदेह यह एक शुभ शकुन है। बहस को निरंतर रखा जाये, ताकि समकालीन साहित्य दोहरी नैतिकता की भूलभुलैया से निकल सके। **— प्रद्युम्न भट्ट, मंदसौर, म.प्र.**

नवनीत के अगस्त अंक में श्रद्धेय श्री माचवेजी का साक्षात्कार पढ़ा। सचमुच माचवेजी के अवसान से हिंदी साहित्य जगत की अपूरणीय क्षति हुई है। जटिल से जटिल विषय को भी अपनी सरल, सुबोध शैली के जरिये संप्रेषणीय बना देना उनकी विशेषता थी। दैनिक 'चौथा संसार' के जरिये उन्होंने पत्रकारिता जगत में भी अपनी उपस्थिति दर्ज करायी। निःसंदेह हिंदी साहित्य जगत में उनकी सेवाओं को भुलाना नहीं जा सकता।

— आनंद निगम, तराना, म.प्र.

* * *

आपके कार्यालय-माध्यम से प्रेषित **नवनीत** का अगस्त अंक नसीब हुआ। आत्मिक अशेष आभार। दिन-ब-दिन सारस्वत पत्रिका के निखरते साहित्यिक कलेवर से अभिभूत हूं। अध्यात्म से लगायत युगीन तल्खियों की-आईनादारी करती हुई पत्रिका, भरपूर-रसपूर है। बहुआयामी याहित्यिक संयोजना के लिए संपादकीय विभाग को अनेकशः बधाइयां।

— मधुर नज्मी, मऊ, उ.प्र.

* * *

अगस्त ९१ का **नवनीत** अंक देखा। अधिकांश सामग्री काफी अच्छी रही। लेख, कविताएं, कहानियां पसंद आयीं। 'नागपंचमी' पर्व पर लिखा गया लेख सरल एवं साहित्यिक भाषा से ओतप्रोत था। बालकथा भी अच्छी थी। दिनेश शुक्ल व कुंवर चंद्रप्रकाश सिंह की कविताएं अच्छी रहीं।

— बासुदेव मिश्र, सुल्तानपुर, उ.प्र.

* * *

नवनीत अगस्त अंक में आचार्य नरेन्द्रदेवजी व डॉ. संपूर्णानंदजी की मित्रता और आपसी विश्वास वाला प्रसंग पभावशाली रहा।

समाजवादी विचारक आचार्य नरेन्द्रदेव द्वारा एक अलग विचारधारा रखने वाले कांग्रेसी मुख्यमंत्री डॉ. संपूर्णानंदजी से अपने दल का घोषणा-पत्र तैयार कराकर बिंना जांच किये मुद्रणालय में छपने के लिए भेज देना एक मिसाल है। ऐसे उदाहरण महा-पुरुषों के जीवन में ही मिल सकते हैं।

— चरणदास प्रजापति, पन्ना, म.प्र.

* * *

नवनीत के अगस्त अंक में श्री कमला शंकर त्रिपाठी की कहानी 'साढ़े सात साती' काफी पसंद आयी। श्री त्रिपाठी ने कहानी के माध्यम से कभी शनि तो कभी किसी अन्य ग्रह का प्रकोप बतलाकर सीधे-साधे यजमानों को ठगनेवाले तथाकथित पंडितों की मक्कारी पर करारी चोट की है। इसी अंक में डॉ. प्रतीक मिश्र के गीत में नायिका की देह, उसके प्राण एवं रूप का सूक्ष्म एवं सरस वर्णन मन को मुदित कर गया। **— भरत सिंह, पटना, बिहार**

विविध उपयोगी सामग्री और साज-सज्जा की दृष्टि से **नवनीत** अभिनंदनीय है। जुलाई अंक में अयोध्या पर डॉ. कृष्णनारायण पांडेय का शोध-लेख मननीय है। वैदिक सरस्वती नदी का प्रवाह गुजरात की साबरमती से जोड़ना प्रमाणसम्मत नहीं है।

इस अंक में इतिहास-विषयक दूसरा लेख श्री अश्विनी केशरवानी का है।

अनेक वर्ष पूर्व मेरे निर्देशन में मध्य प्रदेश के ऐतिहासिक स्थल मल्हार का उत्खनन किया गया था। मेरे पूर्व शिष्य (अब पुरातत्व विभाग, सागर वि. वि. में प्रवाचक) डॉ. श्यामकुमार पांडेय का उस उत्खनन में सहयोग था। कार्य पूरा होने के बाद हम दोनों के नाम से "मल्हार" नामक पुस्तक प्रकाशित हुई थी। श्री केशरवानी ने इस पुस्तक से उक्त लेख के लिए सामग्री ली, पर पुस्तक या लेखकों के नाम देना उचित नहीं समझा। पुस्तक को ठीक से पढ़ कर यदि लेख लिखा जाता तो अशुद्धियां न होतीं। लेख में कोसल प्रदेश का नाम "कौशल" या "कोशल", स्कंद का नाम स्कंध, लकुलीश का लकुशीश, मल्हार के प्राचीन नाम मल्लिकापुर और मल्लापत्तन आदि अशुद्ध दिये हैं। कलचुरि-वंश का शासनकाल १०० से १३०० ई. दिया है। प्रसिद्ध डिंडिनेश्वरी देवी का निर्माण-काल कलचुरि संवत् ९०० से १३०० तक माना है। शिव की मूर्ति को सूर्य लिखा है। किसी पुरातत्ववेत्ता ने मल्हार से प्राप्त प्राचीनतम चतुर्भुज विष्णु मूर्ति को द्वारपाल नहीं कहा, जैसा लेखक ने लिखा है। विष्णु के हाथ में दंड न होकर गदा है। उनके सामने के दोनों हाथों में शंख था।

रामायण में कहीं ऐसा नहीं मिलता कि श्रीराम ने अपने वनवासी जीवन के दस वर्ष पंचतारा नामक स्थान में व्यतीत किये थे, जो मल्हार के समीप स्थित है।

आशा है इस प्रकार के लेख तैयार करते समय लेखक सावधानी बरतेंगे।

— कृष्णदत्त वाजपेयी, सागर, म.प्र.

* * *

नवनीत के जुलाई अंक में प्रकाशित सभी रचनाएं ठीक लगीं। 'कूड़े का ढेर' 'पगडंडी से राजमार्ग तक' एवं 'मिल ही जाते हैं सहारे ढूंढ़ने से' रचनाएं बहुत कुछ सोचने तर विवश करती हैं। 'भारतीय संस्कृति में संगीत' लेख के माध्यम से गर्गजी ने जिस सरलता से हमें संगीत से जोड़ा है, उसके लिए हम लोग उनके आभारी हैं।

ईसुरी बुंदेलखंड के कितने भी महान कवि रहे हों, किंतु अपनी प्रेयसी को इंगित करके गाये फाग किसी भी दृष्टि से उचित नहीं थे। जबकि रजऊ एक सम्मानित परिवार की बेटी और बहू थी। हां एक बात है कि 'दिव्य'जी ने

(शेषांश पृष्ठ ११ पर)

नवनीत

संपादक गिरिजाशंकर त्रिवेदी
उप-संपादक रामलाल शुक्ल
अतिरिक्त सहयोग } किशोरीरमण टंडन
प्रकाशक सु. रामकृष्णन्
वर्ष ४०, अंक १०

संस्थापक : कन्हैयालाल मुंशी
भारती : स्थापना १९५६
श्रीगोपाल नेवटिया
नवनीत : स्थापना १९५२

अक्तूबर १९९१

आवरण चित्र : **डॉ. जयसिंह नीरज** (राधाकृष्ण, अलवर शैली)

साज-सज्जा : ओके, शेणै, नीरज, पुरोहित, गोदीका,

कार्यालय : भारतीय विद्या भवन, क. मा. मुंशी मार्ग, बम्बई - ७
फोन : ८११४४६२/८११८२६१

हमारी हिन्दी जननी है

हम हिन्दी के पूत हमारी हिन्दी जननी है
जनम-जनम तक हमें इसी की सेवा करनी है
हम सब इसके माली हैं हिन्दी फुलवारी है
बलिहारी है हिन्दी की सौ-सौ बलिहारी है
हम हैं इसके सेवक रक्षक हम अनुयायी हैं
हम विषपायी जनम-जनम के हम विषपायी हैं
यही हमारी हंसी-ठिठोली बोली-भाषा है
संवेदन की करुणा की हिन्दी परिभाषा है
यही पर्व-त्यौहार राग-रंगों की दुनिया है
यही हिरामन तोता है, यह रावल मुनिया है
यह रहीम रसखान जायसी नानक वाली है
तरह-तरह के गीत चौपदे बानक वाली है
दोहे छप्पय छंद और चौपाई गहने हैं
अवधी, ब्रज, बुन्देली जानें कितनी बहनें हैं
तन है गंगा-जमुना इसका मन हरियाली है
ओस नहायी सुबह-सुबह की यह शेफाली है
नदियों-सी बलखाती चलती जंगल टीलों में
इसकी डुबकी धूप-चांदनी झरना झीलों में
तन भी इसका न्यारा सबसे मन भी न्यारा है
सूरदास की आंखों का यह सपना प्यारा है
हिन्दी के आंसू की कीमत आंकी नहीं गयी.

□ **कैलाश गौतम**

लछिमन रेखा कभी आज तक लांघी नहीं गयी
रत्नाकर पद्माकर दिनकर देव बिहारी हैं
पंत निराला इसकी थाली पान-सुपारी हैं
दीप शिखा देहरी की शोभा झिलमिल झिलमिल है
बच्चों की मीठी किलकारी इलबिल सिलबिल है
गांधी जैसे संरक्षक थे संग-संग रहते थे
फादर काभिल बुल्के इसको माई कहते थे
हिन्दी ने ललकारा है अंग्रेज भगाया है
भारतेन्दु ने इसे गले का हार बनाया है ।
प्रेमचन्द के जाने कितने नायक जीती है
जन गण मन के साथ-साथ अधिनायक जीती है
महावीर के तप का फल विस्तार है हिन्दी का
और हमारा जन मानस संसार है हिन्दी का
यही हमारे दद्दा की भगवान भारती है
यही चेतना यही प्रार्थना यही आरती है
जब तक हम जीयेंगे जै-जैकार मनायेंगे
नये-नये भावों से हम श्रृंगार सजायेंगे ।

— १३५, एम.आई.जी.,
प्रीतमनगर, सुलेय सराय,
इलाहाबाद, उ.प्र.

राजभवन,
मलाबार हिल,
बम्बई.

प्रिय सुहृद्

भूतकाल में पुलिस को अपराधियों को पकड़ने और अपराध दर्ज करनेवाला स्रोत समझा जाता था। वे कानून-व्यवस्था और अपराध के शोधक-स्रोत थे। बड़े शहरों की समस्याएं छोटे शहरों और देहातों की अपेक्षा भिन्न हैं। आज बड़े शहरों की तमाम समस्याओं में से सबसे बड़ी समस्या यातायात भी है, जिसका हमें सामना करना पड़ता है। हमारी कोई यातायात नीति नहीं है। हम भीड़ के घण्टों में शहर की सड़कों पर अतिक्रमण और गतिरोध देखते हैं और एक स्थान से दूसरे स्थान तक यात्रा करना कठिन हो जाता है। इसलिए वाहनों का संचालन पुलिस के प्रमुख कार्यों में से एक है। जब तक इसकी योजना ठीक ढंग से नहीं बनती, तब तक गड़बड़ी होती ही रहेगी। इसके लिए बहुत अच्छी योजना और समस्याओं की बहुत अच्छी समझ की जरूरत है। हमारे पास अपने यातायात सिग्नल्स के लिए नयी तकनीकें हैं। ये तमाम तकनीकें यातायात को सुचारु और व्यवस्थित रूप से चलाने के लिए एक साथ लायी गयी हैं। नहीं तो हम ऐसी स्थिति में पहुंच जायेंगे कि जिन वाहनों से हम प्रति घण्टा ६० से १०० कि. मी. तक की यात्रा कर सकते हैं, उनसे रेंगते हुए यात्राएं करेंगे और समय पर अपने गंतव्य तक नहीं पहुंच पायेंगे। इसलिए यह उन प्रमुख समस्याओं में से एक है, जिसकी योजना ठीक से बनायी जानी चाहिये।

जब औद्योगिक विकास होता है तो उसका संबंध दूसरों से भी होता है और इस विकास के साथ ही पुलिस की जिम्मेदारियां भी बढ़ जाती हैं। जब कभी औद्योगिक संबंधों में तनाव आता है, तब कानून और व्यवस्था की समस्याएं उपस्थित हो जाती हैं और अपराधियों की तरह नहीं, बल्कि एक दूसरे ढंग से संभालना पड़ता है। दूसरी ओर बड़ी समझदारी से काम लेना पड़ता है। मजदूरों में यह धारणा घर न करे कि उद्योगपतियों ने उन पर नजर रखने के लिए पुलिस बुलायी है या उद्योगपति यह न समझें कि पुलिस मजदूरों का

पक्षपात कर रहा है। उन्हें इस संबंध में उचित दृष्टिकोण अपनाना चाहिये। इसके लिए नये विशेषज्ञों की आवश्यकता है।

पुलिस को बहुत ही संवेदनशील समस्याओं का सामना करना पड़ता है, जैसे कि - राजनैतिक समस्याएं। आज देश में बहुत से राजनैतिक दल हैं और राजनैतिक दलों के कार्य विभिन्न प्रकार के प्रदर्शन हैं। विधान-सभा के अतिरिक्त गलियों और सड़कों पर भिन्न-भिन्न उद्देश्यों की पूर्ति के लिए प्रदर्शन होते हैं। मामूली से मामूली घटनाओं पर प्रदर्शन के लिए आह्वान किये जाते हैं। राजनैतिक अपने व्यक्तिगत कारणों से भी बन्द का आवाहन करते हैं और वह भी पूरे समाज के कार्यों को पंगु बनाते हुए। इन परिस्थितियों से कैसे निपटें? जुलूस वाहनों के मार्गों पर चलते है। सच कहा जाय तो जुलूस के प्रदर्शनकारी यह सोचते हैं कि जनता पर प्रभाव डालने का सबसे अच्छा तरीका यह है कि यातायात को अस्त-व्यस्त और अव्यवस्थित कर दिया जाय।

पुलिस अधिकारियों को मात्र कानून और व्यवस्था का ही व्यक्ति नहीं होना चाहिये, बल्कि उन्हें राजनीतिज्ञ और प्रशासक भी होना चाहिये। उन्हें भिन्न-भिन्न परिस्थितियों का सामना करने का प्रशिक्षण दिया जाना चाहिये।

इस संबंध में एक और प्रमुख और खतरनाक समस्या यह है कि जैसे-जैसे महानगरों का विकास होता जा रहा है, वैसे-वैसे राजनैतिक दलों की भांति असामाजिक तत्वों के संगठन भी बनते जा रहे हैं। वे अकेले या छोटे दलों में ही नहीं, बल्कि बड़े माफिया गिरोहों में अलग-अलग शहरों में काम करते हैं और वे समग्र समाज के लिए खतरनाक ताकतें बनते जा रहे हैं। वे मादक द्रव्यों के व्यापार में संलग्न हैं, जो करोड़ों का मुनाफा देनेवाला व्यापार है। वे तस्करी भी करते हैं। इस प्रकार मादक द्रव्यों के माफिया और तस्कर हमारे सामने हैं, उनसे कैसे निपटा जाय?

हम काले धन की बातें करते आ रहे हैं। मैं एक भूतपूर्व अर्थमंत्री के अनुभव से कहता हूं कि काला धन उद्योगों और व्यापारियों के पास नहीं है, बल्कि आज यह माफिया गिरोहों के पास है, जो मादक द्रव्यों और तस्करी का व्यापार करते हैं। उनके पास राजनीतिज्ञों और अधिकारियों को प्रभावित करने के तमाम साधन हैं। आज यह वास्तविक खतरा पैदा हो गया है। हमें इसकी जानकारी होनी चाहिये। यदि हम इन्हें ऐसा करने की छूट देते हैं तो हमारे यहां कानून का शासन नहीं, बल्कि माफिया गिरोहों का शासन होगा।

जबतक पुलिस बल को ठीक से सुसज्जित (साधनों से) और शिक्षित-

प्रशिक्षित नहीं किया जायेगा, तब तक इन समस्याओं का सामना करना संभव नहीं होगा। शहरों में पुलिस को एक विशेष कार्यभार संभालना है और यह तभी संभव होगा जब उसे विशिष्ट रूप से प्रशिक्षित, सुसज्जित और बेहतर समझदारी से लैस किया जायेगा।

इस प्रकार की अन्य समस्याएं भी हैं, जिन्हें हम सब जानते हैं। अंततः एक सभ्य समाज कानूनों को बनाता है और कानून लोगों को उसके पालन करने के लिए तैयार करते हैं। एक सभ्य समाज में अधिकांश लोग कानून के पाबंद होते हैं।

अतः समाज में व्यवस्था और शांति इस बात पर निर्भर करती है कि हम सब कानून के कितने पाबंद हैं। जब तक सब लोग कानूनों का पालन नहीं करेंगे, तब तक यह संभव नहीं होगा कि कानूनों को व्यवहारों में परिणत किया जाय और एक सुव्यवस्थित समाज तैयार किया जाय।

एक और बात जिसे कहना चाहता हूं कि हममें से कुछ लोग तथाकथित वी. आई. पीज. में लगे रहते हैं। एक राज्यपाल को एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाना पड़ता है और वे वाहनों को संचालित करते हैं। हां, इसके लिए कुछ आवश्यक व्यवस्था होनी चाहिये, किंतु जनता को असुविधाओं में डालकर नहीं। कभी राष्ट्रपति तो कभी राज्यपाल या कभी मुख्य मंत्री का आगमन होता है और वे सोचते हैं कि दस-पंद्रह मिनटों के लिए यातायात अवरुद्ध कर दिया जाय। दुर्भाग्य से हम में से कुछ समय की चिंता नहीं करते और इससे दूसरों की समस्याएं बढ़ जाती हैं। इस स्तर पर भी अध्ययन किया जाना चाहिये कि वाहनों का संचालन बिना किसी को असुविधा में डाले कैसे किया जाये?

मैंने वाहनों की बड़ी भीड़ में रानी और ब्रिटेन के प्रधानमंत्री को लंदन की गलियों में घूमते देखा है। वहां भी यातायात का संचालन होता है, किंतु कोई भी एक मिनट से अधिक की असुविधा का अनुभव नहीं करता। इसलिए मेरी इस संदर्भ में भी रुचि है, क्योंकि मैं राज्यपाल के पद पर हूं और मैं चाहता हूं कि लोगों की असुविधा का कारण न बन सकूं।

— आपका

सी. सुब्रमण्यम्

(पृष्ठ ३ का शेषांश)

उपन्यास को आंचलिक शब्दों में पिरोकर सुंदर शैली में लिखा है। इसके लिए वे निश्चय ही प्रशंसा के पात्र हैं।

— उर्मिला सिंह, कानपुर उ.प्र.

* * *

नवनीत हिन्दी की पत्रिकाओं में भारतीय संस्कृति का वास्तविक **नवनीत** है। जुलाई अंक आद्योपांत पढ़ा। 'अयोध्या की प्राचीनता', 'मिथिला स्थापत्य कला' तथा 'जहां मर्द परदा करते हैं' में जानकारी खोजपूर्ण एवं संग्रहणीय थी। 'पगडंडी से राजमार्ग तक' बहुत ही रोचक तथा 'अनाम रिश्ते' कहानी बहुत ही मार्मिक थी। आवरण-चित्र के लिए श्री देवव्रत बनर्जी को बधाई। बच्चों के लिए छोटे नाटक भी जरूर दिया करें, नाटक बिल्कुल नहीं आते, जिसकी कमी खलती हैं।

— के. सी. राठौर, भोपाल, म.प्र.

* * *

नवनीत के जुलाई अंक से रोचक सामग्री तथा साहित्यिक गतिविधियों की पूरी जानकारी मिली। 'देवीदत्त शुक्ल' शताब्दी समापन समारोह का ब्यौरा पढ़कर बेहद खुशी होना स्वाभाविक है। शुक्लजी ने 'सरस्वती' के माध्यम से नये लेखकों को प्रोत्साहन दिया - मुझे भी। उनकी स्मृति को मेरा प्रणाम। पं. देवीदत्त शुक्ल संस्थान की स्थापना का स्वागत है। एक भरा-पूरा ग्रंथ शुक्लजी पर निकलना आवश्यक है। उनके योगदान पर जितना भी लिखा जाय कम है। पं. रमादत्त शुक्ल बधाई के पात्र हैं।

— रमा सिंह, लखनऊ, उ.प्र.

* * *

नवनीत का जुलाई अंक देखने का अवसर मिला। पत्रिका का आवरण-पृष्ठ काफी चित्ताकर्षक बन पड़ा है। बधाई। प्रकाशित सभी स्तंभ महत्वपूर्ण एवं रुचिकर प्रतीत हुए। कहानी 'एक और सीता', 'अनाम रिश्ते', 'नीड़ की तलाश' ने मन को काफी प्रभावित किया। रचनाकारों को साधुवाद। पत्रिका में अंतिम स्तंभ 'दो क्षण हंस न लें' का अभाव बहुत ही खटका।

— डॉ. रामप्रेम सिंह 'निराला', समस्तीपुर, बिहार

* * *

जुलाई अंक में **नवनीत** की रचनाएं लगभग सभी मैंने पसंद की हैं। लोग अच्छा लिख रहे हैं या आप अच्छा लिखवा लेते हैं - सोच रहा हूं। सच, पुराने तो पुराने (वरिष्ठ) लेखकों के साथ कनिष्ठों की लेखनी भी स्थान पा रही है।

डॉ. कृष्णनारायण पांडेय ने 'अयोध्या की प्राचीनता' में जैनों की पुरातनता पर कलम नहीं चलायी, उसे भी स्पर्श किया जा सकता था।

— सुरेश सरल, जबलपुर, म.प्र.

सांस्कृतिक मंच

शुक्लजी का नार्वे में सम्मान

ओसलो में गत दिनों भारतीय साहित्यकार एंव पत्रकार सुरेशचन्द्र शुक्ल का सम्मान किया गया। श्री शुक्ल का यह सम्मान उनके सांस्कृतिक एंव मानवाधिकार के कार्यों के लिए एक प्रतिष्ठित नार्विजन संस्थान द्वारा किया गया।

नार्विजन राजा के पदक से सम्मानित एवं संस्थान के अध्यक्ष एडवोकेट सिगरीद ओइहाडगेन ने कहा कि सुरेशचन्द्र शुक्ल के कार्यों से नार्वे और भारत के सांस्कृतिक संबंध मजबूत हुए हैं।

श्री सुरेशचन्द्र शुक्ल ग्यारह वर्ष पूर्व नार्वे आये थे। नार्वे में वे भारतीय संस्कृति एंव हिन्दी का प्रचार और प्रसार कर रहे हैं तथा नार्विजन पत्र (समाचार पत्र) से जुड़े हुए हैं।

श्री शुक्ल के चार काव्य संग्रह भारत से प्रकाशित हो चुके हैं।

— माया भारती

* * *

बेल्जियम में रामायण की गूंज

हाल में ही बेल्जियम के ल्युबेन नगर में स्थित कैथोलिक विश्वविद्यालय में त्रिदिवसीय अष्टम 'अंतर्राष्ट्रीय रामायण सम्मेलन' सम्पन्न हुआ। इसका उद्घाटन भारत के राजदूत श्री ए. के. सेन गुप्ता ने किया तथा समापन करते हुए श्री लल्लन प्रसाद व्यास ने नवां 'अंतरराष्ट्रीय रामायण सम्मेलन' इण्डोनेशिया में आयोजित करने की घोषणा की।

सम्मेलन की मुख्य चर्चा 'रामायण में विश्वव्यापी मानव मूल्यों' विषय के इर्द-गिर्द घूमती रही। इसमें १२ देशों के ५० रामायण के विद्वानों ने भाग लिया, जिसमें भारत की संख्या लगभग २० थी। यूरोप में होने वाला यह अपने ढंग का पहला रामायण आयोजन था।

— अखिल

* * *

'शिल्पी' की चित्र-प्रदर्शनी

कानपुर विश्वविद्यालय के रजत जयंती समारोह के अवसर पर प्रख्यात चित्रकार संस्था 'शिल्पी' ने एक चित्र-प्रदर्शनी का आयोजन किया, जिसमें कानपुर विश्वविद्यालय से संबद्ध चित्रकारों ने अपनी कृतियां प्रदर्शित कीं। इस चित्र-प्रदर्शनी में ३२ कलाकारों की बत्तीस कृतियां प्रदर्शित

की गयी थीं।

डॉ. मकबूल अंसारी, डॉ. एस. एन. सक्सेना, डॉ. एस. पी. सक्सेना, डॉ. प्रेमा मिश्र, डॉ. आईवी. रुवेन, डॉ. शशी भटनागर, व दिनेश कुमार मिश्र आदि के चित्र पूर्व- प्रदर्शित थे। श्रीमती कोनिका बनर्जी का चित्र 'मून लाइट' तो वर्ष १९६८ का बना चित्र था।

श्रीमती शान्ती चौधरी, श्रीमती चित्रा शर्मा, कु. अलका कटियार, कु. दीपा मिश्र 'दीपाली', श्रीमती रमा वर्मा, योगेन्द्र देव सिंह, डॉ. रामेश्वर वर्मा, कु.विनीता सक्सेना, श्रीमती सरला सिंह आदि की कृतियां कलाकार की साधना को मुखरित करती हैं। बी. एन. सिंह की कृति 'विरहणी' धातु—मिश्रित सुंदर रचना है।

इस चित्र-प्रदर्शनी का उद्घाटन कानपुर विश्वविद्यालय के कलुपति श्री विश्वम्भर नाथ उपाध्याय ने किया।

— डॉ. रामेश्वर वर्मा

* * *

मुकेश की पुण्य-तिथि

'सत्कार' म्युजिकल आर्गनाइजेशन, रायबरेली के तत्वावधान में अमर गायक मुकेश की १५ वीं पुण्य-तिथि 'एक शाम मुकेश के नाम' संगीत-संध्या का आयोजन किया गया। जिसमें टी. एन. मिश्रा एवं अनिल-नीता वैलिंगटन ने मुकेश के हृदयस्पर्शी गीत गा कर एक बार पुनः स्व. मुकेश की याद को ताजा कर दिया।

कार्यक्रम के अध्यक्ष श्री ए. सी. गौड़ ने मुख्य अतिथि श्री वाई. एन.पाठक, मुख्य चिकित्साधिकारी का स्वागत किया। श्री पाठक ने मुकेश के चित्र पर माल्यार्पण कर दीप प्रज्वलित किया। संयोजक उजैर अहमद खां वारसी ने इस अवसर पर संरक्षक श्री रवीन्द्र जैन (संगीतकार बंबई) एवं डॉ. गिरिजा-शंकर त्रिवेदी (संपादक 'नवनीत' बंबई) के बधाई संदेशों को पढ़कर सुनाया

— टी.एन. मिश्र

* * *

कवि दिवस पर नवगीत संग्रह

हिन्दुस्तानी एकेडमी ने दिनांक ३ अगस्त को राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त का जन्म दिन इलाहाबाद में कवि दिवस के रूप में मनाया। इसी आयोजन में हिन्दुस्तानी एकेडमी द्वारा प्रकाशित कवि अमरनाथ श्रीवास्तव के नवगीत संग्रह 'गेरू की लिपियां' का विमोचन कथाकार श्री अमरकांत ने किया। इस अवसर पर श्री कैलाश गौतम ने लोकार्पित काव्य संग्रह 'गेरू की लिपियां' पर एक चर्चा पढ़ा। संग्रह के रचनाकार अमरनाथ श्रीवास्तव ने नवगीत की दृष्टि और उसकी भाषिक संरचना पर अपने विचार व्यक्त किये। कवि श्री शिवकुटीलाल वर्मा की अध्यक्षता में एक

कवि-गोष्ठी भी आयोजित की गयी।

— अखिलेश शुक्ल

* * *

'पत्नी चालीसा' का विमोचन

विगत दिनों रांची में स्थानीय हास्य-व्यंग्य रचनाकारों का एक साहित्यिक सम्मेलन हुआ। प्रयोजन था युवा व्यंग्यकार शंकर मुनि राय गड़बड़ के कविता संग्रह 'पत्नी चालीसा' का विमोचन। विमोचनकर्ता थे बिहार राष्ट्रभाषा हिन्दी प्रगति समिति के अध्यक्ष डॉ. रामवचन राय तथा विशिष्ठ अतिथि के रूप में उपस्थित थे वेंकटेश्वर विश्वविद्यालय तिरुपति के हिन्दी विभागाध्यक्ष डॉ.डी. दस्तगिरि।

व्यंग्यकार डॉ. सिद्धनाथ कुमार ने अध्यक्षता की। डॉ. रामवचन राय व डॉ. अशोक प्रियदर्शी ने प्रस्तुत काव्यसंग्रह में हास्य-व्यंग्य के माध्यम से सांस्कृतिक मूल्य की बात कही। कार्यक्रम का संचालन कर रहे थे डॉ. बालेन्दु शेखर तिवारी।

— शंकर मुनि राय 'गड़बड़'

* * *

तुलसी जयंती सम्पन्न

फैजाबाद : गत १६ अगस्त को अवधी के प्रसिद्ध कवि पंडित सत्यनारायण द्विवेदी 'श्रीश' की अध्यक्षता में तुलसी जयंती सम्पन्न हुई। कार्यक्रम के प्रारंभ में अवधी साहित्य संस्थान के अध्यक्ष पंडित राजबहादुर द्विवेदी ने संत तुलसीदास के चित्र पर माल्यार्पण किया।

उक्त अवसर पर श्री द्विवेदी ने संत तुलसीदास के जीवन पर प्रकाश डालते हुए कहा कि वे सर्वव्यापी हो गये हैं। उन्होंने ऐसे आदर्श मानव का अपने रामचरित मानस में चित्रण किया है, जो अन्य किसी भी साहित्य में दुर्लभ है। डॉ. रामशंकर त्रिपाठी ने कहा कि तुलसीदास का रामचरित जन मानस के गले का कंठहार है।

इस अवसर पर स्थानीय कवियों में सर्वश्री अम्बिका प्रसाद त्रिपाठी 'मतवाला', राजेन्द्र प्रकाश वर्मा, रामानंद सागर व डॉ. राधा पांडेय ने तुलसीदास के प्रति अपनी काव्यांजलि अर्पित की। — राजेन्द्र प्रकाश वर्मा

* * *

'अक्षर देश' का लोकार्पण

कानपुर नगर की प्रतिष्ठित साहित्यिक संस्था 'अनुरंजिका' तथा 'उपनिषद' के तत्वावधान में तुलसी जयंती उत्सव के साथ कविवर ओमकारनाथ मिश्र वीरेंश कात्यायन की चौथी काव्यकृति 'अक्षर देश' का लोकार्पण सम्पन्न हुआ। कृति का लोकार्पण मुख्य आयकर आयुक्त जी. सी. अग्रवाल ने किया।

मानस संगम की ओर से मदन शर्मा ने उत्तरीय एवं मानस संगम द्वारा प्रकाशित साहित्य प्रदान किया। उपनिषद के संरक्षक श्रीकांत तिवारी ने उत्तरीय वस्त्र आदि के साथ रु.५०१ की धनराशि प्रदान की। नागरिक जागृति मंच की ओर से भी रु. ५०१ की धनराशि प्रदान की गयी तथा सेठ छन्नूलाल की ओर से अभिनंदन पत्र भेंट किया गया। श्रीमती सरला सिंह 'मंजु' ने कवि को तैलचित्र समर्पित किया।

समारोह के अध्यक्ष डॉ. बृजलाल वर्मा, मुख्य अतिथि जी. सी. अग्रवाल, हिन्दी संस्थान के उपाध्याय परिपूर्णानंद वर्मा, प्रो. सेवक वात्स्यायन, डॉ. माधवीलता शुक्ल एवं कालीशंकर अवस्थी ने कृतिकार तथा तुलसी के व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर प्रकाश डाला। **— मधुलिका जयराम**

* * *

कवि-गोष्ठी

विगत १५ अगस्त को 'प्रगतिशील लेखक संघ' समस्तीपुर की ओर से स्वाधीनता दिवस के उपलक्ष्य में एक भव्य कवि-गोष्ठी आयोजित की गयी। गोष्ठी की अध्यक्षता एम. पी. 'जौहर' ने की तथा संचालन किया गीतकार लक्ष्मी ना. 'जिज्ञासु' ने।

भाग लेने वाले कवियों में प्रमुख थे सर्वश्री नाशाद 'औरंगावादी', रजा 'अश्क', रघुवंश 'रसिक', बालेश्वर 'अभिनव', अजीम 'अशरफ' अरुण 'अभिषेक', चंद्रभूषण 'चंद्र', भोला ठाकुर, द्विनेश ठाकुर, 'बारूद' जी तथा नंदकिशोर शर्मा। **— नंदकिशोर शर्मा**

* * *

साहित्यकारों को श्रद्धांजलि

'संबोध' और 'मुखौटा' नाटय संस्था ने हिन्दी हाई स्कूल घाटकोपर में दिवंगत साहित्यकारों डॉ. शंभुनाथ सिंह, शरद जोशी और रमाकांत को श्रद्धांजलि अर्पित करने के लिए डॉ. गिरिजाशंकर त्रिवेदी की अध्यक्षता में एक सभा आयोजित की। इस अवसर पर डॉ. त्रिवेदी ने अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए कहा कि शंभुनाथ सिंह सजग निर्भीक और मिट्टी से जुड़े हुए रचनाकार थे और शरद जोशी मानवीय पक्ष के व्यंग्यकार। सच्चिदानंद सिंह समीर ने शंभुनाथ सिंह को जीवट और संघर्ष का नवगीतकार बताया। डॉ. रविनाथ सिंह ने डॉ. शंभुनाथसिंह को गंतव्य का ज्ञाता गीतकार बताते हुए शरद जोशी को वर्तमान परिवेश का व्यंग्यकार माना।

इस अवसर पर भगवत्लाल उत्पल, संतोष जैन, राजाराम सिंह, एन. बी. सिंह नादान, प्रीतम कुमार सिंह त्यागी, देवधुरन्धर समीर, विधु भूषण त्रिवेदी, राजीव सारस्वत, राजदेव सिंह, मुरलीधर पाण्डेय और डॉ. कैलाशनाथ पवार ने भी अपने श्रद्धा-पुष्प दिवंगत रचनाकारों को अर्पित किये।

— सच्चिदानंदसिंह समीर

मासिक भविष्यफल : अक्तूबर - ९१

□ पं. वी. के. तिवारी

मेष : (१४ अप्रैल - १३ मई)

इस तारीख तक ग्रह गोचरजन्य स्थितियां आपके अनुकूल प्रभावदायिनी रहेंगी। समय का सदुपयोग राजनीति एवं व्यवसाय से संबद्ध व्यक्तियों को करना चाहिये। व्यवधान, जटिलता एवं प्रतिकूलता पर आप विजयश्री हासिल करने में सफल रहेंगे। ११ से मास के अंत तक अपने ही लोग कठिनाइयों को जन्म देने वाले सिद्ध होंगे। दांपत्य साथी की पीड़ा बढ़ेगी। पारिवारिक सुख में वाधा रहेगी। राजनीतिक जीवन में प्रतिष्ठा बढ़ेगी। नौकरी में परीक्षा में सफलता मिलेगी।

वृष : (१४ मई - १४ जून)

दिनांक १५ तक पूर्व स्थितियों में कोई परिवर्तन होगा, कहना कठिन है। प्रतिकूल प्रभाव से मन में उद्वेग, उदासीनता एवं चिंता बढ़ती रहेगी। १५ के उपरांत मासांत तक अभीष्ट मंतव्य पूर्ण होंगे। धन, सुख, उपभोगादि में वृद्धि होगी। राजनीतिकों को जनसंपर्क से लाभ होगा। मनोबल एवं शारीरिक सुख में वृद्धि होगी। विरोधियों पर विजय होगी। कार्य की दिशा में प्रगति होगी।

मिथुन : (१५ जून - १६ जुलाई)

माह का पूर्वार्ध दांपत्य सुख की दृष्टि से उत्तम है। आपसी संबंधों में प्रगाढ़ता आयेगी। स्थायी संपत्ति हेतु अनुकूल स्थितियां बनेंगी। यात्रा असुविधापूर्ण रहेगी। मानसिक कष्ट से मुक्त हो पाना आपके मनोबल पर निर्भर करेगा। स्वास्थ्य के प्रति ध्यान रखना अपरिहार्य रहेगा। इस माह संतान पक्ष एवं विरोधी पक्ष की ओर से विशेष ध्यान रखना उपयुक्त रहेगा। माह के उत्तरार्ध में आर्थिक कठिनाई एवं वार्ता असफलता की स्थिति बनी रहेगी। विद्या के क्षेत्र में सफलता मिलेगी। यह माह यात्रा एवं नये कार्य हेतु उपयोगी नहीं है।

कर्क : (१७ जुलाई - १५ अगस्त)

दिनांक ११ तक महत्वपूर्ण कार्य, यात्रा एवं जोखिम के कार्यों का सूझबूझ

के साथ श्रीगणेश करें। शारीरिक सुख उत्तम रहेगा। संतान पक्ष से यश वृद्धि होगी। गृहिणी का सहयोग वांछित रूप से मिलेगा। पूर्वार्ध की तुलना में उत्तरार्ध में पारिवारिक सुख एवं मैत्री सुख यथेष्ठ मिलेगा। राजनीतिज्ञों को उत्तरार्ध में सर्वसाधारण से असहयोग मिलेगा। स्थायी सम्पत्ति के कार्यों में व्यवधान उत्पन्न होंगे। आर्थिक स्थिति सामान्यतः संतोषप्रद रहेगी।

सिंह : (१६ अगस्त - १६ सितंबर)

यह माह विचित्र आकस्मिकताओं से पूर्ण रहेगा। कब पारिवारिक सुख-सहयोग प्राप्त होने लगे और कब आरोप, अवमानना और असहयोग मिले कहना मुश्किल है। व्यावसायिक उलझनें बढ़ेंगी। आर्थिक स्थिति संतुलित रहेगी। उत्तरार्ध में शनैः शनैः आपकी स्थिति सुदृढ़ होती जायेगी। लंबित कार्यों का निपटारा त्वरित गति से होता जायेगा। विद्यार्थी वर्ग को सुख के अवसर यथेष्ठ मिलेंगे।

कन्या : (१७ सितंबर - १६ अक्तूबर)

माह के पूर्वार्ध में **स्वास्थ्य** के प्रति विशेष ध्यान रखें। जोखिम लेना हित कर नहीं होगा। दुर्घटना अथवा विरोधी वर्ग की शक्ति का आकलन कम न करें। मान-सम्मान प्रभावित रहेगा। कार्य में प्रगति विलंबित गति से होगी। आत्मीय वर्ग से विवाद की स्थिति निर्मित हो सकती है। उत्तरार्ध में धीरे-धीरे स्थिति आपके पक्ष में होती जायेगी। कोई विशेष सफलता मिलना तो संदिग्ध ही है, परंतु परिवार एवं मित्र वर्ग के वांछित सुखों की सृष्टि होगी।

तुला : (१७ अक्तूबर - १५ नवंबर)

वर्ष के प्रतिकूल समय के दौर से आप गुजर रहे हैं। ग्रहजन्य प्रतिकूलता में कमी आपके विगत कार्यों, मित्रों एवं सूझबूझ के माध्यम से ही हो सकती है। स्वास्थ्य में गिरावट आयेगी। नौकरी में पद-हानि या प्रतिष्ठा हानि संभावित है। व्यवसाय में कठिनाइयों का सैलाब उमड़ता प्रतीत होगा। उदर या नेत्र-पीड़ा संभावित है। दांपत्य साथी से कलह या कष्ट रहेगा। विद्यार्थी एवं वकील वर्ग को विशेष प्रतिकूलता मिलेगी। इस माह नये कार्य का श्रीगणेश, विशेष उद्देश्य से यात्रा, महत्वपूर्ण वार्ता आदि में विशेष व्यवधान उत्पन्न होंगे।

वृश्चिक : (१६ नवंबर - १५ दिसंबर)

प्रारंभिक दिनों में सुखद समय आपके साथ चलेगा, परंतु आने वाले दिनों में स्थिति बदल जायेगी। मानसिक कष्ट बढ़ता जायेगा। नौकरी या रोजगार में कार्य या परिश्रम का यथेष्ठ प्रतिफल मिलना कठिन है। दांपत्य साथी से दुःख ही हाथ लगेगा। व्यय में वृद्धि होगी। मतभेद एवं विरोध बढ़ेगा। प्रत्येक कार्य में चिंतन, मनन, धैर्य के उपरांत ही प्रवृत्त होना उचित रहेगा। उच्चपदस्थ

व्यक्तियों को परेशानी होगी।

धनु : (१६ दिसंबर - १३ जनवरी)

वर्ष का श्रेष्ठ समय आपके जीवन में पदार्पण कर रहा है। वर्ष भर की पीड़ा और वेदना समाप्त होगी। दीर्घकालिक लाभ होगा। मंगलोत्सव के अवसर हैं। स्वार्थ से परे व्यक्ति आपके लिए उपयोगी सिद्ध होंगे। लंबी यात्रा के सयोग हैं। सामाजिक, राजनीतिक एवं व्यावसायिक स्तर में वृद्धि होगी। मानसिक शांति एवं गृह सुख में वृद्धि होगी। योजनाबद्ध प्रयासों की परिणति आपके पक्ष में होगी।

मकर : (१४ जनवरी - १२ फरवरी)

माह का पूर्वार्ध बाधाओं से युक्त रहेगा। शारीरिक पीड़ा, कार्यावरोध, पराजय जैसे उत्पीड़न को भोगना पड़ सकता है। धन का अपव्यय, गृह सुख में कमी, यात्रादि की स्थिति बनेगी। ११अक्तूबर तक महत्वपूर्ण वार्ता, यात्रा, जोखिम आदि की दृष्टि से नितांत अनुपयुक्त समय है। उत्तरार्ध में पद प्रतिष्ठा कार्य दायित्व में वृद्धि एवं सुयश मिलेगा। परहित के कार्य संपादित होंगे। व्यक्तिगत प्रभाव बढ़ेगा।

कुंभ : (१३ फरवरी - १४ मार्च)

यह माह विभिन्न स्तरों पर प्रतिकूलता स्थिति वाला रहेगा। पत्नी के स्वास्थ के प्रति ध्यान रखें। रोग के प्रति सावधानी उपयोगी रहेगी। धैर्य, मनोबल एवं स्थितिपरक विश्लेषण कर अपने कार्य में प्रवृत्त होना उचित रहेगा।

मीन : (१५ मार्च - १३ अप्रैल)

आपके प्रेम संबंधों में बिखराव आ सकता है। संयत, सौम्य व्यवहार आपको कठिनाई से बचायेगा। दांपत्य सुख में कमी आयेगी। मनोकष्ट या मनोवेदना की संभावना है। राजनीति एवं व्यवसाय में संधि की विवशता उत्पन्न होगी। यात्रादि में कष्ट होना सहज है। आत्मीय वर्ग का व्यवहार भी शत्रुवत प्रतीत होगा। स्त्रीपक्ष की ओर से समस्याएं बढ़ेंगी। ११ तारीख के पश्चात् निश्चय ही सफलता सुख, समृद्धि, संतान सुखादि की स्थितियां उत्पन्न होंगी।

— देवलोक कॉलोनी, सी.टी.ओ. बेरागढ़, भोपाल, म.प्र.

□

चंदे की दरें : एक वर्ष ८० रु.; दो वर्ष : १५० रु.; तीन वर्ष : २०० रु.; पांच वर्ष : ३५० रु.; दस वर्ष : ७०० रु.; □ विदेशों में समुद्री मार्ग से (एक वर्ष के लिए) पाकिस्तान, श्रीलंका १४० रु.; अन्य देश २०० रु. □ हवाई डाक से (एक वर्ष के लिए) प्रत्येक देश के लिए : ३३० रु.; □ बम्बई से बाहर चेक भेजनेवाले ७ रु. अधिक भेजें □ चेक ड्राफ्ट 'भारतीय विद्या भवन' के नाम से भेजें।

बुद्धिमान ब्राह्मण

□ श्याममनोहर व्यास

धारानगरी के राजा भोज विद्वानों की बुद्धिपरीक्षा लेने में बड़े चतुर थे। वे अपने दरबार में गुणीजनों को पूरा आदर देते थे। एक से बढ़कर एक गुणीजन उनके दरबार की शोभा बढ़ाते थे।

धारानगरी से दूर एक गांव में एक ब्राह्मण रहता था। वह विद्वान् था पर गरीब था। उसे इतनी आय नहीं होती थी कि उसका जीवन-यापन ढंग से हो सके। उसका नाम चन्द्र शर्मा था।

एक दिन उसकी पत्नी ने उसे राय दी, 'प्रिय! आप इतने विद्वान् हो, क्यों नहीं धारानगरी के राजा भोज के दरबार में जाकर अपनी विद्वता का परिचय दो। वे विद्वानों का बड़ा सम्मान करते हैं।'

चन्द्र शर्मा ने पत्नी की बात मान कर धारानगरी जाने का निश्चय किया।

जब वह धारानगरी पहुंचा तो राजमहल के वैभव को देख कर चकित हो गया। भव्य ऊंचा राजमहल, बड़ा-सा दरवाजा, उसके बाहर खड़े सतर्क पहरेदार। बिना जांच-पड़ताल किये वे किसी को अन्दर नहीं जाने देते थे।

चन्द्र शर्मा दरवाजे के पास पहुंचा तो पहरेदार ने टोका - 'तुम किससे मिलना चाहते हो, अपना परिचय दो।'

चन्द्र शर्मा ने कुछ सोच कर कहा - 'भाई मैं राजा भोज से मिलना चाहता हूं। उन्हें कहना कि उनका मौसेरा भाई आया है।'

पहरेदार ने चकित होकर उसे घूरा। उसने सोचा, यह दीन-हीन व्यक्ति राजा का मौसेरा भाई कैसे?

वह राजा भोज के पास गया और उन्हें चन्द्र शर्मा के आने की सूचना दी।

राजा भोज उस समय अपने दरबारियों से कुछ सलाह-मशविरा कर रहे थे। उन्होंने सोचा - मेरा कौन-सा मौसेरा भाई? मेरी मां के तो कोई बहन ही नहीं है।

फिर भी राजा ने चन्द्र शर्मा को आदर के साथ दरबार में बुला भेजा।

दीपावली विशेषांक

हमारा नवंबर-१९९१ का अंक दीपावली विशेषांक के रूप में मनोहारी साज-सज्जा के साथ विविधतापूर्ण विशिष्ट सामग्री के साथ प्रकाशित होगा। अतएव पाठकों एवं एजेन्टों से अनुरोध है कि उसकी अग्रिम प्रतियां सुरक्षित कराना न भूलें। **—व्यवस्थापक**

चन्द्र शर्मा राजा का अभिवादन कर एक नियत स्थान पर बैठ गया। राजा ने पूछा - 'विप्रवर, आप मेरे मौसेरे भाई कैसे लगते हैं? मेरे तो कोई मौसी ही नहीं है।'

विद्वान् चन्द्र शर्मा ने उत्तर दिया - 'महाराज! परम पिता परमात्मा की दो पुत्रियां हैं। पहली सम्पत्ति और दूसरी विपत्ति। आप पहली पुत्री के पुत्र हैं, क्योंकि उसकी आप पर कृपा है। मैं दूसरी पुत्री का बेटा हूं, निर्धन और अभावग्रस्त। चूंकि आप का विपत्ति से पाला नहीं पड़ा है, अतः आप उसे पहचानते नहीं।'

चन्द्र शर्मा का ऐसा सूझ-बूझ भरा उत्तर सुन कर राजा भोज बड़े प्रसन्न हुए।

राजा ने कहा—'विप्रदेव, अब मैं आपसे चार प्रश्न पूछूंगा, सही उत्तर मिलने पर आपको दरबार में रख लिया जायेगा।'

भोज ने पहला पश्न पूछा - 'दूध किसका अच्छा होता है?'

चन्द्र शर्मा ने सोच कर उत्तर दिया - 'दूध मां का अच्छा होता है, जो हमें प्राणदान देता है।'

भोज ने दूसरा प्रश्न पूछा - 'पत्ता किसका अच्छा होता है?'

विद्वान् चन्द्र शर्मा ने थोड़ा विचार कर कहा, 'पत्ता पान का अच्छा होता है, जिसे राजा, रईस, गरीब सब खाते हैं।'

भोज ने तीसरा प्रश्न पूछा - 'फूल किसका अच्छा होता है?'

विद्वान् ब्राह्मण ने उत्तर दिया - 'महाराज! फूल कपास का अच्छा होता है, जो हमें कपड़ा देता है, जिससे हम अपना शरीर ढकते हैं।'

राजा ने अंतिम प्रश्न पूछा - 'मिठास किसकी अच्छी होती है?'

चन्द्र शर्मा ने उत्तर दिया - 'महाराज, मिठास वाणी की अच्छी होती है, जो हर एक को अपने वश में रखने की ताकत रखती है। मीठी वाणी का असर तुरन्त होता है।'

राजा भोज चारों प्रश्नों के तर्कयुक्त सही उत्तर सुन कर बड़े प्रसन्न हुए। उन्होंने चन्द्र शर्मा को काफी धन दिया और दरबार में रख लिया।

— १५ पंचवटी, उदयपुर (राज.)

□

गांधीजी की चुनौती पर

□ डॉ. शीला टावरी

गांधीजी एक युग पुरुष रहे हैं। उन्होंने भविष्य को ध्यान में रखते हुए, आनेवाले समय में किस तरह का सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक तथा औद्योगिक ढांचा बने, इस पर गहराई से सोचा, मनन किया और अपने विचारों को लिखित रूप में रखा। शायद उन्हें कुछ कमियों की भनक अपने जीवन में अंतिम क्षणों में लग गयी थी। उनके विचारों को कई जगह तोड़मरोड़ कर भी प्रस्तुत किया गया। एक भ्रांति यह भी फैलायी गयी कि गांधीजी विज्ञान-विरोधी और यंत्र-विरोधी रहे। किंतु सच्चाई यह है कि उन्हें ग़लत तरीके से दर्शाया गया। वे बराबर कहते रहे कि उनका विरोध यंत्रों के संबंध में फैले हुए दीवानेपन से है, यंत्र से नहीं। यंत्र व्यक्ति के लिए है, न कि व्यक्ति यंत्र के लिए। ऐसे सादे यंत्र बनें, जिससे व्यक्ति की मेहनत बचे, झोंपड़ी में रहनेवालों के कामों का बोझा
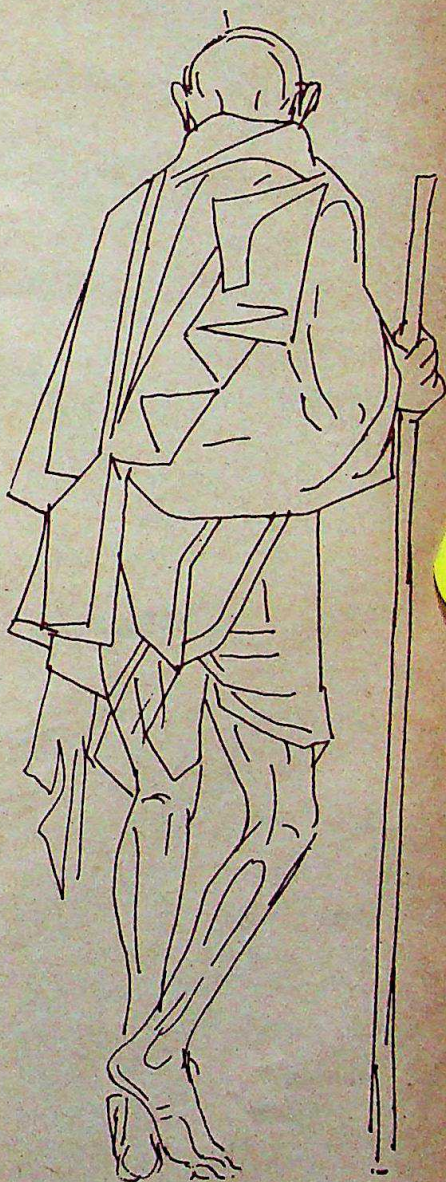
कम करें और उनके जीवन की गुणवत्ता बढ़ायें। आज हम स्पष्ट रूप से देख सकते हैं कि शहरों तथा बड़ी-बड़ी फैक्टरियों ने जीवन स्तर कहां से कहां पहुंचा दिया। बड़े-बड़े बांधों और फैक्टरियों ने जीवन की गुणवत्ता बढ़ाने के बजाय उसे समाप्त कर दिया। विज्ञान का अध्यात्म से जो समन्वय होना चाहिये था, उसके अभाव में हम देख रहे हैं कि किस तरह परावलम्बन बढ़ गया है और संतुलन बिगड़ गया है। भौतिक शक्ति और भौतिक आवश्यकताएं ही मानवता का पर्याय नहीं हैं। अपनी संस्कृति के साथ वर्तमान के वैज्ञानिक तारतम्य को बैठाना जरूरी है।

ग्रामोद्योगों के बारे में भी यही धारणा फैला दी गयी कि ग्रामोद्योगों से उत्पादित वस्तुएं महंगी हैं और इस तरह देश का विकास सम्भव नहीं हैं। किंतु यदि हम संकलित रूप से आर्थिक नज़रिये से अध्ययन करें तो यह पता चलेगा कि यह भावना कितनी ग़लतफहमी से भरी हुई है। आज जिस तरह देश बेरोजगारी, शहरीकरण तथा प्रदूषण आदि समस्याओं से जूझ रहा है, उसका ग्रामोद्योग से अच्छा दूसरा कोई विकल्प नहीं हो सकता। आर्थिक स्वावलम्बन के बजाय, हर तरीके से परावलम्बी बनकर गांधीजी के विचारों को अव्यावहारिक दर्शाया जाता है। इसी तरह शराबबंदी गुजरात और वर्धा मे चलायी गयी। लेकिन उसे मानवता से न जोड़कर केवल तमाशे का एक जरिया बना दिया गया।

गांधीजी का सामयिक महत्व

आज की आर्थिक, राजनीतिक, सामाजिक परिस्थितियों में यदि हम गांधीजी द्वारा बताये गये रास्तों का परीक्षण करें तो हमें स्वयं पर आश्चर्य होता है कि हम कैसे ग़लत हो गये। अब समय आ गया है, जब हमें नये सिरे से अपनी दिक्कतों को संकलित दृष्टिकोण अपनाते हुए व्यावहारिक तरीके से जानना होगा। बेरोजगारी आज की ज्वलंत समस्या है और उसे यदि हम पूंजी की कमी के साथ जोड़ दें तो और भी स्पष्ट चित्र सामने आयेगा। वास्तविक समस्या अनपढ़ बेरोजगारों की नहीं है, बल्कि शिक्षित बेरोजगारों की है। पिछले कई वर्षों में किस तरह से स्कूल, कालेज हर स्तर पर खुले हैं, उससे सभी वाकिफ हैं। समस्या स्कूलों के खुलने की नहीं है, बल्कि वहां से केवल डिग्री लेकर निकलनेवाले विद्यार्थियों से है। सफेद कपड़े पहन लेने से या कापियां दुनिया के ज्ञान से भर देने से शिक्षा के मुख्य उद्देश्य की प्राप्ति नहीं होती।

१) शिक्षा से रोजगार के साधन मिलने चाहिये,

२)शिक्षा से व्यक्ति के व्यक्तित्व का

सर्वांगीण विकास होना चाहिये।

३) शिक्षा से अच्छे नागरिक बनने चाहिये।

ये तीनों आवश्यकताएं अलग-अलग नहीं, बल्कि एक ही उद्देश्य के तीन पहलू हैं। अब यदि हम देखें कि हमारे विद्यार्थी इन मापदंडों पर कितना सही उतरते हैं तो स्थिति निश्चय ही भयावह दिखेगी। फिर चाहे कितना भी शिक्षा में संशोधन किया जाये। चाहे वह १०+२+३ हो या वोकेशनल प्रशिक्षण हो, या समाज को लाभदायी कार्यक्रम देना हो। ये सब जमीन पर चल नहीं पाये। दोष किसका है, समझने के पहले नियोजनकर्ता की मनोवृद्धि समझना ज़रूरी है। किसी भी नये कार्यक्रम को सरकारी ढांचे में, अमानवीयता से, केवल बजट का माध्यम बनाकर, मशीन के तरीके से चला दिया जायेगा तो उसका फल असफलता ही होगा। फिर मानवता, सहिष्णुता, संवेदनशीलता का जो सर्वांगीण ह्रास हुआ है, वह शिक्षा से भी होना अपरिहार्य है। ऐसी स्थिति में जो समन्वय इन कार्यक्रमों की सफलता के लिए ज़रूरी था, वह मिला नहीं। परिणाम हमारे सामने है।

विवेचना करने से जानकारी मिलती है कि विभाग के विशेषज्ञ तथा कार्यकर्ता जो इसमें जोड़ने का कार्य कर सकते थे और स्वरोजगारपूरक कार्यक्रमों को लाभदायक बना सकते थे, वह पूर्ण हुआ नहीं। संगठित विभाग एक ओर अपने लिए पूरी सुविधाएं लेते रहे, वहीं असंगठित सबसे ज़्यादा शोषित तथा लाभों से अछूते रहे। इसे देखने के लिए दूर जाने की आवश्यकता नहीं। हम वास्तविकता को देखें तो चित्र स्पष्ट दिखायी देता है। आदिवासी, महिलाएं, पर्वतीय क्षेत्र के निवासी और सभी असंगठितों ने आर्थिक विकास का भयानक मूल्य अदा किया है।

आश्चर्य की बात यह है कि यह सब स्पष्ट रूप से बड़े-बड़े विद्वानों द्वारा लिपिबद्ध किया गया है। इसकी गहनता के बारे में शंका का स्थान नहीं है। इन सबके बावजूद ऐसा लगता है कि हमने अपनी ग़लतियों से पूरा सबक नहीं सीखा है। उदाहरण के लिए मिल के कागज़ की हाथ-कागज की तुलना करते हुए, हम यह भूल जाते हैं कि मिलों ने संगठित होने के कारण किस तरह वन विभाग या वाणिज्य विभाग से पूरा फायदा उठाया।

वर्तमान परिपेक्ष्य में गांधीजी के औचित्य को समझने के लिए हमें मानवीय स्वभाव, शोषण की प्रवृत्ति, धर्म, घटते-बढ़ते प्रभाव तथा वैज्ञानिक प्रवृत्तियों का भी अध्ययन करना ज़रूरी है। फिर यह अध्ययन एक परिपूर्ण तरीके से होना चाहिये, न कि सीमित, संकुचित विचारधारा से। आज के युग की बहुत बड़ी मांग भी यही है कि हम

सर्वांगीण दृष्टिकोण अपनायें। निर्णय होने के पश्चात् कड़ाई से अनुसरण तथा सच्चाई को ठीक से तौलने और परखने की जिम्मेदारी बढ़ानी आवश्यक है। जड़ को समाप्त करने की प्रवृत्ति के बजाय, फल से संतोष करने की भावना बढ़ानी चाहिये।

आज के युग में, शिक्षा के क्षेत्र में भी सर्वांगीण विचार नहीं कर पा रहे हैं। क्योंकि शिक्षा से जुड़े व्यक्ति आज संकुचितता से ग्रसित हैं। यहां भी मेरिट का आधार अन्य तथ्यों ने ले लिया है। जरूरी है कि कोई भी अच्छे विचार किसी वर्ग या जाति विशेष का न मानकर, गुणों एवं व्यावहारिकता पर आधारित होना चाहिये। शिक्षा का एक बहुत बड़ा योगदान इस क्षेत्र की आवश्यकता है। यदि समस्या का विश्लेषण सही हो जाय तो रास्ता ढूंढ़ने में दिक्कत नहीं होगी।

– २ अभिषेक रो को आपरेटिव सोसायटी, डी. एन. नगर, अंधेरी (पश्चिम), बंबई - ५८

□

जब व्यक्ति इतना घमंडी हो जाय कि रो न सके। जब इतना गंभीर हो जाय कि हंस न सके और इतना स्वार्थी हो जाये कि अपने सिवाय किसी और की चिंता न कर सके तो समझना चाहिये कि उसने दारिद्र ही बटोर रखा है।

– डॉ. गोपाल प्रसाद 'वंशी'

करीम चाचा आये, बच्चों के लिए क्या लाये?

□ बुद्धसेन अग्रवाल

लगभग छप्पन साल पहले की बात है। मैं छठीं कक्षा का विद्यार्थी था। करीम चाचा जब मेरे यहां आते, तो हम सभी पांचों भाई-बहन एक साथ तालियां बजा कर यह कहते हुए 'करीम चाचा आये, बच्चों के लिए क्या लाये' उनका स्वागत करते। करीम चाचा की आदत थी कि वे जब भी आते, हमारे लिए मिठाई जरूर लाते।

पिताजी टोपियों का व्यापार करते थे। वह जमाना था कि टोपी पहनना अनिवार्यता थी। पिताजी टोपियां सिलने के लिए करीम चाचा को देते थे। करीम चाचा को लगभग एक रुपये रोज की आमदनी हो जाती थी। कई बार आवश्यकता पड़ने पर वे पिताजी से अग्रिम पैसे भी ले जाते, पर पाई-पाई का हिसाब समय पर कर जाते। एक बार सिलाई के सामान के साथ कुछ रुपये ज्यादा चले गये। करीम चाचा दूसरे दिन पैसे तुरंत लौटा गये। जिस दिन वे एक रुपये से ज्यादा कमा लेते, हम बच्चों के लिए डेढ़ आने की मिठाई जरूर लाते।

घोर मंदी का जमाना था। १ रुपये में १ सेर घी, १६ सेर गेहूं, २ किलो मलाई और ४ किलो रबड़ी बिकती थी। डेढ़ आने में डेढ़ पाव मिठाई मिलती थी। पिताजी कई बार चाचा को टोक देते कि ऐसा मत किया करें। तब करीम चाचा बड़े स्नेह से कहते – 'यह तो आपका ही

इन्हें ब्रेक फ्लुइड बदल लेना चाहिये था.

इन्हें ब्रेक फ्लुइड बदल लेना चाहिये था.
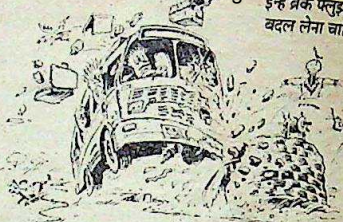
इन्हें ब्रेक फ्लुइड बदल लेना चाहिये था.

इन्हें ब्रेक फ्लुइड बदल लेना चाहिये था.
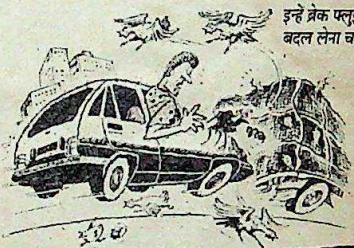
क्या ब्रेक का फ़ेल होना मज़ाक है?

एक औसत कार चालक साल में लगभग ७५,००० बार ब्रेक लगाता है और उम्मीद करता है कि वे हर बार ठीक तरह से काम करें. लेकिन फिर भी हैरानी की एक बात हाल ही में किए गए एक सर्वेक्षण से पता चली है कि लोग अपने ब्रेक फ्लुइड को बदलने की ओर ध्यान नहीं देते. एक मानसून-पूर्व कैम्प में जांची गई कारों में से ८०% कारों का फ्लुइड बदला जाना ज़रूरी पाया गया.

ब्रेक फ्लुइड ब्रेकिंग सिस्टम का सबसे महत्वपूर्ण हिस्सा होता है. दुर्भाग्य से सबसे ज़्यादा उपेक्षा भी इसी की की जाती है. ब्रेकों के फेल होने की अधिकांश घटनाओं को केवल कॅस्ट्रॉल गर्लिंग ब्रेक फ्लुइड जैसे बेहतर किस्म के हैवी ड्यूटी ब्रेक फ्लुइड का इस्तेमाल करके भी रोका जा सकता है.

ब्रेक फ्लुइड हायग्रोस्कोपिक होते हैं और नमी को सोखते हैं. अगर आप बार-बार ब्रेक लगाएं तो उससे पैदा होने वाली गर्मी से भाप बन जाती है जिससे ब्रेकों का लगना कठिन ही नहीं बल्कि कभी कभी तो असंभव भी हो जाता है.

इसलिए यह अत्यन्त महत्वपूर्ण है कि न सिर्फ़ उच्च क्वालिटी का ब्रेक फ्लुइड प्रयोग किया जाए बल्कि उसे साल में कम से कम एक बार बदला भी जाए.

दुनिया भर के अधिकांश मोटर निर्माता कॅस्ट्रॉल ब्रेक फ्लुइड की सिफ़ारिश करते हैं क्योंकि यह अन्य ब्रेक फ्लुइड की तुलना में ब्रेक के चलने वाले पूर्जों को बेहतर सुरक्षा और ल्युब्रिकेशन देता है और धातु के क्षय को रोकता है.

इसके अलावा यह ब्रेक प्रणाली के रबर सील होज तथा अन्य प्लास्टिक के पूर्जों को खराब नहीं होने देता है.

कॅस्ट्रॉल ब्रेक फ्लुइड यूनाइटेड स्टेट्स फेडरल वाहन मानक निर्दिष्टताओं ३, परिवहन विभाग के कड़े और लुकास गर्लिंग ब्रेकिंग सिस्टम के अत्यन्त कड़े कार्यक्षमता मानकों पर खरा उतरता है.

प्लास्टिक कण्टेनर्स में पैक साधारण ब्रेक फ्लुइड के विपरीत कॅस्ट्रॉल ब्रेक फ्लुइड टिन कण्टेनर्स में सील बन्द होता है ताकि नमी को सोखने का कोई खतरा ही न रहे.

असली उत्पाद पाने के लिए कॅस्ट्रॉल उत्पादों को हमेशा अधिकृत कॅस्ट्रॉल विक्रेताओं से ही खरीदें. कोई कठिनाई हो तो कृपया सम्पर्क करें. दिल्ली: आर. कौल ३३१८०३८. बम्बई: एस. चटर्जी ४९२३७०७. कलकत्ता: एस. बनर्जी २०९३१०. मद्रास: एस. वेंकटाचलम ५१३८४४.

कॅस्ट्रॉल Castrol

पैसा है, मेरा क्या है। आप जो देते हैं, उसमें मेरा गुजारा बहुत अच्छी तरह हो जाता है।'

यदि हम बच्चों में कभी कोई बीमार होता तो करीम चाचा मस्जिद से मुल्लाजी को साथ लाकर फूंक डलवाते।

एक बार वे तीन-चार दिन नहीं आये। पिताजी ने उनके घर जाकर पता लगाने के लिए मुझसे कहा। पर मैं मुस्लिम मोहल्ले में जाने से डरता था-इन्कार कर दिया। उन्हीं दिनों कानपुर में साम्प्रदायिक दंगा हो गया और उसी में गणेशशंकर विद्यार्थी का बलिदान हो गया था। पर पिताजी उनके घर गये। करीम चाचा बुखार में पड़े थे। दवा के लिए कुछ पैसे दिये और कहा कि जरूरत पड़े तो और मंगा लेना।

ठीक हो जाने पर वे काम पर फिर आने लगे। उनका एक लड़का था-बरकत। ८ साल की उमर में ही बरकत की मृत्यु हो गयी। जिसके कारण चाचा विक्षिप्त-से हो गये। उनकी बेगम भी कुछ दिनों बाद खुदा को प्यारी हो गयीं।

वे दिन मुझे आज भी याद हैं। तब दंगे अंग्रेज करवाते थे और अब दूसरे ही लोग कराते हैं। उस जानलेवा माहौल में भी कितनों ने गणेशशंकर विद्यार्थी की तरह अपनी जान जोखिम में डालकर एक-दूसरे समुदाय के लोगों की प्राण-रक्षा की थी। आज जब वर्ण-विद्वेष और धार्मिक उन्माद से भरे झगड़ों को देखता हूं, तो ईश्वर से प्रार्थना करता हू कि क्यों न वह थोड़े-से और करीम चाचा जैसे मनस्वी और उदार-चेता लोगों को पैदा कर दे, जिससे वर्तमान ही नहीं, भावी पीढ़ी के बच्चे भी झूमकर गा सकें कि 'करीम चाचा आये, बच्चों के लिए क्या लाये?'

— ४८, कमला क्लब
फजलगंज, कानपुर, उ.प्र.

□

पैसे के प्रति परिवार की विरक्ति और ईमानदारी अति की सीमा तक पहुंची हुई थी। अपने बेटों से लालबहादुर शास्त्री हमेशा कहा करते थे, 'पैसे के पीछे कभी मत भागो, ईमानदार और मेहनती बनो।' एक और बात जो वे अक्सर कहा करते थे, वह थी, 'मेहनत प्रार्थना के समान है।' जब उनकी ८० वर्षीया मां रामदुलारी देवी ने बेटे को देश का सबसे बड़ा पद प्राप्त होने की बात सुनी, तो उन्होंने कहा था, 'मैं लालबहादुर से चाहती हूं कि जान जाये तो जाये, मगर देश बना रहे।' अपने बेटे को उस मां ने केवल एक बात के लिए मना किया था – 'ऐसा कोई काम न करना, जिससे गरीब को दुख पहुंचे।'

— डॉ. गोपाल प्रसाद 'वंशी'

संस्कृति का सावित्री उद्घोष : कमलारत्नम्

□ अरुण वर्मा

चार जुलाई को दोपहर टी.वी. समाचार में कमलारत्नम् के अवसान की खबर सुन कानों को यकीन नहीं हुआ कि यह सच भी है। लेकिन सच था समाचार। उनका जाना संस्कृत और संस्कृति प्रेमी संसार में एक खालीपन छोड़ गया है। बाकी रह गयी हैं उनकी असंख्य यादें, और उनके सुसंस्कृत, प्रेरणादायी व्यक्तित्व की यशकाया। महादेवी के बाद समकालीन परिदृश्य पर वे सबसे प्रमुख सम्मानित विदुषी नारी थीं, जिनके मेघमन्द्र स्वर को अनसुना करना असंभव था।

हमने वैदिक काल की कुछ विदुषियों के नाम अवश्य सुने हैं, जैसे गार्गी, मैत्रेयी, लोपामुद्रा, अरुन्धती, लेकिन उन्हें देखा नहीं कि वे कैसी थीं। लेकिन कमलारत्नम् को देख और सुनकर लगता था कि ये प्राचीन विदुषी नारियां भी ऐसी ही रही होंगी। सुसंस्कृत एवं सुरुचिपूर्ण व्यक्तित्व के साथ उनमें प्रज्ञा व प्रतिभा का एक अद्भूत संयोग था। यह भी एक संयोग है कि शरद पूर्णिमा ३ अक्टूबर १९१४ को इलाहाबाद में जन्मी कमलाजी का देहावसान ३ जून १९९१ को नई दिल्ली में हुआ। जिस देववाणी की वे सारी जिन्दगी प्रवक्ता रहीं, उसी संस्कृत भाषा में आपने लखनऊ विश्वविद्यालय से प्रथम श्रेणी में प्रथम स्थान के साथ एम. ए. किया। यूनीवर्सिटी ऑफ लंदन से उन्होंने ट्रेनिंग डिप्लोमा (प्रशिक्षण शास्त्र) की उपाधि पायी। कमलाजी का संस्कृत, हिन्दी और अंग्रेजी भाषाओं पर असाधारण अधिकार तो था ही, इसके अतिरिक्त फ्रेंच, जर्मन, रूसी, स्पेनी व जापानी भाषाओं का भी अच्छा ज्ञान था। दक्षिण-पूर्वी एशियाई देशों में भारत के सांस्कृतिक प्रचार व प्रसार की गौरव गाथाओं का आधुनिक संदर्भों में अनुशीलन कमांरत्नम् ने किया। उस समय जब उनके पति जापान और

इन्डोनेशिया में थे। उसी दौरान विशेष कर रामकथा, भारतीय नाट्य और रंगमंच तथा भारतीय मूर्तिकला के फैलाव पर उन्होंने विशेष कार्य किया।

कमलारत्नम् के राजनयिक पति श्री पेरालारत्नम् १९५२ से ही भारतीय विदेश सेवा के अंतर्गत कई देशों में राजदूत रहे। उनके साथ कमलाजी सही अर्थों में भारत की सांस्कृतिक प्रतिनिधि के रूप में अपना स्वतंत्र योगदान देती रहीं। इस दौरान रत्नम् दम्पत्ति ने जिन देशों की यात्रायें कीं उनमें सोवियत संघ, जापान, चीन, थाईलैण्ड, इंडोनेशिया, आस्ट्रेलिया, हंगरी, पौलैण्ड, जर्मनी, फ्रांस, ब्रिटेन, अमेरिका, मैक्सिको व चिली प्रमुख हैं। इन सभी देशों में कमलाजी द्वारा संस्कृत और संस्कृति के प्रचार-प्रसार का कार्य अबाध गति से किया गया। टोकियो, ऑस्ट्रेलिया, मास्कों तथा मैक्सिको के प्रचार-प्रसार कां कार्य अबाध गति से किया गया। टोकियो, ऑस्ट्रेलिया, मास्को तथा मैक्सिको के विश्व-विद्यालयों में उन्होंने आठ वर्ष तक संस्कृत व हिन्दी का अध्यापन किया। मैक्सिको में ही वे एशियाई महिला लेखिका-पत्रकार विश्व संगठन की उपाध्यक्ष चुनी गयीं। दिल्ली के रामजस संस्थान में ३ वर्ष तक प्राचार्य रहीं तथा भारतीय विद्याभवन दिल्ली में भारतीय संस्कृति एवं विरासत की प्राध्यापिका रहीं।

कमलाजी असाधारण वक्ता व लेखिका रही हैं। १९६२ में भारत पर चीन के अचानक हमले के पश्चात् उनका कवि हृदय जाग उठा और अनेक रचनाओं का वे सृजन करती चली गयीं। उनकी कविताओं में भारत की संस्कृति, नारी का विद्रोह और पीड़ा, विश्व चेतना, पूर्व और पश्चिम की जीवन दृष्टियों का अंतर और मन की बेचैनी स्पष्ट दिखायी देती है। कविता और असंख्य लेखों के अतिरिक्त उन्होंने एक वार्त्ताकार के रूप में भी प्रसिद्ध पायी। स्मृति लेखन और रोचक यात्रा वर्णन लिखने में भी वे बेजोड़ थीं।

आपने अनेक ग्रंथों की रचना की जिनमें प्रमुख हैं, अक्षर गीत एवं दर्शन, कालिदास और नारी समस्यायें, हिमालय तथा अन्य कवितायें, भारतीय साहित्य, लाओस में रामकथा, इन्डोनेशिया की वायांग परम्परा, दिनकर और उनका काव्य, रामकृष्ण विवेकानन्द और निराला आदि। प्रख्यात समाज सेवी कमलादेवी चट्टोपाध्याय के जीवन और व्यक्तित्व को लेकर एक महत्वपूर्ण ग्रंथ 'कमलादेवी एक समर्पित व्यक्तित्व' अभी कुछ साल पहले प्रकाशित हुआ। यह भी एक संयोग है कि कमलाजी की हिन्दी से स्पेनिश में अनूदित कविताओं का संग्रह 'लूस ओस्कूरा' (काला

हिन्दी भाषा में अंग्रेज़ी के इन्साईक्लोपीडिया ब्रिटानिका की तरह एक अनूठा सारगर्भित ग्रंथ
हिन्दी विश्वकोश
• 25 खण्ड
• मूल्य प्रति भाग 500/-, सैट 12,500/-
सम्पादक: नगेन्द्र नाथ वासु
हमारी सरकार केन्द्र व राज्य स्तर पर राष्ट्र भाषा हिन्दी को सरकारी काम-काज इत्यादि में प्रयोग के लिए प्रयत्न कर रही है। इसीलिये प्रतिदिन विभिन्न विषयों व शब्दों को विस्तृत रूप से समझ पाने के लिए हिन्दी भाषा में इन्साईक्लोपीडिया की आवश्यकता अनुभव की जा रही थी। हमने हिन्दी विश्वकोश, जो कि अंग्रेजी भाषा के इन्साईक्लोपीडिया ब्रिटानिका की तरह पूर्णतः सारगर्भित है, का प्रकाशन करके हिन्दी भाषा-भाषियों के स्वप्न को साकार करने का प्रयास किया है।
इस 25 खण्डिय ग्रंथ में भाषा एवं व्याकरण के अतिरिक्त भारत से सम्बन्धित कोई भी विषय अछूता नहीं रहा है।
यह ग्रंथ उन सभी के लिए उपयोगी है जो न केवल हिन्दी विभागों में एवं गैर-हिन्दी विभागों में हैं, बल्कि उन सभी बुद्धिजीवियों के लिए भी, जो हिन्दी भाषा के गहन अध्ययन में संलग्न हैं।
TRENDS/2107/91
• पुनःमुद्रित • 1,62,040 प्रविष्टियां
• 18,527 पृष्ठ • 260 चित्र
• 156 चार्ट • 93 रेखाचित्र
"इन्साईक्लोपीडिया ब्रिटानिका की टक्कर का हिन्दी में यह ज्ञान-कोष है।" —पाटलिपुत्र
"विश्वकोष सर्वथा संग्रहणीय है।" —सरस्वती
यह कूपन भेजें और
1500/- रुपये बचाएं
☐ आप केवल 11250/- रुपये अग्रिम भेज कर पूरा सैट प्राप्त कर सकते हैं। (1250/- रुपए की छूट तथा 250/- रुपये डाक खर्च हम देंगे।)
☐ खंड अलग-अलग वी.पी.पी. द्वारा या अग्रिम राशि भेज कर बिना डाक खर्च मंगवाये जा सकते हैं।
☐ सरकारी संस्थान, कॉलेज, स्कूल, पुस्तकालय आदि अपना आदेश बिना अग्रिम राशि के भेज सकते हैं।
सूची पत्र एवं व्यापारिक पूछताछ के लिए सम्पर्क करें:
dk
डी.के. पब्लिशर्स डिस्ट्रीब्यूटर्स (प्रा.) लि.
1, अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली-110002 फोन : 3261465, 3278368
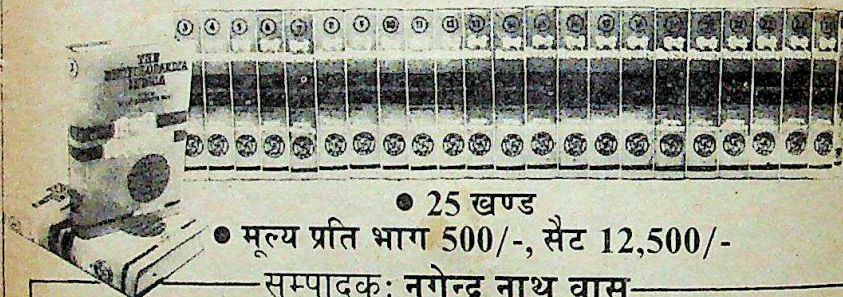
प्रकाश) के नाम से १९६४ में ही चिली में प्रकाशित हो गया था। और सबसे गर्व की बात यह है कि इस संग्रह पर अपनी टिप्पणी चिली के नोबेल पुरस्कार प्राप्त विश्व विख्यात कवि पाब्लो नेरूदा ने लिखी। नेरूदा लिखते हैं 'इस लूस ओस्कूरा (काला प्रकाश) का नाम है कमला। इसका जन्म एक ऐसे अगाध विद्वत्ता सम्पन्न देश में हुआ, जिसे मैं उसके वन पल्लव और प्राचीन ज्ञान वैभव के माध्यम से जानता हूं। संयोग से कमलारत्नम् ने रहने के लिए हमारी भूमि को चुना और यहीं विकसित हुआ यह काला गुलाब : उसकी कविता। उनके काव्य को तो हम सुरक्षित रखेंगे परंतु वह स्वयं हमें छोड़कर जा रही हैं। सच तो यह है कि उसकी उपस्थिति हमारे लिए एक राह दिखाने वाले तारे के समान थी, जो अमेरिका में उसके पांवों की चाप और उसके विलक्षण परिधानों के आग जैसे दमकते रंगों को अपने स्मृति कोष में सुरक्षित रखेगा'। हिन्दी भाषा में इन्हीं कविताओं का प्रकाशन २१ वर्ष बाद १९८५ में 'वहां सूरज नहीं चमकता' नामक संग्रह में हुआ।

हिन्दी जगत में शायद वे पहली रचनाकार हैं, जिनका संग्रह विदेशी भाषा में पहले तथा अपनी भाषा में बाद में छपा।

कमलारत्नम् संस्कृत और संस्कृति की प्राण रही हैं और भारत की इस अपूर्व विरासत को बचाने और फैलाने का जिम्मेदारी भरा कार्य मृत्यु पर्यन्त करती रहीं। संस्कृत भाषा के बगैर वे संस्कृति और भारतीय अस्मिता की कल्पना भी नहीं कर पाती थीं। इसी कारण कालिदास के प्रति उनके मन में असीम अनुराग था, क्योंकि वे यह भी मानती थीं कि कालिदास ही इस देश का ऐसा रचनाकार है, जिसके द्वारा संस्कृत, और राष्ट्र की पहचान विदेशों तक नयी-नयी ऊंचाईयों के साथ बिखरी है। कालिदास के साहित्य के प्रति उनका लगाव सबसे अनूठा था। उज्जैन में जब सरकारी पैमाने पर अखिल भारतीय कालिदास समारोह शुरू ही नहीं हुआ था उसके भी पहले वे स्व. पण्डित सूर्यनारायण व्यास द्वारा अखिल भारतीय कालिदास परिषद् के द्वारा आयोजित होने वाले कालिदास महोत्सव में न केवल आती रहीं, बल्कि उस परिषद् की सक्रिय सदस्य भी रहीं। भारत में शासकीय स्तर पर कालिदास समारोह शुरू होने के पहले वे १९५५ के सोवियत संघ द्वारा आयोजित अन्तर्राष्ट्रीय कालिदास समारोह में स्वयं उपस्थित रहीं। उसी समय सोवियत संघ ने महाकवि कालिदास की स्मृति में पहला डाक टिकट जारी किया। कमलाजी ने सोवियत संघ के अलावा चीन, मैक्सिको, अमेरिका, इण्डोनेशिया आदि देशों में भी कालिदास समारोह आयोजित करने के लिए खासी महत्व-

ज़िंदगी का स्वार्थ से अनुबन्ध !

भावना का भाव से सम्बन्ध
ज़िंदगी का स्वार्थ से अनुबन्ध !

जी रहे कुंठित, विवश, ऊबे, सताये,
कौन ऐसे में किसी को पथ दिखाये !
हर किसी को भूख ने याचक बनाया,
कौन किसके पेट की ज्वाला बुझाये !

लोभ-लिप्सा में हुए सब अन्ध
जिंदगी का स्वार्थ से अनुबन्ध !

टूटते जाते हृदय के साज ऐसे,
आज गूंगी हो गयी आवाज कैसे !

वक्त की धड़कन हुई खामोश ऐसी
छा गयी है जिंदगी पर मौत जैसी

छिल रहे हैं चेतना के कंध
ज़िंदगी का स्वार्थ से अनुबन्ध !

व्यर्थ लगते प्रेम-साने गीत हमको
पी रहे हम मूक बन चुपचाप गम को !
ढो रहे हैं दर्द का अभिशाप अविचल
हर नहीं पाते व्यथा के क्रूर तम को

हर तरफ दुर्भाव की दुर्गन्ध
जिंदगी का स्वार्थ से अनुबन्ध !

— शंकर सुल्तानपुरी
सी- २१६७/९ इंदिरा नगर, लखनऊ - २२६ ०१६

पूर्ण भूमिका निभायी।

प्रशंसकों को हस्ताक्षर देते समय वे हमेशा 'पठ संस्कृतम' लिख दिया करती थीं। यह उनकी संस्कृत निष्ठा का ही परिणाम था। अंग्रेजी के भाषाई साम्राज्यवाद के प्रति उनमें तीव्र आक्रोश होता था और जो अक्सर उनके लेखों और वक्तव्यों में उजागर होकर रहता था। विगत कुछ वर्षों से उन्होंने दिल्ली में संस्कृत नाट्यमंच, संस्कृत बाल रंगमंच जैसी संस्थाओं को तैयार किया और संस्कृत के विभिन्न नाट्य प्रदर्शन दिल्ली के मुख्य सभागारों से लेकर दूरदर्शन तक प्रस्तुत हुए। उन्होंने कुछ संस्कृत नाट्य लिखे जिनमे 'बाल चरितम्' और 'जवाहर विजयम्' प्रमुख हैं। इन कुछ वर्षों में वे कालिदास पर एक महत्वपूर्ण पुस्तक अंग्रेजी में लिख रही थीं, जिसका शीर्षक उन्होंने एक पत्र में लिखा था 'कालिदासः दि पोयट ऑफ हिमालयाज' आशा है उनका यह ग्रंथ पूर्ण हो चुका होगा। १९८२ में सीहोर में आयोजित कालिदास समारोह की वे अध्यक्ष थीं। १९७३ में विक्रम विश्वविद्यालय की कालिदास समिति ने कमलारत्नम् को कालिदास और उसके साहित्य के प्रचार व प्रसार के प्रति उनके समर्पण हेतु सम्मानित किया।

— ८२, रवीन्द्रनगर, फ्रीगंज,
उज्जैन-४५६ ०१०, म.प्र.

■
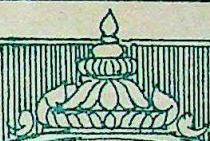
आ नो भद्राः क्रतवो यन्तु विश्वतः

भवन की पत्रिका 'भारती' से समन्वित

नवनीत

मनुष्य के नवोत्थान का सूचक
जीवन, साहित्य और संस्कृति का मासिक

प्रार्थना

आ हि ष्मा सूनवे पिता, आपिर्यजत्यापये ।
सखा सख्ये वरेण्यः ।।

ऋक् १.२६.३ ।।

हे प्रभु मेरे परम सखा!
तुम्हीं बंधु हो, तुम्हीं सनेही, तुम्हीं हो मात-पिता ।
दुःख में धीरज देनेवाले, कष्टों में सुध लेनेवाले।
तुम्हीं सहाय सदा, हे प्रभु मेरे परम सखा ।
कभी प्यार से पिता पुकारूं, कभी बंधु कह तन-मन वारूं ।
कभी स्नेह से कहूं सखा, हे प्रभु मेरे परम सखा ।
तुम्हीं हमारे पथ-दर्शक हो, पूर्ण हमारे हितचिंतक हो ।
तुम्हीं से हृदय मिला, हे प्रभु मेरे परम सखा ।

(भावानुवाद : **स्व. पं. सत्यकाम विद्यालंकार**)

मुखौटे
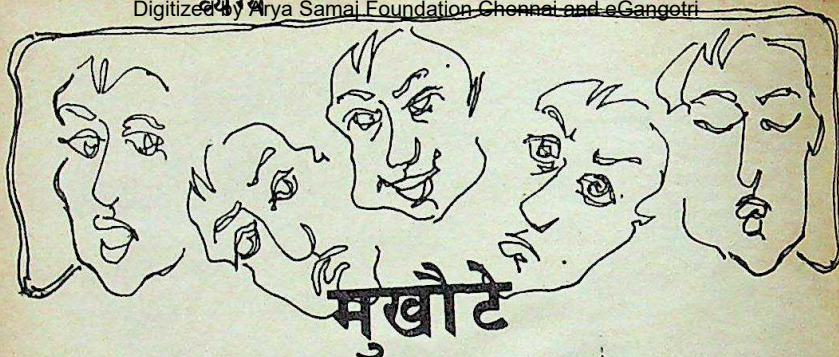
□ हरीश कुमार 'अमित'

मुखौटे भी बड़ी काम आने वाली चीज़ है, साहब ! अलग-अलग लोगों का अलग-अलग मौकों पर अलग-अलग परिस्थितियों का अलग-अलग ढंग से सामना करने का सहारा ये मुखौटे ही बनते हैं। मुखौटों से हमारा मतलब उन भौतिक मुखौटों से नहीं है, जिन्हें बच्चे लोग बचपन में और सरकस के जोकर वग़ैरह जवानी में इस्तेमाल करते हैं। हमारा मतलब तो उन अदृश्य मुखौटों से है, जो आदमी (और औरतें भी!) वक्त-जरूरत पड़ने पर प्रयोग में लाया करते हैं।

अब देखिये न, मस्काबाजी करनेवाले लोग अपना मतलब साधने के लिए जब विशुद्ध मक्खन का प्रयोग करते हैं, तो उस समय उनकी मुखमुद्रा, वाणी, हावभाव आदि कैसे बदल जाते हैं। सामनेवाले को लगने लगता है कि वह तो खुदाओं का खुदा है और मक्खनबाज़ी करनेवाला इस संसार का तुच्छतम प्राणी। लेकिन जब मक्खनबाज़ी करनेवा्ले का काम सध जाता है या काम कर सकनेवाला काम करने से इन्कार या असमर्थता प्रकट कर देता है, तो मक्खनबाज़ के चेहरे का मुखौटा एक झटके से उतर जाता है। तब और पहले की उसकी शक्ल में ज़मीन-आसमान का अन्तर बड़ी आसानी से महसूस किया जा सकता है।

इसी तरह मौत की वारदात पर अफसोस करने जानेवालों को देख लीजिये। वे हंसते-मुसकुराते होंगे। लेकिन तब तक, जब तक उस घर में प्रवेश न किया हो जहां अफसोस करने जाना है। घर में घुसते ही ये दुःख की प्रतिमूर्ति बन जायेंगे। कुछ लोग तो इतने भावविह्वल हो जाते हैं कि आंसूरूपी जल से अपने आंखोंरूपी आंगन में बाढ़ तक ले आया करते हैं।

अफसोस करने के दौरान ये लोग यूं जताते हैं जैसे मृतक के मरने का सबसे ज़्यादा अफसोस इन्हें ही हुआ है। लेकिन जैसे ही ये अफसोस करके उस घर से बाहर निकलते हैं, इनके चेहरे की रौनक लौट आती है मानो किसी मुसीबत से छुटकारा मिल गया हो। घर से थोड़ी दूर जाने पर इन्हें हंसते-बोलते और ठहाके लगाते हुए भी देखा जा सकता है।

दफ्तरों में बाबू लोगों के हाल भी कुछ अलग नहीं हैं। मुखौटों का प्रयोग ये बन्धु भी जी खोलकर किया करते हैं। साहब के सामने इनके हावभाव और होंगे और साहब की गैर-मौजूदगी में यही लोग साहब को जूतियों के काबिल भी नहीं समझेंगे।

सिर्फ बाबू लोग ही मुखौटों का इस्तेमाल करते हों, ऐसी बात नहीं है। साहब लोग भी इनका भरपूर इस्तेमाल किया करते हैं। अपने मातहतों के सामने इनके चेहरे पर रौब और उच्चपने का जो मुखौटा होगा, वह इनके अपने साहब के पास जाने पर मक्खन की तरह मुलायम और नम्रता से परिपूर्ण हो जायेगा।

मुखौटों का बेहतरीन इस्तेमाल चुनाव-सभाओं के दौरान, विदाई, अभिनन्दन समारोहों में और किसी की झूठी चुगली भर्त्सना करने के क्षणों में देखा जा सकता है। सच तो यह है कि प्रायः हर आदमी दिन भर कोई-न-कोई मुखौटा लगाये ही रखता है। फर्क यह है कि कुछ लोग प्रायः एक-सा मुखौटा लगाये रहते हैं और कुछ बदलती परिस्थितियों के अनुसार दिन में पचासों बार मुखौटे बदलते हैं।

यह भी नहीं कि ये मुखौटे सदा लगे ही रहते हैं। कई बार ऐसे मौके भी आते हैं जब ये उघड़ जाते हैं और आदमी का असली चेहरा अन्दर से झांकने लगता है। तब इन्हें धारण करनेवालों की हालत देखने लायक होती है। मगर कुछ लोग ऐसे चतुर होते हैं कि ऐसी परिस्थितियों में भी अपने को संभाले रखते हैं और वक्त की नज़ाकत को देखते हुए एक अन्य अदद मुखौटा धारण कर लिया करते हैं।

मुखौटे धारण करने के लिए किसी विशेष प्रयत्न की जरूरत नहीं होती। परिस्थितियों के अनुसार अपने आप ही व्यक्ति इन्हें लगा लेता है। बस आदमी को अभिनय में प्रवीण होना चाहिये। जितना ज़्यादा कोई इस कला में प्रवीण होगा, उतनी सफलतापूर्वक ही वह मुखौटे लगा पायेगा।

अब हमें ही देखिये न, यह लेख लिखकर हमने भी अपने चेहरे पर लेखक होने का मुखौटा लगा लिया है, जबकि वास्तविकता जो है वह यह है कि हम....!

— २०बी/३२बी, तिलक नगर,
नयी दिल्ली

☐

साहित्य को कानपुर जनपद की देन

□ बद्रीनारायण तिवारी

अंधकार है वहां, जहां आदित्य
नहीं है,
मुर्दा है वह देश, जहां साहित्य
नहीं है ।
जहां नहीं साहित्य, वहां आदर्श
कहां है ?
जहां नहीं आदर्श, वहां उत्कर्ष
कहां हैं ?

सत्साहित्य के द्वारा ही देश तथा समाज को प्रेरणा देने वाले राय देवीप्रसाद 'पूर्ण' ने जनपद कानपुर के साहित्यिक स्वरूप को अपनी इन पंक्तियों में व्यक्त किया है ।

इसी जनपद के ब्रह्मावर्त जिसे आजकल 'विठूर' कहा जाता है— आदिकवि महर्षि वाल्मीकि वहीं हुए थे, जिन्होंने भारत के स्वर्णिम युग की गाथा को विश्व की प्राचीनतम देववाणी संस्कृत के २४००० श्लोकों में कालजयी महाकाव्य लिख कर राम-काव्य के सैकड़ों प्रणेताओं को प्रेरणा दी है । इस ग्रंथ की अनगिनत टीकायें तथा अनुवाद हुए हैं । शनैः शनैः संस्कृत का स्थान 'भाषा' यानी हिन्दी ने लेना प्रारंभ कर दिया । तुरंत कविता बनाने वाले संस्कृत एवं हिन्दी के आशुकवियों की श्रृंखला में आचार्य देवेन्द्रनाथ शास्त्री, केशवदेव शास्त्री 'केशव' तथा पं. कुंजबिहारी शुक्ल माने जाते हैं । इस क्षेत्र में 'समस्या पूर्ति' तथा 'आशु-कविता' का विशेष रूप से प्रचलन था।

हिन्दी साहित्य के रीतिकालीन युग में जब राज्याश्रित कवि अत्यधिक श्रृंगार और भक्ति साहित्य की रचनाओं के सृजन में व्यस्त थे, उसी समय जनपद के तिकवांपुर ग्राम में जन्मे वीर रस के शीर्षस्थ व स्वावलम्बी महाकवि भूषण ने अपनी लेखनी को गौरवान्वित किया। अहिन्दी प्रदेश महाराष्ट्र में हिन्दी साहित्य को गरिमा प्रदान कराने वाले

महाकवि भूषण के प्रति राष्ट्रकवि घासीराम रचित 'हम वाक्य वीर ही नहीं, कर्मवीर भी हैं' प्रस्तुत पंक्तियों में झलकता है –

'भूषण' विभूषन विभूषित कराय भव्य,
सुमति अराम 'मतिराम' ने श्रृंगारी है।

महाकवि भूषण के दोनों भाई मतिराम और चिंतामणि भी कविताएं करते थे।

कानपुर की इसी धरती पर जन्मे सम्राट अकबर के दरबार के नवरत्नों में वीरबल (द्विवेदी) 'ब्रह्म' उपनाम से रचनाएं करते थे।

भारत के प्रथम स्वातंत्र आंदोलन १८५७ में 'पयामे आजादी' नामक पत्र कई भाषाओं के साथ हिन्दी में भी प्रकाशित होता था, जिसके प्रेरणास्रोत कानपुर कुरसवां निवासी अजीमुल्ला खां क्रान्ति के सन्देशवाहक के अलावा साहित्य सृजन का कार्य भी कर रहे थे, उस पत्र में प्रकाशित रचनाएं देश तथा समाज को किस मोड़ पर ले जाने को प्रेरित करती हैं, इसकी बानगी देखिए –

'लूट लिहलें रजवा, सुरजवा, समजवा हो,
हल - फाल, हंसुआ गढ़इबे तरवरिया हो।'

इसका उत्तर 'पयामे आजादी' में प्रकाशित राष्ट्रगीत की इन पंक्तियों में निहित है -

हम हैं इसके मालिक, हिन्दुस्तान हमारा।
पाक वतन है कौम का, जन्नत से भी प्यारा।
ये है हमारी मिल्कियत, हिन्दुस्तान हमारा।
इसकी अहमियत से, रोशन है जग सारा।
आज शहीदों ने तुमको, अहले वतन ललकारा।
तोड़ो गुलामी की जंजीरे, बरसाओ अंगारा।
हिन्द-मुसलमां-सिक्ख हमारा, भाई भाई प्यारा।
ये है आजादी का झण्डा, इसे सलाम हमारा।

साहित्य की अनेक विधाओं में हिन्दी पत्रकारिता का शुभारंभ कानपुर में जन्मे पं. युगलकिशोर शुक्ल के ३० मई १८२६ ई. को प्रकाशित 'उदन्त मार्तण्ड' का नाम सर्वप्रथम हिन्दी पत्रों में आता है, वह भी अहिन्दी प्रदेश बंगाल के कलकत्ता महानगर से उसके प्रथम अग्रलेख में उन्होंने अपने उद्देश्य को स्पष्ट करते हुए लिखा –

यह "उदन्त मार्तण्ड" अब पहले-पहल हिन्दुस्तानियों के हित के हत जो आज तक किसी ने नहीं चलाया, पर अंग्रेजी ओ पारसी ओ बंगले में जो समाचार का कागज छपता है, उसका

सुख उन बोलियों के जानने ओ पढ़ने वालों को ही होता है। इससे सत्य समाचार हिन्दुस्तानी लोग देखकर आप पढ़ ओ समझ लेवें जो पराई अपेक्षा न करें जो अपने भाषा की उपज न छोड़ें।....

साहित्य की विभिन्न विधाओं में अग्रणी इस जनपद के एक-एक साहित्यकार का गद्य व पद्य में इतना अधिक योगदान हैं, जिन पर अनेक ग्रंथों में ही पूर्ण विवरण समाहित हो सकेगा। बहुभाषाविद् एवं बहुआयामी व्यक्तित्व के धनी पं. प्रतापनारायण मिश्र गद्य-पद्य दोनों के समान रूप से हिन्दी साहित्य की सेवा करने के साथ ही 'ब्राह्मण' पत्र को (१५ मार्च १८८३ में) सम्पादित कर प्रकाशित किया। उसमें उस युग के अनेक हिन्दी पत्रकारिता के नये मानदंड स्थापित हुए। कविताओं के निखार के अतिरिक्त श्री मिश्र की गद्य शैली ने व्यंग्य लेखन की परंपरा चलायी थी। 'वर्तमान' पत्र के सम्पादक पं. रमाशंकर अवस्थी ने जिसकी पुनरावृत्ति की थी। हिन्दी मुहावरों में मिश्रजी अब भी बेजोड़ माने जाते हैं। गद्य शैली के विभिन्न आयामों का परिचय 'दांत', 'बुढ़ापा', 'मोह', 'बांह', 'मुच्छ', 'परीक्षा', 'ट' और 'द' शीर्षक निबंधों में मिलता है।

आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी हिन्दी साहित्य के इतिहास में यग प्रवर्तक के रूप में सुविख्यात हैं। आपने संस्कृत तथा अंग्रेजी के अनेक उपयोगी महत्व-पूर्ण ग्रंथों के अनुवाद के अलावा दर्जनों कृतिया हिन्दी संसार को प्रदान कीं। आपने 'सरस्वती' के २० वर्ष के सम्पादन काल में भाषा के परिष्कार और इसके स्वरूप-निर्धारण के लिए अथक संघर्ष एवं परिश्रम किया था। आचार्य द्विवेदी ने लेखकों तथा कवियों की एक पीढ़ी का निर्माण भी किया था। राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त जैसे प्रतिभाशाली कवि और अमर बलिदानी गणेशशंकर विद्यार्थी जैसे तेजस्वी पत्रकार आपकी ही देन हैं। कानपुर स्थित जूही मोहल्ले में 'सरस्वती' के सम्पादन काल में नित्य मीलों चलकर विद्यार्थीजी ने द्विवेदीजी के सान्निध्य में साधना की थी। जब विद्यार्थीजी ने 'प्रताप' तथा 'प्रभा' पत्रों को प्रकाशित किया, उसमें 'प्रताप' के मुखपृष्ठ पर आचार्य द्विवेदी की ये पंक्तियां सदैव प्रकाशित होती थी -

जिसको न निज गौरव तथा निज
देश का अभिमान है।
वह नर नहीं नर पशु निरा है और
मृतक समान है।

विद्यार्थीजी ने भी अपने गुरु के अनुरूप ही हिन्दी का वातावरण बनाकर सैकड़ों साहित्यकारों कवियों को तैयार किया था। आचार्य गयाप्रसाद शुक्ल 'सनेही' जैसा विशिष्ट कवि काव्य रचना

की दीक्षा देकर कवियों का निर्माण करने वाला कोई अन्य आचार्य इस पूरी शताब्दी में नहीं हुआ। कविसम्मेलनों के माध्यम से सनेहीजी हिन्दी काव्यधारा को जन-जन तक पहुंचाने वाले केंद्र बिंदु हो गये थे। उनके 'सनेही मण्डल' ने अनेक प्रतिभाशाली कवियों में पं. जगदम्बाप्रसाद 'हितैषी' एवं असीम दीक्षित सदृश जाज्वल्यमान नक्षत्र दिये जो सवैये-छंदों के अथाह सागर थे। 'सनेही मण्डल' के प्रत्युत्तर में साहित्य गगन के सुदीप्ति नक्षत्र श्यामबिहारी शर्मा 'बिहारी' के अनुगामी 'हिन्दी साहित्य मण्डल' को कुछ लोग 'बिहारी मण्डल' भी कहते थे, वह मण्डल ललित घनाक्षरी, सवैया, और दोहा छन्दों का रचना संसार साहित्य सृजन कर रहा था।

महान लेखक एवं कवि पं. बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' का विद्यार्थीजी से जुड़ने के बाद (उनके अंतिम समय सन १९३१ तक) जो राजनैतिक तथा साहित्यिक निख़ार आया, उसकी कल्पना भी नहीं की जा सकती थी। उनके साहित्य सृजन पर शोध कार्य भी हो रहे हैं।

छैलबिहारी दीक्षित 'कंटक' देश के उन सशक्त कवियों में हैं, जो अपनी दो रचनाओं पर तीन वर्ष के कारावास का दण्ड भुगतने वाले देश के प्रथम कवि थे, यह भी सौभाग्य कानपुर जनपद को ही प्राप्त हुआ था। झण्डागान रचयिता पद्मश्री श्यामलाल गुप्त 'पार्षद' के इस गीत ने लाखों लोगों को आंदोलित कर राष्ट्र के प्रति समर्पण की भावना को सक्रिय रूप से जागृत किया।

कानपुर नगर के पटकापुर मोहल्ले में जन्मे श्री वेंकटेशनारायण तिवारी (१८९०-१९६९) हिन्दी के उन गिने-चुने पत्रकारों में थे, जो प्रत्येक विषय पर अपनी लेखनी उठाते थे। हिन्दी में उन्होंने अनेक आंदोलनों का सूत्रपात किया था, उनमें 'काव्य में स्वकीया और परकीया' प्रमुख था। उन्होंने अपने लेखों में 'राधा' को जब 'परकीया' का विशेषण दिया तो हिन्दी संसार में चर्चा का विषय हो गया। इसी प्रकार हरिऔधजी के प्रति 'बुडभस' शब्द के प्रयोग को लेकर भी साहित्य के क्षेत्र में हलचल रही थी। साहित्यिक समीक्षात्मक लेख लिखने में भी वे अद्वितीय थे। सन १९५५ में हिन्दी दैनिक 'जनसत्ता' के सम्पादन का भार ग्रहण करने के बाद उन्होंने 'हिन्दी की बिच बिंदी खोली किसने?' शीर्षक से उनकी लेखमाला प्रकाशित हुई, उसने उन दिनों तहलका-सा मचा दिया, जो हिन्दी को विकृत करके उसको बदनाम कर रहे थे। तत्कालीन शिक्षा मंत्री मौलाना अबुल कलाम आजाद ने राष्ट्रभाषा हिन्दी के तत्सम नये शब्दों के निर्माण हेतु पं. सुन्दरलाल की नियुक्ति की थी। उनके विवादास्पद शब्द चयन

पर यह विवाद प्रारंभ होने पर तिवारीजी ने यह लेखमाला प्रस्तुत की थी। तिवारीजी सदैव ऐसे किसी भी 'दुष्चक्र' का संसद के भीतर या बाहर पुरजोर विरोध करने में अग्रणी रहे। उनकी प्रकाशित चर्चित कृतियों में 'चारु-चरितावली' एवं 'हिन्दी बनाम उर्दू' हैं, जिनकी भूमिका में तिवारीजी की पंक्तियों में मातृभाषा की अनन्य निष्ठा के प्रति कहा गया है - 'मेरे लिए भाषा का प्रश्न राजनीतिक स्वतंत्रता से कहीं अधिक महत्वशाली है। राजनीतिक पराधीनता से हमारे शरीरों पर कोई दूसरा राज्य भले ही करे, किंतु जब तक भाषा और साहित्य बचे हैं, तब तक हमारी आत्मा अमर है। लेकिन भाषा के नाश से तो समाज का ही अंत हो जायेगा, इसीलिए संसार की पराधीन जातियां मातृभाषा को सर्वस्व लुट जाने पर भी छोड़ने को तैयार नहीं होतीं। मैं चाहता हूं कि जनता अपनी उदासीनता छोड़कर इस मसले पर गंभीरता से विचार करे, और किसी ऐसे निर्णय का निर्भीकता से विरोध करे, जिससे राष्ट्रीयता के नाम पर राष्ट्रीयता ही की जड़ कट रही हो ....'

इस जनपद ने कहानी और उपन्यास के कलात्मक मानदण्डों की दृष्टि से साहित्य को विश्वम्भरनाथ शर्मा 'कौशिक', भगवतीप्रसाद बाजपेयी, प्रतापनारायण श्रीवास्तव, भगवतीचरण वर्मा, बालकृष्ण बलदुआ जैसे राष्ट्रीय महत्व के नाम दिये हैं। मुंशी प्रेमचन्द जैसे अंतर्राष्ट्रीय स्तर के कथाकार की कर्मस्थली होने का गौरव कानपुर जनपद ने प्राप्त किया है। जिला विद्यालय निरीक्षक तथा मारवाड़ी विद्यालय में प्रधानाध्यापक रूप में कई वर्ष रहे, मुंशी दयानारायण निगम द्वारा परेड से प्रकाशित उर्दू मासिक पत्र 'जमाना' में उनकी अनेक कहानियों का प्रकाशन हुआ। उनके निधन पर सुकवि आचार्य सनेही ने शोक छन्द में लिखा था -

जिनकी कहानियां घर-घर में पढ़ी गयीं

वे ही प्रेमचन्दजी कहानी आज हो गये!

आचार्य हृदयनारायण पाण्डेय 'हृदयेश' कानपुर की उस ऐतिहासिक पीढ़ी के प्रतिनिधि कवि हैं, जिन्होंने द्विवेदी युग एवं सनेही युग से आरंभ कर अब तक लगभग ३० ग्रंथों का सृजन किया। उन पर शोधकर्ताओं ने उन्हें करुण रस प्रधान कवि होने के कारण हिन्दी जगत का 'शेली' कहा है।

कौशिकजी ने मां, भिखारिणी और संघर्ष तीन उपन्यास ही लिखे, तथापि संवेदन सम्पन्नता के कारण उपन्यास के क्षेत्र में आपका नाम अविस्मरणीय है। कौशिकजी द्वारा सृजित कहानियां लगभग ४०० हैं।

भगवतीचरण वर्मा के सामाजिक और राजनीतिक समस्याओं पर सीधी सच्ची बातें, प्रश्न और मरीचिका, चित्रलेखा, टेढ़े-मेढ़े रास्ते, सबहिं नचावत राम गोसाईं, सामर्थ्य और सीमारेखा, वह फिर नहीं आयी, घुप्पल तथा चाणक्य आदि उपन्यास विशेष चर्चित रहे।

भगवतीप्रसाद वाजपेयी विषयवस्तु की कलात्मक प्रस्तुति हेतु सदैव स्मरण किये जायेंगे। आपकी निंदिया लागी और मिठाईवाला कहानियां गहन अंतर्द्वन्द्व और मनोविश्लेषण क्षमता के कारण पाठकों को द्रवित करने वाली हैं। गुप्तधन, दो बहिनें, चलते-चलते, पतवार आदि आपके चर्चित उपन्यास हैं।

प्रतापनारायण श्रीवास्तव ने मध्यमवर्गीय समाज के चित्रण को विजय, विदा, विकास, बयालिस, विसर्जन जैसे उपन्यासों में चित्रित किया है। राष्ट्र की संस्कृति और प्राचीन गौरव की रक्षा भावना से ओतप्रोत कथा साहित्य आपकी विशेषता है। आशीर्वाद, दो भाई और नवयुग आपके प्रकाशित कहानी संग्रह हैं। आपके चर्चित उपन्यास 'विदा' का मलयालम में अनुवाद भी हुआ। इस युग के चर्चित कथाकारों में यादवचन्द्र जैन, केवलकुमार ठाकुर, श्रीमती ज्योतिर्मयी ठाकुर, सद्गुरुशरण अवस्थी तथा देवी प्रसाद धवन 'विकल' के नाम उल्लेखनीय हैं। शीलजी ने शोषण और अत्याचार के विरुद्ध अपनी कहानियां लिखीं, उनको सुप्रसिद्ध नाट्य कलाकार एवं चलचित्र निदेशक श्री पृथ्वीराज कपूर ने अपने नाट्य मंचों पर प्रदर्शित भी किया, जो अत्यन्त लोकप्रिय हुए।

पं. प्रतापनारायण मिश्र द्वारा बंगला उपन्यासों के अनुवाद तथा मौलिक कहानी लेखन के साथ कानपुर में कथा साहित्य सृजन की जो समृद्ध परंपरा प्रारंभ हुई थी, वह अब भी अनवरत प्रवहमान है। वर्तमान नाट्य लेखकों में डा. अज्ञात सुलतानिया, ज्ञानदेव अग्निहोत्री, सिद्धेश्वर अवस्थी तथा सुशीलकुमार सिंह उल्लेखनीय हैं।

साहित्यिक योगदान की चर्चा करने पर जहां साहित्यिक विभूतियों की स्मृति सजीव होती है, वहीं नयी पीढ़ी को उनके प्रेरणाप्रद व्यक्तित्व एवं कृतित्व से दिशा-निर्देश भी प्राप्त होता है। साहित्य की विभिन्न विधाओं में रचनाकारों को साहित्य सृजन के अलावा स्वतंत्रता आंदोलन को जन-जन तक पहुंचाने का भी श्रेय प्राप्त है।

(अपूर्व फ़ीचर्स)

व्यक्तित्व

विचित्र विनोदी आचार्य कृपलानी

□ शंकर त्रिवेदी

भारतीय राजनीति में आचार्य कृपलानी का व्यक्तित्व अपने ढंग का एक ही था। उन्हें गांधीवाद के प्रारम्भिक चितेरों में कहा जाये तो भी अतिशयोक्ति नहीं है। उन्हें लोग मुंह-फट भी कहने में नहीं चूकते थे। लेकिन ऐसा सोचना उनके साथ अन्याय करना है। अलबत्ता वे स्पष्टवादी थे। उनकी स्पष्टवादिता, विनोदप्रियता, कड़वा सच कभी-कभी मुंहफट कहने के रूप में गिनी जाने लगी। बेलाग कहने वाले ऐसे आत्मीय जन खोजने पर भी शायद ही मिल पायें।

वे भारतीय राजनीति के व्यापक फलक पर गांधीजी के साथ सन १९१७ में चम्पारण सत्याग्रह में शामिल हुए थे। जीवन भर बापू के साथ उनकी अंतरंगता बराबर बनी रहीं। लगता है प्रखर स्पष्टवादिता, विनोदप्रियता उदारता तथा प्रत्युत्पन्न मति जैसी विशेषताओं को उन्होंने गांधीजी के संसर्ग से ही ग्रहण किया था।

लीजिये उनके कुछ ऐसे ही संस्मरणों का आनन्द।

मेरे घर डाका

उनकी पत्नी श्रीमती सुचेता कृपलानी समाजवादी दल की एक वरिष्ठ सदस्या थीं। उन दिनों वे उत्तर प्रदेश विधान सभा की सदस्या भी थीं। उसी दौर में उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री पद की खींचतान चल रही थी। कई गुट सक्रिय थे। उस जमाने के सुप्रसिद्ध कांग्रेसी नेता श्री चन्द्रभान गुप्त ने रातोंरात श्रीमती कृपलानी को अपनी ओर मिला लिया। वे कांग्रेस की सदस्या बन गयीं। उन्हें विधान मण्डल दल का नेता घोषित करवा कर मुख्यमंत्री पद की शपथ ग्रहण करवा डाली।

आचार्य कृपलानी उस समय प्रजा सोशलिस्ट पार्टी के बड़े नेता थे। पत्रकारों ने उन्हें घेरा और इस प्रसंग पर उनकी प्रतिक्रिया पूछी।

दादा कृपलानी ने अत्यन्त सहज भाव से कहा : – 'अरे कांग्रेसियों ने मेरी अनुपस्थिति में मेरे घर पर डाका डाला। उसमें वे माल तो नहीं लूट सके पर मेरी पत्नी को ही भगा ले गये। सुना है उसे चीफ मिनिस्टर बना दिया है।'

ऐसी दो टूक बात जो मन में आयी

वही उगल दी। हर किसी के बस की बात नहीं है। उनके बस की थी।

यह अन्तिम नहीं

एक साक्षात्कार के दौरान उनके तथा साक्षात्कारकर्ता दोनों के नरम स्वास्थ्य को मद्देनजर रखकर कह उठे पत्रकार महोदय – 'दादा! लगता है यह आपका साक्षात्कार अंतिम ही है।'

सुनते ही चुहुलबाजी में माहिर दादा कृपलानी बोले – 'मित्र! तुम तो भारतीय संस्कृति के पुजारी हो सो पूरे १२५ बरस जीना ही है! रही बात मेरी तो....।'

'तो क्या दादा!' वे पूछ उठे।

'अरे मेरी बीवी की विधवा होने में जरा भी रुचि नहीं है। इसलिए मैं सिर्फ साक्षात्कार को अन्तिम सिद्ध करने के लिए आत्महत्या भी नहीं कर सकता सो यह साक्षात्कार अन्तिम नहीं।' कह कर वे खूब जोरों से हंसे।

दोनों में फर्क यह है

बात उन दिनों की है, तब भारतीय राजनीति में 'आयाराम' 'गयाराम' का अस्तित्व नहीं के बराबर था। इनके लिए दलबदलू शब्द व्यवहार में आ रहा था। तभी एक दलबदलू विधायक दादा कृपलानी को अपने दल छोड़ने का कारण बतला रहे थे। एक पत्रकार भी तभी वहां आ धमके। पूछ उठे– 'दादा! आप श्रीमती सुचेता कृपलानी को महान समझते हैं या अपनी प्रेमिका को?'

'भाई फर्क तो मैं क्या जानूं! हां, सिर्फ इतना जानता हूं कि पत्नी को 'वर्तमान दल' तथा प्रेमिका को 'विचाराधीन दल' जरूर ठहराने की हिमाकत कर सकता हूं।' कहकर दादा हंसे। फिर कह उठे, 'पर यह वक्तव्य ऑफ द रिकार्ड है, वहीं रहना चाहिये वरना सी. एम. का बेलन मेरी....।'– कहकर वे ठहाके में खो गये खुद के।

कहे से कुम्हार...

घटना सन १९३० की है। महात्मा गांधी सत्याग्रह के बाद जब जेल गये तो वहां से कुछ अस्वस्थ होकर ही बाहर आ सके। उन्होंने बीमारी के बावजूद देश का दौरा शुरू कर दिया। तब कृपलानीजी ने प्रस्ताव किया कि वे बापू के साथ रहें ताकि उन्हें ज्यादा श्रम से रोक सकें। किन्तु कुछ नेताओं ने उनके प्रस्ताव को महत्व नहीं दिया। खिन्न मन दादा कृपलानी चुप्पी साध गये।

डॉक्टरों ने गांधीजी को आराम करने की राय दी। लेकिन वे मानने वाले कहां थे। नेताओं ने सारी स्थिति पर फिर से सलाह मशविरा किया। हारकर कृपलानी को बापू के साथ भेजना तय हुआ। सुनकर आप बुदबुदा उठे 'गरज पड़ने पर गधे को भी बाप कहना पड़ता है।'

किसी नेता ने सुन लिया तो पूछ उठा– 'क्या फरमा रहे हैं, दादा!'

वे हंसकर बोले – 'अरे कहना क्या

है ! वही कहावत कह रहा था कि कहने से कुम्हार गधे पर कहां बैठता है !' ...और वे बापू के साथ हो लिये ।

जाओ मरो, हम क्या करें ?

गांधीजी एक बार दिल्ली से कलकत्ता जा रहे थे। इलाहाबाद स्टेशन पर हजारों लोगों ने प्लेटफार्म पर गाड़ी को घेर लिया। बापू को तेज बुखार था। रात भी काफी हो चुकी थी। दादा कृपलानी भी बापू की टोली में थे। वे कम्पार्टमेण्ट के दरवाजे पर आकर लोगों को समझाने लगे कि – 'बापूजी बीमार हैं। वे अभी आराम कर रहे हैं। इतनी देर रात में आप उनके दर्शनों की जिद नहीं करें।'

लेकिन जोशीली भीड़ पर इसका असर नहीं हुआ। वे नारे लगाते डिब्बा पीटने लगे। गांधीजी आवाज से चौंके। जग गये। बोले – 'प्रोफेसर कृपलानी ! यह बच्चों की क्लास नहीं हैं ! मुझे प्लेट फार्म पर जाना चाहिये !'

कृपलानीजी ने बहुत मना किया कि आप बाहर नहीं जायें। बापू भी तर्क देते रहे। कई बार के आग्रह के बाद भी जब बापू दरवाजे की तरफ बढ़े तो कृपलानीजी ने तमतमाकर कहा – 'तो फिर जाओ, मरो जयजयकार सुनो अपनी। हम क्या करें !' – और वे बच्चों की तरह सुबक कर रो उठे !

गाड़ी चलने पर बापू ने अब उनकी बात मानने को कहा तब वे चुप हुए फिर [illegible] दौड़ पड़ना 'जय हो गांधी बाबा की' सुनकर !

मेरी जात तो है...

दादा कृपलानी तीसरी श्रेणी के एक भीड़ भरे डिब्बे में यात्रा कर रहे थे। तभी एक किशोरी प्रेमशीला गुप्ता पूछ उठी – 'आप किस जाति के हैं।'

'क्या बताऊं, बेटी ! मेरी एक जाति तो है नहीं। जाति-बदलू ही मान लो मुझको तुम।' – दादा कृपलानी बोले।

'पर कोई जाति तो होगी ही न आपकी और आपके माता-पिता की ?' वह किशोरी फिर सवाल कर उठी।

'पूछने पर ही तुल बैठी हो तो मैं हरिजन हूं, बुनकर भी हूं, ब्राह्मण भी, व्यापारी भी, वह भी सिन्धी।'

'क्या मतलब ?'

'बिटिया ! मैं शौचालय साफ करता हूं अपना तब हरिजन, सूत कातता हूं तो बुनकर, पढ़ाने जाता हूं तब ब्राह्मण और देश के लिए विचार बेचने निकलता हूं गांधी के इशारे पर तो बनिया बन जाता हूं। और भी कई जातियां जीता हूं। कौन-सी बताऊं।'

सहयात्री आनन्दित हो उठे उनकी जाति जानकर।

ऐसे थे स्पष्ट वक्ता, मुंहफट, विनोदी, प्रत्युत्पन्न मति के स्वामी आचार्य जे. बी. कृपलानी ! उनकी स्मृति को प्रणाम।

– बी. ११६, विजयपथ, तिलकनगर, जयपुर - ३०२ ००४ राज.

□

चावल के दाने पर करिश्मा

□ किरणबाला

'दाने-दाने पर लिखा है खाने वाले का नाम' कहावत तो आपने जरूर सुनी होगी, और शायद यह सोचा भी न होगा कि दाने पर नाम भी लिखा जा सकता है? लेकिन अगर हाथ में हुनर हो तो इस कहावत को चरितार्थ करते देर नहीं लगती। जी हां, दाने पर बहुत कुछ लिखा जा सकता है। यकीन न हो तो इस कला के कुछ कलाकारों से मिलिये।

कुछ दिनों पहले राष्ट्रपति वेंकटरामन जयपुर गये थे। अपनी उस यात्रा के दौरान एक महिला कलाकार नीरू छाबड़ा ने उन्हें एक अनोखी भेंट दी। एक चावल के दाने पर उसने लिखा था – 'महामहिम राष्ट्रपति का गुलाबी नगर में स्वागत है' राष्ट्रपति इस अनोखी भेंट को पाकर बहुत प्रसन्न हुए।

जैसलमेर के एक कलाकार हिराम सोनी ने सिर के बाल पर खून से 'वेंकटरामन' लिखकर इसे कांच की एक शीशी में बंद कर राष्ट्रपति को जोधपुर में भेंट किया। सिर के बाल पर अपना नाम लिखा देख राष्ट्रपति के मुंह से निकल पड़ा 'ओह, एक्सिलेंट!'

एक कलाकार हैं, हैदराबाद के पन्ना माहेश्वरी। एम.ए. के यह छात्र चावल के एक दाने पर अंग्रेजी में ८, हिंदी में ९, उर्दू में १८ व तेलुगु में ७ अक्षर चंद मिनटों में लिख देते हैं।

भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण विभाग, जयपुर के कर्मचारी सुरेन्द्र पाल अफरिया ने तीसरी बार गिनीज बुक ऑफ वर्ल्ड रिकार्ड्स में अपना नाम दर्ज

कराया है। अफरिया ने एक चावल के दाने पर ६३८ अक्षर लिखकर विश्व रिकार्ड बनाया था। उनका पिछला रिकार्ड ४३७ अक्षरों का है। विश्व रिकार्डधारी अफरिया इससे पूर्व अपने ही एक बाल पर 'जवाहर लाल नेहरू शताब्दी—मेरा भारत महान १९८९-९०' भारत, बाई एस.के. अफरिया' और भारतीय ध्वज का चित्रण हिंदी तथा अंग्रेजी भाषा में करके जापान के सुतोमों इशाई द्वारा १९८३ में बनाये रिकार्ड को ध्वस्त कर चुके हैं।

अगर हाथ में हुनर हो और कुछ करने का उत्साह हो तो व्यक्ति असंभव को भी संभव कर सकता है। क्या आप इस बात पर विश्वास करेंगे कि ५ x ८ इंच के छोटे से कागज पर १,१०० चित्र अंकित हो सकते हैं? लेकिन यह मजाक नहीं सत्य है, और इस करिश्मे को करने वाले हैं नजप्पा, जो एक इंजीनियर हैं। उन्होंने अपने इंजीनियरिंग ज्ञान को इस प्रकार इस्तेमाल किया कि चावल के दानों पर विमान के चित्र और ५ x ८ इंच से भी छोटे कागज पर भगवद्गीता लिख दी। वाकई नजप्पा की कला बड़े कमाल की है।

अब आपको एक अन्य कलाकार भास्कर भौमिक से मिलवाते हैं जो कि छोटे अक्षरों की लिखावट में तेजी से आगे बढ़ रहे हैं। यह कलाकार चौबीस परगना (पश्चिम बंगाल) का है, जो ललित कला में सिद्धहस्त है। भास्कर कमर्शियल आर्ट में डिप्लोमा हैं। उनके द्वारा किये गये कुछ चमत्कार इस तरह हैं — चार इंच लंबे एक बाल पर १२५ अंग्रेजी अक्षर, पिन के अग्रभाग पर ईसा मसीह का चित्र, साबूदाने के एक दाने पर विश्व का नक्शा, अनाज के आधे टूटे हुए दाने पर दुर्गा का चित्र।

भास्कर को प्रसिद्धि तब मिली थी, जब १९८० में उन्होंने श्रीमती इंदिरा गांधी को चावल के एक दाने पर ३०० अक्षरों वाला पत्र लिखा था। वैसे जब वे स्कूल में कक्षा नवीं में पढ़ते थे, तभी से उन्हें इस तरह लिखने का शौक रहा है।

टोक्यो के सुतोमी इशाई भी छोटे अक्षरों की लिखावट में बड़े माहिर हैं। १९८३ में उन्होंने ४४ देशों के नाम के १८४ अक्षर एक चावल के दाने पर लिख कर कीर्तिमान स्थापित किया था। यही नहीं, उन्होंने जापानी भाषा में 'टोक्यों जापान' शब्द मानव केश पर लिखकर अद्भुत कौशल का परिचय दिया था।

छोटे अक्षरों की लिखावट के प्रयासों में इंग्लैंड के सी. वाट्स किसी से पीछे नहीं हैं। उन्होंने बिना किसी उपकरण की सहायता के प्रभु की प्रार्थना लिखी। माइकेल ने कार्मेल विश्वविद्यालय में नमक के एक रवे पर एक इलेक्ट्रान किरण से १६ अक्षरों का एक शब्द इस कौशल से उभारा था कि उसके स्ट्रोक्स

सिर्फ २ से ३ मिलीमीटर चौड़े थे।

चावल के दानों पर एक से ५ हजार ५१ अक्षर खोदने तथा पोस्टकार्ड साइज की हाथी दांत की प्लेट पर गीता व कुरान शरीफ अंकित करने वाले कलाकार भंवरलाल कुमावत इन दिनों वैसी ही प्लेट पर अंग्रेजी में बाइबिल उत्कीर्ण करने में जुटे है।

हाथी दांत की ऐसी प्लेटों पर ६ बार गीता व एक बार कुरान शरीफ अंकित करने वाला यह कलाकार, इन दिनों आंध्र के तूफान पीड़ितों के लिए एक करोड़ रुपये एकत्र करने का संकल्प लेकर जगह- जगह अपनी कला का प्रदर्शन कर रहा है।

४४ वर्षीय, अजमेर (राजस्थान) निवासी भंवरलाल कुमावत ने बताया कि १९७७ में तत्कालीन प्रधानमंत्री मोरारजी देसाई ने भूतपूर्व अमरीकी राष्ट्रपति जिमी कार्टर को चावल का एक दाना भेंट किया था, जिस पर मेरे द्वारा बाइबिल की १० शिक्षाओं के ५ सौ अक्षर उत्कीर्ण थे। बाद में इसकी नीलामी से १७ हजार, २ सौ पौंड की राशि मिली, जो विकलांगों की सहायतार्थ भेंट कर दी थी। उन्होंने बताया कि वे अब तक नेपाल के महाराजाधिराज, अमरीका के कैनेडी, पाकिस्तान के स्व. भुट्टो व स्व. जिया उल हक, बांगलादेश के स्व. मुजीबुर्रहमान, मदर टेरेसा आदि को भी ऐसी भेंट दे चुके हैं। उनकी कुछ ऐसी ही कृतियां कतिपय संग्रहालयों में भी रखी हैं।

श्री कुमावत ने संपूर्ण गीता चावल के दानों पर उत्कीर्ण की है। सन १९८० में तत्कालीन प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी के आग्रह पर उन्होंने ३ x ४ इंच की हाथी दांत की प्लेट पर संपूर्ण गीता अंकित की, जिसमें ५४ हजार ३ सौ अक्षर थे। मगर वे यह भेंट स्व. इंदिरा गांधी को नहीं दे पाये। श्रीमती गांधी की हत्या के बाद उन्होंने यह भेंट श्री राजीव गांधी को दी।

ऐसी ही गीताएं कुमावत जोधपुर के भूतपूर्व महाराजा, जैन मुनि रामचन्द्रजी सूरी तथा राष्ट्रीय संग्रहालय को दे चुके हैं तथा दिल्ली के लक्ष्मीनारायण मंदिर (बिड़ला मंदिर) को भेंट करेंगे।

राष्ट्रीय पुरस्कार से सम्मानित कुमावत ने आत्म संतोष के लिए १९६२ के भारत-चीन युद्ध के समय एकत्र की गयी १२ हजार ८ सौ रुपये की राशि तत्कालीन प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू को, १९६५ के भारत-पाक युद्ध के समय २१ हजार रुपये की राशि तत्कालीन प्रधानमंत्री लालबहादुर शास्त्री को, १९६९ में राजस्थान में पड़े अकाल के समय एक लाख रुपये की राशि तत्कालीन मुख्यमंत्री मोहनलाल सुखाड़िया को भेंट की तथा १९७० के बांग्ला देश युद्ध के

समय ५० हजार रुपये की राशि भी दी। यह सारा धन उन्होंने अपनी कला के प्रदर्शन से एकत्र किया था।

अब एक नवीनतम रिकार्ड और देखिये, जिसने अब तक के पिछले सभी रिकार्डों को ध्वस्त कर दिया है। यह महान कलाकार हैं यमुनानगर के दीपक स्याल। दीपक मात्र २० वर्ष के हैं। उन्होंने चावल के एक दाने पर ८१३ शब्द लिखकर लोगों को हैरत में डाल दिया। उन्होंने १०० बार 'आई लव यू', १०१ बार 'आई लव टु यू' तथा अंत में नाम के पहले अक्षर डी.एस. लिखे हैं। उनके इस चमत्कार पर 'गिनीज बुक ऑफ वर्ल्ड रिकार्ड्स' की ओर से एक टाई व प्रशंसापत्र आया है तथा प्रमाणपत्र भी प्रदान किया है।

दीपक स्याल ने ब्रश के रूप में अपने सिर के बाल को ही अपनाया। वैसे उन्हें विश्व रिकार्ड बनाने में काफी पापड़ बेलने पड़े। वे पिछले तीन - साढ़े तीन वर्षों से इस कला का अभ्यास कर रहे थे। शुरू में उन्होंने पेन से चावल पर लिखने की कोशिश की, किंतु संतोष-जनक परिणाम नहीं निकलने पर इंसानी बालों को ब्रश के रूप में इस्तेमाल किया जो अधिक कारगर सिद्ध हुआ। उन्होंने सर्वप्रथम 'रामायण' शब्द को चावल के दाने पर लिखा, जिसे लिखने में उन्हें दो घंटे का समय लगा था। अब तो वे इस कला में इतने सिद्धहस्त हो गये हैं कि चंद मिनटों में ही ये किसी भी दाने पर अपनी कला का प्रदर्शन कर लोगों को आश्चर्य में डाल देते हैं। यही नहीं, चावल के दाने पर वे झटपट किसी का चित्र भी अंकित कर देते हैं। उपप्रधान मंत्री श्री देवीलाल का चित्र दीपक स्याल ने बनाकर उन्हें भेंट किया था, जिससे प्रसन्न हो कर देवीलाल ने पुरस्कार-स्वरूप ढाई हजार रुपये व एक प्रमाण-पत्र भी उन्हें दिया था। राष्ट्रपति श्री वेंकटरामन को भी दीपक स्याल ने उनका चित्र बनाकर भेजा, जिसे राष्ट्रपति ने बड़े चाव से स्वीकारा। इसके अलावा वह महात्मा गांधी, मिखाइल गोर्बाचौव, रवीन्द्रनाथ ठाकुर, जवाहरलाल नेहरू, इंदिरा गांधी, राजीव गांधी, बेनजीर भुट्टो, ओमप्रकाश चौटाला आदि के चित्र भी चावल के दाने पर बना चुके हैं। वह अपनी कला में लैंस की सहायता भी नहीं लेते। अपनी जरूरतों की रंग-बिरंगी स्याहियों का निर्माण भी वह स्वयं करते हैं।

उन्होंने माचिस की एक तीली पर राष्ट्रीय गीत और गायत्री मंत्र भी लिखकर आश्चर्यचकित कर दिया है।

दीपक स्याल के इरादे काफी बुलंद हैं। और वह इससे भी अधिक शब्दों को चावल के एक दाने पर उतारने के इच्छुक हैं।

— १६, सुदामा नगर एक्टेंशन-२, रामटेकरी, मन्दसौर, (म.प्र.)

परमाणु युद्ध तथा अन्तहीन वेदना

□ डॉ. नारायण महिषी

युद्ध कौन चाहता है, विशेषकर परमाणु युद्ध? कोई भी नहीं। इस संबंध में बड़े देशों ने बयान जारी किये हैं। साथ-साथ परमाणु हथियारों का संचय बढ़ाने के प्रयास भी जारी हैं। यह कहा जा रहा है कि यदि बड़े राष्ट्र परमाणु हथियारों के मामले में मज़बूत हो जाते हैं तो ताकत का सन्तुलन बना रहा है। अन्यथा किसी देश को बहुत थोड़े समय में नष्ट किया जा सकता है। ऐसी हालत में लाखों विकलांग लोगों को बचाने के लिए चिकित्सा सुविधायें भी कोई काम नहीं आयेंगी।

परमाणु युद्ध के दुष्परिणामों की न तो भविष्यवाणी की जा सकती है, न उन्हें मापा जा सकता है। केवल मानवता की अन्तहीन वेदना आंकी जा सकती है। चिकित्सा की अति आधुनिक सुविधाओं से लैस कोई भी अस्पताल इस बात का दावा नहीं कर सकता कि उसने एक सौ जानें बचायी हैं। अनेक अवसरों पर यह कहा जाता है कि परमाणु आक्रमण का लक्ष्य केवल सामरिक सुविधाओं की दिशा में किया जाता है। किन्तु ये सुविधायें केवल थोड़े से स्थानों पर केन्द्रित होने की अपेक्षा दूर-दूर तक फैली हुई हैं। इस प्रकार असंख्य परमाणु हथियारों का विस्फोट किया जायेगा। इसके अतिरिक्त, प्राकृतिक हवाओं और वातावरणीय मिश्रण के कारण विकिरण का विस्तार विशाल जनसमूह को नष्ट कर देगा तथा व्यापक क्षेत्रों को दूषित कर देगा। बाद में जीवित रहनेवाले लोगों को बचाने और उनकी चिकित्सा करने के लिए किसी भी राष्ट्र के पास उपलब्ध डाक्टरी सुविधायें बिल्कुल अपर्याप्त हैं। परमाणु युद्धोपरान्त

उत्पन्न होने वाली डाक्टरी स्थिति का वस्तु परीक्षण किया जाये तो केवल एक ही निष्कर्ष निकलता है: रोकथाम ही हमारा एकमात्र सहारा है।

परमाणु विकिरण (रेडिएशन) का ख़तरा सर्वविदित है। विकिरण के अत्यधिक मात्रा में बाहर छूट जाने के कारण बेक्टीरिया तथा वाइरसों के प्रति प्रतिरक्षा की क्षमता कम हो जायेगी और परिणामस्वरूप संक्रामकता के दूर तक फैलने की आशंका है। विकिरण के ख़तरे असंख्य हैं। इससे ऐसे मस्तिष्क की क्षति तथा मानसिक रोग उत्पन्न होते हैं जो कभी ठीक नहीं किये जा सकते, और विकिरण के बाद जीवित रहनेवाले लोगों में कैंसर के अनेक प्रकारों की संख्या बढ़ती है। आनुवंशिकी क्षति का प्रभाव भावी पीढ़ियों पर पड़ेगा।

परमाणु आक्रमण के कारण बाद में जीवित रहनेवाले लोगों को ऐसी कई मुसीबतें झेलनी पड़ती हैं जिनकी व्याख्या नहीं की जा सकती। इससे संचार, खाद्य आपूर्ति तथा जल के क्षेत्रों में पूर्ण अवरोध होगा। इस आक्रमण के परिणामस्वरूप होनेवाले सामाजिक विघटन की कल्पना नहीं की जा सकेगी। मानव संकट के ये विवरण अपर्याप्त हैं।अतः, परमाणु हथियारों को सदा बढ़ाने की लालसा को अब नियंत्रित करने की सख़्त ज़रूरत है क्योंकि इस संग्रह में दस लाख से अधिक टीएनटी की क्षमता वाले हज़ारों बम हैं। इसके अतिरिक्त मिट्टी, जंगल तथा पशुधन के प्रदूषण से उत्पन्न खाद्य के संसाधनों में कमी के कारण मानव संकट बढ़ जायेगा।

परमाणु हथियारों के इस्तेमाल से उत्पन्न विध्वंश की कल्पना की जा सकती है। किन्तु कुछ वास्तविक परमाणु घटनायें, विशेषकर हिरोशिमा तथा नागासाकी से संबंधित हमें परमाणु हथियारों के विषय में कुछ भी करने नहीं देतीं। लगभग चार वर्ष पहले, एक जिम्मेदार सरकारी एजेन्सी ने मूल्यांकन किया जिसमें यह बताया गया कि बीस लाख की आबादी वाले नगरों पर परमाणु हथियारों के आंक्रमणों का क्या प्रभाव पड़ा। प्रसंगवश, यह कहना होगा कि हिरोशिमा बम में लगभग १५,००० टन विस्फोटक शक्ति थी। यदि ऐसे नगरों के मध्य क्षेत्र में एक दस लाख टन क्षमता वाले परमाणु हथियार का विस्फोट किया जाये तो वास्तव में भारी संकट उत्पन्न हो जायेगा। हो सकता है कि १८० वर्ग किलोमीटर संपत्ति का सर्वनाश हो जाये, २५०,००० लोगों की जानें चली जायें और ५०,००० गंभीर रूप से घायल हों। इनमें फ्रैक्चर और सॉफ्ट टिशुज़ के गंभीर चीर-फाड़, ऊपरी छाले, रेटिनी छाले तथा श्वास-नली की क्षति, विकिरण से हुए जख़्म आदि जैसे

विस्फोट के कारण हुए घाव भी सम्मिलित होंगे।

इनका इलाज़ करने के लिए आवश्यक चिकित्सा सम्बन्धी सुविधाओं की मात्रा का अनुमान नहीं लगाया जा सकता। अध्ययन से पता चला है कि यदि इनमें से किसी एक नगर के आसपास १८,००० शैया वाला अस्पताल उपलब्ध हो तो भी ५००० ऐसे जख़्मी बाकी रह जायेंगे जिनकी चिकित्सा नहीं हो पायेगी।

चिकित्सा सम्बन्धी कार्य की अपर्याप्ता इतनी स्पष्ट है कि हम बहुत बड़ी आशायें नहीं कर सकते। एक बार एक मोटर दुर्घटना के कारण गैसोलीन की टंकी फट गयी। एक बीस वर्षीय व्यक्ति बुरी तरह से जल गया और उसे बोस्टन अस्पताल के बर्न यूनिट में ले जाया गया। अस्पताल में रहने के दौरान उसे १४० लिटर फ्रेश-फ्रोज़न प्लाज़मा दियां गया, १४७ लिटर फ्रेश फ्रोज़न रैड ब्लड सैल, १८० एम एल प्लैटलेट्स तथा १८० एम एल ऐल्बुमिन। मरीज़ को छः शल्य प्रक्रियाओं से गुज़रना पड़ा और इस दौरान उसके शरीर के सतह के लगभग ८५% हिस्से के जख़्मों को कृत्रिम चर्म के अलावा विभिन्न प्रकार के प्रत्यारोपणों से बंद किया गया। चिकित्सा की सुविधाओं के हिसाब से अत्यधिक देखभाल के बावजूद मरीज़ अस्पताल में दाख़िले के ३३ वें दिन मर गया। यदि किसी आधुनिक अस्पताल में दाह जख़्मों के कारण हजारों मरीजों को दाखिल करना पड़े तो उपलब्ध चिकित्सा सुविधायें पर्याप्त नहीं होंगी।

परमाणु युद्ध के पश्चात् जो शेष रह जाता है, वह केवल वेदना की दर्दनाक तस्वीर है। जापानी फ़िज़िशियन प्रोफ़सर एम. इचिमारु द्वारा प्रकाशित नागासाकी बम के दुष्परिणामों का आंखों देखा हाल किसी भी उस व्यक्ति का हृदय पिघला देगा जो इस विवरण को पढ़ेगा। प्रोफ़ेसर इचिमारु ने बतलाया – 'मैंने उराकामी में अपने मेडिकल् स्कूल जाने की कोशिश की जो हाइपोसेन्टर से ५०० मीटर की दूरी पर था। उराकामी से लौटते हुए मैं कई लोगों से मिला। उनके कपड़े जीर्ण-शीर्ण थे और उनके शरीर से त्वचा की धज्जियां उड़ी हुई थीं। वे नरकंकाल जैसे लग रहे थे और आंखें फाड़कर देख रहे थे। अगले दिन मैं पैदल उराकामी में घुसा और वहां मैंने देखा कि सब कुछ नष्ट हो चुका था। उराकामी में मैंने पहले जो कुछ देख रखा था, कुछ भी शेष नहीं था। इमारतों की कंकरीट तथा लोहे के ढांचे ही शेष मात्र थे। जहां देखो वहीं मृत शरीर पाये गये। हमने प्रत्येक गली के नुक्कड़ पर हवाई आक्रमण से उत्पन्न आग को बुझाने के लिए पानी के टबों का इस्तेमाल किया। इन छोटे टबों में से

एक टब में एक हताश व्यक्ति की लाश पायी गयी जिसे राहत के लिए शायद ठंडे पानी की तलाश रही हो। उसके मुंह से झाग निकल रहे थे। मैं नष्ट किये गये खेतों में से रोती बिलखती महिलाओं की आवाजें नहीं भुला सकता। जैसे-जैसे मैं स्कूल के करीब पहुंचा, मैंने देखा वहां काले, झुलसे शरीर पड़े थे जिनकी भुजाओं और पांवों की हड्डियों के सफ़ेद कोर साफ़ नज़र आ रहे थे। जब मैं वहां पहुंचा, कुछ अभी जीवित थे। वे अपना शरीर तक हिला नहीं पा रहे थे। मैंने उनसे बात की और उन्हें यह उम्मीद थी कि वे ठीक हो जायेंगे, किन्तु यह निश्चित था कि अंततः वे सब दो हफ्तों में मर जायेंगे। जिस ढंग से उनकी आंखें मुझे देख रही थीं, मैं उस दर्दनाक दृश्य को भूल नहीं सकता। उनकी आवाजें सदा के लिए मेरे कानों में गूंज रही हैं। यह उल्लेखनीय है कि जो बम नागासाकी पर फेंका गया उसकी शक्ति २०,००० टन टीएनटी की थी। यह बम युद्धक्षेत्र में इस्तेमाल करने के लिए बनाये गये बमों से बड़ा नहीं था।

यदि परमाणु हथियारों का मौजूदा संचय बड़ी शक्तियों द्वारा प्रयुक्त किया जाये तो शायद ही कोई ऐसी जगह बचेगी जहां वेदना और तबाही का तांडवनृत्य न हो। समस्त अस्पतालों में अधमरे मरीज़ों को चिकित्सा की सुविधाएं उपलब्ध नहीं हो पायेंगी। अतः यह अत्यन्त आवश्यक है कि हमें समझदारी से काम लेना चाहिये और परमाणु हथियारों के इस्तेमाल से निश्चय ही बचना अत्यन्त आवश्यक है। गुट निरपेक्ष राष्ट्रों को विश्व की तीसरी शक्ति के रूप में अधिक प्रयोजनीय योगदान देने में सफल होना चाहिये।

(हिंदी रूपांतर : रतन प्रकाश)

□

सामरसेट माम की पुस्तकों की रायल्टी की काफी बड़ी रकम स्पेन में जमा हो गयी थी। मगर स्पेन का कानून यह है कि रायल्टी के पैसे देश के बाहर नहीं ले जाये जा सकते। इसलिए वे स्पेन पहुंचे ताकि वहीं उस रकम का सदुपयोग कर सकें। वे वहां के सबसे खर्चीले होटल के सबसे महंगे कक्ष में ठहरे और खुले हाथों खूब खर्च किया। जब उन्हें महसूस हुआ कि अब रायल्टी का अधिक हिस्सा व्यय हो चुका है, तो स्पेन से रवाना होने की सोची और होटल के मैनेजर से बिल मांगा। उत्तर मिला— 'सर, आप जैसे विश्वविख्यात व्यक्ति आकर हमारे होटल में ठहरें, यह हमारे लिए बड़े सम्मान की बात है और इससे हमारी बड़ी पब्लिसिटी हुई है। अतः आपका बिल कुछ भी नहीं है।'

— डॉ. गोपाल प्रसाद 'वंशी'

पुस्तकों की यात्रा

□ डॉ. गोपाल प्रसाद 'वंशी'

सब से प्राचीन पुस्तकें मिस्र में तैयार हुईं। यह ५,००० से भी पहले पैपाइरस नामक एक प्रकार सरकंडे से बने कागज पर लिखी गयी थीं।

प्राचीन पुस्तकें आधुनिक पुस्तकों की भांति बंधी हुई और जिल्ददार नहीं होती थीं।

होता यह था कि पैपाइरस के टुकड़े या 'पन्ने' एक-दूसरे के साथ चिपका दिये जाते थे और इस तरह एक लम्बी पट्टी बन जाती थी। इस प्रकार की कुछ पट्टियां १४४ फुट तक लम्बी होती थीं। पट्टी का एक सिरा लकड़ी या हड्डी की किसी छड़ी पर चिपका दिया जाता था। इसके बाद दूसरा सिरा इसी प्रकार की दूसरी छड़ी पर लपेट दिया जाता था। इस तरह पुस्तकें तैयार हो जाती थीं, जिसे खोलते जाते थे और पढ़ कर लपेटते जाते थे। इस प्रकार लिपटी हुई पुस्तक को 'स्क्रोल' कहते हैं। स्क्रोल को दोनों हाथों से पकड़ना पड़ता था। पुस्तक को डोरियों या तागों से बांधा जाता था और उन्हें लम्बे गोल डिब्बों में रखकर एक जगह से दूसरी जगह ले जाया जाता था।

भारत में भोजपत्र पर पुस्तकें लिखी जाती थीं। भोजपत्र भूर्ज वृक्ष की छाल को कहते हैं। इसके आयताकार पृष्ठों को बीच में से छेद करके माला की तरह पिरोया जाता था। भोजपत्र की पोथियों को बांध कर और कपड़े के बस्तों में लपेट कर रखा जाता था।

आवरण या 'कवर' के भीतर बंधे हुए पृष्ठों वाली पहली पुस्तक पार्चमेंट या चर्म पर लिखी हुई थी। पार्चमेंट जानवरों की खाल से बनाया जाता था। वेलम नामक एक प्रकार का पार्चमेंट मेमनों या बछड़ों की खाल से बनाया जाता था। आम तौर से पार्चमेंट मामूली

कागज से ज्यादा मोटा नहीं होता था।

प्राचीन काल में सभी प्रकार की पुस्तकें, चाहे वे पैपाइरस और भोजपत्र से बनी हों, चाहे पार्चमेंट या चर्मपत्र से, लिखी हाथ से ही जाती थीं। किसी पुस्तक की दूसरी प्रति या कापी की आवश्यकता होने पर हाथ से नकल करने के अलावा और कोई चारा नहीं था। रोम में पुस्तकों की नकल तैयार कराने का काम दासों से कराया जाता था।

यूरोप में मध्य युग में पुस्तकों की नकल तैयार करने का काम ईसाई संन्यासियों द्वारा किया जाता था। किसी एक पुस्तक की नकल करने में महीनों और कभी-कभी तो वर्षों का समय लग जाता था। नकल करने वाले नकल तैयार करने के साथ ही पुस्तक के पृष्ठों को चित्रों आदि से सजाया भी करते थे। पहले अक्षरों को आम तौर से सुन्दर रंगों से रंगने का भी रिवाज था। कभी-कभी पहले अक्षरों को सोने के तबक से भी बनाया जाता था।

जब तक पुस्तकें भोजपत्र और चर्मपत्र पर हाथ से लिखी जाती थीं तब तक उनके अधिक संख्या में या सस्ते मूल्य में उपलब्ध होने का कोई प्रश्न ही नहीं उठता था। तब पुस्तकें बहुत महंगी थीं और आसानी से प्राप्त नहीं होती थीं। लेकिन बाद में कागज और छपाई की कला के अविष्कार ने इस स्थिति में क्रांतिकारी परिवर्तन ला दिया। कागज चर्मपत्र और भोजपत्र से कहीं अधिक सस्ता था, और छपाई की कला ने किसी पुस्तक की अधिक से अधिक नकलें तैयार करना संभव बना दिया।

शुरू में लोगों ने छपी हुई पुस्तकों का मजाक बनाया। लोग इस बात पर गर्व करते थे कि उनके पास काफी बड़ी संख्या में हाथ से लिखी पुस्तकें हैं। ५०० साल पहले पुस्तकों के एक प्रसिद्ध संग्रहकर्ता ने बड़े गर्व से एक बार कहा था कि मेरे पास सारी पुस्तकें 'कलम से लिखी हुई' हैं। वह अपने पुस्तकालय में छपी हुई पुस्तकें रखना लज्जा की बात मानता था। लेकिन धीरे-धीरे छपी हुई पुस्तकों की लोकप्रियता बढ़ती गयी और यूरोप के कई नगरों में छापाखाने खुल गये। आरंभ की छपी हुई छोटी और सुन्दर पुस्तकें 'क्रैडल बुक्स' कहलाती हैं। इनमें से कुछ तो इतनी सुन्दर थीं कि आज तक उनकी बराबरी नहीं हो सकी है। उस युग में छपी हुई पुस्तकों को भी कभी-कभी हाथ से चित्रित करके सजाया जाता था।

'क्रैडल बुक्स' में सबसे अधिक प्रसिद्ध हैं गूतेन बर्ग की बाइबिलें। गूतेन बर्ग को आमतौर से टाइप से होने वाली छपाई का आविष्कारक माना जाता है। बहुत लम्बे समय तक लोग यह मानते रहे कि गूतेन बर्ग की बाइबिलें स्वयं

गूतेन बर्ग द्वारा छापी गयी थीं। लेकिन अब ऐसा माना जाता है कि उन्हें छापने वाला शोफर नाम का एक मुद्रक था। अंग्रेजी भाषा में पहली पुस्तक विलियम कैक्सटन नामक एक मुद्रक ने सन १४७४ में छापी थी।

गूतेन बर्ग, शोफर और कैक्स्टन जैसे आरंभिक मुद्रक यदि किसी आधुनिक छापाखाने या प्रेस को देखें तो उनके आश्चर्य की सीमा नहीं रहेगी। आज मुद्रण - कला ने बहुत अधिक उन्नति की है। छपाई के अलावा पुस्तक को तैयार करने का सारा काम जैसे फार्मों को मोड़ना, काटना, सीना, चिपकाना और जिल्दबंदी करना आदि मशीनों की सहायता से होता है।

अब पुराने जमाने की तरह पुस्तकों का एक-एक पृष्ठ अलग से नहीं छपता। कई पृष्ठों को एक साथ एक 'फार्म' के रूप में छाप लिया जाता है। बाद में पृष्ठ-संख्या के अनुसार फार्मों को मोड़ लिया जाता है। अधिक फार्मों वाली पुस्तकें मोटी होती हैं और कम फार्मों वाली पतली होती हैं। फार्मों की सिलाई या जुजबंदी हाथ से अथवा मशीन से की जाती हैं। तार से पुस्तकें सी जाती हैं। सिलाई के बाद पुस्तकों को मशीन से एक आकार में काट लिया जाता है। फिर जिल्द चढ़ाई जाती है। जिल्दसाजी का काम करने वाले 'बुक बाइंडर' कहलाते हैं। जिल्दसाजी के बड़े-बड़े कारखानों में लगभग सारा काम मशीनों से किया जाता है।

मोटी पुस्तकों पर जिल्द चढ़ाने के पहले उनकी रीढ़ या 'पोट' को पीट कर गोल कर लिया जाता है। इस काम को चूल बैठाना कहते हैं। जिल्द अलग से तैयार की जाती है। अगर पुस्तक पर कपड़े की जिल्द चढ़ानी होती है तो पहले कपड़े के पुस्तक के आकार के टुकड़े काट लिये जाते हैं। इसके बाद कपड़े को दफ्ती के टुकड़ों पर चिपकाया जाता है।

जब जिल्द तैयार हो जाती है तो उसे पुस्तक पर बैठाया जाता है। यह काम बहुत सावधानी से किया जाता है, क्योंकि पुस्तक की सुन्दरता बहुत कुछ उसकी जिल्द पर निर्भर करती है। जिल्द चढ़ाने के बाद पुस्तकों को बंडलों में बांध कर विक्रेताओं के पास भेज दिया जाता है।

—आरोग्य सदन,
गंज नं. १, पोस्ट-बेतिया,
जिला. प. चंपारन, बिहार.

□

ऋषि भाषा के बंधन से मुक्त होते हैं। जो भी श्रेष्ठ चिंतन जहां कहीं भी किसी भी भाषा में किसी ने किया हो, वे उसे हृदयंगम करने की क्षमता रखते हैं।
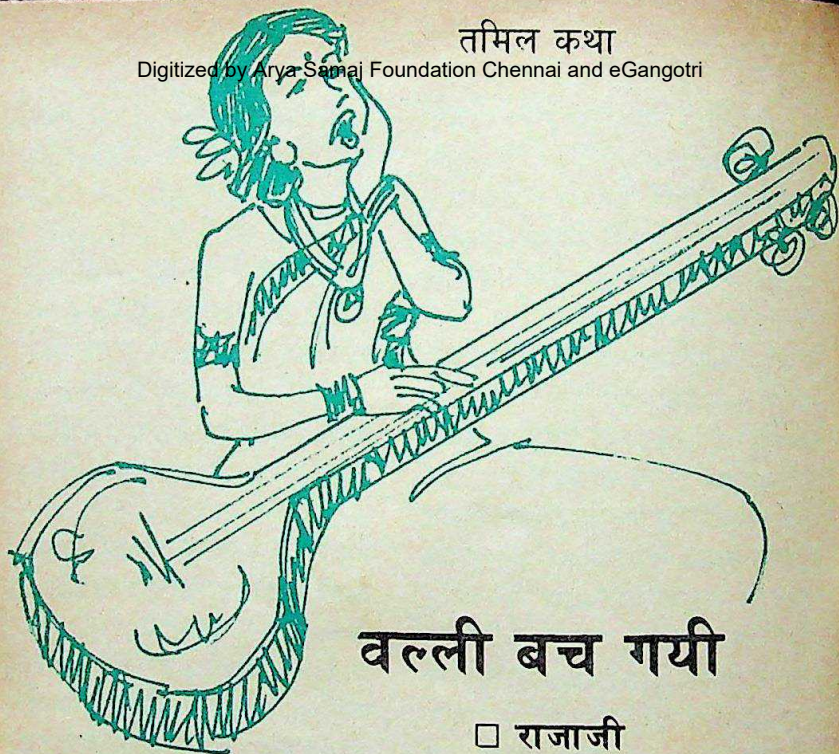
वल्ली बच गयी

□ राजाजी

शांभशिवम् मुदलियार के पिता श्री शंकर मुदलियार संस्कृति और शिक्षा के बड़े प्रशंसक थे। उन्होंने बेटे को भी अपनी ही तरह पाल कर बड़ा किया। शंकर मुदलियार की जब मृत्यु हुई, तब शांभशिवम् मुदलियार का विवाह हुआ। लड़की सगे मामा की पुत्री थी, उम्र थी तेइस साल।

शांभशिवम् मुदलियार का विचार था कि जो पत्नी अच्छी तरह गा नहीं सकती, उसका होना, न होना बराबर है। अतः उन्होंने अपनी पत्नी गौरीयम्मा को संगीत सीखने के लिए कुंभकोणम् के पास स्थित एक प्रसिद्ध गायिका के पास इन हिदायतों के साथ भेजा कि 'जल्दबाजी करने की कोई जरूरत नहीं। अच्छी तरह सीख कर आना।' साथ में देखभाल के लिए एक नौकरानी भी भेजी गयी।

पत्नी ने छः साल शिक्षा प्राप्त की। ऐसा लगा जैसे सामान्य ढंग से गा

सकेगी। पर मुदलियार को विश्वास न आया, सो उन्होंने अपने सहायक को सही पता लगाने के लिए भेजा। सहायक महोदय गौरीयम्मा का गायन सुनकर आये और बोले– 'सुर तो ठीक ही है, पर ताल संतोषजनक नहीं हैं।' शांभशिवम् इस आक्षेप को अनसुना नहीं कर सके। कहला भेजा कि ऐसा है तो कहियेगा कि तिरुवारूर सुब्बैयर से शिक्षा प्राप्त करे।

गौरीयम्मा ने उनके कहे अनुसार तिरुवारूर में चार वर्ष बिताये। स्वयं सुब्बैयर ने खबर भेजी, 'गौरीयम्मा का ताल ज्ञान बढ़िया है। और दो वर्ष यहां रह जायेगी तो उसका गायन पूरी तरह दोष रहित हो जायेगा। पर क्या करूं वह जल्दबाजी करती है?'

मुदलियार ने जवाब में कहला भेजा कि 'जल्दी करने से क्या लाभ? संगीत में जल्दबाजी नहीं चलती। ठीक से दो साल तक शिक्षा प्राप्त करके ही लौटने की सोचे।'

दो वर्ष बीत गये। पुराने सहायक की मृत्यु हो गयी। नये सहायक आनंदरंगम् पिल्ले एक जाने-माने तमिल विद्वान के सुपुत्र थे। मुदलियार ने उनको कहला भेजा कि 'जाकर देख आइये, शिक्षार्जन कहां तक सफल हुआ है? निष्पक्षता से जांच कर आइये।'

वे गये और आकर बोले– 'उनके गायन में तो कोई कमी नहीं है। कोई भी विद्वान गौरीयम्मा की बराबरी नहीं कर

सकेगा, पर तमिल शब्दों के उच्चारण में गड़बड़ी है। जरा तेलुगु की बू है।' गौरीयम्मा यालपाणम् भेजी गयीं। वहां दो वर्षों तक तोलकाप्पियम्, नन्नूल आदि तमिल ग्रंथों का गहन अध्ययन करके उत्तीर्ण हुई और वापिस अपने शहर लौट आयीं।

इस बीच मुदलियार के स्वास्थ्य में कुछ गिरावट की वजह से दो 'सिद्ध वैद्य' उन्हें देख गये। सिद्ध औषधि में निहित गर्मी के कारण कुछ अन्य समस्याएं पैदा हुईं। उसके चलते मुदलियार 'नेल्लै' के अस्पताल में दवा-दारू करने लगे। विदेश से लौटे डॉ. गोविंदन पिल्लै ने सारा दोष विषैली औषधियों और 'सिद्ध' चिकित्सा पद्धति पर मढ़ते हुए अस्वस्थता का कारण उनकी बढ़ती उम्र

को बताते हुए कहा कि अब स्वस्थ होना कठिन है।

इधर गौरीयम्मा के लौटने की खबर पाते ही मुदलियार ने कहा कि 'अब मैं घर लौटता हूं। जैसा भगवान चाहेगा, वैसा ही होगा।' और उन्होंने डॉक्टर से विदा ली।

घर लौटने पर मुदलियार गौरीयम्मा को पहचान न सके। गौरीयम्मा भी पति को देखकर संशय में पड़ गयी कि क्या यही मेरे प्रियतम हैं? गाना-वाना बंद करके उन्होंने पति की सेवा प्रारंभ की। छः महीनों के अंदर मुदलियार का शरीर अपने आप बिना दवा-दारू के ठीक हो गया। दोनों बड़े प्रसन्न थे।

सीखे हुए संगीत की बात न मुदलियार ने छेड़ी न गौरीयम्मा ने ही उठायी।

बाद में एक बेटी का जन्म हुआ। बड़ी प्रसन्नता के साथ दोनों ने बच्ची का नाम 'वल्ली' रखा।
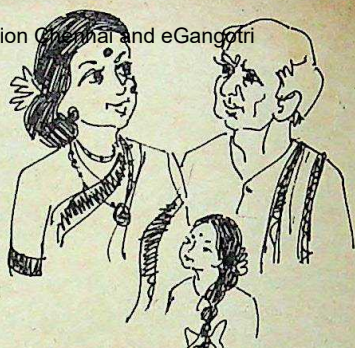
वल्ली बड़ी हुई।

मुदलियार ने कहा, 'पाठशाला जाने की जरूरत नहीं।'

गौरीयम्माने बार-बार समझाया कि गांव के सभी बच्चे पाठशाला भेजे जाते हैं, पर कोई लाभ नहीं हुआ। मुदलियार ने साफ इन्कार कर दिया। 'शायद मन में सोच रहे थे कि 'मुझ पर जो गुजरी वही काफी है।'

वल्ली बच गयी।

(अनु. : राधा जनार्दन)

□

साथ तुम्हारा

अन्तस्तल तक साथ तुम्हारा,
गंगाजल तक साथ तुम्हारा।
घनी उमस में जो घुमड़ा हो,
उस बादल तक साथ तुम्हारा।
लावे जैसा पिघल रहा हो,
उस मरुथल तक साथ तुम्हारा।
चाहे अनजानी हों राहें,
हर मंजिल तक साथ तुम्हारा।
तुम जैसे मेरी परछाई,
हर महफिल तक साथ तुम्हारा।
कितना ही गहरा हो सागर,
हर साहिल तक साथ तुम्हारा।
दूर-दूर तक कुछ न दिखे पर,
टूटे दिल तक साथ तुम्हारा।

– तारादत्त 'निर्विरोध'
१२८२, खेजड़े का रास्ता, जयपुर, राजस्थान

एक विचित्र मंदिर

□ ललित शर्मा

'औरंगजेब' का नाम आते ही प्रत्येक व्यक्ति के मानस पटल पर एक क्रूर धर्मान्ध शासक की तस्वीर उभर कर आती है। यर्थाथतः निष्कर्ष यह निकलता है कि औरंगजेब की ख्याति मन्दिरों को धराशायी कराने वाले शासक के रूप में हुई।

लेकिन इसे आश्चर्य कहें या कुछ और, कि राजस्थान में दक्षिण-भारत की भांति एक ऐसा स्थान भी है, जहां औरंगजेब के शासन में एक जैन-मन्दिर का पूरा निर्माण हुआ। यह स्थान है, राजस्थान के हाड़ौती अंचल के झालावाड़ जिले की खानपुर तहसील के 'चांदखेड़ी' नामक गांव में। चांदखेड़ी का यह विचित्र जैन मन्दिर मुख्यालय झालावाड़ से २२ मील दूर सुदूर पूर्व की ओर अवस्थित है। यह विशाल क्षेत्र 'अतिशय क्षेत्र' के नाम से विख्यात खानपुर कस्बे से मात्र दो फर्लांग की दूरी पर रूपली नदी के तट पर अवस्थित है।

मन्दिर के भू-गर्भ में एक विशाल तल-प्रकोष्ठ है, जिसमें भगवान आदिनाथ स्वामी की लाल पाषाण की पद्मासन प्रतिमा प्रतिष्ठित है। श्रवण-बेलगोला की 'बाहुबली' की प्रतिमा के

उपरान्त भारत की यह द्वितीय मनोज्ञ प्रतिमा है।

विचित्र कथा : उक्त प्रतिमा इस क्षेत्र से ६ मील दूर बारह-पाटी पर्वतमाला के एक हिस्से में दबी हुई प्राप्त हुई थी। श्रीकिशनदास बघेरवाल को एक दिन स्वप्न में बारह-पाटी से प्रतिमा को यहां लाकर विराजमान कराने का संकेत मिला। तदनुरूप प्रतिमा बैल-गाड़ी में रख कर सागोंद लायी जा रही थी, कि मार्ग में रूपली नदी पर हाथ-मुंह धोने हेतु गाड़ी ठहरायी गयी।

समयोपरान्त बैल जोतकर गाड़ी चलाने का उपक्रम किया गया तो गाड़ी एक इंच भी न सरककर अविचल हो गयी। गाड़ी को गति देने के लिए बैलों की अनेक जोड़ियों का प्रयोग किया, परन्तु वह निष्फल रहा। अतः नदी के ही पश्चिमी भाग में उक्त मन्दिर का निर्माण श्रीकिशनदास बघैरवाल ने आरम्भ किया। वे उस समय कोटा राज्य (स्टेट)के दीवान थे।

मन्दिर का विचित्र निर्माण : उस समय औरंगजेब ने अपने राज्यों में मन्दिर बनवाने की मनाही कर रखी थी। जिन लोगों ने मन्दिर बनाने का प्रयास किया, उन पर अत्याचार कियें जाते थे। 'चांदखेड़ी' में भी विशाल मन्दिर बनने की बात औरंगजेब जैसे सतर्क बादशाह से कैसे छुपी रह सकती थी। लेकिन इस समय वह दक्षिण में युद्ध में व्यस्त था, और कोटा के महाराव किशोरसिह उसकी सेंवा कर रहे थे। इसलिए उसने 'चांदखेड़ी' के मन्दिर को बनते हुए नहीं तुड़वाया। लेकिन यह तो सत्य ही था कि कोटा के हाड़ा राजपूत शासकों ने अकबर, शाहजहां, जहांगीर व औरंगजेब, जैसे शासकों के लिए प्राणों को जोखिम में डालकर उनकी ओर से युद्ध किये थे। अतएव मुगल-शासक हाड़ाओं से अत्यधिक प्रभावित थे।

लेकिन अजमेर का सूबेदार बार-बार अहदियों को मन्दिर बनाना बन्द करने के लिए भेजा करता, और ताकीद किया करता कि मन्दिर तुड़वा दिया जाये। ऐसे समय में सूबेदार को सन्तुष्ट रखना असम्भव बात थी। फिर भी बघेरवाल दीवान को यह भय था कि किसी दिन मन्दिर न टूट जाये, इसलिए यह 'विचित्र' प्रकार का बनाया गया। असली मन्दिर जमीन के गर्भ-गृह में बनाया गया, जिसमें पवन तथा प्रकाश का प्रबन्ध नहीं है।

क्षेत्र-दर्शन : क्षेत्र के मुख्य द्वार से प्रवेश करने पर एक किलेनुमा अहाता है। बाहर से उसकी बनावट 'मस्जिदाकार' है, जो सम्भवतया आक्रांता से बचाव के लिए प्रतीत होती है। इसी के मध्य में 'संमोशरण' (महावीर स्वामी को कैवल्य-प्राप्ति का प्रतिरूप) का भव्य मन्दिर है, जिसे

मूर्ति-कला में भी बेजोड़ कहा जा सकता है। इसकी प्रतिष्ठा आचार्य देशभूषण महाराज के सान्निध्य में सम्पन्न हुई थी। मन्दिर के मध्य में संगमरमर का सुन्दर श्वेत स्तम्भ है। इसी की चोटी पर महावीर की शांत-चित अहिंसात्मक भावना प्रसारित करती सुन्दर प्रतिमा है।

समोशरण दर्शन के पश्चात दायीं ओर के अहाते में जाते हैं, जिसके चारों ओर यात्री-निवास के कमरे बने हुए हैं। इसी अहाते के मध्य में जिनालय बना हुआ है। मन्दिर के चारों कोनों के ऊपर छतरियां बनी हुई हैं। मन्दिर के द्वार मंडप में १० फुट ऊंचा चौखुटा कीर्ति स्तम्भ है। जिसके चारों ओर दिगम्बर जैन तीर्थंकरों की प्रतिमायें उत्कीर्ण हैं। मध्य में तीन ओर १ फुट चौड़ा, १ फुट ऊंचा शिलालेख अंकित है।

द्वार में प्रवेश करने पर मन्दिर का अन्तर्भाग आता है, जो प्रत्यक्ष में वास्तविक मन्दिर की अनूभूति कराता है। इसी के दक्षिण भाग में पंचवेदियां एवं एक गन्धकुटी बनी हुई है, इनमें २३ तीर्थंकरों की तथा १ साधु की प्रतिमा हैं। गन्धकुटी में सुपार्श्वनाथ स्वामी की पद्मासन प्रतिमा विराजमान है। इस गर्भ-गृह में ३ वेदियां हैं। प्रथम वेदी में ५ पाषाण प्रतिमाएं हैं। इसी के पास ४ इंच ऊंचा एक पाषाण चैत्य है, जिसमें सर्वतो- भद्रिका प्रतिमा व ३ धातु प्रतिमा हैं।

द्वितीय मुख्य वेदी में 'बाहुबली' की ५ फुट की ५ कायोत्सर्ग मुद्रा की खड्गासन प्रतिमाएं हैं।

इस गर्भ-गृह के वाम-पक्ष में एक सोपान-मार्ग बना हुआ है, जो मुख्य-तल-प्रकोष्ठ को जाता है। इसी मार्ग के अन्दर बायीं ओर की दीवार में २ फुट ६ इंच के शिलाफलक में 'चक्रेश्वरीदेवी' की प्रतिमा है। सामने की दीवार पर २ फुट ४ इंच ऊंचे फलक में 'चतुर्भुजी-अम्बिका' बनी हुई हैं। बायीं ओर गर्भ-गृह में ३ फुट ४ इंच ऊंचे व ७ फुट ३ इंच चौड़े शिलाफलक में २ फुट ९ इंच ऊंची खड्गासन तीर्थंकर प्रतिमा है। इसके अतिरिक्त इसमें ५५ तीर्थंकर प्रतिमाएं ध्यानासनों में बनी हुई हैं। इसी के परिसर में गजमाला लिये 'चमरेन्द्र-ब्याल' तथा दोनों ओर 'यक्ष-दम्पत्ति' हैं।

मन्दिर के मुख्य गर्भ-गृह में विशाल वेदी पर मूलनायक 'भगवान आदिनाथ' की पद्मासन प्रतिमा विराजमान है। प्रतिमा के वक्ष पर "श्री वत्स" है। हाथ-पैरों में पद्म बने हुए हैं।

१८वीं शती में 'चांदखेडी' को वही स्थान प्राप्त था, जो प्राचीन काल में अयोध्या, गिरिनार तथा शत्रुंजय, आदि पवित्र स्थानों को था।

— शर्मा सदन, ७-मगेलपुरा स्ट्रीट
झालावाड़-३२६ ००१ (राज.)

प्राचीन स्वास्थ्य रक्षक भस्म प्रयोग

□ उमेश पाण्डे

प्राचीनकाल से ही अनेक साधु-महात्मा लोग अपने शरीर पर भस्म या भभूत चुपड़ते आ रहे हैं। तमाम मंदिरों में प्रसाद के साथ भभूत मिलाकर खिलाने-खाने की परंपरा आज सदियों से चली आ रही है। ये क्रियाएं ढकोसला नहीं हैं, बल्कि इनके पीछे ठोस वैज्ञानिक कारण हैं, मसलन – देह पर मली हुई भस्म जो कि मुख्यतः कण्डे की भस्म होती है, शरीर में शोषित हो जाने पर त्वचा के रोगों से शरीर की रक्षा करती है। इसी प्रकार मस्तक पर लगायी गयी भस्म शिरोरोगों से मनुष्य की रक्षा करती है। अस्तु।

आयुर्वेद में अनेकों धातुओं की भस्मों का शरीर रोगों पर होने वाले प्रभावों का विस्तृत विवेचन किया गया है। धातुओं की भस्मों में रोगों को हरने की अद्भुत क्षमता होती है, किन्तु जहां एक ओर उन भस्मों को देने की एक सीमा होती है, उन्हें रोगी को देने में रोगी का बलाबल देखना पड़ता है और वे महंगी भी होती हैं, वहीं दूसरी ओर अनेक सामान्य वनस्पतिज पदार्थों एवं प्राणी पदार्थों की भस्मों के भी अनेक प्रयोगों का वर्णन प्राचीन गंथों में मिलता है, जिनके द्वारा शरीर के तमाम रोगों का बड़ी ही सरलता से शमन किया जा सकता है। चूंकि ये भस्में सर्वथा निरापद पदार्थों से निर्मित होती हैं। अतः इनके प्रयोग से किसी प्रकार की हानि तो संभव है ही नहीं। इन भस्मों का यथाविधि प्रयोग करके कोई भी व्यक्ति इनके अनुकूल प्रभावों को देख सकता है।

बड़ के फलों को सुखाकर उन्हें जला दें। इस प्रकार प्राप्त भस्म को घावों पर लगाने से वे शीघ्र अच्छे हो जाते हैं। यही कार्य पीपल की छाल की भस्म

अथवा चने की भस्म भी करती है। इन भस्मों को सीधे ही अथवा खोपरे के तेल के साथ लगाया जा सकता है। इसी प्रकार जो घाव भरते न हों अथवा जिन घावों पर चमड़ी न आने पा रही हो ऐसे घावों पर चमड़े को जलाकर उसकी भस्म खोपरे के तेल के साथ मिलाकर लगाने से वे जल्दी-जल्दी भरने लगते हैं तथा घाव पर शीघ्र ही सामान्य चमड़ी आ जाती है।

हरिद्रा अर्थात् हल्दी की गांठों को जलाकर उनसे प्राप्त भस्म अथवा सफेद आंकड़े के फूलों को सुखाकर उनसे प्राप्त भस्म की १ या २ रत्ती मात्रा जल से लेने से श्वास तथा कफ में तुरंत आराम मिलता है। इसी प्रकार बेलपत्रों की भस्म बनाकर उसकी २ रत्ती मात्रा पानी के साथ लेने से खांसी में तुरंत आराम हो जाता है।

छोटे बच्चों को सर्दी, खांसी अथवा श्वास में परेशानी हो जाने की स्थिति में छोटी पीपल को आग में जलाकर उसकी भस्म की एक रत्ती मात्रा शहद. में मिलाकर चटाने से उन्हें तुरंत आराम मिल जाता है। उदुम्बर अर्थात् गूलर की भस्म गले एवं जिह्वा के रोगों में अत्यंत लाभदायक है। इसके लिए गूलर की थोड़ी-सी भस्म जल में मिलाकर उससे गरारा करना चाहिये। इससे टॉन्सिलस, गला बैठना, गला दुखना तथा जिह्वा-रोगों में बहुत आराम मिलता है। गरारे के साथ-साथ लगभग २ रत्ती भस्म दिन में २ बार जल के साथ लेना भी चाहिये।

बरसात के दिनो में पैर की अंगुलियों के बीच की त्वचा सड़ने लगती है। इसके परिणाम स्वरूप पैर की अंगुलियां एक दूसरे से चिपकने भी लगती हैं। इन सड़ने वाली जगहों पर तेंदू के पत्तों की भस्म को बुरकाने से वे अच्छी हो जाती हैं।

मूली के पत्तों को सुखाकर एवं जलाकर बनायी गयी भस्म अथवा स्वयं मूली को पहले धूप में भलीभांति सुखाकर फिर उससे बनायी गयी भस्म की दो से चार रत्ती मात्रा सुबह शाम जल के साथ लेने पर रक्तार्श तथा सूजाक में फायदा होता है। प्रारंभिक उक्त रोग तो इस प्रयोग से एक हफ्ते में ही ठीक हो जाते हैं।

कई लोग अत्यधिक पसीने से परेशान रहते हैं। अरहर की दाल (तुवर की दाल)की भस्म की ३-३ रत्ती मात्रा कुछ दिनों तक सुबह शाम लेकर इस बीमारी से मुक्त हुआ जा सकता है।

वायुविकार से पीड़ित व्यक्तियों के लिए बेल की जड़ को सुखाकर उसकी भस्म बनाकर उस भस्म की लगभग ४-४ रत्ती मात्रा कुछ दिनों तक लेना काफी लाभदायक रहता है। इसी प्रकार जामुन की गुठली की भस्म मधुप्रमेह का हरण करती है।

दाद, खाज-फोड़ा-फुन्सी के लिए भी भस्मों का एक सरल प्रयोग है। इनके लिए लाल अथवा पीले कनेर की पत्तियों की भस्म को खोपरे के तेल में मिलाकर संबंधित स्थान पर लगाया जाता है। इस प्रयोग से बहुत ही जल्दी ये अच्छे हो जाते हैं।

मस्तिष्क में तरावट बनी रहे तथा स्मरण शक्ति भी तीव्र हो, इसके लिए एक सेव को जलाकर पीने के पानी के मटके में डाल दें तथा दिन भर इसी मटके का पानी निथार कर पियें। इस प्रयोग में प्रतिदिन नया सेव लेना पड़ता है।

उपरोक्त वनस्पिति-भस्मों के अलावा कुछ प्राणी-भस्में भी काफी उपयोगी होती हैं।

सर्प की हड्डी की भस्म को तेल में मिलाकर मालिश करने से कंठमाला, घेंघा जैसी व्याधियों में आराम होता है।

केकड़े की भस्म योग्य अनुपात में सेवन करने से पथरी दूर होती है। बिच्छू की भस्म तेल में मिलाकर इस तेल की मालिश करने से जोड़ों की अकड़न या ऐंठन दूर हो जाती है।

शंख की भस्म को पान के साथ खाने से मृगी रोग में आराम पड़ता है।

हाथी दांत की भस्म तेल में मिलाकर लगाने से गंजपन रुक जाता है अर्थात् बालों का झड़ना रुक जाता है। यही नहीं नये-नये गंजपन में इस प्रयोग से बाल भी पुनः उग सकते हैं।

हरिण शृंग की भस्म पान के साथ लेने पर सर्व ज्वर तथा हृदय रोग में लाभ मिलता है।

इसी प्रकार बारहसिंगा के सींग की भस्म प्याज के रस में घोटकर लेने से श्वास रोग में लाभ होता है। इन भस्मों का एक-एक रत्ती मात्रा ग्रहण करने से ही ये पर्याप्त लाभ दर्शाने लगती हैं। — ३१९, म. गां. मार्ग, मल्हारगंज, इन्दौर, म.प्र.

□

कभी - कभी आते हैं

आचार्य नरेन्द्र देव उन दिनों बनारस विश्वविद्यालय के उपकुलपति थे। एक बार दोपहर का भोजन करने के लिए डॉ. सम्पूर्णानंदजी उनके निवास पर आमंत्रित थे। मैं भी संयोग से उस समय वहीं था। दोनों मनीषी भोजन कर रहे थे, तभी बाहर से एक गधे के रेकने की आवाज आयी। डॉ. सम्पूर्णानंदजी ने कहा - 'आचार्यजी, यहां गधे बहुत रहते हैं।' आचार्यजी ने तुरंत उत्तर दिया - 'नहीं, कभी-कभी आते हैं।' और दोनों ही महान विचरक खिलखिला कर हंस पड़े।

— दाऊदयाल मेहरा

अध्याय - ४३

सतत प्रयास करने पर भीं जो काम नहीं होता, समय आने पर प्रायः बिना प्रयास ही हो जाता है। ईसुरी के छूटने का समय आ गया। एक दिन प्रभात में ज्योंही कैदियों की टोली राजप्रसाद के सामने लान में काम करने को पहुंची महाराजा साहब भी दैवयोग से राजप्रसाद से बाहर आ गये। कैदियों पर दृष्टि जाते ही उन्हें पंडित गंगाधर की बात याद आ गयी। एक सिपाही को बुलाते हुए बोले, 'क्यो रे! इन कैदियों में कोई ईसुरी नाम का कैदी है?' सिपाही सैल्यूट मारता हुआ बोला, 'है सरकार! क्या उसे हाजिर करूं?'

महाराजा साहब का आदेश पाते ही वह ईसुरी को उनके सामने ले आया। एक सुन्दर युवक, गौरवर्ण, लम्बा कद, इकहरा शरीर, कमर में एक लंगोटी मात्र सिर के बाल बढ़े हुए, कुछ-कुछ निकलती हुई दाढ़ी-मूंछ भी। उसे देखते ही महाराजा साहब एक विनोद भाव से बोले, 'क्यों रे! तूने कोई फाग मुझे लिखकर भेजी थी? सुना उसे, क्या थी वह!'

ईसुरी का शरीर कांप रहा था। उसे डर था कि महाराजा साहब अप्रसन्न न

हो गये हों, फाग से तो और भी सजा बढ़ा दें। तब भी उनके आदेश का पालन करने को एक विचित्र-सी मुद्रा बनाकर उसने फाग उठायी -

राजा सुनो छतरपुर वारे - धन हैं हुकुम तुम्हारे,
बिन बूड़े से बैड़ वेत हैं - लगा कुची सें तारे,
सेर सेर के पड़े पैकड़ा - लै लये प्राण हमारे,
तक्कन में हो हेरे ईसुर - वेत सन्तरी पारे।

फाग सुनते ही महाराजा साहब के मुख पर मुस्कान दौड़ गयी। बोले, 'और भी कुछ फागें बनायी हैं कि एक यही! और सुना कुछ।'

ईसुरी को कुछ ढाढ़स बंधा। समझ गया - महाराजा साहब प्रसन्न हैं। डरने की कोई आवश्यकता नहीं। फिर उसने अपना स्वर साधा और फाग उठायी -

ऐसी बे इन्साफी आंसी - प्यारी कह दो सांसी,
कायम करी रूप रियासत में - अदा अदालत खासी,
पठवा दये नैन के सम्मन - चतुरई के चपरासी,
मन मुद्दई खां कैद कर लओ - सुरत हथकड़ी गांसी,
ईसुर कहबे गुना लगा दई - दफा तीन सौ ब्यासी।

'वाह। वाह। बहुत सुन्दर! रूप रियासत में अदा अदालत। नयनों के सम्मन चतुराई के चपरासी। मन मुद्दई। सुरत की हथकड़ियां। क्या रूपक रहा। दफा तीन सौ ब्यासी खूब लगायी!'

इसी समय भाग्यसे पंडित गंगाधर भी आ गये। महाराजा साहब उन्हें देखते ही बोले, 'पंडितजी! यह तो कमाल की फाग लिखता है। सुना रे वही फाग फिर सुना।' ईसुरी ने फिर वही फाग सुनायी।

पंडित गंगाधर बोले, 'सरकार! इसकी फागों में आग भरी है और यह अपनी फागों का ही शिकार हुआ है। फागों की बदौलत ही जेल में आया है। इसने अपनी फागों से अपने लिए बड़ा उपद्रव खड़ा कर लिया। वैसे इसने किया कुछ नहीं है। किसी की जान नहीं ली, अपनी ही जान हाथ में लिये फिरता है। उस रजऊ की फागें सुना ईसुरी, जिसके कारण इतना बड़ा तूफान उठ खड़ा हुआ।

ईसुरी ने फिर मुंह बनाया और फाग उठायी -

जौ जी रजऊ रजऊ के लाने - का काऊ सैं काने,
जौ लौ जीने जियत जिन्दगी - रजऊ के हेत कमाने,
पैलें भोजन करें रजौआ - पाछैं कैं मोड़ खाने,
रजऊ रजऊ कौ नाम ईसुरी - लेत लेत मर जाने।

'बहुत अच्छा। बहुत अच्छा। अच्छा संकल्प है, अच्छा आत्मोत्सर्ग! अपनी प्रियतमा के प्रति ऐसी ही धारणा होनी चाहिये। और सुना -'

विधना करी देह न मोरी - रजऊ के घर की देरी,
आउत जात चरन की धूरा - लगतजात हर बेरी
लागो अरन कान के ऐंगर - बजन लगी बजनेरी
उठन चहत अब हाट ईसुरी - बाट बहुत दिन हेरी।

'कमाल। कमाल! पंडितजी। इस लड़के में तो बड़ी प्रतिभा छिपी है। किसने इसे कैसे जेल में डाल दिया? क्या इसने वास्तव में कोई दंडनीय काम किया था? किसी की चोरी की, किसी पर डाका डाला?'

'मैंने विनय की थी न,' पंडित गंगाधर बोले, 'इसने कुछ नहीं किया। बड़े लोगों ने अपनी इज्जत बचाने के लिए इसके सिर अपना अपराध मढ़ दिया। बड़े लोग ऐसा ही करते हैं। उनके नौकर ही उनके बजाय जेल काटते हैं। ईसुरी भी अपने मालिक के बजाय जेल काट रहा है।'

यह सुनते ही महाराजा साहब एक सिपाही को बुलाते हुए बोले, 'जा रे! अपने जेल दारोगा को बुला ला। साथ ही किसी लुहार को भी, जो बेड़ियां काट सके।'

सैल्यूट मारता हुआ सिपाही भागा। सब कैदी आश्चर्य से देख रहे थे। महाराजा साहब गंगाधर को साथ लेकर महल के अन्दर चले गये। ईसुरी कैदियों की टोली में आकर लान में काम करने लगा। सिपाही बोला - 'ईसुरी! अब बैठ मौज से। अब तो तू छूटने वाला है। अच्छा तेरा भाग्य जागा।'

परन्तु ईसुरी कुछ न बोला। काम करता रहा। इसी समय अकस्मात कहीं से एक बड़ा काला सर्प आया और ईसुरी की पीठ पर चढ़ गया। महाराजा साहब और गंगाधर पास ही महल के एक हाते के भीतर खड़े थे। सहसा उनकी दृष्टि सर्प पर गयी। दोनों एक साथ चिल्लाये - 'बच ईसुरी! तेरे ऊपर सर्प चढ़ रहा है!'

सर्प ईसुरी की पीठ पर से सिर की ओर बढ़ा और सामने सीने से उतर कर सीधा चला गया। सब कैदी तथा सिपाही भयभीत से भौचक्के से देखते रह गये। ईसुरी ने भगवान को नतमस्तक किया और तत्काल फाग उठायी -

सिर पर करी सरप ने वामी - धन्य गरुड़ के गामी,
पीठ पछाड़े हो चढ़ आओ - उतरन उतरो सामी,
न हम करी न दई करन हूं - भगति रहो मैं कामी,
काहे सैं रीझे ईसुरी पै - करत जात हौ नामी।

यह फाग सुनते ही महाराजा साहब गद्गद हो गये। समीप आ गये और बोले - 'ईसुरी फिर इसी को सुना' ईसुरी ने फिर गायी और महाराजा साहब की आंखों में आंसू आ गये। वे बोले, 'पंडितजी! यह साधारण घटना नहीं। इतना बड़ा काला सांप पीठ पर से चढ़ा और सामने सीने पर से उतरा। ईसुरी ने चीख भी न मारी। जान पड़ता है ईसुरी कोई दैवी पुरुष है। यह आगे चल कर संसार में चमकेगा। इसे ईश्वर ने सन्मान दिया है। भगवान शंकर ने इसे अपनी माला पहनायी है। पंडितजी, जाओ रानी से इसके लिए एक अच्छा उपहार ले

आओ। एक स्वर्ण का हार। सर्प के स्थान पर उसके गले में उसे डाला जायेगा।

ईसुरी मूर्तिवत नतमस्तक खड़ा था। उसकी आंखों से आंसू टप-टप गिर रहे थे। भगवान के प्रति कृतज्ञता के आंसू।

थोड़ी ही देर में जेल दारोगा एक लुहार को लिये हुए दौड़ा आया। उसने महाराजा को सैल्यूट किया और आदेश की प्रतीक्षा में खड़ा हो गया। महाराजा साहब उसे देखते ही बोले, 'कटवाओ इस कैदी की बेड़ियां। मैं न समझता था कि मेरे राज्य में निर्दोष व्यक्तियों को भी इतना बड़ा कड़ा दंड दे दिया जाता है। अन्धेर की कोई सीमा नहीं। इसकी फाइल मेरे पास भेजना।' लुहार ने बेड़ियां काट दीं।

इतने में गंगाधर एक थाल में रक्खे हुए एक दुशाला, एक थान कपड़ा तथा एक कीमती स्वर्णहार लेकर आ गये। साथ ही रोरी भी।

महाराजा साहब का संकेत पाकर पंडितजी ने ईसुरी को समीप बुलाया और बोले, 'महाराजा साहब तुम्हारी फागों से प्रसन्न हैं। तुम्हारी प्रतिभा का महाराजा साहब ने मूल्यांकन किया है, तुम्हारे कवि को परखा है, तुम्हारी कसमसाती कविता को भी।' ऐसा कहते हुए पंडित गंगाधर ने ईसुरी के ललाट में रोरी से तिलक लगा दिया।

महाराजा साहब ने स्वर्णहार लिया और ईसुरी के कंठ में डाल दिया। कैदियों ने, सिपाहियों ने तथा सभी उपस्थित लोगों ने हर्ष से करतल ध्वनि की और महाराजा साहब की जय-जय बोली। पंडितजी ने ईसुरी को दुशाला उढा दिया और वह थाल में रक्खा कपड़ा भी उसे दे दिया।

सिपाही कैदियों को लेकर जेल को गये। ईसुरी राजप्रासाद की सीमा से बाहर निकला। उसके साथ एक चपरासी लगा दिया गया था। बाहर दलीं उसकी प्रतीक्षा में खड़ा था। ईसुरी उसे देखते ही उसके पैरों पर गिर पड़ा। दलीं ने उसे उठाकर हृदय से लगा लिया। दोनों की आंखों से मूक भावनायें आंसू बनकर बहने लगीं। दलीं ईसुरी को लेकर पंडितजी की बगिया को गया। रोज गोपाल पंडित कैदियों के साथ काम करने को जाया करते थे। पर दुर्भाग्य से आज उनकी ड्यूटी न लगी थी। सारे नगर में ईसुरी की चर्चा चलने लगी। तरह-तरह का तर्क-वितर्क। हत्या का अपराधी पुरस्कार के साथ छोड़ दिया गया। महाराजा साहब भी विचित्र औघड़दानी हैं।

ईसुरी के चले जाने पर महाराजा साहब गंगाधरजी से बोले, 'क्यों पंडितजी, यह रजऊ कौन है, जिसको सम्बोधित कर ईसुरी ने फागें बनायी हैं। क्या कोई ईसुरी की विशेष प्रेमिका है या साधारण सम्बोधन है?'

'सरकार!' गंगाधर हाथ जोड़कर

बोले, 'साधारण सम्बोधन नहीं। ईसुरी की विशेष प्रेमिका है। यह उस कानूनगो की ही पुत्रबधू है। कानूनगो का लड़का बब्बू ही मारा गया है। रजऊ और ईसुरी बचपन के ही साथ खेलने वाले हैं। बचपन से ही प्रेम बढ़ा है। परन्तु जाति-पांति के बंधन ने उनका विवाह न होने दिया। रजऊ की शादी बब्बू के साथ हुई। ईसुरी उसके वियोग में गीत गाता ही रह गया। ईसुरी की भी शादी हुई। पर उसकी स्त्री भी आग में जल कर मर गयी। यहां रजऊ भी विधवा हो गयी। प्रकृति ने मनुष्य के विधान को चुनौती-सी दी। विधान तो प्रकृति का ही सही है। प्रेम प्रकृति की देन है। जहां प्रेम है वहां सम्बन्ध होना ही चाहिये, परन्तु, सामाजिक रूढ़ियां इस प्रेम के मार्ग का रोड़ा बनती हैं। प्रकृति भी बदला लेती है। ऐसे जोड़ों को तोड़ देती है, जिनका मेल रूढ़ियों के आधार पर होता है।'

'तो, पंडितजी!' महाराजा साहब बोले, 'अब दोनों तो खाली हो गये। करा दो न इनका गठबंधन। प्रकृति की प्रतिज्ञा रह जाय। प्रेम की विजय हो जाये। समाज के सामने एक आदर्श आ जाये। वास्तव में यह सोचने की बात है कि जिस व्यक्ति को उसकी अपनी प्रेमिका नहीं मिलती, उसके साथ कितना बड़ा अन्याय होता है। क्या यह अन्याय न्याय नहीं चाहता? इस न्याय को दिलाने के लिए कोई अदालत भी तो नहीं। जाति-पांति के बंधन झूठे होते हैं। मनुष्य मात्र एक है। स्त्री-पुरुष का जोड़ा ही प्रकृति चाहती है और प्रेम के आधार पर। जन्मकुंडलियों के आधार पर नहीं। आकाश के ग्रह तारों के आधार पर नहीं। पृथ्वी के आंधी पानी के आधार पर नहीं। इस दिशा में भी न्याय जरूरी है, इसके लिए भी अदालत होनी चाहिये।'

'सरकार ही तो अदालत हैं,' पंडितजी ने हाथ जोड़कर कहा, 'जो फैसला सरकार कर देंगे उसे चुनौती देने वाला कौन है? कहावत है राजा करे सो न्याय। आपका जो आदेश होगा वह समाज के लिए एक आदर्श बनेगा। समाज की दिशा बदलेगी। रूढ़ियों में प्रगति के नये अंकुर फूटेंगे। समाज के विवेक में वृद्धि होगी। मनुष्य नये ढंग से कुछ सोचेगा। क्रान्ति की ओर कदम बढ़ायेगा। श्रीमान् का कुछ आदेश तो हो।'

'तो, पंडितजी,' महाराजा साहब बोले, 'मैं तो समझता हूं कि ईसुरी और रजऊ का अब विवाह हो जाना चाहिये। यह न्याय होगा। जो उनके मार्ग में रोड़ा के रूप में रक्खे गये उन्हें नियति हरा ले गयी। अब भी मनुष्य की बुद्धि न जागे तो कहना होगा कि मनुष्य के बुद्धि है ही नहीं।'

'श्रीमान!' पंडितजी ने कहा, 'यह न्याय है। आपका आदेश है तो यह होगा।'

अध्याय - ४४

मेघ फटे नहीं कि निर्मल आकाश निकला। ईसुरी की ग्रह-दशा बदली। पंडित गंगाधर के सामने उसके पुनर्विवाह का प्रश्न था। महाराजा साहब का आदेश। उनके मस्तिष्क में एक नया ही चित्र उभर रहा था। उनकी अपनी बगिया से ही ईसुरी के पुनर्विवाह का आयोजन एक विशेष धूमधाम के साथ किया जावे। राज्य के सभी प्रतिष्ठित नागरिकों को आमंत्रित किया जावे। महाराजा साहब भी उसमें पधारें। नव वर-वधू को अपना शुभाशीष दें, ऐसा हो जावे तो कैसा अच्छा रहे। इस विचार की प्रेरणा से उन्होंने ईसुरी और दलीं को अपनी बगिया में ही रोक लिया और वे अपने आयोजन को सकारता देने के लिए सभी सम्भव प्रयत्न करने लगे।

एक दिन वे बगौरा गये और कानूनगो के घर पहुंचे। कानूनगो ने उन्हें बड़ी आवभगत से लिया और दोनों ही चौपाल में पड़े हुए तखत पर बैठ गये। पंडितजी उनकी ओर देखते हुए बोले, 'कानूनगो साहब! मैं एक अभिप्राय से आपके पास आया हूं, महाराजा साहब का भेजा हुआ। महाराजा साहब ईसुरी की गुण-गरिमा से बहुत ही अधिक प्रभावित हुए हैं। जो सन्मान उन्होंने ईसुरी को प्रदान किया है, उसे आप सुन ही चुके हैं। उन्होंने ही क्या, भगवान शंकर ने भी उसे प्रतिष्ठा प्रदान की है। उसके गले में भयंकर काले सर्प की माला पहनायी। इससे स्पष्ट है कि ईसुरी कोई साधारण व्यक्ति नहीं, उसका भविष्य उज्जवल है। महाराजा साहेब के सन्मान से ही वह प्रकाश में आ गया, आगे चल कर और कीर्ति कमायेगा। अपने व्यक्तित्व को अजर-अमर बना कर रहेगा।'

कानूनगो आंखों से प्रसन्नता व्यक्त करते हुए बोले, 'पंडितजी! ईसुरी के विषय में सब कुछ सुन चुका हूं। मानता हूं कि वह कोई असाधारण व्यक्ति है और उसका भाग्य उज्जवल है। महाराजा साहब स्वयं कल्पवृक्ष हैं। उनकी छाया में जो कोई भी पहुंच जायेगा कौन सा मनोवांछित पदार्थ न पा जायेगा। ईसुरी के अब दिन फिरे हैं।'

'हां तो!' पंडितजी बोले, 'महाराजा साहब का विचार है कि ईसुरी और आपकी वधू रजऊ का पुनर्विवाह सम्पन्न करा दिया जाये। प्रकृति की यही योजना रही है। पर अल्प बुद्धि मानव ने उसके मार्ग में बाधा डाली और इससे इतना बड़ा काण्ड घटित हुआ। परस्पर प्रेम ही विवाह-शादी का सच्चा आधार है। जाति-पांति पाखण्ड है। बोलिये आपके क्या विचार हैं?'

यह सुनते ही कानूनगो कुछ गम्भीर हो गये, जैसे कुछ सोचने लगे हों, फिर आंखें मिचकाते हुए बोले, 'पंडितजी! यदि महाराजा साहब की ऐसी इच्छा है तो

कौन रोक सकता है ? मुझे सहर्ष स्वीकार है। अच्छा है रजऊ जिसके लिए पैदा हुई है उसी के पास जावे। इस घर में अब उसे रखना कोई न्याय संगत नहीं जान पड़ता। यह सामाजिक अन्याय है, जिसको दूर करने के लिए कोई अदालत नहीं। महाराजा साहब ही एक मात्र अदालत हैं। अच्छा है, महाराजा साहब समाज के सामने एक क्रान्तिकारी आदर्श उपस्थित करा देवें। हां पंडितजी ! मैं तो तैयार हूं परन्तु ईसुरी के पिता को भी तो राजी करना होगा। वे ही सबसे बड़ी बाधा डालेंगे। पुराने विचारों के व्यक्ति हैं, ढकोसलेबाजी में विश्वास रखते वाले। जाति-पांति के झूठ गौरव से फूले हुए।'

'खैर !' पंडितजी बोले, 'वे भी तैयार हो जावेंगे। महाराजा साहब की इच्छा के विरुद्ध कैसे खड़े हो सकेंगे ? मेरा विचार है कि यह शुभ कार्य सदर से ही हो। ईसुरी और दलीं मेरी बगिया में टिके हुए हैं, वहीं से इस आयोजन को सम्पन्न कराऊंगा। राज्य के सभी प्रतिष्ठित नागरिक आमंत्रित किये जावेंगे - महाराजा साहब भी पधारेंगे। धूमधाम से कार्य संचालित होगा। सरकारी बैण्ड बजेगा, आतिशबाजी छूटेगी, सच्ची शादी यह होगी। कैसा अच्छा रहेगा। आपको भी गौरव मिलेगा।'

कानूनगो की धमनियों में प्रसन्नता का प्रवाह होने लगा। आंखों के सामने ऐसे अभूतपूर्व दिन की एक उज्जवल झलक दौड़ गयी। जिस कार्य में महाराजा साहब हाथ बटा रहे हैं उसकी कौन आलोचना करेगा। वे बोले, 'पंडितजी ! मैं तैयार हूं।'
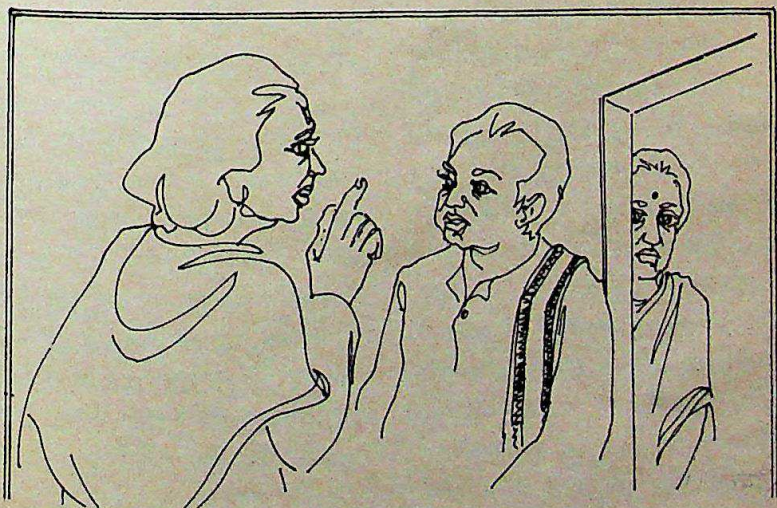
'अच्छा तो,' पंडितजी बोले, 'मैं यहां से मेढकी जाऊंगा - पंडित भोलारामजी से मिलूंगा और मनसुखलाल से भी। आपकी स्वीकृति प्रमुख थी, इससे पहले आपके पास आया।' ऐसा कहते हुए पंडितजी उठे। कानूनगो ने फिर कहा, 'पंडितजी! कुछ नाश्ता-पानी तो स्वीकार कर लीजिए।'

'नहीं! करके आया हूं। हां पान ले लूंगा।' ऐसा कहते हुए पंडितजी ने पान लिया और चलते हुए।

यहां देवकी और रजऊ पंडितजी की बात को किवाड़ों के पीछे छिपी हुई सुन रही थी।

कानूनगो अन्दर आये नहीं कि देवकी मुंह बनाती हुई बोली, 'तुम्हें हो क्या गया है! फौरन ही दूसरे के प्रभाव में आ जाते हो। किसी बड़े आदमी को द्वार पर आया देखा कि उसके सामने दीन-हीन-से बन गये। एक बात भी विरोध में बोलने का साहस नहीं रह जाता। ठाकुर पहाड़सिंह आये, उन्होंने बुद्धू बना दिया, ठाकुर जंगजीत आये उन्होंने बुद्धू बना लिया। उसी बुद्धूपना से अपने लड़के को खोया, अब बहू को भी खो दो। सोने-सी बहू घर से चली जावेगी, दूसरे के घर की शोभा बनेगी। सारा दोष तुम्हारा है। न ठाकुरों के चक्कर में पड़ते न अपने लड़के को खो बैठते। तुम्हारी अक्ल पर पत्थर पड़ गये हैं!'

देवकी की खरी-खरी बात सुनकर कानूनगो के शरीर में आग-सी लग गयी। कुछ खिसयाये से बोले, 'तुम्हारी जैसी बुद्धि कहां से पाऊं? जब कोई बड़ा आदमी घर आता है तो तुम क्यों नहीं बात करने को आगे आया करतीं? मेरी अक्ल पर पत्थर नहीं पड़े, भगवान की अक्ल पर पत्थर पड़े हैं, जो गाड़े से पारा उलझाये रहता है। कठपुतलियों जैसा मनुष्य को नचाता रहता है। इतना बड़ा तूफान उठा और टांय-टांय फिस। इससे रजऊ की शादी पहले ही ईसुरी के साथ हो गयी होती तो क्या बिगड़ जाता। परन्तु नहीं, बब्बू का अन्त तो इस प्रकार होना था! तूफान उसे ले गया और शान्त हो गया। अब बताओ, जिस बात को स्वयं महाराजा साहब चाहते हैं उसे, हममें क्या दम है कि टाल दें। वे चाहते हैं कि उनके राज्य में कोई लड़की विधवा बन कर न बैठे, कोई जमीन अनजुती न पड़ी रहे, तो क्या बुरा चाहते हैं?'

रजऊ इस प्रस्ताव से प्रसन्न थी, परन्तु उसने जाहिरा ऐतराज प्रकट करने में अपना गौरव देखा। देवकी से धीरे से बोली, 'अंकुर को जहां चाहे वहां लगा दिया जाता है, पर जब पेड़ बडा हो आता है, तब तो वह एक जगह से दूसरी जगह लगाया नहीं लगता। लगाया भी जाता है तो मुरझा जाता है, सूख जाता है। मेरा रखना भारू हो रहा होगा!' ऐसा कहती हुई रोने लगी।

देवकी मुंह बिदोरती हुई बोली, 'सुन लो बहू क्या कहती है ? क्या तुम्हें अच्छा लगेगा कि बहू तुम्हारे घर से चली जावे। जिस दिन जावेगी सारे घर में ऐसा लगेगा जैसे किसी भूत-मसान का डेरा हो। एक दुख को बड़ी मुश्किल से भुला पाये अब दूसरी समस्या सामने आ गयी। रजऊ की कैसी विचित्र तकदीर निकली। भगवान ने जैसा रूप-रंग दिया है वैसी तकदीर न दी। जो सनातन से नहीं हो आया वह उसके साथ हो। वही बेचारी क्या इस खिलवाड़ के लिए रची गयी है। संसार में और कोई महिला नहीं क्या ? महाराजा साहब बड़ा अच्छा करेंगे ! एक घर की प्रतिष्ठा में आग लगवा कर एक नये युग का निर्माण करेंगे। करोड़ों औरतें सती हो गयीं। उनकी आत्मायें क्या कहेंगी ? उनके जमाने में क्या कोई महाराजा साहब जैसा सोचने वाला नहीं था ?'

कानूनगो आंखें तरेरते हुए बोले, 'इतनी बरबादी हो चुकी। कुछ और चाहती हो क्या ? रजऊ को भी सती कराना चाहती हो क्या ? अभी तो कहती थी कि रजऊ घर से चली जावेगी तब कैसा लगेगा। अपना स्वार्थ न देखो। घर की प्रतिष्ठा का प्रश्न न उठाओ। प्रश्न है रजऊ के जीवन का। कैसे इतनी बड़ी जिन्दगी मन को मसोस कर बितावेगी। सारे सामाजिक नियम मनुष्य के बनाये हैं और वे सब काल के लिए खरे नहीं उतरते। मनुष्य की आंखों पर कितने ही लाल, पीले, हरे चश्मे चढ़े हैं। जो चश्मा सामने आता है, उसी रंग का संसार दिखने लगता है और उसी चश्मे को मनुष्य सही समझ बैठता है। कभी सतीत्व का चश्मा आंखों पर चढ़ा था, उस समय सतीत्व ही सब से अच्छा दिखता था। पर आज वह चश्मा आंखों से उतर गया है। आज समाज विधवा विवाह को न्याय संगत समझता है। मन को ही तो मोड़ना है। प्रचार से ही वह अपनी दिशा बदलता है। महाराजा साहब आगे हुए हैं। यदि मैं कोई व्यवधान उपस्थित करता हूं तो सोचो मेरा क्या होगा ?'

रजऊ फिर धीरे से मर्यादा को रखती हुई देवकी से बोली, 'अम्मा ! देखो तो सही मेरा क्या-क्या होता है। जो हो चुका उससे बुरा तो अब कुछ होगा नहीं ! इसलिए मुझे अपने भाग्य पर छोड़ दो। आंधी में उड़ूंगी, पानी में बहूंगी, आग में जलूंगी, इससे अधिक और क्या होगा। मैं तो अपने को समर्पित-सा कर चुकी हूं, विधि के विधान को। अपने हाथ-पैर नहीं चलाना, अपना मन नहीं बहकाना। मेरा भाग्य ही मुझे जैसा चाहेगा चला देगा।'

कानूनगो चुपचाप बहू की बातें सुन रहे थे। तत्काल बोले, 'देवकी ! तुमसे अधिक समझदार तो तुम्हारी बहू है। वह अक्षरों में मात्रा लगाना जानती है।

तुम कोरे अक्षर ही लिखना जानती हो। तमाशा देखो। जो कुछ हो होने दो।'

'मैं कैसे रोक लूंगी,' देवकी बोली, 'जो कुछ होता है, हो रहा है।'

'तुमने सुना नहीं,' कानूनगो फिर बोले, 'ईसुरी को कितनी बड़ी प्रतिष्ठा प्राप्त हुई है। वह महाराजा साहब के महल में जब काम कर रहा था, एक बड़ा काला सर्प उसकी पीठ पर से चढ़ा और उसके सीने से उतर कर चला गया। ईसुरी वहीं जड़वत बैठा रहा। यह महाराजा साहब ने भी घटना देखी। वे बोले, 'यह तो कोई दैवी पुरुष है। इसका भविष्य उज्जवल है। भगवान शंकर ने इसे अपना हार पहनाया है। इसी के समर्थन में महाराजा साहब ने भी उसे सोने का हार पहनाया - बेशकीमती। उसे दुशाला उढ़ाया और कपड़े भी प्रदान किये।'

'तब तो ईसुरी,' देवकी बोली, 'अवश्य कोई निराला व्यक्ति है। खैर यदि यह सम्बन्ध हो गया तो मैं उसे अपना बब्बू ही समझ कर घर में रक्खूंगी। वह भी रहेगा और बहू भी रहेगी। अपने घर आते-जाते ही बने रहेंगे। उनका घर यही होगा। मैं उसे अपना बब्बू ही कहूंगी,' ऐसा कहते हुए देवकी की आंखों में प्रेमाश्रु झलक आये।

'हां अम्मा,' रजऊ बोली, 'मैं तुम्हारा घर न छोड़ूंगी। न तुम छुड़ाना। मैं तुम्हारी ही बहू रहूंगी। तुमने मुझे प्रेम दिया है। तुम्हारे लड़के की ही कमी दूसरे ढंग से पूरी हो जावेगी। जिसे मान लिया वही लड़का है, जिसे ब्याह लिया वही बहू है। कुछ पूर्व जन्म का संस्कार है जिसे हम इस जन्म में तोड़ नहीं सके। मुझे प्रसन्नता है कि तुम्हारा लड़का फिर तुम्हें मिल रहा है। पहले लड़के के कारण बहू मिली थी, अब बहू के कारण लड़का। अम्मा! मुझे यह घर न छुड़ाना।' ऐसा कहती हुई रजऊ रोने लगी।

'न रो, रजऊ,' कानूनगो डबडबायी आंखों से बोले, 'तुझे हम जीते जी इस घर से पृथक न करेंगे। ईसुरी शंकर का रूप है, तू पार्वती का। दोनों इस घर में, इस घर के मालिक बन कर रहेंगे।'

* * *

अध्याय - ४५

सब का समय बदलता है। भोलाराम का भी समय बदला। एक दिन वे जब अपनी चौपाल में बैठे अपना पंचांग देख रहे थे और अपनी ग्रह दशा का ही कुछ लेखा-जोखा कर रहे थे, पं. गंगाधर उनके घर पहुंचे। पं. गंगाधर को आया देख कर वे बड़े आश्चर्य में पड़े। सहसा उठ खड़े हुए और उनका स्वागत करते हुए बोले, 'पंडितजी! आज कैसे कृपा की? कैसे इस उपेक्षित तिरस्कृत व्यक्ति की याद आयी? कैसे यह गौरव प्रदान करने की बात सूझी? आइये, बिराजिये।'
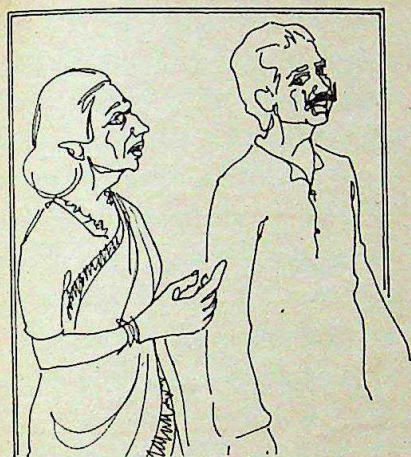
चौपाल में एक चारपाई पड़ी थी। पं. गंगाधर चारपाई पर जाकर बैठ गये और बोले, 'भोलारामजी! बैठिये फिर बात करूंगा।'

भोलाराम उनके सामने ही दीवाल से टिककर जमीन पर बैठ गये। अपनी थैलिया खोली और पान लगाने को बिछाते हुए बोले, 'हां पंडितजी, अब कहिये।'

पं. गंगाधर उनकी ओर जिज्ञासा भरी आंखों से देखते हुए बोले, 'ईसुरी के विषय में कुछ सुना? उसने कितनी बड़ी प्रतिष्ठा प्राप्त की है। आपको उस पर गर्व होना चाहिये।'

'पंडितजी!' भोलाराम चापलूसी करते हुए बोले, 'सब आपकी कृपा है। उस नालायक को कौन पूछता? यहां-वहां फागें गाता फिरता था। उसे दलियां ने सिखाकर ही बिगाड़ा था। मैंने सब सुन लिया है। आपने ही उसे जमीन से उठाकर पहाड़ पर चढ़ा दिया। क्या अपने बलबूते पर महाराजा साहब के पास तक पहुंच सकता था! यह आप ही हैं जो फागों के नाते उसे इतना ऊंचा खींच ले गये। हत्या के अभियोग से छुड़वा दिया। उसके गले में सोने का हार पहिनवा दिया। उसे एक दैवी पुरुष बनवा दिया। मैं तो उसे पहले जैसा ही बरबाद समझता हूं।'

पंडित गंगाधर मुस्कराते हुए बोले, 'ठीक है, भोलारामजी! अब वह मेरा हो गया। मैं उसे एक मंजिल और चढ़ाना चाहता हूं। आप कोई आपत्ति तो न करेंगे?'

'किसी ने मेरी विपत्ति को नहीं सुना - आपत्ति को कौन सुनेगा? आप उसे एक मंजिल नहीं, सात मंजिल तक ऊपर खींच ले जाइये। मुझे क्या पड़ी है जो आपत्ति करूंगा। जब आपने उसे अपना लिया है, जो चाहे सो कीजिये मैं तो यही गौरव समझता हूं कि उसे आपने अपना लिया। मेरे तो वह बस का नहीं था। मुझे तो चिढ़ाया करता था। भालूराम कहा करता था। पता नहीं आपने उसमें कौन गुण देखा!'

'तो भोलारामजी! आप जानते हैं कि कानूनगो की बहू रजऊ को वह चाहता रहा है। आपने उसकी शादी रजऊ के साथ न की। उसका ही यह सारा भयंकर परिणाम निकला। उसे तो आपने कुचल

दिया, पर उसके अन्दर जो प्रेम अंकुरा रहा था उसे आप न कुचल सके। जाति-पांति के जीर्ण-शीर्ण धागों से बांधकर प्रेम के मतवाले हाथी को न रख सके। वह एक लम्बा रास्ता पार करके अपनी मंजिल को पहुंच गया।'

भोलाराम दांत पीसते हुए बोले, 'पंडितजी! हम भी तो सामाजिक बंधनों से बंधे हैं। जो बंधन हमें बांधे हैं वे जीर्ण-शीर्ण नहीं, उन्होंने हमें ही जीर्ण-शीर्ण बना दिया है। अच्छा है आप हमारे बंधनों को खोल दीजिये। हम आपके पीछे चलेंगे। अन्धों को अंखियारों के पीछे चलना ही पड़ता है। महाराजा साहब समर्थ हैं। वे चाहें तो आदमी की शादी बंदरिया से भी करा सकते हैं। उनकी ओर कोई उंगलियां न उठावेगा। यदि हम ऐसे किसी कार्य को आगे होते तो समाज हमारे लत्ते उड़ा देता।'

'खैर ठीक है।' गंगाधर फिर आगे बोले, 'रजऊ और ईसुरी अपने वास्तविक परिणय सूत्र में अब बंधेंगे, बड़ी धूमधाम के साथ। सदर में ही मेरी बगिया में आयोजन है। राज्य के सभी प्रतिष्ठित व्यक्ति आमंत्रित होंगे, महाराजा साहब भी पधारेंगे। आप भी आमंत्रित हैं। आपको लिखित निमंत्रण-पत्र शीघ्र ही पहुंचेगा। सपत्नीक पधारें। इस नव वर-वधू को आशीर्वाद दें। यश और गौरव के भागी बनें।'

'ठीक है पंडितजी,' भोलेराम कुछ भूले-भटके से बोले, 'आपका निमंत्रण स्वीकार है। मुझमें तो ऐसी हैसियत नहीं कि आपको निमंत्रण दे सकता पर एक ही बात है आपकी ओर से निमंत्रण मिलने में गौरव का ही अनुभव हो रहा है। मेरा काम आप कर रहे हैं। मेरे सिर का भार आप अपने सिर पर ले रहे हैं। यह परोपकार नहीं समाज का सुधार है। इसमें सुन्दरता है, मार्गदर्शन है आपका आभार ही मानूंगा।'

'हां, मनसुखलाल कहां मिलेंगे?' पंडित गंगाधर ने पूछा।

'घर पर ही होंगे।' भोलेराम ने कहा।

'क्या उन्हें यहां बुलवाऊं?'

'नहीं! मैं ही उनके घर जाऊंगा।' पंडित गंगाधर ने कहा।

'बुलवा न दूं मैं यहां,' भोलाराम ने कहा, 'क्या कोई ऐसी बात करनी है जो मेरे सामने न की जा सके?'

'बुलवा दीजिये।' पंडित गंगाधर ने कहा, 'अच्छा है आपके सामने ही बात हो जावेगी।'

भोलाराम ने शीघ्र ही अपने एक पड़ोसी को दौड़ाया। मनसुखलाल घर पर ही थे। वे शीघ्र ही आ गये। उन्हें देखते ही पं. गंगाधरजी बोले, 'आइये, पटवारी साहब, अब आपका पद मैं छीनने वाला हूं।'

मनसुखलाल पं. गंगाधरजी के चरण स्पर्श करते हुए एक ओर जमीन पर ही

बैठ गये और बोले, 'पंडितजी, क्या आदेश है ?'

पं. गंगाधर मुस्कराते हुए बोले, 'आदेश नहीं, निमंत्रण देने आया हूं। शादी का निमंत्रण। एक आदर्श शादी का निमंत्रण।'

'तो पंडितजी, आप स्वयं ही पधारे -' मनसुखलाल जिज्ञासा से उनकी ओर देखते हुए बोले, 'निमंत्रण किसी दूसरे के द्वारा न भेजा जा सकता था क्या ? आपने स्वयं कष्ट किया।'

'भाई, आप लोग बड़े आदमी हैं,' गंगाधर ने व्यंग्यपूर्वक कहा, 'बड़े लोगों के घर स्वयं ही निमंत्रण देने को आना पड़ता है।'

'पंडितजी !' मनसुखलाल बोले, 'किसकी शादी कर रहे हैं ? कब की शादी है। बारात आयेगी या जावेगी ?'

'रजऊ और ईसुरी की,' पंडितजी ने कहा।

'सो कैसे, पंडितजी ?' मनसुखलाल आश्चर्य से उनकी ओर देखते हुए बोले। 'यदि शादी होना होती तो इतना बड़ा काण्ड ही तैयार क्यों होता। और अब तो और भी बड़ा रोड़ा सामने – रजऊ विधवा ! क्या विधवा विवाह भी संभव है ? क्या लड़का-लड़की दोनों इसके लिए राजी हैं?'

'आप अन्य किसी से मत पूछिये,' पंडितजी बोले, 'आप सहमत हैं या नहीं ? यदि यह शादी हो तो आपको कोई आपत्ति तो नहीं ?'

'पंडितजी !' मनसुखलाल फिर उलझे हुए से बोले, 'लड़की में अब मेरा हक ही क्या है ? लड़की तो कानूनगो की बहू है न। उन्हीं की सहमति सब कुछ है। दूसरी सहमति है इन पंडित भोलारामजी की। मैं तो आप लोगों के पीछे चलने वाला हूं। एक पटवारी की हस्ती ही क्या होती है जो बड़े लोगों के बीच में दखल दे। दाखिली-खारिजी का तो कोई केस नहीं।'

पं. गंगाधर मुस्कराये और बोले, 'ईसुरी के विषय में कुछ सुना है ?'

'इतना ही सुना है, पंडितजी ! कि ईसुरी की फागें महाराजा साहब को बहुत पसन्द आयीं। उन्होंने उसे जेल से छोड़ दिया और एक बड़ा उपहार उसे दिया।'

'यह नहीं सुना कि स्वयं शंकरजी ने उसे प्रतिष्ठा प्रदान की। उसके गले में एक काले सर्प का हार पहनाया। सर्प के स्थान पर ही महाराजा साहब ने स्वर्ण का हार उसे पहना दिया।'

'होगा, पंडितजी !' मनसुखलाल उदासी से बोले, 'मेरी लड़की के सिर का सिंदूर तो उसने हर लिया। अब उसकी प्रशंसा से मैं क्या खुश होऊं ?'

'उसने नहीं हरा।' पंडितजी गम्भीर होकर बोले, 'ठाकुर जंगजीत की गलती से उसके प्राण गये। फिर उन्होंने अपने बचाव के लिए जाल रचा। ठाकुर पहाड़सिंह ने उसे गिरफ्तार करा दिया।

बे-सिर-पैर का केस बना। दो निरपराध व्यक्तियों ने सजा भोगी। ईसुरी तो अपनी गुणगरिमा के कारण छूट गया पर एक गोपाल पंडित अभी जेल में पड़े हैं, वे मौके पर आये ही नहीं।'

'पंडितजी!' मनसुखलाल बोले, 'यह ईसुरी की गुणगरिमा नहीं, आपकी गुणगरिमा है। आपको उसकी फागें पसन्द थीं।'

'और वह भी मुझे पसन्द है।' गंगाधर ने कहा, 'मैंने उसे अपना लिया है। वह क्या है, उसे समझा है।अब उसका रजऊ के साथ विधवा विवाह करा रहा हूं। सदर में मेरी बगिया में ही आयोजन है! लिखित निमंत्रण भेजूंगा। कहिये आप निमंत्रण में आयेंगे या नहीं? राज्य के सभी प्रतिष्ठित व्यक्ति आ रहे हैं। महाराजा साहब भी पधारेंगे, नव वर-वधू को अपनी शुभकामनाओं से विभूषित करेंगे। बहुत बड़ा आयोजन है। काफी धूमधाम होगी।'

'पंडितजी! आपके निमंत्रण पर न आऊं, ऐसा कैसे हो सकता है? यह तो मेरे लिए एक गौरव की बात है।'

'बाल-बच्चों सहित आइये। एक-दो दिन पहले से आइये। आकर कुछ काम कीजिये।' ऐसा कहते हुए पंडित गंगाधर उठ खड़े हुए।

पंडित भोलाराम हाथ जोड़कर बोले, 'पंडितजी! भोजन तो किये जाइये। भोजन तैयार है।'

'नहीं, भोलारामजी! अभी भोजन का समय नहीं हुआ। हां, एक लोटा पानी मंगाइये।'

भोलाराम भीतर गये। एक तश्तरी में कुछ मीठा ले आये और गिलास में पानी। पंडित गंगाधर ने मीठा खाया, पानी पिया और वहां से चलते हुए। मनसुखलाल भी उन्हें भेजने को तथा और कुछ बातें करने को उनके पीछे लगे। उनके जाते ही बड़ी बहू बाहर निकल आयी। एक तरफ जमीन पर बैठती हुई बोली, 'यह क्या अंधेर है! विधवा का विवाह होगा, मेरे लड़के के साथ! फिर दूसरी जाति की लड़की। तुमने विरोध क्यों न किया? दूसरों के सामने बिल्कुल भेड़-बकरी बन जाते हो। जैसे उसके गुलाम हो। क्या ईश्वर ने तुम्हें नहीं बनाया, दूसरों के सामने क्यों इतने निहू पड़ते हो। कह देते मैं अपने लड़के की शादी विधवा से न करने दूंगा। कैसी हंसी होगी। कान न दिये जावेंगे। कहां तो अन्य जाति का छुआ नहीं खाते, कहां अन्य जाति की बहू घर मे बैठाल लोगे। कहां रहेगी यह नाक? सारी पंडिताई मिट्टी में मिल जायेगी!'

'अरी बड़ी बहू, कुछ इन्सानियत सीख, सभ्यता से बोलना सीख। तेरे मारे ही सारी बरबादी सामने आयी। छुआछूत तुझे ऐसे पकड़े है,' जैसे कोई भूत-प्रेत पकड़े हो।'

'ये गंगाधर! मैं जानती हूं जनम के कुजात हैं, सो सबको अपने जैसा कर देना चाहते हैं। यहां की वहां भिड़ाते रहते हैं। इसी में भले बने हैं, अपनी शान जमाये हैं। वैसे पूछो तो फगुवारे हैं। फगुवारों की कोई कदर होती है! द्वार-द्वार पर गाते फिरते हैं वह भी कोई अच्छे गीत नहीं, गंदी फागें। फागें गा-गाकर मन का मैल निकालते हैं। महाराजा साहब को भी रंग दिया है अपनी फागों में। जवानी में यह भी ईसुरी जैसे ही रहे हैं। फरचट्ट और तिकड़मबाज। अब उतरती उमर में हैं, ज्वर उतर गया और परोपकार का जामा पहिन लिया। इन्हीं से ईसुरी को फागों की लहर लगी थी।' बड़ी बहू ने कहा।

'अरी भली आदमिन!' भोलाराम खिसयाये-से बोले, 'अब तो चुप हो जा। होने दे जो कुछ होता है। अपने को कौन यहां देखने को रहना है। दुनिया का यह नाटक है। ईसुरी को इसी तरह प्रतिष्ठा मिल जाये तो क्या बुरा है। उसकी प्रतिष्ठा से हमारी भी प्रतिष्ठा बढ़ेगी। हम जितने नीचे गिरे हैं, बदनाम हुए हैं, उतने ही फिर ऊंचे उठ जावेंगे। रजऊ बचपन में इसी घर में खेलती-कूदती रही, अब भी खेलेगी। यह विधि का विधान है, इसे कोई नहीं बदल सकता। मनुष्य का इस पर कोई वश नहीं चलता। और रजऊ से तेरी न पटे तो उसे अलग कर देंगे। एक तो वह स्वयं यहां न रहेगी। ईसुरी को महाराजा साहब अपने पास रख लेंगे। वह ईसुरी के साथ ही रहेगी।' ऐसा कहते हुए भोलाराम चैन की कुछ सांस लेते हुए भीतर चले गये। बड़ी बहू भी पीछे-पीछे चली गयी।

* * *

अध्याय - ४६

बड़प्पन बड़े आदमियों के देने से ही मिलता है। महाराजा साहब से आदर पाते ही ईसुरी एक चर्चा का विषय बन गया। छोटे-बड़े सभी लोगों में उसकी चर्चा चलने लगी। कहां जेल में पड़ा सजा काट रहा था, कहां उसके विवाह की तैयारियां इतनी धूमधाम से होने लगीं। सारा सरकारी प्रबन्ध। कैसा भाग्य ने पलटा खाया! एक नगण्य-सा आदमी इतना गण्यमान्य बन गया। यही दैवी चमत्कार है, किसी ने नहीं देखा कि किसके भाग्य में क्या लिखा है! आखिर प्रत्येक आदमी बनाया हुआ तो भगवान का ही है। जिसे चाहे वह जो गौरव प्रदान कर दे। रंगमंच पर जो भी पात्र बना कर भेज दे। यह सब पंडित गंगाधरजी की कृपा है। उन्हीं की यह सारी योजना है। विधवा विवाह का समाज में सूत्रपात कराना चाहते हैं। अच्छा तो है। बुरा क्या? बेचारी विधवायें क्यों जीवन के सुख से वंचित रक्खी जायें। छोटा-सा जीवन उसे भी सुख से न भोगा जाये? झूठे आदर्शों पर उसे क्यों बलिदान कर दिया जावे? यह समाज का अन्याय है कि

विधवाओं को तपस्विनी बनाकर रक्खा जाता है। उन्हें कैसे अपनी लालसाओं को कुचलने के लिए वाध्य किया जाता है। वे अच्छे वस्त्राभूषण न पहनें, अच्छा भोजन न करें, बालों में कंघी न करें। शरीर में तेल फुलेल न लगावें। यह भी कोई न्याय है? प्रकृति ने तो किसी को विधवा नहीं बनाया। शादी-विवाह भी प्रकृति की योजना नहीं। उसे तो एक मात्र स्त्री-पुरुष का सहवास ही वांछ्य है। महाराजा साहब बहुत अच्छा कर रहे हैं। समाज के सामने एक ऐसा आदर्श आ रहा है, जो सभी के लिए प्रेरक बनेगा। जीर्णशीर्ण रूढ़ियों के बन्धन तोड़ेगा।

ऐसे कितने ही तक-वितर्क हवा में सर्वत्र तैरते से फिर रहे थे। यहां पंडित गंगाधर की बगिया में एक नयी बहार आ रही थी, जैसी पहले कभी नहीं आयी थी। बगिया के सामने काफी बड़ा मैदान था। उसमें एक बड़ा शामियाना लगा दिया गया। शामियाने के चारों ओर रंग-बिरंगी झंडियां बांधी गयीं। शामियाने के आगे एक बड़ा तोरण बनवाया गया। हरी-हरी आम की पत्तियों से सुसज्जित, जिसमें 'स्वागतम्' का पट भी बांधा गया। आम के पत्तों से बने हुए बन्दनवारों की भी कई कतारें बांधी गयीं। शामियाने के नीचे बड़ा फर्श बिछाया गया। फर्श पर सफेद चादर बिछायी गयी। सब तैयारी लकझक!

संध्या हुई। थोड़ी रात गहरायी। रोशनी जगमगा उठी। आगन्तुकों का आना आरम्भ हुआ। सैकड़ों की संख्या में। सरकारी कर्मचारी, प्रतिष्ठित नागरिक, जागीरदार, जमींदार, सेठ साहूकार सभी। सबके लिए स्थान पूर्व नियत। सब यथा स्थान बैठे।

कानूनगो, भोलाराम तथा मनसुखलाल प्रबन्ध में रहे। सबका स्वागत करते। सबका इत्र-पान। ठाकुर जंगजीत भी आये और ठाकुर पहाड़सिंह भी। संयोग से दोनों को एक ही जगह बैठने को स्थान मिला। दोनों में झगड़ा भीतरी था। ऊपरी नहीं। दोनों में परस्पर राम-रहीम हुई और दोनों मन में कितने ही विचार लिए हुए बैठ गये। रजऊ पूर्ण दुलहिन-सी सजी एक पृथक स्थान में थी, कितनी नारियों से घिरी हुई। ईसुरी भी एक पृथक स्थान में था पूर्ण दूल्हा-सा सजा हुआ।

महाराजा साहब के आने पर ही कार्यक्रम प्रारम्भ होना था। परन्तु अभी महाराजा साहब के आने में कुछ देर थी। लोगों में तरह-तरह की बातें चल रही थीं। कुछ खुसखुसाहट के रूप में, कुछ उजागर। जहां से मनसुखलाल निकलते लोग कहते, रजऊ इनकी ही लड़की है। मनसुखलाल मन ही मन फूले न समाते। जहां से कानूनगो निकलते लोग कहते, रजऊ इनकी बहू है, बेचारी विधवा हो गयी और इसी से यह सारा आयोजन किया गया। जहां से पं. भोलाराम
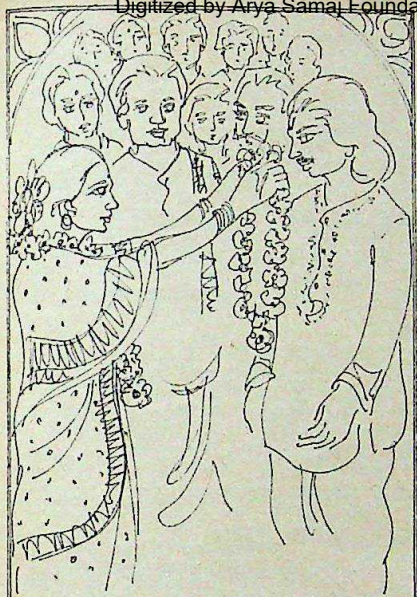
निकलते लोग कहते, यार पंडित भाग्यवान है जिसने ऐसे प्रतिभाशाली लड़के को जन्म दिया, उसे तो शंकर भगवान ने भी प्रतिष्ठा प्रदान की। अपने गले का सर्प उसके गले में डाल दिया। यह एक बहुत बड़ा शुभ लक्षण है। आगे भाग्य चमकेगा। यह सुनते ही भोलाराम की प्रसन्नता मन में न समाती। अपने भाग्य पर गर्व करते, पहले अपने दुर्व्यवहार पर पश्चाताप।

यहां ठाकुर जंगजीत ने और ठाकुर पहाड़सिंह में भी बात चल पड़ी। ठाकुर जंगजीत बोले, 'कक्का जू, भाग्य कैसी टेढ़ी-मेढ़ी पगडंडियों से चलता है। यह ईसुरी मेरे यहां नौकर था। मैं न समझता था कि इसका भाग्य इतना प्रबल है। इसको एक दिन ऐसी दुर्लभ प्रतिष्ठा मिलेगी। महाराजा साहब के द्वारा यह सम्मानित होगा। परन्तु इसकी फागों का तो मैं लोहा मान गया था। उसमें प्रतिभा है। मर्म पर चोट मारता है।'

'मेरे यहां भी तो नौकर रहा।' ठाकुर पहाड़सिंह बोले, 'पर न जाने बेचारा कैसे बब्बू के मारने के केस में फंस गया! पुलिस ने ही उसे फंसाया। पुलिस को जब कोई असली मुलजिम नहीं मिलता तो वह किसी निरपराध को ही फंसा देती है। उसे सजा देती है ताकि उसकी कार्यगुजारी जीती जागती बनी रहे। बब्बू के मारने वाले का पता अब भी नहीं। पर होगा हममें तुममें से ही कोई।'

ठाकुर जंगजीत को ठाकुर पहाड़सिंह का यह आक्षेप अच्छा न लगा। पर यह विरोध करने का समय नहीं था। दबी आवाज से बोले, 'होगा कोई, छोड़िये उसकी चर्चा। जो चीज सामने है उसे देखिये।'

'सामने तो,' ठाकुर पहाड़सिंह बोले, 'हमारा सरहद्दी झगड़ा है। उस पर भी ईसुरी की एक बड़ी अच्छी फाग है। आपने सुनी ही होगी। कुछ ऐसी है - तन तन दोऊ जने गम खायें - करो फैसला चायें।'

'हां-हां! मैंने भी सुनी है,' ठाकुर जंगजीत बोले, 'बड़ी मजेदार फाग है। उस कानूनगो ने ही हम लोगों को

लड़ाया। अपना उल्लू सीधा करने के लिए। पर अपनी करनी का फल भी उसे उचित मिला। देखो न उसी की बहू का अब विधवा विवाह हो रहा है। भले ही वह महाराजा की ओर से आयोजित हो, है तो एक दुर्भाग्य की ही बात। न उसकी बहू विधवा होती और न यह विचित्र आयोजन होता। ऊपर धूमधाम, भीतर हरे राम, हरे राम।'

'ठीक कहते हो भाई, जंगजीत।' ठाकुर पहाड़सिंह पिघलते हुए-से बोले, 'मैंने कानूनगो को बहुत रुपया खिलाया।'

'और क्या मैंने कम खिलाया है,' ठाकुर जंगजीत ने कहा, 'आपसे ज्यादा ही खिलाया होगा।'

'मुझसे ज्यादा आप क्या खिलायेंगे,' ठाकुर पहाड़सिंह तुनक कर बोले, 'यह तो आपकी झूठी हुज्जत है। इसी तरह आपने मेरी जमीन दबा ली और अपनी कहने लगे। मैं तो बहुत तलाश में रहा कि आप किसी दिन जंगल में मिल जावें तो लोहे की लोहे से टक्कर हो जावे। यहीं क्या बिगड़ा है, निकल चलो न सभा से बाहर। देख लूं तुम्हारी रजपूती।'

इसी समय कानूनगो वहां से निकल पड़े। उन्हें देखते ही पहाड़सिंह ताव से बोले, 'बता कानूनगो, मैंने तुझे ज्यादा रुपया खिलाया है या इस ठाकुर ने?'

कानूनगो बहुत डरे। सोचने लगे - बस निकलीं दोनों की तलवारें और हुआ भजन में भंग। हाथ जोड़कर बोले - 'महाराज! पिछली बात भूल जाइये। हाथ कंगन को आरसी क्या? आज जो कोई जितना देगा उसे गिन कर बता दूंगा। पता पड़ जायेगा कौन कितना दे सकता है? आप व्यवहार कुछ देंगे ही?'

'बस जितना यह ठक्कर देगा, उससे दुगुना मैं दूंगा।' ठाकुर पहाड़सिंह ने कहा।

'मैं तो कुछ न दूंगा। दो 'कुछ नहीं' का दूना। तब मानूं।' ठाकुर जंगजीत ने कहा। 'कुछ नहीं का दूना दे दो ठाकुर साहब तो मैं हार मान लूंगा। अपना सरहद्दी झगड़ा उठा लूंगा।'

'सरकार,' कानूनगो बोले, 'मैं किसी से कुछ लूंगा भी नहीं। आप लोगों का झगड़ा यों ही सुलझवा दूंगा। लेने-देने का परिणाम मैं देख चुका हूं। आप लोगों को थोड़ी-थोड़ी गम भी खाना पड़ेगा।'

'चलो अच्छा है,' ठाकुर पहाड़सिंह बोले, 'मैं गम खाने को तैयार हूं।'

'मैं भी गम खाने को तैयार हूं।' ठाकुर जंगजीत ने कहा।

इतने में बैण्ड बजना शुरू हुआ। महाराजा साहब की सवारी आयी। सारा जनसमूह उनके दर्शनों को उठ खड़ा हुआ।

पंडित गंगाधर दौड़े। महाराजा साहब को सम्मानपूर्वक ले आये। महाराजा साहब सुसज्जित शाही आसन पर बैठ गये। कार्यक्रम प्रारम्भ हुआ। बैण्ड

बजने लगा। आतिशबाजी छूटने लगी। फुलवारी लुटायी जाने लगी। एक ओर से कुछ सुसज्जित नारियां रजऊ को लेकर महाराजा साहब के सम्मुख ले आयीं। एक ओर ईसुरी भी दूल्हा बना अपनी पार्टी के साथ आया। दूल्हा-दुल्हिन आमने-सामने हुए। सौन्दर्य और उल्लास छलक-छलक कर बिखर चला। बाजों ने विशेष ध्वनि बनायी, आनन्द उल्लास की। आतिशबाजी के विशेष खिलौने छूटे, जिनका प्रकाश सबको प्रकाशित कर चला। रजऊ को नारियों ने संकेत दिया, उसने कांपते हुए हाथों से ईसुरी के कंठ में जयमाल डाल दी। ईसुरी ने भी रजऊ के कंठ में जयमाल डाल दी। प्रकृति की योजना सफलीभूत हुई। सारा जन समुदाय फिर यथास्थान बैठ गया। दूल्हा-दूल्हिन को पंडित गंगाधर महाराजा साहब के सामने लाये। महाराजा साहब ने उन दोनों के सिर पर हाथ रखकर उन्हें आशीर्वाद दिया और एक थाल में सजी हुई भेंट भी दी। करतल ध्वनि से आकाश गूंज उठा। महाराजा साहब ने फिर जन समूह को सम्बोधित करते हुए कहा : 'मैंने कोई असामाजिक कार्य का सूत्रपात नहीं किया। प्रकृति की योजना को ही कार्यान्वित किया है। प्रकृति स्त्री-पुरुष का ही सहवास चाहती है। उसने किसी को विधवा नहीं बनाया। एक पुरुष मरा तो दूसरा तैयार। प्रकृति का कभी दिवाला नहीं निकलता। प्रकृति की ओर से इतना उदार प्रबन्ध होने पर भी मनुष्य ने अपने को अपनी मूर्खता से दीन-हीन बना लिया है। यह भी विचित्र योजना है। स्त्री विधवा बन कर रहे। भरे समुद्र में घोंघा प्यासा। विधवाओं के लिए यहां कोई अदालत नहीं। पुरुष ने उन्हें जिन्दा जलाया। उनकी अपील किसी ने न सुनी। धार्मिक रंग चढ़ा कर उनको बलि के लिए तैयार कराया। यह अन्याय मुझसे नहीं देखा जाता। मैंने यह शादी कराकर एक नये युग का ही सूत्रपात किया है। मेरी हार्दिक कामना है कि यह प्राकृतिक युग्म फूले-फले।'

लोगों ने अपना उल्लास प्रकट करते हुए करतल ध्वनि की। पंडित गंगाधर फिर पं. भोलाराम को आगे लाये। उन्हें महाराजा साहब के सन्मुख उपस्थित करते हुए बोले, 'श्रीमान् ! ईसुरी आपका पुत्र है। आपने इस साहसिक कार्य में योग देकर प्रशंसा का कार्य किया है। ये बधायी के पात्र हैं।'

'अन्नदाता !' भोलाराम आनन्द से पिघलते हुए से बोले– 'ईसुरी मेरा कोई नहीं। मैं उसे पं. गंगाधरजी को ही सौंप चुका हूं।'

फिर पं. गंगाधर कानूनगो और मनसुखलाल को भी सामने लाये, और उनका भी महाराजा साहब को परिचय दिया। वे आनन्दविभोर हो गये। अपना धन्य भाग्य समझने लगे वे दोनों। उनके

समान सारे जन-समुदाय में और कौन था? मनसुखलाल प्रसन्न थे कि रजऊ जैसी लड़की उनके घर पैदा हुई। उसके कारण ही वे प्रतिष्ठा के पात्र बने। समाज में आगे आये। भोलाराम भी प्रसन्न थे कि ईसुरी ने पहले जो प्रतिष्ठा गिरवायी थी, उसे ब्याज सहित लौटा दिया। उससे और भी आगे आशा थी। कानूनगो भी प्रसन्न थे। इस महोत्सव के वे ही तो प्रमुख कर्णधार थे। यदि वे अपनी बहू को स्वीकृति प्रदान न करते तो कैसे यह सारा रंगारंग कार्यक्रम सामने आता? कैसे समाज में एक नयी चेतना जागती, कैसे एक नया विचार कार्यान्वित होता?

यथा समय रजऊ और ईसुरी को मंडप तले ले जाया गया। वहां मंत्रोच्चार के साथ उन्हें वेदी की प्रक्रिमा करायी गयी। सामयिक गीतों से सारा वातावरण तुमुल हो रहा था। आनन्द का एक ज्वार-सा उठ रहा था। अन्त में आमंत्रित व्यक्तियों के प्रीतिभोज दिया गया। लोगों ने यथाशक्ति वर-वधू को उपहार भेंट किये। इस तरह ईसुरी और रजऊ का परिणय संस्कार, जो प्रकृति को स्वीकार था, समापन को प्राप्त हुआ।

पं. गंगाधर एक समाज सुधारक नेता के रूप में उभर कर सामने आये।

ईसुरी के सामने अब भी प्रश्न था, मां का वह हार लौटाने का। परन्तु अब तो उसके गले में महाराजा साहब का पहनाया हुआ हार पड़ा था।

अध्याय - ४७

मार्ग में जो सुख है मंजिल में कहां। ईसुरी और रजऊ एक दूसरे को प्राप्त कर ऐसा ही अनुभव कर चले थे जैसे वे मंजिल पर पहुंच गये हों और आगे उनका कोई जीवन न हो। थके मुसाफिर से क्लान्त और श्रान्त। पर तब भी उनके सामने कुछ प्रश्न थे, कुछ समस्यायें जो उनके ध्यान के आकर्षित कर रही थीं। भोलाराम उन्हें कैसे लेंगे? घर में आने देंगे या नहीं। बड़ी बहू के क्या विचार होंगे, उनके प्रति? गांववाले उन्हें किस दृष्टि से देखेंगे। वे क्या जातिच्युत न समझे जायेंगे? घृणा से न देखे जायेंगे? वे समाज के विद्रोही हैं! उनकी प्रतिष्ठा से कितने ही लोग जल गये होंगे। अच्छा तो शायद ही किसी को लगा हो। मनुष्य का स्वभाव ही ईर्षालु होता है, श्रद्धालु नहीं।

ऐसे कितने ही प्रश्न उनके मन में उठ रहे थे। आखिर वह दिन भी आ ही गया, जब उन्हें अपने घर जाकर इन प्रश्नों से भी सुलझना था। मेढ़की में उनके स्वागतार्थ काफी तैयारी की गयी थी। सारे गांव में प्रमुख-प्रमुख स्थानों पर तोरण बनाये गये थे। झंडियों और बन्दरवार भी कई-कई कतारों में बांधे गये थे। भोलारामजी भी प्रसन्न थे। लोगों ने उनके घर को तो ऐसा सजा रक्खा था जैसा पहले कभी नहीं सजाया गया था। सारे गांव के लोग उनके घर पर

आकर एकत्रित हो गये थे। रंग-बिरंगी वेशभूषा में नारियां यहां-वहां खड़ी दिख रही थीं। उत्सुक लड़के-लड़कियां इधर-उधर दौड़ रहे थे।

नियत समय पर एक बैलगाड़ी पर बैठे हुए ईसुरी, रजऊ तथा उनके साथ दलीं और पंडित गंगाधरजी आये। प्रमुख तोरण पर गांव के लोगों ने उनका स्वागत किया। सिर पर मंगल घट रक्खे हुए नारियों ने मंगल गीत गाये। सारा आकाश मधुर-मधुर ध्वनियों से गूंज उठा। एक अपूर्व छटा का उद्घाटन हुआ।

द्वार पर पहुंचते ही नारियों का समूह आगे बढ़ा। तरह-तरह के उपहार देते हुए नारियों ने नव वर-वधू का सम्मान किया। दोनों ने घर के भीतर प्रवेश किया, एक विजय के साथ, आनन्द और उत्साह के साथ!

यहां बाहर चौपाल में भोलाराम ने पं. गंगाधर और दलीं का बड़े सन्मान से स्वागत किया। उन्हें विशेष सुसज्जित आसनों पर बैठाया।

भोलाराम अपनी कृतज्ञता प्रकट करते हुए बोले, 'पंडितजी! यह सब करिश्मा आप ही का है। आपने ईसुरी को क्या से क्या बना दिया!'

'यह मेरा नहीं,' गंगाधरजी बोले, 'यह करिश्मा इन दलीं महाराज का है। इन्हें क्यों आप भूल रहे हैं?'

भोलाराम हंसते हुए बोले, 'क्यों न भूलूं। यह मुझे भालूराम कहा करता था। मैं इसे मारने को दौड़ता था। इसने मुझे बहुत परेशान किया। यहां तक मेरा रहना ही हराम कर दिया था। ईसुरी इसी के वशीभूत था। मेरी कुछ न सुनता था। जितना यह पानी पिला दे उतना ही पीता था, पंडितजी। कह नहीं सकता, कितना वातावरण बिगड़ गया था। मुझे घर से बाहर निकलना कठिन था। चौपाल में बैठना भी मुश्किल था। लड़के टोलियां बनाये यहां से निकलते, कहते जाते—भालूराम, भालूराम। उन्हीं टोलियों के साथ ईसुरी रहता। उसकी अकल पर ऐसे पत्थर पड़े थे! मुझे चिढ़ाता था।'

दलीं मुस्कराता हुआ बोला, 'पंडितजी! तब आप चिढ़ाने योग्य बन रहे थे। आपने मुझे हार की चोरी लगवायी, भैंस की चोरी लगवायी। पूछिये आप जाकर? हार आपकी बहू के पास? भैंस कलुआ की कलुआ के पास—किसी कानीहौद में बन्द थी। नीलाम भी हो गयी थी, तब उसका पता पड़ा। पंडितजी मैंने तो ईसुरी में एक प्रतिभा के दर्शन किये थे। उसके भीतर कोई कवि बैठा उसक-पुसक रहा था, कोई कविता आहें भर रही थी। मैं यही चाहता था कि उसका कवि न मर जावे, कविता न मुरझा जावे। मेरा और कोई स्वार्थ नहीं था। फागें ईसुरी बनाता था। पैदायशी गुण लेकर जन्मा था। परन्तु लोग मेरे ऊपर शक करते थे। इस शक को

मिटवाने के लिए ही मैंने जेल भोगी। लोगों से माफी मांगकर ही मैं जेल से बच सकता था। ईसुरी को अवसर मिला, वह अपनी प्रतिभा को स्थापित कर सका।'

'वाह, दलीं।' पंडित गंगाधर बोले, 'वास्तव में तुम साधु पुरुष हो। तुमने जो रूप अपनाया है, उसके तुम पात्र हो।'

भोलाराम कुछ लज्जित से होकर बोले, 'दलीं महाराज! मैं तुम्हें पहले नहीं समझ सका। पहले तुम्हें एक गुंडा ही समझता रहा। मैं बहुत लज्जित हूं। मनुष्य की बुद्धि कितनी अपूर्ण होती है। वह एक दृष्टि में सम्पूर्णता से न कुछ देख सकता है, न कुछ समझ सकता है। देखो न बेचारे ईसुरी पर हत्या का दोष मढ़ा गया। आधी सजा भी भोग चुका। यह न्यायाधीशों की दृष्टि और समझ का नमूना है। वह तो पंडितजी आगे आ गये और एक बड़े अन्याय का भंडाफोड़ हो गया।'

'सब दलीं की बदौलत,' गंगाधर फिर तकिया से टिक कर बैठते हुए आराम से बोले, 'दलीं ने ही सारा किस्सा मुझे बतलाया, उसी के आधार पर मैंने महाराजा साहब से विनय की। ईसुरी की फागों ने महाराज साहब को आकर्षित किया, परन्तु सबसे बड़े आश्चर्य और आकर्षण की चीज सर्प की घटना हुई। महाराजा साहब उस घटना को देख कर द्रवीभूत हो गये। समझ गये ईसुरी कोई असाधारण आदमी है। महाराजा साहब अब ईसुरी को अपना राजकवि बना लेंगे।'

'पर दलीं को क्या पुरस्कार मिला?' भोलाराम ने पूछा।

'मुझे यही पुरस्कार है,' दली बोला, 'मुझे यह रूप मिला। इस रूप के बाद और क्या चाहिये। अब मैं किसी तीर्थस्थान में बैठकर राम भजन करूंगा। मुझे मानव का दिया पुरस्कार नहीं चाहिये।' ऐसा कहते हुए दलीं की आंखों में आंसू आ गये।

'साधु! साधु!' पं. गंगाधर ने कहा, और अपनी भी आंखें पोंछ लीं। भोलाराम भी भावोद्रेक से अपनी आंखें पोंछते हुए बोले, 'पंडितजी, आप दोनों विभूतियां भोजन कर लें। समय हो गया है।'

दोनों ने स्वीकृति दी। पं. भोलाराम ने उन्हें बड़ी आवभगत के साथ भोजन कराया। पान-तमांखू प्रस्तुत किया।

इसके उपरान्त थोड़ी देर विश्राम करके, पंडित गंगाधर उठे और बोले, 'भोलारामजी, अब आप मुझे आज्ञा दीजिये, मैं चलूं।' ऐसा कहते हुए उन्होंने अपनी गाड़ी जुतवायी। भोलाराम के हृदय से लगे और उनसे विदा ली।

दलीं भी बोला, 'पंडितजी। अब मेरा काम भी समाप्त हो चुका है। अब मुझे भी विदा दीजिये। अब जाकर कहीं तपस्या करूंगा। हो सकता है। यह मेरा और आपका अन्तिम मिलन हो।'
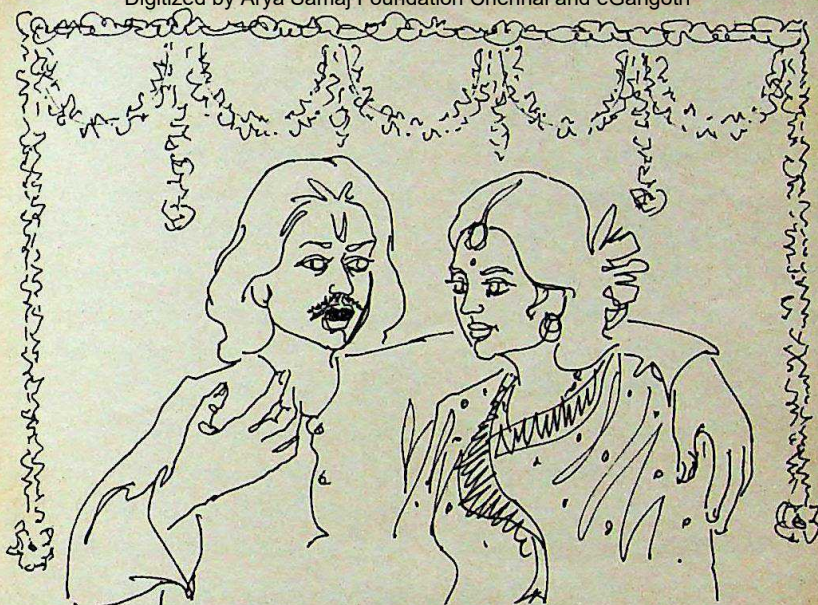
भावोद्रेक से भोलाराम रो पड़े। रोते हुए बोले, 'दलीं महाराज! ऐसा न करना। हम लोगों को दर्शन देते रहना। हम आपको कभी नहीं भूल सकते। आप हमारे लिए ईसुरी से भी अधिक हैं।' ऐसा कहते हुए भोलाराम ने दलीं को हृदय से लगा दिया। दलीं ने उनके चरण स्पर्श किये और विदा ली।

यहां ईसुरी और रजऊ घर के भीतर आये नहीं कि पुरानी स्मृतियां उनके मस्तिष्क में दौड़ीं। यहीं दोनों बचपन में एक साथ खेला करते थे। रजऊ नंगी-उघारी घर से आ जाया करती थी। उसकी मां कपड़े लिए उसके पीछे-पीछे दौड़ा करती थी। एक दूसरे के दावं चुकाने पर दोनों में झगड़ा हो जाया करता था। कभी ईसुरी घोड़ा बना करता था, कभी रजऊ। कितने आनन्द का जीवन था। न किसी की लाज न शर्म। मस्तमौला खेलते थे दिन-दिन भर।

रजऊ के मस्तिष्क में भी वही स्मृतियां दौड़ीं। बड़ी बहू कैसा उसे हाथ पकड़कर बाहर निकाल दिया करती थी। उन दोनों का खेलना देख न सकती। वह फिर उसी घर में आ गयी। बहू बनकर, इतनी धूमधाम के साथ, इतनी लम्बी-टेढ़ी-तिरछी पगडंडियां लांघ कर...

मां को देखते ही ईसुरी को अपनी बात याद आयी। 'अम्मा! तुम्हारा हार ले आया।' ऐसा कहते हुए उसने अपने गले

से वह बहुमूल्य [illegible] का हार उतारा जो महाराजा साहब ने उसे पहनाया था।

मां ने हार हाथ में लिया। उसे देखते ही भौंचक-सी रह गयी। आनन्दविभोर होकर बोली, 'बेटा, यह हार मेरा नहीं है। यह तेरा है, पुरस्कार का। रख इसे अपने पास। ला इसे मैं तुझे पहना दूं। यह हार मेरे हार से कई गुना अधिक कीमती है। यह तेरी विजय का उपहार है।' ऐसा कहते हुए बड़ी बहू ने वह ईसुरी के ही कंठ में डाल दिया।

रजऊ ईसुरी के बगल में ही बहू बनी बैठी थी। उसे उस हार की याद आयी जिसे उसने दलीं से ले लिया था। पेटी में से उसे निकालती हुई बोली— 'तुम्हारा हार यह है, अम्मा! यह मेरे पास आ गया था। तुम्हारी धरोहर के रूप में।'

बड़ी बहू ने हार हाथ में लिया और प्रसन्नता बिखेरती हुई बोली— 'बहू। मैंने यह तेरे लिए ही बनवाया था। यह तेरे लिए है, तेरा है। ला मैं तुझे इसे पहना दूं।' ऐसा कहते हुए बड़ी बहू ने उसके गले में हार डाल दिया। रजऊ ने उनके चरण स्पर्श किये। बड़ी बहू उसके सिर पर हाथ रखती हुई बोली— 'बेटा अखंड सौभाग्यवती हो! तू मेरे घर की लक्ष्मी है। कीर्ति भी। बड़ी तपस्या के बाद तू प्राप्त हुई। मेरे लड़के ने तेरे लिए रात-रात भर अलख जगाया। आंधी-पानी की बौछारें झेलीं। पंचाग्नि तपी। गालियां सहीं। मार खायी। आवारा बना घूमता रहा। निर्वासित, निष्कासित। बाप ने घर से निकाला। नौकरी की। मालिकों ने जेल भिजवाया। वह दलीं बन गया देवता उसके लिए। जिसे हमने गुंडा समझा, देवदूत निकला। वह भी बेचारा साधु बनकर चला गया तपस्या करने।'

इस तरह कितनी-कितनी बातचीत और व्यस्त नेग-दस्तूरों के साथ दिवस बीता। संध्या समय आमंत्रित महिलाओं के साथ बड़ी बहू रजऊ और ईसुरी को लेकर देवी के मन्दिर को गयी। गाते-बजाते देवी की पूजा की और थोड़ी रात गहराते ही घर आयी। आमंत्रित महिलायें अपने-अपने घर गयीं। कार्यक्रम समाप्त हुआ। बड़ी बहू भोलाराम के कमरे में गयी।

यहां ईसुरी और रजऊ अपने शयन कक्ष में आये। दोनों सामने पड़े सुसज्जित पलंग पर ऐसे बैठ गये जैसे बड़ी लम्बी यात्रा करके आये हों। ईसुरी अपनी सतृष्ण दृष्टि से रजऊ की ओर देखता हुआ बोला, 'रजऊ! देख। इसे कहते हैं विधि विधान! तू तो मुझे भूल ही गयी थी। अपने को खो बैठी थी। पर मैं तेरे लिए अलख जगाता फिरा। तेरे गीत गाता फिरा। उस बब्बू ने तो मेरे प्राण ही ले लिये थे। परन्तु यह प्रेम की शक्ति थी जिसने प्राणों को जाने से बचाया। कैसी शक्ति है प्रेम में। कितने भटकाव के बाद, कितने अलगाव के बाद हम फिर एक हो सके। खेलने के लिए फिर वही

अपने बचपन के खेल। रजऊ! बचपन से ही तेरी आंखें मेरी आंखों में अपना घर बनाती रहीं, तेरी भाव-भंगिमायें मेरे अंग-अंग में अपना भवन बनाती रहीं, तेरी रूप माधुरी मेरे मानस में अपने को घोल-घोलकर ज्वार उठाती रही। मैं और तू बुनियाद से ही एक रूप बनते रहे, फिर किस समाज में दम था कि मुझे और तुझे एक दूसरे से पृथक कर दे। मैंने फागें गायीं, आग उछाली। जल गयी होलिका उसकी जो बीच में घास-फूस बनकर आया। हमारे मार्ग का व्यवधान बना।'

रजऊ लज्जा से नतमस्तक किये, मुस्कराती हुई बोली, 'मुझे ये बीती बातें कुछ नहीं सुनना। बीती बातें बीत गयीं। उन्हें जहां जाना था चली गयीं। अब अपनी कोई ऐसी फाग सुनाओ, जिससे कुछ अनुराग बरसे। आपकी पहली फागों से झुलसा हुआ शरीर फिर से हरा-भरा हो जाये।'

ईसुरी ने फिर वही अपनी समाधि मुद्रा बनायी और फाग उठायी—

नैंया रजऊ काउ के घर में —
बिरथा कोऊ भरमें,
सब में हैं और सब से न्यारी —
सब ठौरन में मरमें,
को कहं अलख-खलक की बातें —
लखो न जाय नजर में,
ईसुर गिरधर रयें राधा में —
राधा रयें गिरधर में।

ऐसा कहते हुए ईसुरी ने रजऊ को अपने आलिगन में समेट लिया। यामिनी ने आकर यवनिका गिरा दी।

(समाप्त)

रायगढ़ के स्वर्गीय राजा चक्रधरसिंहजी के मन में एक बार यह उमंग आयी कि हिन्दी के सर्वश्रेष्ठ आलोचक, सर्वश्रेष्ठ कवि और सर्वश्रेष्ठ कहानीकार की वे नियमित रूप से आर्थिक सेवायें कर सकें तो उनका अहोभाग्य। यह लगभग ५४-५५ वर्ष पूर्व की बात है। आलोचकों में आचार्यप्रवर महावीर प्रसादजी द्विवेदी चुने गये, कहानीकारों में प्रेमचन्दजी और कवियों में निरालाजी। प्रेमचन्दजी ने तो शिष्टतापूर्ण उत्तर लिख भेजा कि उन्हें इस प्रकार बन्धन से अब मुक्त ही रखा जाय, परन्तु निरालाजी के पास उनके एक सुहृद जब वह पत्र लेकर गये तब वे पत्र हाथ में लेकर मित्र से इधर-उधर की चर्चा करते रहे और उनका हाथ आप ही आप उस पत्र को मोड़माड़ कर टुकड़े-टुकड़े करता रहा। मित्र महोदय विदा होने के समय जब पत्र का उत्तर मांगने लगे तब जैसे सोते से जागकर निरालाजी ने कहा— 'अरे, उस पत्र, उसका उत्तर? ओह, वह पत्र तो अब टुकड़े-टुकड़े हो गया। बस, यही उत्तर आप मेरी ओर से पहुंचा दीजियेगा।'

— डॉ. गोपाल प्रसाद 'वंशी'

समय को कितना पहचानते हैं आप ?
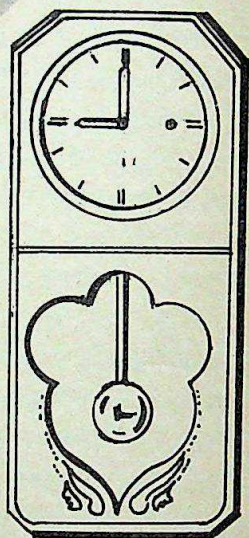
□ दुर्गाशंकर त्रिवेदी

स्व. काका कालेलकर जैसे सफल जीवनशास्त्री को गये अभी कुछ अधिक समय नहीं हुआ। वैसे मेरी उनसे कोई विशेष जान-पहचान या घनिष्ठता नहीं थी। फिर भी मेरी उनसे एक बार जो संक्षिप्त बातचीत हुई थी वह कभी नहीं भुला पाने वाली बात हो गयी। बात यह थी कि मुझे एक विशिष्ट पत्रिका ने उनके पास साक्षात्कार के लिए भेजा था। इसलिए चरण-स्पर्श कर परिचय देकर आशीर्वाद के वचन सुन उस श्वेत दाढ़ीवाले संन्यासी से मैंने पहला प्रश्न किया, वह यह था-'काकाजी, आपने जीवन के कई पहलू देखे हैं। जीवन में ऊंचा उठने के लिए किसी को भी क्या-क्या चाहिये-शिक्षा, मस्तिष्क धन या शक्ति?'

हल्की-सी मुस्कान बिखेर कर दाढ़ी हिलाते हुए उन्होंने कहा –'भाई! ये सभी चीजें तो ऊंचा उठाने में सहायक जरूर हो सकती हैं, पर ये अनिवार्य तत्व नहीं हैं। मेरे अपने विचार से एक चीज का महत्व जीवन में सबसे अधिक है और वह है उचित समय की सही माने में परख।' मैंने पेंसिल डायरी पर टिकाकर उनकी तरफ जिज्ञासापूर्वक कहा – 'क्या कहा, काकाजी? सही समय की सही माने में परख।'

'हाँ हर चीज का एक समय होता है-कोई काम करने का या नहीं करने का। इसी तरह से कोई बात कहने की या चुप रहने की। कोई काम हाथ में लेने का या नहीं लेने का। अधिकांश लोग समय

को नहीं परख पाने से ही दुखी बने रहते हैं, असफल रहते हैं। मैं जीवन में समय को ही सबसे अधिक महत्वपूर्ण मानता हूं।'

घड़ी की कुछ तो सुनें

सफलता की चोटी पर अल्प समय में ही चढ़ जाने में समर्थ अभिनेता चार्ल्स कोवर्न ने एक ही प्यारी बात कही थी – 'प्रायः हम खूब अच्छी तरह समझते हैं और मेरा विश्वास है जीवन की कुंजी भी वह है। अगर आपने विवाह, आजीविका और अपने व्यवहार आदि में समय को परखने की कला सीख ली है तो आपको किसी भी खुशी या सफलता की खोज में मारे-मारे फिरने की कोई जरूरत नहीं है, वह खुद आकर आपका द्वार खटखटाया करेगी।'

बात यह है कि, समय को देखने-समझने और व्यावहारिकता में कबूलने में बड़ा ही मीठा फल प्राप्त हो सकता है। यदि आप सही-सही वक्त आने पर उसे परखना और बीत जाने के पहले उससे लाभ उठाना सीख लेते हैं, तो जीवन की करीब-करीब सभी समस्याओं का व्यापक हल ढूंढ़ निकालते हैं। हमारे घर से लगी घड़ी, हाथ में बंधी घड़ी, टिक-टिक के साथ ही साथ हमें कुछ न कुछ कहती ही है-हम उसे सुनें या न सुनें। व्यावहारिक रूप से कुछ उपलब्ध करने के लिए जरूरी है कि हम समय को पकड़ने-परखने की कला सीखें।

जीवन की रेल-पेल में जो लोग लगातार असफल होते रहते हैं, वे अक्सर प्रतिकूल परिस्थितियों को भला-बुरा कहने लगते हैं। वे यह कभी नहीं सोच पाते की यह समय कैसा था? बस वे तो बारम्बार अपनी उसी धुन में बेवक्त हाथ-पैर पीटा करते हैं। दरअसल उनके साम्ने असली समस्या दुर्भाग्य की नहीं, बल्कि समय को गलत समझने की होती है। घड़ी हमें वक्त को समझने, उसे मुट्ठी में कैद करने को कहती रहती है। जरूरी है कि हम वक्त की गरिमा को समझें। समय हाथ से फिसल कर गया है, फिर पकड़ में कहां आ पाता है? समय को तो नदी की धार समझिये। उस पर बांध बना कर उसे रोक लिया तो ऊर्जा का एक सहज स्रोत आपके पास सुरक्षित हो ही गया समझो।

यदि वो समय को परख लें

बातों ही बातों में एक दिन काव्य प्रतिभा के धनी विद्वान न्यायाधीश श्री सोहनराज कोठारी से टूटते, बिखरते, दाम्पत्य परिवेश पर चर्चा चल उठी। वे बड़े ही गंभीर होकर बोले थे -'मुझको इन झगड़ालू दम्पतियों पर सचमुच ही तरस आने लगा है। कितना अच्छा होता यदि वे समझ पाते कि हर व्यक्ति के क्षोभ, उत्तेजना आदि की एक विशेष सीमा होती है। कोई भी अपनी आलोचना या टीका-टिप्पणी पसन्द नहीं

करता है। होता तो यहां तक भी है कि कभी-कभी तो कोई सही राय तक भी नहीं सुनना पसन्द करता। यदि वे समय को परख लें तो बात बड़ी सहजता से बन सकती है। यदि नवविवाहित स्त्री-पुरुष एक दूसरे की मनः स्थितियों को समझने, भावात्मक पक्ष को पहचानने और उचित अवसर देखकर अपनी परेशानियां बताने या प्रेम प्रकट करने की ही तकलीफ गवारा कर सकें तो तेजी से आ रही सलाकों की बाढ़, जो भयंकर बाढ़ है, सहज ही नष्ट हो सकती है। परिस्थितियों और समय में सामंजस्य बिठाने पर सारी बात नया परिवेश ले उठती है।'

इस तरह से जीवन की कला के चिंतन ने जो बात कही थी, उसको न्याय की तुला के पारखी ने भी सही निरूपित किया था। अधिकांश दम्पतियों में अनावश्यक तनावों की जो मनःस्थिति बनती है, वह सिर्फ इसलिए बनती है कि वह स्त्री उस वक्त अपनी परेशानियों की रामायण खोल उठती है, जबकि पति थका, भूखा, प्यासा लौटता है। उन्हें ज़रा-सा भी सब्र नहीं होता है कि अपनी भड़ास निकालने के बारे में वे धैर्य तो रक्खें। वे उसे ठीक तरह से भोजन तक भी नहीं करने देती हैं, बात-बेबात शिकायत पुराण की परम्परा शुरू हो उठती है।

लगभग यही बात बाल-बच्चों के लालन-पालन के संबंध में लागू होती है। उनको डांटना-डपटना है — आप सिर्फ इतना ही जान लें तो समझ लीजिये कि जिन्दगी मात्र से जीने की आधी समस्या तो आपने हल कर ली। बच्चों से जरूरत से ज्यादा अपेक्षाएं रखने और उन्हें एक डण्डे से हांकने की कोशिशों में सन्तानों की कटुता उत्पन्न होनी शुरू होती है। बच्चों की टीम कोई मशीनों का समूह तो होती नहीं। वह कभी थका, कभी चंचल और कभी परेशान रहता है। साथ ही सभी में एक जैसी कुशाग्रता, एक जैसा गुण भी होता नहीं। अतः उनकी भावनाओं और समय को परख कर ही उनके प्रति कुछ व्यवस्थित नीति अपनानी चाहिये।

मनोवैज्ञानिक साहित्य के विश्व प्रसिद्ध लेखक आर्थर गार्डन ने प्रेम के लिए भी इसी भूल को महत्व दिया हैं। वे लिखते है — 'प्रेम की सफलता या असफलता में भी समय की परख का बहुत बड़ा हाथ रहता है। हमें एक नौजवान हेडमास्टर पादरी पढ़ाया करते थे। उन्होंने बोस्टन की एक बड़ी सुन्दर और नयी अभिनेत्री से विवाह किया। सब लोगों को बड़ा आश्चर्य हुआ, भला इस दीन-हीन गरीब के साथ वह कैसे विवाह के लिए तैयार हो गयी। अंत में जब एक व्यक्ति से नहीं रहा गया तो उसने पूछ ही लिया कि क्या रहस्य था, उस अभिनेत्री की रजामन्दी के पीछे।

पादरी ने धीरे से कहा – मित्र, मैं पहले से ही जानता था कि इस मामले में मेरे कई प्रतिद्वंद्वी हैं। लेकिन मुझे यह भी पता था कि मैं जिस लड़की से प्यार कर रहा हूं वह बड़ी ही रहमदिल और कृपालु है। एक दिन बर्फीली रात में जब मैं उसके साथ बाहर जा रहा था, अचानक सीढ़ियों में फिसल कर गिरने की घटना हुई। वैसे मेरे कोई ज्यादा चोट नहीं लगी थी। लेकिन मैं तब तक उसी हालत में पड़ा रहा, जब तक उसने लिपट कर मुझे नहीं संभाला। तब मैंने धीरे-धीरे कराहना बन्द किया और उनके सामने विवाह का प्रस्ताव रखा।

यह तो मैं पहले ही भांप गया था कि वह मेरे इस प्रस्ताव को ठुकरा कर मुझको उस हालत में और ज्यादा निराश या दुखी नहीं करेगी। हुआ भी यही वह सहर्ष तैयार हो गयी।'

यह प्रसंग भी वही तो कह रहा है कि समय को कितना पहचानते हैं आप? वास्तव में समय को सही रूप में परखने की कला भी एक कौशल है। वैसे यह ईश्वर प्रदत्त जन्मजात गुण ही होता है। परन्तु जीवन को अन्य कलाओं की भांति इसे भी विकसित किया ही जा सकता है। यह कोई कठिन काम नहीं है। जरूरी यह है कि हम स्थिति का पूरा-पूरा जायजा लें और अपनी क्षमताओं के अनुरूप समय को फलीभूत करें। अपनी पत्रकारिता के आधार यायावर जीवन में मैं कई ऐसे लोगों के सम्पर्क में आया हूं, जो इस जीवन में बहुत कम सुविधाएं,साधन पाकर भी महत्वपूर्ण उपलब्धियां हासिल कर सके। उनके सत्संग और जीवन प्रणाली को देख-परख कर जो तथ्य हाथ लगे वे इस प्रकार है: ये संकेत या ऐसी ही मनोभूमि निर्मित करके जीवन को व्यावहारिक रूप में सफल जीवन बना सकते हैं।

निर्णायक क्षण को पकड़ें

सफलता आपकी चेरी होकर रहेगी। हमेशा हमें यह ध्यान रखना ही होगा कि लोगों के जीवन में कई बार ऐसे क्षण आते हैं, जो निर्णायक क्षण होते हैं। हमें उन क्षणों को लाने की स्थिति बनाना, उन्हें परखना और पकड़ना आना चाहिये। महाकवि शेक्सपीयर ने कहा है – 'प्रत्येक व्यक्ति के जीवन व्यवहार में ऐसा क्षण (ज्वार-भाटा) भी आता है, जबकि यदि वह उस आवेग को या प्रवाह को रोक ले तो अपनी तस्वीर बदल सकता है।'

हममें से अधिकतर लोग ऐसे क्षणों को या तो पहचान नहीं पाते हैं या फिर पकड़ नहीं पाते हैं। इसलिए यदि एक बार आपने इन क्षणों का पूरा-पूरा महत्व आंक लिया तो समझ लीजिये कि आपने एक काल तो निश्चित रूप से कर ही डाला। इसे सजग दृष्टि से करने-कराने पर निगाहें केन्द्रीभूत जरुर

करते चलिये।

मनोवेग पर काबू कीजिये

जीवन में सफलीभूत होने का दूसरा महत्वपूर्ण सूत्र है-आप अपने मन में इस बात का पूरा-पूरा निश्चय कर लीजिये कि आप क्रोधित होंगे तब भय, द्वेष, ईर्ष्या आदि आवेगों के चक्कर में फंसे होंगे, तब कोई भी काम नहीं करेंगे। उत्तेजक क्षणों में बोलेंगे या फैसला तक भी नहीं करेंगे। ऐसे निश्चय करना और उस पर अमल करते रहना दोनों ही बड़े कठिन हैं। पर मनोवेगों पर काबू कर लिया गया तो वक्त आपके लिए स्वर्णिम भविष्य को लेकर उपस्थित रहेगा। सदैव ध्यान रखिये कि आवेगों के ये जालिम मरोड़ समय परखने वाली एक विकसित मशीन को नष्ट-भ्रष्ट कर डालते हैं। अच्छे से अच्छे समझदार संयत और मनस्वी को भी उन्मत्त कर देते हैं। इसलिए काबू कीजिए इनकी उद्दाम मनोवेगीय मनः स्थितियों पर।

आशावादी बनिये

किसी भी व्यवसाय में हों आप। आपका भविष्य अंधकारमय या निराशा भरा नहीं है। भावी संभावनाओं का सही-सही अनुमान लगाइये और आशावादी बनकर कुछ कीजिये। कल अधिक अच्छा संदेश लेकर आ रहा है। यह आस्था पालकर आप स्वयं को ओर भी महत्वपूर्ण बना ही सकते हैं। रोजमर्रा की समस्याओं को परेशानियों को कम किया जा सकता है। आशावादी बनिये और एक सार्थक दृष्टिकोण अपनाइए उसके बारे में।

धैर्य भी जरूरी है

जीवन में हम सफल लोगों की तरफ देखें तो पायेंगे कि वे सदैव धैर्य को महत्व देते रहे हैं। होता यह है कि जब लोग अपने सामने कोई उपयुक्त अवसर नहीं देखते हैं तो फौरन मन में धार लेते हैं कि सब कुछ हाथ से चला गया। अब कभी भी अच्छा अवसर शायद आने का नहीं। फिर वे जल्दबाजी में नासमझी में अपना सब कुछ चौपट कर बैठते हैं। डिजरायली ने कहा है -- कोई भी व्यक्ति अगर कुछ देर प्रतीक्षा कर सके तो उसे सब कुछ प्राप्त हो सकता है।

हर व्यक्ति के लिए परिस्थिति या आवश्यकतानुसार इस 'धैर्य' या 'प्रतीक्षा' की अवधि अलग-अलग हो सकती है। कभी-कभी वर्षों भी, कभी-कभी महीनों भी। कभी चन्द मिनटों, सेकेंडों में बन सकती है। यह आप पर निर्भर करता है कि प्राप्य को प्राप्त करने के लिए आप धैर्य कितना रख पाते हैं।

अंतर्मुखी मत बने रहिये

अंतर्मुखी बनकर मनुष्य अपनी कमजोरियों को देखे परखे और सुधारे तो ठीक है। पर अंतर्मुखी ही बने रहना भी गलत है। आप अपने आप में से बाहर निकलना सीखें। एक-एक क्षण

महत्वपूर्ण होता है। हर प्राणी उसे अपने-अपने हिसाब से वसूलना चाहता है। अतः दूसरे उसे कैसे सदुपयोग में लायेंगे, यह इस तथ्य पर निर्भर करता है कि वह दूसरों को कैसा लगता है। इसलिए हम अपने कमरे से जरा बाहर निकलकर परिवेश के अनुरूप अपने आपको ढालने की कोशिश करें तो स्थिति में क्रंतिकारी परिवर्तन आ सकता है।

पूरी शक्ति से लगें

समय को परखना और उसे पकड़ना ही जरूरी नहीं है। पूरी शक्ति से उसे वसूलने के लिए प्रयत्न करना भी उतना ही जरूरी है। महात्मा गांधी की यह राय इस संदर्भ में वरेण्य है कि अच्छे गवैये स्वर को नीचा या ऊंचा वहीं पकड़ते हैं, जिसे वे अच्छी तरह निभा सकें। फिर उस पर अपना सारा जोर लगा देते हैं। तभी उनके गाने में पूरी मिठास और लोच आती है। यही हाल कर्म-कला का है। काम छोटा किया जाय या बड़ा, वह तो अपनी-अपनी शक्ति पर निर्भर है। परंतु जिस कार्य को अंगीकार किया जाये उस पर अपने मन, बुद्धि और शरीर को पूरी ताकत से लगा देने से ही वह अच्छी तरह पूरा हो पाता है।

इसलिए जिस किसी भी काम में आप लगें, पूरी ताकत से लगें। पूरी शक्ति से लगेंगे तभी समय पकड़ने-परखने का कुछ लाभ मिल पायेगा।

निर्णय शक्ति बढ़ाइये

कई लोग निर्णय अनिर्णय के झूले में झूलते रहने वाली मनःस्थिति में जीते हैं।

वे वक्त को गालियां देते रहेंगे। पर जो सही-सही निर्णय सही वक्त पर ले लेते हैं, उन्हें किसी भी तरह का व्यवधान नहीं उठाना पड़ता है। आप अपनी निर्णय शक्ति को पूरी तरह विकसित कर लीजिये। आप पायेंगे कि सफलता आपके नजदीक खुद ही चली आ रही है।

वस्तुतः समय की परख का कोई एक खास फारमूला तो है नहीं। वह सजगता, आत्मसंयम, आशा धैर्य, कल्पना आदि कई गुणों का मिक्चर होता है। जो समय को परखने में सक्षम होगा, वह जीवन जीने की कला का पारंगत पारखी होगा। इसलिए समय को पहचानने की कोशिश जारी रखिए।

— बी. ११६ विजयपथ, तिलकनगर, जयपुर-३०२ ००४

नारी तुम केवल श्रद्धा हो, विश्वास रजत-नग पग तल में,
पीयूष स्रोत-सी बहा करो, जीवन के सुन्दर समतल में।
जयशंकर प्रसाद

नवगीत

जोड़-तोड़ की क्रिया में
तूने क्या किया
किनसे हिसाब लिया
किनको दिया ।

समझौतों की दुकान
खुल गयी
अपराधियों की कमीज
धुल गयी

*

लेन-देन की दिशा में
तूने क्या किया
किनसे उधार लिया
किनको दिया ।

*

बैसाखियां हाथ-पांव
बन गयीं
झरबेरियां घनी छांव
बन गयीं

ताल-मेल की दशा में
तूने क्या किया
किनको निकाल दिया
किनको लिया ।

*

दूध में नहा के सब सपूत
आ गये
साजिशों के सारे सबूत
खा गये

*

काट-छांट की कला में
तूने क्या किया
किनको उभार दिया
किनको सिया ।

— सच्चिदानन्द सिंह समीर
समीर कुटीर, मेंडोजा इस्टेट, रिजरवायर रोड, भाण्डुप
मुंबई - ४०० ०७८

अरब व फारस से
भारत तक

ग़ज़ल की यात्रा

महेन्द्र सिंह लालस

ग़ज़ल शब्द का अर्थ है – प्रेमिका से बातें करना, प्रेमिका के बारे में यह भी कह सकते हैं कि प्रेम की अभिव्यक्ति ही ग़ज़ल है!

मूल फ़ारसी में ग़ज़ल की परिभाषा बतायी गयी है– 'सुख़न बन जना' जिसका अर्थ है औरतों के बारे में बातचीत करना या आशिक और माशूक का वार्तालाप जिसका आधार इश्कहकीकी और इश्कमज़ाज़ी दोनों होते हैं।

अरबी भाषा में ग़ज़ल का अर्थ है– कातना-बुनना। वैसे ग़ज़ल शब्द ग़ज़ाल से बना है जिसे हिरण के लिए इस्तेमाल किया जाता है। हिरण की इसी जाति को अरबी में गेज़ेल कहते हैं।

सच कहा जाये तो ग़ज़ल पर मूल अरबी-फ़ारसी विश्लेषण पूरी तरह लागू नहीं होते, क्योंकि ग़ज़ल ने अपनी विकास यात्रा के कई सोपान पूरे कर डाले हैं। चूंकि औरतों की बातचीत एक विषय पर आधारित नहीं होती और वे कई विषयों पर टुकड़ों में बातचीत करती हैं इसलिये ग़ज़ल में निरन्तरता के नहीं होने की बात कही जाती है। मगर आज की ग़ज़ल इस प्रतिबद्धता को भी छोड़ती नज़र आती है।

ग़ज़ल की उत्पत्ति अरबी काव्य कसीदा से जुड़ी हुई है। कसीदा अर्थात् किसी की शान या बड़ाई में कुछ कहना। जिस तरह आज कुछ ग़ज़ल-गायक या कव्वाल ग़ज़ल पढ़ने से पहले शेर पढ़ते हैं उसी तरह अरब में कसीदे से पहले ग़ज़ल कही जाती थी। कसीदा शब्द से ही हिन्दी में तारीफ़ में कसीदा काढ़ना मुहावरा निकला है। अरब में जन्म लेने के बाद ग़ज़ल धीरे-धीरे हमारे उपमहाद्वीप की तरफ़ बढ़ने लगी। भारत ने ही ग़ज़लरूपी पौधे को सींचा और उसे एक कद्दावर शजर में

बदल दिया।

हमारे यहां ग़ज़ल ने मुस्लिम सूफ़ी संतों के खानकाहों और आश्रमों में जगह पायी। सूफ़ी संत उस परवरदिगार (ईश्वर) की प्रशंसा में कव्वाली की शक्ल में ग़ज़ल को गाते थे। खानकाहों और मस्जिदों से उठ़कर ग़ज़ल राज-दरबारों में आयी और स्वाभाविक रूप से इसके मिजाज़ में अन्तर आया।

सूफ़ी अपने को आशिक़ कहते हैं जिसका माशूक़ है परवरदिगार। जिसने संसार को रचा है। यह भावना बिल्कुल इश्कहक़ीक़ी (ईश्वर भक्ति) थी। मगर माहौल के मुताबिक़ इश्क़मज़ाज़ी यानी सांसारिक बन गयी। ग़ज़ल में वियोग का दर्द और संयोग की मर्यादा झलकने लगी।

ग़ज़ल दरबारों की शान तो बन गयी लेकिन आम लोगों के बीच उठने-बैठने को छटपटाने लगी। मीर और ग़ालिब जैसे प्रतिभाशाली रचनाकारों ने ग़ज़ल को पुरानी बोधगम्यता से दूर हटाकर सामान्यजन से जोड़ दिया, लेकिन ग़ज़ल का मोह तब तक दरबारों और महफ़िलों से छूटा नहीं। उस समय की ग़ज़ल संगमरमरी बदन, शमा-परवाना, जामोमीना और शबाबो शराब के शब्दजालों के बीच झूलती रही।

ग़ज़ल का सौभाग्य था कि कई अनूठे रचनाकारों ने कलमबाज़ी के लिए इसी विधा को चुना। जौक़, फ़िराक़, मोमिन, दाग़ और आतिश जैसे शायरों ने बड़ी सुंदरता से ग़ज़ल को एक नयी ज़मीन पर उतार डाला। कथन और शिल्प की दृष्टि से उर्दू ग़ज़ल ने फ़ारसी शैली को बनाये रखा मगर ग़ज़ल और शब्द-शिल्प ज्यादा सरल, भावपूर्ण और सुंदर हो गये। उर्दू ग़ज़ल का एक चेहरा गढ़ा जा चुका था।

ग़ज़ल के साथ सबसे निराली बात ये रही कि अपनी विकास यात्रा के दौरान ये किसी भी बंधे बंधाये नियम से जुड़ी नहीं रही। यहां तक कि उर्दू से जुड़ी रहने के बाद ग़ज़लें बीसवीं शताब्दी तक हिन्दी और दूसरी क्षेत्रीय भाषाओं में भी कही जाने लगीं।

ग़ज़ल का शेर दो पंक्तियों में कहा जाता है। ग़ज़ल की दो प्रारंभिक पंक्तियों को 'मतला' कहते हैं और आख़िरी दो पंक्तियां जिसमें शायर अपना तख़ल्लुस इस्तेमाल करता है 'मक्ता' कहलाती हैं। ग़ज़ल को रदीफ़ काफ़िया से गूंथा जाता है। रदीफ़ वह शब्द होता है जो पूरी ग़ज़ल में बरक़रार रहता है और काफ़िया माने छंदमेल।

ग़ज़ल ने कला के किसी भी क्षेत्र को अछूता नहीं रखा। और इस काव्य की लोकप्रियता दिनोंदिन बढ़ती ही रही है। कोठों से उठाकर बरकत अली, कुन्दनलाल सहगल और बेग़म अख़्तर अपने सधे हुए सुरों में पिरोकर ग़ज़ल को ड्रॉईंगरूम तक ले आये। उधर शकील,

साहिर और सुदर्शन फ़ाकिर जैसे शायरों ने फ़िल्मी संगीत के माध्यम से ग़ज़लों को जन-जन तक पहुंचा दिया। ग़ज़ल मंच-गायकी की एक लोकप्रिय विधा बन गयी। मेहदी हसन, गुलाम अली, जगजीत-चित्रा, राजकुमार रिज़वी जैसे मंजे हुए फ़नकारों की श्रृंखला में तलत, अज़ीज़, अहमद-मोहम्मद हुसैन, चंदन दास, पंकज उधास और ए. हरिहरन जैसे प्रतिभाशाली ग़ज़लगायक जुड़ते गये और ग़ज़ल कोनों कूचों में गूंजने लगी।

उर्दू ग़ज़लकारों के साथ-साथ हिन्दी ग़ज़लों में भी कलम चलती रही। भारतेन्दु, निराला, प्रसाद और हरिऔध जैसे रचनाकारों ने भी ग़ज़लें कहीं, लेकिन ग़ज़लों का हिन्दी स्वर बुलन्द करने वाला सबसे पहला शख़्स था· दुष्यन्त कुमार। दुष्यन्त ने कम उमर में कम रचनाओं से ही ग़ज़ल को एक नयी डगर के मुंह पर ला खड़ा किया।

आज सड़कों पे चले आओ तो दिल बहलेगा
चन्द ग़ज़लों से तन्हायी नहीं जाने वाली।

अपनी एक प्रतिनिधि ग़ज़ल में दुष्यन्त कहते हैं :

मैं जिसे ओढ़ता-बिछाता हूं
वो ग़ज़ल आपको सुनाता हूं।

दुष्यन्त की परम्परा को सूर्यभानु गुप्त, बालस्वरूप राही, कुमार शिव, कुंअर बेचैन, नईम, जावेद अख्तर, मनोहर प्रभाकर जैसे रचनाकारों ने बनाये रखा। आम आदमी का दर्द ग़ज़लों में मुखर हो उठा।

बी-१२ आकाशवाणी कॉलोनी,
हिरण नगरी सेक्टर V,
उदयपुर - ३१३ ००१, राजस्थान

विचारणीय प्रश्न

क्या हम परिस्थिति के हाथ की कठपुतली हैं ?
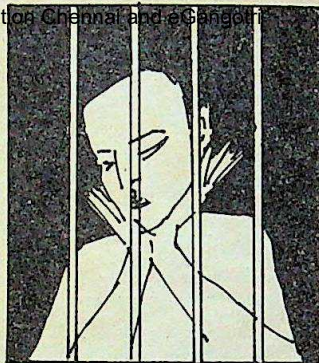
□ युवाचार्य महाप्रज्ञ

मानसिक चिकित्सा की एक सौ पचास पद्धतियां हैं। उनमें एक है व्यवहारवादी पद्धति। इस पद्धति के अनुसार कोई भी व्यक्ति अच्छा नहीं होता, बुरा नहीं होता। बच्चा जन्म से न अच्छा होता है, न बुरा होता है। उसे जैसा वातावरण मिलता है, जैसी परिस्थिति मिलती है, वह उसके अनुरूप अच्छा या बुरा बन जाता है।

वाटसन ने कहा – 'यदि मुझे वातावरण पर पूरा अधिकार मिल जाये तो मैं चाहे जैसे व्यक्तित्व का निर्माण कर सकता हूं।' यह व्यवहारवादी पद्धति का अभिमत है। यदि हम आत्म-विज्ञान की दृष्टि से विचार करें तो कुछ नयी बातें सामने आयेंगी। यदि आदमी जन्म से अच्छा या बुरा नहीं होता है तो अतीत के बोझ एवं संग्रह की सारी चर्चा व्यर्थ हो जायेगी, अतीत के साथ हमारा कोई संबंध नहीं रह जायेगा। जैसा वर्तमान का वातावरण, जैसी वर्तमान की परिस्थिति, वैसी हमारी निर्मिति। यदि ऐसा व्यक्तित्व अस्तित्व में आ जाये जो अच्छा या बुरा कुछ भी नहीं हो, तो दुनिया का एक बड़ा आश्चर्य हो जाये, किन्तु ऐसा होता नहीं है। परिस्थितियां उद्दीपन कर सकती हैं, वातावरण निमित्त बन सकता है, किन्तु मूल कारण के अभाव में उनका प्रभाव नहीं होता।

उद्दीपन और निमित्त का होना एक बात है और मूल कारण का होना बिल्कुल दूसरी बात है। यदि मूल कारण ही नहीं है तो किसका उद्दीपन होगा?

किसका वातावरण होगा ? इस स्थिति में आत्मा के अस्तित्व का प्रश्न भी पैदा हो जायेगा। आत्मा का अपना कर्तृत्व भी कुछ नहीं रह पायेगा। व्यक्ति के हाथ में कुछ भी नहीं है, न आत्मा, न आत्मा का कर्तृत्व, सब कुछ परिस्थिति के हाथ में है।

सांख्य दर्शन में आत्मा को मानते हुए भी यह माना गया – सारा बंध और मोक्ष प्रकृति में होता है। आत्मा बिल्कुल शुद्ध, बुद्ध और मुक्त रहता है। यदि सांख्य-दर्शन की इस बात को स्वीकार करें तो वाटसन की बात केवल भौतिक जगत पर लागू होगी, आत्मा पर लागू नहीं होगी। यदि हम आत्मा को परिणामी मानें तो वाटसन की बात समझ में नहीं आती। यदि हमारा कुछ भी नहीं है तो हम परिस्थिति के हाथ की कठपुतली मात्र हैं। जैसी परिस्थितियां मिलीं, हम वैसे ही बन गये, इसीलिए हमारा अपना कोई अस्तित्व नहीं है। यह बात समझ से परे है।

बिना वृत्ति का कोई आदमी नहीं होता। प्रत्येक व्यक्ति में अच्छी या बुरी कोई न कोई वृत्ति जन्मना अवश्य मिलेगी। प्रत्येक आदमी अपनी वृत्तियों के साथ जन्म लेता है। आज के आनुवंशिकी विज्ञान (जेनेटिक साइंस) में यही बात कही जाती है– प्रत्येक व्यक्ति अपने पैतृक संस्कारों के साथ जन्म लेता है, गुणसूत्र और जीन के साथ जन्म लेता है, पैतृक गुणों की स्वीकृति वर्तमान विज्ञान दे रहा है। यदि हम कर्म-सिद्धान्त के आधार पर चलें तो इससे आगे की बात स्वीकृत हो जायेगी, अतीत की स्वीकृति हो जायेगी।

यह बात प्रामाणिक लगती है कि जो व्यक्ति जन्म लेता है, वह अच्छाई या बुराई के बीजों के साथ जन्म लेता है। अपनी थाती, अपनी धरोहर, अपनी विरासत, अपनी पैतृक संपत्ति को साथ लेकर आता है और उसके साथ अपने जीवन का प्रारंभ करता है।

यह सचाई है – अच्छाई और बुराई – दोनों की वृत्तियां प्रत्येक व्यक्ति के साथ रहती हैं। वृत्तियां दो ही हैं – एक अच्छाई की और एक बुराई की। इसे इस भाषा में भी कहा जा सकता है : एक है राग की वृत्ति और एक है द्वेष की वृत्ति। मनोविज्ञान में वृत्तियों का जो विस्तार किया गया है, वह सापेक्ष बात है। अपेक्षा के साथ वृत्तियों के चाहे जितने प्रकार किये जा सकते हैं। फ्रायड ने बहुत विश्लेषण के बाद अपनी विश्लेषणवादी पद्धति में बतलाया – वास्तव में दो ही वृत्तियां है, जीवनमूलक प्रवृत्ति और मृत्युमूलक प्रवृत्ति। शेष सब इन दोनों के विस्तार हैं। भूख, सेक्स, प्यास आदि-आदि जीवन-मूलक प्रवृत्तियां हैं। संघर्ष, झगड़ा, कलह आदि मृत्यु-मूलक प्रवृत्तियों में समाविष्ट हो जाते हैं।

मौलिक प्रवृत्तियां दो हैं — जीविताशंसा और मरणाशंसा। हम कर्मशास्त्र की दृष्टि से विचार करें तो वृत्तियां दो ही हैं — राग की वृत्ति और द्वेष की वृत्ति। इनका चाहे जितना विस्तार किया जा सकता है। वृत्ति के अठारह भेद भी किये जा सकते हैं, इससे अधिक भेद भी हो सकते हैं, यह सारा वर्गीकरण अपेक्षा के आधार पर होता है। दूसरी भाषा में कहें तो मूल मनोवृत्तियां दो हैं — प्रियता और अप्रियता की मनोवृत्ति। समयसार में कहा गया, राग से कृत जो भाव है, उसके द्वारा जीव बंध करता है। जो भाव राग आदि से विमुक्त है, वह बंधकारक नहीं है।

भावों रागादि जुदो,
जीवेण कदो दु बंधगो भणिदो।
रागादि विप्पमुक्को,
अबंधगो जाणयो बरी ।।

प्रश्न है — वृत्तियां कैसे बनती हैं? एक है आश्रव और एक है बंध। राग और द्वेष की वृत्तियां निर्मित हैं। मोहनीय कर्म उनके साथ में जुड़ा हुआ है। आश्रव से उसे पोषण मिलता रहता है और व्यक्ति बंधता चला जाता है। वास्तव में वृत्ति है बंध और वह है रागात्मक परिणति, द्वेषात्मक परिणति। बंध दो प्रकार का होता है — राग से हुआ बंध और द्वेष से हुआ बंध। आश्रव के कारण इनको निरंतर पोषण मिलता रहता है। संचय होता रहता है, वृत्तियां निर्मित होती रहती हैं। हमारे जितने प्रभावित व्यवहार हैं, वे सारे इन वृत्तियों के कारण होते हैं।

रागम्हि दोसम्हि य कसायकम्मेसु
चेव जे भावा।
तेहिं दु परिणमंतो रागादी
बंधदे चेदा ।।

वृत्ति से होती है प्रवृत्ति। यदि राग और द्वेष न हो तो हमारी प्रवृत्तियां कितनी सीमित हो जायें! एक आदमी बहुत प्रवृत्ति करता है। प्रश्न होता है — उसकी प्रेरणा कहां से आती है? वृत्तियां प्रेरणायें हैं। उनके आधार पर होती हैं रागात्मक और द्वेषात्मक प्रवृत्तियां। जब-जब राग और द्वेष तीव्र बनता है, आदमी की बुद्धि बदल जाती है, दिमाग खराब हो जाता है। जब भाव राग, द्वेष और मोह के संपर्क से अज्ञानमय बनता है, तब आदमी मिथ्या आचरण कहता है। जब उसका भाव राग, द्वेष और मोह से विलग होता है तब आचरण सम्यग् होता है।

सम्यग् चरित्र और मिथ्या चरित्र — इन दोनों के पीछे मूल कारण है ज्ञान और अज्ञान। वह अज्ञान जो राग, द्वेष और मोह से जुड़ा होता है, हमारा मिथ्या आचरण बनता है। वह ज्ञान जो राग, द्वेष और मोह से पृथक् होता है, हमारा सम्यग् आचरण बनता है। सम्यग् आचरण के लिए ज्ञान और दृष्टिकोण का सम्यग् होना अत्यंत अनिवार्य है।

उनका सम्यग् होना निर्भर है राग, द्वेष और मोह की कमी पर।

प्रत्येक व्यक्ति चाहता है कि वह कोई बुरा आचरण न करे, पर उससे बुरा आचरण हो जाता है। प्रश्न है — ऐसा क्यों होता है? हम इस बात को जानते हैं — 'सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्राणि मोक्ष-मार्गः'। यह जानते हुए भी आचरण गलत क्यों होता है? यह एक बड़ा प्रश्न है। आचार्य कुन्द-कुन्द ने इसका अच्छा समाधान दिया है। उन्होंने कहा — जघन्य ज्ञान की स्थिति में ज्ञान भी बंधकारक बन जाता है। प्रश्न हो सकता है — अज्ञान बंध का हेतु बन सकता है, पर ज्ञान बंध का हेतु कैसे बन सकता है? यदि हम गहरायी में जायें तो यह बात सम्यग् प्रतीत होती है। जघन्य ज्ञान और जघन्य चारित्र का मतलब है क्षायोपशमिक ज्ञान और क्षायोपशमिक चरित्र। जब तक क्षायिक ज्ञान और क्षायिक चरित्र नहीं है, वीतराग का चारित्र नहीं है, तब तक क्षायोपशमिक ज्ञान और चरित्र की स्थिति बनी रहती है। इस स्थिति में व्यक्ति की भावधारा एक जैसी नहीं रहती। उसका विप-रिणमन हो जाता है। जब क्षायिक भाव आता है, क्षायिक ज्ञान और क्षायिक चरित्र आता है, तब एक जैसी परिणाम-धारा प्रवाहित होती है।

हमारी चैतसिक परिणति के तीन रूप बनते हैं — वर्धमान, हीयमान और अवस्थित। जब तक ज्ञान जघन्य है, चरित्र जघन्य है तब तक हीयमान और वर्धमान की स्थिति निरन्तर बनी रहती है। हम इसे टाल नहीं सकते। इस स्थिति में अड़तालीस मिनट तक ही एक जैसी परिणाम-धारा में रहा जा सकता है। उसके बाद स्थिति बदलने लग जाती हैं। शायद इसीलिए सामायिक का काल भी अड़तालीस मिनट का रखा गया है। वास्तव में ध्यान और सामायिक — दो नहीं हैं। सामायिक को क्रियाकाण्ड का रूप दे दिया गया इसलिए ध्यान की बात को अलग से सोचना पड़ता है।

ध्यान में भी अड़तालीस मिनट बाद परिणाम धारा बदल जाती है। जब-जब राग की परिणाम धारा आती है, जघन्य ज्ञान होने के कारण बंध होने लग जाता है। यही कारण है कि आरंभिक स्थिति में बार-बार राग-द्वेष के विकल्प आते रहते है, बंध होता रहता है। इस अपेक्षा से जघन्य ज्ञान और जघन्य चरित्र को बंध का हेतु माना गया है। जब-जब बंध होता है, हमारी वृत्तियों को पोषण मिलता है।

हम कर्म सिद्धान्त की दृष्टि से विचार करें। कर्म के जितने बंध, कर्म का जितना अस्तित्व हमारे भीतर है, उतनी ही वृत्तियां और संस्कारों के केन्द्र हमारे मस्तिष्क में हैं। कर्म का जो स्पंदन आता है, वह मस्तिष्क को प्रभावित कर देता है, वृत्तियों का निर्माण होता रहता है।

उन वृत्तियों को दो मूल वृत्तियों में भी समेटा जा सकता है और अपेक्षा के साथ विस्तार भी किया जा सकता है।

हम राग-द्वेष के परिष्कार के लिए ध्यान करते हैं, पर एक साथ इनका परिष्कार करना बड़ा कठिन है। निरन्तर परिष्कार की प्रक्रिया चलती रहे, यह आवश्यक है। हम इस बात को जानते हैं – वृत्तियां हैं, आश्रव हैं, उन्हें पोषण मिल रहा है। उसे कम कैसे करें, बंद कैसे करें? इसका मार्ग है संवर। पोषण मिलने के माध्यम हैं, शरीर वाणी और मन। हम इन तीनों को बंद करें। हम कायोत्सर्ग करते हैं, इससे शरीर की स्थिरता बढ़ेगी, बंध कम होने लगेगा, वृत्तियां को पोषण मिलना बंद हो जायेगा। हम मौन का अभ्यास करें। वाणी का संयम होगा, वृत्तियों को पोषण देने वाला दूसरा मार्ग बंद हो जायेगा। हम मनोगुप्ति करें, ज्योति केन्द्र पर ध्यान करें। इससे मन एकाग्र होगा, मन का संवरण हो जायेगा। वृत्ति को पोषण देने वाला तीसरा मार्ग भी बंद हो जायेगा। शरीर, वाणी और मन इन तीनों रास्तों के बंद होने से वृत्तियों को पोषण मिलना बंद हो जाता है, वृत्तियों के स्रोत सूखने लग जाते हैं और उनका परिष्कार घटित हो जाता है।

– अ. भा. अणुव्रत समिति
२१०, दीनदयाल उपाध्याय मार्ग,
नई दिल्ली - २

□

ग़ज़ल

न कली के लिए न सुमन के लिए,
ज़िन्दगी भर जिये हम चमन के लिए।

कोई भटके अंधेरों में न हम-वतन,
दीप बनकर जले हम वतन के लिए।

राम का घर हो या हो खुदा का मकां,
सिर झुकाते रहे हम नमन के लिए।

आदमी-आदमी में न दूरी रहे,
स्वप्न ऐसे संजोये मिलन के लिए।

टूट जाये न रिश्ता धरा से कहीं,
प्यार के गीत गाये गगन के लिए।

स्नेह की आम भाषा ही सीखी सदा,
छटपटाये नहीं व्याकरण के लिए।

सो न जाये व्यवस्था कहीं देश की,
छंद जो भी रचे जागरण के लिए।

कम न हो आदमीयत की कीमत कभी,
इस तरह हम जिये आचरण के लिए।

– उमाशंकर शुक्ल 'उमेश'
विवेक नगर (हमीरपुर), उ.प्र.

अंत भला सो बस भला

□ प्रो. चन्द्रशेखर पाण्डेय

'ट्रिन्-ट्रिन्, ट्रिन्-ट्रिन्'

'हैलो,' शालिनी ने फ़ोन उठाकर कहा।

'साहब घर में हैं?' उधर से प्रश्न हुआ।

'नहीं। आप कौन हैं? क्या काम है?'

'मैं उनकी टाइपिस्ट मिसेज़ मर्चेंट बोल रही हूं। यहां से तो घर जाने की बात कह कर गये थे। एक शब्द समझ में नहीं आ रहा है। मैंने सोचा फ़ोन करके पूछ लूं।'

शालिनी गंभीर स्वभाव की सुसंस्कृत युवती थी। फिर भी नारी-सुलभ शंका का भान सहसा मन में उदय हुआ और उसके मुंह से निकल पड़ा, 'शब्द ही पूछना था या और कोई काम था? सच-सच कहिये। मैंने टाइपिस्ट लड़कियों से संबंधित कई कहानियां पढ़ रखी हैं।

मिसेज़ मर्चेंट पहले तो हंसीं, फिर शांत भाव से बोलीं, 'मिसेज़ रस्तोगी! कहानियां, बस कहानियां होती हैं। उनमें सच्चाई कितनी है, कौन जानता है? फिर भी आप का शक गैरमुनासिब नहीं है। लेकिन आपको यह जानकर शायद राहत मिलेगी कि मैं जवान लड़की नहीं हूं। मेरी उमर इतनी हो चुकी है कि अगले साल मैं रिटायर हो जाऊंगी। आपको बेटी कहने का हक मैं रखती हूं। आपकी शादी पिछले साल हुई थी। रिसेप्शन में मैं आयी थी, बातें भी खूब की थीं। तभी फ़ोन पर मैंने आप को पहचान लिया।'

शालिनी पर जैसे घड़ों पानी पड़ गया। वह इतनी लज्जित हो गयी कि कुछ देर तक बोल भी नहीं सकी। फिर उसने कहां, 'मिसेज़ मर्चेंट! माफ़ कीजिये, मैं बहुत शर्मिन्दा हूं। मुझसे बहुत बड़ी भूल हो गयी। माफ़ कर दीजिये, प्लीज़।'

'माफ़ तो मैंने आपको बिना माफ़ी मांगे कर लिया, मगर....'

'मुझे आप-आप करके मत बोलिये, बेटी कहिये। आपकी बड़ी मेहरबानी होगी।'

'अच्छी बात है, बेटी! जैसे तुम्हारा शक मुझ पर हुआ, वैसे ही मेरा शक किसी दूसरे पर हो रहा है।'

'मैं समझ नहीं सकी।'

'बात यह है कि जब से मिस्टर रस्तोगी हेडक्लर्क से उठाकर असिस्टेंट मैनेजर बना दिये गये हैं, तब से ये बड़े रोब में रहने लगे हैं। रोमांटिक भी कुछ ज़्यादा हो चले हैं। इनके अंडर में काम करनेवाली एक मिस तारा है। पहले भी उससे खूब घुल-मिल कर बातें करते थे; फिर अब क्या पूछना! अब तो अक्सर उसे अपने कैबिन में भी बुला लेते हैं। वह भी खूब शान में रहती है। सुना है, साहब ने उसे टाइपिंग सीखने के लिए मजबूर किया है। मतलब साफ है। मेरे रिटायर हो जाने के बाद उसी को अपनी टाइपिस्ट बनायेंगे। मैंने मार्क किया है कि आज मिस तारा किसी बहाने छुट्टी लेकर ऑफ़िस से चली गयी। बाद में साहब ने मुझे टाइपिंग का काम देकर कहा - मेरी तबियत ठीक नहीं है, मैं घर जा रहा हूं। और आप.... नहीं-नहीं, तुम कह रही हो कि वे घर में नहीं हैं। मैं समझती हूं, दोनों कहीं बैठे गप-शप करते होंगे।'

'ओह, यह तो बहुत बुरी ख़बर है मेरे लिए', घबराते हुए शालिनी ने कहा।

'मुझे क्या करना चाहिये, मां?'

'अभी तो तुम्हें यही करना चाहिये, बेटी कि अपने बर्ताव, बनाव-सिंगार और सेवा से साहब को ज़्यादा-से ज़्यादा अपनी ओर खींचो। मेरी कही बातों पर ज़्यादा ध्यान मत दो। हो सकता है, मिस तारा की ओर झुकाव के पीछे साहब की भलमनसाहत और दरियादिली ही हो। मैं लंच के टाइम पर कल किसी दूसरी जगह से फ़ोन करूंगी। तब तक मैं कुछ पता चलाने की कोशिश करूंगी। तुमने मुझे मां कहा है। मैं तुम्हारा घर उजड़ने नहीं दूंगी। साहब घर आवें, तो इस तरह की कोई बात उनसे न करना।'

'नहीं करूंगी,' बुझे-बुझे स्वर में शालिनी बोली।

शालिनी वैसे तो प्रतिदिन संध्या के समय पति के आने की प्रतीक्षा बड़ी उत्कंठा से करती थी, किन्तु आज उसे पल-पल भारी लग रहा था। रह-रह कर उसकी दृष्टि के सामने एक काल्पनिक दृश्य कौंध जाता था कि उसके पति तारा के साथ किसी एकान्त स्थान पर बैठे प्रेमालाप कर रहे हैं। मन में ऐसा विचार भी आता कि पता नहीं और क्या-क्या करते होंगे। इस विचार के साथ ही मन में क्रोध भी उमड़ आता। वह सोचती कि यदि उसे पता चल जाय कि दोनों कहां हैं, तो हंटर लेकर वह जायेगी और मार-मार कर तारा की चमड़ी उधेड़ देगी। किन्तु उसे
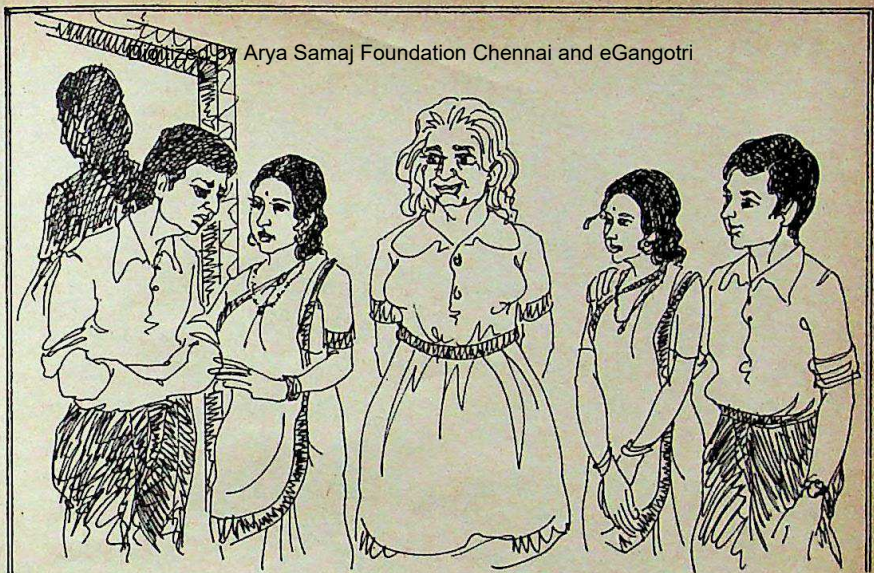
बताये कौन कि वे दोनों कहां हैं? बस तभी, उसका क्रोध इस तरह शांत हो जाता, जैसे गैस के चूल्हे पर चढ़े हुए दूध का उफान देख कर गैस बंद कर दी जाय और दूसरे ही क्षण उफान शांत होकर नीचे चला जाये।

प्रतीक्षा करते-करते अंततः वह घड़ी भी आयी, जब एक टैक्सी आकर द्वार पर रुकी। शालिनी ने खिड़की की जाली से देखा कि मिस्टर दिनेश रस्तोगी टैक्सी से उतर रहे हैं। वह द्वार खोलने के लिए लपकी। पति को देखते ही मन का सारा बवंडर पता नहीं किधर उड़ गया। उसे मिसेज़ मर्चेंट की सीख याद आ गयी। आगे बढ़कर उसने पति के हाथ से बैग ले लिया और ड्राइंगरूम में पहुंचकर बड़े प्रेम से पूछा, 'अब कैसी तबियत है?' ऐसा पूछते समय वह दिनेश के वक्षस्थल से लगभग सट-सी गयी थी। इस प्रश्न का अनुमान उन्हें नहीं था। इसलिए कुछ अकचका गये। फिर वे बोले, 'ठीक हूं। मेरी तबियत खराब कब थी?'

'आपकी टाइपिस्ट का फ़ोन आया था। कोई शब्द उन्हें पूछना था। उन्होंने ही बताया कि तबियत ठीक नहीं है, कहकर साहब जल्दी घर चले गये।'

तबियत का हाल पूछना आत्मीयता और प्रेम का सूचक है। यही समझकर शालिनी ने झट से ऐसा प्रश्न कर दिया था। वह यह भूल ही गयी कि उसे मिसेज़ मर्चेंट ने मना किया था। गनीमत यही हुई कि उसने मिस तारा की कोई बात नहीं पूछी।

रस्तोगीजी कुछ आश्वस्त हुए और हलके-फुलके अंदाज़ में बोले, 'अरे हां, मैं ऑफ़िस से तो घर के लिए ही चला था, लेकिन रायल होटल के पास से निकला तो याद आयी कि हमारी कंपनी के सबसे बड़े ग्राहक चावलाजी यहीं ठहरे हैं। उनसे कुछ ज़रूरी बात करनी थी, तो उनके पास चला गया। बातचीत कुछ लंबी हो गयी। उन्होंने मुझे एक गोली खिलायी, तो तबियत भी चंगी हो गयी।'

'आप कुर्सी पर बैठिये। मैं आपके जूते खोल दूं।'

'अरे नहीं-नहीं, मैं बिल्कुल ठीक हूं। तुम बैठ जाओ।'

'अच्छा, आप कपड़े बदलिये। मैं चाय बना कर लाती हूं।'

'नौकर कहां है? उसे चाय बनाने को कह दो।'

'वह दूसरा काम कर रहा है। मैंने तै किया है कि मैं ही चाय बनाकर आपको पिलाया करूंगी। नौकर चाय बनाता है अपनी ड्यूटी समझकर। वह सिर्फ चाय लाता है। मैं बनाकर लाऊंगी, तो उसमें दूध-शक्कर के अलावा प्यार भी छलकता रहेगा।'

'अरे वाह, तुम तो कविता करने लगीं। ऐसी चाय का तो मैं बहुत शौकीन हूं, जिसमें प्यार छलकता हो। जल्दी बनाकर लाओ। मैं इंतज़ार करूंगा।'

शालिनी प्रसन्न होकर चाय बनाने चली गयी।

'अगले दिन श्रीमती मर्चेंट ने लंच टाइम पर एक सार्वजनिक टेलीफोन से शालिनी को फोन करके पूछा, 'कैसी हो, बेटी?'

'बहुत खुश हूं, मां।'

'बड़ी अच्छी बात है। लेकिन मैं पता नहीं चला सकी बेटी कि साहब कल तारा के साथ थे या नहीं, और अगर थे तो कहां थे।'

'ऐसी कोई बात नहीं है, मां। इन्होंने मुझसे बताया कि कल वे घर ही आ रहे थे, मगर बीच में रायल होटल चले गये। वहां कोई चावलाजी ठहरे हैं। उनसे बिज़नेस की कुछ जरूरी बात करनी थी।'

'तब तो साहब तारा के ही साथ थे।

'क्या चावलाजी वाली बात झूठी है?'

'हंड्रेड ऐंड वन परसेंट झूठी।'

'आपको पता है?'

'अरे बेटी, चावलाजी तो अभी आये ही नहीं। वे अगले हफ़्ते आनेवाले हैं। कल ही साहब ने उनके लेटर का जवाब मुझसे टाइप कराया है। उनके दिमाग में चावलाजी का नाम ताजा था, सो उन्हीं का बहाना बना दिया। इस तरह के झूठ बड़ी आसानी के साथ वे तुमसे बोल सकते हैं। वे जानते हैं कि ऑफ़िस की बातों का तुम्हें क्या पता चलेगा।'

'ओह, इतना बड़ा झूठ!'

'बेटी, सच्चाई छिपाने के लिए बड़े-बड़े झूठ बोलने पड़ते हैं।'

'आज ये कह गये हैं कि शाम को कुछ देर से और खाना खाकर आयेंगे। कंपनी की बिज़नेस-पार्टी है।'

'यह दूसरा बड़ा झूठ है। कंपनी की कोई पार्टी-वार्टी नहीं है। मेरा अंदाज है कि साहब आज तारा के घर खायेंगे। लंच के थोड़ी देर पहले मैं फ़ाइल लेकर उसके पास से निकल रही थी, तब तारा एक चपरासी को पैसे देकर अच्छी-अच्छी मिठाइयां बाजार से लेकर घर पहुंचाने का हुक्म दे रही थी। मेरे कान में भनक पड़ गयी।'

'यह सब मैं कैसे और कब तक सहन करूंगी, मां! आज मैं उनसे साफ कह दूंगी कि अगर आप तारा के साथ ही खुश हैं, तो उसी को लेकर रहिये, मैं अपने घर चली जाऊंगी।'

'ना-ना बेटी, ऐसी बात भूलकर भी न कहना, न करना। यह तो अपने हाथों अपने पैर पर कुल्हाड़ी मारना होगा। समस्या का सामना करना चाहिये। भागने से काम नहीं बनेगा। तुम तो आज के ज़माने की पढ़ी-लिखी बी.ए. पास लड़की हो, फिर ऐसा क्यों सोचती हो?'

'क्या करूं, किसी को जबरन तो अपना नहीं बनाया जा सकता।'

'कुछ जोर-जबर्दस्ती भी करनी पड़े, तो करो। तुम्हारी शादी हुई है उनके साथ। अपने हक के लिए तुम्हें लड़ना चाहिये।'

'इस पचड़े में मैं अपने माता-पिता को परेशान नहीं करना चाहती। और यहां अपना कोई दिखायी नहीं देता, किसके बल पर लड़ूं?'

'इस तरह मन छोटा न करो, बेटी। मैं पूरी तरह तुम्हारे साथ हूं।'

'आपसे तो फ़ोन पर ही बात हो सकती है।'

'नहीं-नहीं, मैं तुम्हारे पास आऊंगी। बस, आज भर की मोहलत मुझे दो। मैं यह जानना चाहती हूं कि आज शाम को साहब तारा के घर खाना खाने जाते हैं या नहीं।'

'आप कैसे जान पायेंगी?'

'तारा के घर के पास मेरी एक सहेली रहती है। मैं शाम को ऑफ़िस से सीधे उसी के घर जाकर घंटे-दो घंटे बैठूंगी और बाहर नज़र रखूंगी।'

'अगर ये गये तो?'

'तो मैं कल लंच टाइम में टैक्सी करके सीधे तुम्हारे पास आ जाऊंगी और दोनों मिलकर आगे की स्कीम तय करेंगे। अब मैं ऑफ़िस जाती हूं। आज साहब से तुम कुछ न कहना।'

हुआ वही, जो श्रीमती मर्चेंट ने सोचा था। वे शाम को ऑफ़िस से सीधे अपनी सहेली के घर गयीं और ऐसी जगह बैठीं कि द्वार का बाहरी भाग दृष्टि-पथ पर

रहे। थोड़ी देर में रस्तोगीजी आये और मस्ती में झूमते हुए तारा के घर में प्रवेश कर गये। आधा घंटा और सहेली के पास श्रीमती मर्चेंट बैठकर अपने घर चली गयीं।

दूसरे दिन लंच टाइम शुरू होते ही श्रीमती मर्चेंट टैक्सी पकड़ कर रस्तोगीजी के घर भागीं। घंटी बजाने पर शालिनी ने द्वार खोला। 'मैं मिसेज़ मर्चेंट हूं', सुनते ही बड़े आदर के साथ शालिनी उन्हें भीतर ले गयीं।

'साहब कल रात कितने बजे आये?' श्रीमती मर्चेंट ने पूछा।

'करीब दस बजे।'

'मैंने भी यही अंदाज़ लगाया था। आधा घंटे तक जब साहब बाहर नहीं निकले, तब मैं समझ गयी कि खा-पीकर आराम के साथ घर जायेंगे। फिर मैं घर चली गयी। बड़े अफ़सोस की बात है बेटी, कि साहब कल तारा के ही घर गये थे।'

'उसके घर में और कोई नहीं है क्या?' शालिनी रोने-रोने-सी हो आयी।

'सिर्फ़ उसकी मां है।'

'उन्होंने कोई एतराज़ नहीं किया होगा?'

'वह बेचारी क्या एतराज़ करेगी। वह तो खुश हुई होगी कि हमारे घर असिस्टेंट मैनेजर आया, बेटी की तरक्की होगी।'

'फिर?' निराशा के स्वर में शालिनी बोली।

'फिर कुछ करना पड़ेगा। मामला सीरियस है। अच्छा, तुम्हारी जान-पहचान का यहां ऐसा कोई आदमी है, जो जवान हो, खूबसूरत हो और शादीशुदा हो?'

'ऐसा आदमी किसलिए?' भोलेपन से शालिनी ने पूछा।

'चिंता मत करो, बेटी, मुझ पर विश्वास रखो। जैसा मर्ज़ हो, वैसा ही इलाज होना चाहिये। सोचकर बताओ। है कोई?'

'मेरे कॉलेज के सहपाठी एक पंकज गर्ग हैं। उन्होंने यहां आकर गहनों की दूकान खोली है। एक दिन अचानक भेंट हो गयी थी।

'तुम्हारे बुलाने पर वे बीवी के साथ कल ठीक १२ बजे यहां आ जायेंगे क्या?'

'मैं समझती हूं, जरूर आ जायेंगे। मगर क्यों, मां?'

'यह सब मैं कल ही बताऊंगी। अभी मुझे ऑफ़िस पहुंचना है। कल मैं दिन भर की छुट्टी ले लूंगी और १२ के पहले यहां आ जाऊंगी। मिस्टर गर्ग को बुला के रखना। अच्छा, चलती हूं।' वे उठकर खड़ी हो गयीं।

'मां! आप पहली बार आयी हैं। कुछ खाकर जाइये।' शालिनी ने आग्रहपूर्वक कहा।

'आज नहीं, कल,' कहती हुई श्रीमती मर्चेंट द्वार की ओर बढ़ीं।

* * *

अगले दिन श्रीमती मर्चेंट जब आयीं, तब गर्गजी अपनी पत्नी हर्षा के साथ पहले से ही बैठे थे। शालिनी ने उनका परस्पर परिचय कराया। संकेत पाकर नौकर सबके लिए मिठाई-नमकीन की प्लेटें ले आया। श्रीमती मर्चेंट ने एक प्लेट हाथ में ली और खाती हुई घूम-घूम कर घर देखने लगीं। एक कमरे के द्वार पर खड़ी होकर स्वयं से ही कहा, 'हां, यह ठीक रहेगा।' फिर शालिनी से बोलीं,

'दस का नोट नौकर को देकर कहो कि जाओ, कोई फ़िल्म देखो, शाम तक आ जाना।'

'क्यों?' आश्चर्य की मुद्रा बनाते हुए शालिनी ने पूछा।

'अब तुम हर बात में क्यों-क्यों करोगी, तो कैसे चलेगा? आज जैसा मैं कहती जाऊं, वैसा ही करती जाओ।'

'जी, बहुत अच्छा,' कहकर शालिनी चली गयी और नौकर को बाहर भेज कर फिर इनके पास आ गयी।

श्रीमती मर्चेंट आकर सोफे पर बैठ गयीं। पर्स से दो छोटे-छोटे कागज़ के टुकड़े निकाले और गर्ग तथा शालिनी को एक-एक देकर बोलीं, 'इस कमरे के भीतर बैठकर ये डायलॉग बारी-बारी से तुम्हें बोलने होंगे। ठीक से पढ़ लो।'

दोनों ने एक-एक संवाद ही पढ़ा और भौचक्के-से हो गये। गर्ग ने कहा, 'मैं इनसे ऐसा कैसे कह सकता हूं?'

शालिनी ने कहा, 'मुझसे भी ऐसा नहीं बोला जायेगा।'

श्रीमती मर्चेंट बोलीं, 'लगता है, तुम लोगों ने स्कूल-कॉलेज के नाटक में कभी भाग नहीं लिया।'

'भाग तो लिया है, मगर वह तो नाटक था,' गर्ग ने कहा।

'तो यह कौन सच्चा रोमांस है? यह भी नाटक ही है।' श्रीमती मर्चेंट ने उत्तर दिया।

'मगर क्या यह जरूरी है?' शालिनी ने कुछ बेचैनी से पूछा।

'हां बेटी, यह बहुत जरूरी है। मैं चाहती हूं कि साहब और तारा को लेकर जो दर्द तुम्हारे दिल में है, वैसा ही दर्द मिस्टर गर्ग और तुम्हारे संबंध को जानकर साहब के दिल में हो। तभी उन्हें अकल आयेगी।' फिर उन्होंने गर्ग की ओर देख कर कहा, 'मिस्टर गर्ग! मुझे उम्मीद है, आपने सब कुछ समझ लिया होगा।'

'बहुत अच्छी तरह,' गर्ग बोले, 'आपने बड़ा अनोखा उपचार किया।'

'अजी, मैंने कोई उपचार नहीं किया। मैं तो अपना फर्ज़ निभा रही हूं। बेटी शालिनी का दुःख मैं कब तक सहन करूंगी?'

कुछ मुसकाते हुए हर्षा बोली,

'मांजी ! ये उपकार की बात नहीं कर रहे हैं, बल्कि उपचार, यानी दवा-इलाज की बात कहते हैं।'

'ओह, उपचार ? यानी इलाज ? हां बेटा, मर्ज़ हो तो इलाज करना ही पड़ता है। फिर, जैसा मर्ज़ वैसा इलाज।'

हर्षा की बात ने वातावरण को थोड़ा हलका बना दिया। किन्तु शालिनी के प्रश्न से वह फिर गंभीर हो गया। उसने पूछा,

'कहीं उन्होंने इसे सच मान लिया तो ?'

झट उत्तर मिला, 'मैं यही चाहती हूं कि थोड़ी देर के लिए वे इसे सच मानें। तभी तो दिल में जलन होगी। बाद में तो उन्हें नाटक मानना ही पड़ेगा, क्योंकि मैं भी तो कमरे में रहूंगी। बेटी हर्षा भी वहीं रहेगी।'

'हमारे संवाद वे सुनेंगे कैसे ?'

'चिंता मत करो, पूरी स्कीम तैयार है। चलो, तुम साहब को फोन लगाओ। कहो, मैं महिला-मंडल की सभा में जा रही हूं। आपके आने से पहले आ जाऊंगी। अगर न आ सकी, तो फ़्लैट की चाभी तो आपके पास है ही। नौकर को शाम तक की छुट्टी दे दी है। मैं समझती हूं, चाभी उनके पास ज़रूर होगी।'

'हां, चाभी तो है उनके पास। मगर इससे क्या होगा ?'

'मैं जानती हूं क्या होगा ! मेरी उमर पचास से ऊपर है। मैंने दुनिया देखी है। इस सूनेपन का फायदा साहब ज़रूर उठायेंगे। वे पूरा लंच टाइम तारा के साथ यहीं बिताना चाहेंगे। उनके आने की आहट पाते ही हम सब उस कमरे में चले जायेंगे। मैं स्टूल पर खड़ी होकर वेंटिलेशन से उन पर नज़र रखूंगी। मेरा इशारा पाते ही तुम दोनों डायलॉग शुरू कर देना।'

शालिनी ने अपने पति को फोन मिलाया और वही सब कह दिया, जो श्रीमती मर्चेंट ने बताया था। फिर सब बैठकर बातें करने लगे। पन्द्रह मिनट भी नहीं बीते होंगे कि द्वार पर टैक्सी आकर रुकने की आवाज़ आयी। श्रीमती मर्चेंट हड़बड़ा कर उठती हुई बोलीं -

'बापरे, शायद साहब लंच के पहले ही वहां से चल पड़े। जल्दी कमरे में चलो। अपनी-अपनी प्लेटें भी उठा लो।'

पलक झपकते सब कमरे में चले गये और भीतर से बंद कर लिया। दो मिनट बाद रस्तोगीजी तारा की कमर में हाथ डाले हुए घर में प्रविष्ट हुए। मुस्कराते हुए उन्होंने तारा से कहा -

'तारा रानी ! थोड़ी देर के लिए समझ लो कि यह घर तुम्हारा है।'

'हमेशा के लिए इस घर को मेरा क्यों नहीं बनाया ?' कुछ तिनकते हुए तारा बोली।

'क्या बताऊं' रस्तोगीजी ने कहा, 'शादी तो मैं तुम्हीं से करना चाहता था, लेकिन पिताजी बोले – मैं शालिनी के बाप को वचन दे चुका हूं, अगर तुमने इनकार किया, तो मैं आत्महत्या कर लूंगा। फिर मैं क्या करता। खैर, छोड़ो इस बेमौके की चर्चा को। चलो, हमारे बेडरूम की सजावट देखो।'

दोनों शयनकक्ष में चले गये। वेंटिलेशन की खिड़की से दो तेज़ आंखें सब कुछ देख-सुन रही थीं। कुछ देर तक उधर से हंसने-बोलने की आवाजें आती रहीं। फिर रस्तोगीजी निकल कर सोफे पर आराम से बैठ गये। कंघी निकालकर वे बाल संवारने लगे।

हाथ का इशारा पाकर कमरे के भीतर गर्गजी बोलने लगे, 'डार्लिंग! जिस दिन तुम्हारी शादी थी, उस दिन मैंने दुनिया छोड़ने का पक्का इरादा कर लिया था। बाज़ार से ज़हर भी ले आया था। लेकिन पीते समय न जाने कैसे हाथ कांप गया और शीशी ज़मीन पर गिरकर फूट गयी।'

सूने घर में यह आवाज़ सुनकर रस्तोगीजी चौंक पड़े और उस कमरे की ओर बढ़े, जिसमें से आवाज़ आयी थी। द्वार को हाथ लगाया तो भीतर से बंद पाया। वहीं खड़े हो गये। फिर शालिनी की आवाज़ कानों में पड़ी।

'प्राणप्यारे! अगर तुमने ज़हर पी लिया होता, तो मैं भी जान दे देती। शादी हो गयी तो क्या हुआ? मैं अभी भी तुम्हारी हूं।'

इससे ज़्यादा सुनने की शक्ति रस्तोगीजी में नहीं थी। वे क्रोध से कांपने लगे। दरवाज़े को पीटते हुए उन्होंने कहा —

'कौन है भीतर? शालिनी! दरवाज़ा खोलो।'

शालिनी द्वार खोलकर बहार निकली और बोली, 'अरे, आप आ गये क्या? आज दोपहर में कैसे?'

'हां, आज दोपहर में ही आ गया। तुम्हारे पाप-कर्म को देखने के लिए।' रस्तोगीजी गरजते हुए बोले। क्रोधावेश में वे यह भूल ही गये कि वे स्वयं उसी पाप-कर्म में लिप्त हैं।

'पाप-कर्म कैसा?' शालिनी ने कुछ बनावटी आश्चर्य से पूछा।

'मैं सब सुन चुका हूं। भीतर तुम्हारा प्राणप्यारा कौन है उससे कहो, बाहर निकले।'

श्रीमती मर्चेंट के संकेत से बाहर निकलते हुए गर्ग बोले, 'जी, मैं आ गया। कहिये।'

शालिनी ने परिचय दिया, 'ये मेरे सहपाठी श्री पंकज गर्ग हैं। मैं महिला-मंडल जा रही थी कि ये आ गये। फिर मैं नहीं जा सकी।'

'कैसे जातीं।' रस्तोगी ने व्यंग्यात्मक ढंग से कहा, 'तुम चली जातीं, तो इस लफंगे को वचन कौन देता कि मैं अभी

भी तुम्हारी हूं।'

'आपको शायद कुछ भ्रम हो गया है।' शालिनी बोली, 'ये कॉलेज में अक्सर नाटक प्रस्तुत करते थे। यहां आये, तो यहां भी एक नाटक का कार्यक्रम बना दिया। मेरा भी एक रोल उसमें है। हम दोनों उसी नाटक की रिहर्सल कर रहे थे।'

'चुप रहो।' डांटकर रस्तोगीजी बोले, 'मुझे बेवकूफ समझती हो। रिहर्सल करने के लिए भीतर से कमरा बंद करना ज़रूरी था क्या? क्या सबूत है तुम्हारे पास कि जो मैंने सुनीं, से सब नाटक की बातें थीं?'

'सबूत मैं देती हूं,' कहती हुई श्रीमती मर्चेंट बाहर निकलीं। 'मैं इस नाटक की डायरेक्टर हूं। मेरे बताये हुए डायलॉग ये दोनों बोल रहे थे।'

'अच्छा जी!' कुछ विस्मित-से होते हुए रस्तोगी बोले, 'आप भी यहां मौजूद हैं। कोई अनहोनी बात नहीं है। कामकाज वाली औरतें जब बूढ़ी हो जाती हैं, तब उनमें से कुछ दो प्रेमियों को मिलाने का धंधा शुरू कर देती हैं।'

'मगर मैं उनमें से नहीं हूं, रस्तोगीजी।'

'सबूत?'

'है, इसका भी सबूत है। बेटी हर्षा! बाहर आओ।'

हर्षा बाहर आ गयी। श्रीमती मर्चेंट ने कहा, 'ये मिसेज़ गर्ग हर्षा हैं। एक मिनट के लिए आपकी बात मान ली जाय कि मैंने दो प्रेमियों को मिलाया, तो क्या कोई औरत अपने पति को उसकी प्रेमिका से मिलायेगी? क्या मिस्टर गर्ग हर्षा के सामने सचमुच का ऐसा डायलॉग बोल सकते थे, जो आपने सुना? क्या शालिनी बेटी हम दोनों के रहते हुए ऐसा डायलॉग गर्गजी से बोल सकती थी, जो आपने सुना? यह नाटक इसीलिए करना पड़ा मिस्टर रस्तोगी, जिससे आप उस दर्द को महसूस कर सकें, जो दर्द शालिनी तीन दिन से सहन कर रही है। इसका पाप-कर्म नाटक था, झूठ था। लेकिन आपका पाप-कर्म तो बिल्कुल सच है, दिन के उजाले की तरह। आप सबूत पूछिये। चुप क्यों हैं? मैं जानती हूं, आप नहीं पूछेंगे। मगर मैं सबूत देकर रहूंगी।' इतना कहकर वे शयनकक्ष की ओर झपटीं।

इतने लोगों की बातचीत सुनकर तारा ने बीच में ही चुपचाप झांक कर सब को देख लिया था और डर के मारे वहीं दुबक गयी थी। किंतु श्रीमती मर्चेंट की तेज़ निगाहों से कैसे बच सकती थी! उन्होंने तारा का हाथ कसकर पकड़ा और खींचती हुई सबके सामने ला खड़ा किया।

रस्तोगीजी की गर्दन झुकी, तो झुकी ही रह गयी। श्रीमती मर्चेंट ने तारा से पूछा, 'बोल, बेडरूम में क्या कर रही थी और वहां कब से है?'

शालिनी बोली, 'माजी! यह सब पूछने से क्या फ़ायदा!' फिर तारा से कहा, 'तारा बहन! मैं हाथ जोड़कर तुमसे कहती हूं कि जो हुआ, सो हुआ। अब मेरे पति का संग छोड़ दो, तो बड़ी मेहरबानी होगी।'

'तारा रोने लगी। फिर बोली, 'मैं वादा करती हूं, बहन कि मैं सिर्फ़ इनका संग ही नहीं, इस कंपनी की नौकरी छोड़ दूंगी। मैं माफ़ी चाहती हूं। इजाज़त हो तो जाऊं।'

'जा, मुंह काला कर,' मिसेज़ मर्चेंट ने कहा। फिर उन्होंने रस्तोगी से पूछा, 'अब आपका क्या विचार है? कोई सफ़ाई देना चाहेंगे?'

'जो मामला इतना साफ़ है, उसकी क्या सफ़ाई दी जा सकती है।' धीरे से गर्दन झुकाये हुए ही रस्तोगीजी बोले, 'मैं शर्मिन्दा हूं। माफ़ी चाहता हूं। अब ऐसा नहीं होगा।'

'चलिये, आप सुधर गये, अच्छा हुआ। अंत भला, तो सब भला। अब इतना बड़ा हंगामा मचाने के लिए मैं सच्चे दिल से माफ़ी मांगती हूं। आप मेरे साहब हैं, मैं आपकी मातहत हूं।'

'नहीं-नहीं, आप मेरी मातहत नहीं, मेरी मां हैं, मिसेज़ मर्चेंट।' और रस्तोगीजी उनके सामने झुक गये।

गर्गजी बोले, 'नाटक समाप्त हो गया। अब हम लोगों को आज्ञा दीजिये।'

रस्तोगीजी ने उनका हाथ पकड़कर कहा, 'नहीं-नहीं, अभी आप लोग नहीं जा सकते। आप हमारे मेहमान हैं। अब मैं ऑफिस नहीं जाऊंगा। हम सब लोग मिलकर अच्छा-अच्छा खाना बनायेंगे और खायेंगे।'

फिर वही हुआ, जो रस्तोगीजी ने कहा। **— ए वन अपार्टमेंट, ४ माला, वालकेश्वर रोड, बम्बई - ४०० ००६**

□

बापू कुटी का प्रवेश द्वार

बापू के सपनों का साक्षी-सेवाग्राम

□ डॉ. समर बहादुर सिंह

करीब साठ साल पहले की बात है। नमक-सत्याग्रह के लिए जब महात्मा गांधी डांडी जाने के लिए साबरमती आश्रम से निकले तो उन्होंने प्रण किया 'स्वराज्य मिलने के पहले मैं इस आश्रम में नहीं लौटूंगा।' और वह स्वराज्य जब तत्काल न मिल पाया, तो प्रश्न उभरा कि गांधीजी अब कहां रहें? सेठ जमनालाल बजाज बापू के परम भक्त थे। उन्होंने आग्रह किया कि वह अब उनके गृह-नगर वर्धा में बसें। भारत के बीचोंबीच बसा वह लघु नगर नागपुर के निकट तो था ही, यातायात की दृष्टि से भी बड़ा सुविधाजनक था। उत्तर-दक्षिण, पूर्व-पश्चिम सभी दिशाओं से आने-जाने वाली गाड़ियां यहीं से गुज़रती थीं। आबहवा भी बड़ी अनुकूल थी। प्रकृति के लाड़ले इस नगर में वे सभी बातें थीं, जो गांधीजी की अपेक्षाओं से मेल खाती थीं। अतः बापू

ने बजाज का आग्रह स्वीकार कर लिया और वह अब वर्धा के मगनबाड़ी मुहल्ले में रहने लगे।

किन्तु गांधीजी का मन वहां से भी उचट गया। वह तो आस-पास के किसी ऐसे गांव में बसना चाहते थे जहां वह 'ग्राम-स्वराज्य' विषयक अपने विचारों को अमली जामा पहना सकें, और उस प्रक्रिया में आने वाली समस्याओं का प्रत्यक्ष अनुभव कर सकें। उनकी अनुयायी मीरा बहन ने इसमें पहल की और वर्धा से कोई दस किलोमीटर पूर्व एक गांव, जिसका तब नाम था 'सेगांव' में अपनी झोपड़ी बना वहीं रहने लगीं। एक दिन गांधीजी भी घूमते-घूमते वहां जा पहुंचे। वह जगह उन्हें जंच गयी और वहीं 'सेगांव' में बसने का उन्होंने भी अपना मन बना लिया।

यह सन १९३६ की बात है। जून की १६ तारीख थी। आकाश में मेघ मंडरा रहे थे। गांधीजी बैलगाड़ी में बैठकर वर्धा से सेगांव रवाना हुए। तब आज जैसी पक्की सड़क तो थी नहीं। पगडंडी पर चलती उस गाड़ी में झटके खाने के बजाय गांधीजी ने पैदल चलना बेहतर समझा। रास्ते में मूसलाधार पानी बरसने लगा, किन्तु गांधीजी चलते गये और उस पावस-परीक्षा में खरा उतर, उन्होंने सेगांव पहुंच कर ही दम लिया।

सेगांव के अधिकांश भाग के तब जमनालाल मालगुजार थे। उन्होंने आश्रम-स्थापना के लिए अपेक्षित ज़मीन तो दी ही, उसके निर्माण में भी पूरा हांथ बंटाया। देखते-देखते वह आम्र-कुंज एक 'ऋषि-कुल' में परिवर्तित हो गया। सेगांव का नया नामकरण हुआ "सेवाग्राम" और गांधीजी की उपस्थिति ने उस सुनसान, अनजाने गांव को भारत की 'गैर सरकारी राजधानी' बना दिया।

संयोग से चौवन साल बाद उसी तिथि के आसपास सन ९० के जून में अपने श्रद्धा-सुमन चढ़ाने मैं सेवाग्राम पहुंचा। पावस का वही माहौल उस दिन भी था— आश्रम के ऊपर मंडराते कजरारे मेघ, यदा-कदा बूंदा-बांदी भी। बरसाती हरियाली पूरे परिसर को अपने अंक में समेटे हुई थी। उस बीहड़ बाग में गांधीजी शुरूआती दिनों में कैसे रहे होंगे, यह कल्पना कर मैं सिहर उठा। खैर।

आश्रम-परिसर में प्रवेश कर सर्वप्रथम मैं 'बापूकुटी' पहुंचा। एक छोटा-सा कमरा, मिट्टी की दीवालें, खपरैल की छत और लिपा-पुता फर्श। एक ओर गांधीजी का आसन और दूसरी ओर आगंतुकों के बैठने के लिए बिछी चटायी। दूधिया खद्दर में आवेष्ठित गांधीजी की वह पांच फुटी संकरी गद्दी, पीछे पीठ टेकने के लिए लकड़ी के पट के सहारे टिका गाव-तकिया। गद्दी के पास फर्श से उभरता लकड़ी का एक
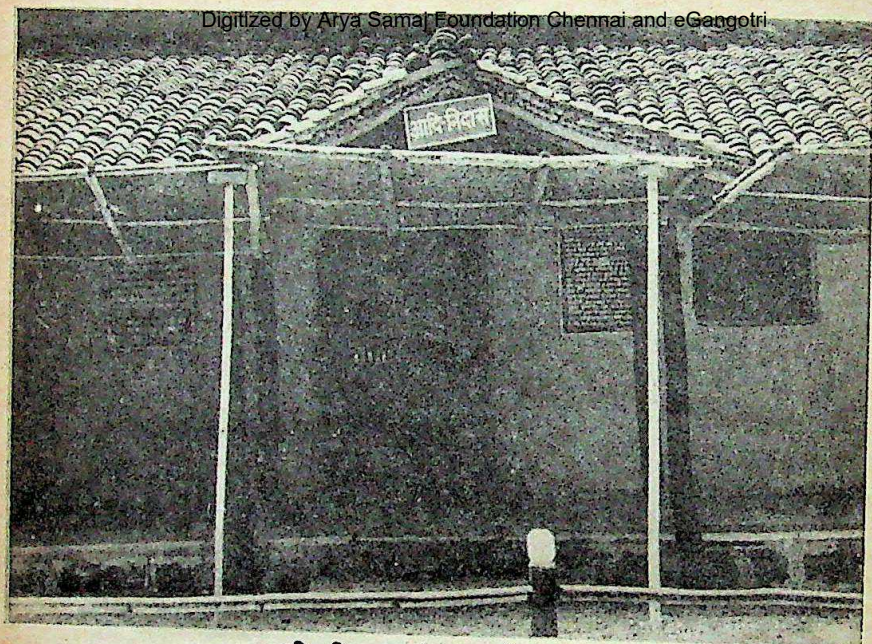
आदि निवास (बाह्य विभाग)

गोल खम्भा और वहीं पास में रखी एक बड़ी-सी लालटेन। बगल में वह चौकी जिस पर गांधीजी लिखा-पढ़ा करते। और वहीं एक किताबदान भी जिसमें रखे थे "बाइबिल" "कुरान" और "गीता" आदि धर्मग्रंथ। दूसरी तरफ शीशे के एक छोटे-से सन्दूक में रखी थीं, वो चीजें जिनका गांधीजी इस्तेमाल किया करते थे। जप करने की उनकी माला, टेकने की उनकी लाठी, उनका खड़ाऊं आदि भी वहां करीने से रखे थे। और हां, वहीं उन तीनों बंदरों की मूर्तियां भी थीं, जिन्हें गांधीजी अपना शिक्षक मानते थे। कान मूंदे बन्दर का अर्थ था "बुरी बात मत सुनो", आंखें ढके बंदर की सीख थी, "बुरी चीज़ मत देखो" और मुंह बंद किये बन्दर का संकेत था, "बुरी बात मत कहो"। पास ही में वह टेलीफोन भी था, जिसे भारत सरकार ने गांधीजी से सीधा सम्पर्क बनाये रखने के लिए लगवा रखा था।

खयालों में खोया, मैं उस आसन के समक्ष न जाने कितनी देर खड़ा रहा। मानस-पटल पर एक के बाद एक कितने चित्र उभरते रहे। यही वह कक्ष है न, जहां भारत-भाग्य विषयक अनेक निर्णय

लिये गये थे। इसी तरह की चटायी पर बैठकर हमारे राष्ट्रीय दिग्गज गांधीजी से विचार-विमर्श किया करते थे। यहीं उनकी योजनायें बनती थीं, और यहीं विश्व के प्रबलतम साम्राज्य के विरुद्ध अहिंसक लड़ाई जारी रखने के लिए संकल्प लिये जाते थे। गांधीजी के दर्शनार्थ आये विदेशी मेहमान भी इसी चटायी पर बैठा करते थे। हां, जिन्हें फर्श पर बैठने में असुविधा होती, उन्हें मोढ़ा अथवा छोटी तिपायी दे दी जाती थी।

मेरी तन्द्रा तो तब टूटी जब गाइड ने आगे चलने का संकेत दिया। मैं बाहर आने लगा तो सहसा मेरी निगाह भीतरी दीवाल पर टंगी तख्तियों पर अटक गयी। इन पर वे सूक्तियां अंकित थीं जो गांधीजी को निरन्तर प्रेरणा देती रहती थीं। उनमें एक उक्ति थीं प्रसिद्ध विचारक रस्किन की:—

'शब्दों में नहीं, बल्कि मौन में ही झूठ का तत्व छिपा है। चुप रहकर, दो अर्थ वाली बात कह कर, किसी शब्द-विशेष पर ज़ोर देकर, आंख के इशारे से किसी वाक्य को महत्व देकर असत्य बोला जा सकता है, और ये सब तरीके स्पष्ट शब्दों में बोले गये झूठ से ज़्यादा बुरे हैं।'

एक दूसरी सूक्ति थी:—

'जब आप सही हों, तब तैश में आने का सवाल ही नहीं और जब आप गलत हों तब तैश में न आना और भी ज़रूरी हो जाता है।'

इन पंक्तियों को पढ़ता-गुनता अब मैं उस कक्ष से जुड़े गांधीजी के स्नानागार में पहुंचा, एक ओर स्नान की जगह, दूसरी ओर कमरे में वह टेबुल जिस पर नित्य गांधीजी की मालिश हुआ करती थी। बीच में था सेप्टिक टैंक वाला कमोड जिसे गांधीजी नित्य अपने हाथ से मांजा करते थे। पास ही अखबार की कतरनें, पत्र आदि रखने की भी व्यवस्था थी। शौच में जो समय लगता उसमें वह इन्हें पढ़ा करते थे। आगे जो कमरा था उसमें गांधीजी की तखतनुमा चारपायी भी रखी थी। इस कमरे में कभी नज़दीकी ठहरते और कभी वे रोगी जिनका उपचार गांधीजी की देख-रेख में होता था।

आगे "आदि निवास" था— मिट्टी का वह आवास, जहां गांधीजी शुरू में रहा करते थे। इसमें उनकी पत्नी कस्तूरबा तथा अन्य कई लोग भी रहते थे। बाद में जब भीड़ बढ़ गयी तो गांधीजी अपनी उक्त कुटी में आ गये और 'बा' साथ की उस कुटी में जो उनके लिए खास तौर पर बनवायी गयी थी। इन तीनों आवासों के बीच है वह खुला मैदान जहां नित्य सुबह-शाम प्रार्थना हुआ करती थी। जाड़े और बरसात में तो गांधीजी अपनी कुटी के उत्तरी बरामदे में सोते थे। बाकी दिनों में इसी

प्रार्थना-प्रांगण में खुले आकाश के नीचे वह आश्रमवासियों के साथ सोया करते थे। प्रकृति-उपासक गांधी अपना अधिकांश समय प्रकृति की गोद में ही बिताते थे।

आश्रम-परिसर में उन दिनों सांप-बिच्छू अकसर निकला करते। अहिंसक गांधी भला उन्हें क्यों मारने देते। वह उन्हें बांस के चिमटे से पकड़वा कर एक लकड़ी के संदूक में डलवा देते थे। बाद में कोई उन्हें दूर जंगल में छोड़ आता था। यह पिटारी गांधी-कुटी के पास अब भी यथावत् रखी हुई है– उन चिमटों के साथ।

उस आश्रम में गांधीजी की दिनचर्या क्या रहती? इसका उत्तर एक जानकार के शब्दों में:–

'गांधीजी सुबह चार बजे उठते, मुंह-हाथ धोकर गरम पानी में नीबू के रस के साथ शहद मिलाकर पीते और ४-२० पर प्रार्थना में जाते थे। प्रार्थना-समाप्ति पर नैमित्तिक कार्य करना, थोड़ा आराम करना, या पत्र-व्यवहार देखना होता था। नाश्ते में बकरी का दूध व फल लेकर वह घूमने निकल जाते। लौटने पर वह बीमारों के इलाज में कुछ समय लगाते।

फिर मालिश होती। उसमें करीब एक घंटा लग जाता। इसके बाद गुनगुने पानी में स्नान करते हुए वह नज़दीकी साथियों के साथ आवश्यक चर्चा किया करते। फिर ग्यारह बजे तक काम चलता रहता। तब वह दोपहर का खाना खाते। उनका भोजन बहुत सादा होता था। कच्ची व उबली सब्जियां, फल, बकरी का दूध तथा चोकर की रोटियां। उसके बाद वह अखबार पढ़ते और कुछ देर आराम करते। वह पेट पर मिट्टी का लेप किया करते थे। फिर गरम पानी में नीबू-रस और शहद लेकर वह काम पर लग जाते। ढाई और चार बजे के बीच नित्य कताई करते थे। तत्पश्चात् मिलने वालों का समय होता था। साढ़े पांच व छः बजे के बीच शाम का भोजन कर लेने पर वह घूमने निकल पड़ते। वहां से लौटने पर वह दोपहर के बाद की तरह का गरम पेय लेते। साढ़े सात बजे सायंकालीन प्रार्थना होती। उसके बाद नौ-साढ़े नौ बजे तक वह काम करते और फिर सो जाते। सोने से पहले उनके सिर-पैर की फिर मालिश होती।'

गांधी-कुटी के इर्द-गिर्द मिट्टी से बने और खपरैल से छाये और भी कई आवास हैं– महादेव कुटी, परचुरे-कुटी, रुस्तम भवन आदि। इनमें एक है 'आखिरी निवास'। १९४६ ई. में जब गांधीजी खांसी से पीड़ित हो उठे थे, तो इसी आवास में रहने लगे थे। प्रकृति-चिकित्सक गांधी को इस कक्ष के पूर्वी बरामदे में धूप-स्नान की अपेक्षाकृत अधिक सुविधा थी। गांधीजी को

कुदरती इलाज में बड़ी श्रद्धा थी और वह साथियों का इसी पद्धति से इलाज किया करते थे। देश के कई जाने-माने नेता भी सेवाग्राम आकर बापू की देख-रेख में अपनी चिकित्सा करवाया करते थे। वैसे वहां एक "कस्तूरबा अस्पताल" भी था, जो अब एक वृहद और आधुनिक चिकित्सालय बन गया है।

सोमवार गांधीजी के मौन-व्रत का दिन होता। हफ्ते भर का अधूरा काम वह इसी दिन पूरा करते। वह वक्त के बड़े पाबन्द थे— खासतौर से प्रार्थना में। 'राम-नाम' में उनकी अगाध श्रद्धा थी। वह इसे सारी व्याधियों की अचूक औषधि मानते थे। उनके भोजन-विषयक विचार 'आदि निवास' के बरामदे में तख्तियों पर लिखे टंगे हैं। उनका कहना था कि भोजन स्वाद के लिए नहीं, स्वास्थ्य के लिए औषधि के रूप में ग्रहण करना चाहिये। 'कम खाना, गम खाना' इस कहावत पर वह सतत आचरण करते।

आश्रम की संचालन-समिति की सदस्या, गांधीजी की पुत्रवधू श्रीमती निर्मला बहन को प्रणाम कर, जब परिसर से विदा हुआ तो मानस में तिरने लगे वे तीन चित्र जिन्हें मीरा बहन ने बापू-कुटी में उनके आसन के सिरहाने दीवार पर उकेर रखे थे। एक ताड़ का पेड़, दूसरा चरखा और तीसरा उनके बीच उभरता 'ॐ'। लगा, इन तीनों में समूचा गांधी-दर्शन समाया हुआ है। ताड़ परिचायक था बापू की प्रकृतिनिष्ठा का, चरखा उनके ग्राम-स्वराज्य का और "ॐ" उनकी आध्यात्मिकता का। काश, भारत उस दर्शन को एक बार फिर अपना पाता। उसके सामने आज जो इतनी सारी समस्यायें मुंह बाये खड़ी हैं, उनका स्थायी समाधान इसी दर्शन में निहित है। किन्तु क्या कहा जाये— 'पानी में भी मीन पियासी!'

— 'मानस' बी- १२८
रामसागर मिश्रा नगर,
लखनऊ, उ.प्र.

□

'प्रदर्शनी में हम सिर्फ आपके ही बनाये चित्र देखते रहे,' एक युवती ने चित्रकार से कहा।

'धन्यवाद! पर यदि आप दूसरों की कलाकृतियां भी देखतीं, तो मेरी कला के गुण और भी स्पष्ट हो जाते!'

'सच तो यह है कि दूसरों के चित्रों के सामने भीड़ बहुत लगी थी।' उस युवती ने कहा।

— डॉ. गोपाल प्रसाद 'वंशी'

प्राणी संसार

चींटियों की बस्ती में

□ डॉ. सुशील जोशी

चींटी की तरह मसलने को कहना आसान है, पर करना मुश्किल है। बहरहाल कथनी और करनी में अंतर तो रहता है। आपको शायद अंदाज़ भी न होगा कि दुनिया में कितनी चींटियां हैं, वे कितनी तरह की होती हैं, कहां-कहां रहती हैं। शायद एकाध चींटी को मसलने तक तो ठीक है, पर अगर सारी दुनिया की चींटियों को मसलने निकलेंगे तो बड़ी दिक्कत में फंस जायेंगे। बहुत ताकतवर होती हैं चींटियां! मसलन एक चींटी अपने वजन से पचास गुना बोझ उठा सकती है। आप उठा पायेंगे करीब २५ क्विंटल का बोझ? चींटियों की और भी कई खासियतें हैं। जैसे ये बहुत सुंदर-सुंदर घर बनाती हैं, खेती करती हैं, पशुपालन करती हैं, और भी न जाने क्या-क्या करती हैं। कुल मिलाकर बहुत ही सामाजिक प्राणी है चींटी। पर आगे बात करने से पहले एक बात समझना बहुत ज़रूरी है कि जब हम चींटी कहते हैं तो चींटियों की कई किस्में होती हैं और हम उन सभी किस्मों की बात कर रहे होते हैं। दुनिया भर में इनकी करीब १२-१४ हजार किस्में हैं और कुल संख्या शायद ३० खरब के आसपास होगी। ये ध्रुवों और पहाड़ों की बर्फीली चोटियों को छोड़कर बाकी सब जगह पायी जाती हैं।

अगर आप किसी एक चींटी का पीछा करते जायें तो आप उसके घर पहुंच जायेंगे। जी हां, घर! और घर भी सीधा-सादा नहीं — बड़ा करीने से बना हुआ घर होगा वह — वास्तुकला का सुंदर नमूना। बल्कि इसे घर न कहकर शहर कहना ही बेहतर होगा। चींटियां बड़ी जबर्दस्त कामगार होती हैं। ब्राज़ील में चींटी की एक जाति है जो एक साल में प्रति एकड़ १६ टन मिट्टी को

ऊपर-नीचे कर देती है। अक्सर चींटियों के घरौंदे ज़मीने के अंदर बनते हैं। उनमें कमरे होते हैं, रास्ते होते हैं, हवा आने-जाने की जगह होती है, गोया पूरा साज़ो-सामान होता है। लेकिन कई चींटियां ज़मीन के ऊपर भी घर बनाती हैं। जैसे वीरबहूटी पेड़ के ऊपर घर बनाकर रहती है। यह पेड़ की पत्तियों को आपस में इस तरह जोड़ लेती है कि एक तरह का घोंसला बन जाता है। पत्तियों को आपस में जोड़ने के लिए इसके शरीर में विशेष तरह के रसायन बनते हैं।

चींटी की बस्ती में पहुंचकर आपको दिखेगा कि वहां बड़ी गहमागहमी है। अलग-अलग किस्म की चींटियां तरह-तरह की उठापटक में व्यस्त हैं। पर यह कोई बेतरतीब उठापटक नहीं चल रही है। यहां तो बड़ी व्यवस्थित गतिविधियों को अंजाम दिया जा रहा है। पर पहले अलग-अलग किस्म की चींटियों से तो मिल लें।

एक तो है रानी। यह आकार में बहुत बड़ी है, यानी इसका पेट वाला हिस्सा बहुत फूल गया है। इस पेट में बेशुमार अंडे भरे हुए हैं। होता यह है कि हर बस्ती में एक ही रानी होती है। शुरू में यह पंख वाली होती है और कई नर चींटियों से संबंध कर लेती है। रानी के शरीर में एक शुक्राणु कोष होता है जिसमें नर चींटियों के अंडे इकट्ठे होते रहते हैं। अब यह रानी अंडे देने के लिए तैयार है– प्रति दस मिनट एक अंडा।

चींटियों की एक बात बहुत मज़ेदार है। जब वे अंडे देती हैं तो हर अंडा शुक्राणु से निषेचित हो यह ज़रूरी नहीं। जब अंडे का शुक्राणु से मेल होता है, तो ऐसे निषेचित अंडे में से मादा चींटी पैदा होती है। जब निषेचन नहीं होता, तो चींटा पैदा होता है। परंतु रानी लगातार निषेचित अंडे ही देती जाती है और मादा चींटियां बनती जाती हैं। निषेचित अंडे तो तभी दिये जाते हैं, जब नर की ज़रूरत हो अर्थात् कोई नयी बस्ती शुरू करनी हो।

प्रश्न यह उठता है कि जब इतनी सारी चींटिया पैदा होती जा रही हैं तो रानी एक ही कैसे है? इसका एक कारण है। जैसे ही रानी अंडे देना शुरू करती है, उसके शरीर से एक रासायनिक पदार्थ निकलना शुरू हो जाता है। इस रासायनिक पदार्थ को अंडों में से निकली इल्लियां चाटती हैं। यह पदार्थ बहुत लुभावना होता है, पर इसे चाटने वाली इल्लियां जब वयस्क चीटियां बनती हैं तो इनमें प्रजनन क्षमता नहीं होती। इस तरह से एक ही रानी बस्ती में रहती है।

नर चींटी तो पैदा होती नहीं, क्योंकि सारे अंडे निषेचन के बाद ही रानी के शरीर से निकलते हैं। इसलिए चींटियों की बस्ती "मादा बस्ती" होती है।

अब ये ढेरों चींटियां (१ प्रति मिनट के

हिसाब से) पैदा हो गयी। जैसे ही चीटियों की पहली खेप पैदा होती है, वैसे ही रानी सारा कामकाज छोड़कर बस अंडे देने में लग जाती है। बाकी कामकाज ये नयी चींटियां संभाल लेती हैं। घर बनाना, भोजन का इंतज़ाम करना, बस्ती की सुरक्षा करना, अंडों को सहेजना, इल्लियों को भोजन कराना, रानी की देखभाल करना, रानी के शरीर से निकलने वाला "प्रजनन रोधी पदार्थ" इल्लियों को खिलाना, वगैरह सारे काम ये चीटियां संभालती हैं। इन अलग-अलग कामों के लिए इनमें अलग-अलग गुण पैदा हो जाते हैं।

कुछ चींटियों को सिपाही बनाया जाता है, कुछ को मजदूर। इनकी शरीर की रचनायें भी अलग-अलग हो जाती हैं। मज़दूर चींटियां बस्ती से बाहर निकलती हैं और भोजन ढूंढ़-ढूंढ़ कर लाती हैं। जब वे वापिस आती हैं तो सिपाहियों द्वारा उनकी जांच की जाती हैं। यदि उसी बस्ती की हैं तो ठीक, वरना उन्हें मार दिया जाता है। कुल मिलाकर बात यह है कि "श्रम का विभाजन" हो जाता है और अपनी-अपनी भूमिका के अनुसार उनकी शरीर रचना भी बन जाती है।

भोजन का इंतज़ाम करना एक बड़ा काम होता है, और इसके तरीके भी विचित्र होते हैं। शकर के दाने, मरे हुए कीड़े-मकोड़े, पत्तियां, फूलों का रस वगैरह तो है ही पर यहां हम दो बहुत जबर्दस्त तरीकों की बात करेंगे, एक है "खेती" और दूसरा है "पशुपालन"।

चींटियों की कुछ प्रजातियां ऐसी हैं, जो नियमित रूप से "खेती" करती हैं। इन्हें खेतिहर चींटी कहें, तो अनुचित न होगा। ये चींटियां (याने उनके मज़दूर) पत्तियां काटकर उठा लाती हैं। इन पत्तियों को थोड़ा चबाकर, थोड़ा पचाकर अपने "घर" में बिछा दिया जाता है। अब इन पर एक किस्म की फफूंद "बोयी" जाती है। जब यह फफूंद उग आती है, तो यह भोजन का एक अच्छा साधन बन जाती है। इस भोजन के लिए कोई प्रतिस्पर्धा भी नहीं होती, अन्य प्रजातियों के साथ। इस प्रकार की खेतिहर प्रजातियां सबसे पहले पूना में १८२९ में एक अंग्रेज फौजी अफसर ने देखी थीं। आज इस तरह चींटियों की १०० प्रजातियां हम जानते हैं, जो खेती करती हैं। इसके अलावा कई प्रजातियां ऐसी भी हैं जो खुद "खेती" तो नहीं करतीं, पर अनाज इकट्ठा करके रखती है। कई बार ऐसा देखा गया है कि इनकी बस्तियों के आसपास ऐसे पौधे उगे होते हैं जो आमतौर पर उस इलाके में नहीं उगते। परंतु वैज्ञानिकों का मानना है कि चींटियां जानबूझकर इन्हें बोती हों, ऐसा नहीं लगता।

फिर दूसरा धंधा है "पशुपालन" का। कुछ चींटियां होती हैं जो अन्य
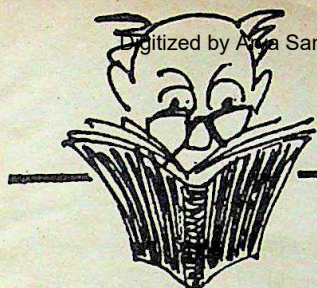
*** विज्ञान : नई राहें * लेखक : जयप्रकाश भारती एवम् रचना कुमार; प्रकाशक : शुभकामना, कलानिकेतन नवीन शाहदरा, दिल्ली-३२; मूल्य : ५५ रुपये ।**

आज हम विज्ञान के युग में जी रहे हैं। विज्ञान की उपलब्धिया इतनी तीव्रता से बदल रही हैं कि आज की उपलब्धि आने वाले कल में फीकी पड़ जाती है। ऐसी स्थिति में विज्ञान लेखकों का कर्तव्य है कि वे विज्ञान की उपलब्धियों को जन सामान्य तक पहुंचायें। यह पुस्तक इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए एक प्रभावशाली कदम है।

पुस्तक में आधुनिक विज्ञान के १८ शीर्षकों पर जानकारी दी गयी हैं। इनमें प्रक्षेपास्त्रं, यंत्रमानव लेसर, अतिचालकता, चन्द्रअभियान, खगोलविज्ञान आदि जैसे कठिन विषयों को जनसामान्य की रोचक भाषा में प्रस्तुत किया गया है। पुस्तक में कहीं पर भी विज्ञान के कठिन सूत्रों और जटिल संकल्पनाओं को प्रयोग नहीं किया गया है। इसलिये पुस्तक को पढ़ते समय पाठक ऊबता नहीं है। पुस्तक में दिलचस्प उदाहरण प्रस्तुत किये गये हैं।

यह पुस्तक केवल जनसामान्य के लिये ही नहीं बल्कि बच्चों के लिए भी बहुत उपयोगी है — **डॉ. सी. एल.**

* * *

*** 'अंतस की यादें' (गीत संग्रह)* रचनाकार : मधुकर गौड़; सार्थक साहित्य प्रकाशन, डी/३, शांति नगर, दत्त मंदिर रोड, मालाड़ (पूर्व), बम्बई-. ८७; मूल्य : ३५ रुपये ।**

पुरानी पीढ़ी के उन गीतकारों में जो निरन्तर लिखते चले जा रहे हैं और जिन्होंने सभी गीत-आन्दोलनों के प्रभाव को अपने में समेटा है, श्री मधुकर गौड़ का नाम बड़े आदर एवं आस्था के साथ लिया जाता है। उन्होंने जीवन में भोगे कटु-मधु यथार्थ को जिस बेबाक एवं ईमानदार सोच के साथ गीतों में ढाला है, उसकी जितनी प्रशंसा की जाये, कम है। मानो वे गीत को समर्पित हैं। समय के धनुष, अन्तस की यादें

उनके गीतों के [illegible] संग्रह हैं। 'अन्तस की यादें' तो मधुकरजी के कोमल मन की उन सभी स्मृतियों और प्रतिच्छायाओं का गीत-कोश है, जिन्हें उनके प्रेमाकुल मन ने वर्षों से सहेजकर रखा है। वस्तुत: इस संग्रह के मीठे गीतों में मधुकरजी ने अपने नाम को सार्थक किया है।

'अंतस की यादें' में उनके ७२ गीत संग्रहीत हैं। ये गीत, गीत और नवगीत के बीच की कड़ी जैसे लगते हैं। इन गीतों में कवि की अतृप्त उत्सुकता, उर्वर जिज्ञासा, नये मुहावरे की तलाश, किसी दरार को शब्दों से सी देने की लयात्मक ललक—सब कुछ है।

कवि का रहस्यवादी मन समर्पण और जिज्ञासा के दो किनारों के बीच बह रहा हैं – **'बह रहा मन फिर समर्पण की नदी में। कौन-सी धारा कहां ले जायेगी।'** यह अनिर्णय की स्थिति उसके खंडित मन को और अधिक सन्नाटे से भर देती है – **'बिना तुम्हारे लगता जैसे यह जीवन निष्प्राण है। घायल हैं मन की आशायें, खण्डित हर मुस्कान है।'**

इस संग्रह की एक विशेषता सब पाठकों को पहली ही दृष्टि में हृदयंगम हो जाती है और वह यह कि सभी गीतों के मुखड़े अद्‌भुत हैं। प्रत्येक गीत की प्रथम चार पंक्तियां जैसे पूरा गीत कह जाती हैं।

– डॉ. किशोर काबरा

*** अमृत पुत्र (उपन्यास)* लेखक : प्रणव कुमार वन्द्योपाध्याय; प्रकाशक : राजपाल एण्ड सन्स, कश्मीरी गेट, दिल्ली; मूल्य : ७५ रुपये।**

प्रणव कुमार वन्द्योपाध्याय उपन्यास-जगत में जाने-माने हस्ताक्षर हैं। १९९० में प्रकाशित 'अमृतपुत्र' उनका नवीनतम उपन्यास है, जिसमें रामायण के बाल-काण्ड को आधार बनाकर तत्कालीन सामाजिक वातावरण का सुन्दर एवं तर्क संगत चित्रण किया गया है। महाराजा दशरथ द्वारा आयोजित पुत्रेष्टि यज्ञ से लेकर राम-परशुराम संवाद और राजा दशरथ का पुत्रों और पुत्रवधुओं समेत अयोध्या वापस लौटने तक की प्रमुख घटनाओं का ऐसा तर्क पूर्ण चित्रण किया गया है, जो निश्चित ही उपन्यासकार के गहन-पौराणिक अध्ययन का परिचायक है। रामायण सामान्यतया एक पौराणिक रचना है और इसी कारण उसमें कुछ ऐसे भी प्रसंग मिलते हैं जो तर्क के धरातल पर प्रबुद्ध पाठकों को ग्राह्य नहीं हैं। ऐसे अनेकों प्रसंगों का चित्रण प्रस्तुत उपन्यास- 'अमृतपुत्र' में इस तर्क पूर्ण ढंग से किया गया है जो मनोवैज्ञानिक एवं मनोविश्लेषणात्मक दोनों ही दृष्टि से महत्वपूर्ण है।

ऐसे सुन्दर-सारगर्भित उपन्यास के लिए उपन्यासकार को साधुवाद।

* * *

*** मौसम की पाण्डुलिपि (काव्य संग्रह) ***
डॉ. कृष्ण विहारी सहल; चिन्मय प्रकाशन, जयपुर; मूल्य : ३० रुपये ।

प्रस्तुत काव्य संग्रह 'मौसम की पाण्डु-लिपि' की कवितायें उतनी ही विविध हैं, जितना मौसम, जो निरन्तर परिवर्तित तो होता रहता है, किन्तु उस परिवर्तन के पीछे एक सनातनता का सूत्र भी बना रहता है। समय की पहचान और समय के बीच से गुजरते हुए जीवन को पहचानने का अनवरत प्रयास, अपने भीतर सोच और भावों की बदलती हुई धूप-छांव और उनसे भीगती-सूखती बाहर की जमीन। कवि की प्रायः सभी कविताओं में 'मैं' पर बहुत जोर दिया गया है, परन्तु यह हर मौसम के तेवर से सामन्जस्य स्थापित करता हुआ बाहर की पूरी जिन्दगी से, भीतर के पूरे अहसास से इतने सशक्त रूप से जुड़ा हुआ है कि कवि का वह 'मैं' समय की पहचान बन गया है।

कवि ने संवेदना के कई धरातलों को पार कर एक गहन अन्तर्विरोध के बीच से अपनी राह निकाल कर जीवन के यथार्थ को पकड़ने की सफल कोशिश की है। प्रायः समस्त रचनाओं में कवि का दार्शनिक पक्ष उभर कर सामने आया है, जो पाठकों को चिन्तन की एक नवीन धारा की ओर मोड़ने में सफल हुआ है– 'दर्द की सीमायें', 'मेरा आसमान,' 'सत्यावरण,' 'नया व्याकरण' 'लाकर में बंद शिकायतें', 'मित्र के नाम', एवं 'पेशेवर' आदि अनेकों ऐसी रचनायें हैं जो हमें सोचने को मजबूर कर देती हैं।

समझ से परे हो गया है
मेरे लिए देश का व्याकरण
चारों ओर या तो सर्वनाम हैं
(वह, मैं, वे, तू, तू, मैं, मैं)
या फिर कोरे विशेषण
(भ्रष्ट, बेईमान, चोर, कमीने)
कहीं कोई संज्ञा नहीं
क्रिया के नाम पर बस
जड़ता या शून्यता
...... क्या करूं
इस संज्ञा शून्य....
क्रिया शून्य.....
व्याकरण वाले देश का ।

सार्थक शीर्षक एवं सुन्दर मुद्रण से युक्त नयी कविता का यह संकलन वस्तुतः काव्य जगत एवं कविता प्रेमियों के द्वारा सराहा जायेगा, ऐसा मेरा विश्वास है।

* * *

*** राष्ट्रपति के संस्मरण * लेखक : नीलम संजीव रेड्डी; प्रकाशक: राजपाल एण्ड सन्स, कश्मीरी गेट, नयी दिल्ली; मूल्य : ५० रुपये ।**

भारत जैसे विशालतम प्रजातांत्रिक राष्ट्र में यद्यपि राष्ट्रपतीय

शासन प्रणाली नहीं है और भारतीय संविधान के अनुसार सभी विधायी शक्तियां प्रधानमंत्री पद में निहित हैं; फिर भी भारत के राष्ट्रपति का अपना गौरव है और वह भारत का प्रथम नागरिक है। एक प्रमुख राजनीति शास्त्री के अनुसार भारतीय संविधान उधार का थैला है, इसीलिए अधिक पेचीदा, जटिल और लचीला हो गया है।

परन्तु इतना होते हुए भी राष्ट्रपति का अपना मौलिक स्वायत्ततापूर्ण स्थान है और इसी के फलस्वरूप कभी-कभी राष्ट्रपति के सम्मुख ऐसे प्रश्न उठ खड़े होते हैं, जिनका समुचित उत्तर एवं समाधान अत्यावश्यक हो जाता है। प्रस्तुत आत्मकथात्मक शैली में लिखी गयी पुस्तक में भारत के एक भूतपूर्व राष्ट्रपति श्री नीलम संजीव रेड्डी के संस्मरणों को प्रकाशित किया गया है, जो निश्चित ही प्रेरणादायक हैं। आपात् कालीन स्थिति के बाद जनता सरकार का सत्ता में आना और फिर समय से पूर्व ही लोक सभा का विघटन हो जाना तथा नये चुनाव करवाने का निर्णय देना, आदि कुछ ऐसी परिस्थितियां थीं, जिनका समाधान तत्कालीन राष्ट्रपति ने जिस बुद्धिमत्ता एवं धैर्यपूर्वक किया, उसे भुलाया नहीं जा सकता।

अपनी विदेश यात्राओं के दौरान भी राष्ट्रपति श्री नीलम संजीव रेड्डीजी ने देश की गरिमा और संस्कृति को सर्वोपरि माना और उसका सही रूप से प्रतिनिधित्व भी किया जिसकी झलक प्रस्तुत पुस्तक में देखी जा सकती है।

* * *

*** नयी शिक्षा नीति : आधार एवं क्रियान्वयन * सं. : डॉ. राम शकल पाण्डेय; प्रकाशक : विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा; मूल्य : ५० रुपये।**

'नई शिक्षा नीति : आधार एवं क्रियान्वयन' साहित्य परिचय १९८८ का सोलहवां सामयिक विशेषांक है, जिसमें देश के विभिन्न विश्वविद्यालयों, महाविद्यालयों के प्रमुख विद्वानों एवं शिक्षा शास्त्रियों के सारगर्भित निबन्धों को प्रकाशित किया गया है। पुस्तक में संकलित प्रायः सभी लेख राष्ट्रीय शिक्षा नीति, नयी शिक्षा नीति के परिप्रेक्ष्य में लिखे गये हैं, जिनमें विद्वान लेखकों ने भारतीय शिक्षा के विविध आयामों एवं देश में नयी शिक्षा नीति के प्रभाव को बड़े सारगर्भित ढंग से प्रस्तुत किया है।

पुस्तक में संकलित सभी निबंध अपने आप में एक खजाना हैं, परन्तु 'नई शिक्षा नीति और मूल्यों की शिक्षा' 'विद्यालय संकुल', 'नवोदय विद्यालय', 'उन्मुक्त विश्वविद्यालय - एक महत्व-पूर्ण उपलब्धि,' 'दूर शिक्षा का सापेक्ष महत्व,' 'उपाधि को सेवा से अलग करना कितना सार्थक?' 'हिन्दी

शिक्षण,' 'महाराष्ट्र सरकार की नयी भाषा नीति,' 'शिक्षक प्रशिक्षण का स्वरूप' आदि कुछ ऐसे निबन्ध हैं जो न केवल सूचना पूरक हैं, बल्कि हमें सोचने पर मजबूर कर देते हैं।

प्रस्तुत पुस्तक में नयी राष्ट्रीय शिक्षा नीति के विविध आयामों की चर्चा विस्तार से की गयी है। साथ ही साथ इसके गुण-दोषों का भी विवेचन किया गया है। — **डॉ. किशोरीलाल त्रिवेदी**

* * *

*** इतिहास प्रश्नोत्तरी * लेखक : सुरेश शर्मा, उमेश ठाकुर, नितिन वशिष्ठ; प्रकाशक : डायमंड पॉकेट बुक्स (प्रा.) लि., २७१५, दरियागंज, नयी दिल्ली, मूल्य : २० रुपये।**

इतिहास बहुत व्यापक विषय है। पूर्वकाल की घटनाओं और उसके परिणामों का अध्ययन भविष्य की नीति निर्धारित करने के लिए भी आवश्यक हैं। इतिहास के पृष्ठ हमारे पूर्वजों के पदचिह्न हैं, जो हमें बताते हैं कि हम कहां से चले थे और हमारा मार्ग हमें किस ओर ले जायेगा।

लेकिन इस इतिहास की व्यापकता विद्यार्थियों को भयभीत करती है। उन्हें इतिहास सबसे अधिक अरुचिकर विषय प्रतीत होता है। इसी कारण एक बड़ा विद्यार्थी वर्ग इतिहास के महत्वपूर्ण तथ्यों को जानने से वंचित रह जाता है। बड़ी-बड़ी बातों को रटना उसे अच्छा नहीं लगता।

इस दृष्टि से ही इस उपयोगी पुस्तक की रचना की गयी है। इस पुस्तक में प्रश्न और उनके छोटे-छोटे उत्तरों के माध्यम से इतिहास की सभी महत्वपूर्ण घटनाओं की रोचक जानकारी देने का प्रयास किया गया है।

पाठकों की सुविधा हेतु लेखक त्रय ने पुस्तक को १० अध्यायों में विभाजित कर दिया है- प्राचीन विश्व, प्राचीन भारत, मध्यकालीन विश्व (क, ख), मध्यकालीन भारत, आधुनिक विश्व, आधुनिक भारत, भारत का स्वतंत्रता संग्राम, द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद का विश्व, स्वतंत्रता के बाद का भारत।

यह पुस्तक विद्यार्थी समुदाय, इतिहास के प्रति जिज्ञासु प्रत्येक पाठक और प्रतियोगी परीक्षाओं में सम्मिलित होने वाले हर युवक के लिए महत्वपूर्ण है।

* * *

*** १९९० की हास्य-व्यंग्य रचनाएं * संपादक : डॉ. गिरिराजशरण अग्रवाल; प्रकाशक : डायमंड पॉकेट बुक्स, २७१५, दरियागंज, नयी दिल्ली; मूल्य : १५ रुपये।**

संपादक की अपनी कुछ सीमाएं हैं, लेखकों की अपनी अनेक विवशताएं हैं, किंतु संपादक का यह प्रयास

लगातार बना हुआ है कि संबंधित वर्ष में प्रकाशित हास्य-व्यंग्य की रोचक रचनाएं इस संग्रह में स्थान प्राप्त कर सकें और यह संकलन वर्ष का प्रतिनिधि संकलन बन सके। संकलन को दो भागों में विभाजित किया गया है। पद्य खंड में ४१ कवियों की हास्य-व्यंग्य कविताएं तथा गद्य खंड में १७ गद्य रचनाएं संगृहीत हैं। इसमें दो एकांकी भी हैं। इसकी विशेषता यह है कि अल्हड़ बीकानेरी, अशोक चक्रधर, काका हाथरसी, जैमिनी हरियाणवी, प्रेम-किशोर पटाखा, बालकवि बैरागी, मधुप पांडेय, माणिक वर्मा, सरोजिनी प्रीतम, सूर्यकुमार पांडेय, हुल्लड़ मुरादाबादी, के. पी. सक्सेना, चिरंजीत, रवींन्द्रनाथ त्यागी, लतीफ घोंघी, शरद जोशी, श्रीकांत चौधरी तथा सूर्यबाला जैसे सुप्रसिद्ध गद्य-पद्य लेखकों के अतिरिक्त अनेक ऐसे लेखक भी इसमें सम्मिलित किये गये हैं जो हास्य-व्यंग्य क्षेत्र में अपनी पहचान बनाने में लगे हुए हैं।

निश्चय ही जो व्यक्ति तनावों की दुनिया से मुक्ति का इरादा लेकर हर्ष और उल्लास के सागर में गोते लगाना चाहते हैं, साथ ही व्यंग्य-स्थलों पर तिल-मिलाना भी चाहते हैं, उनके लिए यह संकलन पूरे वर्ष आनंद का साधन बना रहेगा। **— डॉ. मीना अग्रवाल**

*** जागी नदिया नैन की * डॉ. अब्दुल अजीज "अर्चन"; माडर्न प्रिंटर्स, राय-बरेली; मूल्य : १५ रुपये ।**

जागी नदिया नैन की डॉ. अब्दुल अजीज 'अर्चन' की सद्यः प्रकाशित काव्यकृति है, जिसमें लगभग ५०० से अधिक दोहे संग्रहीत हैं। ये दोहे अपने शब्द शिल्प एवं भावगांभीर्य में सर्वथा अनूठे एवं श्रेष्ठ हैं। इनके पढ़ने से रहीम, कबीर और बिहारी की दोहा परम्परा की स्मृति बरबस सजीव हो उठती है।

हिन्दी साहित्य में मुस्लिम कवियों का योगदान विशिष्ट और सराहनीय रहा है। डॉ. अर्चन इस योगदान में एक नयी कड़ी बनकर हमारे सामने आते हैं।

मानवीय जीवन दर्शन पर उनका एक अति भावप्रवण दोहा यहां दृष्टव्य है—

छोर न कोई दूर तक,
निसि-दिन भटकें नैन ।
जीवन ज्यों भव-सिंधु में,
एक लहर बेचैन ।।

प्रस्तुत काव्य की भाषा अवधी और खड़ी बोली है, जिसमें बहुप्रचलित हिन्दी, उर्दू, और फारसी शब्दों का प्रयोग भी यत्र-तत्र किया गया है। दोहों की विविधता पाठकों का मनोरंजन भी करती है और ज्ञानवृद्धि भी।

- आनन्द स्वरूप श्रीवास्तव

गुणों की खान : हींग

□ अनिता जैन

* ज़ख्म यदि कुछ समय तक खुला रहे तो उसमें छोटे-छोटे कीड़े पड़ जाते हैं। अतः ज़ख्म पर हींग का चूर्ण डालने से ये कीड़े मर जाते हैं ।

* यदि शरीर के किसी हिस्से में कांटा लग गया हो तो उस स्थान पर हींग का घोल भर दें। कुछ समय में कांटा स्वतः बाहर निकल आयेगा ।

* पेट के दर्द, अफारे और ऐंठन में अजवाइन और नमक के साथ हींग का सेवन करें, लाभप्रद रहेगा ।

* निमोनिया होने की दशा में गुनगुने गर्म पानी में जरा-सी हींग घोलकर सेवन करने से लाभ होगा ।

* दांतों में कीड़ा लग जाने पर रात्रि को हींग दबाकर सोयें । कीड़ा खुद-ब-खुद निकल जायेगा ।

* पेट में कीड़े हो जाने पर हींग को पानी में घोलकर एनिमा करने से पेट के कीड़े मरकर शीघ्र ही बाहर निकल जाते हैं ।

* हींग का लेप बवासीर, तिल्ली और उदरशोथ आदि रोगों में अत्यंत लाभप्रद है ।

* हींग भूनकर गुड़ के साथ सेवन करने से दाद, खाज व खुजली में लाभ होता है ।

* यदि आपको कब्जियात की शिकायत है तो हींग के चूर्ण में थोड़ा-सा मीठा सोडा मिलाकर फांक लें ।

* थोड़ी-सी भुनी हुई हींग, रुई के फोहे में लपेटकर दाढ़ पर रखने से दाढ़ का दर्द कम हो जाता है ।

* अधिक खा लेने या कोई भारी चीज खा लेने से अफारा हो गया हो तो हींग को पीसकर उसमें काला नमक मिलाकर हल्के गर्म पानी से सेवन करने से लाभ होगा ।

* हींग में रोग-प्रतिरोधक (एण्टीसेप्टिक) गुण काफी अधिक होते हैं । दाद, खाज व खुजली व अन्य चर्म रोगों में इसको पानी में घिसकर उन स्थानों पर लगाने से आश्चर्यजनक लाभ होगा ।

—द्वारा श्री कैलाश जैन
मनोज मार्ग, भवानीमण्डी,
राजस्थान.

सु. रामकृष्णन् द्वारा भारतीय विद्या भवन; क. मा. मुंशी मार्ग, बम्बई–४००००७ के लिए प्रकाशित तथा एसोसियेटेड एडवरटाइजर्स एंड प्रिन्टर्स, बम्बई ४०००३४ में मुद्रित।

KHANDELWAL BROTHERS LIMITED

GOLDEN JUBILEE YEAR

यत्र योगेश्वरः कृष्णो यत्र पार्थो धनुर्धरः।
तत्र श्रीर्विजयो भूतिर्ध्रुवा नीतिर्मतिर्मम।।

हे राजन्! जहाँ योगेश्वर भगवान् श्रीकृष्ण हैं और जहाँ गाण्डीव-धनुषधारी अर्जुन हैं, वहीं पर श्री, विजय, विभूति और अचल नीति है – ऐसा मेरा मत है।